मानव संसाधन प्रबन्ध

बी. कॉम. II

(Option-IV)

दूरस्थ शिक्षा निदेशालय

महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय

रोहतक—124 001

Copyright © 2003, Maharshi Dayanand University, ROHTAK
All Rights Reserved. No part of this publication may be reproduced or stored in a retrieval system or transmitted in any form or by any means; electronic, mechanical, photocopying, recording or otherwise, without the written permission of the copyright holder.

Maharshi Dayanand University
ROHTAK – 124 001

Developed & Produced by EXCEL BOOKS PVT. LTD., A-45 Naraina, Phase 1, New Delhi-110028

विषय सूची

अध्याय 1	मानव संसाध्न प्रबन्ध: एक सामान्य विवेचन	5
अध्याय 2	मानव संसाध्न प्रबन्ध कर्मचारी प्रबन्ध नीति	40
अध्याय 3	मानव संसाध्नों का नियोजन	55
अध्याय 4	भर्ती एवं चुनाव प्रक्रिया	81
अध्याय 5	वृत्ति नियोजन एवं विकास	103
अध्याय 6	प्रशिक्षण एवं विकास	113
अध्याय 7	निष्पादन एवं सम्भावना मूल्यांकन	124
अध्याय 8	मजदूरी और मजदूरी के सि(ान्त	147
अध्याय 9	कार्य परिचय पदोन्नति, पद अवनति, स्थानान्तरण एवं अन्य क्रियाएं	182
अध्याय 10	सेविवर्गीय अंकेक्षण एवं नियन्त्रण	212
अध्याय 11	औद्योगिक सम्बन्ध : सघर्ष एवं निपटारा	222

Human Resource Management
B.Com-II (Option IV)

Max. Marks : 100

Time : 3 Hours

Note : Ten questions shall be set in the questions paper covering the whole syllabus. The candidates will be requirement to attempt any five questions.

Human Resource Development: concept, benefits and prerequisites. Difference between human resource development and human resource management. Role, functions and status of human resource manager. Role of chief executives, Line managers and HRD managers in developing human resources. Personnel policies, procedures and programmes. Human resource planning. Job evaluation.

Recruitment: steps in recruitment, recruitment policy, sources and methods of recruitment. Selection process and policy. Career planning: objectives and responsibilities; process, prerequisites advantages and limitations of career planning; career problems and their solutions. Training and development: concept and importance of training; training methods/techniques. Performance appraisal.

Wage and salary administration: Promotion, transfer, demotion, separation and absenteeism; labour turnover. Personnel records and audit.

Industrial relations in India: HRD practices in Indian industries. Concept and forms of industrial democracy.

अध्याय–1

मानव संसाध्न प्रबन्ध: एक सामान्य विवेचन

(Human Resource Management: An Introduction)

प्रस्तावना

(Introduction)

बीसवीं सदी में प्रबन्ध जगत में बहुत महत्त्वपूर्ण एवं क्रान्तिकारी परिवर्तन हुए हैं। इनमें से सर्वाध्कि परिवर्तन मानव संसाध्न प्रबन्ध के क्षेत्र में हुए हैं। विगत तीन दशकों में मानव संसाध्न प्रबन्ध का महत्त्व कापफी अध्कि बढ़ गया है और साथ ही साथ प्रबन्ध का यह क्षेत्र पहले की अपेक्षा कहीं अध्कि जटिल हो गया है। प्रबन्ध के अन्य क्षेत्रों में प्रबन्ध्कों को द्रव्य, मशीन, कच्चा माल, सम्पत्ति जैसी निर्जीव वस्तुओं को प्रयोग में (Manipulate) लाना होता है, जबकि मानव संसाध्न प्रबन्ध में उन्हें मानवीय साध्नों का व्यवसाय के उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए प्रयोग करना होता है। मानव संसाध्न प्रबन्ध्क केवल इस साध्न का आर्थिक दृष्टि से, श्रेष्ठतम उपयोग करने के लिए प्रयत्नशील रहता है अपितु सामाजिक दृष्टि से भी वह इस साध्न के विकास एवं समृ(के लिए प्रयत्नशील रहता है। उसे कर्मचारी वर्ग की संतुष्टि का भी पूरा ध्यान रखना होता है। मानव संसाध्न प्रबन्धक का कार्य विभिन्न कारणों तथा कर्मचारी वर्ग में शिक्षा के प्रसार, (Peter F. Drucker) (Function of management is to manage workers and work) की बढ़ती हुई शक्ति, व्यवसायों के में हो रही अभिवृ(, आधुनिक एवं स्वचालित यन्त्रों के प्रयोग, बढ़ती हुई बेराजगारी तथा बढ़ती हुई राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय प्रतियोगिता आदि के कारण अध्कि जटिल होता जा रहा है। स्वतन्त्र समाज में विशेषकर विकासोन्मुख देशों में कर्मचारी वर्ग की आकांक्षाएं कापफी बढ़ गई हैं। मानव संसाध्न प्रबन्ध्क को कर्मचारी की आकांक्षाओं को भी ध्यान में रखना होता है। इन सब जटिलताओं के कारण मानव संसाध्न प्रबन्ध्क को अपना काम और अध्कि कार्यक्षमता एवं कुशलता से करने की आवश्यकता होती है।

आजकल एक सामान्य धरणा घर करती जा रही है कि आधुनिक एवं स्वचालित मशीनों के प्रयोग के कारण मानव संसाध्न प्रबन्ध की आवश्यकता कम हो जाती है और उद्योग प्रबन्ध में उसका महत्त्व भी घट जाता है। लेकिन यह धरणा भ्रामक है, क्योंकि आधुनिक एवं स्वचालित मशीनों के प्रयोग के कारण यह आवश्यक हो जाता है कि कर्मचारियों की शिक्षा एवं दक्षता का स्तर उफँचा हो। साथ ही व्यवहृत यन्त्रों की मूल्यवान प्रकृति के कारण व्यवसाय जगत में कर्मचारियों की गरिमा बढ़ती है और इस प्रकार मानव संसाध्न प्रबन्ध का महत्त्व भी घटने के स्थान पर बढ़ता है।

मानव संसाध्न प्रबन्ध का सार कर्मचारी वर्ग को एक उत्तम नेतृत्व प्रदान करने में निहित है। आज जब प्रबन्ध में एक ओर कर्मचारी सहभागिता के सि(ान्त को व्यावहारिक रूप में प्रयोग में लाया जा रहा है और दूसरी ओर कर्मचारीगण आत्म प्रबन्ध (Selfmanagement) के सि(ान्त में विश्वास करते हैं तो इस बात को आसानी से समझा जा सकता है कि मानव संसाध्न प्रबन्ध्कों का कार्य कितना कठिन हो गया है।

पीटर ड्रकर[1] जैसे विद्वान जब कर्मचारियों एवं कार्य की व्यवस्था को ही प्रबन्ध मानते हैं। तो ऐसी परिस्थिति में मानव संसाध्न की आवश्यकता, सार्वभौमिकता एवं महत्त्व को आसानी से समझा जा सकता है।

1. Peter F. Drucker : Practice of Management (P. 14)

शब्दावली
(Terminology)

मानव संसाध्न प्रबन्ध को विभिन्न विद्वानों ने अलग–अलग नामों से सम्बोध्ति किया है। इसके अतिरिक्त गत दशकों में प्रचलित शब्दावली में कापफी पफेर–बदल हुआ है।[2] उदाहरण के लिए इस शताब्दी के तीसरे तथा चौथे दशक में फऔद्योगिक सम्बन्ध्य (Industrial Relations) तथा पश्रम सम्बन्ध्र (Labour Relations) जैसे शब्दों का प्रचलन था। लेकिन चौथे दशक के उत्तरार्ध तथा पाँचवें दशक में उक्त शब्दावली के स्थान पर 'मानवीय सम्बन्ध'(Human Relations) के प्रयोग ने जोर पकड़ा, लेकिन शनैः शनैः यह शब्दावली भी प्रचलन से बाहर हो गई और इसका स्थान 'सेविवर्ग' अथवा 'कार्मिक प्रबन्ध' ने ले लिया। उक्त शब्दावली के अतिरिक्त प्रबन्ध साहित्य में 'मानवीय अभियन्त्रण' (Human Engineerin g), 'श्रम प्रबन्ध' (Labour Management), 'मानव संसाध्न सेवाएँ, (Personnel Services), 'मानव संसाध्न प्रशासन' ;Human Resource Administrationद्ध 'जन शक्ति प्रबन्ध' (Manpower Management), तथा 'कर्मचारी सम्बन्ध' (Employee Relations), आदि शब्दावली का प्रयोग मिलता है। सामान्य विद्यार्थी का, इस प्रकार के जाल में पफसकर भ्रमित होना स्वाभाविक सा लगता है। ऐसी स्थिति में यह आवश्यक है कि हम प्रयुक्त शब्दावली के सही–सही अर्थों को समझें तथा आवश्यकता पड़ने पर उचित एवं उपयुक्त शब्दों का ही प्रयोग करें।

डेल योडर (Dale Yoder) के अनुसार 'औद्योगिक सम्बन्ध' एक व्यापक शब्द है जिसके अन्तर्गत 'मानव संसाध्न प्रबन्ध' तथा 'श्रम प्रबन्ध' दोनों ही सम्मिलित हैं। इसे नीचे दिये चित्र द्वारा समझाया जा सकता है।

उक्त लेखक की सम्मति में 'औद्योगिक सम्बन्ध' के स्थान पर 'श्रम प्रबन्ध' का प्रयोग अध्कि श्रेयस्कर होगा क्योंकि 'औद्योगिक सम्बन्ध' शब्दावली संकुचित प्रतीत होती है, जिसके अन्तर्गत मानो केवल उद्योगों में नियोजन से उत्पन्न होने वाले सम्बन्धें का ही अध्ययन किया जाता हो और अन्य इकाइयाँ जैसे राज्य सरकार, अस्पताल, सेना तथा मानव संसाध्न संगठन इसके सीमा क्षेत्र

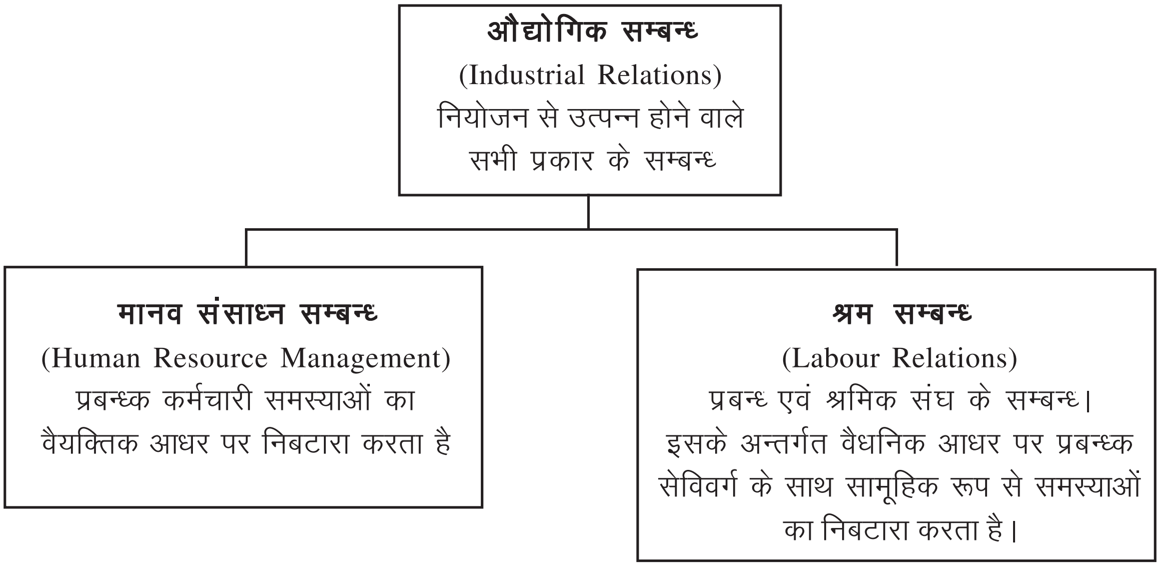

से बाहर हों। जबकि वस्तुस्थिति इससे बिल्कुल भिन्न है। 'जन शक्ति प्रबन्ध' तथा 'श्रम प्रबन्ध' शब्दावली का तो आज व्यापक रूप में प्रचलन नहीं है, लेकिन 'कर्मचारी सम्बन्ध' (Employee Relations) शब्दावली का प्रयोग अवश्य ही जोर पकड़ता जा रहा है और यह शब्दावली 'औद्योगिक सम्बन्ध' की तुलना में अध्कि यथार्थवादी है।

यह कहना अप्रासांगिक नहीं होगा कि अनेक लेखक 'औद्योगिक सम्बन्ध' मानव संसाध्न प्रबन्ध' तथा 'श्रम सम्बन्ध' इन शब्दों का प्रयोग इस प्रकार करते हैं, मानो ये सब एक दूसरे के पर्यायवाची हों और इस प्रकार शब्दावली के प्रयोग में प्रमापीकरण का अभाव स्प५् है। **प्रो. रिचार्ड पी. कलहून** (Richard P. Calhoon) ने अमेरिकी प्रबन्ध व्यवसाय के सन्दर्भ में लिखा है कि वहां पर 60÷ व्यावसायिक संस्थानों में 'मानव संसाध्न प्रबन्ध' 15÷ संस्थानों में 'औद्योगिक सम्बन्ध' तथा शेष 25÷ में 'कर्मचारी सम्बन्ध' 'मानव संसाध्न सम्बन्ध' तथा 'श्रम सम्बन्ध जैसी शब्दावली का प्रचलन है।[3]

2. विस्तृत अध्ययन के लिए पढ़िए Managing Personnel by Richard P. Calhoon, अध्याय 1.
3. Managing Personnel : Richard P. Calhoon (P. 18)

कर्मचारी प्रबन्ध/सेवेवर्गीय प्रबन्ध, प्रबन्ध(Management) **की एक विशेष शाखा** (Branch) **है जिसमें मानवीय साध्न** (Human Factor) **का विशेष बुिमित्तापूर्ण प्रयत्नों से प्रबन्ध किया जाता है।** कर्मचारी प्रबन्ध अथवा मानव संसाध्न प्रबन्ध का यह अलग विभाग अपना अधिकांश समय औद्योग्कि सम्बन्धें में सुधर की दिशा में अनुसन्धन (Research) में लगता है। इस प्रकार कर्मचारी प्रबन्ध(Personnel Management) मानवीय संसाध्नों का विकास एवं उपयोग व्यवसाय के उद्देश्यों की अधिकतम प्राप्ति के लिए प्रयत्न करता है। कर्मचारी प्रबन्ध/मानव संसाध्न प्रबन्ध, संगठन (Organisation) में उपलब्ध मानवीय घटकों (Human Factor) तथा उनके सम्बन्धें से जुड़ा है। भौतिक घटक (PhysicalFactors) मानव संसाध्न के क्षेत्र से बाहर हैं। आज कोई भी संगठन, व्यवसाय, उपक्रम मानवीय घटक (Human Factor) की चिन्ता (Care) किए बिना सपफल नहीं हो सकता है।

परिभाषाएँ
(Definitions)

मानव संसाध्न प्रबन्ध को भली–भाँति समझने के लिए यह आवश्यक है कि हम इसे परिभाषित करें। विभिन्न विद्वानों तथा इस क्षेत्र में कार्यरत संस्थाओं ने अपने तरीके से अलग–अलग परिभाषायें दी हैं। कुछ प्रमुख परिभाषायें इस प्रकार हैं:

1. **श्री टैरी लियोन्स** (Terry Lyons) के शब्दों में मानव संसाध्न प्रबन्ध फ्प्रबन्ध की वह क्रिया है जो कि इस तथ्य के कारण उत्पन्न होती है कि किसी भी उद्यम का कार्य चलाने के लिए लोगों की सेवाओं का प्रयोग करना होता है।[4]
2. **इंग्लैण्ड की मानव संसाध्न प्रबन्ध संस्थान** (British Institute of Human Resource Management) द्वारा दी गई परिभाषा इस प्रकार से है–फ्यह प्रबन्ध का वह भाग है जो कि कार्यरत लोगों तथा उद्यम के अन्दर वेफ पारस्परिक सम्बन्धें से सम्बन्धित है। मानव संसाध्न प्रबन्ध का सम्बन्ध केवल उद्योगों तथा वाणिज्य से ही नहीं है, बल्कि इसका सम्बन्ध नियोजन के समस्त क्षेत्रों से है।[5]
3. **श्री एम.बी. पफोरमैन** (M.B. Foreman) के अनुसार फकिसी भी उद्यम में कार्यरत व्यक्तियों के बीच में सम्बन्धें को इस आधर पर बनाए रखना है कि प्रत्येक व्यक्ति उद्यम के प्रभावकारी कार्य संचालन में अध्कितम व्यक्तिगत योगदान प्रदान कर सके।[6]
4. **श्री मोरिस डब्ल्यू कमिंग** (Maurice W. Cuming) ने संक्षिप्त रूप में मानव संसाध्न प्रबन्ध को कर्मचारियों को प्राप्त करना तथा उन्हें संधरित करना बताया है।[7] फ्इसी परिभाषा को विस्तार से समझाते हुए वे लिखते हैं कि 'मानव संसाध्न प्रबन्ध का सम्बन्ध किसी भी संगठन के लिए इस प्रकार से साल–संभाल करना कि वे संगठन में ही बने रहें और अपने कार्यों को लगन से सम्पादित करें।[8]
5. **प्रो. माइकल जे. ज्यूसियस** (Michael J. Jucius) के शब्दों में मानव संसाध्न प्रबन्ध फ्प्रबन्ध का वह क्षेत्र है जो कि श्रम शक्ति की प्राप्ति, साधरण तथा प्रयोग करने की क्रिया के सम्बन्ध में नियाजन, संगठन, निदेशन तथा नियन्त्रण का कार्य करे, जिससे कि–

   ;अद्ध कम्पनी अपने संस्थापन के उद्देश्यों को मितव्ययिता तथा प्रभावकारी तरीके से प्राप्त कर सके।

   ;आद्ध सभी स्तरों पर कार्य कर रहे कर्मचारी वर्ग के उद्देश्यों की अध्कितम सीमा तक संतुि हो सके।

   ;इद्ध समाज के उद्देश्यों का उचित चिन्तन कर उनकी सन्तुि की जा सके।[9]

---

4. "The part of the function of management that arises out of the fact that an enterprise has to use people." The personnel function in a changing environment : Terry Lyons.
5. "It is that part of management which is concerned with people at work and with the relationships within an enterprise. It applies not only to industry and commerce but to all fields of employment." British Institute of Personnel Management.
6. "Maintaining relationships among the individuals at work as a basis which enables all those engaged in the undertaking to make their best personal contribution to the efficient working of the undertaking." M.B. Foreman : "The personnel function of management". Personnel Management, Journal of the British Institute of Personnel Management, 1956.
7. "To obtain and retain employees" or "To get and keep workers."
8. "Human Resource is concerned with obtaining the best possible staff for an organization and having got them, looking after them so that they will want to stay and give their best to their jobs."–Maurice W. Cuming
9. "The field of Management which has to do with planning; organizing; directing and controlling the functions of procuring, developing, maintaining and utilizing a labour, force, such that the (a) Objectives for which the company is established are attained economically and effectively. (b) Objectives of all levels of personnel are served to the highest possible degree (c) Objectives of society are duly considered and served." Michael J. Jucius

6. **प्रो. डेल योडर** (Dale Yoder) के अनुसार मानव संसाधन प्रबन्ध "नियोजन में मानवीय साधनों की प्रयुक्ति, विकास एवं प्रयोग से सम्बन्धित आयोजन एवं निदेशन की प्रक्रिया है।"[10]

7. **प्रो. मैकफारलैण्ड** (McFarland) ने 'कर्मचारी सम्बन्ध' (Employee Relations) शब्दावली को श्रेयस्कर माना है और उनके अनुसार "इसके अन्तर्गत कम्पनी कर्मचारीवृन्द जिसमें अधिशासी तथा सामान्य श्रमिक सम्मिलित हैं—के प्रबन्धन तथा प्रयोग की समस्त क्रियायें स्पष्ट रूप से उल्लेखित हैं।"[11]

8. **एडविन बी. फ्लिप्पो** (Edwin B. Flippo) ने मानव संसाधन प्रबन्ध की एक व्यापक परिभाषा दी है। उनके अनुसार, "मानव संनसाधन क्रियाओं का सम्बन्ध किसी संगठन के लिए कर्मचारीवृन्द की प्राप्ति, विकास, क्षतिपूरण, एकता तथा सन्धरण से है, जिससे कि संगठन के प्रमुख उद्देश्यों की प्राप्ति में सहायता प्राप्त हो सके, मानव संसाधन प्रबन्ध, उक्त प्रवर्तनशील क्रियाओं के निष्पादन हेतु किये जाने वाले आयोजन, संगठन, निदेशन तथा नियन्त्रण को कहते है।"[12]

9. प्रसिद्ध प्रबन्धशास्त्री **ब्रेच** (E.F.L. Brech) के अनुसार 'मानव संसाधन प्रबन्ध, प्रबन्ध प्रक्रिया का वह भाग है जो कि मुख्यतः किसी संगठन के मानवीय तत्वों से सम्बन्धित है।"[13]

10. **सी. एच. नॉर्थकोट** (C.H. Northcott) के अनुसार, "मानव संसाधन प्रबन्ध, सामान्य प्रबन्ध क एक विस्तार है जो एक व्यवसाय के उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु प्रत्येक कर्मचारी को अपना पूर्ण योगदान प्रदान करने के लिए प्रोत्साहित एवं अभिप्रेरित करता है।"[14]

इस प्रकार मानव संसाधन प्रबन्ध, प्रबन्ध का वह भाग है जो कर्मचारियों के प्रबन्ध से सम्बन्ध रखता है, जिसका उद्देश्य कर्मचारियों को कार्य से सन्तुष्टि प्रदान कर उनकी शक्ति का सदुपयोग करके संस्था के निर्धरित उद्देश्यों को पूरा करना है।

परिभाषाओं का विश्लेषण एवं विशेषताएँ (An analysis of definitions & Characteristics of Human Resource Management):

उपयुक्त परिभाषाओं के अध्ययन से मानव संसाधन प्रबन्ध की जो विशेषताएँ प्रकट होती हैं उनमें से प्रमुख का उल्लेख निम्न प्रकार से किया जा सकता है—

1. मानव संसाधन प्रबन्ध, प्रबन्ध की एक विशिष्ट शाखा है, जिसका सम्बन्ध उत्पादन के एक बहुमूल्य साधन अर्थात् मानव शक्ति से है। इसीलिए मानव संसाधन प्रबन्ध के अन्तर्गत मानव शक्ति का नियोजन, संगठन, निदेशन तथा नियन्त्रण जैसी क्रियाएँ सम्मिलित की जाती हैं।

2. मानव संसाधन प्रबन्ध के अन्तर्गत, मानव सेवाओं को प्राप्त करना, कार्यरत व्यक्तियों की देखभाल (साल–संभाल), निरन्तरता के उद्देश्य से उनकी सेवाओं को बनाए रखना तथा कार्यरत व्यक्तियों का अधिकतम विकास करना, जैसे कार्य सम्मिलित किये जाते हैं।

3. मानव संसाधन प्रबन्ध, कार्यरत व्यक्तियों को कार्य संचालन में अधिकतम योगदान के अवसर प्रदान करने से सम्बन्धित है।

---

10. "It effectively describes processes of planning and directing the application, development and utilization of human resources in employment." Dale Yoder : Personnel Management and Industrial relations. (P. 9)

11. "........the term employee relations will designate the total functions of managing and utilizing a Company's employees, executives as well as rank and file workers." Dalton E. McFarland : Personnel Management (P. 7)

12. "The human resource management is concerned with the procurement, development, compensation, integration and maintenance of the personnel of an organization for the purpose of contributing to wards the accomplishment of that organization's major goals or objectives. Therefore, human resource management is the planning, organising, directing and controlling of the performance of those operative functions."

13. "Human resource Management is that part of management process which is primarily concerned with the human constituents of an oranisation."

14. Human resource management is an extension of general management, that of prompting and stimulating every employee to make his fullest contribution to the purpose of a business." CH. North cott : Personnel Management Principles and Practice (P. 12)

4. मानव संसाध्न प्रबन्ध का उद्देश्य कार्यरत व्यक्तियों को अध्कितम कार्य संतुप्ि प्रदान करना तथा उपक्रम के लिए सर्वाध्कि एवं सर्वोत्तम परिणाम प्राप्त करना है।
5. मानव संसाध्न प्रबन्ध कार्यरत कर्मचारियों का वैयक्तिक तथा सामूहिक, दोनों ही स्वरूपों में अध्ययन करता है।
6. मानव संसाध्न प्रबन्ध, उपक्रम तथा उपक्रम में कार्यरत व्यक्तियों के पारस्परिक सम्बन्धें का अध्ययन है।
7. मानव संसाध्न प्रबन्ध कर्मचारियों को अपनी अन्तःशक्ति विकसित करने तथा अपनी क्षमताओं का अध्कितम सदुपयोग करने में सहयोग करने से सम्बन्ध्ति है।
8. मानव संसाध्न प्रबन्ध केवल श्रम–कर्मचारियों (Labour Personnel) से ही सम्बन्ध्ति है।

मानव संसाध्न प्रबन्ध की धरणा (Concept) –उपयोक्त परिभाषाओं पर निम्नलिखित आधरभूत तथ्य प्रस्तुत हैं–

मानव संसाध्न प्रबन्ध कार्यरत कर्मचारियों के प्रबन्ध से सम्बन्ध्ति है। इसके अन्तर्गत सभी स्तरों पर कार्यरत कर्मचारियों ;पफोरमैन, क्राफ्रट्समैन तथा श्रमिक वर्गद्ध तथा सेवायोजकों ;Employersद्ध ;पेशेवर प्रबन्ध्क, तकनीकी प्रबन्ध्क, विक्रयकर्त्ता, लिपिक (clerks) , तथा उच्च अध्किारीद्ध को सम्मिलित किया जाता है। **मानव संसाध्न प्रबन्ध की बनावट** तथा रूप प्रत्येक संस्था में भिन्न होता है। इसका ;मानव संसाध्न प्रबन्ध्द्ध सम्बन्ध व्यक्तिगत कर्मचारियों के समूह से होता है। इसके द्वारा कर्मचारियों तथा सेवायोजकों के सहयोग से सर्वोत्तम पफल की प्राप्ति होती है। मानव संसाध्न प्रबन्ध कर्मचारियों की रुचि, व्यक्तित्व, अवसर, कार्यक्षमता तथा गुणों के सर्वांगीण विकास में सहयोग देकर कर्मचारियों को सन्तुप्ि प्रदान करता है।

मानव संसाध्न प्रबन्ध विशेष रूप से कर्मचारियों की भर्ती, चुनाव, विकास एवं उनके सर्वोत्तम उपयोग से सम्बन्ध्ति है। मानव संसाध्न प्रबन्ध केवल औद्योगिक जगत से सम्बन्ध्ति न होकर, सरकारी विभागों, सेना के विभागों तथा गैर लाभ प्राप्त करने वाली संस्थाओं के लिए भी बहुत उपयोगी है। यह **प्रबन्ध्कीय कार्यों** का एक बहुत बड़ा भाग है, जिसकी जड़े और शाखायें प्रत्येक संगठन के चारों ओर पफैली होती है। यह एक लगातार चालू रहने वाला कार्य है तथा प्रतिदिन एक घण्टा तथा सप्ताह में एक दिन कार्य करके इसको लागू नहीं किया जा सकता है। संगठन में मानवीय साध्नों का प्रभावशाली प्रयोग करने के लिए प्रतिदिन के कार्यों में स्थिर जानकारी तथा सतर्कता की आवश्यकता है। मानव संसाध्न प्रबन्ध पूर्व निर्धरित उद्देश्यों को प्राप्त करने में कर्मचारियों को स्वेच्छा से सहयोग प्राप्त करता है।

मानव संसाध्न/कर्मचारी प्रबन्ध का महत्त्व
(Importance of Human Resource Management)

पमानव शरीर में जो स्थान स्नायु–तन्त्र (Nervous system) का है वही स्थान संगठन में मानव संसाध्न प्रबन्ध का है। मानव संसाध्न प्रबन्ध न तो दिमाग है, न नियन्त्रक, न केवल एक सदस्य का पैर है, न कि रक्त ाव है और न शक्तिदायक तत्त्व है, यह केवल तन्तु–संस्थान है। यह शरीर की एक नली है जो कुछ अर्थों में स्वचालित शक्ति है। यह शक्ति एक शत्रु का रूप धरण कर सकती है, यदि इसमें खराबी हो जाए तो पूरा ढांचा पंगु हो सकता है, यदि यह सन्तुलन खो दे तो अस्थायित्व की स्थिति उत्पन्न हो जाती है जो तन्तु–संस्थान की भांति समस्त व्यावसायिक जगत में देखी जा सकती है।

देश में आर्थिक सामाजिक व राजनीतिक चेतना का जागृत होना, उपक्रमों के आकार व जटिलता में वृ(, श्रमसंघों की निरन्तर बढ़ती शक्ति, प्रबन्ध के विभिन्न क्षेत्रों में आवश्यक ज्ञान व परामर्श देने के लिए विशेषज्ञों की आवश्यकता ने मानव संसाध्न प्रबन्ध के महत्त्व को और अध्कि बढ़ा दिया है।

आधुनिक उत्पादन–प्रक्रिया में चार Ms का महत्त्वपूर्ण योगदान है। (4 Important Ms.)–**Money, Material** (row or semimanufactured), **Machinary** (or fixed assets and plants) और **Man** (or human resource) **मुद्रा, पदार्थ मशीनरी तथा मानव** सबसे अध्कि महत्त्पूर्ण तत्त्व होते हैं। इन चारों तत्त्वों के सर्वोत्तम उपयोग के लिए इनका श्रे(तम प्रबन्ध परम आवश्यक है। इस प्रकार **प्रबन्ध विज्ञान** (Management Science) में **प्रमुख रूप से तीन क्षेत्रों के प्रबन्ध** पर विशेष ध्यान दिया जाता है–

1. **उत्पादन प्रबन्ध** (Production Management)

2. **वित्तीय प्रबन्ध** (Financial Management)

3 **कर्मचारी प्रबन्ध/मानव संसाध्न प्रबन्ध** (Human Resource Management)

उत्पादन की नई तकनीक एवं समस्त व्यवस्थाओं (System) तथा नियन्त्रण विध्यिों (Control Process) का उत्पादन प्रक्रिया में बड़े पैमाने पर प्रयोग के बावजूद आज **मानवीय कारक** (Human Factor) का महत्त्व कम नहीं हुआ है। सारी तकनीकें प्रबन्ध्कीय विध्यिाँ प्रभावहीन हो जाती हैं, यदि उनका प्रशासन या क्रियान्वयन योग्य कर्मचारियों द्वारा न किया जाए।

पीटर एपफ. ड्रकर (Peter F. Drucker) के अनुसार, फअन्य संसाध्नों का उचित या अनुचित उपयोग मानवीय घटक की इच्छा पर ही निर्भर करता है, अन्य संसाध्नों की अपेक्षा मानव या श्रमशक्ति का विकास अध्कि महत्त्वपूर्ण है। श्रम अपने योगदान में स्वयं वृ(कर सकता है, किन्तु यह सब उचित एवं कुशल प्रबन्ध के अन्तर्गत ही सम्भव है।य

लारेन्स ए. एप्पले (Lawrence A. Appley) ने तो यहाँ तक लिखा है, फप्रबन्ध व्यक्तियों का विकास है न कि वस्तुओं का निर्देशन प्रबन्ध एवं मानव संसाध्न प्रबन्ध या प्रशासन एक ही है।य

प्रत्येक व्यापारिक या औद्योगिक संस्थाओं में, चाहे उनका आकार कुछ भी क्यों न हो, मानव संसाध्न प्रबन्ध के द्वारा कार्य सम्पन्न किया जाता है। छोटे आकार की संस्था में यह कार्य स्वयं प्रबन्ध संचालक या मैनेजर द्वारा पूरा किया जाता है जबकि बड़े आकार की संस्थाओं में इस कार्य के लिए अलग से **मानव संसाध्न विभाग** (Human Resource Manament) गठित किया जाता है जो मानव संसाध्न प्रबन्ध्क (Human Resource Manager) की प्रत्यक्ष देखरेख में कार्य करता है। मानव संसाध्न विभाग का आकार, उसका अस्तित्व संस्था में नियुक्त कर्मचारियों की संख्या, कर्मचारी प्रतिस्थान की दर (Rate of turnover of the Personnel), कर्मचारी एवं सम्बन्धी नीति तथा कर्मचारी संघों से उत्पन्न समस्याओं पर निर्भर करता है।

मानव संसाध्न प्रबन्ध के उद्देश्य
(Objectives of Human Resource Management

मानव संसाध्न प्रबन्ध के उद्देश्यों का ज्ञान प्राप्त करना अनिवार्य है। बिना उद्देश्यों के पूर्व ज्ञान के किसी भी उपक्रम में मानव संसाध्न विभाग के द्वारा प्रभावकारी योजना नहीं बनाई जा सकती। नियोजन के उद्देश्यों का स्पष्टीकरण आवश्यक है। इसी प्रकार नियन्त्रण भी बिना उद्देश्यों को स्पष्ट किये लागू नहीं किये जा सकते। जब तक कमियों और असपफलताओं का पता न हो, नियन्त्रण की कोई व्यवस्था सपफल नहीं हो सकती। कमियाँ तथा असपफलताएँ क्या हैं? जब कोई उपक्रम तथा विभाग निर्दिष्ट उद्देश्यों के कारणों की जाँच करने पर कमियों और कमजोरियों का पता चलता है। अतः उद्देश्यों का ज्ञान प्राप्त करना कापफी महत्त्व रखता है।

यह प्रबन्ध विज्ञान का एक बहुचर्चित एवं सर्वमान्य सि(ान्त है कि प्रत्येक उपक्रम में किया जाने वाजा समस्त कार्य किसी न किसी रूप में–प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप में–उस उपक्रम के निर्धरित उद्देश्यों की प्राप्ति में योगदान करे। (All work performed in an organisation should in some way, directly or indirectly, contribute to the objectives of that organisation) मानव संसाध्न विभाग उपक्रम के उद्देश्यों का ही एक अविभाज्य अंग होता है। अतः मानव संसाध्न प्रबन्ध का उद्देश्य, उपक्रम के उद्देश्यों का ही अंग होगा तथा वह सामान्य उद्देश्यों की पूर्ति में सहायक होना चाहिए।

मानव संसाध्न प्रबन्ध के उद्देश्यों का ज्ञान प्राप्त करने से पूर्व, यह आवश्यक प्रतीत होता है कि हम उपक्रम के उद्देश्यों के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करें। सामान्य व्यावसायिक प्रतिष्ठानों के प्रमुख उद्देश्य इस प्रकार उल्लेखित किये जा सकते हैं–

1. उपभोक्ता द्वारा स्वीकार योग्य वस्तुओं तथा सेवाओं का उत्पादन करना तथा उनकी समुचित वितरण वयवस्था करनाऋ
2. उपक्रम के स्वामियों तथा विनियोक्ताओं को लाभों के रूप में उचित प्रत्याय प्रदान करनाऋ
3. सभी वर्ग के कर्मचारियों को उचित वेतन तथा मजदूरी प्रदान करना तथा उनके वैयक्तिक मूल्यों (Values) जैसे उचित सम्मान, आदर आदि की संतुष्टि करनाऋ
4. सामाजिक उत्तरदायित्वों का निर्वाह करनाऋ
5. उपर्युक्त सभी उद्देश्यों को प्रभावकारी एवं मितव्ययी रूप में प्राप्त करना।

मानव संसाधन उद्देश्यों की श्रेणियाँ
(Classes of Human Resource Objective)

1. **सेवा उद्देश्य**—किसी भी उपक्रम के उद्देश्यों में, उपक्रम द्वारा, समाज की वस्तुओं तथा सेवाओं की आवश्यकता की पूर्ति की भावना का उद्देश्य जो मूलतः एक सेवा उद्देश्य है, प्रमुख स्थान रखता है। जो भी व्यक्ति, उपक्रम को, उसके इस उद्देश्य की प्राप्ति में सहयोग प्रदान करते हैं उन्हें लाभों तथा अन्य पारिश्रमिक जैसे वेतन, मजदूरी, बोनस आदि तथा वैयक्तिक संतुपि्् के रूप में पारितोषिक प्राप्त होता है। इसलिए कार्यरत व्यक्तियों का यह कर्त्तव्य हो जाता है कि वे उपक्रम को, अपने सेवा उद्देश्य की प्राप्ति में स्वेच्छा से सहयोग प्रदान करें।

   यदि हम उपक्रम के सेवा उद्देश्य को जो कि उसकी स्थापना का प्रमुख उद्देश्य है, भलीभांति हृदयंगम कर पाते हैं तो हमें सेविवर्गीय उद्देश्यों की स्थापना में बड़ी सहायता मिलेगी। चूंकि सेवा उद्देश्य, उपक्रम का प्रमुख उद्देश्य होता है, अतः यह स्वाभाविक ही है कि मानव संसाधन प्रबन्ध जो कि उपक्रम प्रबन्ध का एक अंग है और उपक्रम के उद्देश्यों की प्राप्ति में अंशदान करने की भावना से प्रेरित होकर काम करता है, का प्रथम उद्देश्य उपक्रम द्वारा उत्पादित वस्तुओं तथा कार्यकुशलता से प्राप्त करना होता है। मानव संसाधन प्रबन्ध का प्रयास व्यक्तियों को इस दशा में प्रेरित करना होता है।

2. **व्यक्तिगत उद्देश्य**—मानव संसाधन प्रबन्ध में कार्यरत कर्मचारियों के व्यक्तिगत उद्देश्यों की प्राप्ति, एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान रखती है, सामान्यतः उपक्रम में कार्यरत व्यक्तियों की संख्या कापफी अध्कि होती है तथा इन कार्मिकों के व्यक्तिगत उद्देश्यों में एकरूपता का पाया जाना एक असुगम सम्भावना है। साथ ही अनेक व्यक्तिगत उद्देश्य गुणात्मक प्रकृति के होते हैं और उन्हें परिमाणात्मक रूप में प्रकट करना एक कप्ूसाध्य प्रयास है। अतः मानव संसाधन प्रबन्ध को, इन व्यक्तिगत उद्देश्यों को, यथासम्भव रूप से परिमाणात्मक रूप में व्यक्त करने का प्रयास करना चाहिए। इस प्रकार के प्रयास के पफलस्वरूप, उपक्रम में कार्यरत व्यक्तियों के व्यक्तिगत उद्देश्यों को निम्न प्रकार से सूचीब(किया जा सकता हैः—

   (a) उचित मजदूरी, काम के घण्टे तथा कार्य की दशाएँऋ
   (b) प्रबन्ध निर्णयों में सहभागिताऋ
   (c) आर्थिक सुरक्षाऋ
   (d) विकास के लिए समुचित अवसरऋ
   (e) वैयक्तिक प्रतिध्ठा एवं मान—सम्मानऋ
   (f) सकारात्मक वर्ग भावनाएँऋ

   (a) **उचित मजूदरी, काम के घण्टे तथा कार्य की दशाएँ**—कोई भी मानव संसाधन कार्यक्रम उस समय तक सपफलतापूर्वक लाग नहीं किया जा सकता, जब तक कि कर्मचारी वर्ग मजदूरी—वेतन—संरचना को हृदय से स्वीकार न कर ले। उस समय तक उनसे यह आशा करना कि वे उपक्रम के लिए अध्कितक योगदान प्रदान कर सकेंगे, व्यर्थ हैं अन्य मानव संसाधन कार्यक्रम जैसे, मनोरंजन की व्यवस्था, बीमा व्यवस्था, सुझाव तथा प्रशिक्षण व्यवस्था आदि, उचित—मजदूरी कार्यक्रम का स्थान ग्रहण नहीं कर सकते। अतः यह आवश्यक है कि उपक्रम यथासंभव रूप से उचित मजदूरी की नीति अपनाए तथा कार्मिको को मजदूरी—योजना के अन्तर्निहित औचित्य के सम्बन्ध में विश्वास दिलाए। प्रायः ऐसा देखा गया है कि सर्वोत्तम मजदूरी योजनाएँ आशानुकूल सपफलता प्राप्त नहीं कर पाती, यदि कार्मिक उसे स्वीकार नहीं करते अथवा समझ नहीं पाते अथवा अन्य किसी कारण से उसके प्रति शंकालु हैं।

   कार्य के सम्बन्ध में विशेष कठिनाई अनुभव नहीं की जाती क्योंकि विभिन्न अधिनियमों मुख्यतः कारखाना अधिनियम, 1948 के अन्तर्गत साप्ताहिक कार्य के घण्टों, साप्ताहिक अवकाश, एवजी अथवा क्षतिपूरक अवकाश, कार्य के दैनिक घण्टों, विश्राम—मध्यान्तर, श्रम—समय—विस्तार (spread over) तथा रात्रि पालियों आदि के सम्बन्ध में विस्तृत प्रावधन है।

   ऐसी ही स्थिति कार्य की दशाओं के सम्बन्ध में पाई जाती है। कारखाना अधिनियम, 1948 के अनुसार कार्मिकों के

स्वास्थ्य, सुरक्षा एवं कल्याण हेतु सपफाई की व्यवस्था, व्यर्थ पदार्थे एवं बहने वाले गन्दे पदार्थों की व्यवस्था, संवातन तथा तापमान (ventilation and temperature), ध्ूल और ध्ुआँ, कृत्रिम नमी, अत्यध्कि भीड़—भाड़, प्रकाश व्यवस्था, पेयजल, शौचालय एवं मूत्रालय, थूकदान, यन्त्रों की घेराबन्दी, आंखों की सुरक्षा, नहाने—धेने की सुवधएँ, वस्त्रों को रखने एवं सुखाने की सुविधयें, बैठक की सुविधयें, प्राथमिक उपचार की व्यवस्था, जलवसप—गृह, आश्रय स्थल, विश्राम—कक्ष, भोजन कक्ष, शिशु सदन आदि सभी के सम्बन्ध् में विस्तृत प्रावधन हैं। लेकिन प्रत्येक कार्मिक के लिए सही कार्य—भार की मात्रा निर्धरित कर पाना एक कठिन कार्य है और यह प्रायः प्रबन्ध् और कार्मिकों के मध्य विवाद—ग्रस्त विषय बना रहता है।

(b) **प्रबन्ध् निर्णयों में सहभागिता—**आजकल सभी वर्गों के श्रमिकों द्वारा, प्रबन्ध् निर्णयों में सहभागिता के अध्किार की मांग बलवती होती जा रही है। सामान्यतः यह प्रबन्ध् का नैसर्गिक अध्किार माना जाता है कि वे उपक्रम के सम्बन्ध् में नीति विषयक मामलो में निर्णय लें। लेकिन यदि प्रबन्ध् द्वारा लिये गये निर्णय कार्यरत कर्मचारियों द्वारा स्वतः हृदय से स्वीकार नहीं कर लिए जाते तो उनके क्रियान्वयन की सपफलता संदिग्ध् ही रहती है। ऐसी परिस्थिति में मानव संसाध्न प्रबन्ध् का यह ध्येय होना चाहिए कि वे सभी स्तरों पर कार्यरत व्यक्तियों को प्रबनध् निर्णयों में सम्मिलित करने का प्रयास करें।

(c) **आर्थिक सुरक्षा—**वैयक्तिक उद्देश्यों का एक अन्य महत्त्वपूर्ण समूह है—आर्थिक सुरक्षा की प्राप्ति श्रमिकों को सदा भय बना रहता है कि दुर्घटनाग्रस्त होने पर, अथवा उपक्रम द्वारा प्रयुक्त तकनीक में परिवर्तन करने पर अथवा आर्थिक मन्दी जैसी स्थिति में उनके रोजगार पर कुप्रभाव पड़ सकता है। वैस श्रमिक संगठन, इस दशा में अध्किाध्कि सुरक्षा प्राप्ति के लिए प्रयत्नशील है और विकसित देशों में उन्हें कापफी सीमा तक सपफलता मिली भी है पिफर भी इस दिशा में अभी कापफी कुछ करना शेष है। मानव संसाध्न प्रबन्ध् को भी कार्यरत कर्मचारियों के उद्देश्यों की पूर्ति की दशा में आगे बढ़ाने की दृष्टि से आर्थिक सुरक्षा प्रदान करने के उद्देश्य को निरन्तर ध्यान में रखना चाहिए।

(d) **विकास के अवसर—**मानव संसाध्न प्रबन्ध् में जिस बात को सामान्यतः गौण स्थान मिल पाता है वह है कर्मचारियों के विकास के लिए समुचित अवसर प्रदान करना। इस वैयक्तिक उद्देश्य का महत्त्व इतना प्रकट नहीं है, जितना कि अल्य उपर्युक्त वर्णित उद्देश्यों जैसे उचित मजदूरी, प्रबन्ध् निर्णयों में सहभागिता तथा आर्थिक सुरक्षा आदि का है। साथ ही यह बात भी स्पष्ट है कि सभी कार्मिक विकास के अवसरों की खोज के लिए इतने व्यग्र दिखाई नहीं पड़ते जितने कि वे अन्य वैयक्तिक उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए होते है। पिफर भी मानव संसाध्न प्रबन्ध् की सपफलता इस बात पर कापफी सीमा तक आश्रित रहती है कि कार्यरत व्यक्तियों को उनकी उन्नति तथा विकास के उचित अवसर मिलें। यह देखा गया है कि जब तक उपक्रम मुक्त द्वार नीति का अनुसरण करता है, कार्मिक वर्ग की कार्यकुशलता में, निरोध्क नीति के अनुसरण से आने वाली अकुशलता जो विकास के न्यायपूर्ण अवसरों के खोये जाने के कारण उत्पन्न होती है, नहीं आती।

(e) **वैयक्तिक प्रतिष्ठा एवं मान—सम्मान—**यह उक्ति कि 'मनुष्य केवल खाने के लिए नहीं जीता' बड़ी सारगर्भित है। आत्म—तुष्टि की भावना की जड़ें व्यक्तियों में कापफी गहरी होती है। व्यक्तियों को आत्म—तुष्टि उस समय तक प्राप्त होती है जब उन्हें इस बात का विश्वास हो जाता है कि वे जो कुछ कर रहे हैं वह समाज तथा देश के लिए उपयोगी है। जब उन्हें यह आभास होता है कि उनका जीवन सारयुक्त है तो उन्हें काम में गौरव की अनुभूति होती है। प्रबन्ध् वर्ग के लिए यह एक वास्तविक चुनौती है कि वे, सभी कार्यरत व्यक्तियों को सार्थक एवं सारयुक्त बना पाएँ। जहाँ कार्य रचनात्मक न होकर नैत्यिक प्रकृति का होता है, वहाँ कार्य में सार्थकता तथा सारयुक्ता के दर्शन पाना दुर्लभ होता है।

कार्यरत व्यक्ति अपने कार्य में सार्थकता की अनुभूति कर पायें, इस उद्देश्य से अनेक उपक्रम समय—समय पर इस बात का प्रचार तथा संप्रेषण करते हैं कि उनके द्वारा उत्पादित वस्तुएं किस प्रकार उपभोक्ता तथा समाज की महती आवश्यकताओं की पूर्ति करती हैं और इस प्रकार वे (उपक्रम) समाज सेवा में संलग्न हैं। कर्मचारी—वर्ग से समय—समय पर सुझाव आमन्त्रित किये जाते हैं और उपक्रम उन सुझावों के प्रति सम्मान प्रदर्शित कर समस्त कर्मचारी वर्ग के प्रति अपना सम्मान दर्शाता है और इस प्रकार उनके मान और प्रतिष्ठा में अभिवृद्धि करता है।

(f) **सकारात्मक वर्ग भावनाएँ**—आजकज इस बात को भी मान्यता दी जाने लगी है कि मानव संसाध्न प्रबन्ध् को अपना ध्यान, वर्ग के अन्दर, अन्तर्वैयक्तिक सम्बन्ध्ें के कारण उत्पन्न होने वाली भावनाओं की ओर भी देना चाहिए। वर्ग भावनायें, वैयक्तिक भावनाओं को प्रभावित करती हैं। इसलिए मानव संसाध्न प्रबन्ध् को चाहिए कि वे आरम्भ से ही वर्ग भावनाओं को एक सकारात्मक दिशा प्रदान करे।

3. **सामुदायिक एवं सामाजिक उद्देश्य**—व्यावसायिक संगठन समाज का ही अंग होते हैं। अतः किसी भी व्यावसायिक संगठन की परिसीमा तक कार्य के घण्टों में जो कुछ भी होता है, उसका पास—पड़ौस के समुदाय एवं समाज पर प्रभाव पड़े बिना नहीं रहता। इस देश में अध्किांश व्यवसायी वर्ग, अपने सामाजक उत्तरदायित्त्वों के प्रति सदा से ही उदासीन रहा है। समाज में व्यवसायी वर्ग के इस रवैये के विरू(प्रतिक्रिया आरम्भ हो गई है। राज्य द्वारा समय—समय पर जन कल्याण सम्बन्धी विधन का बनाया जाना इस प्रतिक्रिया का द्योतक है। कुछ प्रगतिशील उपक्रम स्वेच्छा से ही अपने सामाजिक दायित्वों के प्रति अपने कर्त्तव्यों का निर्वाह करने लगे हैं।

उपक्रम के सामाजिक दायित्वों का निर्वाह करने के उद्देश्य, से मानव संसाध्न कार्यक्रमों को भी उन्हीं के अनुरूप ढालना चाहिए। उदाहरणार्थ, शिक्षण संस्थाओं में व्यावसायिक एवं तकनीकी शिक्षा ग्रहण करने वाले विद्यार्थियों के लिए प्रशिक्षण की व्यवस्था करना, समाज के पिछड़े तथा दलित वर्ग के रोजगार की विशेष वयवस्था करना, वृ(ावस्था बीमा की व्यवस्था करना आदि।

4. **मितव्ययिता तथा प्रभावकारिता**—उपर्युक्त वर्णित समस्त उद्देश्यों को मितव्ययिता के साथ प्रभावकारी ढंग से साध्ने का प्रयास करना चाहिए। किसी भी उपक्रम के साध्न असीमित नहीं होते। सीमित साध्नों का जिनमें कि मानवीय साध्न भी सम्मिलित हैं, प्रभावकारी ढंग से उपयोग किया जाना चाहिए। जो संगठन साध्नों का अपव्यय करते हैं। वे प्रतिस्पर्ध की दौड़ में पिछड़ जाते हैं। साथ ही साथ यह बात भी ध्यान में रखने की है कि कार्मिक उन्हीं संगठनों में अपने वैयक्तिक उद्देश्यों को प्राप्त कर सकते हैं जो संगठन सपफलता से चलाये जा रहे हैं।

स्कॉट, क्लोथियर एवं स्प्रीगल (Scott, Clothier and Spregal)—के अनुसार, फ्एक संगठन में मानव संसाध्न प्रबन्ध्, मानव संसाध्न प्रशासन अथवा औद्योगिक सम्बन्ध्ें का उद्देश्य अध्कितम वैयक्तिक विकास, सेवानियोजकों एवं कर्मचारियों और कर्मचारियों एवं कर्मचारियों के मध्य सौहार्दपूर्ण कार्यकारी सम्बन्ध्ें की स्थापना तथा मानवीय सम्बन्ध्ें को भौतिक साध्नों के अनुरूप बनना है।य्

गोयल एवं मेयरस (Goyal and Myers) के अनुसार मानव संसाध्न प्रशासन के निम्न उद्देश्य हैं—

1. मानवीय साध्न का प्रभावकारी ढंग से उपयोग।
2. संगठन के सभी सदस्यों के मध्य वांछनीय कार्यकारी सम्बन्ध्।
3. अध्कितम वैयक्तिक विकास।

संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि किसी भी उपक्रम में, उपक्रम तथा कार्यरत व्यक्तियों के उद्देश्यों को कार्मिक प्रबन्ध् के कार्यक्रमों में भली प्रकार समावि५ किया जाना चाहिए। **प्रो. जॉन एपफ. मी.** (John F. Mee)ने एक तालिका द्वारा इस बात को समझाने का प्रयास किया है। हम उस तालिका को उद्घृत कर रहे हैं—

1. रेखा अथवा सैनिक संगठन (Line Organization)तथा
2. रेखा एवं कर्मचारी संगठन (Line and Staff Organization)।

विभागों तथा प्रभागों के गठन के आधर पर, संगठनों को दो निम्न श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है, नामतः

1. विभागीय अथवा प्रभागीय संगठन (Divisonalized Organization),
2. क्रियाशील संगठन (Functional Organization)।

पीटर ड्रकर ने उक्त संगठनों को क्रमशः ;1द्ध संघीय विकेन्द्रीयकरण (Federal Decentralization) तथा ;2द्ध क्रियाशील विकेन्द्रीयकरण (Functional Decentralization) के नाम से पुकारा है।

अन्तर्व्यक्तिगत सम्बन्धें के आधर पर संगठनों के निम्न दो रूप हो सकते हैं—

1. औपचारिक संगठन (Formal Organization),
2. अनौपचारिक संगठन (Informal Organization)

संगठनों के उक्त स्वरूपों के अतिरिक्त विभिन्न संगठनों में ;1द्ध समितियों (Committees) तथा ;2द्ध कृतिक बल (Task Force), जैसी संगठन विध्यिों का प्रयोग किया जाता है। आजकल इन विध्यिों का प्रयोग कुछ अध्कि दिखलाई पड़ता है। अतः प्रचलन के आधर पर इन्हें भी संगठन की श्रेणियों के समकक्ष की दर्जा प्रदान कर दिया गया है। संगठनों के इन दो स्वरूपों के अलावा आलकल संगठन का नया स्वरूप भी स्प५ रूप से उभरता दिखलाई पड़ता है, जिसे मैट्रिक्स संगठन (Matrix Organization) की संज्ञा प्रदान की जाती है।

यहाँ पर यह स्प५ कर देना उचित होगा कि संगठन के उक्त विभिन्न रूप अपवर्जी (Exclusive) नहीं हैं। ये स्वरूप आधराश्रित हैं अर्थात् श्रेणीकरण का आधर बदलने पर संगठन का रूप या श्रेणी भी बदल जाती है। इस प्रकार कोई भी उपक्रम श्रेणीकरण के विभिन्न आधरों के अनुसार एक से अध्कि प्रकार के संगठन के स्वरूपों से सम्बन्ध्ति हो सकता है।

मानव संसाध्न विभाग और संगठन संरचना
(Human Resource Department and Organisational Structure)

हमने पिछले कुछ पृ९ो में संगठन से आशय, महत्त्व, संगठन—संरचना और विभिन्न स्वरूपों के सम्बन्ध में सै(ान्तिक विचार प्रस्तुत किये हैं। आगे हम कुछ पृ९ों में कम्पनियों द्वारा मानव संसाध्न विभाग के गठन की चर्चा करेंगे। इस विषय में निम्नांकित दो बिन्दुओं पर विचार किया जायेगाः—

1. किसी भी कम्पनी की संगठन—संरचना में मानव संसाध्न विभाग की क्या स्थिति होती है,
2. मानव संसाध्न विभाग की आन्तरिक संगठन—संरचना किस प्रकार की जाती है।

संगठन संरचना में मानव संसाध्न विभाग की आवश्यकता
(Need of Human Resource Department in Organisational Structure)

संगठन की संरचना का अन्तिम दायित्व मुख्य अध्शिासी का होता है। मुख्य अध्शिासी द्वारा इस विषय में सलाह देने के लिए 'संगठन आयोजन एवं अभिकल्पना' (Organization Planning and Design) जैसी समिति का गठन किया जा सकता है। इस समिति में 'मानव संसाध्न विशेषज्ञ' को भी सम्मिलित किया जा सकता है। यह समिति मुख्य अध्शिासी को संगठन संरचना के विषय में सलाह देती है और सभी विभागों की आन्तरिक संरचना की रूपरेखा भी तैयार करती है। कुछ कम्पनियाँ अपनी संगठन संरचना में ही एक अलग विभाग 'संगठन आयोजन' के नाम से गठित कर लेती हैं। यह विभाग 'संगठन आयोजन एवं अभिकल्पना' समिति से भिन्न होता है। विभाग की स्थापना स्थायी आधर पर की जाती है और यह विभाग मुख्य अध्शिासी को निरन्तर रूप से आवश्यकतानुसार संगठन संरचना में किये जाने वाले परिवर्तनों के सम्बन्ध में सलाह देता रहता है। ;इस विभाग की, संगठन में 'कर्मचारी (Staff) की स्थिति होती है। बहुत बड़े प्रति९ान ही इस प्रकार के विभाग का अलग से गठन करने की स्थिति में होते हैंद्ध उदाहरण के लिए भारत सरकार तथा राज्य सरकरों में 'Organization and Methods[15] नाम से अलग विभाग या प्रको८ का गठन किया जाता है। विद्यमान कम्पनी परिवर्तित विशेष परिस्थितियों में यदि संगठनात्मक संरचना में कुछ हेर पफेर आवश्यक समझती है तो बाह्य विशेषज्ञ सलाहकारों की नियुक्ति कर सकती

15. यह विभाग संगठनात्मक संरचना पर विचार करने के अतिरिक्त कार्य प(तियों तथा कार्य विध्यिों पर भी विचार करता है।

है। कम्पनी की संगठन संरचना किसी के द्वारा अथवा किसी भी सलाह पर क्यों न की जाये, बड़ी कम्पनियों में अलग से मानव संसाध्न विभाग की स्थापना किया जाना सुनिश्चित ही है। मानव संसाध्न विभाग के महत्त्व के कुछ प्रमुख निम्नांकित हैं जिनकी वजह से कम्पनी की संगठन संरचना में इस विभाग को एक स्वतन्त्र विभाग का दर्जा दिया जाता है।

मानव संसाध्न कार्य का क्षेत्र व्यापक, जटिल एवं विशेषता प्राप्त है। मानव संसाध्न कार्यों में सेवा नियोजन (Employment), प्रशिक्षण, भृति एवं वेतन प्रशासन, स्वास्थ्य एवं सुरक्षा, श्रम कल्याण, सामूहिक सौदेबाजी, आदि बहुत से कार्यों का समावेश होता है। कहीं–कहीं जन सम्पर्क, सम्प्रेषण ;कार्मिकों एवं जन–साधरणद्ध जैसे अन्य कार्यों का दायित्व भी इसी विभाग को सौंप दिया जाता है। विगत दो–तीन दशकों में मानवीय सम्बन्धें की विचारधरा ने कापफी जोर पकड़ा है। इसका प्रभाव यह हुआ है कि एक ओर तो मानव संसाध्न कार्यों का क्षेत्र अध्कि व्यापक हुआ है और दूसरी ओर इनके महत्त्व में अभिवृ(ि हुई हैं परिणामस्वरूप अब कोई भी अध्शिासी इन कार्यों को आकस्मिक एवं अनियमित रूप से सम्पादित करने की जोखिम नहीं उठा सकता। अतः स्वतन्त्र रूप से मानव संसाध्न विभाग की स्थापना करना आवश्यक होता है।

मानव संसाध्न कार्यों के सम्पादन में देश के सामान्य विधन के ज्ञान के अतिरिक्त श्रम–विज्ञान एवं मनोविज्ञान के विशद् ज्ञान की आवश्यकता होती है।

मानव संसाध्न प्रबन्ध का क्षेत्र
(Scope of Human Resource Management)

अथवा

मानव संसाध्न प्रबन्ध के कार्य क्षेत्र
(Functional Areas of Human Resource Management)

मानव संसाध्न प्रबन्ध के कार्य क्षेत्र एवं प्रबन्ध्कों के कार्यों के विषय में भिन्न–भिन्न लेखकों ने अपने विचार भिन्न–भिन्न प्रकार से दिए हैं। उन सब विचारों को यहाँ देना तो संभव नहीं होगा लेकिन प्रमुख लेखकों के विचार नीचे प्रस्तुत हैं–

1. डेल्योडर एवं राबर्ट जे. नेल्सन (Daleyoder and Robert J. Nelson) ने इसे सात वर्गों में विभाजित किया है–
   - (i) **विभागीय प्रशासन** (Departmental administration)–इसके अन्तर्गत योजना बनाना, नीति निर्धरण तथा सामान्य प्रशासन आदि।
   - (ii) **श्रीमिकों का चुनाव करके काम पर लगाना** (Employment and placement of Personnel)—इसके अन्तर्गत भर्ती, कार्य विश्लेषण तथा विवरण तैयार करना।
   - (iii) **प्रशिक्षण** (Training) नए तथा पुराने कर्मचारियों के प्रशिक्षण की व्यवस्था करना।
   - (iv) **सामूहिक सौदेबाजी** (Collective Bargaining)—श्रमिकों को सामूहिक सौदेबाजी के लिए प्रोत्साहित करना।
   - (v) **मजदूरी एवं वेतन प्रशासन** (Wages and Salary Administration)—कार्य मूल्यांकन, मजदूरी सम्बन्धी सर्वेक्षण आदि।
   - (vi) **लाभ एवं सेवाएँ** (Benefits and Services)—बीमा, चिकित्सा सुविधएँ आदि।
   - (vii) **शोध्कार्य** (Research)—मानव संसाध्न एवं मानवीय सम्बन्धें के विषय में अध्ययन, योजनाएँ तैयार करना तथा उन्हें लागू करना।

2. **स्ट्रॉस तथा सेयल्स** (George Strauss and Leonard Syalls) के अनुसार मानव संसाध्न प्रबन्ध के कार्य क्षेत्र में निम्नलिखित बातं सम्मिलित होती हैं—

   (i) श्रमिकों की भर्ती, चयन एवं उनको काम पर लगाना (Placement)।

   (ii) कार्य विश्लेषण (Job analysis), कार्य विवरण (Job description) तथा कार्य मूल्यांकन (Job Evaluation) करना।

   (iii) हर्जाना एवं व्यक्तिगत कार्य के मूल्यांकन की योजना बनाना एवं लागू करना।

   (iv) श्रमिकों के रोजगार सम्बन्धी रिकार्ड रखना।

   (v) रोजगार से सम्बन्धित लाभ कार्यक्रम बनाना।

   (vi) विशेष सेवाएँ जैसे सुरक्षा, नियन्त्रण तथा संदेशवाहन की व्यवस्था करना।

   (vii) प्रशिक्षण एवं शिक्षण कार्यक्रम बनाना।

   (viii) श्रम सम्बन्धें को अच्छा बनाने के लिए कार्य करना।

   (ix) जन–सम्पर्क सम्बन्धी कार्य करना।

   (x) मानव संसाध्न विध्यिाँ निर्धरित करना।

3. **नार्थकाट, केरी, किण्डाल** (C.H. Northcott, H.H. Carey, A.F. Kindall) ने मानव संसाध्न प्रबन्ध के कार्य क्षेत्र को निम्न भागों में विभाजित किया है—

   (i) श्रमिकों की भर्ती के तरीके, चयन, प्रशिक्षण, शिक्षा तथा इनका उचित उपयोग करना।

   (ii) रोजगार की शर्तें एवं भुगतान स्तर, कार्य की दशाएँ तथा कर्मचारियों के लिए सुविधएँ तथा सेवाएँ।

   (iii) सेवायोजकों/मालिकों तथा कर्मचारियों/श्रमिकों तथा उनके एजेन्टों के बीच संयुक्त परामर्श और झगड़ों के समाधन के लिए सुविधओं को बनाये रखने एवं उनके प्रभावशाली उपयोग से सम्बन्धित होना।

मानव संसाध्न प्रबन्ध के कार्य मानवीय साध्नों में विनियोग से सर्वाध्कि प्रतिपफल (Returns) प्राप्त करने का प्रयास करते हैं। इसलिए मानव संसाध्न प्रबन्ध का कार्य केवल पर्याप्त जनशक्ति प्रदान करना ही नहीं होता अपितु यह निश्चित करना भी होता है कि विभाग की सहायता से मानव पूंजी का मूल्य बढ़े। समय के साथ मानव संसाध्न प्रबन्ध में व्यापक और अध्कि महत्त्वपूर्ण कार्यों को सम्मिलित करने की प्रवृति बढ़ी है, इसलिए विभिन्न लेखकों ने मानव संसाध्न प्रबन्ध के कार्य क्षेत्र (Scope) में वे सब बातें सम्मिलित की हैं जिनको मानव संसाध्न प्रबन्ध के द्वारा सामान्यतः किया जाता है।

साधरणतया मानव संसाध्न क्रियाओं को दो भागों में विभाजित किया जाता है—

1. **काम करने से सम्बन्ध्ति कार्य** (Operative Functions)
2. **प्रबन्ध्कीय कार्य** (Management Functions)।

1. **काम करने से सम्बन्ध्ति कार्य** (Operative Functions)—इसके अन्तर्गत कर्मचारियों/श्रमिकों की भर्ती प्रणाली और उनके विकास से लेकर उनको उचित हर्जाना (Compensation) देने तथा उनको कार्य पर बनाये रखने से सम्बन्ध्ति क्रियाएँ शामिल हैं—

   ;कद्ध **श्रमिकों की भर्ती** (Recruitment)—चुनाव तथा उन्हें काम पर लगाना।

   ;खद्ध **विकास करना** (Developing) प्रशिक्षण द्वारा कर्मचारियों की कुशलता एवं दक्षता (Skill) में वृ(करना।

   ;गद्ध **श्रमिकों का उचित उपयोग** (Best Utilization)—मजदूरी, सर्वेक्षण, कार्य विभाजन (Job Classification), कार्य विश्लेषण (Job Analysis), मजदूरी की दरों का निर्धरण, लाभ विभाजन की योजनाएँ बनाना आदि कार्य आते हैं।

;घद्ध **श्रमिकों/कर्मचारियों को काम पर बनाए रखना** (Maintaining)—काम की अच्छी दशाएँ, स्वास्थ्य सम्बन्धी योजनाएँ, दुर्घटनाओं से बचाव के कार्यक्रम आदि इसके अन्तर्गत आते हैं।

2. **प्रबन्ध्कीय कार्य** (Management Functions)—प्रबन्ध् का मुख्य कार्य अपने अधीनस्थों के माध्यम से निश्चित उद्देश्यों की प्राप्ति करना होता है जिसके लिए उसे कई कार्य करने पड़ते हैं। प्रायः प्रबन्ध् के कार्य तथा संस्था के कार्यों में मतभेद उत्पन्न हो जाता है तथा उत्पादन, क्रय–विक्रय आदि कार्यों को ही प्रबन्ध् का कार्य समझ लिया लाता है। यह बात उपयुक्त नहीं है। वास्तव में ये प्रबन्ध् नहीं बल्कि संस्था के कार्य हैं। ये कार्य विभिन्न संस्थाओं में भिन्न–भिन्न होते हैं। एक यातायात कम्पनी में उत्पादन की बजाय वस्तुओं को गन्तव्य स्थान पर ले जाना ही कार्य होता है। ये कार्य संस्था के रूप के अनुसार अलग–अलग होते हैं। दूसरी ओर प्रबन्ध् के वे कार्य होते हैं जो प्रत्येक प्रबन्ध्क को करने होते हैं, चाहे वह संस्था, चर्च, स्कूल, अस्पताल, व्यवसाय, सेना या अन्य कोई समूह हो। इस प्रकार चाहे वह क्रिया उत्पादन, विक्रय, वित्त कोई भी हो, प्रत्येक विभाग के प्रबन्ध्क समान कार्य में लगे रहते हैं। इन कार्यों का रूप समान रहता है। इन कार्यों को विभिन्न लेखकों व विशेषज्ञों ने भिन्न–भिन्न प्रकार से वर्गीकृत किया है। यद्यपि वर्गीकरण पृथक्–पृथक् है पिफर भी लगभग सभी विद्वानों के तत्वों (Contents) में समानता है। कुछ लेखों ने प्रबन्ध् के तीन कार्य बताए हैं तो कुछ ने आठ। **आर॰सी॰ डेविस** (R.C. Davis) ने प्रबन्ध् के नियोजन, संगठन तथा नियन्त्रण (Planning; Organising and Controlling) तीन कार्य बताए हैं। **लॉरेंस ए॰ अप्ले** (Lawrence A. Appley) ने भी प्रबन्ध् के नियोजन, कार्यान्वयन तथा नियंत्रण (Planning, Organising and Controlling) तीन कार्य माने हैं। **ई॰एपफ॰एल॰ ब्रैच** (E.F.L. Brech)ने प्रबन्ध् के नियोजन, प्रेरणा, समन्वय तथा नियंत्रण (Planning, Motivating, Co-ordinating and Controlling) चार कार्य माने हैं। **हैनरी पफेयाल** ने प्रबन्ध् के नियाजन, संगठन, आदेश, समन्वय तथा नियंत्रण (Planning, Organising, Co-ordinating and Controlling) पांच कार्य दिए हैं। **जार्ज टैरी** ने प्रबन्ध् के नियोजन, संगठन, प्रेरणा तथा नियंत्रण (Planning, Organising Motivating and Controlling) चार कार्य माने हैं। **गुलीक** (Gulick) ने प्रबन्ध् के नियोजन, संगठन, स्टापिंफग, निर्देशन, समन्वय, रिपोर्टिंग तथा बजटिंग (Planning, Organising, Staffing, Directing, Co-ordinating, Reporting and Budgeting)सात कार्य बताए हैं। **हैरल्ड कूण्टज तथा ओ. डोनेल** ने प्रबन्ध् के नियोजन, संगठन, स्टापिंफग, निर्देशन तथा नियन्त्रण पाँच कार्य माने हैं। इन सभी लेखकों द्वारा दी गई कार्य–प्रणाली में समानता है। कुछ ने कार्य के नाम में परिवर्तन कर दिया है तथा कुछ ने दो–तीन कार्यों को संयुक्त एक दी नाम दे दिया है तथा कुछ ने एक ही कार्य को विभाजित कर अलग–अलग नाम दे दिया है। वास्तव में यदि देखा जाए तो **हैरलड कूण्टज** तथा **ओ. डोनेल** द्वारा दिया गया वर्गीकरण सबसे अध्कि उपयुक्त है क्योंकि यह विस्तृत होने के साथ–साथ व्यवस्थित ढंग से प्रबन्ध्कीय प्रक्रिया को स्पष्ट कार्यों में विभाजित करता है। साथ ही अध्कितर प्रबन्ध्कीय लेखक इसी वर्गीकरण को उपयुक्त मानते हैं। **हैरल्ड कूण्टज** तथा **ओ. डोनेल** ने प्रबन्ध् के इन पाँच कार्यों के अतिरिक्त समन्वय (Co-ordination) को अलग कार्य न मानते हुए प्रबन्ध् का सार (Essence) माना है।

इन कार्यों का संक्षिप्त वर्णन निम्नलिखित है—

1. **नियोजन** (Planning) योजना से आशय भविष्य की क्रियाओं का वर्तमान में निर्धरित करने में है। निर्धरित लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिये, **भविष्य में क्या करना है? कैसे करना है? और किसके द्वारा किया जाना है? का पूर्व निर्धरण ही नियोजन है।** इस दृष्टि से नियोजन एक बौद्धिक क्रिया है जिसके लिए रचनात्मक विचार एवं कल्पना आवश्यक है। ("Planning is an intellectual process in which creative thinking and imagination are essential"–Haynes and Massie) **प्रबन्ध् में नियोजन से अभिप्राय निर्धरित लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए उपलब्ध् वैकल्पिक विध्यिों, नीतियों तथा कार्यक्रमों में सर्वश्रेष्ठ का चुनाव करने से है।**

   (i) **जार्ज आर. टेरी** (George R. Terry)—पनियोजन भविष्य में झांकने की एक विध् िया तकनीक है। भावी आवश्यकताओं का एक रचनात्मक पुनर्निरीक्षण है ताकि वर्तमान क्रियाओं को निर्धरित लक्षणों के संदर्भ में समायोजित किया जा सके।य[16]

16. "Planning is a method or technique of looking ahead, a constructive reviewing of future needs so that present actions can be adjusted in view of the established goal." **George R. Terry** : Principles of Management

(ii) **कून्टज एवं ओडोनेल** (Koontz and O'Donell)—**फ्क्या करना है, इसे कैसे करना है, इसे कब करना है, और इसे किसे करना है**—का पूर्ण निर्धरण ही नियोजन है।य[17]

(iii) **एम.ई॰ हर्ले** (M.E. Hurley)—फ्क्या करना हैय इसके पूर्व निर्धरण ही नियोजन हैं इसके अन्तर्गत विभिन्न वैकल्पिक उद्देश्यों, नीतियों, कार्यविध्यिों और कार्यक्रमों में से सर्वश्रेष्ठ का चयन किया जाना सम्मिलित होता है।य[18]

इन्हीं बातों के निर्धरण के लिए अध्कि उपयुक्त ढंग, उद्देश्य, नीतियाँ, विध्यिाँ, प्रोग्राम, बजट आदि का निर्धरण करना है। उद्देश्य उसे यह बताते हैं कि कोई कार्य करना है तथा क्या करना है, नीतियाँ कार्य की सीमा निर्धरण करती हैंऋ विध्यिाँ कार्य का ढंग बतलाती हैं तथा प्रोग्राम, बजट आदि कार्य कहाँ, कब, क्यों, के विषय में विस्तृत रूप से बताते हैं। आधुनिक समय में योजना बनाने का यही ढंग प्रयोग होता है। तथा संस्थान आरम्भ में इनका ही निर्धरण करते हैं।

2. **संगठन** (Organisation)—संस्था के उद्देश्यों की प्राप्ति में लगे व्यक्तियों में कार्य, अध्किार तथा उत्तरदायित्व का विभाजन करना तथा उनमें आपसी सम्बन्ध स्थापित करना संगठन कहलाता है। यह इसलिए किया जाता है ताकि किये जाने वाले कार्यों का अपव्यय तथा पुनरावृत्ति न हो तथा कार्य गलत होने की अवस्था में उत्तरदायित्व निश्चित किया जा सके। साथ ही इसमें प्रत्येक सदस्य की सामूहिक शक्ति का संस्था के उद्देश्यों के लिए प्रयोग होता है तथा विशिष्ीकरण के लाभ प्राप्त होते हैं। प्रत्येक सदस्य का कार्य–स्थान, किसके अधीन कार्य करेगा, उसके अधीन कौन होगा, कौन उसे किस प्रकार की तकनीकी मदद देगा आदि बातें निर्धरित हो जाती हैं। इससे एक व्यक्ति, जो मुख्य प्रबन्ध्क होता है, संस्था के सभी व्यक्तियों के कार्य नियंत्रित व निश्चित करने के योग्य हो जाता है।

3. **स्टापिंफग** (Staffing)—संगठन का निर्धरण हो जाने के बाद संगठन के लिये कार्यकुशल प्रबन्ध्कों की आवश्यकता होती है। इस कार्य के अन्तर्गत आधुनिक विध्ि जिसमें टैस्ट (Test), साक्षात्तकार (Interview) आदि हैं, की मदद से एक प्रबन्ध्क को अपने लिए उपयुक्त कार्यकर्ताओं का चुनाव करना पड़ता है। उन्हें प्रशिक्षण देना पड़ता है। प्रबन्ध्कों के चुनाव के लिए कार्य–विश्लेषण (Job Analysis) करना पड़ता है जिससे प्रबन्ध्कों की समस्त योजनाओं का पता चल जाता है। विज्ञापन देने तथा साक्षात्कार पर प्रश्न पूछने में भी यह विशेष सहयोग देती है। चुनाव के लिये बाहर से भी व्यक्ति आ सकते हैं लेकिन अध्कितर अपने ही कर्मचारियों की पदोन्नति उचित मानी जाती है। इसके लिए प्रत्येक कर्मचारी तथा प्रबन्ध्क की योग्यता का मूल्यांकन किया जाता है जो पदोन्नति करते समय सहायता देता है। संस्था में कार्य मूल्यांकन (Job Evalution) किया जाता है जिसके आधर पर वेतन निश्चित किया जाता है।

4. **निर्देशक** (Directing)—उद्देश्य प्राप्ति के लिये योजना बनाना, संगठन निर्धरित करना तथा उसके लिये आवश्यक व्यक्तियों की नियुक्ति करना तथा उन्हें अध्किार देना ही पर्याप्त नहीं है। कार्य शुरू करने के लिए प्रबन्ध्क की ओर से निर्देशन मिलना अनिवार्य है। शुरू होने के बाद भी प्रबन्ध्क समय–समय पर आने वाली रूकावटें दूर करता रहे तथा उनकी समस्याएँ दूर करता रहे। बिना निर्देशन के तो वास्तव में कार्य शुरू ही नहीं हो सकता। कार्य आरम्भ हो जाने के बाद प्रबन्ध्क देखता रहे कि कार्य ठीक हो रहा है या नहीं, नहीं हो रहा है तो उसक ठीक करने में मदद देनी चाहिये। प्रबन्ध्क के इस कार्य में सन्देशवाहन, उसकी नेतृत्व की योग्यता, मनुष्य के स्वभाव का ज्ञान विशेष मदद देते हैं। इस रूप में संस्था में उत्तम सन्देशवाहन का प्रबन्ध हो तथा प्रबन्ध में ये दोनों विशेषताएँ पाई जानी चाहिए।

5. **नियन्त्रण** (Controlling)—यदि उपर्युक्त चारों कार्य पूरी तरह सम्पन्न हो जायें तब कोई कारण नहीं कि उद्देश्य की प्राप्ति न हो तथा प्रबन्ध्क के लिये और कार्य ही न रहे। परन्तु किसी भी व्यक्ति का कार्य पूर्णरूप से सही नहीं

---

17. "Planning is deciding in advance what to do it, how to do it, when to do it, and who is to do it."
Koontz and O'Donnell : Principal of Management

18. "Planning is deciding in advance what is to be done. It involves the selection of objectives, policies, procedures and programmes from among alternative."
M.E. Hurely : Business Administration

हो सकता। मनुष्य से गलती होती है। बनाई गई योजना में कमी रह सकती है, संगठन पर्याप्त न बना हो, निर्देशन गलत हो या जिन परिस्थितियों में योजना बनाई गई थी या संगठन बनाया गया था, वे बदल गई हों। ऐसी अवस्था में उद्देश्य प्राप्ति में कठिनाई आना स्वाभाविक है। ऐसे समय में प्रबन्ध्क को नियन्त्रण का कार्य करना होता है। संस्था में कोई भी व्यक्ति जितना भी कुशल हो परन्तु उसके कार्य की जांच आवश्यक है ताकि उसकी कार्य–गति का पता चल सके। उसके कार्य की गलतियाँ उसे बताई जाएँ ताकि दोबारा ऐसी गलतियाँ न होने पाएँ। नियंत्रण करने के लिये प्रत्येक कार्य के उद्देश्य निर्धरित किये जाते हैं। कार्य पूरा होने पर कार्यों को उद्देश्यों से मिलाया जाता है तथा जाँच की जाती है कि वह योजना व उद्देश्य के अनुसार हो रहा है या नहीं या गलती की अवस्था में कार्य की गलतियों व कमियों को दूर किया जाता है।

प्रबन्ध के पाँच कार्य है जो प्रत्येक प्रबन्ध्क को करने होते हैं चाहे वह किसी भी समूह का प्रबन्ध किसी भी स्तर पर कर रहा हो। इस तरह एक प्रबन्ध्क जो इन कार्यों में पर्याप्त ज्ञान तथा अनुभव रखता है किसी भी संस्था तथा क्रिया का प्रबन्ध करने में सपफल हो सकता है यदि उस कार्य के लिये किसी तकनीकी ज्ञान की आवश्यकता नहीं है।

निष्कर्ष (Conclusion)—मानव संसाध्न प्रबन्ध के कार्य–क्षेत्र में न केवल पर्याप्त मात्रा में जनशक्ति की व्यवस्था करना अपितु इस बात को निश्चित करना भी सम्मिलित है कि मानवीय साध्न का योगदान, **मानव संसाध्न विभाग** (Human Resource Department) की सहायता और प्रोत्साहन से अच्छी तरह बढ़ सकें। समय की करवट के साथ–साथ मानव संसाध्न प्रबन्ध के कार्य क्षेत्र में भी क्रांतिकारी परिवर्तन हुए हैं और जब इसके कार्यक्षेत्र के अन्दर अध्कि व्यापक और महत्त्वपूर्ण कार्यों को सम्मिलित किया गया है। वर्तमान समय में मानव संसाध्न प्रबन्ध्कों (Human Resource Management) का विशेष कार्यों के दायित्वों को निभाने के लिये विशेष पदों (Positions) पर नियुक्त किया जाने लगा है।

मानव संसाध्न प्रबन्ध्कीय कार्यों की प्रकृति
(Nature of Managerial Functions)

प्रबन्ध के कार्य सार्वभौमिक हैं। हाँ, इतना अवश्य है कि प्रत्येक संस्था की प्रकृति अलग–अलग होने के कारण इनमें कुछ अन्तर अवश्य आ जाता है। संक्षेप में प्रबन्ध्कीय कार्यों की प्रकृति निम्नलिखित है—

1. प्रबन्ध सम्बन्धी क्रियाएँ प्रायः सभी उद्योगों में समान ही होती है।
2. तकनीकी योग्यता प्रबन्ध्कीय क्षमता में चार चाँद लगा देती है।
3. प्रबन्ध किसी भी उपक्रम में अन्य लोगों से काम लेने वाला घटक समझा जाता है।
4. प्रबन्ध से पूर्व निर्धरित लक्ष्य प्राप्त किये जाते है।
5. वर्तमान समय में, प्रबन्ध अन्य लोगों के द्वारा तथा उनके साथ मिलकर काम करना (Getting work done through and with others) प्रबन्ध दर्शन की आधुनिक प्रक्रिया है।
6. प्रबन्ध सामूहिक रूप से काम करने वालों से चातुर्य व विवेक से काम लेने की प(ति है, जिससे न्यूनतम लागत पर अध्कितम, श्रे(तम तथा सस्ता उत्पादन सम्भव हो सके।

कर्मचारी विभाग के कार्य
(Functions of Personnel Departement)

मानव संसाध्न प्रबन्ध का सम्बन्ध श्रे(मानवीय साध्नों की प्राप्ति तथा उन्हें संस्था में प्रत्येक स्तर पर हर तरह से सन्तुष्ट रखकर, कर्मचारियों की एक स्थायी टीम का निर्माण करना होता है। साथ ही उसका सम्बन्ध मानवीय साध्नों की कार्यकुशलता से होता है, जिसके लिए उचित चुनाव, प्रशिक्षण, वेतन, सुरक्षा, दुर्घटना रोकने की व्यवस्था, कर्मचारियों के झगड़ों को सुलझाना, उनमें पफैले असन्तोष को दूर करना तथा कर्मचारियों के विषय में अनुसन्धन करके उनकी कार्यकुशलता वृ(के ढंग विकसित करना आदि कार्य एक मानवीय प्रबन्ध्क को करने होते हैं। इसके अतिरिक्त उसे सामान्य प्रबन्ध्कीय कार्य भी करने होते हैं। ये कार्य प्रत्येक प्रबन्ध्क करता है चाहे वह उत्पादन, वित्त, क्रय या मानवीय विभाग में है। इस आधर पर मानव संसाध्न प्रबन्ध तीन तरह के कार्य करता है: 1. प्रबन्ध्कीय कार्य, 2. क्षेत्रीय कार्य, 3. क्रियात्मक कार्य। इनका विवरण निम्न प्रकार से है—

मानवीय प्रबन्ध के कार्य
(Functions of Human Resource Management)

1. प्रबन्धकीय कार्य
(Management Functions)

1. नियोजन
2. संगठन
3. नियुक्ति
4. निर्देशन
5. नियन्त्रण

परामर्शी कार्य
(Advisory Functions)

1. मानवीय प्रबन्ध नीति–निर्धरण में उच्च प्रबन्धक को सेवाएँ–तथा सलाह प्रदान करना
2. विभागीय अध्किारियों को मानवीय समस्याओं पर परामर्श तथा सेवा प्रदान करना

क्रियात्मक कार्य
(Operative Functions)

1. चुनाव तथा नियुक्ति
2. प्रशिक्षण तथा विकास
3. मजदूरी तथा वेतन
4. औद्योगिक सम्बन्ध
5. सुरक्षा
6. चिकित्सा
7. अनुसन्धन
8. श्रम कल्याण
9. श्रम अधिनियम का पालन

प्रबन्ध्कीय कार्य
(Management Functions)

इनका संक्षिप्त वर्णन निम्न प्रकार है—

(i) **नियोजन** (Planning)—प्रत्येक कार्य प्रारम्भ करने से पूर्व उसके विषय में विस्तृत रूप से सोचा जाता है तथा कार्यों के विषय में विस्तृत योजना बनाई जाती है। यह पहले ही निर्धरित कर लिया जाता है कि प्रत्येक पद के लिए कितने टैस्ट तथा इन्टरव्यू लिए जाएँगे, कितने व्यक्तियों की उन्नति की जाएगी तथा कितने बाहर से नियुक्त किये जाएँगे, प्रत्येक तरह के पद के लिये कितनी न्यूनतम योग्यता अनिवार्य होगी, कितना अनुभव अनिवार्य होगा, किन–किन व्यक्तियों को प्रशिक्षण दिया जाएगा, कहाँ दिया जाएगा, कौन इसका प्रबन्ध करेगा, दिये जाने वाले वेतन का निर्धरण कैसे होगा तथा इसके अतिरिक्त लाभ विभाजन आदि का किस सीमा तक प्रयोग किया जायेगा? इसी तरह से श्रमसंघों से सम्बन्ध बनाए रखने के लिए तथा संस्था में शान्ति रखने के लिए क्या किया जायेगा। इन सभी बातों के लिये मानवीय प्रबन्ध नीतियाँ, कार्यविध्यिां, नियम आदि का निर्धरण करता है।

(ii) **मानवीय विभाग की क्रियाओं का संगठन** (Organising of Personnel Department Programme)—विभाग के उद्देश्य की प्राप्ति के लिये विभाग में किए जाने वाले कार्य विभिन्न व्यक्तियों में बांटे जाते हैं। उनके कार्य, अध्किार तथा दायित्व निर्धरित तथा परिभाषित किये जाते हैं तथा एक–दूसरे व्यक्ति के मध्य सम्बन्ध स्थापित किये जाते हैं ताकि कार्यों में अपव्यय एवं पुनरावृत्ति न हो। इस कार्य के अन्तर्गत मानवीय प्रबन्ध विभाग का संगठन तैयार किया जाता है।

(iii) **मानवीय विभाग की नियुक्ति** (Staffing for Personnel Department)—मानवीय विभाग का संगठन हो जाने के बाद कार्यों के लिये आवश्यक व्यक्तियों की नियुक्ति की जाती है। इसके लिये टैस्ट, इण्टरव्यू आदि की सहायता से चुनाव किया जाता है तथा नियुक्ति कर दी जाती है।

(iv) **मानवीय विभाग की क्रियाओं का निर्देशन** (Directing of Personnel Department)—योजना बनाने, संगठन तथा आवश्यक व्यक्तियों की नियुक्ति के बाद उन्हें कार्य करने के लिए निर्देश दिये जाते हैं। मानवीय प्रबन्ध्क कार्य के आरम्भ तथा मध्य में कार्य कैसे किया जाए, कब किया जाए आदि के विषय में मानवीय विभाग के विभिन्न विशेषज्ञों तथा कर्मचारियों को निर्देश देता रहता है। निर्देशक के लिये मानवीय प्रबन्ध्क को विभाग में सन्देशवाहन की पर्याप्त व्यवस्था करनी पड़ती है तथा सदस्यों को कार्यकुशल सन्देशवाहन के लिये प्रोत्साहित किया जाता है।

(v) **मानवीय विभाग की क्रियाओं का नियन्त्रण** (Controlling of Personnel Department)—मानवीय प्रबन्ध्क मानवीय विभाग को सौंपे गए कार्यों की जाँच करता रहता है और यदि कोई कार्य योजनानुसार नहीं हो रहा या उद्देश्य प्राप्ति नहीं कर रहा है तब वह उसे नियंत्रित करता है। इसके लिए कार्य की त्रुटियाँ खोजी जाती हैं तथा कर्मचारियों को उचित निर्देशन देकर ठीक की जाती है।

परामर्शीय कार्य
(Advisory Functions)

(i) **उच्च प्रबन्ध्कों को परामर्श** (Advising Top Management)—मानवीय प्रबन्ध्क मानवीय साध्नों के सम्बन्ध में नीति निर्धरण तथा प्रोग्राम में प्रमुख प्रबन्ध्क को महत्वपूर्ण सलाह तथा विशि५ सेवायें प्रदान करता है।

(ii) **विभागीय उच्चाध्किारियों को परामर्श** (Advising Department Heads)—मानवीय प्रबन्ध्क तथा इस विभाग के अन्य विशेषज्ञ संस्था के अन्य विभाग में आने वाली समस्याओं को दूर करने में महत्वपूर्ण सेवाएं प्रदान करते हैं तथा सलाह देते हैं।

क्रियात्मक कार्य
(Operative Functions)

1. **चुनाव तथा नियुक्ति** (Selection and Joining)—मानवीय विभाग संस्था के लिए योग्य तथा कार्यकुशल कर्मचारियों का टैस्ट, इण्टरव्यू तथा अन्य साध्नों की सहायता से चुनाव तथा नियुक्ति करता है। इन व्यक्तियों को उनकी योग्यतानुसार उपयुक्त स्थान पर लगाने, उनकी उस विभाग में साथ कार्य करने वाले विभिन्न व्यक्तियों तथा प्रबन्ध्कों से परिचय कराने, कम्पनी की नीतियों तथा कार्यक्रमों से परिचित कराने आदि कार्य करता रहता है साथ ही संस्था में कार्य कर रहे कर्मचारियों के कार्यों का मूल्यांकन कर अकुशल तथा अयोग्य कर्मचारियों को हटाने का प्रबन्ध करता है। साथ ही अपनी इच्छा से संस्था को छोड़कर जाने वाले कर्मचारियों के संस्था छोड़कर जाने का कारण जानने के लिए बाह्या इण्टरव्यू (Exit Interview) कर आयोजन करता है।

2. **प्रशिक्षण** (Training)—संस्था में किये जाने वाले कार्यों हेतु कर्मचारियों की कार्यकुशलता में वृ(के लिए प्रशिक्षण योजना तैयार करता है तथा कर्मचारियों को प्रशिक्षण देने की उचित व्यवस्था करता है जिससे कि कार्य कुशलतापूर्वक हो सके।

3. **मजदूरी एवं वेतन** (Wage and Salary)—जाँच मूल्यांकन की सहायता से यह विभाग संस्था में वैज्ञानिक वेतन प(ति का निर्माण करता है। इसके लिए उसे कार्य विशेषण तथा वेतन सर्वक्षण करने होते हैं तथा कर्मचारियों का मूल्यांकन करना होता है।

4. **औद्योगिक सम्बन्ध** (Industrial Relations)—मानवीय प्रबन्ध्क श्रमसंघ के नेताओं से समय–समय पर वार्ता कर उनसे संस्था का सम्बन्ध बनाये रखता है। उनके साथ आवश्यक समझौते करना तथा उनके साथ हुए समझौतों को संस्था में समयानुसार लागू करना, श्रमिकों की व्यक्तिगत शिकायतें तथा झगड़े सुनना तथा उन्हें दूर करने की व्यवस्था करना आदि कार्य करता है। इसके लिए शिकायत विध् (Complaining Procedure) की व्यवस्था की जाती है तथा उनका ह्रदय से सहयोग प्राप्त करने तथा उन्हें अध्कितम कार्यकुशलता के लिए प्रोत्साहित करने के लिए सुझाव योजना की व्यवस्था करता है। श्रमिकों के विष्झय में परिचय के लिए मनोबल तथा मनोभाव सर्वे (Morale and Attitude Survey) करना तथा इनके द्वारा प्राप्त सूचनाओं का संस्था की भलाई के लिए प्रयोग की व्यवस्था करता है। संयुक्त प्रबन्ध की योजना तैयार करता है तथा 'कार्य समिति' (Work Committee) की कार्य–प्रणाली को आवश्यक सुविधएं प्रदान करता है।

5. **सुरक्षा** (Safety)—मानवीय विभाग पफैक्ट्री एवं कार्यालय में स्वास्थ्यव(क तथा सुरक्षित वातावरण तैयार करने की व्यवस्था करता है। इसके लिए मानवीय विभाग का सुरक्षा अभियन्ता (Safety Engineer) संस्था के विभागों की जाँच करता है तथा सुरक्षा के लिए महत्त्वपूर्ण सुधर किये जाते हैं। साथ ही यह विभाग श्रमिकों को सुरक्षा प्रदान करता है, संस्था में होने वाली दुर्घटना की जाँच करता है तथा भविष्य में उसकी पुनरावृत्ति रोकने की व्यवस्था की जाती है।

6. **चिकित्सा सम्बन्धी सुविधएँ** (Medical Facilities)—श्रमिकों को समय–समय पर होने वाली छोटी तथा बड़ी दुर्घटनाओं को रोकने के बाद आवश्यक चिकित्सा का प्रबन्ध करता है। इसके लिए प्रारम्भिक चिकित्सा का प्रबन्ध तथा डॉक्टर की व्यवस्था करनी होती है। साथ ही संस्था द्वारा चलाई जा रही विभिन्न चिकित्सा संस्थाओं (Dispensaries) का उचित प्रबन्ध भी इसी विभाग का दायित्व है।

7. **अनुसंधन** (Research)—श्रमकों की अनुपस्थिति, श्रम परिवर्तन उनके कर्मचारी Teamwork आदि से सम्बन्धित तथ्यों का अनुसंधन करता है तथा इस क्षेत्र में नित्यप्रति नए–नए आविष्कारों से प्राप्त नवीन तथा आधुनिक विश्वज्ञान से संस्था के मुख्य प्रबन्ध्कों को जानकारी कराता है तथा इनका प्रयोग संस्था की भलाई में होता है।

8. **श्रमिक कल्याण एवं सेवा** (Employee Welfare and Services)—मानवीय विभाग देश के श्रम विधन के अन्दर आवश्यक श्रम कल्याण कार्यों का प्रयोजन तथा प्रबन्ध करता है। इसके लिए मनोरंजन, कैण्टीन, उचित मूल्य की दुकानें, पेन्शन, प्रॉविडेण्ट पफण्ड, सामाजिक बीमा, लाभ विभाजन, सहकारी समितियाँ, स्कूल, अस्पताल आदि का प्रबन्ध किया जाता है। इसके साथ पफैक्ट्रियों के मुख्य इन्सपैक्टर को समय–समय पर भेजी जाने वाली रिपोर्ट की व्यवस्था करता है।

9. **श्रम कानूनों को कार्यरूप देना**—यह विभाग समय–समय पर देश की सरकार द्वारा बनाये जाने वाले श्रम–विधन के बारे में मुख्य प्रबन्ध्कों को परिचित कराता है तथा वैधनिक सलाह देता है। साथ ही साथ नए श्रम कानूनों से प्रभावित होने वाले उनके प्रावधनों को पूरा किए जाने की उचित व्यवस्था करता है।

मानव संसाध्न विभाग और संगठन संरचना
(Human Resource Department and Organisational Structure)

मानव संसाध्न प्रबन्ध का संगठन
(Organisation of Human Resource Management Department)

प्रत्येक संस्था में मानव संसाध्न प्रबन्ध के इन कार्यों को करने की व्यवस्था की जाती है। एक छोटी संस्था में मानवीय प्रबन्ध के ये सभी कार्य स्वामी या सामान्य प्रबन्ध्क द्वारा किये जाते हैं तथा इनके लिए कोई अलग प्रबन्ध्क नहीं होता। मध्य आकार की संस्था में एक मानवीय प्रबन्ध्क की नियुक्ति की जाती है तथा उसे कुछ व्यक्ति सहायता के लिए दिए जाते हैं। यह प्रबन्ध्क संस्था के अन्य प्रबन्ध्कों को मानवीय समस्याओं पर महत्त्वपूर्ण सलाह तथा सेवाएँ प्रदान करता है। परन्तु एक बड़े आकार की संस्था में यह व्यवस्था पर्याप्त नहीं होती। वहाँ इस कार्य के लिए मानवीय विभाग नाम से एक बहुत बड़ा विभाग होता है जिसे एक योग्य तथा विशि५ ज्ञान रखने वाले मानवीय प्रबन्धक के अधीन किया जाता है जो मानवीय प्रबन्ध के समस्त कार्यों को कुशलतापूर्वक कराने के लिए उत्तरदायी होता है। इस मानीय प्रबन्ध्क को उत्पादक तथा वित्त प्रबन्ध्क के समान स्तर दिया जाता है तथा यह भी सहायक प्रबन्ध्क या औद्योगिक सम्बन्ध अध्किारी के नाम से जाना जाता है। विशिप्ीकरण का लाभ प्राप्त करने के लिए मानवीय प्रबन्ध विभाग को क्रियाओं के अनुसार अपविभागों के बांटा जाता है तथा प्रत्येक क्रिया को उस क्रिया में दक्ष अध्किारी के अधीन किया जाता है। कुछ संस्थाओं में लगभग 3 या 4 उप–विभाग होते हैं। परन्तु एक पूर्ण और बड़े आकार की संस्था में इनकी संख्या 8 या इसके भी अध्कि होती है।

संगठन से आशय, संगठन–संरचना और विभिन्न स्वरूपों के सम्बन्ध में सै(न्तिक विचार प्रस्तुत किये हैं। इस विषय में निम्नांकित दो बिन्दुओं पर विचार किया जाएगाः–

1. किसी भी कम्पनी की संगठन–संरचना में मानव संसाध्न विभाग की क्या स्थिति होती है, तथा
2. मानव संसाध्न विभाग की आन्तरिक संगठन–संरचना किस प्रकार की जाती है।

संगठन संरचना में मानव संसाध्न विभाग की आवश्यकता
(Need of Human Resource Department in Organisational Structure)

संगठन की संरचना का अन्तिम दायित्व मुख्य अध्शिासी का होता है। मुख्य अध्शिासी द्वारा इस विषय में सलाह देने के लिए 'संगठन आयोजन एवं अभिकल्पना' (Organization Planning and Design) जैसी समिति का गठन किया जा सकता

है। इस समिति में 'मानव संसाध्न विशेषज्ञ' को भी सम्मिलित किया जा सकता है। यह समिति मुख्य अध्शिासी को संगठन संरचना के विषय में सलाह देती है और सभी विभागों की आन्तरिक संरचना की रूपरेखा भी तैयार करती है। कुछ कम्पनियां अपनी संगठन संरचना में ही एक अलग विभाग 'संगठन आयोजन' के नाम से गटित कर लेती है। यह विभाग 'संगठन आयोजन एवं अभिकल्पना' समिति से भिन्न होता है। विभाग की स्थापना स्थायी आधर पर की जाती है और यह विभाग मुख्य अध्शिासी को निरन्तर रूप से आवश्यकतानुसार संगठन संरचना में किये जाने वाले परिवर्तनों के सम्बन्ध में सलाह देता रहता है। ;इस विभाग की, संगठन में 'कर्मचारी' (Staff) की स्थिति होती है। बहुत बड़े प्रतिष्ठान ही इस प्रकार के विभाग का अलग से गठन करने की स्थिति में होते हैंद्ध उदाहरण के लिए भारत सरकार तथा राज्य सरकारों में 'Organization and Methods'[19] नाम से अलग विभाग या प्रकोष्ठ का गठन किया जाता है। विद्यमान कम्पनी परिवर्तित विशेष परिस्थितियों में यदि संगठनात्मक संरचना में कुछ हेर पफेर आवश्यक समझी जाती है तो बाह्य विशेषज्ञ सलाहकारों की नियुक्ति कर सकती है।

कम्पनी की संगठन संरचना किसी के द्वारा अथवा किसी की भी सलाह पर क्यों न की जाये, बड़ी कम्पनियों में अलग से मानव संसाध्न विभाग की स्थापना किया जाना सुनिश्चित ही है। मानव संसाध्न विभाग के महत्त्व के कुछ प्रमुख कारण निम्नांकित हैं जिनकी वजह से कम्पनी की संगठन संरचना में इस विभाग को एक स्वतन्त्र विभाग का दर्जा दिया जाता है।

मानव संसाध्न कार्य का क्षेत्र व्यापक, जटिल एवं विशेषता प्राप्त है। मानव संसाध्न कार्यों में सेवा नियोजन (Emloyment), प्रशिक्षण, भृति एवं वेतन प्रशासन, स्वास्थ्य एवं सुरक्षा, श्रम कल्याण, सामूहिक सौदेबाजी, आदि बहुत से कार्यों का समावेश होता है। कहीं–कहीं जन सम्पर्क, सम्प्रेषण ;कार्मिकों एवं जन–साधरणद्ध जैसे अन्य कार्यों का दायित्व भी इसी विभाग को सौंप दिया जाता है। विगत दो–तीन दशकों में मानवीय सम्बन्धें की विचारधरा ने कापफी जोर पकड़ा है। इसका प्रभाव यह हुआ है एक ओर तो मानव संसाध्न कार्यो का क्षेत्र अध्कि व्यापक हुआ है और दूसरी ओर इनके महत्त्व में अभिवृ(हुई है। परिणामस्वरूप अब कोई भी अध्शिासी इन कार्यों को आकस्मिक एवं अनियमित रूप से सम्पादित करने का जोखिम नहीं उठा सकता। अतः स्वतन्त्र रूप से मानव संसाध्न विभाग की स्थापना करना आवश्यक होता है।

मानव संसाध्न कार्यों के सम्पादन में देश के सामान्य विधन के ज्ञान के अतिरिक्त श्रम–विभाजन एवं मनोविज्ञान के विशद् ज्ञान की आवश्यकता होती है। एक कुशल मानव संसाध्न प्रशासक को देश और उद्योग की आर्थिक स्थिति, श्रम बाजार की स्थिति तथा सरकार एवं समाज की लोक नीतियों का ज्ञान प्राप्त करना और उनमें समय–समय पर होने वाले परिवर्तनों का भी अध यन करना होता है। आजकज राजनैतिक वातावरण के प्रभाव की जानकारी प्राप्त करना भी अत्यन्त आवश्यक है। इन सब कार्यों के सम्पादन के लिए विशेषता प्राप्त व्यक्तियों की आवश्यकता होती है। अतः मानव संसाध्न विभाग का गठन आवश्यक होता है।

श्रम संगठनों का प्रभाव एवं महत्त्व गत कुछ वर्षों में बहुत बढ़ चुका है और भविष्य में भी ये प्रवृत्तियाँ जारी रहेंगी, ऐसी आशा की जा सकती है। श्रम संगठनों के कारण मानव संसाध्न सम्बन्धें एवं प्रशासन में जटिलता आ गई है। परिवेदनाएँ, अभिप्रेरण, अनुशासल तथा सामूहिक सौदेबाजी आदि मानव संसाध्न कार्य अत्यध्कि जटिल हैं। श्रम संगठनों का गठन, भारत में बहुत श्रम संगठन की प्रवृत्ति, श्रम संगठनों में राजनैतिक प्रभाव एवं सरकारी हस्तक्षेप मानव संसाध्न कार्यों को जटिलतर बनाते जा रहे हैं। इन सभी कारणों से मानव संसाध्न विभाग का गठन अलग से आवश्यक हो जाता है।

अलग से मानव संसाध्न विभाग का गठन कम्पनी का प्रजातान्त्रिक प(तियों एवं विचारधराओं में विश्वास का द्योतक है। 'विभाग' की स्थापना कार्मिकों के कम्पनी की ओर से मानवीय सम्बन्धें की नीति के पालन के विश्वास का संचार करती है। साथ ही साथ इससे बाह्य जगत में कम्पनी की प्रतिष्ठा भी बढ़ती है। इस प्रकार यह विभाग प्रतिष्ठा का द्योतक (Status Symbol) माना जाता है।

---

19. यह विभाग संगठनात्मक संरचना पर विचार करने के अतिरिक्त कार्य प(तिों तथा कार्य विध्यिों पर भी विचार करता है।

अलग विभाग के गठन से कर्मचारयों के मनोबल में वृ(होती है। उनकी इस धरणा को बल मिलता है कि कम्पनी के कुछ स्पष्ट वर्णित मानव संसाध्न सि(ान्त एवं नीतियाँ है। कम्पनी मानव संसाध्न कार्यों के निष्पादन में न्याय (Justice), साम्य (Equity) एवं निष्पक्षता का आचरण करेगी। उनके कार्यों का उचित एवं वैज्ञानिक आधर पर मूल्यांकन होगा उनके विकास एवं पदोन्नति का मार्ग प्रशस्त होगा। कर्मचारी मनोबल एक मूल्यवान परिसम्पत्ति हैऋ अतः अलग से मानव संसाध्न विभाग की स्थापना की जानी चाहिए।

समग्र संगठन संरचना में मानव संसाध्न प्रबन्ध की स्थिति एवं प्रभाव

(Status and Influence of Human Resource Management in the Overall Organizational Structure)

कम्पनी की समग्र संगठन संरचना में मानव संसाध्न विभाग की क्या स्थिति अथवा प्रभाव होगाऋ यह अनेक बातों पर निर्भर करता है, जिनमें से कुछ प्रमुख घटक निम्नांकित हैं—

1. मानव संसाध्न विभागाध्यक्ष का व्यक्तित्वऋ
2. मुख्य अध्शिासी का मानव संसाध्न कार्यों के प्रति रूखऋ
3. कम्पनी का वातावरणऋ
4. उद्योग की परम्परा एवं वातावरणऋ
5. कम्पनी का आकार।

मानव संसाध्न विभाग के प्रमुख पर कापफी हद तक समग्र संगठन संरचना में विभाग की स्थिति एवं प्रभाव आश्रित रहता है। यदि विभागाध्यक्ष की पेशे सम्बन्धी योग्यता उच्च कोटि की है तो वह निश्चय ही कम्पनी के शीर्ष अध्किारी को अपनी योग्यता से प्रभावित करेगा। पेशे सम्बन्धी योग्यता के अतिरिक्त विभागाध्यक्ष की अपने पेशे से रूचि एवं लगन, कर्त्तव्यनिष्ठ, उत्साही प्रकृति तथा उत्तरदायित्व ग्रहण करने की प्रवृत्ति आदि कुछ गुण हैं जो विभाग के स्तर को उफँचा उठा सकते हैं तथा कम्पनी में विभाग के प्रभाव को बढ़ा सकते हैं।

कम्पनी के शीर्ष अध्किारी की प्रवृत्ति, मानव संसाध्न विभाग के स्तर एवं प्रभाव को कापफी सीमा तक प्रभावित करती है। यदि शीर्ष अध्किारी मानव संसाध्न कार्यों को महत्त्वपूर्ण मानता है, वह स्वयं अपने वर्तमान पद पर पहुँचने से पूर्व मानव संसाध्न क्षेत्र में कार्य कर चुका है, उसका पिछला अनुभव मानव संसाध्न विभाग एवं विभागाध्यक्ष के सम्बन्ध में सुखद रहा है, उसे इस क्षेत्र में हो रही शोध एवं अन्वेषण के निष्कर्षों का महत्त्व मालूम है, तो निश्चय ही समग्र संगठन संरचना में मानव संसाध्न विभाग को एक उच्च स्थान प्रदान किया जायेगा। इसके विपरीत स्थिति होने पर मानव संसाध्न विभाग, संगठन संरचना में उच्च स्थान से वंचित रह सकता है।

कम्पनी एवं उद्योग की परम्परा एवं वातावरण भी कापफी सीमा तक मानव संसाध्न विभाग की स्थिति को प्रभावित करते हैं। कम्प्नी रीति—नीति, व्यवसाय के सि(ान्त, कम्पनी एवं उद्योग की कार्मिकों के प्रति व्यवहार की छवि (Image), कार्मिकों का शैक्षणिक स्तर, श्रम संगठनों की स्थिति, श्रम—शांति ;या अशांतिद्ध, कार्मिकों के स्वास्थ्य एवं सुरक्षा सम्बन्धी आवश्यकताएँ, कम्पनी एवं उद्योग का पुराना इतिहास एवं परम्पराएँ, इस शीर्षक के अन्तर्गत आने वाले कुछ तत्त्व हैं, जो कम्पनी की समग्र संगठन संरचना से मानव संसाध्न विभाग की स्थिति एवं उसके प्रभाव के निर्धरण में सहायता करते हैं।

कम्पनी का आकार भी मानव संसाध्न विभाग की स्थिति एवं प्रभाव पर असर डालता है। यदि कम्पनी बहुत छोटी है तो हो सकता है कि सम्पनी इस कार्य के लिए अंशकालीन नियुक्ति करे अथवा किसी अन्य अध्शिासी को उसके कार्यों के साथ मानव संसाध्न कार्य भी सौंप दिये जायें। जब कार्मिकों की संख्या में वृ(होती है तो कम्पनी को मानव संसाध्न कार्य के लिए पूर्णकालीन अध्शिासी की आवश्यकता महसूस होती है। सामान्यतः कार्मिकों की संख्या एक सौ अथवा एक सौ पचास होने पर ऐसा किसा जाता है। इन कम्पनियों से मानव संसाध्न विभाग का अध्यक्ष सीध मुख्य अध्शिासी को रिपोर्ट करता है अथवा उसके सहायक ही हैसियत से कार्य करता है। इन स्थितियों को नीचे दिये गये चित्रों के माध्यम से समझाया जा सकता है।

चित्र 1.

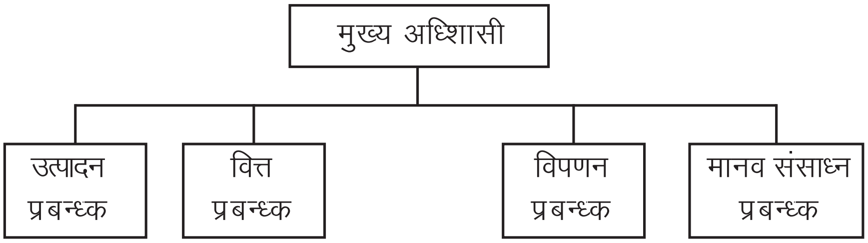

चित्र 2.

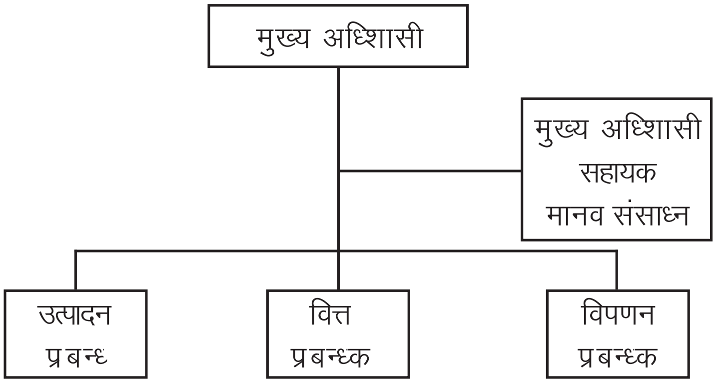

चित्र 3.

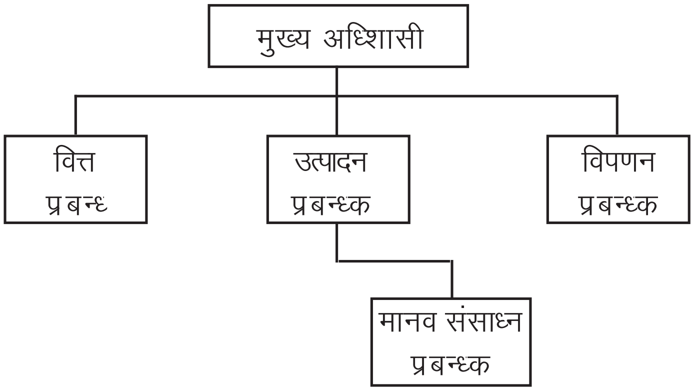

मझले आकार की सम्पतियों से मानव संसाधन कार्य को प्रबन्ध में शीर्ष स्थान प्रदान करने के बजाय सामान्यतः मध्यवर्ती स्थान दिया जाता है। मानव संसाधन प्रबन्ध कार्य उत्पादन प्रबन्धक को ही सौंप दिये जाते हैं उसके अन्तर्गत मानव संसाधन प्रबन्धक कार्य करता है।

बड़ी कम्पनियों में सामान्यतः मानव संसाधन प्रबन्धक शीर्ष प्रबन्ध का भाग होता है और सीध मुख्य अधिशसी को रिपोर्ट करता है। यदि इन कम्पनियों में शीर्ष प्रबन्ध का अधिशासी समिति को सौंपा हुआ होता है तो मानव संसाधन प्रबन्धक अधिशासी समिति का सदस्य होता है। हम यहाँ पर यह स्प"ट करना आवश्यक समझते हैं कि सभी कम्पनियों से मानव संसाधन प्रबन्ध 'कर्मचारी' (Staff) स्थिति में होता है।

मानव संसाधन विभाग का आन्तरिक संगठन
(Internal Organization of Human Resource Department)

मानव संसाधन विभाग का आन्तरिक संगठन अलग–अलग कम्पनियों में अलग–अलग तरीकों से किया जाता है। **मैक्पफारलैण्ड** (McFarland) ने विभिन्न कम्पनियों के मानव संसाधन विभाग के आन्तरिक संगठन के अध्ययन एवं विश्लेषण के आधर पर आन्तरिक संगठन के निम्नांकित चार प्रमुख स्वरूप बतलाये हैंः–

1. एकीकृत विभाग (Integrated Department),

2. विस्तारित विभाग (Extended Department),
3. विभाजित कार्य विभाग (Split Function Department),
4. कर्मचारी–समन्वित विभाग (The Staff & Coordinated Department),

एकीकृत विभाजित संगठन प्रणाली के अन्तर्गत मानव संसाध्न प्रबन्ध के क्षेत्र में आने वाले सभी कार्यों का दायित्व शीर्ष स्तर पर एक अध्शिासी को सौंपा जाता है। बड़ी कम्पनियों में सामान्यतः इस अध्शिासी के अन्तर्गत दो विभाग होते हैंऋ एक विभाग मानव संसाध्न कार्यों की देखभाल करता है और दूसरा विभाग औद्योगिक सम्बन्धे की। छोटी कम्पनियों में जहाँ मानव संसाध्न कार्यों के लिए एक ही अध्किारी होता है और उसकी सहायता के लिए कुछ लिपिक होते हैं, संगठन का यह स्वरूप भी एकीकृत विभाग के ही अन्तर्गत आता है। अध्किांश कम्पनियों में एकीकृत विभाग संगठन का स्वरूप पाया जाता है।

विस्तारित विभाग संगठन स्वरूप में मानव संसाध्न विभाग को कुछ ऐसे कार्य भी सौंप दिये जाते हैं जो सही अर्थों में मानव संसाध्न कार्यों के अन्तर्गत नहीं आते। उदाहरण के लिए जन–सम्पर्क, समय एवं गति अध्ययन आदि। कुछ बड़ी कम्पनियों ने विस्तारित विभाग संगठन का स्वरूप पाया जाता है। यह एक विवादग्रस्त विषय है कि जन–सम्पर्क को मानव संसाध्न कार्यों के साथ मिलाया जाये या अलग रखा जाये। सामान्य धरणा यह है कि श्रम सम्बन्ध विभाग, जहाँ श्रमिक सम्पर्क पर बल दिया जाता है, जन–सम्पर्क के कार्य को भी कुशलता से सम्भाल सकता है। यहाँ हम स्वीकार करते हैं कि जन सम्पर्क एवं श्रमिक सम्पर्क की प्रकृति में अन्तर है और दोनों कार्यों के लिए अलग–अलग योग्यता की आवश्यकता होती है।

विभाजित कार्य विभाग, संगठन का एक ऐसा स्वरूप है जहाँ मानव संसाध्न एवं श्रम सम्बन्ध, दोनों ही कार्य अलग–अलग विभागों या अध्शिासियों को सौंपे जाते हैं। ये विभाग अलग–अलग शीर्ष अध्किारी को रिपोर्ट करते हैं।

चित्र अ

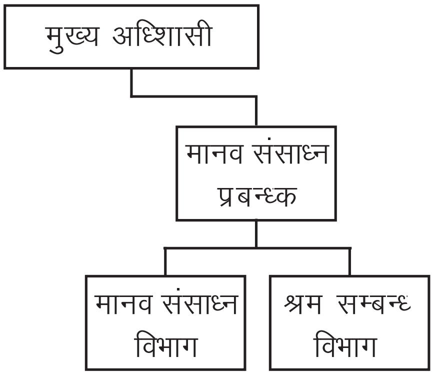

चित्र ब

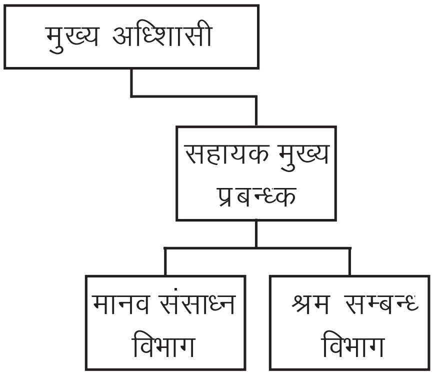

संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि इस प्रकार की संगठन संरचना एकीकृत विभाग संगठन संरचना के एकदम विपरीत होती है। उफपर दिये गये दो चित्र, एकीकृत विभाग ;चित्र अद्ध एवं विभाजित कार्य विभाग ;चित्र बद्ध संगठन संरचना को दर्शा रहे हैं।

कम्पनियों में विभाजित कार्य विभाग संगठन स्वरूप के पाये जाने के ऐतिहासिक कारण हो सकते हैं। उदाहरण के लिए जब कम्पनी छोटी थी तो हो सकता है कि मुख्य प्रबन्ध्क स्वयं या उसका सहायक श्रम सम्बन्धें की देखभाल करता हो। धीरे–धीरे कम्पनी के विकास के क्रम में मानव संसाध्न विभाग की स्थापना की आवश्यकता अनुभव की गई और इस विभाग का अलग से गठन कर दिया गया हो। इस प्रकार के संगठन के कोई लाभ दिखलाई नहीं पड़ते।

कर्मचारी–समन्वित विभाग (Staff Coordinated Department) संगठन स्वरूप के अन्तर्गत समस्त 'कर्मचारी' सेवाओं को किसी एक अध्–कर्मचारी (Super Staff) अध्शिासी के अन्तर्गत गठित किया जाता है, जैसा कि आगे दिये गये चित्र में दिखलाया गया हैः

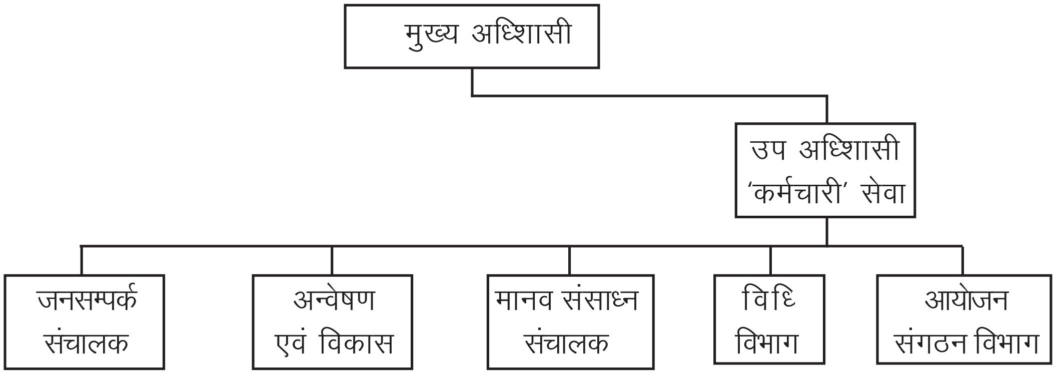

इस प्रकार के संगठन का लाभ यह है कि सभी प्रकार की कर्मचारी सेवाएँ एक अध्शिासी के नियन्त्रण के अन्तर्गत आ जाती है और शीर्ष प्रबन्ध्क को इन सेवाओं के विषय में केवल एक अध्किारी से सम्पर्क साध्ने की आवश्यकता उत्पन्न होती है। लेकिन जैसा कि आप चित्र में देख रहे हैं, इन कर्मचारी सेवाओं में कोई पारस्परिक सम्बन्ध् नहीं है, अतः इस प्रकार का संगठन, संगठन के सि(ान्त के प्रतिकूल रहता है।

मानव संसाध्न विभाग के आन्तरिक संगठन के कुछ अन्य आधर इस प्रकार से है—

1. कार्यकारी अथवा क्रियात्मक आधर (Functional),
2. सेवा आधर (Service),
3. ग्राहक आधर (Clientele)।

संगठन का यह स्वरूप क्रियात्मक संगठन शीर्ष के अन्तर्गत आता है। जब इस आधर पर मानव संसाध्न विभाग का आन्तरिक संगठन किया जाता है तो सर्वप्रथम हम इस विभाग के द्वारा निष्पादित किए जाने वाले कार्यों का विवेचन एवं विश्लेषण करते हैं। उदाहरण के लिए इस विभाग के प्रमुख कार्य होंगे—सेवा नियोजन, प्रशिक्षण, भृत्ति एवं वेतन प्रशासन, सामूहिक सौदेबाजी, सुरक्षा तथा श्रमिक कल्याण आदि। अतः आन्तरिक संगठन में इन सभी क्रियाओं के लिए उप विभाग अथवा प्रको६ के माध्यम से व्यवस्था की जायेगी। अग्र पृ६ पर दिया गया चित्र इस प्रकार के संगठन को दर्शाता है।

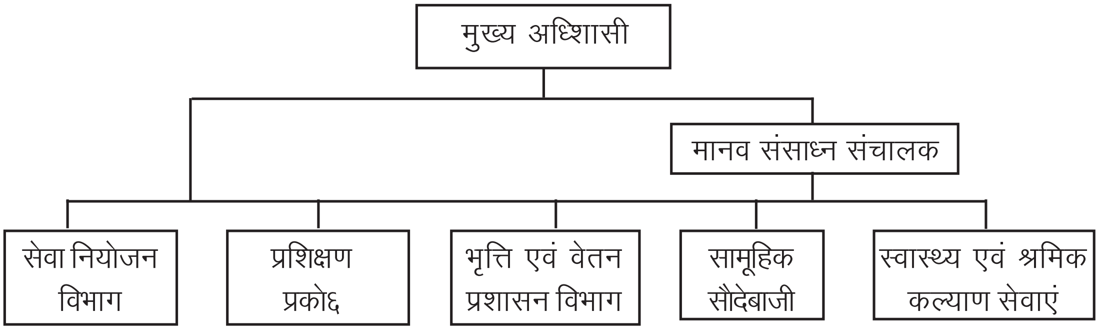

आन्तरिक संगठन के शेष दोनों आधरों को मौटे तौर पर विभागीय संगठन (Departmental Organization) प्रणाली के अन्तर्गत लिया जा सकता है। सेवा–आधर अथवा ग्राहक–आधर पर मानव संसाध्न विभाग के संगठन के माध्यम से आप उसका प्रयोग (Application) देखेंगे। सेवा आधर पर संगठन करते समय आज हर्जवर्ग द्वारा प्रदत्त आवश्यकताओं एवं उत्प्रेरणा के वर्गीकरण का अनुसरण करते हैं। मानव संसाध्न विभाग का मुख्य उद्देश्य कार्मिकों की सेवा करना माना जाता है। कुछ सेवाएँ श्रमिक की भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति करती है जैसे रोजगार, वेतन, श्रम सम्बन्ध् आदि और कुछ सेवाएँ उत्प्रेरक आवश्यकताओं की पूर्ति करती हैं जैसे शिक्षा, कार्य अभिकल्पना आदि। नीचे दिये गये चित्र से आप मानव संसाध्न का सेवा–आधर पर दिया गया संगठन समझ सकते हैं:—

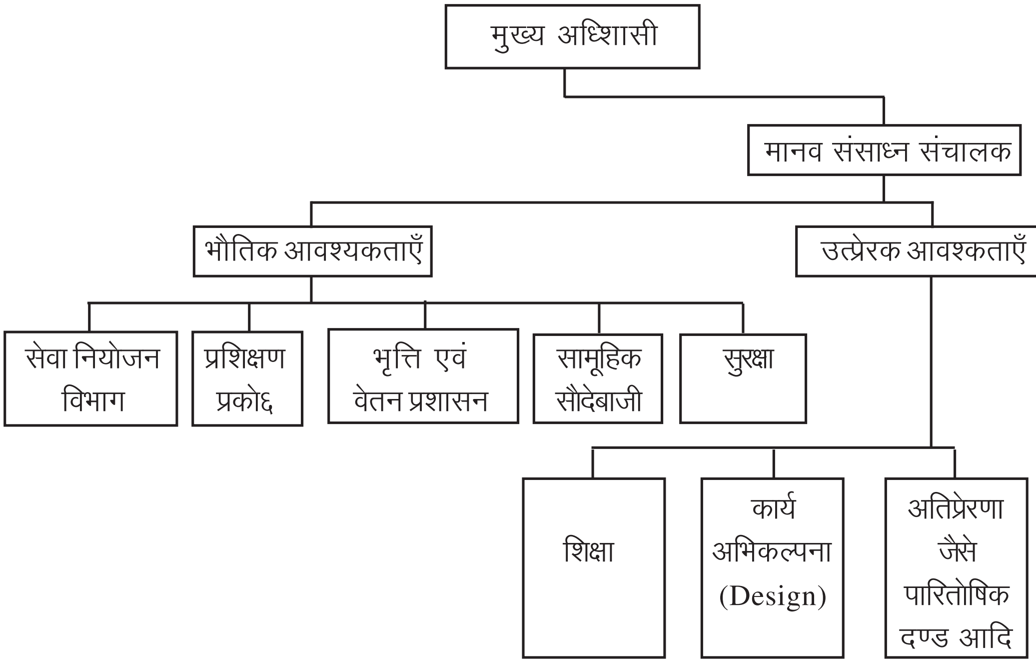

ग्राहक आधर पर मानव संसाधन विभाग का आन्तरिक संगठन करते समय यह देखा जाता है कि मानव संसाधन विभाग की सेवाओं का लाभ कौन प्राप्त कर रहा है। लाभ प्राप्त करने वाले श्रमिक, महिला श्रमिक, नौसिखिये श्रमिक, वैज्ञानिक या तकनीकी श्रमिक आदि हो सकते हैं। इसी आधर पर विभाग का आन्तरिक गठन किया जा सकता है। नीचे एक चित्र द्वारा इस प्रकार के गठन के समझाया गया है।

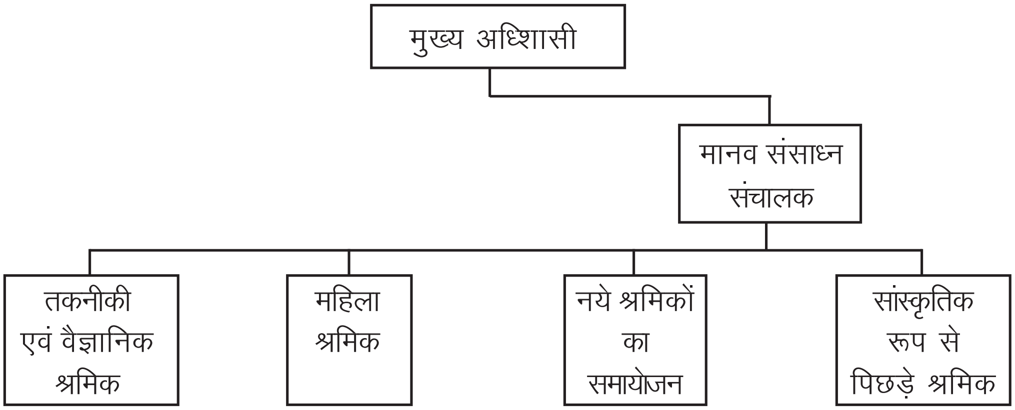

प्रबन्ध्क से आशय
(Meaning of Manager)

प्रबन्ध्क से आशय साधरण रूप से प्रबन्ध अध्किारियों से होता है जो संस्था में कार्य करने वाले व्यक्तियों पर नियंत्रण रखते हैं। जो लोग प्रबन्ध्क के कार्य का निष्पादन करते हैं, उन्हें प्रबन्ध्क, कार्यवाहक (Executive) या प्रशासक (Administrator) कहते हैं। सामान्यतः प्रबन्ध किसी भी संस्था में अन्य लोगों से काम लेने (getting work done by other) वाला घटक समझा जाता है।

प्रबन्ध्क की परिभाषा
(Definition of Manager)

1. **विलकिंस तथा पफोस्टर के अनुसार**—फ्प्रबन्ध्क एक ऐसा शब्द है, जिसका उपयोग सामान्यतः उस विध् िके वर्णन

करने से लिया जाता है, जिसके द्वारा एक व्यक्ति, उस पर सीमाएँ लगाने के बाद भी उचित उद्देश्य प्राप्त करने का प्रयास करता है।य्[20]

2. **जे. वेटे**—फ्एक प्रबन्ध्क वह व्यक्ति है, जो वस्तुओं अथवा सेवाओं के उत्पादन में मानवीय क्रियाओं का निर्देशन द्वारा निर्धरित उद्देश्यों को प्राप्त करने का प्रयास करता है।य्[21]

कार्यकुशल प्रबन्ध्क की विशेषताएँ
(Qualities of an Efficient Manager)

किसी कार्य को स्वयं करना सरल है परन्तु अन्य व्यक्तियों से करवाना सरल नहीं होता। क्योंक एक प्रबन्ध्क का कार्य व्यक्तियों से कार्य करवाते हुए निश्चित उद्देश्य को प्राप्त करना होता है, इस रूप में यह कार्य अति जटिल होता है। इसके कुशल सम्पादन के लिए प्रबन्ध्क में कुछ योग्यताएं होनी आवश्यक हैं। उसमें अन्य व्यक्तियों को अपनी बात समझाने तथा मनवाने, उनमें आपसी सहयोग की भावना जागृत करने तथा कार्य के प्रति प्रोत्साहित करने की योग्यता होनी चाहिये। उसमें उन व्यक्तियों के कार्यों में समन्वय करने तथा उचित निर्देशन द्वारा उनकी क्रियाओं को नियन्त्रित करने की योग्यता होनी चाहिये। इतना ही नहीं उसको कार्यक्षेत्र की तकनीक का पर्याप्त ज्ञान भी होना चाहिये। वास्तव में एक प्रबन्ध्क में अनेक योग्यताएँ होनी आवश्यक हैं जिनकी पूर्ण सूची बनाना सरल नहीं है। पिफर भी कुछ सामान्य योग्यताएँ बतलाई जा सकती हैं जो एक व्यक्ति को कार्यकुशल प्रबन्ध्क बनने में योगदान दे सकती हैं। **क्लाउड एपफ. जॉर्ज** (Claude F. George) ने अपनी पुस्तक 'Management' में एक सपफल प्रबन्ध्क के लिए निम्नलिखित योग्यताओं का वर्णन किया हैः—

1. **विचारने की योग्यता**—एक प्रबन्ध्क को समय—समय पर जटिल समस्याओं का सामना करना पड़ता है तथा उन्हें सुलझाना पड़ता है। इसके लिये समस्या सुलझाने के विविध् ढंग तथा उसके प्रभाव आदि का विस्तृत अध्ययन कर उनके आधर पर अनुकूलतम विध् िका चुनाव करना पड़ता है। इस कारण एक प्रबन्ध्क में स्प५ तथा उद्देश्यपूर्ण ढंग से विचार करने की शक्ति होनी चाहिए।

2. **प्रकटीकरण की योग्यता**—एक प्रबन्ध्क मस्तिष्क से चाहे कितना ही मूल्यवान विचार सोच ले, वह तब तक किसी महत्त्व का नहीं है जब तक वह उसी अर्थ में सम्बन्ध्ति व्यक्तियों तक नहीं पहुंच जाता। इसके लिए एक प्रबन्ध्क में अपने विचार अन्य व्यक्तियों को स्प५ करने की योग्यता होनी चाहिये। अन्य शब्दों में उसे एक कार्यकुशल सन्देशवाहक होना चाहिए।

3. **सहमत करने की योग्यता**—एक प्रबन्ध्क को समय—समय पर अपने अधीनस्थों को आदेश तथा निर्देश देने होते हैं। कार्यकुशलता के लिये इन पर सम्बन्ध्ति व्यक्तियों की हृदय से सहमति प्राप्त होनी आवश्यक है। शक्ति द्वारा ठोंका गया कार्य उतने प्रभावपूर्ण ढंग से नहीं होता जितना हृदय से स्वीकृत कार्य। इसलिये एक प्रबन्ध्क में अपनी बात मनवाने की योग्यता होनी चाहिये।

4. **कर्त्तव्य—परायण ईमानदारी**—प्रबन्ध्क चरित्रवान, कर्त्तव्यपरायण तथा ईमानदार हो और उसके उच्च अध्किारियों एवं अधीनस्थों, दोनों को उस पर तथा उसके कार्य पर पूर्ण विश्वास हो। ऐसा होने पर वह उनसे आवश्यक प्राप्त कर सकेगा तथा कुशलता से कार्य कर सकेगा।

5. **संगठनात्मक योग्यता**—एक प्रबन्ध्क का सम्बन्ध् सामूहिक क्रिया से है इसलिए जब तक वह समूह के व्यक्तियों को संगठित करने के योग्य नहीं होता, वह समूह से कार्य नहीं करवा सकता। बिना कार्यकुशल संगठन के क्रियाओं की पुनारावृत्ति व्यर्थ होती है। इस कारण यह बहुत ही महत्वपूर्ण योग्यता है।

6. **भावनात्मक स्थिरता**—एक प्रबन्ध्क में अपने अधीनस्थ सम्बन्धी तथा उनके कार्य सम्बन्धी अपनी व्यक्तिगत भावना को व्यवसाय से अलग रखने की योग्यता होनी चाहिये। किसी अधीनस्थ के प्रति उसके व्यक्तिगत विचार कैसे भी हो सकते हैं, उसे उन्हें व्यावसायिक क्षेत्र से अलग ही रखना चाहिए। न्यायपूर्ण व्यवहार के लिए ऐसा अनिवार्य है।

---

20. "Manager is a term commonly used to describe the process by which a person contrives to achieve a desired objective despite the limitations imposed upon him." **Vikins and Foster**
21. "A manager is a person who attempts to achieve stated objective by directing human." **J. Bete.**

7. **गतिशील स्वभाव**—प्रबन्ध्कों में आगे बढ़ने, नये–नये अनुसंधन करने तथा नई सुध्री हुई विध्यिों का विकास करने की लालसा होनी चाहिए। ऐसा होने पर ही वह अपनी संस्था को समय के साथ विकसित कर सकेंगे।

8. **मानवीय सम्बन्ध्, प्रेरणा तथा मानवीय स्वभाव का ज्ञान**—यद्यपि प्रबन्ध्कों के पास पर्याप्त अध्किार होते हैं तथा वह शक्ति द्वारा कार्य करवा सकते हैं परन्तु आधुनिक समय में जबकि विशाल तथा शक्तिशाली श्रम–संगठनों का विकास हो चुका है, प्रबन्ध्कों का यह कार्य कठिन हो गया तथा उन्हें शक्ति के स्थान पर नेतृत्व के द्वारा अपने अधीनस्थों से कार्य लेना चाहिये। इसके लिए उन्हें मानवीय सम्बन्ध तथा स्वभाव का पूर्ण ज्ञान होना चाहिये उन्हें पता होना चाहिये कि विभिन्न अवस्थाओं में अधीनस्थों को कार्य के प्रति किस तरह से प्रेरित किया जा सकता है।

9. **तकनीकी क्षमता**—हैनरी पफैयोल ने यद्यपि प्रबन्ध तथा तकनीकी ज्ञान को भिन्न–भिन्न माना है, परन्तु वे भी इस तथ्य को मानते हैं कि सपफलता के लिए प्रबन्ध्क में तकनीकी ज्ञान अनिवार्य है। उसका तकनीकी विशेषज्ञ होना आवश्यक नहीं है किन्तु उसे कम से कम उस क्षेत्र का पर्याप्त ज्ञान अवश्य होना चाहिये ताकि वह उन क्रियाओं को समझ सके तथा उनका कुशलता पूर्वक प्रबन्ध कर सके।

यह सभी योग्यताएँ प्रबन्ध्क के कार्य को सरल बना देती हैं तथा उनकी कार्यकुशलता तथा कार्यक्षमता में महत्त्वपूर्ण वृ(ि करती हैं।

मानव संसाध्न प्रबन्ध के कार्य और दायित्व
(Duties and Responsibilities of a Human Resource Manager)

मानव संसाध्न प्रबन्ध्क के कार्यो की गणना करने के पूर्व यह समझना आवश्यक है कि मानव संसाध्न प्रबन्ध्क एक 'कर्मचारी' (Staff) विशेष होता है। हमने कठिन और उसके विभिन्न स्वरूपों की चर्चा इस अध्ययन के आरम्भ में की है। संक्षेप में यहाँ यह कहा जा सकता है कि कर्मचारी विशेषज्ञ का प्रमुख कार्य रेखा अध्किारियों को सलाह देना, किन्हीं विषय विशेष को निपटाने में उनकी सहायता करना तथा समस्याओं के उत्पन्न होने से पूर्व ही रेखा अध्किारियों का ध्यान भविष्य में उत्पन्न होने वाली सम्भावित समस्याओं की ओर आकर्षित करना होता है। परिचालन सम्बन्धी दायित्व रेखा अध्किारी का होता है। कर्मचारी विशेषज्ञ को परिचालन का दायित्व ग्रहण करने की आवश्यकता नहीं होती। मानव संसाध्न प्रबन्ध के पास किसी प्रकार की सत्ता नहीं होती। सत्ता का निवास रेखा अध्किारियों में होता है। मानव संसाध्न प्रबन्ध्क के पास अपने पेशे सम्बन्धी ज्ञान की ही सत्ता होती है। उसे अपने कार्यक्रम नीतियाँ, कार्यविध्यिँ एक कुशल विक्रेता आदि संगठन के द्वारा स्वीकार कर ली गई है। तो मानव संसाध्न प्रबन्ध्क को उन स्वीकृत नीतियों, कार्यविध्यिों एवं कार्यक्रमों को बल मिल जाता है जिसे वह सत्ता को स्वीकार नहीं करता है तो उसका कर्त्तव्य है कि वह उस रेखा अध्किारी के प्रवराध्किारी का ध्यान उस ओर आकर्षित करे। यहाँ भी अनुनय (Persuasion) के अतिरिक्त उसके पास अन्य कोई सत्ता अथवा अध्किार नहीं है।

कर्त्तव्य के सम्बन्ध में एक बात और स्पष्ट करना आवश्यक है। कर्त्तव्य का कार्यक्षेत्र से सीध सम्बन्ध होता है। मानव संसाध्न प्रबन्ध का कार्यक्षेत्र एक कम्पनी से दूसरी कम्पनी में भिन्न होता है। कार्यक्षेत्र की व्यापकता अथवा संकीर्णता के साथ ही मानव संसाध्न प्रबन्ध के कार्य बढ़ते और घटते रहते हैं।

पिगर्स तथा मायर्स (Pigars and Myers) ने अपनी पुस्तक (Personnel Administration) में मानव संसाध्न प्रबन्ध के निम्नांकित कर्त्तव्य बतायें हैं।

1. रेखा संगठन को मानव संसाध्न दृष्टिकोण के सम्बन्ध में सलाह मन्त्रणा प्रदान करनाः

   इस प्रकार मानव संसाध्न प्रबन्ध का यह कर्त्तव्य है कि मानव संसाध्न सि(ान्तों, नीतियों, कार्यविध्यिों, कार्यक्रमों आदि के निर्धरण एवं प्रशासन में रेखा संगठन की सहायता करें और उन्हें एक उपयुक्त दृष्टिकोण अपनाने के लिए समझाए–बुझाए (Persuade) एवं सलाह दे।

2. संगठन की स्थिरता अथवा इसके प्रभावीकार्य दल के रूप में उसके मनोबल का पता लगानाः

   मनोबल का पता लगाने के लिए अनेक सूचाँक उपलब्ध होती हैं जैसे उत्पादक कार्यदक्षता, दुर्घटनाएँ, अनुपस्थिति, परिवेदनाएँ, कर्मिकों का नौकरी छोड़कर जाना आदि। मानव संसाध्न प्रबन्ध का यह कर्त्तव्य है कि वह रेखा अध्किारियों

को स्थिति की वास्तविकता एवं सम्भावनाओं से अवगत कराये जिससे कि समस्याओं से प्रभावी ढंग से निपटा जा सके।

3. मानव संसाध्न सेवाएँ प्रदान करनाः

मानव संसाध्न सेवाओं में भर्ती, चयन, पदोन्नति, प्रशिक्षण, भृति एवं वेतन प्रशासन, स्वास्थ्य, सुरक्षा श्रमिक कल्याण आदि की गणना की जाती है। इन सेवाओं का उद्देश्य, रेखा अध्किारियों को कुशल व्यक्तियों की प्राप्ति में सहायता करना एवं उपलब्ध् मानव शक्ति का कुशलतम उपयोग करना होता है।

4. उक्त सभी क्रियाओं एवं कार्यों के मध्य समन्वय स्थापित करना एवं उन्हें नियन्त्रित करनाः

समन्वय एवं नियन्त्रण, विचार विमर्श एवं निरीक्षण के द्वारा किया जाता है। मानव संसाध्न प्रबन्ध्क स्वयं अपने लिए समन्वय अथवा नियन्त्रण नहीं करता। वह कार्य शीर्ष प्रबन्ध्क की ओर से अथवा उसकी सहायतार्थ ऐसा करता है।

कुछ विद्वानों ने उक्त कार्यो के अतिरिक्त निम्नांकित कार्य और बतलाए हैं।

(i) मानव संसाध्न अनुसन्धन करना। इस तरह से मानव संसाध्न प्रबन्ध्क, रेखा अध्किारियों की आयोजना एवं निर्णयन में सहायता कर सकता है।

(ii) संगठन में प्रभावी सम्प्रेषण बनाए रख कर प्रबन्ध्कों की सहायता करना।

(iii) कार्यक्रमों को कार्यान्वित करने के उद्देश्य से योग्य एवं कुशल कर्मचारियों का विकास करना।

अन्त में यह कहना चाहेंगे कि मानव संसाध्न प्रबन्ध्क को अपने कार्यो के निष्पादन एवं दायित्व के वहन करने के लिए शीर्ष प्रबन्ध्क के समर्थन की आवश्यकता होती है। मानव संसाध्न प्रबन्ध् की सपफलता इस बात में निहित है कि वह किसी सीमा तक रेखा अध्किारियों को मानव संसाध्न विषयों में एक अच्छा प्रशासक बनाने में सहायक सि(होता है? आप जानते ही हैं कि प्रबन्ध् का सार एवं उसकी सपफलता, अन्य व्यक्तियों से परिणाम की प्राप्ति पर निर्भर करती है। मानव संसाध्न प्रबन्ध् की तो प्रबन्ध् की एक शाखा है अतः उसकी सपफलता की माप, सामान्य प्रबन्ध् की सपफलता की माप से भिन्न कैसे हो सकती है?

मानव संसाध्न प्रबन्ध् की पदस्थिति
(Status of a Human Resource Manager)

मानव संसाध्न प्रबन्ध्क, जैसा कि हम उसके कार्यो के अध्ययन के समय देख चुके है, प्रतिष्ठान की समस्याओं को स्वयं प्रत्यक्ष रूप से नहीं निपटाता है। वह प्रबन्ध् के अन्य कार्यो जैसे उत्पादन एवं विपणन की भाँति कम्पनी के लाभों की वृ(में भी कोई प्रत्यक्ष योगदान प्रदान नहीं करता है और न ही उसके कार्यो का सम्बन्ध् कम्पनी के अस्तित्व से सम्बन्ध्ति ही दिखलाई पड़ता है। ऐसी परिस्थिति में उनकी पद स्थिति या प्रतिष्ठा के सम्बन्ध् में निश्चित रूप से कुछ भी नहीं कहा जा सकता।

मानव संसाध्न प्रबन्ध्क की पदस्थिति (Status) अलग–अलग कम्पनियों में अलग–अलग दिखलाई पड़ती है। कुछ कम्पनियों में मानव संसाध्न संचालन उप मुख्य अध्शिासी के पद स्तर का अध्किारी होता है तो अन्य कम्पनियों में मानव संसाध्न प्रबन्ध्क एक मध्यवर्ती प्रबन्ध्क ही या उससे भी नीचे स्तर का ही प्रबन्ध् अध्किारी होता है। हमें एक कम्पनी का मालूम है जहाँ कि कम्पनी के केन्द्रीय कार्यालय के आदेश पर कम्पनी के एक डिलीजन में मानव संसाध्न अध्किारी की नियुक्ति की गई, डिविजन प्रमुख इस नियुक्ति के पक्ष में नहीं था, लेकिन केन्द्रीय कार्यालय के आदेशों की अवहेलना भी नहीं की जा सकती थी। डिविजन प्रमुख ने इस मानव संसाध्न अध्किारी की टेबिल लेखा कार्य विभाग के एक कौन में लगवा दी और रद्दी कागजों की टोकरी के रूप में प्रयोग करने के लिए एक तेल का पुराना पीपा उफपर से मुँह कटवा कर दिया गया। इस कम्पनी में मानव संसाध्न प्रबन्ध्क ;अध्किारीद्ध की पद स्थिति या प्रतिष्ठा का आप सहज ही अनुमान लगा सकते हैं।

हमनें अध्याय के प्रारम्भ में समग्र संगठन संरचना में मानव संसाध्न प्रबन्ध् की स्थिति एवं प्रभाव का विस्तार से वर्णन किया है। अतः उन घटकों का जो मानव संसाध्न प्रबन्ध् की स्थिति एवं प्रभाव को निर्धरित करते हैं, अलग से वर्णन करने की कोई आवश्यकता नहीं है।

मानव संसाधन प्रबन्ध के क्षेत्र में सामान्यतः उन प्रबन्धकों की पदस्थिति ;प्रतिष्ठाद्ध उफँची दिखलाई पड़ती है। जो श्रम सम्बन्धें के कार्य को करते है। वेतन की दृष्टि से भी ये व्यक्ति अच्छी स्थिति में पाये जाते है। हमारी राय में इस स्थिति के दो कारण प्रकट रूप से दिखलाई पड़ते हैं। प्रथम, तो श्रमिकों अथवा श्रम संगठनों से व्यवहार करना, आज के श्रमिक अशांति के वातावरण में कोई सुखद कार्य नहीं है और दूसरे इस कार्य के सम्पादन में विशेष पेशेवर ज्ञान की आवश्यकता पड़ती है। अतः शीर्ष प्रबन्धक इस कार्य को आकस्मिक रूप से किसी भी अधिशासी को नहीं सौंप सकता।

जहाँ तक मानव संसाधन प्रबन्ध के अन्य शेष कार्यो का सम्बन्ध है, सामान्य धरणा यह है कि इन कार्यो के निष्पादन के लिए किसी विशेष योग्यता की आवश्यकता नहीं होती है। प्रत्येक अधिशासी अपने नित्य जीवन में व्यक्तियों के सम्पर्क में आता है तथा उनसे व्यवहार करता है। अतः सभी अधिशासी कुछ न कुछ सीमा तक अपने आपको मानव संसाधन प्रबन्ध से सम्बन्धित इन कार्यो के निष्पादन के लिए योग्य मानने लगते हैं। अतः इस विचारधरा के कारण संगठन में सामान्य योग्यता के व्यक्ति को मानव संसाधन अधिकारी के रूप में नियुक्त कर लिया जाता है। इसके प्रभाव यह पड़ता है कि यह सामान्य योग्यता प्राप्त व्यक्ति, मानव संसाधन प्रबन्ध को एक उफँची पद स्थिति नहीं दिला सकता और शनैः शनैः यह धरणा अधिक बलवती होती जाती है कि मानव संसाधन प्रबन्ध अपने आप में कोई उफँची पदस्थिति या प्रतिष्ठा का कार्य नहीं है।

विद्वानों का यह मत भी है कि इस पद स्थिति के लिए कुछ सीमा तक मानव संसाधन प्रबन्धक स्वयं भी उत्तरदायी हैं। उनकी सम्पत्ति में इसका कारण यह है कि मानव संसाधन प्रबन्धकों की पेशे सम्बन्धी शिक्षा का स्तर एवं ढाँचा ही दूषित है। उन्हें पेशे के सम्बन्ध में पर्याप्त एवं समग्र ज्ञान की सीख नहीं दी जाती।

मानव संसाधन प्रबन्ध की योग्यताएँ
(Qualifications)

प्रबन्धक की योग्यताओं की गणना कर पाना एक अत्यन्त कठिन कार्य है। यदि आप सपफल प्रबन्धकों का अध्ययन करें तो उन सभी एक से गुण या योग्यताएँ नहीं मिलतीं। किसी प्रबन्धक में कुछ गुण पाये जाते हैं तो किन्हीं अन्य प्रबन्धकों में कुछ और गुण पाये जाते हैं। यह भी सम्भव है कि किसी एक गुण की कमी, किसी अन्य गुण की प्रबलता से पूरी हो जाती हो।

अनुभव, अध यल एवं अवलोकन के आधर पर मानव संसाधन प्रबन्धक के लिए निम्न योग्यताओं की पहचान (Identify) की गई है। ये योग्यताएँ अन्तर्सम्बन्धित हैं अतः किसी एक गुण या योग्यता की कमी अन्य गुणों को भी प्रभावित करती है, यदि प्रबन्धक में किसी एक गुण की भी भरी कमी है तो वह मानव संसाधन प्रबन्धक की कार्य निष्पादन क्षमता के लिए घातक सि(हो सकती है।

1. **मानसिक योग्यता (Mental Ability):** यह योग्यता सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है। इस शीर्ष के अन्तर्गत सृजनात्मक एवं स्पष्ट चिन्तन, सूक्ष्म विश्लेषण तथा उद्देश्यात्मक तर्क शक्ति को सम्मिलित किया जाता है। मानव संसाधन प्रबन्धक में उच्च कोटि की प्रज्ञा (Intelligence) एवं कल्पना शक्ति का होना आवश्यक है। मानव संसाधन कार्यक्रमों का विकास करने के लिए तथा प्रबन्ध क्षेत्र में उत्पन्न होने वाली नई–नई स्थितियों से निपट पाने के लिए इन योग्यताओं का होना आवश्यक है। अधिकांश प्रबन्धकों की यह धरणा है कि शीर्ष मानव संसाधन प्रशासक में कल्पना शक्ति की निष्पादन क्षमता से अधिक आवश्यक होती है।
2. **व्यक्ति (Personality):** मानव संसाधन प्रबन्धक अन्य प्रबन्धकों के माध्यम से अपना कार्य करता है अतः उसमें व्यक्तित्व की प्रखरता आवश्यक है। पहलशक्ति तथा कार्य एवं चिन्तन में निश्चयात्मकता का गुण होना आवश्यक है। प्रबन्धक में दूसरों के दृष्टिकोण के प्रति जागरूकता एवं उसे समझ पाने की शक्ति होनी चाहिए।
3. **चरित्र (Character):** साहस एवं दृढ़ता तथा नैतिक रूप से गलत बातों का विरोध करने की शक्ति उदार चरित्रता तथा सामाजिक चैतन्यता आदि गुण मिलकर चरित्र का निर्माण करते हैं। मानव संसाधन को चरित्रवान व्यक्ति होना चाहिए।
4. **परिचालनात्मक (Operational):** कुशल मानव संसाधन प्रबन्धक को सेवाभावी होना चाहिये। कार्य निष्पादन में चुस्ती तथा व्यावहारिकता का गुण होना आवश्यक है। प्रबन्धक में आयोजन क्षमता एवं संगठनात्मक शक्ति होनी चाहिए।

5. **सम्प्रेषण योग्यता (Communication Abilities):** यह योग्यता मौखिक एवं लिखित दोनों ही प्रकार की होनी चाहिए। अपने विचारों को दूसरे तक पहुँचाना तथा उन्हें प्रभावित करना मौखिक सम्प्रेषण के अन्तर्गत आता है। मानव संसाध्न प्रबन्ध्क में लेखन सम्प्रेषण योग्यता की आवश्यकता, नीतियों, कार्यक्रमों, सि(ान्तों एवं कार्य विध्यिों को तथा श्रम संगठनों के साथ सामूहिक समझौते को लिखने में पड़ती है।

डिर्कस ने शीर्ष मानव संसाध्न संचालन के लिए निम्नांकित व्यक्तिगुण आवश्यक बतलाएँ हैं।

1. औचित्य की भावना
2. अच्छा अध्शिासी होना
3. व्यावहारिकता
4. मानव प्रकृति को समझने की शक्ति
5. कुशल विक्रेता ;विचारों एवं कार्यक्रमों काद्ध
5. सम्वहन योग्यता
7. कुशल वार्ताकार (Good negotiator)
8. अच्छा तकनीशियन – विश्लेषण योग्यता एवं तथ्यों को याद रखने की क्षमता,
9. अनामिकता की लालसा (Passion for anonymity)

स्मिथ ने परानुभूति (Empathy) के गुण को अत्यध्कि महत्त्वपूर्ण माना है। यह आवश्यक नहीं है कि मानव संसाध्न प्रबन्ध्क अन्य व्यक्तियों के दृष्ि्कोण से सहमत हो लेकिन उसमें उनके दृष्ि्कोण को समझने की योग्यता होना आवश्यक है।

उपर्युक्त योग्यता के अतिरिक्त मानव संसाध्न प्रबन्ध्क में अपने पेशे सम्बन्धी पर्याप्त एवं नवीनतम ज्ञान होना चाहिये।

मानव संसाध्न प्रबन्ध् एक पेशे से रूप में
(Human Resource Management as a Profession)

मानव संसाध्न प्रबन्ध् एक पेशा है या नहीं, इस प्रश्न का संतोषजनक उत्तर देने से पूर्व यह आवश्यक है कि हम पेशे के लक्षणों को पहचानें। **कलहून** (Calhoon) ने अपने पुस्तक (Managing Personnel) में पेशे के तीन लक्षण बतलाये हैं—

1. इसमें प्रारम्भिक प्रशिक्षण आवश्यक होता है तथा यह प्रज्ञावन प्रकृति का होता है। इसमें केवल कार्य करने की पटुता के स्थान पर ज्ञान एवं सिखलाई की आवश्यकता होती है।
2. पेशा, अपने लिए न होकर दूसरों के लिए चलाया जाता है।
3. पेशे में आय की प्राप्ति, पेशे की सपफलता का मापदण्ड नहीं मानी जाती।

इस प्रकार पेशे में त्याग भाव निहित होता है।

प्रेंफक बी, मिलर (Frank B. Millar) के अनुसार पेशे में निम्नांकित लक्षण होते हैं—

1. उच्च मानक एवं कार्य (Job) को सावधनीपूर्वक परिभाषित किया जानाऋ जिसके लिए दीर्घकालीन एवं सावधनीपूर्वक तैयारी आवश्यक है।
2. निþा का भाव नियोजक पफर्म तक सीमित न रह कर, पफर्म के बाहर पेशे में होता है तथा कार्य निष्पादन के माप–दण्ड पफर्म के अतिरिक्त पेशे द्वारा भी निर्धरित किये जाते हैं।
3. व्यवहार में आने वाले परिवर्तनों की नवीनतम जानकारी प्राप्त करने के लिए समय एवं श्रम का यथेþ व्यय।

डेल योडर (Dale Yoder) ने पेशे के निम्न आठ लक्षण बतलाए हैं—

1. विशिष्ट शब्दावली (Specialized Terminology),

2. विशेष ज्ञान एवं कौशल की आवश्यकता जिससे कि प्रमाणिक व्यवहार एवं कार्य विध् िको अपनाया जा सके,
3. व्यवहार (Practice) की स्थापना विशि५ ज्ञान, चैतन्यतापूर्वक अनुसंधन एवं अध्ययन पर आधरित होती है,
4. पेशेगत सूचनाओं की पेशे में संलग्न व्यक्तियों की जानकारी प्रदान करने के लिए तैयार रहना। पेशे में व्यावसायिक गोपनीयता नहीं होती।
5. पेशे सम्बन्धी साहित्य का निरन्तरण प्रवाह, जिससे कि अनुसंधन, परीक्षण, विकास एवं खोज द्वारा प्राप्त नये ज्ञान की जानकारी पेशे में संलग्न व्यक्तियों को दी जा सके।
6. उच्च व्यक्तिगत दायित्व की भावना,
7. सदस्यों से उच्च नैतिक प्रतिमान की अपेक्षा,
8. पेशे एवं उसके द्वारा स्थापित नैतिक प्रतिमानों तथा जन हित के प्रति निष्ठा की भावना।

उपर्युक्त वर्णित लक्षणों की कसौटी पर कस कर देखने से मानव संसाध्न प्रबन्ध निश्चय ही एक पेशे की श्रेणी में आता हैं।

प्रबन्ध और नेतृत्व
(Management and Leadership)

अथवा

प्रबन्ध्क में एक अच्छे नेता के गुण
(Manager must have Qualities of a Good Leader)

प्रबन्ध्क संस्था का सर्वोच्च अध्किारी है। उसमें एक आदर्श नेता के सभी गुण होने चाहिएँ तथा उसे प्रबन्ध्कीय तकनीकों से परिचित होना चाहिए। नेता तो कोई भी व्यक्ति बन सकता है, चाहे वह अनपढ़ ही क्यों न हो, किन्तु प्रबन्ध्क नेतृत्व के गुण के अभाव में सपफल नहीं हो सकता।

प्रबन्ध्क का उद्देश्य संस्था में विभिन्न क्रियाओं जैसे नियोजन, संगठन, संचालन, अभिप्रेरण, नियन्त्रण आदि में संतुलन बनाते हुए पूर्व निर्धरित लक्ष्यों को प्राप्त करना है। चूंकि मानव उत्पादन–क्रिया का एक सक्रिय साध्न है। इसलिए मानव से काम लेने के लिए उससे माननीय बर्ताव किया जाना चाहिये तथा साथ ही उसको विभिन्न प्रकार की प्रेरणाएँ भी दी जानी चाहिएँ। यह तभी संभव है तब प्रबन्ध्क में नेतृत्व की योग्यता के सभी गुण हों। इस प्रकार जब तक संस्था जीवित रहती है तब तक प्रबन्ध्क और नेतृत्व की आवश्यकता रहती है। परिणामस्वरूप नेतृत्व सपफलता की कुंजी है।

नेतृत्व
(Leadership)

अर्थ
(Meaning)

नेतृत्व से आशय किसी व्यक्ति विशेष के उस गुण से है जिसके द्वारा वह दूसरे व्यक्तियों को पूर्व–निश्चित लक्ष्यों को उत्साहपूर्वक प्राप्त करने के लिए प्रेरित करता है। प्रभावी नेतृत्व कार्यकारी समूह को एक सूत्र में बांध् देता है और उनमें कुशलता, सहयोग और सुरक्षा की अटूट भावना को जन्म देता है।

नेतृत्व की भावना
(Need of Leadership)

आज की बदलती हुई परिस्थितयों में उपर्युक्त नेतृत्व का होना बहुत आवश्यक है। एक प्रभावी नेतृत्व किसी उपक्रम को पग–पग पर आने वाली कठिनाईयों का समाधन करते हुए स्वावलम्बी बनाता है। विश्व का इतिहास ऐसे उदाहरणों से भरा

पड़ा है जिसमें प्रभावी नेतृत्व डूबते हुए व्यवसाय को सपफलता के द्वार तक ले जाने में सपफल हुआ है। व्यावसायिक संस्थाओं में नेतृत्व की आवश्यकता निम्न कारणों से है—

1. लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए कार्य करने की इच्छा को जागृत किया जाता है,
2. उपक्रम और कर्मचारियों के बीच सहयोग प्राप्त करने के लिए,
3. सामूहिक प्रयत्नों को दिशा–निर्देशन देने के लिए,
4. कर्मचारियों का रचनात्मक सहयोग प्राप्त करने के लिए,
5. वांछित कार्य स्वेच्छापूर्वक एवं बिना दबाव के कराने के लिए।

परिभाषाएँ (Definitions)—नेतृत्व की प्रमुख परिभाषाएँ निम्नलिखित हैं—

1. **कीथ डेविस** (Keith Davis) के अनुसार, फ्नेतृत्व दूसरे व्यक्तियों को पूर्व–निश्चित उद्देश्यों को उत्साहपूर्वक प्राप्त करने के लिए प्रेरित करने की योग्यता है। यह ऐसा मानवीय तत्व है जो एक समूह को एक सूत्र में बांध्े रखता है और इसे अपने लक्ष्यों की दिशा में अभिप्रेरित (Motivate) करता है।य्[22]
2. **कूण्टज एवं ओडोनेल** (Koontz and O'Donnel)—के अनुसार, फ्किसी लक्ष्य की प्राप्ति के लिए संदेश वाहन के माध्यम द्वारा व्यक्तियों को प्रभावित कर सकने की योग्यता नेतृत्व कहलाती है।य्[23]
3. **ओर्डवे टीड** (Ordway Tead) के अनुसार, फ्नेतृत्व गुणों का वह संयोजन है जिसके होने से कोई भी किसी अन्य से कुछ कराने के योग्य होता है, क्योंकि मुख्यतः उसके प्रभाव द्वारा वे ऐसा करने को तत्पर हो जाते है।य्[24]
4. **मूने तथा रेले** (Mooney and Reiley) के अनुसार, फ्प्रक्रिया में प्रवेश करते समय अध्किारी वर्ग जो स्वरूप धरण करता है, उसे नेतृत्व कहते हैं।य्[25]
5. **थियो हैमन** (Theio Haimann) के अनुसार, फ्नेतृत्व एक ऐसी प्रक्रिया के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जिसके द्वारा कार्यकारी अध्किारी अन्य व्यक्तियों के कार्य को संस्था और व्यक्ति, दोनों के बीच, इस प्रकार की मध्यस्थता करके विवेकपूर्ण ढंग से निर्देशित तथा प्रभावित करता है तथा विशि५ उद्देश्य को चुनने तथा प्राप्त करने में दोनों को अध्कितम संतुपि् प्रदान करता है।य्[26]

लक्षण (Characteristics)—नेतृत्व के प्रमुख लक्षण या विशेषताएँ निम्नलिखित हैं—

1. **व्यक्तियों के द्वारा अनुसरण** (Following by Others)—प्रभावी नेतृत्व के लिए यह आवश्यक है कि नेता के आदेशानुसार चलने वाले व्यक्तियों की संख्या पर्याप्त हो।
2. **नेतृत्व व्यक्तिगत गुण है** (Leadership is Personal Quality)—नेतृत्व किसी व्यक्ति विशेष में पाया जाने वाला वह गुण है जिसके द्वारा वह दूसरे व्यक्तियों को कार्य करने के लिए प्रेरित करता है।
3. **आदर्श आचरण** (Ideal Conduct)—एक नेता अपने आदर्श आचरण के द्वारा ही अधेनस्थों के सामने कुशल नेतृत्व प्रदान कर सकता है यानि नेता को केवल भाषण देने वाला ही न होकर स्वयं संस्था के प्रति वपफादार होना चाहिए।

---

22. "Leadership is the ability to persuade others to seek defined objectives enthusiastically. It is the human factor which binds a group together and motivates it towards goals." **Keith davis :** Human Behaviour at Word, P. 100
23. "Leadership may be defined as the ability to exert interpersonal influence by means of communication towards the achievement to goal." **Koontz & O'Donnell :** Principles of Management.
24. "Leadership is that combination of qualities by the possesion of which one is able to get something done by other, chiefly because, through his influence they become willing to do so." **Ordway Tead.**
25. "Leadership is regarded as the form which authority assumes when it enters into process. **Mooney and Rreily**
26. "Leadership can be defined as the process by which an executive imaginatively directs, guides and influences the work of others in choosing and attaining specified goals by mediating between the individual and the organisation in such a manner that both will obtain maximum satisfaction." **Theo Thaimann :** Professional Management, P. 440

4. **नेतृत्व में चार तत्त्व–पथ–प्रदर्शन, संचालन, निर्देशन तथा पहल निहित हैं** (Leadership includes guiding, conducing, directing and preceding)—नेता अपनी संस्था के उद्देश्यों को परिभाषित करता है, उनकी प्राप्ति के लिए अधीनस्थों को पथ–प्रदर्शन करता है, संचालन विध् िमें सहायता करता है, तथा उद्देश्यों को कुशलतापूर्वक तथा समन्वित रूप से पूरा करने के लिए आदेश तथा निर्देश समय–समय पर देता है।
5. **नेतृत्व एक सतत प्रक्रिया** (Leadership is a Continuous Process)—नेतृत्व प्रक्रिया निरन्तर चलने वाली है। इस प्रकार जब तक संस्था रहती है तब तक नेतृत्व रहता है।
6. **सभी क्षेत्रों में नेतृत्व आवश्यक** (Leadership is required in all spheres)—नेतृत्व आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक, औद्योगिक आदि सभी स्थानों पर आवश्यक होता है।
7. **नियोजित एवं स्पष्ट आदेश** (Planned and Clear orders)—नेतृत्व में सभी आदेश खूब विचार कर तथा स्पष्ट अर्थ वाले दिये जाते हैं।
8. **अनुशासन** (Discipline)—यदि नेता चाहता है कि उसके संस्थान में कार्य सुचारू रूप से चले तो उसे अधीनस्थों पर अनुशासन का पालन कराना होगा। अनुशासनहीन संस्था में अपव्यय तथा अध्कि लागत आती है।
9. **समन्वय** (Co-ordination)—नेता संस्था तथा अधीनस्थों के बीच समन्वय तथा एकीकरण पैदा करता है।
10. नेतृत्व संस्था के कर्मचारियों में उत्साह तथा विश्वास को जन्म देता है।

नेतृत्व के प्रकृति
(Nature of Leadership)

नेतृत्व की सही प्रकृति निम्नलिखित से स्पष्ट होती है—

1. **नेतृत्व प्रबन्ध की एक शाखा है** (Leadership is a branch of Management)—"एक अच्छा नेता, एक अच्छा प्रबन्धक भी हो, यह जरूरी नहीं है, किन्तु एक अच्छे प्रबन्धक में एक अच्छे नेते के अनेक गुण होने चाहिए।"
2. **नेतृत्व इसलिए जिन्दा है क्योंकि कुछ व्यक्ति अनुसरण करने के आदी होते हैं** (Leadership exists because some people are habitual to follow someone)—कुछ व्यक्ति स्वावलम्बी नहीं होते। वे केवल व्यक्तियों के आदेश और निर्देशानुसार ही कार्य करते है, इसलिए नेतृत्व की आवश्यकता होती है।
3. **नेतृत्व असम्भव को भी सम्भव में परिवर्तित कर देता है** (Leadership transforms impossible in reality)—कभी–कभी नेतृत्व चुनौतीपूर्ण परिस्थितियों का सामना करता है और असम्भव लगने वाले कार्यों को भी सम्भव करके दिखा देता है।
4. **नेतृत्व एक गतिशील एवं विकासशील प्रक्रिया है** (Leadership is a dynamic and developing process)—नेतृत्व कभी न समाप्त होने वाली प्रक्रिया है तथा प्रबन्ध के लिए बदलती हुई परिस्थितियों के अनुरूप नित नये अवसर प्रदान करता है।
5. **नेतृत्व प्रबन्धक और अधीनस्थों के बीच व्यक्तिगत सम्बन्ध स्थापित करता है** (Leadership creates individual relationship between manager and his subordinates)—नेतृत्व एक ऐसी प्रक्रिया है जो प्रबन्धकों और उनके साथ कार्य करने वाले अधीनस्थों के बीच आवश्यक सूचनाओं को देकर व्यक्तिगत सम्बन्ध स्थापित करता है।

नेतृत्व के कार्य
(Functions of Leadership)

1. **संस्था के उद्देश्यों को परिभाषित करता है** (To Interpret the Objectives of Institution)—नेतृत्व संस्था के उद्देश्यों की स्पष्ट व्याख्या करके अपने अधीनस्थों के कार्यों का पथ–प्रदर्शन करता है।

2. **सहयोग प्राप्त करना** (Secure Co-operation)—नेतृत्व सम्बन्धित अधीनस्थों से मिल–जुलकर संस्था के पूर्व निर्धरित उद्देश्यों को प्राप्त करता है।

3. **अनुशासन स्थापित करना** (To Maintain Discipline)—नेतृत्व संस्था में अनुशासन स्थापित करके न्यूनतम लागत पर अध्कितम उत्पादन संभव करता है। संस्था में अनुशासन की भावना स्वतः ही विकसित होती है।

4. **समन्वय एवं निर्देश** (Co-ordination and Direction)—प्रभावी नेतृत्व संस्था में आवश्यक कार्यों को कराने के लिए विभिन्न क्रियाओं में समन्वय करके निश्चित एवं स्प५ आदेश देता है जिससे पूर्वनियोजित उद्देश्यों की प्राप्ति होती है।

5. **नैतिकता को विकसित करना** (To Develop Morality)—कुशल नेतृत्व से यह आशा की जाती है कि वह संस्था में विभिन्न कर्मचारियों के बीच नैतिक साहस विकसित करेगा।

प्रबन्ध में नेतृत्व का महत्त्व
(Importance of Leadership in Management)

अथवा

नेतृत्व का महत्त्व
(Importance of Leadership)

इतिहास इस बात का साक्षी है कि कुशल नेतृत्व के कारण चमत्कारिक परिणाम प्राप्त होते हैं। कठिन से कठिन कार्य सरल हो जाते हैं। नेतृत्व से अध्कि महत्त्वपूर्ण मानवीय क्रिया का अन्य कोई क्षेत्र नहीं है क्योंकि इसका कार्य अधीनस्थों के द्वारा कार्य का सम्पादन करना है। व्यावसायिक संस्थाओं में नेतृत्व का महत्त्व निम्न कारणों से है—

1. **सहयोग का आधर** (Basis of Co-operation)—प्रभावशाली नेतृत्व स्वैच्छिक सहयोग में वृ(करता है और कर्मचारियों की योग्यता और कार्यक्षमता को विकसित करता है।

2. **अभिप्रेरणा का ोत** (Source of Motivation)—नेतृत्व संस्था में कर्मचारियों में शक्ति का संचार करके निष्क्रिय साध्नों को सक्रिय करके शक्तिमान बना देता है।

3. **प्रबन्ध्कों के लिए सुविध प्रदान करना** (Facilitates Management)—कुशल नेतृत्व प्रबन्ध्कों को समय–समय पर ऐसी सुविध प्रदान करता है जिससे संगठन में एकता स्थापित होती है। विभिन्न कार्यों में सन्तुलन एवं समन्वय स्थापित होता है।

4. **प्रबन्ध्क एक सामाजिक प्रक्रिया के रूप में** (Management becomes a Social Process)—प्रभावी नेतृत्व के कर्मचारियों में प्रत्याशित शक्ति एवं उत्साह का संचार करके सब कुछ बलिदान करने को तैयार करता है। इसके जवाब में प्रबन्ध भी उनके लिए यथासम्भव सुविधएँ–स्वस्थ मनोरंजन की सुविधएँ, शिक्षा, बीमा की सुविधएँ तथा सामाजिक सुविधएँ, प्रदान करता है।

नेतृत्व का सि(ांत
(Principles of Leadership)

नेतृत्व के प्रमुख सि(ान्त निम्नलिखित हैं—

1. **नेतृत्व का लक्षण विषयक सि(ांत** (The Traitist Theory of Leadership)—**आर्डवे टीड** (Ordway Tead) और **चेसटर आई बर्नार्ड** (Chester I. Barnard) इस सि(ांत के जन्मदाता हैं। यह सि(ांत यह मानकर चलता है कि

'नेता जन्म लेते हैं बनाये नहीं जाते।' इस सि(ान्त की प्रतिपादन निगमन प्रणाली के आधर पर कुछ सपफल नेताओं के जीवन का विश्लेषण करके किया गया है। प्रो. टीड (Tead) ने कहा है कि वही व्यक्ति नेता बन सकता है जिसमें निम्न दस विशेषताएँ पाई जाती हों—

(i) शारीरिक व स्नायुविक शक्ति, (ii) उद्देश्यों के प्रति सजगता, (iii) साहस, (iv) प्रेम तथा मैत्री भाव, (v) व्यक्तित्व, (vi) तकनीकी कुशलता, (vii) शीघ्र निर्णय लेने की क्षमता, (viii) तीव्र बु(ि, (ix) शिक्षा देने की क्षमता, (x) विश्वास।

2. **X तथा Y सि(ांत** (X and Y Theory)—इस सि(ान्त के जन्मदाता **मैकग्रिगोर** (Mc Gregor) हैं। दो परस्पर विरोधी सि(ान्तों को मिलाकर इस एक सि(ान्त को जन्म दिया गया है। X सि(ांत यह मानकर चलता है कि व्यक्तिगत स्वयं अपनी इच्छा से काम नहीं करता अपितु उससे काम लेने के लिए नेता को शक्ति व नियंत्रण का प्रयोग करके उसे डराना, ध्मकाना एवं पग–पग पर निर्देश देना बहुत जरूरी है। ऐसा करने पर ही व्यक्ति से कार्य पूरा कराया जा सकता है। जबकि Y सि(ांत यह मानकर चलता है कि व्यक्ति में सृजनात्मक गुण होता है तथा वह आशावादी होता है इसलिए व्यक्ति स्वयं अपनी ओर से कार्य करता है नेतृत्व तो केवल उसका पथ–प्रदर्शन करता है।

3. **नेतृत्व का परिस्थित्यात्मक परीक्षण सि(ांत** (Situationalist Approach to Leadership)—इस सि(ांत की यह मान्यता है कि 'परिस्थितियाँ' किसी व्यक्ति को नेता बनाती हैं। एक व्यक्ति विशेष परिस्थितियों में एक सपफल नेता है लेकिन यह जरूरी नहीं है कि वह सब परिस्थितियों में सपफल नेता बन सकता है। जैसे–चर्चिल का नाम यु(की परिस्थितियों में बहुत चमका, किन्तु कुछ समय बाद शान्तिकाल में वह अध्कि कुशल नेता सि(नहीं हुए। लेकिन यह सि(ांत इतना तो मानकर चलता है कि प्रत्येक व्यक्ति नेता तब तक नहीं बन सकता जब तक उसमें भाषण देने की योग्यता, ध्ैर्य, तीव्र बु(ि, समझ, स्थायित्व, पहलपन आदि गुण न हों।

4. **अनुयायी सि(ांत** (The Followers Theory)—इस सि(ांत के जन्मदाता **श्री एपफ एच सेन्सपफोर्ड** हैं। इनकी मान्यता यह है कि जो नेता अपने समर्थकों या अनुयायियो की आधरभूत या प्राथमिक आवश्यकताओं को जानकर उनकी पूर्ति कर देते हैं उनके समर्थक सदैव अपने नेताओं पर निर्भर करते हैं। इस प्रकार किसी नेता की नेतृत्व क्षमता को ज्ञात करने के लिए उसके अनुयायी सम्बन्धी आचरण या अध्ययन करना परम आवश्यक है।

5. **नेता का आचरण से सम्बन्ध्ति सि(ांत** (The Leader's Behavioural Theory)—इस सि(ांत की यह मान्यता है कि नेता का आचरण आदर्श होना चाहिए। यदि नेता स्वयं अनुशासनप्रिय एवं निध्ठावान नहीं होगा तो उसके अनुयायी भी ऐसे ही होंगे। इस प्रकार नेता को अपने समर्थकों के समक्ष अच्छा आदर्श प्रस्तुत करना चाहिए।

नेतृत्व के गुण
(Leadership Quality)

विभिन्न प्रबन्ध शास्त्रियों ने नेतृत्व के अनेक गुणों का वर्णन किया है। इनमें से प्रमुख निम्न हैं—

पीटरसन तथा प्लोमैन (Peterson and Plowman) ने कुशल नेतृत्व के गुणों को निम्न तीन वर्गों में विभक्त किया है—

I. **शारीरिक गुण** (Physical Qualities)—इसके अन्तर्गत निम्नलिखित गुणों को सम्मिलित किया जाता है—1. अच्छा स्वास्थ्य, 2. स्पूफर्ति तथा सहनशीलता।

II. **बौ(िक गुण** (Intellectual Qualities)—इसके अन्तर्गत निम्नलिखित चार गुणों को सम्मिलित किया जाता है—
1. स्वस्थ निर्णय लेने की क्षमता, 2. मानसिक क्षमता, 3. गुण ग्राह्यता, तथा 4. समस्याओं की और वैज्ञानिक दृष्टिकोण।

III. **मनोवैज्ञानिक गुण** (Psychological Qualities)—इनके अन्तर्गत निम्न चार गुणों को सम्मिलित किया जाता है—
1. व्यक्तिगत आकर्षण शक्ति, 2. सहकारिता, 3. उत्साह, साहस और लगन, तथा 4. चातुर्य।

बर्नार्ड (Barnard) ने नेता के निम्न गुणों का वर्णन किया है—

1. **स्पूफर्ति तथा सहिष्णुता** (Vitality and Endurance)—बर्नार्ड ने 'स्पूफर्ति' को शक्ति, चैतन्य, सजगता का मिश्रण तथा सहिष्णुता बताया है। यह गुण नेता में होना बहुत जरूरी है।
2. **निर्णायकता** (Decisiveness)—यह गुण नेता का एक निर्णय करने की क्षमता से सम्बन्ध् रखता है इसके कारण सही समय पर सही कार्य होना सम्भव होता है।
3. **अनुभूति** (Persuasiveness)—यह नेता का एक महत्त्वपूर्ण गुण हैं इस गुण के अभाव में अन्य सब गुण प्रभावहीन हो जाते हैं।
4. **उत्तरदायित्व** (Responsibility)—उत्तरदायित्व का तात्पर्य उस भावनात्मक परिस्थिति से है जब एक व्यक्ति अपने किसी नैतिक कर्त्तव्य को पूरा करे। यह नेतृत्व का एक महत्त्वपूर्ण गुण है।
5. **बौ(िक क्षमता** (Intellectual capacity)—ये नेतृत्व का एक आवश्यक गुण है। बौ(िक क्षमता के बिना कोई भी नेता सपफल नहीं हो सकता है।
6. **सामाजिक चेतना** (Social Consciousness)—एक सपफल नेता के लिए यह अत्यन्त विशि҃ रूप से आवश्यक गुण है।

अध्याय–2

मानव संसाधन प्रबन्ध कर्मचारी प्रबन्ध नीति

(Human Resource Management Policy)

फ्एक संगठन की नीति उसके उद्देश्यों का, यह बतलाते हुए कि उसे क्या प्राप्त करना है–एक स्पष्ट विवरण होता है।। मानवीय शक्ति प्रबन्ध Manpower Management के सम्बन्ध में नीति (Policy) किसी संस्था में तरह–तरह के रोजगार सम्बन्धें के लिए मार्गदर्शन करती है। यह प्रत्येक श्रमिक को अपनी स्वयं की भूमिका और साथी श्रमिकों की पहचानने और सापफ तौर पर समझने में सहायता करती है। मानव संसाधन नीति के रूप में स्पष्ट किए गए ये मार्गदर्शक सि(ांत किसी काम करने वाली संस्था में कर्मचारियों की भर्ती, चयन, पदोन्नति, विकास, क्षतिपूर्ति, प्रेरणा तथा दूसरी ओर नेतृत्व एंव निर्देशन करने में संस्था के उद्देश्यों को प्रकट करते हैं। अन्य प्रबन्ध्कीय नीतियों की तरह मानव संसाधन नीतियाँ प्रबन्ध्कों के लिए **मार्ग मानचित्र** (Road Map) का कार्य करती हैं।

एडविन बी. पिफलप्पो (Edwin Brown Filppo) के अनुसार, फ्एक नीति मनुष्य–निर्मित नियम अथवा पूर्व निर्धरित क्रियाओं का क्रम है जिसकी स्थापना संगठन के उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए किए जाने वाले कार्यों के सम्पादन का मार्गदर्शन करने के लिए की जाती है।[1]

मारिस डब्लयू. कमिंग के अनुसार, फ्एक संगठन की नीति उसके उद्देश्यों का, यह बतलाते हुए कि प्राप्त करना है, एक स्पष्ट विवरण है।[2]

इस प्रकार नीतियाँ, उद्देश्यों की व्याख्या करने वाले कथन होते है। जो संगठन के अभिप्राय को स्पष्ट करते हैं। नीतियाँ, संगठन के समक्ष प्रायः आने वाली समस्याओं को निपटाने में मार्गदर्शन प्रदान करते हैं और इस प्रकार इससे समस्याओं के विषय में नैत्यिक आधर पर निर्णयन में सहायता मिलती है। इससे परिचालन में मितव्ययिता आती है, सत्ता के प्रत्यायोजन में सहायता मिलती है। तथा विभिन्न क्रियाओं एवं विभागों के मध्य समन्वय का आधर तैयार किया जाता है। नीतियों की नींव के पत्थर नी पर आयोजन का भवन तैयार किया जाता है और नीतियाँ नियन्त्रण के प्रतिमान (Standrad) का कार्य करती है। नीतियों कारण उद्देश्यों की प्राप्ति सम्भव हो पाती है। आयोजन, निर्णयन एवं व्यवसाय की रणनीति निर्धरण में निरन्तरता का सामंजस्य स्थापित होता है तथा नीतियों का पालन कार्मिकों में विश्वास का संचार करता है।

नीति तथा कार्यक्रम, व्यवहार एंव किया विधि–सम्बन्ध एंव अन्तर
(Policy and Programme, Practice and Precedure–Relationship and Difference)

नीति का अर्थ समझने के उपरान्त अब हम क्रमशः कार्यक्रम (Programme), व्यवहार (Practice) तथा क्रियाविधि (Procedure) जैसे प्रचलित शब्दों का अर्थ समझें, जिससे इनका नीति से सम्बन्ध एवं अन्तर समझने में सहायता मिल सके।

---

1. "A Policy is a man-made rule or predetermind course of action that is established to guide the performance of work towards the organizations objectives." **Principle of Personnel Management, P. 42**
2. "The policy of an organization is a clear-cut statement of its aims and objectives, setting out what is to be achieved."

कार्यक्रम (Programme) **से आशय–योडर** के अनुसार कार्यक्रम उन सरल अथवा जटिल क्रियाओं का नाम है जिनका विकास नीतियों के क्रियान्वयन के लिए किया जाता है।

रिचार्ड पी. कैलहून (Richard P. Calhoon) के अनुसार, फ्मानव संसाध्न नीतियों क्रिया (Action) का मार्गदर्शन प्रदान करती है। ये सामान्य प्रभाव या आधर प्रस्तुत करती हैं जिसके आधर पर निर्णय लिये जाते है। इनकी उत्पत्ति संगठन के मूल्यों, दर्शन, विचारों एंव सि(ांतों पर निर्भर करती है।य्3

एडविन बी. पिफलप्पो (Edwin B. Flippo) के अनुसार, फ्नीति एक मानवकृत नियम एक मानवकृत नियम अथवा एक पूर्व–निश्चित–कार्य–प्रणाली है जो संगठन के हितार्थ कार्य–निष्पादन के मार्गदर्शन के लिए प्रतिस्थपित की जाती है। यह एक स्थायी आयोजना का प्रकार है जो अधिनस्थों को अपने कार्यों के निष्पादन में मार्गदर्शन प्रदान करती है।य्4

हैण्डकबुक ऑपफ पर्सनल मैनेजमैंट एण्ड लेबर रिलेशन्स (Handbook of Personnel Management and Labour Re lations) के अनुसार कार्यक्रम व्यवहार को सन्निहित करने वाली एक ऐसी संगठित योजना है, जिसका संगठन के प्रत्येक स्तर पर पालन कर, नीतियों को कार्यरूप प्रदान करने का प्रयास किया जाता है।य्5 इस प्रकार कार्यक्रम नीति से आगे का कदम होता है, जिसका प्रयोजन निर्णयन की प्रक्रिया को सरल बनाना होता है। कार्यक्रम का पालन, निर्णयन की प्रक्रिया को नैत्यिक आधर प्रदान करता है।

व्यवहार (Practice) **एवं क्रियाविध्** (Procedure) **से आशयः–**

कार्यक्रम के पश्चात् अब व्यवहार को लीजिए। व्यवहार (Pr actice) बार–बार की जाने वाली अथवा प्रथागत (Customary) क्रिया का नाम है। इस प्रकार नीति को क्रियान्वित करने के लिए की जाने वाली क्रियाओं ;जिनको बार–बार दोहराया जाएद्ध को व्यवहार के नाम से जाना जाता है। इसी क्रम में हमें क्रियाविध्, (Pr ocedure) कार्य भी समझ लेना चाहिए। **क्रियाविध्** किसी विशेष प्रशासनिक संदर्भ में, नीति के आचरण की विस्तृत प(ति का नाम है। क्रियाविध्, कार्य करने का एक तरीका होता है। यह तरीका एक मान्य अथवा प्रचलित तरीका होता है, जिसका हम नैत्यिक रूप में, समान प्रकार की स्थितियों में आचारण करते हैं। क्रियाविध्, नीति को कार्याविन्त करने के लिए अपनाए जाने वाले नियमों एवं उपनियमों का एक संकलन होता है। इसमें इस उद्देश्य के लिए उठाये जाने वाले कदमों, स्थान, समय एवं व्यक्तियों का उल्लेख किया जाता है। विशिष्ट परिस्थितियों में क्या किया जाना है, यह स्पष्ट करने का काम क्रियाविध् का होता है।

नीतियाँ, इरादों (Intention s) को प्रकट करती है। 'क्या किया जाना है', यह नीति के अन्तर्गत आता है। 'कैसे किया जाना है', यह 'व्यवहार', 'कार्यक्रम' एवं क्रियाविध्' के अन्तर्गत आता है। 'व्यवहार' एवं 'क्रियाविध्' दोनों मिलकर 'कार्यक्रम' का रूप धरण करते हैं। क्रियाविध्, एक प(ति होती है जबकि व्यवहार बारम्बार दोहराये जाने वाली क्रिया को कहते है। इस सन्दर्भ में, नीति मूल होती है उसी से कार्यक्रम, अथवा क्रिया या व्यवहार का जन्म होता है। नीति सामान्य होती है, जबकि क्रियाविध् की प्रकृति विशिष्ट होती है। एक ओर जहाँ नीतियों का निर्धरण संगठन के उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए किया जाता है, वहीं दूसरी ओर कार्यक्रम आदि का निर्धरण, नीतियों को प्रभावी ढंग से क्रियान्वित करने के उद्देश्य से किया जाता है। नीतियों की सपफलता उद्देश्यों की प्राप्ति से आँकी जाती है जबकि कार्यक्रम आदि की सपफलता को आँकने के लिए नीतियों की कार्यान्वित को मापदण्ड के रूप में प्रयोग में लाया जाता है। संगठन के उद्देश्य प्रमुख एवं सर्वोपरि होते हैं और उस दृष्टि से नीति गौण मानी जाती है। नीति एवं कार्यक्रम आदि के पारस्परिक संबंधें में नीति प्रमुख एवं कार्यक्रम आदि को गौण स्थान प्रदान किया जाता है। एक उदाहरण की सहायता से नीति एवं कार्यक्रम आदि का सम्बन्ध् स्पष्ट करने का प्रयास किया जाना चाहिए।

---

3. Richard P. Calhoon : Managing Personnel, 1964, P. 26
4. Edwin B. Filippo : Principle of Personnel Management, 1961 P. 42-43
5. "An orgnised plan involving practices to be followed throught all levels of an organisation, presumably to effectuate policies."
Yodder, Heneman : Turnbull and Stone (P. 35)

उदाहरण– कार्मिकों को प्रशिक्षण प्रदान करना, संगठन की एक नीति है, इस नीति को कार्याविन्त करने के उद्देश्य से प्रशिक्षण कार्यक्रम तैयार किया जाता है। प्रशिक्षण कार्यक्रम की घोषण कम्पनी की सूचना बुलेटिन के माध्यम से की जाती है। व्यवहार में, सभी प्रशिक्षण कार्यक्रमों की सूचना, उनके आरम्भ होने की तिथि से तीन माह पूर्व दी जाती है।

उक्त प्रशिक्षण कार्यक्रमों में भाग लेने के लिए कार्मिकों के चयन की विध् िनिर्धरित की हुई है।

यह सम्भव है कि कम्पनी की नीतियों की स्पष्ट रूप से घोषणा न की जाये और केवल व्यवहार को देखने और समझने से ही उनका आभास होता हो अथवा अनुमान लगाया जा सकता हो। लेकिन कार्यक्रमों एवं क्रियाविध्यिों का स्पष्ट उल्लेख होना आवश्यक होता है। उनके आभास या अनुमान से काम नहीं चलता।

नीति तथा कार्यक्रम आदि का अन्तर एवं सम्बन्ध् स्पष्ट करने के पश्चात् हमें नीति तथा 'मूल्य' (Value), ध्येय या उद्देश्य आदि का सम्बन्ध् एवं अन्तर भी समझ लेना चाहिए।

नीति, मूल्य, ध्येय सम्बन्ध् एवं अन्तर

(Policy, Value, Goal–Relationship and Difference)

'मूल्य' (Value) से हमारा प्रयोजन व्यक्तियों की दार्शनिक विचारधराओं, मान्यताओं एवं प्राथमिकताओं से है। इनका सम्बन्ध् ईमानदारी, आजादी, सुरक्षा, अनामिकता जैसी चीजों से होता है। ये मान्ताएँ, वैयक्तिक उद्देश्यों के निर्धरण में सहायक होती हैं तथा उन्हें कापफी सीमा तक प्रभावित करती हैं। व्यक्तिओं की मान्यताएँ सामूहिक रूप से संगठन की मानव संसाध्न नीतियों एवं संगठन की नीतियों को प्रभावित करती हैं। एक उदाहरण की सहायता से इसे आसानी से समझाया जा सकता है। एक अध्शिसी संगठन में कार्यरत व्यक्तियों को, संगठन के ध्येय की प्राप्ति का साध्न मानता है। इस अध्विासी की यह मान्यता, संगठन की समस्त रणनीति (Strategy) को प्रभावित करेगी। दूसरी ओर यदि अध्शिासी कार्मिकों के वैयक्तिक उद्देश्यों को महत्त्वपूर्ण मानता है तो नीति इस प्रकार की निर्धरित की जायेगी जिसका ध्येय वैयक्तिक उद्देश्यों के साथ–साथ संगठन के उद्देश्यों को प्राप्त करना होगा।

नीतियों का संगठन के उद्देश्यों से सीध एवं घनिष्ठ सम्बन्ध् होता है। प्रत्येक संगठन के एक से अध्कि उद्देश्य होते हैं और उद्देश्यों में कभी–कभी पारस्परिक विरोधभास भी होता है। सर्वप्रथम आवश्यकता यह होती है कि उद्देश्यों की प्राथमिकता निश्चित की जाय। उद्देश्यों के अनुसार, नीतियों की अपेक्षा कार्यक्रम एवं व्यवहार के अध्कि निकट होती है।

संगठन की नीतियाँ सामान्य अथवा विशिप्ु हो सकती हैं। विशिप्ु नीतियाँ, सामान्य नीतियों की व्याख्या करने में सहायक होती है। विशिप्ु नीतियाँ, सामान्य नीतियों की अपेक्षा कार्यक्रम एवं व्यवहार के अध्कि निकट होती है।

नीचे एक चित्र के माध्यम से ध्येय नीति कार्यक्रम आदि का क्रम दर्शाया जा रहा है–

I. संगठन के ध्येय ;प्राथमिकता के अनुसारद्ध
- संगठनात्मक उत्तरजीविका (Survial)
- अध्कितम विकास
- अध्कितम आमदनी
- ओद्योगिक नेतृत्व की प्रतिष्ठा
- एक उत्तम कार्य स्थल के रूप मे प्रतिष्ठा

II. सामान्य मानव संसाध्न नीति ;प्राथमिकताकेअनुसारद्ध
- अध्कितम उत्पादन
- उत्पादों की उच्चतम गुणावस्था
- उच्चतम कौशल का उपयोग
- अध्कितम आर्थिक सुरक्षा
- व्यक्ति विकास की अध्कितम सुरक्षा

Contd....

III. विशिष्ट मानव संसाध्न नीति
- पेशे की दृष्टि से योग्य नेतृत्व की व्यवस्था
- निम्नतर स्तर तक सत्ता का प्रत्यायोजन
- आंतरिक पदोन्नति
- श्रम संगठन के सहयोग की प्राप्ति
- प्रत्येक व्यक्ति के अध्कितम विकास की सुविध

IV. कार्यक्रम
- कार्य विश्लेषण
- परिवेदना कार्यविध्ि
- उद्देश्यानुसार मूल्यांकन
- वरिष्ठता के आध्र पर पदोन्नति

नीति निर्धरण की आवश्यकता (Need of Personnel Policy)—मानव संसाध्न नीतियों के सम्बन्ध् में सामान्य जानकारी प्राप्त करने के उपरान्त, यह प्रश्न उत्पन्न होता है कि किन संगठनों नीतियाँ निर्धरित करनी चाहिए अथवा किसी संगठन को अपने विकास के क्रम में किस समय मानव संसाध्न नीतियों का निर्माण करना आवश्यक हो जाता है। यह तो स्पष्ट है कि छोटे– छोटे संगठनों को मानव संसाध्न नीतियों के निर्धरण की आवश्यकता उत्पन्न होने वाली स्थिति में सभी बातों पर विचार कर निर्णय ले सकता है। निर्णयन के इतने अध्कि मौके भी उपस्थित नहीं होते कि अलग से नीति निर्धरण की आवश्यकता अनुभव की जाए।

लेकिन एक प्रश्न पिफर यह उठता है कि विकास के क्रम में किस समय मानव संसाध्न नीतियों का निर्धरण कर लिया जाना चाहिए? **अरनैस्ट मिलर** ने अपने एक लेख में इस प्रकार निर्णयन के लिए लक्ष्णात्मक सि(ांत सुझाए हैं, जिनके आध्र पर इस विषय में निर्णय लिया जा सकता है, जो इस प्रकार है[6]—

1. संगठन आकार में इतना बड़ा हो जाता है कि निर्णयन के अनेक केन्द्र स्थापित करने की आवश्यकता अनुभव की जाती हो,
2. निर्णय लेने की स्थितियाँ बार–बार उपस्थित हों,
3. निर्णयन के आध्र पर प्रभावशीलता की जांच करने की दृष्टि से निर्णयन का अभिलेख रखने की आवश्यकता अनुभव की जाती है।

नीतियों का विकास
(Developing Personnel Policies)

सामान्यतः नीतियों का विकास दिन–प्रति–दिन की समस्याओं के सम्बन्ध् में निर्णय लेने तथा उनके सम्बन्ध् में कार्यवाही करने से होता है। निर्णय लेते समय समस्या का विश्लेषण किया जाता है तथा कुछ मान्यताओं, विचारधराओं तथा मूल्यों के आध्र पर उन परिस्थितियों में श्रेष्ठतम निर्णय लेने का प्रत्यन किया जाता है। जैसे–जैसे अध्किाध्कि समस्याओं में निर्णय लिए जाते हैं, भविष्य के लिए कुछ पथ–प्रदर्शक सि(ात स्पष्ट होने लगता हैं। इन सि(ांतों के अनुभव के आध्र पर नीतियों का निर्धरण एवं विकास किया जाता है।

प्रथम बार नीतियों का निर्धरण कर लेने पर, उन नीतियों की संगठन के लिए उपयुक्तता की जाँच की जाती है। नीतियाँ दीर्घकाल के लिए निर्धरित की जाती है, अतः यह आवश्यक है कि नीतियाँ ऐसी हों जिनका प्रयोग सामान्यतः सभी क्रियाओं जैसे परिचालन, विध्ि, वित्तीय, विपणन, जन–सम्पर्क आदि के सन्दर्भ में जाँचकर देखा जाना चाहिए।

6. Management of Human Resources : (ed) Paul Pigors, Charles Myers and Malm F-T (P. 38)

संगठन की मानव संसाध्न नीति ऐसी होनी चाहिए जो लोक नीति एवं व्यवहार से सामंजस्य रखती हो तथा संगठन की प्रतिष्ठा को दीर्घकाल तक बनाये रखने एवं उसे ऊँचा उठाने में सहायक हो। नीति को एक ठोस आधर प्रदान करने से पूर्व, इस दृष्टिकोण से भी नीति की परख करना आवश्यक होता है।

नीति निर्धरण में सहभागिता
(Participation in Policy Making)

मानव संसाध्न नीतियों की आवश्यकता उन व्यक्तियों एवं प्रबन्ध्कों को सर्वाध्कि होती है जो निर्णयन बिन्दुओं के सबसे निकट होते हैं। नीतियों के सम्बन्ध् में सिपफारिश करने का अध्किार भी इन्हीं व्यक्तियों को प्रदान किया जाना चाहिए। यही वर्ग नीति निर्धरण के लिए आवश्यक सूचना प्रदान करने की स्थिति में होता है तथा समय–समय पर परिवर्तन की आवश्यकता का आभास भी इसी वर्ग को सर्वप्रथम एवं सर्वाध्कि रूप में होता है।

नीति सम्बन्धी प्रारूप तैयार करने का दायित्व मानव संसाध्न विभाग को सौंपा जाना चाहिए। यह विभाग संगठन के अन्तर तथा बाहर, अन्य संगठनों से, नीति निर्धरण के लिए आवश्यक सामग्री एकत्रित करता है, अन्वेषण की सुविध भी विभाग में उपलब्ध् होती है। नीति का प्रारूप तैयार कर रेखा अध्किारियों के समक्ष उनके सुझाव एवं आलोचना के लिए प्रस्तुत किया जाता है। नीति निर्धरण का अन्तिम अध्किार रेखाध्किारियों में निहित होना चाहिए।

नीति निर्धरण में कार्मिकों एवं श्रम संगठनों का सहयोग भी प्राप्त किया जाना चाहिए। नीतियों का प्रभाव कार्मिकों पर पड़ता है अतः नीति निर्धरण में उनका सहयोग अपेक्षित रहता है।

सहभागिता नीति निर्माण की कुंजी होती है। नीति निर्धरण में मानव संसाध्न विभाग, रेखा अध्किारी, निर्णयन बिन्दु के निकट के प्रबन्ध्क तथा कार्मिकों सभी का सहयोग प्राप्त करना आवश्यक होता है। नीतियों पर पुनर्विचार, संशोध्न एवं परिवर्तन करते समय भी सभी वर्गों का सहयोग प्राप्त किया जाना चाहिए।

नीति निर्धरण में ध्यान देने योग्य घटक एवं उनके लक्षण
(Factors to be considered in formulating policy and their characteristics)

नीतियाँ स्थायी होती हैं और साथ ही उनमें पर्याप्त लोच भी होती है। नीतियों पर बहुत से घटकों का प्रभाव पड़ता है जैसे उद्योग विशेष की परम्परा (Tradition), तकनीकी विकास, प्रतिस्पर्ध, सामाजिक अनुमोदन, श्रमिकों एवं श्रम संगठनों की प्रवृत्ति, श्रम संगठनों की उद्योग में स्थिति, कानून तथा सरकार का श्रमिकों के प्रति रूख आदि। मानव संसाध्न नीतियाँ, कम्पनी के उद्देश्यों से भी प्रभावित होती हैं तथा कम्पनी द्वारा अन्य क्षेत्रों में अपनाई नीतियों से भी उनका सामंजस्य होना आवश्यक होता है।

मानव संसाध्न नीतियों में सामान्यतः निम्न लक्षण पाये जाते हैं—

1. ये कम्पनी के इरादों तथा विश्वासों को प्रकट करती हैं।
2. यथासम्भव विस्तृत अर्थ वाली शब्दावली का प्रयोग किया जाता है।
3. ये दीर्घकालीन होती है।
4. शीर्ष प्रबन्ध् के सक्रिय सहयोग से इनका निर्माण किया जाता है।
5. संगठन के उच्चतम अध्शिासी द्वारा अनुमोदित होती है।
6. ये अखण्ड तथा अक्षत होती हैं।
7. ये लिखित होती हैं।
8. कार्मिकों के अतिरिक्त उपभोक्ताओं, स्वामियों एवं जन–साधरण के हितों को ध्यान में रखकर बनायी जाती हैं।
9. स्थायित्व के साथ–साथ इनमें पर्याप्त लचीलापन होता है।
10. राज्य के नियमों के अनुरूप होती है।

मानव संसाध्न नीतियों का वर्गीकरण
(Classification of Personnel Policies)

मानव संसाध्न नीतियों का वर्गीकरण विभिन्न आधर पर किया जा सकता है। यहाँ हम इन नीतियों की कुछ किस्में प्रस्तुत कर रहे हैं—

1. **प्रबन्ध् स्तरानुसार नीतियाँ**

   ;अद्ध सामान्य कम्पनी नीतियाँ,

   ;आद्ध प्रशासनिक नीतियाँ,

   ;इद्ध परिचालन नीतियाँ,

   ;ईद्ध क्रियात्मक नीतियाँ

   इन नीतियाँ का सम्बन्ध् कम्पनी के विभिन्न विभागों जैसे लेखाकर्म, अभियान्त्रिक आदि से होता है अथवा ये 'कर्मचारी' (Staff) सेवाओं से सम्बन्धित होती हैं।

2. **विषय वस्तु के आधर** पर वर्गीकरण किये जाने पर, नीतियाँ—नियोजन, सुरक्षा, प्रेरणा, परिवेदना, स्वास्थय या मनोरंजन सम्बन्धी हो सकती है।

3. **नीतियाँ परिभाषित किये जाने के आधर पर**

   ;अद्ध औपचारिक

   ;आद्ध अनौपचारिक हो सकती है।

4. **नीतियाँ**

   ;अद्ध लिखित,

   ;आद्ध अलिखित हो सकती हैं।

5. **स्कॉट आदि वि(ानों ने नीतियों का वर्गीकरण**

   ;अद्ध प्रमुख (Major) तथा

   ;आद्ध अप्रमुख (Minor) भी किया है।

कुछ प्रमुख नीतियों की चर्चा पूर्व अनुच्छदों में की जा चुकी है। शेष नीतियों को अप्रमुख नीतियों का दर्जा दिया जा सकताहै।

नीति—निर्धरण प्रक्रिया
(Policy Formulation Process)

नीति निर्धरण प्रक्रिया के विभिन्न चरण
(Steps in the policy formulation process)

जैसा कि लक्षणों में चर्चा की जा चुकी है, नीतियाँ स्थायी तथा दीर्घकालीन होती है, अतः आवश्यकता इस बात की होती है कि नीतियों का निर्धरण बहुत सोच समझकर एवं विचार मंथन के पश्चात् किया जाना चाहिए। विचार मंथन की प्रक्रिया सतत् चलने वाली प्रक्रिया है। एक बार नीति निर्धरण हो जाने के पश्चात् भी अनुभव, परिवेदनाओं एवं सुझावों के आधर पर नीतियों में परिवर्तन तथा संशोध्न का क्रम चलता ही रहता है। इस प्रकार नीतियों में लोच लाकर उन्हें वर्तमान समय के अनुरूप बनाने का प्रयास किया जाता है। निम्न वर्णित नीति निर्धरण प्रक्रिया के विभिन्न चरण इन सभी बातों को और अध्कि स्पष्ट करते हैं—

1. नीति का सूत्रपात (Initiate a policy) —सूत्रपात की क्रिया प्रबन्ध्, कर्मचारी अथवा श्रम संगठन की ओर से की जा सकती है। मानव संसाध्न विभाग, नीति निरूपण में कम्पनी के मस्तिष्क की भांति कार्य करता है। इस विभाग की

सजगता इसमें है कि नीतियों की आवश्यकता की मांग उठने से पहले ही उच्च प्रबन्धध्किारों का ध्यान इस ओर आकृष्ट कर, इस विषय में सक्रियता से विचार–विमर्श आरम्भ कर दे।

2. **तथ्यों की खोज** (Fact finding) –तथ्यों की खोज का कार्य विशेषज्ञ सलाहकारों (Consultants) या मानव संसाध्न विभाग को सौंपा जा सकता है। साक्षात्कार तथा सम्मेलनों की सहायता से कम्पनी के अन्दर व बाहर इस प्रकार की खोज का कार्य किया जाता है। इस कार्य के लिए उपलब्ध साहित्य तथा अन्य कम्पनियों की नीतियों एवं व्यवहार का गहराई से अध्ययन करना आवश्यक होता है। कम्पनी में कार्यरत सभी व्यक्तियों एवं वर्गों के सुझावों का स्वागत किया जाना चाहिए।

3. **उच्च प्रबन्ध की नीति की अनुशंसा करना** (Recommending a policy to top management)—तथ्यों की जाँच–पड़ताल करने के पश्चात् मानव संसाध्न विभाग, उच्च प्रबन्ध की प्रस्तावित नीति के सम्बन्ध में अनुशंसा करता है। इस अनुशंसा का उद्देश्य उच्च प्रबन्ध का विश्वास अर्जन करना एवं नीति का अनुमोदन करना होता है।

4. **नीति को लेखनीब(करना** (Putting a policy in writting)—नीतियों को लेखनीब(करना एक अत्यन्त कठिन कार्य है। लिखित नीतियों में कमियाँ निकालना, उनकी अलग–अलग तरह से व्याख्या करना, विभिन्न मतों एवं स्वार्थों के द्वारा उनकी अपने–अपने पक्ष के समर्थ में खींचतान करना, कुछ ऐसी सामान्य बातें हैं जिनका प्रत्येक लिखित–नीति, घोषण–पत्र को सामना करना पड़ता है। लेकिन इसका यह अर्थ कदापि नहीं है कि नीतियों को लेखनीब(न किया जाये। लेखन से स्पष्टता एवं दृढ़ता आती है। साथ ही साथ नीतियों का लेखनब(करना इस बात का स्पष्ट प्रमाण है कि उच्च प्रबन्ध नीतियों के प्रति आस्थावान एवं वचनब(है।

5. **प्रस्तावित नीति का स्पष्टीकरण एवं विवेचन** (Explaning and discussing a proposed Policy)—नीतियों पर विचार विमर्श एवं मन्त्रणा की प्रक्रिया उनके लेखनीब(करने से पूर्व ही आरम्भ हो जाती है। लेखनीब(करने से पूर्व नीतियाँ अस्पष्ट होती हैं। जब नीतियों को लेखनीब(कर दिया जाता है तो उनका स्पष्ट रूप सभी के सामने आ जाता है। अतः इस स्थिति में विषद विवेचन आवश्यक होने के साथ ही साथ कापफी हद तक सार्थक सि(होता है। अगर नीतियों को बिना पूर्व विवेचन के ही स्वीकार कर, प्रयोग में लाया जायेगा तो बाद में होने वाला विचार विर्मश एवं विवेचना विध्वंसात्मक प्रवृत्ति का होगा।

   विवेचन का उद्देश्य यह मालूम करना होता है कि—

   ;अद्ध नीतियाँ स्पष्ट हैं या नहीं,

   ;आद्ध नीतियाँ स्वीकार्य हैं या नहीं, तथा

   ;इद्ध नीतियों एवं व्यवहार, कार्यक्रमों, क्रिया विध्यिों, सि(ांतों तथा नियमों आदि में एकरूपता है या नहीं।

6. **नीति का अपनाना** (Adopting a Policy)—प्रस्तावित लेखनीब(नीति पर पर्याप्त विचार विर्मश एवं विश्लेषण से जो स्वरूप सामने आता है उस स्वीकार्य नीति को अपनाने का कार्य एवं दायित्व शीर्ष प्रबन्ध का होता है।

7. **नीति को प्रशसित करना** (Releasing a Policy)—शीर्ष प्रबन्ध द्वारा नीति को अपनाने के पश्चात् उसका सही समय पर एवं सही ढंग से निर्मुक्त करना आवश्यक होता है। संगठन के प्रत्येक कार्मिक को प्रबन्ध द्वारा निर्धरित नीतियों की जानकारी न केवल निर्धरित उद्देश्यों की पूर्ति हेतु आवश्यक है अपितु उनके सही क्रियान्वयन तथा विभिन्न शंकाओं के निवारण के लिए भी महत्त्वपूर्ण है। अतः मानव संसाध्न विभाग को ऐसी व्यवस्था अपनानी चाहिए जिनके माध्यम से संस्था का प्रत्येक कार्मिक मानव संसाध्न नीतियों से अवगत हो जाय। इस हेतु जिन माध्यमों का प्रयोग किया जाता है उनमें कर्मचारी हैण्डबुक तथा प्रथम रेखा अध्किारी का मौखिक स्पष्टीकरण एवं समझना मुख्य है।

8. **नीति को प्रशसित करना** (Administering a Policy)—नीति का वास्तविक स्वरूप उनके प्रयोग एवं प्रशासित करने से ही प्रकट होता है। कार्मिक, श्रम संगठन तथा अध्शिासी नीतियों को किस प्रकारे समझते हैं एवं उनकी व्याख्या करते हैं, यह उनके प्रयोग में लाने से ही स्पष्ट हो जाता है।

9. **अनुपरीक्षण** (Follow up)—यह नीतियों की परीक्षण की अवस्था है। इस स्तर पर यह ज्ञात किया जाता है कि नीति का सपफलतापूर्वक क्रियान्वन हुआ है अथवा नहीं तथा नीति, संस्था के उद्देश्यों के अनुरूप सार्थक सि(हो रही है

अथवा नहीं। नीति में किस प्रकार की कमियाँ हैं तथा किस सीमा तक हैं, इसकी जानकारी प्रथम रेखा पर्यवेक्षकों के द्वारा की जाती है। अतः प्रथम रेखा पर्यवेक्षकों के विचार सर्वाध्कि महत्त्वपूर्ण होते हैं। उनका आदर किया जाना चाहिए। नीतियों की उपयोगिता एवं कामियों के सम्बन्ध् में इनसे जानकारी प्राप्त की जानी चाहिए।

10. **विद्यमान नीतियों का मूल्यांकन** (Evaluating existing Policy)—यदि कम्पनी में संचार व्यवस्था मुक्त एवं द्विमार्गीय है तो मूल्यांकन का कार्य कापफी सरल हो जाता है। प्रबन्ध्कों को नीतियों के प्रति सभी की प्रतिक्रिया की जानकारी प्राप्त करने का प्रयत्न करना चाहिए। यदि नीतियाँ समय एवं उपयोगिता की कसौटी पर खरी उतरती हैं तो उन्हें पुनः पुष्ट कर दिया जाना चाहिए अन्यथा उनमें आवश्यक संशोध्न एवं परिवर्तन किये जाने चाहिए।

11. **नीतियों का संशोध्न एवं पुनः निर्धरण** (Restating and Reformulating a Policy)—अनुपरीक्षण एवं मूल्यांकन के साथ–साथ परिस्थितियों में परिवर्तन, सरकार की नीति में परिवर्तन, बाजार दशाओं में परिवर्तन, प्रतियोगियों की नीतियों में परिवर्तन, प्रबन्ध् के क्षेत्र में हो रहे परिवर्तन आदि ऐसे कारण हैं जिसकी वजह से नीतियों में संशोध्न एवं पुनः निर्धरण करना होता है। मानव संसाध्न प्रबन्ध् की शाखा है जो गतिशील है अतः इस गतिशीलता को बनाये रखने के लिए मानव संसाध्न नीतियों में संशोध्न एवं उनका पुनः निर्धरण होता ही रहना चाहिए।

मानव संसाध्न नीतियों की उत्त्पति के तीन प्रमुख स्त्रोत माने जाते हैं। ये स्त्रोत निम्न हैं–

1. **औपारिक नीति निर्धरण** (Formal Policies)—नीतियों की उत्त्पति एवं विकास का यह सबसे महत्त्वपूर्ण स्त्रोत माना जाता है। कम्पनी दीर्घकाल तक विचार विमर्श करने के उपरान्त औपारिक रूप से नीति का निर्धरण करती है। इस प्रकार की सभी के द्वारा स्वीकार किये जाने की अध्कितम सम्भावना होती है।

2. **परम्परा** (Tration)—परम्परा, नीति स्थापना का एक अन्य मान्य स्त्रोत है। दीर्घकाल से प्रतिष्ठित व्यवहार भी नीति का स्थान ले लेता है। इस प्रकार की नीतियाँ, औपारिक नीतियों की भाँति चैतन्यतापूर्वक (Consciously) नहीं बनाई जाती। इस प्रकार परम्परा भी नीतियों का आधर होती हैं।

3. **व्यक्तिक्रम** (By default)—स्पष्ट व्याख्यित नीतियों के अभाव में भी नीतियाँ जन्म लेने लगती है। एक बार स्वीकार कर लेने पर यदि भविष्य में इन्हीं चुनौती नहीं दी जाती है। व्यतिक्रम और परम्परा में समयावध् का अन्तर होता है। परम्परा दीर्घकालीन होती है जबकि व्यतिक्रम के माध्यम से नीति निर्धरण में समय के अध्कि अन्तराल की आवश्यकता नहीं होती।

डेल एस. बीच (Dale S. Beach) के अनुसार, सेविगर्वीय नीतियों के अभिप्राय एवं विषय–वस्तु को निर्धरित करने के निम्न मुख्य साध्न हैं–

1. संगठन में चली आ रही विगत परम्परा।
2. व्यावसायिक जगत में अन्य कम्पनियों द्वारा अपनाई जा रही परम्परा।
3. सम्पूर्ण राष्ट्र में उस उद्योग विशेष के क्षेत्र में अपनाई जा रही परम्परा।
4. उच्च प्रबन्ध् एवं संचालक मण्डल की अभिवृत्तियाँ एवं विचारधरा।
5. मध्य एवं निम्न प्रबन्ध् की अभिवृत्तियाँ एवं विचारधरा (Philosophy),
6. दिन–प्रतिदिन की मानव संसाध्न समस्याओं का निपटारा करने से प्राप्त ज्ञान एवं अनुभव।

नीतियों के निर्धरण में सि(ांत एवं दर्शन का स्पष्ट योगदान होता है। साथ ही सि(ान्त नीतियों से प्रभावित होते रहते हैं। अगले पृष्ठों में हम मानव संसाध्न प्रबन्ध् के सि(ान्तों एवं दर्शन पर प्रकाश डालेगें।

मानव संसाध्न प्रबन्ध के सि(ान्त
(Principles of Human Resource Management)

सि(ान्त का आशय उस मूलभूत सत्य से है जिसे सामान्यतः कारण एवं प्रभाव के सम्बन्ध के रूप में प्रकट किया जाता है। सि(ान्तों की खोज गहन अनुसन्धन, अन्वेषण तथा विश्लेषण के परिणाम स्वरूप होती है। कुछ लोग सि(ान्त तथा नीतियों को एक ही बात मान लेते हैं और इस प्रकार इन दोनों के बीच भेद के प्रति सम्भ्रमित हो जाते हैं। यहाँ यह स्पष्टतया समझ लेना चाहिए कि नीतियाँ मानव निर्मित नियम मात्र होते हैं जो कि किसी भी संगठन को उसके निर्धरित लक्ष्य तक पहुँचाने में सहायता प्रदान करते हैं।

मानव संसाध्न प्रबन्ध के सि(ान्तों के विषय में यह स्पष्ट कर देना आवश्यक प्रतीत होता है कि मानव संसाध्न प्रबन्ध एक सामाजिक विज्ञान है अतः इसके सि(ान्त भौतिक विज्ञान के सि(ान्तों के समान खरे एवं अपरिवर्तनीय नहीं है। यह सम्भव भी नहीं है। मानव संसाध्न प्रबन्ध का प्रत्यक्ष सम्बन्ध एवं चिन्तन का विषय 'मानव' है, इसलिए भौतिक विज्ञान की तरह नियन्त्रित स्थितियों में परीक्षण कर पाना सम्भव नहीं है। साथ ही साथ एक बात और ध्यान रखनी चाहिए कि मानव संसाध्न प्रबन्ध के सि(ान्त अपरिवर्तनशील नहीं होते। प्रबन्ध्क जैसे–जैसे कार्मिकों के विषय में अध्कि अनुभव आर्जित करते चलते हैं, अपने पुराने अनुभवों के आधर पर पूर्व प्रतिपादित सि(ान्तों में आवश्यकतानुसार परिवर्तन एवं संशोध्न करते रहते हैं।

कुछ व्यक्तियों की यह मान्यता है कि मानव संसाध्न प्रबन्ध, विज्ञान न होकर केवल एक कला मात्र है। कला होने की स्थिति में मानव संसाध्न प्रबन्ध के सर्वमान्य सि(ान्त प्रतिपादित नहीं किए जा सकतेः अतः उन व्यक्तियों की यह धरणा है कि मानव संसाध्न प्रबन्ध के सि(ान्तों प्रतिपादन का कार्य एक निरर्थक प्रयास है। ऐसे व्यक्तियों से हमारा निवेदन है कि वे मानव संसाध्न प्रबन्ध के सि(ान्तों को अन्य सामाजिक विज्ञानों का सि(ान्तों के समान 'उपयोगी सामान्यीकरण' (useful generalization) अथवा 'सै(ातिन्क संकल्पना' (Theoretical concepts) के रूप में स्वीकार करें न कि 'मूलभूत सत्य' (Fundamental truth) के रूप में। लेकिन उन्हें साथ ही साथ यह भी स्वीकार करना स्वीकार करना पड़ेगा कि मानव संसाध्न प्रबन्ध, अन्य अनुशासनों जैसे मनोविज्ञान तथा समाजशास्त्र आदि पर कापफी सीमा तक आश्रित है। इन अनुशासनों के क्षेत्र में विगत कुछ वर्षों में महती प्रगति हुई है और नियन्त्रित अनुसंधन के इन क्षेत्रो में एक सम्मानीय स्थान बना लिया है। अतः जैसे–जैसे इन आधरी अनुशासनों के क्षेत्र में प्रगति होती जा रही है–यह स्पष्ट है कि मानव संसाध्न प्रबन्ध भी मात्र कला से उठकर, सामाजिक विज्ञान की श्रेणी में प्रविष्ट होता जा रहा है। अतः यह स्वतः स्पष्ट हो जाता है कि मानव संसाध्न प्रबन्ध के लिए सि(ान्तों की खोज एवं चर्चा एक निरर्थक प्रयास मात्र नहीं है।

यहाँ दो शब्द मानव संसाध्न प्रबन्ध के सि(ान्तों की सार्थकता के सम्बन्ध में कहना आवश्यक प्रतीत होता है। मानव संसाध्न प्रबन्ध के सि(ांत चाहे कितने ही अपूर्ण एवं अस्पष्ट हों लेकिन उनकी कम से कम यह सार्थकता तो है ही कि–

(i) वे मानव संसाध्न प्रबन्ध्कों के आचरण एवं व्यवहार को स्पष्ट करने में सहायता प्रदान करते हैं तथा साथ ही साथ मानव संसाध्न प्रबन्ध्कों का मार्गदर्शक करने में सहायता प्रदान करते हैं जिससे कि संगठन निर्बाध् गति से निर्दिष्ट लक्ष्यों एवं ध्येयों की दिशा में अग्रसर होता जाता है। सि(ान्तों का सम्बन्ध मानव संसाध्न प्रबन्ध्कों के आचरण के 'क्यों' से होता है। (Principles are concerned with the "why" of behavior)।

(ii) सि(ान्तहीनता लक्ष्य भ्रष्टता का ही दूसरा नाम है। उन बड़े संगठनों में जहाँ न केवल कार्मिक बल्कि प्रबन्ध्क भी एक बड़ी संख्या में कार्यरत होते हैं, वहाँ प्रबन्ध्कों के आचरण एवं व्यवहार में एकरूपता तथा समानता बनाये रखने की दृष्टि से संगठन के लिए कुछ निदेशक सि(ान्तों का होना आवश्यक है।

(iii) सि(ान्तों की स्पष्टता से प्रत्यायोजन (delegation) में सहायता मिलती है तथा अधीनस्थ प्रबन्ध्कों का कार्य सुगम हो जाता है और उनमें विश्वास की भावना का उदय होता है।

मानव संसाध्न प्रबन्ध के सि(ान्त, संगठन के बाह्य तत्त्वों के द्वारा जिन पर कि संगठन का कोई नियन्त्रण नहीं होता, प्रभावित होते हैं। उदाहरण के लिए ऐसे कुछ प्रमुख तत्त्व हैं, समाज की प्रकृति जिसमें संगठन कार्य करता है, सरकारी कार्यवाहियाँ,

राजनैतिक दबाव, स्थानीय संस्कृति (Culture) तथा व्यावसायिक नीति .....(Ethics) आदि। इन सब तत्त्वों के प्रभाव एवं रस्साकशी में संगठन को सि(ान्तों का निरूपण करना होता है। स्वाभाविक है कि ऐसी परिस्थितियों में, संगठन को अपने सि(ान्तों में, आवश्यक लोच एवं परिवर्तन शीलता का गुण रखना चाहिए।

श्री मौरिस डब्ल्यू क्यूमिंग ने अपनी पूस्तक (The Theory and Prctice of Personnel Management)[7] में ब्रिटिश उद्योग वाणिज्य एवं जनसेवाओं द्वारा पालन किए जाने वाले प्रमुख सि(ान्तों का वर्णन किया है। ये सि(ान्त हैं—

1. न्याय अर्थात् सभी कर्मचारियों के साथ **न्यायोचित व्यवहार** किया जाना चाहिए। प्रबन्ध्कों को चाहिए कि वे कर्मचारियों के साथ किसी भी आधर पर भेदभाव अर्थात् पक्षपात न करें। उनके व्यवहार में सभी कर्मचारियों के साथ तथा समय की दीर्घकालीन अवध् तक व्यवहार की एकरूपता बनी रहनी चाहिए।
2. **कर्मचारियों की आवश्यकताओं को पहचानना**—नियोक्ताओं को चाहिए कि वे कर्मचारियों की कार्य सन्तुष्टि, संगठन में होने वाली घटनाओं की जानकारी तथा उन सभी परिवर्तनों की जानकारी जो कि कर्मचारियों के हितों को प्रभावित करती हैं, प्रदान करें।
3. **प्रजातान्त्रिक प(ति से काम करना**— कर्मचारियों को उत्पीड़ित कर काम करने के स्थान पर सहयोग प्राप्त करना अध्कि श्रेयस्कर है।

उपर्युक्त सि(ान्त न केवल उन सभी शासन व्यवस्थाओं में लागू होते हैं जो प्रशासन की प्रजातन्त्रिक प्रणाली में निष्ठा रखती हैं बल्कि संगठन के कुशल संचालन के लिए भी आवश्यक हैं।

मानव संसाध्न प्रबन्ध् की भारतीय संस्थान ने अपने एक प्रकाश में निम्न सि(ान्तों का उल्लेख किया है[8]

1. **वैयक्तिक विकास का सि(ान्त** (Principle of Individual Development)—संगठन में प्रत्येक कर्मचारी को उन्नति के पूरे—पूरे तथा सभी कर्मचारियों को समान अवसर प्रदान करने चाहिए जिससे कि वे अपनी क्षमता का पूरा—पूरा उपयोग कर सकें। इस सि(ान्त के पीछे छिपी हुई भावना यह है कि प्रत्येक कर्मचारी के मन में यह लालसा रहती है कि वह भी अपने कार्यक्षेत्र में 'कुछ' बने। कर्मचारियों की इस लालसा को उचित प्रशिक्षण तथा विकास कार्यक्रमों के माध्यम से एक सही दिशा प्रदान की जानी चाहिए। यदि संगठन ऐसा करने में सपफल नहीं होगा तो कर्मचारियों में असन्तोष बढ़ेगा,उनका मनोबल गिरेगा और अन्ततोगत्वा संगठन को आर्थिक हानि उठानी पड़ेगी।

   इस सि(ान्त का दूसरा पहलू भी है। किसी विद्वान ने सही ही कहा था कि कुछ देश इसलिए अविकसित हैं कि क्योंकि उनके अध्किांश नागरिक अविकसित हैंऋ जिन्हें अपनी क्षमताओं को समाज के सेवार्थ लगाने के अवसर उपलब्ध् नहीं हो पाते हैं। जो बात एक देश के सम्बन्ध् में भी लागू होती है, वह एक संगठन के सम्बन्ध् में भी पूरी तरह से सही चरितार्थ होती है। कर्मचारियों के वैयक्तिक विकास से ही संगठनों का विकास सम्भव हो पाता है। अतः संगठनों को अपने निजी विकास को ध्यान में रखकर भी कर्मचारियों के प्रशिक्षण तथा विकास कार्यक्रम चलाने चाहिए।
2. **वैज्ञानिक चयन प(ति का विकास** (Principle of Scientific Selection Procedure)—कर्मचारियों का चयन वैज्ञानिक तरीकों से किया जाना चाहिए। चयन करते समय इस बात का बराबर ध्यान रखना चाहिए कि व्यक्तियों का चयन, कार्य की आवश्यकताओं के अनुरूप हो। कार्य, व्यक्तियों एवं भर्ती के साध्नों का अध्ययन करने के उपरान्त सही कार्य के लिए सही व्यक्ति का चुनाव किया जाना चाहिए।
3. **अनुप्रेरणा का सि(ान्त** (Principle of incentive)—कर्मचारियों को अध्कि एवं श्रेष्ठ कार्य करने के उद्देश्य से प्रेरित करने के लिए इस सि(ान्त का प्रयोग किया जाना चाहिए। अनुप्रेरणा, मौद्रिक तथा अमौद्रिक दोनों प्रकार की हो सकती है। नियोक्तागण सामान्यतः अनुप्रेरण के मौद्रिक स्वरूप को ही पहचानते हैं और इसलिए स्वभावतः कर्मचारियों को अनुप्रेरित करते हुए कतराते हैं।

---

7. Page No. 22
8. Readings in Personnel Management, Indian Institut of Personnel Management (PP. 25-35)

अनुप्रेरणा प्रदान करने से पूर्व कर्मचारियों के आचारण, आवश्यकताओं, अभिवृत्तियों, समस्याओं तथा क्षमताओं का भली प्रकार अध्ययन करना चाहिए। क्योंकि सभी कर्मचारियों के लिए एक ही प्रकार की अनुप्रेरणा प(ति उपयुक्त नहीं होती। कभी–कभी प्रंशासा का शब्द, मौद्रिक अनुप्रेरण से अध्कि प्रभावकारी सि(होता है। दूसरी बात जो ध्यान में रखने की है, वह है, अनुप्रेरेणा का उचित समय पर प्रदान किया जाना।

4. **पर्याप्त सम्प्रेषण का सि(ान्त** (Principle of adequate Communication)—कर्मचारियों को सभी आवश्यक सूचनाएँ प्रदान की जानी चाहिए। उन्हें संगठन की नीतियों, उद्देश्यों, कार्यक्रमों आदि की पूरी–पूरी जानकारी दी जानी चाहिए। सम्प्रेषण की सामग्री तथा प(तियों का चयन कापफी सोच विचार कर किया जाना चाहिए। प्रभावकारी भाषा का प्रयोग सम्प्रेषण को कापफी प्रभावोत्पादक बना सकता है। इस सि(ान्त का दर्शन यह है कि इस प्रकार से किया जाना चाहिए कि कर्मचारियों में यह विश्वास जागृत हो जाये कि संगठन कर्मचारियों से कोई भी आवश्यक जानकारी गुप्त नहीं रखना चाहता।

   दूषित सम्प्रेषण अथवा सम्प्रषेण का अभाव अनेक कठिनाइयों को जन्म देता है। गोपनीयता के कारण अपफवाह पफैलाती है। अध्किांश अपफवाहें, मनगड़न्त तथा झूठी होती है, जिनसे संगठन का वातावरण दूषित होता है।

5. **सहभागिता का सि(ान्त** (Principle of Participation)—इस सि(ान्त का दर्शन यह है कि नियोजक कर्मचारी सम्बन्ध पारस्परिक सद्‌विश्वास, निष्ठा तथा आदान–प्रदान पर आश्रित रहते हैं। इस सि(ान्त की भावना यह है कि कर्मचारी में यह भाव जागृत किया जाए कि संगठन को उसकी न केवल आवश्यकता है बल्कि वह संगठन के लिए उपयोगी भी है। वह अपने कार्य, विचारों तथा सुझावों के द्वारा संगठन के लिए सपफल संचालन में एक महत्त्वपूर्ण योगदान प्रदान कर रहा है। इस सि(ान्त को सही अर्थों में पालन करने के लिए यह आवश्यक है कि प्रबन्ध्कों को इस विचार का परित्याग करना पड़ेगा कि वे ही संगठन तथा प्रबन्ध के विषय में जानते हैं और कर्मचारिगण इस विषय में कोई महत्त्वपूर्ण योगदान करने की स्थिति में नहीं है।

   कर्मचारियों को अपने विचार तथा सुझाव प्रदान करने के अवसर प्रदान करना चाहिए कि उनमें पहले शक्ति का उदय हो और संगठन के प्रति अपनेपन का भाव पैदा कर सकें। इस प्रकार प्रबन्ध्क एवं कर्मचारी सभी कदम से कदम मिलाकर संगठन के उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए अग्रसर हो सकेगें।

6. **श्रम की गरिमा का सि(ान्त** (Pr inciple of Dignity of Labour) —सभी प्रकार के श्रम को समान गौरवपूर्ण स्थान प्रदान करना चाहिए। न कोई काम ऊँचा है न कोई काम नीचा है। किसी भी प्रकार के श्रम–कार्य में कोई दूषण नहीं समझना चाहिए। जो भी श्रम–कार्य उत्पादक है, वह भला हीन कैसे हो सकता है?

   संगठन के सपफल संचालन के लिए श्रम–विभाजन एक अनिवार्य आवश्यकता है। प्रत्येक कार्य को अध्कितम दक्षता से करने का प्रयास किया जाना चाहिए। कर्मचारियों की पदोन्नति में उनके श्रम–कार्य का स्थान, जाति, धर्मिक विचार आदि किसी को भी बाध्क न माना जाये। पदोन्नति केवल योग्यता, प्रज्ञा तथा कार्य प्रयास के आधर पर दी जानी चाहिए।

7. **टीम–भावना का सि(ान्त** (Pr inciple of Team Spirit) —वैयक्तिक रूप से कर्मचारीगण कितनी ही विलक्षण प्रतिभा के ध्नी क्यों न हो, जब तक वे सब प्रबन्ध के साथ कन्धे से कन्ध मिलकर काम नहीं करते, संगठन के उद्देश्यों की प्राप्ति संदिग्ध बनी रहेगी। जिस तरह से खेल में प्रत्येक खिलाड़ी टीम की भावना से प्रेरित होकर खेल खेलता है उसी प्रकार व्यावसयिक तथा औद्योगिक संगठनों में कार्यरत कर्मचारियों को आपस में मिल–जुलकर पारस्परिक सहयोग की भावना से प्रेरित होकर एक दल के रूप में कार्य करना चाहिए। टीम भावना के लिए यह आवश्यक है कि वैयक्तिक स्वार्थों तथा हितों को संगठन के हितों के समक्ष गौण माना जाए तथा आवश्यकताा पड़ने पर उनकी बलि देने को भी तत्पर रहना चाहिए। कर्मचारी प्रबन्ध का कार्यक्रम ही कुछ ऐसा बनाये जाये कि कर्मचारियों में टीम–भावना का यथोचित विकास हो सके।

8. **उचित पारिश्रमिक का सि(ान्त** (Principle of fair compensation)—कर्मचारियों को दी जाने वाली मजदूरी, वेतन तथा भत्ते आदि उचित एवं न्यायसंगत हों। पारिश्रमिक कर्मचारी को उसके द्वारा सम्पादिक कार्य, श्रम तथा असुविध के प्रतिपफलस्वरूप प्रदान किया गया क्षतिपूर्ण है। जब तक क्षतिपूरण उचित नहीं होगा कर्मचारी से अच्छी तरह कार्य करने की आशा करना व्यर्थ है। परिश्रमिक तो सर्वप्रथम एवं मूल–भूत अनुप्ररेणा का स्त्रोत है। पारिश्रमिक के साथ ही साथ कार्य की दशाएँ, वातावरण तथा औजार आदि सभी अच्छे होने चाहिए। वातावरण स्वच्छ तथा स्वास्थ्यप्रद होना चाहिए।

9. **श्रम तथा प्रबन्ध के सहयोग का सि(ान्त** (Principle of Labour and Management Co-operation)—यह एक कठिन लेकिन अत्यन्त महत्त्वपूर्ण सि(ान्त है। कर्मचारियों तथा प्रबन्ध्कों को संगठन के लिए पारस्परिक सहकारिता की भावना से कार्य करना चाहिए। यदि ये अपनी शक्ति का प्रयोग विपरित दिशाओं में कार्य करने में लगाये तो इससे पारस्परिक शक्ति का ”ास होगा और अनततगोत्वा संगइप को हानि उठा नी पड़ेगी।

   श्रमिकों एवं प्रबन्ध को एक दुसरे के नजदीक लाने में मानव संसाध्न प्रबन्ध एक महत्त्वपूर्ण योगदान प्रदरल कर सकता है। उचित सम्प्रेषण तथा पारस्परिक सहभागिता के माध्यम से श्रम तथा प्रबन्ध के बीच उत्पन्न होने वाले अविश्वास को समाप्त किया जा सकता है। प्रबन्ध्कों को श्रम की शक्ति तथा प्रज्ञा का कभी भी कम अनुमान नहीं लगाना चाहिए। किसी भी कार्यक्रम करे लागू करने से पूर्व कर्मचारियों कर प्रतिक्रिया का अनुमान नहीं लगाना चाहिए। किसी भी कार्यक्रमों सम्बन्धी विचार–विमर्श आरम्भ से ही करना चाहिए।

10. **राष्ट्रीय समृ(ि में योगदान का सि(ान्त** (Principle of Contribution of National Prosperity)—यदि कर्मचारियों को इस बात के लिए शिक्षित किया जा सके कि उनका संगठन के उद्देश्यों की प्राप्ति में दिया जाने वाला योगदान राष्ट्रीय विकास तथा समृ(ि में महत्त्वपूर्ण योगदान करेगा तो कर्मचारी अध्कि लगन तथा उत्साह से कार्य करेगें। ऐसा करने से कर्मचारी में एक महान उद्देश्य के प्रति निष्ठा जागृत होती है। भारतवर्ष जैसे विकासशील देश के लिए इस प्रकार की भावना कों जागृत करना अध्कि श्रेयस्कर सि(होगा। मानव संसाध्न प्रबन्ध उचित कार्यक्रमों के माध्यम से कर्मचारियों में इस प्रकार की भावना तथा निष्ठा उत्पन्न कर सकता है।

उपर्युक्त सि(ांतों के अलावा **श्री रिचार्ड कलहून** (RichardCalhoon) ने अपनी पुस्तक "Managing Personnel" में कुछ महत्त्वपूर्ण सि(ान्त बताएं है जो इस प्रकार हैं :—

1. व्यक्गित व्यक्तित्व प्रतिष्ठा का सि(ान्त (Principle of sacredness of individual personality)
2. पुनरावेदन के अध्किार का सि(ान्त (Principle of right of appeal)
3. प्रशासन में निष्पक्षता का सि(ान्त (Principle of impartiality in administration)

इसी प्रकार **श्री माइकल जे. जुसियस** (Michael J.Jucius) ने अपनी पुस्तक "Personnel Management" में मानव संसाध्न प्रबन्ध के कुछ सि(ातों की गणपस की है। वे सि(ान्त इस प्रकार है :—

1. कर्मचारियों को पूरा व्यक्ति मानकर व्यवहार करना चाहिए। कर्मचारियों की नियुक्ति उनके तकनीकी ज्ञान तथा संगठन के लिए उसकी उपयोगिता के आधर पर की जाती है। लेकिन प्रबन्ध के साथ उनका सहयोग तथा अन्योन्यक्रिया (int eraction), उनकी भावनाओं सामाजिक दृष्टिकोण संस्कृति तथा नैतिक मूल्यों द्वारा प्रभावित होता है। अतः मानव संसाध्न निर्णय लेते समय तकनीकि तथ्यों के अलावा उपर्युक्त वर्णित सभी बातों कों ध्यान में रखना चाहिए। श्री कलहून द्वारा उल्लेखित व्यक्तित्व कर प्रतिष्ठा का सि(ांत भी इन्हीं तथ्यों पर बल देता है।
2. न्याय संगति के साथ–साथ न्याय की प्रतीति होना भी आवश्यक है।
3. पारितोषिक आर्जित किया जाना चाहिए। दान स्वरूप प्रदान नहीं किया जाना चाहिए।
4. मानव संसाध्न कार्यक्रमों को, कर्मचारियों को भली प्रकार समझना तथा स्पष्ट करना चाहिए। इस प्रकार कर्मचारियों की संगठन की नीतियों तथा दर्शन के प्रति आस्था प्राप्त करने तथा निष्ठा जागृत करने का सुनिश्चित प्रयास किया जाना चाहिए।

मानवसंसाध्न प्रबन्ध का दर्शन

(Philosophy of Human Resource Management)

अभी हमने मानव संसाध्न दर्शन निम्न उल्लेखित में से कोई सा एक हो सकता है। प्रथम दर्शन के अनुसार श्रम सक्रिय अथवा निष्क्रिय रूप में प्रबन्ध–नेतृत्त्व का प्रतिरोध करता है, जबकि दूसरे दर्शन के अनुसार श्रम उत्पादन का एक ऐसा तत्त्व

है जिसमें अनेक रचनात्मक क्षमताएँ छिपी रहती है। यदि मानव संसाध्न–प्रबन्ध, प्रथम उल्लेखित दर्शन को मानता है तो श्रम के कठोर नियन्त्रण की आवश्यकता होगी जिसमें श्रम स्वेच्छा से संगठन के लिए अध्कि से अध्कि कार्य करने को तैयार हो सके। इस प्रकार दर्शन, सि(ान्तों का मार्ग प्रशस्त करते हैं और मानव संसाध्न कार्यों का मार्ग–दर्शन करते हैं।

दर्शन फ्मूलभूत विश्वासों को प्रकट करने वाली धरणाओं का विश्लेषण है।[9] **योडर** (Dale Yoder) प्रो. डेविस को उद्घृत करते हुए लिखते हैं कि फ्दर्शन, विचारों की एक प्रणाली है जो कि उद्देश्यों, सि(ान्तों तथा नीतियों के क्रमब(एवं तर्कयुक्त कथन पर आधरित होता है। यह समस्याओं के समाधन तक पहुँचने की एक सामान्यत प(ति है जो कि प्रबन्ध की विचारधराओं (Theory) , नीतियों तथा कार्यक्रमों के लिए आधरभूत हैं। **श्री कलहून** (Calhoon) के अनुसार मानव संसाध्न दर्शन ऐसे आधरभूत विश्वासों, आदर्शों, सि(ान्तों तथा विचारों का प्रतीक है जिन्हें प्रबन्ध, व्यक्तियों को कार्य के लिए संगठित करने तथा उनके प्रति आचरण व व्यवहार का मापदण्ड निर्धरित करने के लिए धरित करता है।[11]

प्रबन्ध–दर्शन गत्यात्मक होता है और समाज में होने वाले परिवर्तन इसे प्रभावित करते हैं। जैसे–जैसे समाज की विचारधरा, मान्यताएँ तथा मूल्य बदलते हैं, मानव संसाध्न–दर्शन का विकास होता है। यदि हम काल के गर्त में झांक कर देखें तो मानव संसाध्न–प्रबन्ध दर्शन का क्रार्मिक विकास स्पष्ट दिखाई पड़ता है। अट्ठारहवीं शताब्दी के अन्त से लेकर उन्नीसवीं शताब्दी के प्रथम दो दशकों तक जो कि औद्योगिक क्रान्ति के आरम्भ का समय था, 'कर्मचारी की सावधनी' (Caveat Operarius) का सि(ान्त, मानव संसाध्न प्रबन्ध के क्षेत्र में मान्यता रखता था। यह वह समय था जबकि आर्थिक जागत् में निर्वाघवादी नीति (Laissez– faire) का बोलबाला था। कर्मचारियों को कार्य की दशाएँ, काम के घण्टे तथा वेतन आदि में परिवाद करने का कोई अध्किार नहीं था। उस समय विचारधरा यह थी कि कर्मचारी गण, प्रदत्त कार्य दशाओं को स्वीकार करें या उनसे असन्तुष्ट होने की स्थिति में वे कार्य को छोड़कर कहीं अन्यत्र जा सकते हैं। (The employee could take it or leave it) श्रम को क्रय–विक्रय की अन्य वस्तुओं तथा पदार्थों के समान (Welfarism) एक विक्रय–वस्तु माना जाता था। नियोक्ता का क्षतिपूर्ण स्वरूप मजदूरी देने के अतिरिक्त अन्य कोई दायित्व नहीं माना जाता था। नियोक्ता कर्मचारी सम्बन्ध बड़े अव्यक्तिगत थे तथा नियोक्ता स्वार्थ से प्रेरित होकर ही व्यवहार एवं आचरण का स्तर निर्धरित करता था।

समय के बदलाव के साथ मानव संसाध्न–प्रबन्ध–दर्शन में ही में ही परिवर्तन आया। उन्नीसवीं शताब्दी के अन्त तक मानव संसाध्न प्रबन्ध में 'कर्मचारी की सावधनी' का स्थान कल्याणवाद ने ग्रहण कर लिया था। 'कल्याणवाद' के दर्शन की मान्यता यह थी कि श्रमिकों के कल्याण का दायित्व नियोक्ता पर होता था। साथ ही साथ यह भी माना जाता था कि श्रमिकों का कल्याण किस प्रकार से किया सकता है, इस विषय में निर्णय करने के लिए केवल प्रबन्ध ही समक्ष है। इस विचारधरा के अनुसार श्रमिकों के साथ द्वितीय श्रेणी के नागरिकों जैसा व्यवहार किया जाने लगा। उस समय औद्योगिक प्रतिष्ठानों में चलाए जाने वाले मानव संसाध्न विभाग, मात्र श्रम–कल्याण विभाग थे। संक्षेप में इस प्रकार के दर्शनों को पैतृकवाद (Paternalism) की संज्ञा प्रदान की जा सकती है जहाँ श्रमिक, प्रबन्ध रूपी पिता के सामने, शिशु मात्र हो। सामान्य बोलचाल की भाषा में इसे 'माई–बाप' श्रमिक दर्शन के नाम से पुकारा जा सकता है।

इस प्रकार का दर्शन उस समय की स्थिति में जबकि श्रमिक खेतों और खलियानों से कारखानों में आते थे, ठीक भी था। वे कारखानों तथा शहरों के वातावरण से अपरिचित एवं अनभिज्ञ होते थे तथा उन्हें उस वातावरण में समंजित करने के लिए

---

9. "An analysis of grounds and concept expressing fundamental beliefs." Websters Dictionary.
10. "A Philosophy is a Ststem of thought. It is based on some orderly, logical statements of objectives, principles and policies and general method of approach to the solution of some set of problems.
Dale Yoder : Personnel Management and Industrial Relations. (P. 58)
11. "The fundalmental beliefs, ideals, principles views held by management with respect to organising and Individuals at work."
Richard P. Calhoon : Managing Personnel (P. 26)

सहायता की आवश्यकता होती थी। इस नीति के अनुपालन का दूसरा कारण यह भी था कि उन दिनों में श्रम संगठनों की नींव पड़ गई थीं और प्रबन्ध् श्रमिक–कल्याण के कार्यों के माध्यम से श्रम–संगठनों के बल को बढ़ने से रोकना चाहते थे। सै(ान्तिक दृष्टि से भी उक्त दर्शन का औचित्य था। प्रबन्ध् जगत में उन दिनों वैज्ञानिक प्रबन्ध् (Scientific Management) का बोलबाला था। इस प्रकार 'श्रमिक–कल्याण' को उत्पादन वृ(के एक तन्त्र (Mechanism) के रूप में प्रयोग किया गया था।

बीसवीं शताब्दी में 'कल्याणवाद' की विचारधरा को चुनौती का सामना करना पड़ा। श्रमिकों में शिक्षा का प्रचार–प्रसार होने लगा था। अब तक श्रमिकों की दूसरी या तीसरी पीढ़ी कल–कारखानों में काम पर आ चुकी थी और साथ ही श्रम संगठन भी अध्कि शक्तिशाली हो गए थे। प्रबु(एवं संगठित श्रमिक अध्किध्कि कार्य–स्वतन्त्रता की मांग करने लगे थे। उन्हें अब दूसरे दर्जे की नागरिकता चभुने लगी थी।

समय के साथ मानव संसाध्न दर्शन ने भी पलटा खाया। 'पैतृकवाद' का स्थान 'व्यवासायिक सम्बन्धें' (Business Relationship) के दर्शन ने ग्रहण किया। बीसवीं सदी का दूसरा तथाा तीसरा दशक मानव संसाध्न प्रबन्ध् के क्षेत्र में इस प्रकार के सम्बन्धें का समय था। प्रबन्ध्–श्रमिक सम्बन्ध् अव्यक्तिगत होते हुए भी मृदु थे। जिस प्रकार व्यापारी अपने ग्राहकों को बनाए रखने के लिए उन्हें सेवा प्रदान करता है तथा उनके साथ नम्रता का व्यवहार करता है उसी प्रकार श्रमिकों के साथ भी व्यवहार में 'सेवा' व 'नम्रता' का बर्ताव किया गया।

सन् 1930 की आर्थिक मंदी ने क्रातिन्कारी परिवर्तनों की पृष्ठिभूमि तैयार कर दी तथा मानव संसाध्न–प्रबन्ध् के क्षेत्र में नवीन युग का सूत्रपात हुआ। इस दर्शन को 'मानवतावादी' या 'मानवीय सम्बन्धें' के नाम से पुकारा गया। मानव संसाध्न प्रबन्ध् में 'मानवतावादी दर्शन' वैयक्तिक कर्मचारी उनकी आवश्यकताओं, अध्किारों तथा दायित्वों पर अपना ध्यान केन्द्रित करता है।ऱ[12] 'मानवतावादी' दर्शन समूहों (Group) पर भी ध्यान देता है लेकिन इस प्रकार का ध्यान सम्मिलित कार्य (Team work) की आवश्यकताओं की दृष्टि से प्रेरित होकर दिया जाता है न कि समूह अध्किारों (Group rights) को दृष्टि में रख कर। **श्री स्टेवार्ट थोमसन** (Steward Thomson) के अनुसार, 'इस दर्शन का नैतिक पक्ष कापफी शक्तिशाली है तथा प्रबन्ध् में चरित्र एवं सत्यनिष्ठा (Integrity) के गुणों का होना आत्यावश्यक है।ऱ[13]

फ्मानवतावादीय् दर्शन का विभिन्न व्यक्तियों ने अलग–अलग अर्थ लगाया है। कुछ व्यक्तियों ने इसे श्रमिक सहकारिता का ही एक रूप माना है जिससे कि प्रबन्ध्, श्रमिकों से अपनी इच्छानुसार कार्य ले सके जबकि अन्य व्यक्तियों ने इसे नैतिकता सम्बन्धें के प्रतीक के रूप में स्वीकार किया है। इस दर्शन का इतनी तेजी से प्रचार और प्रसार हुआ है कि व्यावसायिक जगत इस दर्शन के स्तर को ग्रहण नहीं कर पाया। संगठनों में मानो एक होड़ सी लग गई। इसे आधुनिकता का प्रतीक माना जाने लगा। **श्री मैकोम मैकनेर** (Malcolm Mcnair) ने तो इसके अन्धनुकरण को एक सनक या संज्ञा दी है। **श्री हर्वर्ट ओ. ऐबे** (Herbert O.Eby) ने एक स्थान पर लिखा है कि फ्मैं ईमानदारीपूर्वक यह मानता हूं कि हमने 'मानवीय सम्बन्धें' की अति–मात्रा ले ली है, कार्यरत व्यक्तियों को आत्यध्कि लाड प्यार दिया जा रहा है जिससे कि वे बिगड़ सकते हैं। मानो कि कारखाने, व्यावसायिक संगठन न होकर अर्थ–सामाजिक संस्थाएँ हों। 'मानवीय सम्बन्धें' ने एक अन्ध् श्र(ा का स्थान ले लिया है जिसे कम्पनियों ने आधुनिकता की होड़ में अपनाया है।[14]

---

12. "A humanistic philosophy fosters upon the individual employee his needs, rights and obligations. "C.R. Miltion- "the Development of [Philosophies of] Personnel Administration." unpublished doctoral dissertation, University of North Corolina. 1960, P. 136.
13. ".... is a strong moral or ethical lone with character and intengirty recognised as a major requirement of management". Stewart Thompson : Management Creeds and Philosophies, AMA Research Study no. 32 1958 (PP 100-116)
Dale Yoder : Personnel Management and Industrial Relations. (P. 58)
14. "I sincerely beliveve that over the past decade we have had an overdoes of 'human relations' too much pempering of employees, as if our factories were quasi social institutions rather than business organizations. Human relations has become a fetish which companies undertake in order to "keep up to date". Herbert O. Eby, "A business like approach to labour Relations" in the Personnel function. A Progress Report, A.M.A Management Report no. 24.

यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि मानवीय सम्बन्धें का दर्शन व्यावसायिक जगत में एक हेय दृष्टि से देखा जाने लगा है। ऐसा लगाता है कि अब हम पुनः दूसरी दिशा की ओर अग्रसर होने लगे हैं और कालचक्र ने पलटा खाया है। प्रबन्ध का महत्त्व पिफर एक बार बढ़ता हुआ दिखाई पड़ता है। वैयक्तिक तथा संगठन की आवश्यकताओं में समायोजन करने की ओर हमारा ध्यान जाने लगा है। प्रबन्ध के उद्देश्यों को महत्त्व दिया जाने लगा है जिससे प्रबन्ध के निदेशात्मक तत्त्वों का उभर कर आना स्पष्ट दिखलाई पड़ता है। यह सब कुछ 'मानवीय सम्बन्ध' के दर्शन से अलग हटना है। यह भावना कि कर्मचारियों के प्रबन्ध के प्रति कुछ उत्तरदायित्व हैं जिन्हें स्पष्ट रूप से स्वीकारना होगा, निरन्तर बलवती होती रही है।

इस प्रकार मानव संसाध्न प्रबन्ध के क्षेत्र में निरन्तर रूप से दार्शनिक परिवर्तन होते रहते हैं और इस क्रम में वर्तमान दर्शन को भी अन्तिम निर्णायक नहीं माना जा सकता है। यहाँ पर बात स्पष्ट रूप से समझ लेना आवश्यक है कि किसी भी समय में 'व्यावसयिक जगत' में सभी संगठनों ने मात्र एक दर्शन को ही स्वीकार किया हो ऐसी स्थिति कभी भी नहीं थी। **श्री डेल योडर** (Dale Yodder) 200 अमेरिका प्रतिष्ठानों के द्वारा मानव संसाध्न प्रबन्ध के क्षेत्र में अपनाये गये दर्शन–शास्त्र का अध्ययन कर इस निष्कर्ष पर पहुँचे थे कि फ्कर्मचारी की सावधनीय् से लेकर फ्मानवीय सम्बन्ध्य् तक का दर्शन विभिन्न प्रतिष्ठानों द्वारा अलग–अलग समय में अपनाया गया है।

आधुनिक अनुसन्धन में वैयक्तिक कर्मचारी के स्थान पर समूह की गत्यात्मकता (Group Dynamics) पर अध्कि ध्यान दिया जाने लगा है। इसका प्रभाव मानव संसाध्न प्रबन्ध के दर्शन पर भी पड़ेगा। विकास के नये चरण अभी अपने प्रारम्भिक दौर में हैं, अतः उनकी भावी सम्भावनाओं पर सबका ध्यान केन्द्रित होना स्वाभविक ही है। भविष्य के सम्बन्ध में अभी से निश्चयात्मक रूप से कुछ भी नहीं कहा जा सकता।

अध्याय–3
मानव संसाध्नो का नियोजन
(Human Resources Planning)

अर्थ
(Meaning)

मानवीय संसाध्नों के नियोजन से अभिप्राय उस कार्यक्रम से है जिसमें सेवायोजना/नियोक्ता द्वारा कर्मचारियों की प्राप्ति, विकास एवं उपयोग से सम्बन्ध्ति है। इस कार्यक्रम में जनशक्ति का मूल्यांकन, पूर्वानुमान तथा प्राप्ति उपलब्ध् के स्रोतों की खोज की जाती है। इस प्रकार मानवीय संसाध्नों का नियोजन श्रमिक वर्ग का विवेकपूर्ण उपयोग करने का माध्यम है। आधुनिक औद्योगिक जगत में बड़े पैमाने पर उत्पादन तथा तकनीकी परिवर्तन के कारण मानवीय संसाध्न नियोजन का महत्त्वपूर्ण स्थान है।

परिभाषायें
(Definitions)

मानवीय संसाध्नों के नियोजन की प्रमुख परिभाषायें निम्नलिखित हैं–

1. **वेट्टर** (Vetter) के अनुसार–मानवीय संसाध्न नियोजन, फ्वह प्रक्रिया (Process) है जिसके द्वारा प्रबन्ध्क यह निश्चित करता है कि संस्था को अपनी उपलब्ध् जनशक्ति स्थिति से इच्छित–वांछित जनशक्ति स्थिति की तरपफ कैसे जाना चाहिये। नियोजन के द्वारा प्रबन्ध्क उचित स्थान पर, उचित समय पर, उचित संख्या में, उचित ढंग से ऐसे व्यक्ति को रखने का प्रयास करता है जो इस प्रकार काम करे कि संस्थान और व्यक्ति दोनों ही दीर्घकालीन लाभ प्राप्त कर सकें।य[1]
2. **ब्रूस पी. कोलमन** (Bruce P. Collman) के अनुसार–फ्जनशक्ति नियोजन, जनशक्ति की आवश्यकताओं तथा उन्हें पूरा करने के साध्नों को निश्चित करने की प्रक्रिया है जिससे उपक्रम/संस्थान की समन्वित योजना चलायी जा सकें।य[2]
3. **मैकबीथ** (Mc' Beath) के अनुसार–फ्जनशक्ति नियोजन में दो चरण (Phases) सम्मिलित है। प्रथम चरण, नियोजनकाल में सभी प्रकार और स्तरों के श्रमिकों के लिए जनशक्ति की आवश्यकताओं के विस्तार में नियोजन से सम्बन्ध्ति होता है, तथा द्वितीय चरण–नियोजित आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए सभी साध्नों से संस्थाओं को उचित तरह के व्यक्ति दिलाने के लिए जनशक्ति पूर्तियों के नियोजन से सम्बन्ध्ति है।
4. **एडबिन बी. गिसलर** (Geislar, Edwin, B.) के अनुसार–फ्जनशक्ति नियोजन ;भविष्य के लिए अनुमान लगाने, विकास करने, लागू करने तथा नियंत्रण करने सहितद्धवह क्रिया (Process) है जिसके द्वारा कोई संस्थान यह निश्चित करता है कि संस्थान में उचित स्थान पर ठीक संख्या में ठीक प्रकार से, ठीक तरह के व्यक्ति उन कार्यों को करने के लिए लगे हैं जिनके लिए आर्थिक दृष्टि से वे सबसे अध्कि लाभकारी हैं।य

1. "Human resource planning is, the process by which a management determines how an organistion should move from its current manpower position to its desired manpower position. Through planning, a management strives to have the right number and the right kind of people at the right places at the right time, to do thing which result in both the organisation and the individual receiving the miximum long range benefit." **-Vetter**
2. "The process of determining manpower requirements and the means for meeting those requirement in order to carry out the integrated plan of the orgnisation." **-Bruce P. Collman**

जनशक्ति नियोजन–मानवीय संसाधन नियोजन की विभिन्न परिभाषाओं से यह स्पष्ट होता है कि मानवीय संसाधन नियोजन के अन्तर्गत कर्मचारियों का प्रभावपूर्ण उपयोग, भविष्य के लिए पूर्वानुमान लगाने की आवश्यकता और उन्हें पूरा करने के लिए उचित नीतियों एवं कार्यक्रमों का विकास तथा समस्त क्रिया की समीक्षा एवं नियन्त्रण करना अवश्य सम्मिलित होना चाहिए।

मानवीय संसाधन नियोजन के उद्देश्य
(Objectives of Human Resources Planning)

1. व्यक्तियों/कर्मचारियों के लिए काम के अवसर उपलब्ध करना,
2. भविष्य में होने वाले कार्यों एवं उनकी आवश्यकताओं को ज्ञात करना तथा जनशक्ति की आवश्यकताओं का पहले से पूर्वानुमान करना,
3. वर्तमान उपलब्ध मानवीय संसाधनों का विकास करना,
4. वर्तमान एवं भावी कर्मचारियों का प्रभावपूर्ण उपयोग करना,
5. आज की आवश्यकतानुसार मानवीय संसाधन नियोजन को सपफल बनाना।

आवश्यकता
(Need)

एक सपफल प्रबन्ध्क काम करने के वातावरण को अच्छा बनाकर अध्कि उत्पादन प्राप्त करने में सपफल होता है। मानवीय संसाध्न नियोजन की दृष्टि से पदों का सृजन करना, पद को समाप्त करना, पद कार्य आबंटन आदि आवश्यक हैं। इसके अतिरिक्त उचित व्यक्ति को उचित कार्य पर नियुक्त करने के लिए मानवीय संसाध्न नियोजन आवश्यक है।

मानवीय संसाध्न नियोजन की आवश्यकता के निम्नलिखित कारण हैं–

1. **जनशक्ति की आवश्यकताओं का उचित पूर्वानुमान करना** (Correct estimation of Human resources Requirement) : किसी भी कर्मचारी को आवश्यकता से अध्कि एवं रूचि के विरू(कार्य नहीं सौंपा जा सकता। जनशक्ति का पूर्वानुमान उत्पादन की मात्रा पर आधरित होता है। अध्कि उत्पादन के लिए अध्कि उत्पादन के लिए अध्कि जनशक्ति की आवश्यकता होती है। लेकिन अन्य कारण भी जनशक्ति की मात्रा को प्रभावित करते हैं जैसे स्वचालित यन्त्रों का प्रयोग, कार्य के प्रति रूचि, आदि। प्रबन्ध्कों को जनशक्ति आयोजन के समय संगठन के आन्तरिक और बाहरी स्रोत दोनों का ध्यान रखना चाहिए।
2. **भर्ती एवं चयन नीति को ठोस रूप प्रदान करने के लिए** (To provide a solid base for Recruitment and Selection Policy): मानवीय संसाध्न नियोजन के द्वारा इच्छित मात्रा में कर्मचारियों का चयन सम्भव होता है। उचित आयोजन के अभाव में योग्य व्यक्ति नहीं चुने जा सकते और जनशक्ति के लिए बार–बार साक्षात्कार, चयन आदि करते रहने से शक्ति, समय एवं ध्न का अपव्यय होता है।
3. **व्यवसाय की आकार वृ(के अनुसार, जनशक्ति प्रबन्ध** (Man-power Management according to the needs of the enterprise): व्यवसाय के आकार में वृ(के साथ–साथ श्रम साध्नों की अध्कि आवश्यकता होती है। जनशक्ति आयोजन के आधर पर उचित मात्रा में, उचित योग्यता वाले तथा उचित पदों पर व्यक्ति नियुक्त किये जायेगें।
4. **जनसंख्या की कमी अथवा जनाध्क्यि के कारण होने वाले दुष्प्रभाव से बचना** (Safeguard from the evil effects of Over-employment or Under-employment): संस्था में आवश्यकता से अध्कि व्यक्तियों की नियुक्तियों तथा आवश्यकता से कम व्यक्ति रखना दोनों ही हानिकारक हैं। जनशक्ति आयोजन से इन दुष्प्रभावों से मुक्ति मिलती है।
5. **विकास कार्यक्रमों को प्रभावी बनाना** (To make the employee development programmes effectives): जनशक्ति आयोजन द्वारा वर्तमान में उपलब्ध कर्मचारियों की सेवाओं का अध्कितम एवं विवेकपूर्ण उपयोग किया जा सकता है और कर्मचारी विकास की योजनाएँ बनाई जा सकती हैं।

6. **श्रम लागत में कमी करने के लिए** (To reduce labour cost): विकास कार्यक्रमों और नियोजित कर्तचारी नियुक्ति क प्रभाव से प्रति इकाई श्रम लागत कम की जा सकती है। इससे उत्पादन विवेकपूर्ण होता है।

मानवीय संसाध्न नियोजन के तत्त्व
(Elements of Human Resources Planning)

जनशक्ति आयोजन द्वारा कर्मचारियों की वर्तमान एवं भावी आवश्यकता का उचित अनुमान लगाया जा सकता है तथा ऐसे अनुमानों का मूल्यांकन भी किया जा सकता है। जनशक्ति आयोजन में निम्न तत्त्व सम्मिलित हैं–

1. **वर्तमान जनशक्ति की सही गणना करना** (Correct calculation of existing manpower): संस्था की योजनाएं सभी सपफलतापूर्वक कार्य कर सकती हैं जब उनका आधर मजबूत हो। कार्यशील आयु वर्ग में पायी जाने वाली जनसंख्या, जनसंख्या आंकड़ों का कार्य, तकनीक, व्यावसायिक–अभिरूचि सम्बन्धी जानकारी के आधर पर संस्था स्तर पर सही ढंग से जनशक्ति नियोजना किया जा सकता है।
2. **भावी जनशक्ति की आवश्यकता का अनुमान** (Estimation of future Man-power needs): वर्तमान तथा भावी जनशक्ति के अनुमान सही होने पर ही नियोजन हो सकता है। बदलती हुई परिस्थितियों के अनुसार भविष्य के लिए अनुमान लगाना आवश्यक है। उद्योगों, उत्पादन क्रियाओं तथा संचार सुविधओं में होने वाले परिवर्तनों के अतिरिक्त जनशक्ति का अभाव अथवा वृ(का सही अनुमान पफर्म के विकास कार्यक्रमों को अध्कि प्रभावी बना सकती है।
3. **जनशक्ति विकास की आवश्यकता का अनुमान** (Estimation of the need of Man-power development): जनशक्ति विकास के कारण श्रम की परिमाणत्मक आवश्यकता कम होती है। इससे श्रमिक की योग्यता, कार्य कुशलता तथा कार्यक्षमता में वृ(होती है। विद्यमान जनशक्ति के विकास का आशय वर्तमान में होने वाले जनशक्ति अपव्यय को कम करना है।

मानवीय संसाध्न नियोजन का स्तर
(Levels of Human Resource Planning)

मानवीय संसाध्न नियोजन के स्तरों को निम्न चार स्तरों में विभाजित किया जा सकता है–

1. **राष्ट्रीय स्तर पर** (At the national level): राष्ट्रीय स्तर पर मानवीय संसाध्न नियोजन सामाजिक दृष्टिकोण से किया जाता है जिसके अन्तर्गत कर्मचारियों को पर्याप्त मात्रा में रोजगार उपलब्ध करने, आर्थिक उन्नति के कार्यक्रम, शिक्षा सम्बन्धी सुविधएँ आदि दी जाती है।
2. **क्षेत्रीय स्तर पर** (At the regional level): क्षेत्रीय स्तर पर केन्द्र सरकार तथा राज्य सरकारें ग्रामीण/कृषि, औद्योगिक कर्मचारियों तथा नौकारी पेशे वालों की आवश्यकताओं की पूर्ति मानवीय संसाध्न नियोजन करता है।
3. **औद्योगिक स्तर पर** (At the industry level): इस स्तर पर यह ध्यान रखा जाता है कि संस्था को अध्कि से अध्कि लाभ हो। इस स्तर पर यह प्रयास किया जाता है कि मानवीय संसाध्न नियोजन का दुरूपयोग कम–से–कम हो तथा कर्मचारी वर्ग अपने कार्य में पूरी तरह प्रशिक्षित हो तथा उद्योग की आवश्यकता की पूर्ति करने में समर्थ हो।
4. **व्यक्तिगत इकाई के स्तर पर** (At the level of individual unit): इस स्तर पर मानवीय संसाध्नों की विभिन्न आवश्यकताओं को विभिन्न विभागों से जोड़ दिया जाता है।

मानवीय संसाध्न नियोजन के रूप
(Forms of Human Resources Planning)

मानवीय संसाध्न नियोजन के तीन रूप हो सकते हैं–

1. **अल्पकालीन नियोजन** (Short-term Planning): अल्पकालीन नियोजन उन दशाओं में किया जाता है जब संस्था में किसी नई विध्ि पर प्रयोग किया जा रहा हो या नई तकनीकी के अनुसार प्रशिक्षित कर्मचारी उपलब्ध होने के समय

तक की व्यवस्था करनी हो। अल्पकालीन आयोजन कर्मचारियों के पद स्थापन के लिए अथवा नवसृजित पदों को भरने के लिए किया जाता है। अल्पकालीन आयोजन एक अथवा दो वर्ष की अवध् िसे अध्कि के लिए नहीं किया जाना चाहिए।

2. **मध्यकालीन नियोजन** (Medium-term Planning): मध्यकालीन आयोजन साधरणतः पर्यवेक्षकीय स्तर के पदों के लिए किया जाता है क्योंकि निम्नस्तर वर्ग के श्रमिकों को अध्कि से अध्कि प्रशिक्षण की आवश्यकता नहीं होती है। पर्यवेक्षकीय तथा प्रबन्ध्क स्तर के पदों पर कार्य करने वाले कर्मचारी या तो सीधी भर्ती द्वारा लिये जा सकते हैं अथवा पदोन्नति द्वारा। मध्यकालीन जनशक्ति आयोजन के लिए विस्तृत आंकड़ों की आवश्यकता नहीं होती है। ऐसा नियोजन सामान्य अनुभव के आधर पर किया जा सकता है।

3. **दीर्घकालीन नियोजन** (Long-term Planning): दीर्घकालीन मानवीय संसाध्न नियोजन द्वारा संगठन को दृढ़ आधर मिल जाता है। दीर्घकालीन उद्देश्यों की पूर्ति किसी संस्था का नीति सम्बन्धी निर्णय कहा जा सकता है। दीर्घकालीन आयोजन द्वारा व्यवसाय में स्थिरता लाने तथा प्रत्येक पद के लिए योग्य व्यक्ति को प्राप्त करने का प्रयत्न किया जाता है। अल्पकाल अथवा मध्यकाल आयोजन में तत्कालीन परिस्थितियों का सामना करने के लिए खाली पद की अपेक्षा किसी व्यक्ति को नियोजित करने की नीति हो सकती है। किन्तु दीर्घकालीन नियोजन की दृष्टि से प्रत्येक पद पर योग्य व्यक्ति ही होना चाहिए।

मानवीय संसाध्न नियोजन के लाभ
(Advantages of Human Resources Planning)

यद्यपि भारतीय प्रबन्ध्क मानवीय संसाध्नों के नियोजन के क्षेत्र के प्रति अध्कि सजग नहीं रहे हैं पिफर भी कुछ बड़े उद्योग ने मानवीय संसाध्नों का नियोजन किया है। उन्हें इसके बहुत लाभ प्राप्त हुए हैं। इस प्रकार के नियोजन के निम्नलिखित लाभ होते हैं–

1. भविष्य की मानवीय संसाध्नों की आवश्यकता का पूर्वानुमान लगाकर उपलब्ध् जनशक्ति की पदोन्नति करने के लिए अवसर प्रदान होता है। परिणामस्वरूप उपलब्ध् जनशक्ति को काम के प्रति प्रेरणा मिलती है और संस्था में इच्छा वातावरण बनता है।
2. दीर्घकालीन मानवीय संसाध्नों के नियोजन से उनकी आवश्यकताओं का पूर्वानुमान हो जाता है जिसके पफलस्वरूप क्षतिपूरक लागतों (Compensation Cost) का अनुमान लगाने में सहायता मिलती है।
3. विशेषकर भारत जैसे देश के लिए मानवीय संसाध्नों के नियोजन से एक विशेष लाभ और भी है, हमारे देश में एक ओर बेरोजगारी की समस्या है और दूसरी ओर प्रबन्ध्कीय योग्यताओं, निपुणताओं कि बहुत अध्कि कमी है इसलिए इस विषम परिस्थिति में कार्यरत और काम पर लगने वाले कर्मचारियों/श्रमिकों की योग्यताओं और निपुणता का विकास करना बहुत आवश्यक है और यह विकास मानवीय संसाध्नों के नियोजन से ही संभव है।
4. मानवीय संसाध्नों के नियोजन से उपलब्ध् जनशक्ति की कमियों को **निष्पादन मूल्यांकन** (Performance Appraisal) द्वारा पता लगाकर प्रशिक्षण कार्यक्रम के द्वारा इस कमी को दूर किया जा सकता है।
5. मानवीय संसाध्नों के नियोजन से श्रमिकों एवं कर्मचारियों की कमियों (Shortages) तथा आध्क्यिों (Surpluses) को दूर किया जा सकता है।

मानवीय संसाध्नों के नियोजन की सीमाएँ
(Limitations of Human Resources Planning)

मानवीय संसाध्नों के नियोजन की मुख्य समस्याएँ निम्नलिखित हैं–

1. पहले से पूर्वानुमान की कुछ कठिनाइयाँ और सीमाएँ होती हैं जैसे–दीर्घकालीन पूर्वानुमान, तकनीकी, आर्थिक, दशाओं और श्रमिकों की दशाओं में परिवर्तन होने के कारण सही नहीं होते है। परिणामस्वरूप मानवीय संसाध्नों का नियोजन गलत होने की संभावना बनी रहती है।

2. मानवीय संसाध्नों के नियोजन के अन्तर्गत पूर्वानुमानों में त्रुटियाँ नियोजन के त्रुटिपूर्ण ढंग के कारण पाई जाती है।
3. उच्च प्रबन्ध्कों का सहयोग/समर्थन न मिलने के कारण मानवीय संसाध्नों के नियोजन के प्रति उत्तरदायी व्यक्तियों में निराशा की भावना पफैलने का भय रहता है।
4. संस्था से सेवानिवृत्त (Retire) होने वाले कर्मचारी, इस्तीपफा और मृत्यु के कारण रिक्त स्थानों (Vacant Posts) का पूर्वानुमान लगाना संभव हो सकता है किन्तु इस बात का पता लगाना कि किस कर्मचारी के स्थान पर किस कर्मचारी की आवश्यकता होगी, का पूर्वानुमान बहुत कठिन है।

मानवीय संसाध्नों के नियोजन के लिए आधरभूत बातें
(Basic Steps in Human Resources Planning Process)

मानवीय संसाध्न की नियोजन क्रिया (Process) में वेट्टद्धर (Vetter) ने सम्भावित आवश्यकताओं को मापने, पूर्वानुमान लगाने, नियंत्रण करने तथा नियोजन की क्रियाओं के महत्त्व पर बल दिया है। इस प्रकार मानवीय संसाध्न के नियोजन में निम्नलिखित चार आधरभूत बातें (Four Basic Steps) सम्मिलित हैं–

1. सर्वप्रथम मानवीय संसाध्नों की आवश्यकताओं का पूर्वानुमान लगाना (Anticipating Human Resources Needs)
2. कार्य की आवश्यकताओं एवं विवरणों का नियोजन करना (Planning of Job Requirement and Description)
3. भर्ती के लिए पर्याप्त साध्नों का चुनाव करना (Selecting adequate sources of Recruitment)
4. आवश्यक मानवीय संसाध्नों के स्वभाव/प्रकृति को निश्चित करने के लिए निपुणताओं का विश्लेषण करना (Analysing skill to determine the nature of Human Resources Needs)

मानवीय संसाध्नों की आवश्यकताओं का निर्धरण
(Determination of Human Resource Requirements)

प्रत्येक संस्था में सर्वप्रथम मानवीय संसाध्नों की आवश्यकताओं का निर्धरण किया जाता है। इसके लिए **आवश्यकताओं को गुणात्मक** (Qualitative) **तथा परिमाणात्मक** (Quantitative) रूपों को निश्चित करना होता है–

1. **मानवीय संसाध्नों का गुणात्मक निर्धरण** (Qualitative determination) के अन्तर्गत निम्नलिखित बातें आती है–
   (i) कार्य डिजाइन (Job Design)
   (ii) कार्य विश्लेषण (Job Analysis)
   (iii) कार्य–विवरण (Job-Description)
   (iv) कार्य–विशिष्टता (Job-Specification)
2. **मानवीय संसाध्नों के परिणात्मक निर्धरण** के अन्तर्गत निम्नलिखित बातें आती है–
   (i) कार्य–भार विश्लेषण (Work-load Analysis) एवं
   (ii) श्रमशक्ति विश्लेषण (Work-force Analysis)

उपरोक्त **गुणात्मक एवं परिमाणात्मक** निर्धरण का निर्धरण का विस्तृत अध्ययन निम्न हैं–

कार्य डिजाइन
(Job Design)

कार्य–डिजाइन के अभिप्राय, किसी कर्मचारी/श्रमिक को कार्य पर लगाने के लिए कार्य की एक इकाई (Unit) पैदा करने से है तथा कार्य स्थापना में विशेष बात संगठन की प्रकृति होती है। संस्थान/उपक्रम के उद्देश्यों के अनुसार विभिन्न कार्यों को उनके महत्त्व के अनुसार क्रम (Serial) में रखा जाता है। इसके अतिरिक्त डिजाइन के विषय में संस्थान एवं श्रम बाजार दोनों

के अन्दर उपलब्ध कर्मचारियों की योग्यताओं, सामाजिक आवश्यकताओं, कार्यों के बीच सम्बन्ध तथा व्यक्ति/कर्मचारी के मनोवैज्ञानिक सम्बन्ध आदि विचार महत्त्वपूर्ण होते हैं। साथ ही कार्य प(तियाँ इस प्रकार से बनानी होती है जिससे तनाव (Frictions) को कम से कम किया जा सके। दो या दो से अध्कि कर्मचारियों के बीच जो व्यक्तित्व सम्बन्धी झगड़े होते हैं वे वास्तव में कार्य–डिजाइन के दोष हो सकते हैं।

डेल योडर (Dale Yoder) के अनुसार–फ्कार्य (Job) की परिभाषा उन कार्यों (Tasks) कत्तव्यों और उत्तरदायित्वों के सग्रंह के रूप में दी जा सकती है जो किसी कर्मचारी (Individual Employee) को कुल रूप में सौंपा जाता है।य

ओटिस, जे.एल. एवं लयूकोर्ट, रिचार्ड एच. (Otis, J.L. and Lucort, Richard H.) के अनुसार–फएक कार्य (Job) बहुत से उपकार्यों (Sub Jobs) का समूह होता है, जिसमें बहुत अध्कि सीमा तक समान कर्त्तव्य, निपुणता, उत्तरदायित्व तथा ज्ञान सम्मिलित है।य

एक व्यवसाय वह कार्य (Job) होता है जो अनेक पफर्मों एवं क्षेत्रों में सामान्य कार्य (General Job) कहते हैं। एक कार्य में अनेक पद (Positions) भी हो सकते हैं किन्तु एक कर्मचारी का अपना पद होता है। अनेक पदों में एक ही प्रकार के कर्त्तव्य (duties) हो सकते हैं, जैसे–क्लर्क (Clerk) के पाँच स्थान और ये सब पद मिलकर एक कार्य (Job) का रूप धरण करते हैं। इस प्रकार कार्य **अव्यक्तिगत** (Impersonal) होता है और पद (Positions) व्यक्तिगत (Personal) होता है।

कार्य विश्लेषण का अर्थ
(Meaning of Job-analysis)

कार्य–विश्लेषण दो शब्दों से मिलकर बना है–

(i) कार्य (Job)

(ii) विश्लेषण (Analysis)

इन दोनों शब्दों का अर्थ जानना आवश्यक है।

कार्य का अर्थ
(Meaning of Job)

एक कार्य में अनेक उपकार्यों (Positions) को सम्मिलित किया जाता है और प्रत्येक उपकार्य अलग–अलग व्यक्तियों के द्वारा किये जाते हैं। उदाहरणार्थ–एक कोट की ड्राइक्लीन कराना है। जब कोट ड्राईक्लीन के लिए ड्राइक्लीनर को दिया जाता है तो ड्राईक्लीनर कोट के ड्राइक्लीन के कार्य को अलग–अलग उपकार्यों में विभाजित कर देगा। एक व्यक्ति कोट पर नम्बर या निशान लगायेगा, दूसरा व्यक्ति मशीन से या हाथ से कोट की ध्ुलाई करेगा, तीसरा व्यक्ति कोट को सुखायेगा तथा चौथा या अन्तिम व्यक्ति कोट पर प्रेस ;आयरनद्ध करेगा। इस उदाहरण से स्पष्ट होता है कि **कोट की ड्राईक्लीन** एक कार्य है जिसमें चार उप–कार्य सम्मिलित हैं–

(i) कोट पर निशान लगाना,

(ii) कोट की ध्ुलाई करना,

(iii) कोट को सुखाना,

(iv) कोट पर प्रेस ;आयरनद्ध करना।

विश्लेषण का अर्थ
(Meaning of Analysis)

विश्लेषण से अभिप्राय किसी कार्य को छोटे–छोटे भागों में बाँटकर गहन जानकारी प्राप्त करना है। (Separation of a whole into its component parts तथा An Examination of a complex, its elements and their relations)।

कार्य विश्लेषण
(Job Analysis)

कार्य–मूल्यांकन (Job Evaluation) की आधरशिला है। कार्य मूल्यांकन, कार्य–विश्लेषण के माध्यम से ही अपने उद्देश्य को प्राप्त करता है। इसके अन्तर्गत कार्य (Job) का गहन अध्ययन किया जाता है। किसी कार्य के अर्न्तगत सम्मिलित उपकार्यों का विस्तृत विश्लेषण करके यह निर्धरित करने का प्रयत्न किया जाता है कि उस कार्य को पूरा करना होगा तथा किन दशाओं में उस कार्य को किया जाना चाहिए। कितनी योग्यता का व्यक्ति उस कार्य को सपफलतापूर्वक पूरा कर सकता है तथा कार्य करने की दशायें क्या होनी चाहिए।

कार्य–विश्लेषण की परिभाषाएँ
(Definitions of Job-Analysis)

1. **जॉन ए. शुबिन** (John A. Shubin) के अनुसार–“कार्य–विश्लेषण किसी कार्य से सम्बन्धित तथ्यों का व्यवस्थित रूप से संग्रह तथा अध्ययन करना है, कार्यों से उसके प्रत्येक कार्य को ऐसे परिभाषित और विशिष्ट बना सके कि दूसरे से समस्त पृथकता स्पष्ट हो जाय।”[3]

2. **एडविन बी. फ्रिलप्पो** (Edwin B. Flippo) के अनुसार–“किसी कार्य विशेष के सम्बन्ध में प्रक्रियाओं एवं उत्तरदायित्वों की सूचना एकत्रित करने और उनका अध्ययन करने की विधि ही कार्य–विश्लेषण है।”[4]

3. **स्कॉट, क्लोथियर और स्प्रीगल** (Scot, Clothier and Spriegal) के अनुसार–“कार्य विश्लेषण से सम्बन्धित प्रक्रियाओं, कर्तव्यों एवं सम्बन्धें का आलोचनात्मक ढंग से मूल्यांकन करने की विधि है।”[5]

4. **मिचेल जे. जूसियस** (Michael J. Jucious) के अनुसार–“कार्य विश्लेषण से अभिप्राय कार्यों के संगठनात्मक पहुलाओं, कर्त्तव्यों तथा उससे सम्बन्धित प्रक्रियाओं का अध्ययन करने की विधि से है, जिसका लक्ष्य विनिर्देश (Specification) बनाना अथवा जैसाकि कुछ व्यक्ति समझते हैं, कार्य–विवरण (Job description) तैयार करना है।”[6]

5. **डेल योडर** (Dale Yoder) के अनुसार–“कार्य विश्लेषण से अभिप्राय उस विधि से है जिसके द्वारा प्रत्येक कार्य से सम्बन्धित तथ्यों का व्यवस्थित रूप से पता लगाया जाता है। इसके माध्यम से मालूम किया जाता है कि प्रत्येक कार्य के लिए किन योग्यताओं की आवश्यकता होगी तथा कार्य को पूरा करने के लिए एक व्यक्ति में कौन–कौन से गुण होने चाहिए।

कार्य विश्लेषक
(Job Analyst)

जो विशिष्ट व्यक्ति **कार्य–विश्लेषण** (Job Analysis) के कार्य को करता है उसे **‘कार्य विश्लेषक’** कहते हैं। कार्य–विश्लेषक (Job Analyst) प्रत्येक क्रिया का गहन अध्ययन करके रिपोर्ट लिखता है **जिसको कार्य विश्लेषक रिपोर्ट** (Job Analysis Report) कहते हैं। इस रिपोर्ट में अनेक उपयोगी सूचनायें प्राप्त होती है। जैसे–

(i) कार्य का नाम तथा उपनाम;

(ii) कार्य में प्रयोग किए जाने वाले कच्चे माल, उपकरण तथा यंत्रों के नाम;

(iii) कार्य में लगने वाला समय;

---

3. "Job-analysis is a methodical compilation and study of the work data in order to define and characterise each occupation in such a manner as to distinguish it form all others." **-John Shubin**
4. "Job-analysis is the process of studying and collecting informations relating to the operations and responsibilities of a specific job." **-Edwin B. Flippo**
5. "Job-analysis is the process of critically evaluating the operations, duties and relationship of the job." **-Scot, Clothier and Spriegal**
6. "Job-analysis refers to process of studying the operations, duties and organisational aspects of jobs in order to derive specifications, or, as they are called by some, job descripations." **-Michal J. Jucius**

(iv) उत्तरदायित्व तथा कर्त्तव्यऋ

(v) कार्य को पूरा करने के लिए आवश्यक कार्य दशायेंऋ

(vi) कर्मचारियों में आवश्यक योग्यता तथा अनुभव आदि।

कार्य विश्लेषण की आवश्यकता क्यों?
(Why Need of Job-Analysis?)

अथवा

कार्य–विश्लेषण के उद्देश्य व उपयोग
(Objectives and Uses of Job-Analysis)

निम्नलिखित कारणों से कार्य–विश्लेषक आवश्यक होता है–

1. कार्य–विश्लेषण आवेदकों की रूचि, योग्यता, अनुभव आदि की जाँच का सर्वोत्तम तरीका हैऋ
2. कार्य–विश्लेषण कार्य करने की सर्वश्रेष्ठ विध् िको ज्ञात करता हैऋ
3. किसी कार्य को पूरा करने में क्या रूकावटें आ सकती हैं तथा इसके लिए क्या उपाय किए जाँए, का पता लगाने केलिएऋ
4. कार्य करने की प्रभावपूर्ण विध् िको ज्ञात करने के लिएऋ
5. परिचालन नियम पुस्तिका (Operating Manual) बनाने के लिए कार्य–विश्लेषण आवश्यक हैऋ
6. संगठन चार्ट (Organisation Chart) तैयार करने के वास्ते भी यह आवश्यक हैऋ
7. कार्य–विश्लेषण, कार्य–मूल्यांकन की आधरशिला हैऋ
8. रोजगार के लिए उपयुक्त शर्तों का पता लगाने के लिएऋ
9. कार्य के प्रति कर्मचारियों की रूचि बनाये रखने के लिए उपायों की खोज करना।

कार्य–विश्लेषण
(Methods of Job-Analysis)

कार्य–विश्लेषण की योजना लागू करने के लिए तथा आवश्यक सूचना प्राप्ति के लिए मुख्य रूप से चार साध्न (Means) हैं–

(i) कर्मचरियों या सुपरवाइजर्स का सहयोग लेकर,

(ii) श्रमिकों तथा सुपरवाइजर्स से साक्षात्कार (Interview) करके,

(iii) कार्य के प्रत्यक्ष रूप से देखकर,

(iv) रिकार्ड की सहायता से।

इन चारों साध्नों का विस्तृत विवरण निम्नलिखित है–

1. **प्रश्नावली विध्** (Questionnaire Method): कार्य–विश्लेषक कर्मचारियों तथा सुपरवाइजरों से प्रश्न पूछकर महत्त्वपूर्ण सूचनाएँ प्राप्त करना है। प्रश्न पूछते समय कार्य–विश्लेषक को उद्देश्य स्पष्ट कर देना चाहिए जिससे श्रमिकों के मन में प्रबन्ध् के प्रति कोई सन्देह पैदा न होने पाये।
2. **साक्षात्कार विध्** (Interview Method): इस विध् िमें कार्य–विश्लेषक स्वयं कर्मचारियों तथा सुपरवाइजर्स से व्यक्तिगत रूप से सम्पर्क स्थापित कर उनसे कार्य–सम्बन्धी विभिन्न व्यक्तियों के विषय में उनके विचार मालूम करता है। इस विध् िको सपफल बनाने के लिए निम्न बातें जरूरी हैं–

(i) साक्षात्कार कर्मचारियों की भाषा में ही किया जाए,

(ii) कर्मचारियों को कार्य का प्रशिक्षण देने के प्रयास देने के प्रयास से बचा जाए,

(iii) कार्य विश्लेषण उद्देश्यों के अनुरूप ही हो,

(iv) कर्मचारियों के कार्य में रूचि दिखाना,

(v) कर्मचारियों द्वारा बताई गई बातों को ठीक से समझना।

3. **अवलोकन विधि** (Observation Method)**:** इसके अन्तर्गत कार्य–विश्लेषक उत्पादन स्थान पर जाकर, कार्य होते हुये देखकर कर्मचारियों और सुपरवाइजरों से तकनीकी प्रश्न पूछता है और उनसे स्पष्टीकरण प्राप्त करता है।

4. **रिकार्ड या अभिलेख विधि** (Records Methods): इस विधि के अन्तर्गत कर्मचारी विभाग के द्वारा रखे गए रिकार्ड की सहायता से कार्य से सम्बन्धित आँकड़े प्राप्त किए जाते हैं। उदाहरणार्थ कार्य (Job) की कितनी उप–क्रियाएँ हैं? कार्य को पूरा करने में कितना समय लगता है?

कार्य–विश्लेषण की सीमाएँ
(Limitations of Job-Analysis)

कार्य विश्लेषण की अनेक सीमायें या कठिनाइयाँ हैं। यह विधि श्रमिको के व्यक्तिगत गुणों तथा मनोवैज्ञानिक विषयों पर कोई प्रकाश नहीं डालती। ये केवल कर्मचारियों के कर्त्तव्यों और कार्य करने की दशाओं तक ही सीमित हैं या यह विधि यह बतलाती है कि अमुक कार्य के लिए व्यक्ति में क्या योग्यता होनी चाहिए? इसलिए इसको प्रभावशाली बनाने के लिए मनोवैज्ञानिकों की सहायता आवश्यक होती है।

कार्य–विवरण
(Job Description)

(Job)

कार्य–विवरण का अर्थ
(Meaning of Job Description)

कार्य–विवरण कार्य–विश्लेषण (Job Analysisद्ध के अन्तर्गत विश्लेषक की रिपोर्ट से प्राप्त सूचना का सारांश होता है। इसके अन्तर्गत किए जा रहे कार्य के लिए उत्तरदायित्वों, आवश्यक कौशल, प्रशिक्षण, कार्य–दशाओं तथा कर्मचारी विभाग की आवश्यकताओं को ध्यान में रखा जाता है। इस प्रकार कार्य–विवरण निम्नलिखित बातों से सम्बन्ध रखता है–

(i) कार्य को करने वाले श्रमिक,

(ii) किये गए कार्य का सम्पूर्ण विवरण,

(iii) कार्य को पूरा करने में कर्मचारियों के उत्तरदायित्वों की सीमा,

(iv) कार्य की योजना तथा प्रशिक्षण,

(v) कार्यदशाएँ जिनके अन्तर्गत कार्य पूरा किया जाता है।

परिभाषा
(Definitions)

पिगर्स–मेयर्स (Pigors – Myers) के अनुसार फकार्य–विवरण एक दिए हुए कार्य या स्थिति (Positions) के अन्दर आने वाले विभिन्न कर्त्तव्यों, उत्तरदायित्वों तथा संगठनात्मक संबंधें का लिखित सारांश है। इसमें कार्य विभाजन और उत्तरदायित्वों के क्षेत्रों को परिभाषित किया जाता है ताकि सम्ब(कार्य को अन्य कार्यों से अलग–अलग करना संभव हो सके।य[7]

---

7. "Job- descripation is a word picture in writing of the duties, responsibilities and organisational relationship that consititute a given job or position. It defines continuing work assignment and a scope of responsibility that are sufficiency different from those of other jobs to warrant a specific title." **-Pigors-Myers**

कार्य–विवरण का स्वरूप
(Appearance of Job-description)

कार्य–विवरणों का स्वरूप सम्बन्धित कार्य पर निर्भर करता है। उदाहरणार्थ, कार्य मूल्यांकन (Job Evaluation) के लिए बनाये गये कार्य–विवरण अध्कि विस्तृत होते हैं जबकि एक भरती प्रणाली के लिये कम विस्तृत। इस प्रकार प्रत्येक कार्य–विवरण में कितनी और क्या सूचना दी जाय यह कार्य (Job) के स्वभाव पर निर्भर करता है। कार्य–विवरण की रूपरेखा (Outline) इस प्रकार हैं–

कार्य–विवरण का प्रारूप
(Outline of Job-Description)

पानीपत स्टील कम्पनी | **कार्य विवरण**

विभाग...........

दिनांक 15 अगस्त,1995

शीट संख्या............

कर्मचारियों की संख्या.............

1. **कार्य का नाम**..................
2. **संगठन के साथ सम्बन्ध**
   (i) .... के प्रति उत्तरदायी है।
   (ii) .... का सुपरवीजन करता है।
   (iii) .... के साथ सहयोग करता है।
3. **कार्य निष्कर्ष**..प्रमुख
   कार्य का निष्कर्ष...
4. **कार्य जो किये जाते हैं**...
   ;अलग–अलग कार्य तथा उनमें लगने वाला समयद्ध
   (i) मुख्य कार्य की कार्यात्मक विशेषताएँ..
   (ii) अधीनस्थों को सौंपे गए कार्य..
   ....
   (iii) वे कार्य जो कर्मचारियों के सहयोग से करने होते हैं..
5. **कार्य** (Job) **के लिए व्यक्ति में आवश्यक गुण**
   (i) ....
   (ii) ....
   (iii) ....
6. कार्य–विवरण बनाने वाले का नाम...
   विवरण पर स्वीकृति देने वाले का नाम...
   विवरण की जाँच करने वाले का नाम...

कार्य–विवरण तैयार करने वाला विशेषज्ञ संस्था के बाहर या संस्था के अन्दर से ही हो सकता है। किन्तु उस विशेषज्ञ में कार्य (Job) के गुणों की स्पष्ट रूप से व्याख्या करने की पूर्ण क्षमता होनी चाहिए तथा अपना कार्य निष्पक्षता से करना चाहिए। इस प्रकार कार्य–विवरण की उपयोगिता इस बात पर निर्भर करती है कि इसे किसने तैयार किया है। यदि साधरण व्यक्ति

या सुपरवाइजर कार्य–विवरण तैयार करता है तो वह एक अच्छा कार्य–विवरण तैयार नहीं कर पायेगा। इसलिए कार्य–विवरण सदा विशेषज्ञों के द्वारा ही बनवाना चाहिये।

कार्य–विवरण की उपयोगिता

(Usefulness of Job-description)

कार्य–विवरण की उपयोगिता के विषय में व्यक्तियों के अलग–अलग मत हैं। कुछ व्यक्ति इसको कार्य मूल्यांकन की आधरशिला के रूप में मानते हैं तो दूसरे लोग इसकी अनुपयोगिता सि(करते हैं। इसकी विरोधी विचारधरा, व्यक्तिगत अनुभव तथा भावना प्रधन विचारों पर आधरित है क्योंकि कार्य–विवरण के दुरूपयोग ने विरोधी बनाया है। जबकि कार्य–विवरण की उचित उपयोगिता का माप वस्तुगत तथ्यों (Objective Facts) के आधर पर किया जा सकता है।

एक आदर्श कार्य–विवरण के लक्षण
(Characteristics of an Ideal Job-description)

एक आदर्श **कार्य–विवरण** की विशेषता या लक्षण निम्नलिखित हैं–

1. **सर्वप्रथम कार्य (Job) का शीर्षक निश्चित करना चाहिए**: कार्य के लिये मुख्य शीर्षक निश्चित करने के बाद कुछ उप–शीर्षक भी निश्चित करने होते हैं। उदाहरणार्थ लिपिक (Clerk) शीर्षक को ही लिजिये। क्लर्क का काम क्या है, इस कार्य के लिए कितनी योग्यता, अनुभव के आवश्यकता होगी, इसको निश्चित करने के लिए–इसके साथ उपशीर्षक भी जोड़ना होगा। जैसे कॉलेज के क्लर्क या पोस्ट आपिफस में कार्य करने वाला क्लर्क या बैंक में कार्य करने वाला क्लर्क। एक उपयुक्त शीर्षक व उप–शीर्षक निश्चित करने पर ही कार्य–विश्लेषण का कार्य सपफलतापूर्वक किया जा सकता है।
2. कार्य–विवरण पूर्ण निश्चित तिथि तक पूर्ण होना चाहिये।
3. कार्य–विवरण अध्कि विस्तृत न होकर सीमित तथा पूर्ण होना चाहिये।
4. प्राथामिक कार्यों का सारांश तैयार करते समय इस बात को ध्यान में रखा जाता कि अमुक कार्य दूसरे कार्यों से कैसे और किस सीमा तक अलग है।
5. कार्य–विश्लेषक को कार्य (Job) के लिये आवश्यक गुणों ;शारीरिक और बौ(िकद्ध को निश्चित कारके उसकी अभिपुष्टि ;सबूतद्ध करनी व चाहिए।

उपरोक्त गुणों के आधर पर तैयार किया गया कार्य–विवरण आइर्श होता है।

कार्य–विश्लेषण और कार्य–विवरण के लाभ या प्रयोग
(Uses of Advantages of job-analysis and Job-description)

कार्य–विश्लेषण और कार्य विवरण के निम्नलिखित उपयोग है–

;1द्ध संस्था के कर्मचारियों के चुनाव एवं नियुक्ति में सहायकऋ

;2द्ध साक्षात्कार (Interview) के कार्य में सहायकऋ

;3द्ध मजदूरी एवं वेतन की दरों में असमानताओं से बचने के लिएऋ

;4द्ध स्वास्थ्य सम्बन्धी आधरों पर व्यक्ति की सेवाओं (services) के निर्धरण में सहयोगऋ

;5द्ध ट्रांसपफर, पदोन्नति, पद अवनति तथा ग्रेड में वृ(आदि कार्यों में सहयोगऋ

;6द्ध घटिया कार्य करने वाले कर्मचारी पर अनुशासन सम्बन्धी कार्यवाही से सहायकऋ

;7द्ध शिकायत समाधन का आधर प्रस्तुत करता हैऋ

;8द्ध प्रशिक्षण कार्यक्रम में सहायकऋ

;9द्ध कार्य को पूरा करने की एक अच्छी जाँच उपलब्ध करता हैऋ

;10द्ध नए भर्ती किये गए कर्मचारियों को उनके कार्य के विषय में जानकारी कराता है।

कार्य विशिष्टता
(Job-Specification)

कार्य–अपेक्षा विवरण (Job-Specification)—कार्य–विवरण का सम्बन्ध जहाँ कार्य से होता है, वहाँ कार्य अपेक्षा–विवरण का सम्बन्ध कर्मचारी से होता है। यह विवरण कर्मचारी का प्रमाप निर्धरित करता है तथा यह स्पष्ट करता है कि कर्मचारी में क्या न्यूनतम योग्यताएँ होनी. चहिए। **एडविन बी. फ्रिलपो** के अनुसार–फ्कार्य अपेक्षा विवरण कार्य को उचित रूप से करने के लिए आवश्यक न्यूनतम स्वीकार्य मानवीय योग्यताओं का विवरण होता है।य् इसमें कर्मचारी से अपेक्षित मानसिक एवं शारीरिक योग्यताओं कस विस्तृत विवरण रहता है। चुनावकर्ता का चुनाव या भर्ती करते समय कार्य विवरण के साथ ही कार्य अपेक्षा विवरण का उपयोग करते हैं।

नमूना (Speciman)

कार्य अपेक्षा विवरण
(Job-Specification)

कार्य–शीर्षक...

आयु–सीमाएँ	**लिंग**	**विवाहित/अविवाहित**	**योग्यतायें** आवश्यक.......................

वांछनीय..........................

1. पूर्व अनुभव...
2. आवश्यक..
3. वांछनीय..

आवश्यक क्षमतायें – ;परिणाम स्पष्ट किये जाएँद्ध

1. **बुि(**...
2. **भाषण कला**...
3. **लेखन**...
4. **गणितीय**...
5. **प्रशासनीय**...
6. **सामाजिक**...
7. **पहल करना**...
8. **आकांक्षा**...
9. **नेतृत्व गुण** ....

डेल योडर (Dale Yoder) के अनुसार–फ्कार्य विशिष्टता एक निष्कर्ष के रूप में एक विशेष प्रकार का कार्य–विवरण है जो मानव संसाध्न (Human Resource) आवश्यकताओं पर बल देता है और विशेषरूप से कर्मचारियों का चुनाव और कार्य पर लगाने में सुविध के लिए तैयार किया जाता है।य् इस प्रकार कार्य–विशिष्टता के अर्न्तगत–अनुभव, निपुणता, विशेष रूचि (Aptitude)

तथा वार्तालाप के ढंग, शारीरिक आवश्यकता, सामान्य एवं विशेष शिक्षा से सम्बन्धित आवश्यकता के रूप में कर्मचारी के प्रकार का विस्तृत विवरण बतलाती है।

कार्यभार विश्लेषण एवं श्रम शक्ति विश्लेषण
(Work-Load Analysis and Work-Force Analysis)

कार्यभार विश्लेषण
(Work Load Analysis)

प्रत्येक कार्य में संभावित कार्य की मात्रा को स्पष्ट करने के लिए तथा स्टापफ नियुक्त करने के लिए अथवा मानवीय संसाध्नों की मात्रा निश्चित करने के लिए समय–अध्ययन (Time Study) एवं कार्यभार विश्लेषण के विभिन्न ढंग प्रयोग में लाये जाते हैं। इन अध्ययनों से कार्य को सरल बनाने में सुविध होती है। परिणामस्वरूप कर्मचारियों के कार्य को पूरा करने में सुधर करके कर्मचारियों की संख्या सीमित की जा सकती है। उत्पादन कार्यों के लिए आवश्यक श्रमिकों की संख्या को **गति अध्ययन** (Motion Study) और **समय अध्ययन** (Time Study) की प(तियों द्वारा ज्ञात किया जा सकता है।

गति अध्ययन
(Motion Study)

गति अध्ययन का अर्थ एवं परिभाषा (Meaning and Definition)

सर्वप्रथम **Úेन्क बी. गिलब्रेथ** (Gilbreth) तथा उनकी पत्नी ने वैज्ञानिक आधर पर कार्य के विभिन्न गति तत्वों पर प्रकाश डाला।

गिलब्रेथ ने गति अध्ययन को इस प्रकार परिभाषित किया है–

फगति अध्ययन, आवश्यक, गलत निर्देशन तथा अक्षम्य गतियों के परिणामस्वरूप होने वाले अपव्यय को दूर करने का विज्ञापन है। गति अध्ययन का उद्देश्य श्रम के कम से कम अपव्यय वाली प(ति को ज्ञात करना तथा उसका पालन करना है।य गिलब्रेथ ने प्रत्येक कार्य में निहित शारीरिक गतियों पर जोर डाला था जिन्हें उन गतिविध्यिों को गति के 17 आधरभूत तत्त्वों में विभाजित किया, जिन्हें उसने Therbligs का नाम दिया था। यह शब्द उसके नाम Gilberth का उल्टा है। ये तत्त्व निम्न हैं–

1. खोज,
2. चुनाव,
3. खाली हाथों की गतियाँ
4. समझना,
5. कुछ वस्तु हाथ में लेकर गतियाँ देखना,
6. पकड़ना,
7. भार छोड़ना,
8. कोई छोड़ना,
9. उसी की पहले की स्थिति,
10. एकीकरण,
11. निरीक्षण,
12. प्रयोग,
13. भाग लेना,

14. दूर न की जाने वाली देरी,
15. दूर की जाने वाली देरी,
16. योजना,
17. थकान को दूर करने के लिए आराम।

गति अध्ययन के सि(ान्त (Principles of Study of Motion)

1. दोनों हाथों की गतियाँ एक प्रारम्भ और एक साथ समाप्त होनी चाहिए।
2. दोनों हाथों का उपयोग किया जाना चाहिए।
3. हाथों की गतियाँ विपरीत दिशा में समान रूप से एक समान होनी चाहिए।
4. कार्य की व्यवस्था इस प्रकार से की जानी चाहिए जिससे कि उसका निष्पादन स्वाभाविक गतियों एवं सरलता से किया जा सके।
5. कम से कम शारीरिक गति करनी चाहिए।
6. वस्तुएं एवं औजार श्रमिक के पास रखे होने चाहिए जिससे कि वह उन्हें आसानी से उठा सके।
7. उपयोग के स्थान के पास ही पदार्थों की सुपुर्दगी के लिए भण्डार या अन्य तरीकों का उपयोग किया जाना चाहिए।
8. भारी माल के लादने तथा उतारने का कार्य मशीनों के द्वारा होना चाहिए।
9. कार्य करने का स्थान ऐसा होना चाहिए जहाँ पर्याप्त मात्रा में प्रकाश की व्यवस्था हो तथा खड़े होने और बैठने का भी प्रबन्ध हो।
10. काम के औजारों को सजाकर रखना चाहिए जिससे सरलता से उनका उपयोग किया जा सके।

गति अध्ययन के तरीके (Tools of Motion Study)

1. विध्ि चार्ट बनाकर (By Making Process-chart)
2. गति अध्ययन के सि(ातों को अपनाकर (By adopting the Principle of Motion Study)
3. सुझाव सम्बन्धी प्रश्नों को प्रोत्साहन देकर (By Suggestive Questions)
4. सूक्ष्म गति अध्ययन के द्वारा (By Micro-motion Study)
5. **थर्बलिग** (Therblig Analysis) यानि गति अध्ययन के 17 आधारभूत तत्त्वों को उसने Therblig की संज्ञा दी है। यह शब्द उनके नाम का उल्टा है।

गति अध्ययन के लाभ (Merits of Motion Study)

1. गति अध्ययन अनावश्यक, अनुपयोगी एवं थकाने वाली गतियों को दूर करता है्ऋ
2. यह कार्य को शीघ्रतम और सर्वोत्तम बनाता है। यह अच्छे कार्य आबंटन पर जोर देता है तथा अच्छे कार्य के स्थान, दशाओं और औजारों की व्यवस्था पर बल देता है।
3. प्रक्रियाओं के वैज्ञानिक संचालन के नियोजन में सहायता करता है।
4. अन्ततोगत्वा उत्पादकता बढ़ाता है और लागत को कम करता है।

गति अध्ययन के दोष (Demerits of Motion Study)

1. इसके अर्न्तगत ध्न तथा समय का अपव्यय बहुत होता है।
2. श्रमिकों द्वारा विरोध् होता है क्योंकि वे इसको ठीक से नहीं समझ पाए हैं।

समय अध्ययन

(Time Study)

समय अध्ययन, कार्यमापन की आधरभूत तकनीक है। समय अध्ययन के अर्न्तगत कार्य में लगने वाले समय का सावधनी से अध्ययन किया जाता है।

परिभाषायें (Definitions)

1. एपफ.जी.मूरे (F.G.Moore) के अनुसार–फ्समय अध्ययन एक ऐसा तरीका है जिसके द्वारा उत्पादन के लक्ष्य प्रत्येक प्रक्रिया को समय में बाँध्कर निर्धरित किये जाते हैं।य

   (Time Study is a produce to set production standards by timing operations)

2. **टेलर** के अनुसार–फ्समय अध्ययन एक ऐसा सावधनी से किया गया समय का अध्ययन हैं, जिसमें कार्य विशेष पूरा होना चाहिए।य

   (Time study involves a careful study of time, in which work ought to be done)

3. ब्रिटिश प्रमाप संस्था (British Standard Institution) के अनुसार–फ्यह विशिष्ट दशाओं के अर्न्तगत किए गए एक विशेष कार्य के तत्त्वों के लिए समय तथा कार्य करने की दरों (Rates) का रिकार्ड तथा निश्चित निष्पादन स्तर पर कार्य करने के लिए आवश्यक समय पता करने के लिए आँकड़ों का विश्लेषण करने की **कार्य मापन** तकनीक है।य

   (A work measurement technique for recording the time and tables of working for the elements of a specified job carried out under specified conditions, and for analysing the data so as to obtain the time necessary for carrying out the job at a defined level of performance.)

समय अध्ययन की प्रणाली (Time Study Procedure) (Tylor)

समय अध्ययन की प्रणाली को 5 भागों में बाँटा जा सकता है–

1. निर्धरित सूची पर कार्य एवं श्रमिक के विषय में, जिसका समय अध्ययन करना है, ये सम्बन्ध्ति सूचना प्राप्त करना और उसे नोट करता है।
2. कार्य को निश्चित मध्यान्तर बिन्दु सहित क्रिया–तत्त्वों में बाँटना और उनको अवलोकन सूची में लिखना।
3. प्रत्येक क्रिया–तत्त्व के लिए स्टॉप वाच को देखकर समय लिखना।
4. परिचालक के कार्यकरण की दर निर्धरित करना (Rating of Operator's Performanc e)
5. कार्य को पूरा करने के लिए प्रमापित समय को निश्चित करना।

लाभ (Advantages)

1. प्ररेणात्मक मजदूरी भुगतान की विध्यिों को बल।
2. घण्टों के अनुसार कार्य करने वालों के लिए सहायक।
3. उत्पादन लागत निकालने में सहायक।
4. श्रमिकों की संख्या तथा उनके कार्य के बीच संतुलन स्थापित करने में सहायक।

दोष (Disadvanges)

1. वैज्ञानिक आधर के स्थान पर व्यक्तिगत निर्णय का हावी होना।
2. यह वस्तु की किस्म पर ध्यान न देकर वस्तु की मात्रा पर ध्यान देता है।
3. इसमें गणितीय शु(ता का अभाव है।

श्रम शक्ति विश्लेषण
(Work-Force Analysis)

अध्किांश औद्योगिक उपक्रमों में अनुपस्थिति (Absenteeism) और **श्रम परिवर्तन** (Labour Turnover) कार्य के लिये निर्धरित श्रम संख्या में कमी करते हैं। इसलिए **श्रम शक्ति विश्लेषण** का अध्ययन, कार्यभार विश्लेषण के साथ आवश्यक है। **श्रम शक्ति विश्लेषण** (Work-Force Analysis) के द्वारा दैनिक श्रम शक्ति आवश्यकताओं का निर्धरिण किया जाता है।

कृत्य—मूल्यांकन
(Job-Evaluation)

औद्योगिक क्षेत्र में सार्वजनिक एवं कर्मचारी के मध्य हुए प्रत्येक अनुबन्ध चाहे वह मौखिक हो या लिखित, का सार यह होता है कि कर्मचारी अपने द्वारा प्रदान की गई सेवाओं के लिए कुछ न कुछ प्राप्त करता है अर्थात् कर्मचारी को क्षतिपूर्ण पाने का अध्किार होता है। यहाँ प्रश्न यह उत्पन्न होता है कि कर्मचारी को क्षतिपूर्ण कितना दिया जाये और किस आधर पर दिया जाये? क्या कर्मचारी को उत्पादित इकाइयों के आधर पर क्षतिपूर्ण दिया जाए या उत्पादन कार्य में लगे समय के आधर पर या अन्य किसी आधर पर? इस प्रश्न का उत्तर हमें कार्य मूल्यांकन से प्राप्त होता है। कार्य मूल्यांकन सामान्यतः अपने में कृत्य कर्त्तव्यों (Job – duties) का विश्लेषण और कृत्यों को उनके महत्त्व या भुगतान के अनुसार क्रमब(करना सम्मिलित करता है। अतः यह कहा जा सकता है कि कार्य—मूल्यांकन कर्मचारियों को प्रदान किये जरने वाले क्षतिपूर्ण के निर्धरण का एक अच्छा मापदण्ड या आधर है।

कर्मचाीरियों को दिये जाने वाले क्षतिपूर्ण के निर्धरण की इस विध्ि ;कार्य—मूल्यांकनद्ध का प्रादुर्भाव बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भिक वर्षों में हुआ है। इस विध्ि के प्रादुर्भाव एवं विकास का श्रेय विश्व के ध्नी राष्ट्र अमेरिका को है। सन् 1910 में वहाँ की Common Wealth Edison Company में सर्वप्रथम इस विध्ि का प्रयोग किया गया। इसके पश्चात् सन् 1922 तक अमेरिका की सभी रबड़ कम्पनियों और सन् 1930 तक वृहत् (Jobs) आकार की बिजली कम्पनियों में कर्मचारियों के क्षतिपूर्ण के निर्धरण हेतु इस विध्ि का प्रयोग किया जाने लगा। धीरे—धीरे सभी राष्ट्रों ने इस विध्ि की महत्ता को स्वीकार किया। पफलतः द्वितीय विश्व यु(के समय इसका तीव्र गति से विकास हुआ। लेकिन अमेरिका में जिन कम्पनियों में इसे अपनाया गया उनमें से कुछ कम्पनियों में यह विध्ि लाभप्रद साबित न हुई। यह बात इससे स्पष्ट हो जाती है कि सन् 1947 में Princeton University द्वारा एक सर्वेक्षण किया गया जिससे यह स्पष्ट हुआ है कि 20 से 30 प्रतिशत कम्पनियाँ जो इस विध्ि का अध्किाध्कि प्रयोग किया जाने लगा। सन् 1960 में वहाँ के प्रबन्ध्—सलाहकारों ने एक सर्वेक्षण के दौरान यह पाया कि जो वृहत् आकार की कम्पनियाँ इसका प्रयोग कर रही हैं उनमें से केवल 3 प्रतिशत ही इसे अनुपयोगी समझती हैं। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि इस विध्ि का प्रादुर्भाव एवं गति से विकास अमेरिका में ही हुआ है। हमारे देश में इस विध्ि का विकास अभी अपनी बाल्यावस्था में है पिफर भी उनके औद्योगिक संस्थाओं ने क्षतिपूर्ण के निर्धरण के लिए इस विध्ि का प्रयोग किया है।

कृत्य मूल्यांकन का अर्थ
(Meaning of Job Evaluation)

कृत्य—मूल्यांकन से आशय एक व्यवस्थित विध्ि या प्रक्रिया से है जिसके द्वारा अन्य सम्बन्ध्ति कृत्यों की तुलना में किसी कृत्य का मूल्यांकन किया जाता है। वृहत् आकार की व्यावसायिक संस्थाओं में अनेक कार्य या कृत्य ऐसे होते हैं जिनका निष्पादन विभिन्न व्यक्तिओं द्वारा किया जाता है। ऐसी स्थिति में प्रत्येक कार्य का मूल्यांकन करना इसलिए आवश्यक हो जाता है कि उस कार्य को सम्पन्न करने वाले व्यक्ति के क्षतिपूर्ण का निर्धरण किया जा सके। इस प्रकार किसी कार्य का मुद्रा के सन्दर्भ में अन्य कार्यों की तुलना में क्या क्षतिपूर्ण होना चाहिए, इसके निर्धरण की विध्ि या प्रक्रिया ही कृत्य—मूल्यांकन कहलाती है। इसी आधर पर हमें यह सुनाई देता है कि राम को मोहन से अध्कि क्षतिपूर्ण मिलना चाहिए क्योंकि राम के कार्यों में मोहन के कार्य की तुलना में अध्कि शारीरिक श्रम या अध्कि बु(ि की आवश्यकता होती है। इसी तरह कभी—कभी यह भी सुनने को मिलता है कि कोयले की खान में कार्य करने वाले व्यक्ति को एक गली में एक प्राध्यापक को एक

अध्यापक से अध्कि क्षतिपूर्ण मिलना चाहिए। इस प्रकार ये सभी उदाहरण सम्बन्ध्ति कार्यों की तुलना में किसी कार्य का मूल्यांकन करके सम्बन्ध्ति व्यक्ति के क्षतिपूर्ण के निर्धरण पर बल देते हैं।

कृत्य–मूल्यांकन की परिभाषाएँ
(Definition of Job Evaluation)

कार्य–मूल्यांकन की कुछ प्रमुख परिभाषाएँ इस प्रकार हैः–

1. **जॉन ए. शुबिन** (John A. Shubin) के अनुसार, 'कृत्य–मूल्यांकन मजदूरी और वेतन अन्तरों के निर्धरण के उद्देश्य से ध्न्धें (Occupations) का उनके सामान्य घटकों ;कुशलता, प्रशिक्षण, प्रयासद्ध के आधर पर सापेक्षिक मूल्य और महत्त्व के मापन की एक व्यवस्थित प(ति है। कृत्य– मूल्यांकन ध्न्ध्े से सम्बन्ध्ति है, कर्मचारी द्वारा धरण किये गये पद ये नहीं।'[8]
2. **किम्बाल एवं किम्बाल** (Kimball and Kimball) के अनुसार, फ्कृत्य मूल्यांकन किसी संयंत्र से प्रत्येक कृत्य का सापेक्षिक मूल्य निश्चित करने तथा ऐसे कार्य के लिए क्या उचित आधरभूत मजदूरी होनी चाहिए, इसके लिए किया गया एक प्रयास है।य[9]
3. **अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संघ** (I.L.O.) के अध्ययन के अनुसार, फ्एक विशेष कार्य को सामान्य कर्मचारी से की जाने वाली अपेक्षाओं को, सम्बन्ध्ति कर्मचारी की वैयक्तिक योग्यता एवं प्रगति को ध्यान में रखे बिना, निर्धरित करने एवं एक दूसरे की तुलना करने का प्रत्यन करना ही कार्य मूल्यांकन है।य[10]
4. **डेल योडर** (Dale Yoder) के अनुसार, कृत्य–मूल्यांकन एक विध्ि है जो संगठन में तथा इसके समान संगठनों में विभिन्न कार्यों के तुलनात्मक मूल्य का माप करने में एक दृढ़ता प्रदान करती है। यह आवश्यकीय तौर पर एक कार्य अंकन प्रक्रिया है जो कर्मचारियों के अंकन से भिन्न है।य[11]
5. **बीथल, अटवाटर, स्मिथ एवं स्टेकमैन** (Bethel, Atwater, Smith and Stackman) के अनुसार, फ्कृत्य–मूल्यांकन में प्रमापित शब्दावली में स्पष्ट किये गये कृत कर्त्तव्यों के विश्लेषण के साथ–साथ कृत्यों को उनके महत्त्व या भुगतान के क्रम में व्यवस्थित करना सम्मिलित है।[12]
6. **विलियन आर. स्प्रीगल** (William R. Spriegel) के अनुसार, फ्कृत्य–मूल्यांकन एक तकनीक है जिसके द्वारा एक व्यवसाय या उद्योग में एक कृत्य की अन्य कृत्यों से तुलना तथा श्रेणीयन या अंकन किया जाता है जिससे यह विदित हो जाये कि प्रत्येक कार्य के लिए किसी योग्यता वाले श्रमिक की आवश्यकता है।य
7. **एम. सी. शुक्ला** (M.C.Shukla) के अनुसार, फ्कृत्य–मूल्यांकन प्रत्येक कृत्य का सापेक्षित मूल्य निर्धरण करने के लिए विशिष्ट नियोजित प(तियों के अनुसार कृत्यों का अकंन करना है।य[13]

उपयुक्त विवेचन से स्पष्ट है कि कृत्य मुल्यांकन किसी संगठन में प्रत्येक कृत्य की अन्य कृत्यों के सम्बन्ध् में उपयोगिता का मूल्यांकन करने की एक व्यवस्था विध्ि है। इस प्रकार कृत्य–मूल्यांकन कृत्यों के अंकन (Rates) की विध्ि है न कि कार्य पर लगे स्त्री–पुरूषों के अंकन की जो कि कर्मचारी अंकन (Employee Rating) का कार्य है।

---

8. "Job-evaluation (or job rating) is a systematic procedure for meaning the relative value and importance of occupations on the basis of their common factor (skill, training, effort) for the purpose of determining wage and salary differentials, job evaltions deals with the occupation and not with the employee holding the position." **-John A. Shubin**
9. "Job-evaluation repersents an effort to determine what the fair basic wages for such a job should be." **–Kimbal and Kimbal: Principle of Industrial Organisation, p. 665.**
10. "Job-evaluation may be defined simply as an attempt to determine and compare demands which the normal performance of particular jobs makes a normal worker without taking into account of the individual abilities or performance of the workers concerned." **–I.L.O., job Evaluation : Studies and Reports, New Series No. 56.**
11. "Job-evaluation is a practice which seeks to provide a degree of objectivity in measuring the comparative value of jobs within an organisation and among similar organisations. It is essentially a job rating process, not unlike the rating of employees." **–Dale Yoder**
12. "Job-evaluation includes an analysis of job duties expressed in standard terminology as well as arraging the Jobs in order of importance or payment." **–Geroge H.E. Smith & Harvey A. Stackman Jr.**
13. Job-evaluation is the rating of Jobs according to specific planned procedure in order to determine the relative worth of each job." **–M.C. Shukla**

कृत्य–मूल्यांकन के उद्देश्य
(Purpose of Job-Evaluation)

पिफल्पि्पो (Flippo) ने पुस्तक 'Principle of Personnel Management' में लिखा है कि, कृत्य मूल्याकन प्रक्रिया का मुख्य उद्देश्य मजदूरी और वेतन में आन्तरिक एवं बाह्य अनुकूलता (Consistency) प्राप्त करना है।

अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (International Labour Organisation) द्वारा किये गए एक अध्ययन के अनुसार कृत्य मूल्यांकन के दो प्रमुख उद्देश्य हैं – प्रथम विवेकपूर्ण तथ्यों के आधर पर कार्य का सापेक्षिक मूल्य निर्धरित करना और द्वितीय समान स्तर नर समान कृत्यों के लिए मजदूरी का निर्धरण करना।

लाऊडन एवं न्यूटन (Lawdon and Neton) के अनुसार कृत्य मूल्यांकन के प्रमुख उद्देश्य निम्न हैः–

1. संयन्त्र के प्रत्येक कार्य का सही एवं अव्यक्तिगत विवरण प्राप्त करना एवं उनका अनुरक्षण (Ma int ence) करना।
2. संयन्त्र में सभी कार्यों का सापेक्षित मूल्यांकन करना एवं उसे निचिश्त करने के लिए प्रमापित कार्य विध् (Standard Procedure) का प्रयोग करना।
3. प्रत्येक कार्य के लिए वेतन दर निर्धरित करना, तुलनात्मक दृष्टि ये सभी कर्मचारियों को उचित मजदूरी प्रदान करना तथा प्रेरणात्मक उत्पादकीय एवं अध्लिाभांश योजनाओं को सदृढ़ आधर पर चलना।
4. समस्त योग्य व्यक्तियों को समान कार्य के लिए समान वेतन देने की व्यवस्था करना तथा विभिन्न गुणों वाले कार्यों के लिए विभिन्न वेतन दर निर्धरण करना।
5. सभी कर्मचारियों की पदोन्नति, स्थानान्तरण आदि के लिए उपयुक्त नीति बनाना।
6. तथ्यो के आधर पर मजदूरी की समान दर निर्धरित करने संयन्त्र में कार्यरत सभी कर्मचारियों को संतुष्ट करना।
7. चयन, प्रशिक्षण एवं इसी तरह की अन्य समस्याओं के समाधन हेतु आवश्यक सूचनायें उपलब्ध् करना।
8. कार्य में परिवर्तन होने पर कार्य–दर में परिवर्तन करने के लिए आवश्यक कार्य विध् तैयार करना।

कार्य मूल्यांकन के अन्य उद्देश्य इस प्रकार हैः–

1. प्रत्येक कृत्य का अन्य कृत्यों के सम्बन्ध् में मूल्यांकन करना।
2. प्रत्येक कृत्य के लिए न्यायोजित वेतन या मजदूरी का निर्धरण करना।
3. वेतन एवं मजदूरी में व्याप्त असमानताओं को निपटारा करना।
4. कर्मचारियों के आपसी मतभेदों का निपटारा करना।
5. सभी कर्मचारियों के विकास के लिए न्यायोचित विचार का विकास करना।
6. संस्था में प्रत्येक कृत्य का सापेक्षिक मूल्य निर्धरण करने हेतु एक प्रमापित प(ति का विकास करना।
7. कर्मचारियों की पदोन्नति की रेखाएँ निर्धरित करने हेतु आवश्यक सूचनाएँ प्रदान करना।
8. वेतन एवं मजदूरी प्रशासन के लिए एक व्यापक एवं निश्चित योजना तैयार करना।
9. कर्मचारियों के आवागमन (Turn – over) में कमी करना।
10. संस्था में प्रत्येक पद के लिए न्यूनतम एवं अध्कितम पारिश्रमिक निर्धरण करना।
11. मजदूरी–स्तरों में प्रमापीकरण को प्रभावशाली बनाये रखना।
12. कार्य के विभिन्न घटकों को समान महत्त्व प्रदान करना।
13. समान कार्य हेतु अन्य संस्थाओं एवं स्थानों पर दिये जाने वाले वेतन की तुलना करने के लिए तुलनात्मक आधर निर्धरित करना।

14. नवीन कृत्यों का सापेक्षिक मूल्य ज्ञात करना।
15. कर्मचारियों के मनोबल को विकसित करना।

कृत्य मूल्यांकन के सि(ान्त
(Principle of Job Evaluation)

ए.एल. क्रेस[1] (A. L. Kress) के अनुसार, कार्य मूल्यांकन के प्रमुख सि(ान्त निम्न हैंः–

1. कार्य का मूल्यांकन किया जाना चाहिए, मनुष्य का नहीं। प्रत्येक तत्त्व का मूल्यांकन इस आधर पर किया जाना चाहिए कि वह कार्य के सपफली निष्पादन में किस तरह सहायक है।
2. मूल्यांकन के लिए चयनित तत्त्व संख्या में कम होने चाहिए और वे विश्लेषण योग्य होने चाहिए।
3. तत्त्वों का चयन भलि–भाति किया जाना चाहिए और उनकी स्पष्ट व्याख्या होनी चाहिए।
4. कृत्य–मूल्यांकन हेतु तैयार की गई प्रत्येक योजना से निरीक्षक, पफोरमैन एवं कर्मचारी अवगत होने चहिए।
5. पफोरमैन को अपने विभाग के कृत्य मूल्यांकन कार्य में हिस्सा लेना चाहिए।
6. कृत्य–मूल्यांकन के लिए कर्मचारियों का अध्कितम सहयोग प्राप्त करने के लिए यह आवश्यक है कि उन्हें सारी सोजना भली प्रकार समझने एवं विचार विमर्श के लिए अवसर दिया जाए।
7. कार्य मूल्यांकन के सम्बन्ध् में पफोरमैन एवं कर्मचारियों से वार्ता करते समय मौद्रिक मूल्यों सम्बन्धी बातें नहीं करनी चाहिए, केवल अंक मूल्य एवं गूण मूल्य के बारे में ही बातचीत करनी चाहिए।
8. बहुत आध्कि व्यावसायिक मजदूरियाँ निर्धरित नहीं करनी चाहिए।

कार्य मूल्यांकन की विध्याँ
(Methods of Job-Evaluation)

मजदूरी एवं वेतन प्रशासन के अर्न्तगत किसी कृत्य के क्षतिपूरण का निर्धरण उसके मूल्यांकन पर आधरित होता हैं। कृत्य मूल्यांकन प्रक्रिया में मुख्यतः पफोरमैन और औद्योगिक–सम्बन्ध् विभाग के एक प्रतिनिध् िजिसे वेतन प्रशासक कहा जा सकता है, को सम्मिलित किया जाता है। इस प्रकार कृत्य मूल्यांकन हेतू एक समिति का गठन किया जाता हैं कुछ उपक्रमों में इस समिति में कर्मचारियों के प्रतिनिध् िको सम्मिलित किया जाता है। इस समिति के सदस्य योग्य एवं अनुभवी तो होते है हैं लेकिन आवश्यकता पड़ने पर विशेषज्ञों से सलाह भी लेते हैं। कृत्य मूल्यांकन की प्रमुख विध्याँ निम्न हैं–

बीथल, अटावाटर, स्मिथ एवं स्टेकमैन (Bethel, Atwater, Smith and Stackman) ने कृत्य मूल्यांकन की विध्यिों का वर्गीकरण इस प्रकार किया हैः–

(a) गुण–सम्बन्धी विध्याँ (Qualitative Methods)
   1. सामान्य श्रेणी विभाजन विध् ि(Simple Ranking Method)
   2. कार्य वर्गीकरण विध् ि(Job Classification Method)

(b) परिमाण सम्बन्धी विध्याँ (Quantitative Methods)
   1. घटक तुलना विध् ि(Factor Comparison Method)
   2. बिन्दु विध् ि(Point System or Method)

स्टेनले वेन्स (Stanley Vance) ने अपनी पुस्तक "Industrial Administration" में कृत्य मूल्यांकन विध्यिों का वर्गीकरण निम्न प्रकार किया हैः–

---

1. A.L. Kress: Job Rating. Industrial Realtions Bulletin, No. 34 quoted by Alford and beatty in Principle of Industrial management, p.9.

(a) अपरिणात्मक प(तियाँ (Non-Quantitative Methods)

1. सामान्य श्रेणी विभाजन विध्ि

2. बिन्दु विध्ि

(b) परिमाणात्मक प(तियों (Quantitative Methods)

1. घटक तुलना विध्ि

2. बिन्दु विध्ि

उपर्युक्त विवचेन से स्पष्ट है कि कृत्य मूल्यांकन की निम्न विध्यिाँ प्रमुख हैंः–

(a) श्रेणी–विभाजन विध्ि।

(b) वर्गीकरण विध्ि।

(c) घटक तुलना विध्ि।

(d) बिन्दु विध्ि।

(A) श्रेणी विभाजन विध्ि

(Ranking Method or Grading Method or Position to Position comparison Method or Job to Job Comparison Method)

कृत्य मूल्यांकन की यह अति प्राचीन एवं सरल विध्ि है। इस विध्ि के अर्न्तगत सर्वप्रथम कृत्य का विश्लेषण किया जाता है और पिफर कृत्य विवरण तैयार किये जाते हैं। इसके पश्चात् कार्य मूल्यांकन का कार्य प्रारम्भ होता है। कृत्य विवरण की इस विध्ि के अर्न्तगत विभिन्न कृत्यों को उनके महत्त्व एवं उपयोगिता के आधर पर क्रमशः श्रेणीब(किया जाता है अर्थात् यह विध्ि किसी संगठन में कृत्यों को कुछ क्रम में व्यवस्थित करती है जैसे सबसे कठिन से सबसे सरल, सबसे अध्कि जोखिमपूर्ण से सबसे कम जोखिमपूर्ण रूप में। इस प्रकार यह विध्ि कृत्यों के मूल्य का मापन नही करती, यह तो केवल उनका श्रेणीयन करती है। यह कार्य किसी योग्यता प्राप्त विश्लेषणकर्ता या इस उद्देश्य के लिए गठित समिति द्वारा किया जाता है। किसी भी कृत्य का श्रेणीयन करते समय प्रो. किम्बाल एवं किम्बाल (Kimball & Kimball) के अनुसार निम्न बातों को ध्यान में रखा जाना चाहिएः–

1. कार्य की मात्रा (Volume of Work)
2. कार्य की कठिनाई (Difficulty of Work)
3. कार्य की नीरसता (Monotomy of Work)
4. उत्तरदायित्त्व की आवश्यकता (Responsibility Required)
5. पर्यवेक्षण की आवश्यकता (Supervision Required)
6. ज्ञान एवं अनुभव की आवश्यकता (Knowledge and Experience Required)
7. कार्य की दशायें (Working Conditions)

इस विध्ि के अर्न्तगत सर्वप्रथम विभिन्न विभागों के कृत्यों का श्रेणीयन किया जाता है और पिफर समस्त उपक्रम के कृत्यों का उनकी प्रकृति एवं आवश्यकताओं के अनुसार श्रेणीयन किया जाता है।

लाभ दोष (Advantages and Disadvantages)

इस विध्ि के प्रमुख लाभ निम्न हैंः–

(1) यह विध्ि छोटे आकार के उपक्रमों के लिए अध्कि उपयुक्त है।

(2) इस विध्ि के द्वारा कृत्य मूल्यांकन करना सरल होता है।

(3) यह विध् िकर्मचारियों द्वारा शीघ्र समझने योग्य है।

(4) इस विध् िद्वारा कृत्य मूल्यांकन करने में बहुत ही कम समय लगता हैं। अतः इसमें समय की पर्याप्त बचत होती है। इस विध् िके प्रर्याप्त बचत होती है।

इस विध् िके प्रमुख दोष हैंः–

;1द्ध इस विध् िमें कृत्यों का श्रेणीयन किसी वैज्ञानिक तरीके के आधर पर नहीं किया जाता। अतः इसमें अशु(ता रहने की अध्कि सम्भावना रहती है।

;2द्ध इस विध् िमें कृत्यों का श्रेणी विभाजन करते समय अशु(ता रहने की सम्भावना तो रहती है, साथ में श्रेणी विभाजन में व्यक्तिगत पक्षपात का भय भी बना रहता हैं इसका कारण यह है कि इसके निर्णय वैज्ञानिक तरीके पर आधरित न होकर व्यक्तिगत निर्णय पर आधरित होते हैं।

;3द्ध इसके निर्णय व्यक्तिगत निर्णय पर आधरित होने के कारण सही व्यक्तिगत जानकारी के अभाव में कार्य का मूल्यांकन सही नहीं किया जा सकता।

;4द्ध चूंकि इस विध् िमें व्यक्तिगत पक्षपात का भय बना रहता है, अतः कर्मचारी इसका विरोधी करते हैं, पफलस्वरूप अनेक औद्योगिक संघर्षों को जन्म मिलता है।

(B) वर्गीकरण विध्ि

(Classification Method)

कृत्य मूल्यांकन की यह विध् िभी श्रेणी विभाजन विध् िके समान अति प्राचीन है। श्रेणी विभाजन विध् िके दोषों को दूर करने के लिए इस विध् िका प्रादुर्भाव एवं विकास हुआ। इस विध् िके अर्न्तगत सभी कृत्यों की तुलना अनुभव एवं साधरण विवेक पर आधरित होती है। इस विध् िमें सर्वप्रथम प्रत्येक कृत्य का विवरण लिखा जाता है और पिफर प्रत्येक कृत्य का वर्ग निर्धरण किया जाता है। सापेक्षिक मूल्य के निर्धरण का कार्य समिति द्वारा किया जाता है। इसके पश्चात् प्रत्येक कृत्य का वर्ग निर्धरण किया जाता है। प्रत्येक वर्ग के अर्न्तगत आने वाले कृत्यों की सामान्य अपेक्षायें निश्चित की जाती हैं और उनके लिए दिये जाने वाले न्यूनतम एवं अध्कितम क्षतिपूर्ण का निर्धरण भी कर दिया जाता हैं इस विध् िके अनुसार यह जाना जाता है किसी विशेष कृत्य के लिए कितना लिपिक कार्य, कितना प्रशासकीय कार्य और कितना क्रियात्मक कार्य आवश्यक है। इसके पश्चात् कार्यों को विभिन्न वर्गों में बाँट कर उनका क्षतिपूर्ण निर्धरित कर दिया जाता हैं उदाहरण के लिए निम्न वर्ग के कार्मिकों, लिपिकों, सहायक पदाध्किारियों एवं उच्च पदाध्किारियों को चतुर्थ, तृतीय, द्वितीय एवं प्रथम वर्ग के कर्मचारियों में बाँट दिया जाता है तथा प्रत्येक श्रेणी या वर्ग के लिए क्षतिपूर्ण की क्रमिक दरें निर्धरित कर दी जाती हैं।

हमारे देश में इस विध् िका प्रयोग अध्कितर सरकारी कार्यालयों एवं विभागों में किया जाता है। वृहत्–आकार के औद्योगिक प्रतिष्ठानों में इसका प्रयोग यदा–कदा ही किया जाता है अमेरिका में इस विध् िका प्रयोग असैनिक सेवाओं (Civil Services) के लिए जाने वाले क्षतिपूर्ण के निर्धरण करने हेतु किया गया। इस उद्देश्य के लिए कुल 28 श्रेणीयां बनाई गई। इनमें से 18 श्रेणियाँ GS(General Schedule) तथा 10 श्रेणियाँ CPC (Craft, Protective and Custodial) के लिए बनाई गई। ये श्रेणियाँ GS, CPC के मध्य अन्तर्हस्तान्तरण योग्य न थी। अमेरिका के अतिरिक्त अनेक देशों ने भी इस विध् िका प्रयोग किया और असैनिक सेवा के लिए दिये जाने वाले क्षतिपूर्ण का निर्धरण करने हेतु अनेक श्रेणियों का निर्धरण किया।

लाभ दोष (Advantages and Disadvantages)

इस विध् िके प्रमुख लाभ निम्न हैः–

;1द्ध यह विध् िसरकारी कार्यलायों एवं विभागों के लिए अध्कि उपयुक्त है।

;2द्ध इस विध् िकी स्थापना सुगमता से की जा सकती है।

;3द्ध यह विध् िप्राचीन एवं सरल है।

;4द्ध इस विध् िमें प्रत्येक कृत्य की कठिनाईयों का सही मूल्यांकन सम्भव होता है।

इस विध् िके प्रमुख दोष निम्न हैं:–

;1द्ध यह विध् िके अन्तर्गत वृहत्–आकार वाले औद्योगिक प्रतिष्ठानों के लिए सर्वथा अनुपयुकत है।

;2द्ध यह विध् िकृत्य की अपेक्षा कृत्य पर कार्य करने वाला व्यक्ति का अध्कि ध्यान रखती है।

;3द्ध इस विध् िके अन्तर्गत विभिन्न कार्यों पर विभिन्न वर्गों में रखने सम्बन्धी प(ति का आधर न्यायोचित नहीं हैं। पफलतः कर्मचारी ओर प्रबन्ध्क दोनों मध्य तनावपूर्ण स्थिति रहने की अध्कि सम्भावना रहती है।

घटक तुलना विध्

(Factor Comparison Method)

कृत्य मूल्यांकन की इस विध् िका अविष्कार यूजीन बेंग ;Eugene Benge) ने सन् 1928 में किया था। यह विध् िकृत्य मूल्यांकन की अन्य विध्यिों की तुलना में अध्कि श्रेष्ठ एवं शु(मानी जाती है। इस विध् िको फ्बेंग योजनाय् (Benge Plan) के नाम से भी जाता है। यह विध् िइस सि(ान्त पर आधरित है कि प्रत्येक कृत्य में कुछ घटक होते हैं जो कुछ अपेक्षाओं एवं परिस्थितियों पर निर्भर करते हैं तथा इसका ;कृत्यद्ध क्षतिपूर्ण इन घटकों के आधर पर निर्धरित किया जाना चाहिए। अतः इस विध् िका प्रथम चरण महत्त्वपूर्ण घटकों की जानकारी करना होता हैं। ये घटक एक विशिष्ट संगठन के सभी कृत्यों में कम या अध्कि मात्रा में पाये जाते हैं। सामान्यतः प्रमुख घटक निम्न हैं:–

उत्तरदायित्व

(Responsibility)

इस घटक के अन्र्तगत इस बात पर ध्यान दिया जाता है कि किसी कृत्य को पूरा करने में कितनी उत्तरदायित्व की आवश्यकता होगी। इस घटक के अन्र्तगत निम्न के सम्बन्ध में दायित्व सम्मिलित होता है:–

(a) अन्य के कार्यों के लिए,

(b) सामग्री या उत्पाद के लिए,

(c) यन्त्र या प्रक्रिया के लिए,

(d) अन्य की सुरक्षा के लिए,

चातुर्य

(Skill)

इस घटक में इस बात पर ध्यान दिया जाता है कि किसी कृत्य को पूरा करने के लिए कितने चातुर्य की आवश्यकता होगी। इसमें निम्न को सम्मिलित किया जाता है:–

(a) शिक्षा की आवश्यकता,

(b) अनुभव की आवश्यकता,

(c) वांछनीय पहलपन और प्रतिभा,

प्रयास

(Effort)

इस घटक में बात पर बल दिया जाता है कि किसी कृत्य को सम्पन्न करने के लिए कितने शारीरिक और मानसिक प्रयासों की आवश्यकता होगी। इस घटक में निम्न को सम्मिलित किया जाता है।

(a) भौतिक कार्य की मात्रा में निहित,

(b) मानासिक प्रयास में निहित,

कार्य की दशाएँ
(Working Conditions)

(a) कृत्य के खतरों या संकटों,

(b) प्रतिकूल या अवस्थ कार्य दशाओं,

इस विध् िका आगामी चरण दस, पन्द्रह या बीस महत्त्वपूर्ण कृत्यों (Key Jobs) का चयन करना है। इनका चयन अन्य कृत्यों की तुलना करने के लिए एक आधर या मापदण्ड हेतु किया जाता है। इन महत्त्वपूर्ण कृत्यों की मौद्रिक दरें (Money Rates) की तुलना से ही ज्ञात होती हैं। इस प्रकार कृत्य मूल्यांकन की विध् िकी शु(ता इस बात पर आधरित है कि जिन महत्त्वपूर्ण कृत्यों को तुलना के लिए चुना गया है उनके क्षतिपूरण का भुगतान सही रूप में किया गया है अथवा नहीं।

इस विध् िका अन्य चरण महत्त्वपूर्ण कृत्यों की कुल मौद्रिक दर को विभिन्न घटकों में विभक्त करना है जिससे यह विदित हो जाय कि प्रत्येक घट के लिए कितनी राशि दी जाती है। इस स्थिति को हम निम्न उदाहरण द्वारा स्पष्ट कर सकते हैंः–

कृत्य घटक ;Job Factorद्ध	प्रत्येक घटक के लिए अध्कितम प्रतिशत (Maximum Percentage for each factor)
;1द्ध उत्तरदायित्व (Responsibility)	
(a) अन्य कार्यों के लिए	6
(b) सामग्री या उत्पाद के लिए	6
(c) यन्त्र की प्रक्रिया के लिए	4
(d) अन्य की सुरक्षा के लिए	4
	20
;2द्ध चातुर्य (Skill)	
(a) शिक्षा की आवश्यकता	15
(b) अनुभव की आवश्यकता	20
(c) वांछनीय पहलपन और प्रतिभा	15
	50
;3द्ध प्रयास (Effort)	
(a) भौतिक कार्य की मात्रा में निहित	9
(b) मानसिक प्रयास में निहित	6
	15
;4द्ध कार्य की दशाएँ (Conditions of Word)	
(a) कृत्यों के खतरों या संकटों	11
(b) प्रतिकूल या अवस्थ कार्य दशाएँ	4
	15

इस विध् िका अन्तिम चरण महत्त्वपूर्ण कृत्यों से तुलना करते हुए उक्त स्केल (Scale) के अनुरूप अन्य कृत्यों को व्यवस्थित करना है। इस प्रकार महत्त्वपूर्ण कृत्यों में सम्मिलित किये गये घटकों के आधर पर दिये गये क्षतिपूर्ण के अनुसार मूल्यांकन किये जाने वाले कृत्य के घटकों का क्षतिपूर्ण दिया जाता है।

लाभ दोष (Advantges and Disadvantage)

इस विधि के प्रमुख लाभ निम्नलिखित हैंः–

1. इस विधि के द्वारा असमान कृत्यों का सरलता से मूल्यांकन किया है।
2. यह विधि संगठन में किसी भी पद पर कार्य करने वाले व्यक्ति के कृत्य के मूल्यांकन हेतु प्रयोग में लायी जा सकती है।
3. यह विधि एक संगठन में लोचपूर्ण वेतन एवं मजदूरी योजना के निर्माण में सहायता प्रदान करती है।

इस विधि के प्रमुख दोष निम्न हैंः–

1. यह विधि अत्यन्त जटिल है।
2. यह विधि के खर्चीली है।
3. इस विधि के अर्न्तगत उच्च तकनीकी विशेषज्ञों के इशारों पर नाचते रहते हैं क्योंकि इसमें बिना तकनीकी विशेषज्ञों के सहयोग के कार्य का निष्पादन नहीं हो सकता।

(D) बिन्दु विधि
(Point Method)

वर्तमान समय में कृत्य मूल्यांकन के लिए सर्वाध्कि प्रचलित विधि बिन्दु विधि हैं इस विधि का प्रादुर्भाव अमेरिका में हुआ। इसके पश्चात् विश्व के सभी देशों ने इसका प्रयोग करना प्रारम्भ कर दिया। यह विधि इस मान्यता पर आधरित है कि विभिन्न कृत्यों सम्बन्धी प्रत्येक घटक का उसे महत्त्व के अनुसार बिन्दु निर्धरित करना सम्भव है और इन बिन्दुओं का कुल योग कृत्यों के सापेक्षित मूल्य की एक सूची प्रस्तुत करने में समर्थ होता है। इस कार्य के लिए एक मैनुअल (manual) का प्रयोग किया जाता है जिसमें उन सभी घटकों का उल्लेख होता है जिसके अनुसार प्रत्येक कृत्य का मूल्यांकन किया जाता है। सामान्यतः इस विधि में निम्न चार घटक अवश्य पाये जाते हैंः–

1. उत्तरदायित्व (Responsibilty)
2. चातुर्य (Skill)
3. प्रयास (Effort)
4. कार्य की दशाएं (Conditions of Work)

अमेरिका की जनरल इलैक्ट्रिक कम्पनी (GEC of U.S.A) अपने कर्मचारियों के कृत्यों का मूल्यांकन निम्नलिखित घटक और उनके निर्धरित बिन्दुओं के आधर पर करती हैः–

	घटक का नाम	अध्कितम बिन्दु
1.	चातुर्य	400
2.	मानसिक दृष्टिकोण	100
3.	उत्तरदायित्व	100
4.	शरीर का उपयोग	50
5.	मस्तिष्क का उपयोग	50
6.	कार्य करने की दशाएं	100
	कुल योग	800

अमेरिका की एक अन्य संस्था (National Metal Traders Association) ने कृत्य–मूल्यांकन के लिए अग्र तरीके का प्रयोग किया हैः–

घटकों के लिए निर्धरित बिन्दु तथा डिग्री					
घटक डिग्री	**प्रथम डिग्री**	**द्वितीय डिग्री**	**तृतीय डिग्री**	**चतुर्थ डिग्री**	**पंचम डिग्री**
चातुर्य (Skill)					
1. शिक्षा	14	28	42	56	70
2. अनुभव	22	44	66	88	110
3. पहलपन और प्रतिभा	14	28	42	56	70
प्रयास (Effort)					
4. शारीरिक अपेक्षा	10	20	30	40	50
5. मानसिक अपेक्षा	05	10	15	20	25
उत्तरदायित्व (Responsibility)					
6. यन्त्र या प्रक्रिया के लिए	05	10	15	20	25
7. सामग्री या उत्पाद के लिए	05	10	15	20	25
8. अन्य के सुरक्षा के लिए	05	10	15	20	25
9. अन्य के कार्यों के लिए	05	10	15	20	25
कार्य की दशाएँ (Conditions of Work)					
10. कार्य करने की दशा	10	20	30	40	50
11. न बचा सकने योग्य जोखिम	05	10	15	20	25
कुल बिन्दु					500

इस प्रकार इस विध्ि के अर्न्तगत कृत्य के विभिन्न घटकों को बिन्दु प्रदान किये जाते हैं और उनका प्रयोग ज्ञात कर लिया जाता है। इस कुल योग की सहायता से विभिन्न कृत्यों की तुलना करके कार्य का मुल्यांकन किया जाता है।

लाभ–दोष (Advantages and Disadvantages)

इस विध्ि प्रमुख लाभ निम्न हैंः–

;1द्ध इस विध्ि द्वारा किया गया कृत्य–मूल्यांकन अन्य विध्यिों की तुलना में श्रेष्ठ होता है।

;2द्ध इस विध्ि के द्वारा कृत्यों के अन्तर को मापने में कापफी सहायता मिलती है।

;3द्ध यह विध्ि वृहत्–स्तर के औद्योगिक एवं व्यावसायिक प्रतिष्ठानों के लिए एक उपयुक्त विध्ि है।

इस विध्ि के प्रमुख दोष निम्न हैंः–

;1द्ध इस विध्ि अत्याध्कि जाटिल है।

;2द्ध इस विध्ि द्वारा कार्य का मूल्यांकन करने के लिए एक पैमाना तैयार करना होता है। यदि पैमाना तैयार करने में थोड़ी सी चूक हो जाये तो गलती रहने की सम्भावना बनी रहती है।

कृत्य मूल्यांकन के लाभ
(Advantages of Job Evaluation)

नॉल्स एवं थाम्पसन[1] (Knowles & Thomson) के अनुसार कृत्य मूल्यांकन मजदूरी एवं वेतन की सभी प(तियों के अनेक दोषों को दूर करने में उपयोगी रहा है। सामान्यतः कृत्य–मूल्यांकन निम्न दोषों को दूर करता है:–

;1द्ध ऐसे व्यक्ति जो महत्वपूर्ण कृत्यों और पदों को धरण करते हुए अध्कि वेतन एवं मजदूरी प्राप्त करते हैं लेकिन उनमें इनके योग्य चातुर्य, उत्तरदायित्व एवं प्रयत्न का अभाव पाया जाता है।

;2द्ध कुछ व्यक्तियों के उतने पारिश्रमिक से कम पर लगाया जाता है जितना वे पाने के योग्य न हो।

;3द्ध ऐसे व्यक्तियों को अध्कि बढ़ोत्तरियाँ देना जिनका कार्य निष्पादन बढ़ोतरी के योग्य न हो।

;4द्ध मजदूरी दरें और मजदूरी वृ(दरें योग्यता के आधर पर निर्धरित न की जाकर वरीयता के आधर पर निर्धरित की जाना।

;5द्ध समान कार्य के लिए दिये जाने वाले क्षतिपूरण में पर्याप्त अन्तर होना।

;6द्ध लिंग, ध्र्म और राजनैतिक मत–भेदों के कारण क्षतिपूरण का असमान भुगतान होना।

कृत्य–मूल्यांकन के कुछ अन्य लाभ निम्न हैं:–

;1द्ध इस विध् िके द्वारा सुदृढ़ क्षतिपूरण संरचना का निर्माण किया जा सकता है।

;2द्ध इस विध् िसे विभिन्न कृत्यों के सापेक्षिक मूल्य की जानकारी की जा सकती है।

;3द्ध इस विध् िके द्वारा मजदूरी की व्यक्तिगत दरों सम्बन्धी मत–भेदों एवं शिकायतों का न्यायोचित निपटारा किया जा सकता है।

;4द्ध यह विध् िसौहार्द्रपूर्ण मानवीय सम्बन्धें को बढ़ावा देती है।

;5द्ध यह विध् िकर्मचारियों की कार्यकुशलता एवं मनोबल में वृ(करती है।

;6द्ध यह विध् िकर्मचारियों की कर्मचारियों को संस्था की और आकर्षित करती है।

;7द्ध यह विध् िअध्किार–रेखाएँ (Lines of Authority) स्पष्ट करने में सहायता प्रदान करती है।

;8द्ध यह विध् िकार्य की आवश्यकतानुसार कर्मचारियों की भर्ती में सहायक है।

;9द्ध यह विध् िकर्मचारियों को प्रशिक्षण प्रदान करने के कार्यक्रम की स्थापना करने एवं उसका विकास करने में सहायक सि(होती है।

;10द्ध यह विध् िकर्मचारियों की पदोन्नति के क्रम को निर्धरित करने में भी सहायता प्रदान करती है।

अध्याय–4
भर्ती एवं चुनाव प्रक्रिया
(Recruitment of People and Selection Process)

कर्मचारियों की भर्ती मानव संसाध्न/कर्मचारी प्रबन्ध् का महत्त्वपूर्ण कार्य है। भर्ती (Recruitment) एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा भावी आवेदनकर्त्ताओं (Applicants) की खोज की जाती है और उन्हें संस्था में आवेदन करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है।

'भर्ती प्रक्रिया का प्रथम चरण चयन (Selection) प्रक्रिया से प्रारम्भ होकर प्रार्थी की नियुक्ति (Placement) के साथ समाप्त होती है।' भर्ती प्रक्रिया का प्रारम्भ कर्मचारियों की माँग तैयार होने के साथ हो जाती है। औद्योगिक रोजगार का प्रथम कदम भर्ती ही है और रोंगार की सपफलता या असपफलता कापफी सीमा तक उन ढंगों और संगठन पर निर्भर करती है जिनके द्वारा कर्मचारी उद्योग में लाये जाता हैं।

कर्मचारियों की भर्ती
(Recruitment of Personnel)

अर्थ (Meaning): संस्था की कर्मचारियों से सम्बन्धित आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर, उसके लिए उचित कर्मचारियों को खोजना, उनको सूचित करना तथा उन्हें आमंत्रित करना भर्ती कहलाता है।

परिभाषाएँ
(Definitions of Recruitment)

ई॰ बी॰ फ्रलप्पो (Edwin B. Flippo) के अनुसार, ‘‘भर्ती, भावी कर्मचारियों की खोज करने तथा उन्हें रिक्त कार्यों के लिए आवेदन करने के लिए प्रेरणा देने तथा प्रोत्साहित करने की प्रक्रिया होती है।’’[1]

डेल एस॰ बीच (Dale S. Beach) के अनुसार, ‘‘पर्याप्त मात्रा में मानव शक्ति ोतों को बनाये रखना तथा विकास करना भर्ती कहलाता है। भर्ती के अन्तर्गत उपलब्ध् कर्मचारियों का एक पूल स्थापित करना होता है जिससे संगठन अतिरिक्त कर्मचारियों की आवश्यकता पड़ने पर वहाँ से उन्हों प्राप्त कर सके।’’[2]

भर्ती का उद्देश्य खाली पदों के लिए उचित संख्या में कर्मचारियों की भर्ती करना है। कर्मचारियों की भर्त्ी का कार्य एक सुनियोजित योजना के अनुसार पूरा किया जाना चाहिए। इसके लिए आवश्यक है कि संस्था की एक निश्चित भर्ती नीति (Recruitment Policy) हो।

मानव संसाध्न प्रशासन का, भर्ती करने का कार्य बहुत अध्कि महत्त्वपूर्ण कार्यों में से एक है, क्योंकि भर्ती के अन्तर्गत योग्य व्यक्तियों को किसी पद के लिए आवेदन करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है।

---

1. "Recruitment is the process of searching for prospective employees and stimulating and encour aging them to apply for jobs in an organisation".

–Edwin B. Flippo.

2. "Recruitment is the development and maintenance of adequate manpower resources. It involves the creation of a pool of available labour upon whom the orgaisation can draw when it needs additional employees".

–Dale S. Beach.

ई॰ बी॰ पफलप्पो (E.B. Flippo) के अनुसार, फ्भर्ती के एक ओर ध्नात्मक (Positive) तथा दूसरी ओर)णात्मक (Negative) दो रूप होते हैं। क्योंकि भर्ती एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें सम्भाव्य व्यक्तियों को किसी पद के लिए आवेदन देने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है इसके विपरीत चुनाव की प्रक्रिया को)णात्मक (Negative) कहा जा सकता है क्योंकि इसमें अध्किांश आवेदनकर्त्ताओं (Applicants) को अस्वीकार कर दिया जाता है तथा सर्वश्रेड्ढ व्यक्तियों का चुनाव की लिया जाता है।य्3

भर्ती प्रणाली को प्रभावित करने वाले घटक
(Factors Affecting Recruitment)

भर्ती करने की प्रक्रिया या प्रणाली एक उद्योग या संस्था से दूसरे उद्योग या संस्था में तथा समय–समय पर अलग–अलग होती है क्योंकि भर्ती प्रणाली को बहुत से घटक प्रभावित करते हैं, उनमें प्रमुख घटक निम्नलिखित हैं–

1. उपक्रम का आकार (Size of the organisation)।
2. जिस स्थान पर संगठन स्थापित हैं उस स्थान की रोजगार दशाएँ (Employment Conditions)।
3. गत वर्षों में भर्ती के लिये किये गये प्रयत्नों का प्रभाव (The effects of past recruiting efforts)।
4. उपक्रमों की कार्य करने की दशाएँ, वेतन तथा अन्य दिये गये लाभ (Working Conditions, Salary and other benefits given by the organisations)।
5. उपक्रम की विकास की दर (Rate of Growth)।
6. उत्पादन तथा विस्तार का स्तर (The level of production and expension)।
7. उपरोक्त के अलावा आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक तथा वैधनिक घटक (Other Economic, Social, Political and Legal Factors)।

भर्ती सम्बन्धी नीति
(Recruitment Policy)

कर्मचारियों की भर्ती करने से पूर्व भर्ती के उद्देश्य निश्चित कर लेने चाहिए तथा उद्देश्यों के अनुसार ही **भर्ती नीति** (Recruitment Policy) निर्धरित की जानी चाहिये। इस प्रकार एक विवेकपूर्ण एवं पूर्व नियोजित भर्ती नीति का आधर निगम/कंपनी के उद्देश्य, निगम/संस्था का वातावरण एवं निगम की आवश्यकताएँ होती हैं। भर्ती नीति को निर्धरित करने समय जल्दबाजी में बिना सोचे–समझे निर्णय न लेकर संगठन के कुशल एवं दक्ष कर्मचारियों के साथ पूर्ण विचार–विमर्श के बाद भर्ती नीति बनानी चाहिए।

According to Dale Yoder–"Such a policy may involve a commitment to broad principles such as filling vacancies with the best qualified individuals. It may embrace several issues such as extent of promotion from within, attitudes of enterprise in recruiting its old employees, handicaps, minority groups, women employees, part-time employees, friends and relatives of present employees. It may also involve the organisation system to be developed for implementing recruitment programme and procedures to the employed.

एक स्थान पर **डेल योडर** (Dale Yoder) ने लिखा है–'भर्ती नीति का सम्बन्ध श्रमशक्ति की मात्रा एवं योग्यताओं (Q.1 and Q.2) से है।' (The recruitment policy is concerned with quantity and qualifications (and Q. 1 and Q. 2) of manpower)

एक प्रभावी भर्ती नीति का आधर निम्न शर्तें होनी चाहिए–

1. भर्ती, संस्था के एक केन्द्रीय स्थान द्वारा की जानी चाहिए।
2. सामान्य मानव संसाधन नीतियों के अनुसार होनी चाहिए।

---

3. "It is process of searching for prospective employees and stimulating and encouraging them to apply for jobs in an organisation. It is often termed positive in that it stimulates people to apply for jobs to increase the hiring ratio, i.e., thenumber of applicants for a job, selaction of the other hand tends to be negative because it rejects a good member of those who apply, learning only the best to be hired".

–E.B. Flippo.

3. संगठन की वर्तमान आवश्यकतानुसार होनी चाहिए।
4. नीति स्प५ एवं व्यापक होनी चाहिए।
5. नीति लोचदार होनर चाहिये जो परिवर्तित परिस्थितियों में भी काम आ सके।
6. किसी नये पद की नियुक्ति के लिये उत्तरदायी अधिकारी की स्वीकृति होनी चाहिए।
7. भर्ती के समय संस्था की ओर से किसी प्रकार का कोई आश्वासन लिखित या मौखिक नहीं देना चाहिये।
8. भर्ती योग्यता के आधर पर की जानी चाहिये।
9. भर्ती से पूर्व कार्य–विश्लेषण (Job Evaluation) कर लेना चाहिये।
10. भर्ती के ोतों को ध्यान में रखकर उनका पूरी तरह सदुपयोग किया जाना चाहिये।
11. भर्ती सम्बन्धी नीति सरकार की नीतियों के अनुरूप हो।
12. भर्ती सम्बन्धी नीति गतिशील होनी चाहिये।

भारत में भर्ती की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि
(Historical Background of Recruitment in India)

भारत में बड़े पैमाने पर उद्योगों की स्थापना के समय प्रारम्भिक काल में उद्योगों और बागान श्रमिकों की भर्ती करने में अनेक कठिनाइयों का सामना मालिकों को करना पड़ता था। क्योंकि श्रमिक वर्ग अपने गाँव छोड़कर उद्योगों और बागान के नये वातावरण में नहीं जाते थे। इसके अतिरिक्त उद्योगों/कारखानों में कार्य करने की स्थिति भी खराब थी। 1896 में प्लेग और 1918 में इन्फ्रलूएन्जा की महामारी ने श्रमिकों के अभाव में सहयोग दिया। इसलिये मालिकों ने भर्ती के लिये अच्छे–बुरे सभी प्रकार के साध्नों को अपनाया था। उस समय भर्ती **मध्यस्थों तथा ठेकेदारों** (Intermediaries and Contractors) द्वारा भी होने लगी है। प्रारम्भिक काल में भर्ती प्रणाली विवेकपूर्ण ढंग से प्रारम्भ नहीं की गई। भर्ती प्रणाली पर श्रमिकों की **प्रवासिता** का प्रभाव पड़ा।

कुछ समय पूर्व भारतीय उद्योगों में भर्ती की कोई नियमित प्रणाली नहीं थी। इसके प्रमुख रूप से दो कारण थे–

1. भारतीय श्रमिकों की प्रवासी प्रकृति (Migratory Character),
2. मध्यस्थों द्वारा श्रमिकों की भर्ती (Recruitment of workers through Intermediaries)।

1. **भारतीय श्रमिकों की प्रवासी प्रकृति (Migratory Character):** भारतीय श्रमिकों की प्रवासी प्रकृति ने भारत की भर्ती प्रणाली को कापफी अध्कि प्रभावित किया है। क्योंकि हमारे यहाँ गाँव ही श्रमिकों की पूर्ति का प्रमुख साध्न रहे हैं इसलिए श्रमिकों की भर्ती की प्रणाली सेवायोजकों ने अपने हित को ध्यान में रखते हुए अपनाई और किसी–किसी समय भर्ती करते समय अनुचित तरीके प्रयोग में लाये गये।
2. **मध्यस्थों द्वारा श्रमिकों की भर्ती (Recruitment of workers through Intermediaries)**: जब किसी उद्योग में उद्योगपति स्वयं प्रत्यक्ष रूप से श्रमिकों को कार्य पर न लगाकर किसी मध्यस्थ की सहायता लेता है और श्रमिक को काम पर लगाने तथा उसको काम से हटाने का पूरा अध्किार उस मध्यस्थ को ही होता है, तो इस विध् िको मध्यस्थों द्वारा भर्ती कहा जाता है। भर्ती की इस विध् िकी बहुत अध्कि मान्यता रही है। परन्तु इसके खराब परिणामों

---

4. **श्रमिकों के प्रवासी स्वभाव अर्थ (Meaning of the migratory character of the labour):** औद्योगिक क्षेत्रों में बहुत बड़ी संख्या में श्रमिक मिलों में काम करते हैं। परंतु जब वे इन औद्योगिक क्षेत्रों के स्थायी निवासी नहीं होते अर्थात् जिस स्थान पर श्रमिक काम करता है उस स्थान पर ही वह स्थायी रूप से निवास नहीं करता अतः उसके इस स्वभाव को ही प्रवासीपन (Migratory character) कहते हैं। उदाहरणतः भारत के औद्योगिक क्षेत्र में अधिकांश श्रमिक ग्रामीण होते हैं जो ग्रामां से आते हैं और वे नगरों में स्थायी निवास न करके समय–समय पर अपने गाँवों में लौटते रहते हैं। उनकी यही प्रवृत्ति प्रवासी है। ये श्रमिक औद्योगिक क्षेत्रों को अपना घर नहीं समझते। इसलिए औद्योगिक केन्द्रों पर स्थायी औद्योगिक जनसंख्या (Stable labour force) का अभाव रहता है। इसी स्थिति को हम भारतीय श्रमिक का प्रवासी स्वभाव कह सकते हैं।

ने सर्वाजनिक मत को इस प्रणाली के विरू(कर दिया जिसके कारण इस प्रणाली को घृणा की दृप्ि से देखा जाता था। भारत में यह प्रणाली संगठित और असंगठित दोनों ही प्रकार के उद्योगों में अपनाई गई थी।

विभिन्न क्षेत्रों में इन मध्यस्थें को विभिन्न नामों से पुकारा जाता है जैसे—सरदार, मिस्तरी, जोबर (Jobber) चौध्री, मुकद्दम, टण्डैल, पफोरमैन, ठेकेदार आदि। यही नहीं, मध्यस्थों के रूप में नाइकिन (Naikins) अथवा मुकदामिन (Mukadamins) कहलाने वाली महिला जाबर भी रही हैं। कोयले की खानों में काम करने वाले श्रमिकों तथा चाय के बगीचों में काम करने वाले श्रमिकों की प्राप्ति में उद्योगपति को कापफी कठिनाई होती थी। इस कठिनाई को हल करने के लिए ही उद्योगपति मध्यस्थों की सहायता लेते थे और यह मध्यस्थ दूर—दूर के ग्रामों में जाकर बेकार श्रमिकों को उफँची मजदूरी तथा अच्छी नौकरी का प्रलोभन देकर ले आते थे। इस प्रकार से श्रमिकों को ग्रामों से लाकर यही मध्यस्थ उनको काम पर लगाते थे।

भर्ती प्रणाली के दोषः इनमें अनेक दोष पाए जाते हैं जिनमें से मुख्य निम्नलिखित हैं—

1. बागानों के लिए श्रमिकों की प्राप्ति में यह विधि बड़ी ही महंगी सि(हुई है क्योंकि मध्यस्थ दूर—दूर के प्रान्तों में जाकर ग्रामीण क्षेत्रों के बेकार श्रमिकों को लाते हैं जिनके लाने में भारी व्यय हो जाता है। यह समस्त व्यय बागान के मालिक को ही सहन करना पड़ता है जो अन्तिम रूप से उपभोक्ता वहन करता है।

2. श्रमिकों को विभिन्न प्रकार के प्रलोभन देकर मध्यस्थ लाते हैं। उनको ग्रामों में ही कुछ ध्नराशि अग्रिम (Advance) के रूप में दे दी जाती है। परन्तु बागान के मालिकों से ली जाने वाली ध्नराशि का एक छोटा भाग ही इन श्रमिकों को दिया जाता है और शेष ध्न इन मध्यस्थों की जेब में ही रहता है।

3. यह मध्यस्थ साधरणतः विवाहित श्रमिकों को लाने का ही अध्कि प्रयत्न करते हैं जिससे उनकी स्त्रियों तथा बच्चों को भी काम पर लगाया जा सके। परन्तु विवाहित श्रमिक के न मिलने पर यह अनुचित रीति से किसी भी व्यक्ति तथा स्त्री को ले आते हैं जो अनैतिकता का द्योतक है।

4. एक बेरो८ागार श्रमिक इनके विभिन्न प्रलोभनों में पफंसकर जब बागान में काम करने आ जाता है तो उसे स्वतन्त्रतापूर्वक इच्छा होने पर भी लौटने नहीं दिया जाता।

5. संगठित उद्योगों में रो८ागार प्राप्ति के लिए श्रमिकों को जोबर को रिश्वत देनी पड़ती है और बिना रिश्वत के रो८ागार का मिलना असम्भव हो जाता है। यह रिश्वत भर्ती के समय एक साथ अथवा मासिक मजदूरों में एक किस्त के रूप में निश्चित कर दी जाती है। श्रमिक किसी भी समय इस किस्त की अदायगी से मना नहीं कर सकता है। अगर वह ऐसा करता है तो जोबर उसे उद्योगपति के सामने अकुशल श्रमिक बताकर काम से अलग कर देता है।

6. उद्योग में कुशल श्रमिकों के स्थान पर अकुशल श्रमिकों की भर्ती हो जाती है क्योंकि भर्ती के समय श्रमिक की कुशलता की ओर ध्यान नहीं दिया जाता बल्कि ऐसे श्रमिक को ही काम पर रखा जाता है जो जोबर को अध्कि से अध्कि रिश्वत दे।

7. काम से बार—बार हटाए जाने (Termination) की प्रवृत्ति बढ़ जाती है क्योंकि ऐसा करने से जोबर को नई भर्ती से रिश्वत के रूप में अध्कि ध्न प्राप्त हो सकता है।

शाही श्रम आयोग (Royal Labour Commission): शाही श्रम आयोग ने इस प्रणाली के दोषों को बतलाते हुए लिखा है—फ्मध्यस्थों का पद बहुत अध्कि प्रलोभनीय है और मध्यस्थ वर्ग इस विशेषता से लाभ न उठाये ये आश्चर्यजनक बात होगी। इतना ही नहीं, श्रमिकों की सुरक्षा भी पूरी तरह इन मध्यस्थों पर ही निर्भर करती है। अनेक उद्योगों में तो रो८ागार का मिलना और छंटनी होना भी इन्हीं लोगों के द्वारा होता है...अक्सर यह देखा गया है कि रो८ागार प्राप्त करने के लिए श्रमिकों को अपने वेतन का कुछ भाग सदैव के लिये नियमित रूप से इनकों भेंट करना पड़ता है।य

इन दोषों के कारण मध्यस्थों द्वारा श्रमिकों की भर्ती प्रणाली बहुत असन्तोषजनक रही है। हाल के वर्षों में इस बात की कोशिश की गई है कि भर्ती प्रणाली को दोष रहित बनाया जाए।

भर्ती प्रक्रिया
(Recruitment Process)

I. माँग के ोत
(Sources of Demand

1. कार्य भार तथा कार्य सेना विश्लेषण (Work Load and work force analysis
2. कार्य माँग पत्र (Job requisition)

II. भर्ती के ोत
(Sources of Recruitment)

बाह्य (External)

1. रोन्ागार कार्यलय
2. शिक्षण संस्थाएँ
3. वर्तमान कर्मचारी की सिपफरिश
4. श्रमसंघ
5. अन्य संस्थाओं के कर्मचारी
6. विशिप्न संस्थाएँ जैसे आई. टी. आई. तथा व्यावसायिक प्रबन्ध की संस्थाएँ।
7. विज्ञापन

आन्तरिक (Internal)

1. पदोन्नति
2. स्थानान्तरण
3. भूतपूर्व कर्मचारी
4. वर्तमान कर्मचारी के मित्र एवं रिश्तेदार

III. भर्ती विध् एवं तकनीक
(Method or Technique of Recruitment)

1. प्रत्यक्ष विध् (Direct Methods)
2. अप्रत्यक्ष विध् (Indirect Methods)
3. तीसरे पक्ष के द्वारा भर्ती (Third party Methods)

उपर्युत्तफ का संक्षिप्त वर्णन निम्नलिखित हैं—

1. **माँग के ोत (Sources of Demand):** सर्वप्रथम प्रबन्ध्कों को यह निश्चित करना होता है कि संस्था के लिए कैसे तथा कितने कर्मचारियों की आवश्यकता है। इसके लिए जब एक संस्था आरम्भ होती है तब कार्य भार तथा कार्य सेना विश्लेषण (Work load and work force analysis) किया जाता है। सर्वप्रथम प्रबन्ध्क वार्षिक विक्रय का अनुमान लगाते हैं जो आने वाले वर्ष में होगी। उतनी वस्तु के उत्पादन तथा विक्रय के लिये आवश्यक कर्मचारियों का अनुमान लगाया जाता है। उदाहरणतः एक संस्था वर्ष में एक लाख रेडियो सैट बेचने का अनुमान लगाती है। अब यह निश्चित किया जाता है कि वर्ष में कितने घण्टे कार्य होगा। छुट्टियाँ काटकर वर्ष में 250 दिन कार्य होना है तथा प्रतिदिन आठ घण्टे कार्य होना निश्चित है तथा वर्ष्ज्ञ में 2000 घण्टे काम होना है। कार्य एवं गति अध्ययन (Time and Motion) से पता चलता है कि सामान्य सहायक इन्जीनियर 4 घण्टे में एक रेडियो सैट बना सकता है अर्थात् प्रतिदिन दो रेडियो। ऐसी अवस्था में वर्ष में एक लाख रेडियो बनाने के लिए 200 सहायक इन्जीनियर नियुक्त किये जायेंगे। यह कार्य भार विश्लेषण है। हमें ज्ञात है कि सभी इन्जीनियर प्रतिदिन नहीं आयेंगे तथा इनमें से कुछ अनुपस्थित रहेंगे। रेडियो उद्योग की अन्य संस्थाओं के आँकड़ों से पता चलता है कि 8ः सहायक इन्जीनियर छुट्टद्धी पर चले जाते हैं तब इस आधर पर कार्य को सुचारू रूप से चलाने के लिए आवश्यक है कि आवश्यकता से 8ः अध्कि सहायक इन्जीनियर नियुक्त किये जायें। इस तरह से दो सौ की अपेक्षा 215 इन्जीनियर नियुक्त किये जायेंगे। अब यह देखा जाएगा कि एक इन्जीनियर कितने सहायक इन्जीनियरों को नियन्त्रण व निर्देशन में रख सकता है। इन्य संस्थाओं के अध्ययन तथा अनुभव से पता चलता है कि एक इन्जीनियर लगभग 17 सहायक इन्जीनियरों को नियन्त्रित रख सकता है। हमें इस तरह से 17 इंजीनियरों की आवश्यकता पड़ेगी। इन 17 इंजीनियरों की देख–रेख के लिए एक मुख्य इंजीनियर की आवश्यकता होगी। इसी तरह रेडियो संग्रह विभाग के लिए 215 सहायक इंजीनियर, 17 इंजीनियर तथा एक मुख्य इंजीनियर की आवश्यकता होगी। इसी तरह विक्रय, क्रय, बहीखाता आदि विभाग के कर्मचारियों की माँग का अनुमान लगाया जाता है।

पकार्य माँगय द्वारा कर्मचारी विभाग को आवश्यक कृत्यों के बारे में पर्याप्त जानकारी दी जाती है जिससे रिक्त पदों को भरने में सहायक मिले। **कार्य माँग** पर्याप्त विस्तृत होनी चाहिए।

कार्य माँग (Job Requisition) के दो उदाहरण यहाँ प्रस्तुत हैं—

कर्मचारी की माँग................................. नियमित/दैनिक...................................... स्थान..	कार्य का नाम.. दिनांक जिससे व्यक्ति की आवश्यकता होगी...................... .... विभाग...

कार्य के कर्त्तव्य का विवरण

पदोन्नति के अवसर..

आवश्यक कर्मचारी की न्यूनतम व अध्कितम आयु....................................लिंग.....................................

विशेष गुण ;शारीरिक, व्यक्तिगत आदिद्ध...

मजदूरी की दशाएँ

वेतन क्रम	कार्य–घण्टे	पाली	छुट्टियां	पेंशन आदि

क्या वर्तमान स्टॉपफ में वृ(ि है?....................अध्किारी की स्वीकृति...............................

हस्ताक्षर विभाग अध्किारी...............................दिनाकं ....

कर्मचारी विभाग के प्रयोग हेतु: **भर्ती का स्रोत**

चुने गए प्रत्याशी का नाम................................ ....

दिनांक जिसमें काम शुरू किया.......................... ....

कार्य विवरण (Job-Description): कार्य विश्लेषणकर्त्ता एकत्रित तथ्यों तथा जानकारी को संक्षिप्त रूप में कार्य–विवरण (Job description) तैयार करता है जिसमें कार्य (Job) की व्यावसायिक आवश्यकताओं के रूप में प्रमुख विशेषताओं की सही तथा पूरी तस्वीर दी जाती है। सरल शब्दों में—**कार्य विवरण से आशय, पद (Post) के कार्य की प्रकृति, दायित्वों, उद्देश्य, क्षेत्र तथा कर्त्तव्यों का संगठित तथा तथ्यपूर्ण विवरण होता है। कार्य–विवरण, कार्य (Job) से सम्बन्ध्ति होता है न कि उस व्यक्ति से जिसे उस कार्य (Job) पर नियुक्त किया जायेगा।** कार्य–विवरण (Job Description) तैयार करने का उद्देश्य मानव संसाध्न प्रबन्ध/कर्मचारी प्रबन्ध को कार्य (Job) के विषय में सही जानकारी देना होता है जिससे मानव संसाध्न विभाग (Human Resource Department) उस कार्य (Job) पर सही व्यक्ति की नियुक्ति कर सके। **कार्य विवरण** (Job Description) **के दो नमूने आगे दिए जा रहे हैं—**

कार्य विवरण के दो नमूने
(Job-Description Specimen)

S.C ENGINEERING COMPANY,		कार्य विवरण का दूसरा नमूना	
	PANIPAT		
कार्य शीर्षक	इंजिन लेथ आपरेटर	विभाग.....................	प्रमाप–कोड..................
विभाग	टूलरूप, मशीन शॉप	उपविभाग................	प्रमाप–शीर्षक...............
सामान्य विवरण	कार्य के लिये 16 इंच तक क्षमता की लेथ चलाना आवश्यक है। मशीन से सम्बन्ध्ति सभी कार्य करना आवश्यक है। यह उत्पादन कार्य नहीं है।	संयत्र शाखा............	संयत्र शीर्षक...............
		दिनांक.....................	संयत्र कोड..................

Contd......

सम्बन्धित कार्य	मिलिंग तथा स्क्रू मशीन चलाना।	कर्त्तव्यों का संक्षिप्त विवरण........................
कार्य	1. नेत्र–दृपि्–20/40 तक उचित।	किये जाने वाले का विस्तृत विवरण.............
आवश्यकताएं	2. शारीरिक शक्ति–सामान्य	निरीक्षण ोत..
	3. ब्लूप्रिन्ट, मॉडल्स, स्कैच से कार्य करने की क्षमता।	यंत्र व उपकरण....................................... कच्चे पदार्थ..
कार्य दशायें	4. अपना स्वयं का कार्य स्थापित करने की क्षमता।	उत्तरदायित्व..
	5. माइक्रोमीटर तथा अन्य निरीक्षण विध्यिों के प्रयोग करने की क्षमता।	;अन्य व्यक्तियों की सुरक्षा, उपक्रम की नगदी या सम्पत्ति काम करने आदि के बारे मेंद्ध
	1. न्यूनतम निरीक्षण में कार्य करना।	**आवश्यक योग्यताएं–** विशिपृ ज्ञान..
मजदूरी की शर्तें	2. कापफी समय तक खड़े रहकर कार्य करना।	पूर्व अनुभव..
पदोन्नति	3. दुर्घटनाएं कम होती हैं, परन्तु	शारीरिक...
अतिरिक्त योग्यताएँ	सुरक्षा–कांच कार्य करते समय पहनना।	कार्य दशायें.. वातावरण..
	1. नियमित पाली–कार्य।	खतरे...
	2. घण्टों के अनुसार मजदूरी।	अन्य कार्यों से सम्बन्ध............................
	3. 1 रु॰ से लेकर 1.15 रु॰ तक प्रति घण्टा मजदूरी।	पदोन्नति..
	4. छुट्टिद्धयों में आवश्यकता पड़ने पर कार्य करना।	कृत्य विश्लेषक......................................
	टूल मेकर, सहायक पफोरमेन, पफोरमेन।	स्वीकृति द्वारा...............दिनांक..................
	आयु–20–30 वर्ष।	
	लिंग–पुरुष।	
	लम्बाई–5′4′′ से 5′8′′ तक।	

कार्य अपेक्षा–विवरण (Job Specification): कार्य–विवरण का सम्बन्ध जहाँ कार्य (Job) से होता है, वहाँ कार्य अपेक्षा–विवरण (Job Specification) का सम्बन्ध कर्मचारी से होता है। यह विवरण कर्मचारी का प्रमाप निर्धरित करता है तथा यह स्पपृ करता है कि कर्मचारी में क्या न्यूनतम योग्यतायें होनी चाहिए। **एडविन बी॰ पिफलिप्पो** के अनुसार–फ्कार्य अपेक्षा–विवरण कार्य को उचित रूप से करने के लिये आवश्यक न्यूनतक स्वीकार्य मानवीय योग्यताओं का विवरण होता है।य् इसमें कर्मचारी से अपेक्षित मानसिक एवं शारीरिक योग्यताओं का विवरण रहता है। चुनाव कर्त्ता कर्मचारी का चुनाव या भर्ती करते समय कार्य विवरण के साथ ही कार्य अपेक्षा–विवरण का उपयोग करते हैं।

नमूना (Specimen)

कार्य अपेक्षा–विवरण (Job Specification) कार्य शीर्षक....................			
आयु सीमाएँ	**लिंग**	**शादी शुदा/ अविवाहित**	**योग्यताएँ** आवश्यक.. वांछनीय..
1. पूर्व अनुभव..			

Contd........

2. आवश्यक..

3. वाछंनीय..

आवश्यक क्षमतायें—;परिणाम स्प५ किये जायेंद्ध

1. बुर्(..
2. भाषण कला..
3. लेखन..
4. गणितीय..
5. प्रशासनीय..
6. सामाजिक..
7. पहल करना..
8. आकांक्षा..
9. नेतृत्व गुण..

बाह्य (External) श्रम शक्ति की पूर्ति के ोत

1. **रोतगार कार्यालयः** जो श्रमिक की तलाश में रहते हैं वे अपना नाम रोद्वगार कार्यालय में लिखा देते हैं। कम्पनी इन रोजगार कार्यालयों से सम्पर्क स्थापित करके अपने लिये श्रमिकों की पूर्ति कर सकती है।
2. **शिक्षण संस्थायेंः** विद्यालयों और डिग्री कॉलेजों से सम्पर्क स्थापित करके कम्पनी अपने यहाँ खाली स्थानों की पूर्ति कर सकती है।
3. **वर्तमान कर्मचारी की सिपफारिशः** कभी—कभी वर्तमान कर्मचारियों की सिपफारिश पर नये कर्मचारियों को नियुक्त किया जा सकता है।
4. **श्रमसंघः** श्रमसंघों के द्वारा श्रमिकों की भर्ती की जा सकती है। श्रमसंघ बेरोद्वगार श्रमिकों का लेखा अपने यहाँ रखते हैं और किसी भी संस्था से रिक्त स्थान की सूचना मिलते ही श्रमिकों को वहाँ भेत देते हैं।
5. **अन्य संस्थाओं के कर्मचारीः** कभी—कभी अन्य संस्थाओं से सम्पर्क करके वहाँ से कर्मचारियों की भर्ती की जा सकती है। इसके लिये यह आवश्यक है कि दोनों कम्पनियों के कर्मचारी विभागों के बीच सहयोग हो।
6. **विशि५ संस्थायेः** कुछ व्यावसायिक संस्थायें अपने सदस्यों का, जिन्हें नौकरी की आवश्यकता है, अपने यहाँ रिकार्ड रखते हैं। उनको सूचित करके आवश्यक योग्यता तथा अनुभवी कर्मचारी उपलब्ध हो सकते हैं।
7. **विज्ञापनः** वर्तमान समय में कर्मचारियों की भर्ती के लिये विज्ञापन का प्रयोग सबसे अध्कि किया जाता है। व्यावसायिक योग्यता वाले व्यक्तियों की भर्ती के लिये समाचार—पत्रों, पत्रिकाओं में विज्ञापन दिये जाते हैं। विज्ञापन विध्ि से खाली स्थानों का प्रचार—प्रसार व्यापक क्षेत्र में हो जाता है।

भर्ती का आन्तरिक ोत
(Internal Source)

एक अच्छी भर्ती नीति वह होती है जिसके अन्तर्गत कार्यरत श्रमिक अथवा कर्मचारियों में से ही भर्ती में प्राथमिकता दी जाती है। जब उपक्रम के अन्दर से श्रमिक/कर्मचारी न मिलें तो भर्ती के बाहरी ोत का उपयोग किया जाना चाहिए। E.B. Flippo के अनुसार—फ्व्यावसायिक संस्थाओं की प्रवृत्ति अपने अध्किारियों को घर में ही निर्मित करने की होती है।य् आन्तरिक भर्ती के ोत निम्न हैं—

1. **संगठन में से ही पदोन्नति करके:** यदि संस्था में योग्य कर्मचारी उपलब्ध हों तो उनकी पदोन्नति करके नए पद पर नियुक्त किया जा सकता है। इससे कर्मचारियों का मनोबल उफँचा रहता है।
2. **स्थानान्तरण करके:** कम्पनी के कई विभाग होते हैं यदि उनमें व्यक्ति सरप्लस ;अध्किद्ध हो तो उनको वहाँ से आवश्यकता के स्थान पर स्थानान्तरित किया जा सकता है।
3. **भूतपूर्व कर्मचारी:** यदि कोई भूतपूर्व कर्मचारी आवश्यक योग्यता रखता हो, जिसकी किसी कारण से छंटनी कर दी गई थी, और अब वह कर्मचारी काम पर वापिस आना चाहता हो तो उसकी नियुक्ति की जा सकती है।
4. **वर्तमान कर्मचारियों के मित्रगण एवं रिश्तेदार:** वर्तमान कर्मचारियों के मित्र एवं परिवार के सदस्यों में से, यदि वे आवश्यक योग्यता रखते हों, तो श्रम–शक्ति की पूर्ति की जा सकती है।

पदोन्नति एवं स्थानान्तरण का विस्तार से वर्णन नीचे दिया गया है।

1. **प्रत्यक्ष विध्ि (Direct Methods):** इस विध्ि के अन्तर्गत भर्ती शिक्षण संस्थाएँ, व्यावसायिक विशि‍५ संस्थाएँ, प्रबन्ध की शिक्षा देने वाली संस्थाएँ आदि से सम्पर्क करके भर्ती की जाती है।
2. **अप्रत्यक्ष विध्ि (Indirect Methods):** इस विध्ि के अन्तर्गत भर्ती के लिये मुख्य रूप से विज्ञापन की सहायता ली जाती है। सामाचार पत्रों, रेडियो, दूरदर्शन, व्यावसायिक पत्रिकाओं आदि में भर्ती के लिए विज्ञापन दिया जाता है। विज्ञापन की प्रति (Copy) बड़ी सूझ–बूझ के साथ तैयार करनी चाहिए।
3. कुछ संस्थाएँ अन्ध विज्ञापन (Blind Advertisement) का प्रयोग भर्ती के लिए करती हैं। विज्ञापन का उत्तर दने वाले को संस्था का नाम या चिन्ह न बतलाकर "Post Office Box Number" दिया जाता है। इस विध्ि का प्रयोग रा‍५ या मशहूर संस्थाएँ नहीं करती हैं।

पदोन्नति
(Promotion)

एक उचित पदोन्नति नीति (Promotion Policy) मानव संसाध्न/कर्मचारी प्रबन्ध (Personnel Management) का एक महत्त्वपूर्ण अंग बन सकती है यदि उसको ठोस आधर पर चलाया जा सके। प्रत्येक कर्मचारी के लिए प्रमोशन का आकर्षण महत्त्वपूर्ण होता है। यदि कर्मचारियों/श्रमिकों की भर्ती में योग्य व्यक्तियों का चयन किया गया गया है तो उन श्रमिकों/कर्मचारियों की निश्चित रूप से कुछ महत्त्वाकांक्षायें होंगी। यदि ऐसे व्यक्तियों की प्रमोशन से महत्त्वाकांक्षायें पूरी नहीं होती तो उनकी कार्यक्षमता पर बुरा प्रभाव पड़ता है। प्रमोशन के कारण कर्मचारी/श्रमिक ईमानदारी तथा लगन के साथ कार्य करता है।

पदोन्नति का अर्थ (Meaning of Promotion): स्काट, क्लोथ और स्प्रीगल (W.D. Scott. R.C. Clothier and W.R. Spriegel) के अनुसार—फ्पदोन्नति किसी कर्मचारी/श्रमिक का ऐसे काम पर स्थानान्तरण (Transfer) होता है तो उसे अध्कि आय अथवा अध्कि वरीयता वाला स्तर (Status) प्रदान करता है।य्

पिगोर्स और चार्ल्स मेयर (P. Pigours and Charles. A. Myers) के अनुसार—फ्पदोन्नति से आशय किसी कर्मचारी को एक श्रे‍६ कार्य, अध्कि जिम्मेदारियाँ, अध्कि आदर या स्टेटस, अध्कि निपुणता तथा विशेष रूप से बढ़ी हुई वेतन दर/मजदूरी के रूप में श्रे‍६ कार्य प्रदान करना होता है।य्

इस प्रकार पदोन्नति निरन्तर चलने वाली विकास की वह प्रक्रिया (Process) है जिसके द्वारा कोई कर्मचारी अपना काम और पद बदलता है। प्रमोशन में प्रायः अध्कि वेतन, उफँची प्रति‍६ा, अच्छे अवसर, बेहतर हैसियत, अच्छा कार्य वातावरण, पहले से अध्कि उत्तरदायित्व, कम कार्य के घंटे तथा अच्छी सुविधएँ प्राप्त करता है।

पदोन्नति के प्रकार (Types of Promition): प्रमोशन विभिन्न आधरों पर पांच प्रकार का होता है।

1. **समतल (Horizontal Promotion):** पदोन्नति एक ही प्रकार के कार्यों के अन्दर की जाती है जैसे लिपिक वर्ग (Clerk cadre) में जब छोटे पद वाले लिपिक (Lower division clerk) को बड़े पद वाले लिपिक (Upper division clerk) में पदोन्नति करना अथवा आपिफस अधेक्षक (Office Superintendent) के पद प्रमोशन करना आदि।

2. **लाइन अथवा लम्बवत् प्रमोशन (Vertical Promotion):** इस प्रमोशन के अन्दर कार्य का स्वभाव (Nature of work) बदल जाता है। जैसे संस्था के प्रशिक्षक को प्रबन्ध्क के पद पर स्थानान्तरित कर देना।
3. **अन्तर विभागीय पदोन्नति (Inter-departmental Promotion):** इसमें पदोन्नति संस्था के एक विभाग से दूसरे विभाग में स्थानान्तरण करके होती है, यानी जो लाइन/लम्बवत् (Vertical) रूप में होती है।
4. **विभागीय पदोन्नति (Departmental Promotion):** इसमें संस्था के एक ही विभाग में एक पद से दूसरे पद पर स्थानान्तरण किया जाता है। ये प्रायः समतल (Horizontal) रूप में होते हैं।
5. **अन्तर–संयंत्र वाली पदोन्नति (Inter-Plant Promotion):** इसमें एक संयंत्र (Plant) से संयंत्र पर प्रमोशन किया जाता है। इसमें समतल (Horizontal) तथा लाइन (Vertical) दोनों प्रकार के प्रमोशन सम्मिलित होते हैं।

संगठन की एक सुनिश्चित व्यापक पदोन्नति नीति होनी चाहिए। पदोन्नति योजना (Promotion Programme) का आधर वैज्ञानिक होना चाहिये। इस योजना में निम्नलिखित बातें होनर चाहिएँ—

1. कार्य–विश्लेषण, विवरण तथा वर्गीकरण के आधर पर पदों का सम्बन्धित महत्त्व निर्धरित किया जाए।
2. कर्मचारी की योग्यता का मूल्यांकन करने का तरीका निश्चित किया जाए।
3. उच्च पद के रिक्त होने पर यह निर्णय लेना चाहिए कि उसे विद्यमान कर्मचारियों से भरा जाय अथवा नया कर्मचारी चुना जाये। इस निर्णय में नये कर्मचारी के प्रशिक्षण की लागत आदि को भी ध्यान में रखा जाना चाहिये।
4. पदोन्नति के समय प्रशिक्षण की व्यवस्था भी की जानी चाहिये।

पदोन्नति नीति में निम्नलिखित बातों का स्पष्टीकरण किया जाना चाहिए—

1. क्या उच्चतर पदों के लिये कर्मचारियों का चुनाव संगठन के वर्तमान कर्मचारियों में से किया जाये या बाहर से।
2. पदोन्नति की आधर क्या होगा।
3. प्रत्येक पद के लिये किन–किन योग्यताओं तथा अनुभव की आवश्यकता है। इसमें कर्मचारियों को यह पता रहेगा कि किन योग्यताओं को प्राप्त करने पर उन्हें पदोन्नति दी जा सकेगी।
4. कर्मचारियों की योग्यता का मूल्यांकन वैज्ञानिक विध्यिों पर किया जायेगा।
5. पदोन्नति सदैव वैज्ञानिक आधर पर की जानी चाहिए। पक्षपात, भाईचारा आदि से की गई पदोन्नति का कर्मचारियों के मनोबल पर बुरा प्रभाव पड़ता है। पदोन्नति में कर्मचारी की योग्यता (merits) तथा वरिष्ठता (seniority) दोनों को ही उचित महत्त्व दिया जाना चाहिये।

स्थानांतरण
(Transfer)

स्थानान्तरण से आशय किसी श्रमिक/कर्मचारी का समान स्तर के अन्य पद, एक–सी जिम्मेदारी, समान मजदूरी/वेतन, एक–सी कार्य दशाएँ, समान प्रतिष्ठा वाले पद पर एक स्थान से दूसरे स्थान पर भेजने से है। **योडर** (Yoder) के अनुसार—"स्थनान्तरण में किसी कर्मचारी का एक कार्य से दूसरे कार्य में बिना उत्तरदायित्व में कमी या वृद्धि के हटाना सम्मिलित होता है।" स्थनान्तरण में पदोन्नति अथवा पदावनति (Demotion) (नीचे के पद पर स्थानान्तरण करना) सम्मिलित होता है।

स्थानान्तरण के कारण

(Causes of Transfer)

1. **प्रशासकीय कारण (Administrative Factors):** संगठन के किसी विभाग में कर्मचारियों की कमी तथा दूसरे विभाग में आवश्यकता से अध्कि कर्मचारी होने पर स्थानान्तरण किया जाता है। इसके अलावा नियंत्रण करने की दृष्टि से एक ही विभाग में लम्बे समय तक किसी कर्मचारी को रखना ठीक नहीं होता।

2. **तकनीकी कारण (Technical Factors):** किसी नये विभागीय कार्य को ठीक तरह से चलाने के लिये विशेष योग्यता प्राप्त कर्मचारियों का स्थानान्तरण करना आवश्यक होता है।

3. **कर्मचारी सुविध (Employee Facility Factors):** कर्मचारी अपने स्वास्थ्य अथवा घरेलू परिस्थितियों के कारण अपने स्थानान्तरण के लिये आवेदन कर सकता है।

3. **मध्ुर औद्योगिक सम्बन्ध् बनाये रखने के कारण (To maintain good Industrial Relations):** कर्मचारियों का पदाध्किारियों से झगड़ा होने पर अथवा एक विभाग में काम के लिये अनुपयुक्त सि(होने पर स्थानान्तरण किया जाता है।

पद–अवनयन अथवा पद–अवनति
(Demotion)

1. **अर्थ (Meaning):** फ्पदावनति अथवा पद–अवनतिय् से आशय व्यक्ति/कर्मचारी को वर्तमान पद से हटाकर ऐसा पद देने से है जो कम उत्तरदायित्व, कम वेतन तथा कम प्रतिष्ठा वाला होता है। डेल योडर (Dale Yoder) के अनुसार, फ्पद–अवनति (Demotion) से आशय एक ऐसा पद देने से है, जिसमें उत्तरदायित्त्व की कमी होती है, जबकि पदोन्नति में पद बृ(होती है तथा पद–अवनति में पद में गिरावठ होती है।य्

2. **पद–अवनति के कारण (Causes of Demotion):** पद–अवनति के निम्नलिखित प्रमुख कारण हैं।
   - (i) कर्मचारी वर्तमान पद पर सन्तोषजनक कार्य नहीं कर रहा हो,
   - (ii) कर्मचारी को अनुशासन भंग करने पर दंडित करने के लिये,
   - (iii) अनुचित पदोन्नति को सुधरना हो,
   - (iv) कर्मचारी द्वारा आवश्यक योग्यता खो देना जो कि वर्तमान पद के लिये आवश्यक हो।

3. **पद–अवनति का प्रभाव (Effect of Demotion):** पद अवनति सामाजिक जीवन पर एक लाँछन तथा एक दण्ड हैं। जिस कर्मचारी की पदानवति की जाती है, समाज उसके हीन भावना से देखता है।

4. **सि(ान्त (Principles):** प्रबन्ध्कों/सेवायोजको को पद–अवनति (Demotion) जैसे दण्ड देने से जहाँ तक सम्भव हो बचना चाहिये क्योंकि इससे कर्मचारियों में बहुत अध्कि असन्तोष पफैलता है। किन्तु यदि इस हथियार का इस्तेमाल प्रबन्ध्कों को करना ही पड़े तो बड़े सोच–विचार के बाद पद–अवनति करनी चाहिये। इस सम्बन्ध् में नीति स्पष्ट होनी चाहिये, सम्बन्ध्ति कर्मचारी को अपनी सपफाई देने का पूर्ण अवसर प्रदान करना चाहिये तथा विस्तृत जाँच के बाद ही किसी कर्मचारी की पदानति की जानी चाहिये।

सेवामुक्ति
(Discharge)

'सेवामुक्ति' से आशय एक कर्मचारी/व्यक्ति की सेवाएँ (Services) एक साधरण–सी सूचना देकर स्थायी आदेशों के अन्तर्गत सेवामुक्त/समाप्त करने से है। सेवामुक्ति/समाप्ति नियोक्ता अथवा सेवायोजक अपनी इच्छा से करता है। किसी कर्मचारी को सेवामुक्त तब किया जाता है तब कर्मचारी अपराध्, दुर्व्यवहार या अनुशासनहीनता करता है। सेवामुक्ति से सम्बन्ध्ति विवाद का हल/समाधन के लिए परिवेदना प्रणाली (Grievance Procedure) का सहारा लिया जाता है। सेवामुक्त कर्मचारी को दुबारा नौकरी देने के अवसर बहुत कम होते हैं।

सेवामुक्ति का प्रभाव
(Effects of Discharge)

सेवामुक्त कर्मचारी को अनेक हानियों को सहन करना पड़ता है, जैसे—बेरोजगारी, वरिष्ठताक्रम (Seniority) का बिगड़ना, आर्थिक हानि, प्रावीडेण्ट पफण्ड की हानि आदि।

भर्ती के ोतों की तुलना
(Comparison between Sources of Recruitment)

भर्ती के ोतों में से कौन सा ोत अपनाया जाएगा, यह पफर्म, संस्था की भर्ती नीति (Recruitment) तथा श्रमिक पूर्ति की दशाएँ, सरकारी नियम तथा श्रम संगठनों के साथ समझौते पर निर्भर करता है। लेकिन मानव संसाध्न–प्रबन्ध्क को भर्ती के विभिन्न ोतों पर कड़ी नजर सदैव रखनी चाहिए। मानव संसाध्न प्रबन्ध् की सर्वोत्तम भर्ती नीति वह होती है जिसमें सर्वप्रथम संगठन के अन्दर से ही श्रमिकों/कर्मचारियों को भर्ती/चयन किया जाता है। यदि आतंरिक ोतों से भर्ती करना सम्भव न हो तो उन्हे बाहरी ोतों को अपनाया चाहिए।

भर्ती के बाहरी ोतों का उपयोग करते समय विशेष रूप से निम्नस्तर पर (Lower Level) इस बात को ध्यान में रखना चाहिए कि भर्ती का विशेष ोत उपयोग में लाया जा रहा है। वह ोत श्रमिक बाजार में उपलब्ध् श्रमिकों की पूर्ति पर अध्कांश रूप से निर्भर करता है। जैसा कि एपफ॰ टी॰ माम (F.T. Malm) ने निम्न तालिका में स्पष्ट किया है।

Recruiting Practices Position in the Labour Market

Degree of Tightness in the Labour Market	Sources used for Recruitment	Area covered for Recruitment
1. Most loose	Direct hiring	Immediate vicinity
2. Intermediate	Unions, Friends and relatives private and public agencies	Part of an urban industrial area
3. Tight	Advertising, nearby special sources (colleges, private agencies	The whole urban industrial area
4. Most tight	Labour scouting	Regional and nationala

भारत में भर्ती की विभिन्न विध्याँ
(Recruitment Practices in India)

भारत में निजी तथा सार्वजनिक क्षेत्र के उद्योगों में श्रमिकों/कर्मचारियों की भर्ती के विभिन्न तरीकों का सर्वेक्षण करने के बाद भारत में भर्ती के ोतों को अध्ययन की सुविध की दृष्टि से निम्नलिखित भागों में विभाजित किया जा सकता है।

1. संगठन के अन्दर से ही श्रमिकों की प्राप्ति।
2. बदली अथवा अस्थायी कर्मचारी रखना।
3. रोजगार प्रदान करने वाली विशिष्ट संस्थाएँ।
4. आकस्मिक रूप से कार्य करने वाले श्रमिक (casual callers)।
5. वर्तमान कर्मचारियों के मित्रगण एवं रिश्तेदार।
6. विज्ञापन के द्वारा भर्ती।
7. श्रमिकों के टेकेदार आदि।

भारतीय निजी तथा सार्वजनिक क्षेत्र के संगठनों/उद्योगों में कर्मचारियों की भर्ती के लिये जो तरीके अपनाए जाते हैं वह इस प्रकार हैं—

भारत में भर्ती के तरीके

(Recruitment/Practices in India)

सार्वजनिक क्षेत्र (Public-Sector)

लोहा–इस्पात इकाइयाँ (Iron & Steel Units)

1. आकस्मिक रोजगार प्रापत करने वाले श्रमिकों की भर्ती (casual Callers)
2. सामाचार पत्रों में विज्ञापन देकर भर्ती।
3. अनुसूचित एवं जन–जाति के लोगों की भर्ती।
4. रोजगार दफ्रतरों के द्वारा भर्ती।
5. विस्थापित व्यक्तियों (displaced persons) की भर्ती।
6. कर्मचारियों के मित्र एवं रिश्तेदारों की भर्ती।
7. काम पर लगे व्यक्तियों की सिपफारिश पर भर्ती।
8. रोजगार प्रदान करने वाली विशिष्ट संस्थाओं के द्वारा भर्ती करना।

भारी इंजीनियरिंग इकाइयाँ (Heavy-Engineering Units)

1. रोजगार दफ्रतरों से भर्ती।
2. बाह्य एवं आंतरिक विज्ञापनों द्वारा भर्ती।
3. केन्द्रीय प्रशिक्षण–संस्थाओं के द्वारा भर्ती।
4. कम्पनी के लायजन आपिफसर की सिपफारिशों पर भर्ती।
5. डेपुटेशन पर आने वाले कर्मचारी।
6. अन्य सार्वजनिक संस्थाओं से भर्ती।

निजी क्षेत्र (Private Sector)

निजी क्षेत्र में भर्ती की कोई संगठित प्रणाली नहीं है। कुछ संगठनों में स्थानीय लोगों के मित्र एवं रिश्तेदारों की भर्ती की जाती है। इसके अतिरिक्त श्रमिकों की भर्ती का प्रमुख स्रोत निम्न हैं।

(i) विज्ञापन
(ii) रोजगार दफ्रतर
(iii) मित्र एवं रिश्तेदार
(iv) Casual Callers
(v) श्रमिकों/कर्मचारियों की सिपफारिश पर भर्ती करना।

निष्कर्ष
(Conclusion)

यद्यपि भारत में कानूनी दृष्टि से The Employment Exchange (compulsory Notification of Vacancies) Act, 1956 के अनुसार प्रत्येक सेवायोजक या नियोक्ताओं को रिक्त स्थानों को भरने के लिए अनिवार्य रूप से रोजगार कार्यालय (Employment Exchange) को सूचित करना होगा, लेकिन प्रायः देखा गया है कि भारत के रोजगार दफ्रतर सैकड़ों संगठनों की माँग, विशेष रूप से कुशल और अध्कि कुशल कर्मचारियों की पूर्ति करने में, पूरी तरह सपफल नहीं हुए हैं। बहुत से उदाहरणों को देखने से ज्ञात हुआ है कि अभी भी भारतीय श्रम की भर्ती के स्रोतों में कार्यरत कर्मचारियों के मित्र, रिश्तेदार तथा विज्ञापन भर्ती का प्रमुख स्रोत बना हुआ है।

भर्ती के स्रोतों की उपयुक्तता
(Suitability of Sources of Recruitment)

व्यावसायिक संगठन में पदों को निम्न वर्गो में बाँटा जा सकता है।

1. **उच्च प्रबन्ध्क (Top-Manager):** जैसे महाप्रबन्ध्क, उत्पादन प्रबन्ध्क, वित्तीय प्रबन्ध्क आदि।
2. **मध्यस्तरीय प्रबन्ध्क:** जैसे विज्ञापन प्रबंध्क, विपणन अनुसंधन प्रबन्ध्क, बजट नियन्त्रक आदि,
3. **तकनीकी विशेषज्ञ:** जैसे औद्योगिक इंजीनियर, उत्पादन विकास प्रबन्ध्क (Product Development manager), किस्म नियन्त्रक, आदि

4. **निम्नस्तरीय प्रबंधक :** जैसे पर्यवेक्षक, लेखाकार, कार्यालय प्रबन्ध्क, पफोरमैन आदि,
5. **दफ्रतरीय कर्मचारी** : जैसे क्लर्क, टाइपिस्ट तथा
6. **कारखाने के कारीगर।**

कर्मचारियों की नियुक्ति के लिए निम्नलिखित भर्ती के ोत उपयुक्त रहते हैं।

1. **उच्च प्रबंधक (Top Manager)** : (i) आन्तरिक पदोन्नति, (ii) विशिप्ु परामर्श गृह, (iii) सहयोगी तथा प्रतियोगी संस्थाएँ, (iv) विज्ञापन।
2. **मध्यस्तरीय प्रबंधक (Middle Manager)** : (i) पदोन्नति व स्थानान्तरण, (ii) सहयोगी तथा प्रतियोगी संस्थाएँ, (iii) विज्ञापन, तथा (iv) प्रबन्ध्कीय शिक्षण संस्थाएँ।
3. **तकनीकी विशेषता (Technical Experts)** : (i) सहयोगी तथा प्रतियोगी संस्थाएँ, (ii) तकनीकी शिक्षा संस्थाएँ, (iii) विशिप्ु परामर्श गृह, तथा (iv) विज्ञापन।
4. **निम्नस्तरीय प्रबन्ध्क (Lower Level Manager)** : (i) प्रबन्ध्कीय शिक्षण केन्द्र, (ii) आन्तरिक पदोन्नति, तथा (iii) विज्ञापन।
5. **दफ्रतरी कर्मचारी (Office Personnel)** : (i) वर्तमान कर्मचारियों की सिपफारिशें, (ii) रोजगार दफ्रतर तथा (iii) विज्ञापन।
6. **कारखाने के कारीगर (Operative Forces)** : (i) रोजगार दफ्रतर, (ii) श्रम संघ, (iii) कारखाने के दरवाजे पर भर्ती, (iv) स्थानीय पॉलीटैकनीक तथा अन्य औद्योगिक प्रशिक्षण केन्द्र तथा (v) वर्तमान कर्मचारियों की सिपफारिशें।

चयन–प्रक्रिया/चुनाव प्रक्रिया
(Selection Procedure)

एक देश में जहाँ कर्मचारियों के माँग की अपेक्षा कम कर्मचारी बाजार में प्रापत होते हैं वहाँ चुनाव की समस्या नहीं उठती क्योंकि जो भी आयेगा सभी को लिया जायेगा परन्तु जहाँ एक रिक्त स्थान के लिये हजार प्रार्थना–पत्र आते हैं वहाँ अध्कितम कार्यकुशल कर्मचारी का चुनाव करने की समस्या होती है। चुनाव करते समय संस्था की रोजगार–नीति (Employment Policy) को अच्छी तरह समझ लेना चाहिये। कर्मचारी चुनाव का काम बहुत महत्त्व रखता है क्योंकि प्रबन्ध्क द्वारा श्रमिकों से सम्बन्ध्ति जिन समस्याओं का सामना करना पड़ता है उनमें से अध्कितर श्रमिकों के गलत चुनाव के कारण पैदा होती हैं। चुनाव का अर्थ केवल यह नहीं है कि एक विशेष कार्य (Job) के लिये निर्धरित योग्यता वाला व्यक्ति चुनकर नियुक्त कर दिया जाए। आदर्श चुनाव विध् का प्रभाव संस्था की अल्पकालीन/दीर्घकालीन समस्याओं पर पड़ता है। नया कर्मचारी न केवल वर्तमान संस्था में स्थान ग्रहण करने के योग्य हो अपितु संस्था की प्रगति में चार–चाँद लगा सकता हो।

चुनाव का अर्थ
(Meaning of Selection)

डेल योडर (Dale Yodor) ने कहा है—फ्चुनाव से अभिप्राय संभावित नौकरी के लिये विचाराधीन उम्मीदवारों में से आशाहीन दिखाई देने वाले उम्मीदवारों को छांटकर अलग करने के नकारात्मक (Negative) व्यवहार से है। इसमें यह निर्णय करना पड़ता है कि पद के लिये अनेक उम्मीदवारों में से किस उम्मीदवार को काम करने का अवसर दिया जाये।य

प्रभावी चयन प्रक्रिया के लिये प्रारूप
(Model Procedure for Effective Selection Process)

कार्य–विश्लेषण
(Job-Analysis)

↓

कार्य–विवरण + कार्य–अपेक्षा विवरण
(Job-Description) (Job-Specification)
;इन दोनों की भर्ती के ोतों के अन्तर्गत विस्तार से चर्चा की गई हैद्ध

1. प्रार्थना–पत्रों की प्राप्ति (Receipt of Applications)
2. प्रारम्भिक इण्टरव्यू (Preliminary Interview)
3. प्रार्थना–पत्र ब्लैंक (Application Blank)
4. मनोवैज्ञानिक टैस्ट (Psychological Test)
5. इण्टरव्यू (Interview)
6. पूर्वपरिचय एवं व्यक्तिगत जानकारी (Background Investigation)
7. अन्तिम इण्टरव्यू (Final Interview)
8. सुपरवाइजर की स्वीकृति (Approval by supervisor)
9. डॉक्टरी जाँच (Medical Examination)
10. अनुगमन (Induction)

आधुनिक समय में कर्मचारियों के चुनाव के लिये निम्न कार्य किये जाते हैं।

कार्य–विश्लेषण (Job Analysis) : सर्वप्रथम विज्ञापन देने, प्रार्थना–पत्र तथा साक्षात्कार के परीक्षण के लिये आवश्यक तथ्य एकत्र करने के लिए कार्य–विश्लेषण किया जाता है तथा कार्य सम्बन्धी कार्य–प्रमाप तथा कार्य–विवरण एकत्र किये जाते हैं। कार्य–विवरण में किये जाने वाले कार्य, प्रयोग की जाने सामग्री तथा यंत्रों का विस्तृत विवरण होता है तथा कार्य–प्रमाप इन कार्यों को करने के लिए आवश्यक योग्यताओं की सूची होती है। दोनों की ही चुनाव प(ति में आवश्यकता पड़ती है।

1. **प्रार्थना–पत्रों की प्राप्ति (Receipt of Applications):** संस्था द्वारा पद के लिए समाचार–पत्रों में, व्यावसायिक पत्र–पत्रिकाओं में विज्ञापन दिया जाता है। उसके बाद प्रार्थी, अपना आवेदन–पत्र संस्था को भेजते हैं। आवेदन–पत्र प्राप्त करना, परम्परागत एवं बड़े पैमाने पर प्रयोग की जाने वाली प्रणाली है। प्रार्थियों के प्रार्थना–प्रत्रों को प्राप्त करके वैज्ञानिक आधर पर उनका विश्लेषण किया जाता है।

2. **प्रारम्भिक साक्षात्कार (Preliminary Interview):** हमारे देश में बहुत कम संस्थायें इसका प्रयोग करती हैं। विज्ञापन को देखने के बाद प्रार्थना–पत्र पफार्मों की माँग की जाती है जो अध्किांशतः डाक द्वारा भेज दिये जाते हैं। कुछ संस्थायें डाक द्वारा पफार्म न भेत कर कार्यालय में पफार्म व्यक्तिगत रूप से देने की व्यवस्था करती हैं तथा पफार्म देते समय पफार्म लेने वाले व्यक्ति की प्रारम्भिक जाँच करती हैं तथा अयोग्य व्यक्ति को पफार्म देने से ही इंकार कर दिया जाता है। पफार्म देने का कार्य मानवीय प्रबन्ध्क या उसके अधीन किसी प्रबन्ध्क के अधीन कर दिया जाता है जो पफार्म देते समय न्यूनतम योग्यता, व्यक्तित्व सम्बन्धी जाँच करता है तथा कुछ प्रश्न पूछकर बिल्कुल ही अयोग्य व्यक्ति को उसी स्तर पर निकाल दिया जाता है तथा अन्य को पफार्म दे दिये जाते हैं।

3. **प्रर्थना–पत्र ब्लैंक (Application Blank):** प्रत्येक संस्था ऐसे प्रार्थना–पत्रों का प्रयोग करती है जो प्रार्थना–पत्र भेजने वाले को अनिवार्य रूप से प्रयोग करना पड़ता है। ऐसा इसलिये किया जाता है कि प्रार्थी से संबंधित प्रत्येक आवश्यक

5. "Selection refers to the negative practice of aliminating from among all the candidates considered for possible employment those who appear unpromising. It involves making a decision as to which of a number of candidates for positions are to be given an opportunity to work".

–Dale Yodor

जानकारी व्यवस्थित रूप में प्राप्त हो सके। अध्किांश संस्थाओं के प्रार्थना–पत्रों में समानता पाई जाती है तथा लगभग वही प्रश्न पूछे जाते हैं। जब ये पफार्म भरकर आ जाते हैं तब इन सभी की जाँच की जाती है तथा न्यूनतम आवश्यक योग्यता पूर्ण करने वाले प्रार्थियों का चुनाव किया जाता है। यदि प्रार्थी बहुत अध्कि हैं तब इनमें से निश्चित संख्या में प्रार्थी चुन लिये जाते हैं।

लेकिन प्रार्थना–पत्र (Application in Blank) सभी संस्थाओं के एक से नहीं होते। कुछ संस्थाएँ प्रार्थियों से शिक्षा (Education) या अनुभव (Experience) के विष्ज्ञय में अध्कि जानना चाहती हैं, कुछ संस्थाएँ Unskilled Employees की भर्ती करना चाहती हैं तो उसमें शैक्षणिक योग्यता पर अध्कि बल नहीं दिया जाता है। इसलिए भर्ती की प्रकृति पर प्रार्थना–पत्रों का प्रारूप निर्भर करता है।

4. **मनोवैज्ञानिक परीक्षा (Psychological Test)**: प्रार्थना–पत्रों में उपयुक्त पाये गये व्यक्तियों को टैस्ट पर बुलाया जाता है तथा लिखित टैस्ट लिया जाता है और इसकी सहायता से यह जाना जाता है कि भविष्य में यह व्यक्ति कैसा व्यवहार करेगा। इनकी सहायता से Intelligence Achievement, Interest, Personality आदि को मापा जाता है। यह लिखित होता है तथा व्यक्ति द्वारा दिये गये उत्तरों के आधर पर निष्कर्ष निकाले जाते हैं। यदि निष्कर्ष शत–प्रतिशत ठीक नहीं निकलते पिफर भी 70÷ अवस्थाओं में ये ठीक ही बैठते हैं।

5. **रोग्ाागार साक्षात्कार (Employment Interview)**: शायद ही कोई कम्पनी या संस्था ऐसी हो जो कर्मचारियों के चुनाव में साक्षात्कार का प्रयोग न करती हो। यह चुनाव की सबसे प्राचीन विध्ि होने के साथ–साथ सर्वमान्य है। एक व्यक्ति या कुछ व्यक्तियों का बोर्ड बनाया जाता है जो Interview लेता है। अध्किांशतः बोर्ड का ही प्रयोग होता है, जिसमें अलग–अलग क्षेत्रों के विशेषज्ञों के साथ उस पद के उच्चाध्किारी को इसमें सम्मिलित किया जाता है।

6. **पूर्व परिचय एवं व्यक्तिगत जानकारी (Background Investigation)**: अध्किांश प्राथना–पत्रों में दो या अध्कि उत्तरदायी व्यक्तियों के पते माँगे जाते हैं जो प्रार्थी को जानते हों। ये उसके पुराने प्रबन्ध्क हो सकते हैं या वे अच्छे पदों पर लगे उत्तरदायी व्यक्ति होते हैं। प्रार्थना–पत्रों के अध्ययन के बाद चुने हुए प्रार्थियों के प्रार्थना–पत्रों में दिये गये व्यक्तियों से संबंध् सथापित कर उनके विषय में पूछताछ की जाती है। जिसके विषय में जानकारी ठीक प्राप्त नहीं होती उसे साक्षात्कार एवं टैस्ट के लिये नहीं बुलाया जाता।

7. **अन्तिम इण्टरव्यू (Final Interview)**: प्रार्थी के विभिन्न परीक्षणों तथा पूर्ण परिचय एवं उसके विषय में विस्तृत जानकारी के बाद केवल उन्ही प्रार्थियों को, जिनका चयन किया जाना है, पुनः साक्षात्कार के लिये बुलाया जाता है। इस इण्टरव्यू में प्रार्थी से साधरण एवं काम करने से सम्बन्ध्ति बातें तय की जाती हैं।

8. **सुपरवाइजर की स्वीकृति (Approval by Supervisor)**: चुनाव करते समय प्रत्येक अवस्था में सुपरवाइजर की इच्छा को ध्यान में रखा जाना चाहिये क्योंकि उसी ने उस कर्मचारी से काम लेना होता है। यदि बोर्ड में सुपरवाहजर को बैठाया गया है तब अन्तिम पफैसला करने का अध्किार उसका होना चाहिये। यदि बोर्ड में उसे नहीं लिया गया है तो साक्षात्कार के बाद भी अन्तिम पफैसला करने का उसे अध्किार होना चाहिए।

9. **डॉक्टरी परीक्षा (Medical Examination)**: सुपरवाइजर की सलाह प्राप्त होने के पश्चात् कर्मचारियों की योग्य डॉक्टरों से जाँच करवाई जाती हैं या उन्हें योग्य डॉक्टर का प्रमाण–पत्र लाने को कहा जाता है। ऐसा इसलिए किया जाता है ताकि संस्था में कमजोर तथा बीमार रहने वाले व्यक्तियों की अपेक्षा स्वस्थ कर्मचारी आएँ।

10. **अनुमान (Induction)**: डॉक्टरी जाँच के पश्चात् प्रार्थी को उसके पद पर लगाया जाता है। जब वह अपनी जगह आता है तो उसे नये–नये साथी एवं प्रबन्ध्क मिलते हैं। उसे नये कार्य एवं अवस्थाओं का सामना करना होता है। कहलाती है। इसके अन्तर्गत कर्मचारी के कार्य करने का ढंग, सहायता के लिए किससे मिलना है, कार्यालय के नियम, कार्यालय के शौचालय, कैण्टीन आदि का रास्ता, उनके कार्य का संस्था में महत्त्व आदि बतलाया जाता है।

अन्त में यहाँ हिन्दुस्तान लीवर (Hindustan Lever) में प्रबन्ध्कों के चुनाव की विध्ि को संक्षिप्त रूप में दिया गया है।[6]

हिन्दुस्तान लीवर में प्रत्ये तीन महीने बाद एक सूची बनाई जाती है जिसमें कम्पनी के कुल कर्मचारियों, प्रत्येक क्षेत्र में कर्मचारियों की संख्या, पदमुक्ति, हटाये गये कर्मचारियों की संख्या, पदोन्नति की संख्या तथा नये नियुक्त किये गये कर्मचारियों की संख्या

6. Management Development in Hindustan Lever, (1964) p. 5-8.

–P.L. Tandon

दिखाई गई होती है। यह सूची सर्वप्रथम प्रत्येक विभाग के मुख्याधिकारी द्वारा जाँची जाती है तथा पिफर बोर्ड द्वारा उसकी जाँच होती है। इस सूची की जाँच के आधर पर संस्था की आवश्यकताओं का अनुमान लगाया जाता है।

संस्था की आवश्यकताओं का पता चलने के बाद यह निश्चित किया जाता है कि ये प्रबन्ध्क कहाँ से प्रापत किये जायेंगे। सर्वप्रथम कम्पनी सदा ही आन्तरिक ोत की ओर देखती है, और देखती है कि कौन कर्मचारी प्रबन्ध्क बनाए जाने की योग्यता रखता है तथा बनने को इच्छुक है। इसलिए कम्पनी में अच्छे रिकार्ड वाले स्टॉपफ से प्रारम्भिक चुनाव व प्रशिक्षण की व्यवस्था है ताकि उपयुक्त गुण रखने वाले कर्मचारी उच्चस्तर तक पहुँच सकें। कम्पनी बाह्य स्रोतों से भी प्रबन्ध्कों के पद के लिए नवयुवकों की भर्ती करती है। सामान्य प्रबन्ध् के लिए कला, विज्ञान या अन्य क्षेत्र तथा तकनीकी ज्ञान व डिग्री (Degree) रखने वाले नवयुवक भर्ती करती है। चुनाव करते समय संस्था अनुभव की अपेक्षा अच्छे दिमाग को अध्कि महत्त्व देती है। प्रायः विशिप्ट क्षेत्र जैसे अनुसंधन, कानून, इन्जीनियरिंग, इकॉनामिक्स, सांख्यिकी आदि के प्रबन्ध्कों के लिए कम्पनी बाह्य ोत की ओर ध्यान देती है। इसके लिए देश में विख्यात समाचार–पत्रों में विज्ञापन दिए जाते हैं तथा प्रार्थना–पत्र माँगे जाते हैं। यहाँ यह बात ध्यान देने योग्य है कि कम्पनी को प्रत्येक नियुक्ति के जिए 100 प्रार्थना–पत्र प्राप्त होते हैं। इन प्रार्थना–पत्रों की जाँच की जाती है तथा जो व्यक्ति आयु तथा योग्यताओं को पूरा करते हैं उन्हें छपा हुआ प्रार्थना–पत्र भेज दिया जाता है। इस प्रार्थना–पत्र में स्कूल व कॉलेज का विस्तृत ब्यौरा पूछने के साथ–साथ उनकी रुचि, जॉब के प्रति विचार तथा नेतृत्व सम्बन्धी प्रश्न दिए होते हैं। इन भरे हुए पफार्मों की विशेषज्ञों द्वारा जाँच कराई जाती है तथा इन सूचनाओं के आधर पर चुने गये व्यक्तियों को प्रारम्भिक इण्टरव्यू के लिए कम्पनी के मुचय कार्यालय पर बुलाया जाता है। यह साधरण साक्षात्कार (Interview) होता है जिसमें प्रार्थियों के सामान्य ज्ञान व विकास की जाँच की जाती है। जो प्रार्थी इस साक्षात्कार में योग्य पाए जाते हैं उन्हें अन्तिम साक्षात्कार के लिए कम्पनी के मुख्य कार्यालय पर बुलाया जाता है। अन्तिम साक्षात्कार दो भागों में होता है। प्रथम भाग में साक्षात्कार पर आए प्रार्थियों को छः–छः के समूह में समूहब(कर दिया जाता है तथा प्रत्येक समूह को बारी–बारी से एक कान्प्रफेंस मेज पर लाया जाता है। उन्हे कुछ विषय व केस दिए जाते हैं जिन पर वह कम्पनी के चार उच्च प्रबन्ध्कों की उपस्थिति में वाद–विवाद करते हैं। यह प्रबन्ध्क उनकी गतिविध् को देखते हैं तथा कोई हस्तक्षेप नहीं करते। यह समूह बिना नेते के होते हैं तथा अपने को स्वयं संगठित करते हैं। यहाँ प्रत्येक सदस्य को अपनी–अपनी योग्यता व नेतृत्व दिखलाने का अवसर प्रदान किया जाता है। संस्था का मनोवैज्ञानिक सलाहकार, जा इस सामूहिक वाद–विवाद में उपस्थित होता है तथा संस्था की आवश्यकता को जानता होता है, उनकी गतिविध्यिों का मूल्यांकन करता है। इस वाद–विवाद के बाद उनका एक साक्षात्कार होता है जिसमें प्रत्येक प्रार्थी को कुछ मनोवैज्ञानिक टैस्ट देने होते हैं। अन्तिम चुनाव के द्वितीय भाग में बहुत योग्य प्रार्थियों को एक साक्षात्कार बोर्ड के सम्मुख पेश किया जाता है। इस बोर्ड में कम से कम दो संचालक, मानवीय प्रबन्ध् संचालक तथा अन्य प्रबन्ध्क होते हैं। इस अन्तिम समूह में जो प्रार्थी निर्धरित स्तर तक पहुँच पाते हैं उनको चुन लिया जाता है।

इस प(ति को देखने से स्पप्ट है कि हिन्दुस्तान लीवर ने अपनी चुनाव प(ति को अध्कितम सम्भव उद्देश्यपूर्ण व न्यायसंगत बनाने का प्रयास किया है ताकि जो भी चुना जाए उसे भी यह विश्वास हो कि चुनाव न्यायसंगत है। आज लगभग सभी बड़ी–बड़ी संस्थायें इस प(ति से मिलती–जुलती प(ति का प्रयोग करती हैं।

साक्षात्कार अथवा इण्टरव्यू
(Interview)

अर्थ
(Meaning)

साक्षात्कार चयन की वह विध् है जिसके अन्तर्गत प्रार्थी के उत्तरदायित्व उसके व्यवहार तथा उसके गुणों को ज्ञात किया जाता है।

साक्षात्कार नियोजन के उद्देश्य से अन्तिम निर्णय पर पहुँचने की एक विध् है। इसमें प्रार्थी/व्यक्ति को पूरी तरह सुना जाता है। वह क्या चाहता है, क्या जानता है, यह मालूम किया जाता है तथा उसे अपने आपको पूर्ण रूपेण व्यक्त करने का

अवसर दिया जाता है। इस प्रकार साक्षात्कार द्वारा प्रबन्धक को प्रार्थी से परिचय प्राप्ति में सुविध होती है। यह उम्मीदवार (Applicant) और जॉब (Job) के उद्देश्य के बीच आमना–सामना कराता है जैसा कि **अल्पफर्ड** तथा **बीटी** (L.P. Alford and Beatty) ने स्वयं कहा है–

फ्रोजगार इण्टरव्यू का उद्देश्य, कार्य (Job) के लिए प्रार्थी की तथा प्रार्थी के लिए कार्य (Job) की उपयुक्तता निर्धरित करना है।ऱ

साक्षात्कार के उद्देश्य
(Objects of Interview)

मारिस बी॰ कमिंग (Maurice B. Cuming) ने साक्षात्कार के निम्न तीन उद्देश्य बतलाये हैं–

1. **प्रार्थी की उपयुक्तताः** सम्बन्धित पद के लिए प्रार्थी की उपयुक्तता के विषय में निर्णय लेने के लिए प्रार्थी के बारे में पर्याप्त जानकारी एवं खोजबीन के लिए नियोक्ता को अवसर देना।
2. प्रार्थी को पद तथा संस्था के बारे में सम्बन्धित सम्पूर्ण जानकारी देना।
3. प्रार्थी को यह सन्तोष हो जाय कि उसे पद प्राप्त करने के लिए अपने गुणों को दिखाने का पूरा अवसर प्रदान किया गया है।

इण्टरव्यू लेना एक कला (Art) है जिसके लिये इण्टरव्यू लेने वाले व्यक्ति में पर्याप्त चातुर्य तथा निर्णय लेने की क्षमता आवश्यक है, क्योंकि प्रार्थी प्रश्नों का किस प्रकार तथा क्या उत्तर देता है, से प्रार्थी की योग्यता के बारे में निर्णय लिये जाते हैं। एक सपफल एवं आदर्श इण्टरव्यू में प्रार्थी की योग्यताओं का पद की आवश्यकताओं के बीच तालमेल बैठा दिया जाता है।

साक्षात्कार के सि(ान्त
(Principles of Interview)

साक्षात्कार के सि(ान्तों को मुख्य रूप में तीन विद्वानों के कथन के अनुसार तीन भागों में विभाजित करते हैं–

1. **डब्लू॰ वी॰ बिंघम (W.V. Bingham) तथा बी॰ वी॰ मूरे (B.V. Moore)** के अनुसार साक्षात्कार के सि(ांत निम्न हैं–
   - (i) साक्षात्कार से पूर्व ही प्रार्थी के बारे में पूर्ण जानकारी प्राप्त कर लेनी चाहिए।
   - (ii) कार्य–प्रमापों (Job-specification) के आधर पर एक प्रश्नावली तैयार करनी चाहिए।
   - (iii) साक्षात्कार के लिए एकांत की व्यवस्था तथा प्रार्थी को पर्याप्त समय दिया जाना चाहिए।
   - (iv) साक्षात्कार में प्रार्थी के दृष्टिकोण से भी विचार किया जाए न कि केवल व्यक्तिगत दृष्टिकोण से।
   - (v) साक्षात्कारकर्त्ता को प्रश्न पूछते समय सीधे–सादे ढंग को अपनाना चाहिए न कि चतुर–चालाकी।
   - (vi) साक्षात्कार के लिये आये प्रार्थियों को सुविध अनुभव करने दिया जाय, ताकि वह अपने बारे में पूर्ण जानकारी दे सकें।
2. **पाल पिगोर्स एवं चाल्सं ए॰ मेयर्स (Paul Pigorus and Charles A. Myers)** के अनुसार–फ्साक्षात्कार करने से पूर्व यह आवश्यक है कि साक्षात्कार के विशेष उद्देश्यों को निश्चित कर लिया जाए तथा उन विध्यिों को भी निश्चित कर लिया जाए जिनसे उन उद्देश्यों को प्राप्त किया जायेगा।ऱ इनके अनुसार साक्षात्कार के प्रमुख सि(ांत इस प्रकार हैं–
   - (i) साक्षात्कार का वातावरण (Setting of Interview)
   - (ii) साक्षात्कार (Interview)
   - (iii) साक्षात्कार का अन्त (Close of Interview)

साक्षात्कार का वातावरण
(Setting of Interview)

साक्षात्कार की तैयारी के लिए निम्न पाँच बातें जरूरी हैं—

1. **गोपनीयता एवं सुविध (Privacy and Comfort):** साक्षात्कार जहाँ तक सम्भव हो एकांत में तथा आरामदायक वातावरण में किया जाना चाहिए ताकि प्रार्थी साक्षात्कार के दौरान शारीरिक तथा मनोवैज्ञानिक सुविध महसूस कर अपने समस्त गुणों का प्रदर्शन कर सके। ठीक यही विचार **पाल जी॰ हैंस्टिंग्स** (Paul G. Hastings) ने प्रकट किये हैं—

   फ्साक्षात्कारकर्त्ता को यह सोचना चाहिये कि अध्किांश प्रार्थी नौकरी के साक्षात्कार के दौरान कुछ मानसिक तनाव की स्थिति में रहते हैं। उसे चाहिए कि वह प्रार्थी को सुविधजनक स्थिति महसूस करने दे। उसे प्रार्थी की भावनाओं के प्रति विचारवान होना चाहिये। पर्याप्त सीमा तक, अनेक प्रार्थियों के मस्तिष्क में साक्षात्कारकर्त्ता का असभ्य व्यवहार खराब जन सम्बन्धें का परिचायक होगा।य्[7]

2. **विश्राम का सा वातावरण (An Atmosphere of Leisure):** साक्षात्कारकर्त्ता को प्रार्थी से प्रश्न पूछते समय जल्दी नहीं करनी चाहिए और न ही यह दिखाना चाहिए कि उसकी रुचि किसी अन्य प्रार्थी में है। अपितु, साक्षात्कारकर्त्ता को प्रार्थी को अपने गुण प्रदर्शित करने का पर्याप्त अवसर प्रदान करना चाहिए।

3. **साक्षात्कार को अनौपचारिक रूप से आरम्भ करना चाहिए (An informal Opening of Interview):** साक्षात्कार का आरम्भ अनौपचारिक रूप से बात—चीत से होना चाहिए। इससे प्रार्थी को साहस एवं आराम मिलता है।

4. **गोपनीयता बनाए रखी जाए (Establishing and Maintaining Confidentiality):** साक्षात्कारकर्त्ता द्वारा प्रार्थी को बता देना चाहिए कि वह जो कुछ कहेगा वह गोपनीय रहेगा।

5. **अवरोध का न होना (Freedom from Interruptions):** साक्षात्कारकर्त्ता को चाहिये कि वह जब साक्षात्कार ले रहा हो तब किसी अन्य से बातचीत न करे, अन्य कागजों पर हस्ताक्षर न करे। उस प्रार्थी को बीच में बार—बार टोकना नहीं चाहिये।

साक्षात्कार
(Interview)

1. साक्षात्कारकर्त्ता द्वारा दूसरे व्यक्तियों के प्रति आदर और प्रसन्नता का भाव प्रकट करना चाहिये।
2. प्रश्न प्रार्थी से इस प्रकार पूछे जाएं ताकि प्रार्थी को बोलने के लिए उत्साह मिले।
3. सावधनीपूर्वक प्रार्थी की बात सुनी जाय।
4. प्रश्न तथ्यों से सम्बन्ध्ति (Fact-finding)पूछे जायें।
5. प्रार्थी के बोलने के अलावा उसके व्यवहार को देखा जाए।
6. साक्षात्कार के समय टिप्पणियाँ (Notes) लिखनी चाहिएँ।

साक्षात्कार का अन्त
(Closing of Interview)

1. प्रार्थी को सूचित किया जाए कि अब साक्षात्कार समाप्त होने जा रहा है।
2. प्रार्थी को परिणाम के बारे में कब तक सूचना दी जायेगी, बताया जाये।
3. जैसे ही साक्षात्कार उस प्रार्थी से समाप्त हो और प्रार्थी साक्षात्कार भवन से बाहर जाये, साक्षात्कारकर्त्ता को चाहिये कि वह प्रार्थी का मूल्यांकन करे।

---

7. "An interviewer must remember that most applicants are under some strain during a job interview. He should put the applicant at ease if he can. He should be considerate of the applicant's feeling. To a considerable degree "the interviewer is the company" in the minds of many applicants. It is therefore poor public relations for an interviewer to be brusque."

–Introduction to Business. p. 177.

4. (National Institute of Industrial Psychology, England) ने एक सात–सूत्रीय योजना (7 Point Plan) बनायी है जिससे प्रार्थी के विष्ज्ञय में पूरी जानकारी प्राप्त होती है—
   - (i) ***शारीरिक आकृति (Physical Make up)*:** प्रार्थी में कोई शारीरिक दोष नहीं होना चाहिये तथा उसकी आकृति (Appearance), छवि (Bearing) तथा बोली प्रिय होनी चाहिये।
   - (ii) ***उपलबिध्याँ (Attainment)*:** प्रार्थी में शैक्षणिक और व्यावसायिक प्रशिक्षण से सम्बन्ध्ति उपलब्ध्यिाँ कितनी हैं तथा उसे कितना अनुभव है।
   - (iii) ***विशेष रुचियाँ (Special Aptitude)*:** क्या प्रार्थी मशीनी कार्य में रुचि रखता है? उसमें बोलने की दक्षता है? कलात्मक या गायन की क्षमता है तथा शारीरिक निपुणता कितनी है?
   - (iv) ***रुचियाँ (Interests)*:** उसकी रुचियाँ सामाजिक हैं या कलात्मक, बौ(िक हैं या रचनात्मक?
   - (v) ***स्वभाव (Nature)*:** प्राथी का स्वभाव अन्य व्यक्तियों के प्रति कैसा है? क्या वह दूसरों को प्रभावित करता है? क्या प्रार्थी आत्मविश्वासी है?
   - (vi) ***प्रार्थी का वातावरण (Circumstances of Applicant)*:** प्राथी के घर का वातावरण कैसा है?

चुनाव परीक्षण
(Selection Test)

आज के युग में चुनाव परीक्षणों का महत्त्व बहुत अध्कि हो गया है। चुनाव परीक्षणों का प्रतिपादन मनोवैज्ञानिक विद्वानों के द्वारा होता है तथा इनका प्रयोग इण्टरव्यू के साथ–साथ होता है। सही पद के लिए उचित व्यक्ति की तलाश में ये परीक्षण सहायक होते हैं। चुनाव परीक्षण करते समय निम्न बातों को ध्यान में रखना चाहिए—

1. परीक्षण की विध् िविश्वसनीय होनी चाहिए।
2. परीक्षणों का चुनाव जॉब विश्लेषण की योजना पर आधरित होना चाहिये।
3. परीक्षण विध् िको दूसरी चुनाव विध्यिों के पूरक रूप में मानकर चलना चाहिये न कि स्थानापन्न (Substitute)।
4. चुनाव परीक्षण उस व्यक्ति के द्वारा किये जाएँ, जो परीक्षण निर्माण, व्यवहार तथा विश्लेषण कार्य में दक्ष हो।
5. परीक्षण कार्य को लगातार अनुसंधन करके सरल एवं उपयोगी बनाया जाय।
6. परीक्षण विध् िका प्रयोग नियन्त्रित तथा प्रभावित होना चाहिये।
7. परीक्षण विध् िन्यायोचित एवं प्रामाणिक होनी चाहिए।

चुनाव परीक्षण के प्रकार
(Types of Selection Test)

चुनाव परीक्षणों को अध्ययन की सुविध की दृष्टि से निम्न चार भागों में विभाजित किया जा सकता है—

1. सीखने की क्षमता को ज्ञात करने के लिए–बुद्धि परीक्षण (Intelligence Test)।
2. योग्यता तथा कौशल को ज्ञात करने के लिये–योग्यता परीक्षण (Ability or Achievement Test)।
3. विशिष्ट कौशल की सम्भावित क्षमता का माप करने के लिये–प्रवृत्ति परीक्षण (Aptitude Test)।
4. अन्य परीक्षण—
   - (i) व्यक्तित्व परीक्षण (Personality Test)
   - (ii) दक्षता परीक्षण (Dexterity Test)
   - (iii) अभिरुचि परीक्षण (Interest Test)

1. **बुद्धि परीक्षण (Intelligence Test):** इस परीक्षण में प्रार्थी की सीखने व विकास की संभावनाओं का अनुमान लगाया जा सकता है। यह परीक्षण प्रार्थी के मानसिक स्तर (Mental Calibre) का पता लगाने के लिये किया जाता है। इस

मानसिक स्तर की जाँच में प्रार्थी की समझने तथा तर्क देने की क्षमता और बु(ि की प्रमुख विशेषताओं सहित मूल्यांकन किया जाता है।

2. **योग्यता परीक्षण (Ability or Achievement Test):** प्रार्थी की वर्तमान योग्यता तथा विशि५ क्षेत्र में उसके पास कितनी योग्यता है, का मूल्यांकन किया जाता है।

3. **प्रवृत्ति परीक्षण (Aptitude Test):** इसके द्वारा प्रार्थी की छिपी हुई योग्यताओं का पता लगाने का प्रयास किया जाता है जिससे कि सम्बन्धित योग्यता का पता चल जाने पर उचित प्रशिक्षण दिया जा सके।

   सब प्राणियों में कुछ–न–कुछ छिपी हुई योग्यताएँ होती हैं चाहे वह उस समय दिखाई देती हों या नहीं। सभी प्रकार की प्रवृत्तियाँ गणितीय, रचनात्मक, निर्माण सम्बन्धी, मेकेनिकल या गायन आदि। इन सबको परीक्षण द्वारा ज्ञात किया जा सकता है।

4. **जोसेपफ टिपिफन तथा अर्नेस्ट जे॰ मेक कार्मिक (Joseph Tiffin and Earnest J. Mc Carmick):** के शब्दों में फ्प्रवृत्ति परीक्षण इस बात का मूल्यांकन करता है कि यदि व्यक्ति को पर्याप्त प्रशिक्षण दिया जाय तो किसी कार्य को सीखने की उसमें छिपी हुई क्षमता है या नहीं है।य

4a. **व्यक्तित्व परीक्षण (Personality Test):** इस परीक्षण के द्वारा प्रार्थी के सामाजिक और पारिवारिक जीवन के सम्बन्ध में आवश्यक जानकारी प्राप्त की जती है। क्या प्रार्थी का व्यक्तित्व कार्य के लिए उपयुक्त है या नहीं तथा इस परीक्षण से प्रार्थी की भावनात्मक विशेषताओं का भी अनुमान लगाया जाता है। इससे प्रार्थी का अन्य व्यक्तियों के साथ काम करने तथा भिन्न–भिन्न परिस्थितियों में अनुकूल कार्य करने का अनुमान लगाया जाता है। जिस प्रार्थी को लम्बे समय तक दूसरे व्यक्तियों के साथ काम करना पड़ेगा उसके बारे में यह परीक्षण अवश्य किए जाने चाहिएँ।

4b. **दक्षता परीक्षण (Dexterity Test):** जहाँ पर शारीरिक श्रम जरूरी होता है, यह परीक्षण आवश्यक होता है। इस परीक्षण से यह ज्ञात किया जाता है कि प्रार्थी अपने हाथ–पैर और शरीर की गतिविध्यिों को कैसे करता है।

4c. **अभिरुचि परीक्षण (Interest Test):** इस परीक्षण के द्वारा सम्बन्धित व्यवसाय एवं कार्य के सम्बन्ध में प्रार्थी की रुचि का पता लगाया जाता है। बहुत से व्यक्ति एक विशेष कार्य में रुचि नहीं रखते। यदि उन्हें वह काम दिया जाय तो उनके कार्य का स्तर निम्न होता है। ऐसे व्यक्ति उस व्यवसाय में कभी सपफल नहीं होते।

परीक्षणों की सीमाएँ
(Limitations of Tests)

मनोवैज्ञानिक परीक्षण स्वयं में पूर्ण नहीं होते अपितु इनकी भी निम्न सीमायें हैं–

1. परीक्षण त्रुटिपूर्ण हो सकते हैं।
2. इन परीक्षणों से कुछ गुणों को ज्ञात नहीं किया जा सकता, जैसे–परिश्रम करना, संस्था के प्रति वपफादारी आदि।
3. कार्यकारी व्यक्तियों को ठीक से अनुसूचित नहीं किया जा सकता है।
4. उच्चस्तरीय मानसिक योग्यता वाले प्रार्थी मनोवैज्ञानिक परीक्षणों में तो खरे उतर सकते हैं किन्तु जरूरी नहीं कि वे व्यवहार में, काम में उपयुक्त सि(हों।
5. व्यापारिक निर्णयों की क्षमता का उचित मूल्यांकन आवश्यक नहीं।
6. इन परीक्षणों का प्रयोग केवल बड़ी संस्थायें ही कर सकती हैं।

भरती तथा चुनाव में अन्तर (Distinctions between recruitment and selection): भरती तथा चुनाव में निम्नलिखित अन्तर हैं–

1. **प्रकृति (Nature):** भरती में प्रयास किया जाता है कि विभिन्न स्थानों से रो८ागार पाने के इच्छुक लोगों में से ऐसे लोगों को खोजा जाए व आवेदन देने के लिए आकर्षित तथा प्रेरित किया जाए जो आवश्यक योग्यताएँ रखते हों। इसके

---

8. "Aptitude tests measure whether an individual has the capacity of latent ability to learn a given job, if he is given adequate training."

विपरीत, चुनाव की प्रक्रिया में उपलब्ध प्रत्याशियों के विभिन्न परीक्षणों के द्वारा यह पता लगाया जाता है कि प्रस्तुत कार्य को कौन उम्मीदवार अध्कि कुशलता के साथ पूरा कर सकेगा।

2. **दृष्टिकोण (View point):** भरती एक सकारात्मक दृष्टिकोण है जिसमें अध्कि से अध्कि ऐसे लोगों को आकर्षित किया जाता है जिनमें आवश्यक योग्यताएं हों। इसके विपरीत, चुनाव एक नकारात्मक दृष्टिकोण है क्योंकि इसमें आवश्यक योग्यता वाले प्रत्याशियों में से, चुने गए एक या कुछ प्रत्याशियों को छोड़ कर, अन्य अनेक प्रत्याशियों को भिन्न–भिन्न परीक्षाओं के आधर पर अस्वीकृत किया जाता है।

3. **उद्देश्य (Objective):** भरती का उद्देश्य अध्कि से अध्कि योग्य उम्मीदवारों को आकर्षित करना है जिससे सर्वश्रेष्ठ चुनाव किया जा सके, लेकिन चुनाव का उद्देश्य अनेक उम्मीदवारों में से केवल गिनती के उन लोगों को चुनना है जो आवश्यक योग्यताओं में सर्वश्रेष्ठ हों।

4. **कार्य की किस्म (Type of work):** भरती एक नियमित किस्म का कार्य है जिसे निम्न सतर के प्रबन्ध्कों की देखभाल में छोड़ा जा सकता है, लेकिन चुनाव का कार्य विशिष्ट योग्यता से सम्बन्ध्ति है। इसे उच्च प्रबन्ध्क, विशेषज्ञों की सहायता से, स्वयं करने की कोशिश करते हैं।

5. **योग्यताओं की जाँच (Scrutiny of the abilities):** भरती की प्रक्रिया में प्रत्याशी अपनी योग्यताओं का पद की अपेक्षित योग्यताओं के साथ स्वयं मिलान करता है, और तब आवेदन देता है जब उसे लगे कि उसमें आवश्यक योग्यताएं हैं। जबकि चुनाव प्रक्रिया में यह समीक्षा तथा मिलान अनुभवी तथा निपुण चुनाव अध्किारियों के द्वारा पूरा किया जाता है।

अध्याय–5

वृत्ति नियोजन एवं विकास

(Career Planning and Develpment)

वृत्ति नियोजन एवं विकास कर्मचारी एवं संगठनों दोनों से सम्बन्धित विचारधरा स्वीकार की जाने लगी है। प्रत्येक कर्मचारी अपने सेवाकाल में इस बात के लिए प्रयासरत रहता है कि वह अपनी कृत्य–अवस्था एवं पद प्रतिष्ठा को उच्चतम स्तर तक ले जा सके। इस प्रयास में वह अपने कृत्य कौशल में सुधर एवं अभिवृ(पर स्वयं विशेष ध्यान देता है ताकि पदोन्नति के अवसरानुसार वह अपने को तैयार पाये। संगठनों द्वारा भी यह अनुभव किया जाने लगा है कि वृत्ति कर्मचारी की अन्यन्त महत्वपूर्ण आकांक्षा है और इस आकांक्षा की पूर्ति में उन्हें सक्रिय सहयोग प्रदान करना चाहिए। संगठनों के दृष्टिकोण से, कर्मचारी को वृत्ति निर्माण में सहायता करके, वे कर्मचारी को एक ऐसा उत्साहव(क वातावरण प्रदान कर सकते हैं जिसमें कर्मचारी की निष्ठा एवं कार्य के प्रति लगन को बनाय रखा जा सकता है तथा इनमें अभिवृ(की जा सकती है। संगठनाकें द्वारा वृत्ति नियोजन एवं विकास की व्यवस्था करके कर्मचारी आकांक्षाओं एवं संगठन के ध्येय में सामंजस्य स्थापित किया जा सकता है। एक ओर जहाँ वृत्ति कर्मचारी की उन्नति की सीढ़ी बन जाती है, दूसरी ओर इसका प्रभावी संगठन को भी अनेकानेक लाभ प्रदान करता है।

वृत्ति से आशय
(Meaning of Career)

वृत्ति नियोजन तथा विकास का आशय जानने से पूर्व, वृत्ति का अर्थ स्पष्ट किया जाना आवश्यक है। वृत्ति सम्ब(क्रियाओं का ऐसा अनुक्रमण है जो पदों की श्रेणियों द्वारा कर्मचारियों को सुव्यवस्थित एवं अभिध्य बढ़ने के मार्ग को संयोजित करता है। कर्मचारी के लिए वृत्ति वर्तमान पद से उच्च पद पर पहुँचना है। संगठन के लिए वृत्ति पद–श्रेणियों का विकास मार्ग है जिस पर चरण–दर–चरण कर्मचारी अपने कार्य अनुभव, विकास आदि के द्वारा बढ़ सकता है। इस प्रकार वृत्ति शब्द का सम्बन्ध इसके दो महत्त्वपूर्ण तत्वों से जोड़ा जा सकता है। (v) संगठन तथा ;बद्ध जीविका। वृत्ति का संगठन से सम्बन्ध इस भाँति उन्पन्न होता है कि कर्मचारी किसी संगठन को अपने वृत्ति विकास का माध्यम मानता है ओर वह ऐसे संगठन में सम्मिलित होना पसन्द करेगा जिसमें वृत्ति विकास के पर्यापत अवसर सुलभ हों । किसी संगठन में वृत्ति निर्माण के अवसर उसे आकर्षित करते हैं । वृत्ति निर्माण के लिए ही कर्मचारी एक संगठन से दूसरे संगठन में चला जाता है। वृत्ति की सुव्यवस्था एवं उसके विकास की स्पष्टता संगठन में महत्त्वपूर्ण स्थान रखते हैं। वृत्ति के जीविका तत्त्व से तात्पर्य संगठन में उच्च पदों पर अग्रसर होने की सम्भावनाओं से है। पदों की श्रेणियाँ, उनके वेतन एवं सुविधयें, पद श्रेणियों की क्रमब(ता एवं कर्मचारियों के पद विकास चरण आदि इस सम्बन्ध में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं।

वृत्ति एक गतिशील संदर्श है जिसमें कर्मचारी अपने सम्पूर्ण जीवन को देखता है। और अपनी विशेषताओं, क्रियाओं तथा घटनाओं के अर्थ में इसकी व्याख्या करता है। वृत्ति इस रूप में पदों की श्रृंखला हैऋ संगठनात्मक स्थितियों का सिलसिला है जिन में कर्मचारी अपने जीविकाकाल में गुद्गार सकता है।

वृत्ति नियोजन एवं विकास का अर्थ
(Meaning of Career Planning & Development)

वृत्ति प्रबन्ध के दो महत्त्वपूर्ण अंग वृत्ति नियोजन तथा वृत्ति विकास हैं। अपने सामान्य अर्थ में वृत्ति प्रबन्ध में कर्मचारियों द्वारा स्वयं वृत्ति के प्रति संवेदनशीलता एवं प्रयत्न तथा संगठन द्वारा वृत्ति सम्बन्धी कार्यक्रमों का निर्माण एवं उनका संतोषजनक एवं प्रभावशाली संयोजन है। संगठनात्मक कार्य के रूप में वृत्ति प्रबन्ध में उन मार्गों का नियोजन एवं विकास किया जाता है जिनके द्वारा कर्मचारी अपनी वृत्ति प्रबन्ध में उन मार्गों का नियोजन एवं विकास किया जाता है जिनके द्वारा कर्मचारी अपनी वृत्ति आकांक्षओं को पूरा करेगा तथा इसमें कर्मचारियों को सिखाना, मन्त्रणा, उनकी पदोन्नति की सम्भावनाओं का मूल्यांकन, पदो पर कर्मचारियों का चयन जैसे कार्य सम्मिलित होते हैं। वृत्ति प्रबन्ध के विकास पक्ष द्वारा किसी संगठन में कर्मचारियों की योग्यताओं तथा उपलब्ध पदों एवं पारितोषक में संतुलन स्थापित किया जाता है।

वृत्ति प्रबन्ध, प्रबन्ध विकास का पर्याय नहीं है। ये दोनों अवधरणायें एक दूसरे से सर्वथा भिन्न है। प्रबन्ध विकास का उद्देश्य वैयक्तिक तथा समूह अध्ययन द्वारा प्रबन्ध्कों की कुश्लता एवं योग्यता में अभिवृ(के कार्यक्रमों की व्यवस्था करना है। दूसरी और से वृत्ति प्रबन्ध का लक्ष्य ऐसे कार्यक्रमों का निर्माण करना है जो कर्मचारियों की ध्येय प्राप्ति एवं उनके संतोष में सहायक हों। वृत्ति प्रबन्ध कर्मचारीगण एवं संगठन दोनों की सहयोगी एवं संयुक्त क्रिया है।

अभी कुछ समय पूर्व तक वृत्ति नियोजना से तात्पर्य कर्मचारी द्वारा स्वयं वृत्ति सम्बन्धी विचार एवं निर्णय से लिया जाता था। ऐसा माना जाता था कि वृत्ति व्यक्तिगत विषय है और स्वयं व्यक्ति अपनी वृत्ति एवं वृत्ति विकास के लिए अपने को तैयार करने एवं संगठन में अपनी पद–स्थिती को विकसित करने के लिए उत्तरदायी है। वृत्ति नियोजन केवल कर्मचारी का कार्य है तथा संगठन की इसमें कोई भमिका नहीं है। किन्तु अब यह विचारधरा स्वीकार नहीं की जाती। कर्मचारियों के वृत्ति नियोजन का उत्तरदायित्व अब संगठन पर विशेष रूप में आ गया है। इस उत्तरदायित्य के अधीन यह अनुभव किया गया है कि अपने कर्मचारियों के लिए वृत्ति नियोजन करना केवल कर्मचारियों के ही हित संरक्षण के लिए नहीं, अपितु संगठन के लाभ के लिए भी आवश्यक है। किसी संगठन में सम्मिलित होने पर कर्मचारी अपनी वृत्ति को ध्यान में रखते हैं तथा यह आशा करते है कि संगठन उनके वृत्ति में आवश्यक सहायता एवं सहयोग प्रदान करेगा। ऐसा सहयोग कर्मचारियों के लिए वृत्ति विकास के कार्यक्रमों द्वारा प्रदान किया जाता है।

वृत्ति विकास का, वृत्ति प्रबन्ध के अंग के रूप में वैयक्तिक योग्यता का कृत्य अपेक्षाओं एवं कृत्य पारितोषक से संतुलन कहा गया है। यह संगठन के दृष्टिकोण से संभावित कृत्य–श्रृंखला के नियोजन की प्रक्रिया है, ऐसा नियोजन जिसके अधीन यह निश्चय किया जाता है कि एक कर्मचारी अपने आजीविका काल में किन पदों पर पहुँच सकता है तथा उसमें इस बीच आवश्यक कृत्य–कौशल उत्पन्न करने के लिए कि विकास कार्यक्रमों का सहारा लिया जाये। वृत्ति विकास एक सतत क्रिया है तथा इसका सम्बन्ध कर्मचारी विशेष से भी है। व्यक्तिगत रूप में कर्मचारी अपने वृत्ति के सम्बन्ध में विकल्पों में से सही विकल्प का चयन करता है तथा वृत्ति विकास की दिशा को नियन्त्रि करने का प्रयत्न करता है। वृत्ति की उपलब्ध सीढ़ियों पर अवसरानुसार बढ़ने के लिए वह अपने का निरन्तर तैयार करता रहता है। अपने इस प्रयास में कर्मचारी को संगठन द्वारा बनाये गये वृत्ति विकास कार्यक्रमें से विशेष सहायता प्राप्त होती है। संगठन द्वारा बनाये गये वृत्ति विकास कार्यक्रम कर्मचारी की वैयक्तिक वृत्ति–आकांक्षा को वृत्ति–सीढ़ियों पर बढ़ने के अवसर प्रदान करते हैं। ये कर्मचारियों के ज्ञान, कौशल, व्यवहार में परिवर्तन एवं विकास की व्यवस्था करते है। ऐसे कार्यक्रम स्व विकास को प्रोत्साहित करते हैं तथा कृत्य–मंत्रण एवं कृत्य–गतिशीलता की संगठन में व्यवस्था करते हैं। वृत्ति विकास कार्यक्रम वर्तमान समय में मानव संसाध्न कार्यो में अनेक अन्य कार्य जैसे मानव शक्ति नियोजन, कृत्य विश्लेषण तथा निष्पादन मूल्यांकन की भाँति ही महत्व रखते हैं।

वृत्ति विकास एक प्रक्रिया है जो तीन सम्ब(उप–क्रियाओ के संयोजन से निर्मित है। ये तीन सम्ब(उप–क्रियायें हैः–

(A) समाजीकरण क्रिया

(B) वृत्ति चयन क्रिया तथा

(C) वातावरण परिवर्तन क्रिया।

समाजीकरण क्रिया के अन्तर्गत व्यक्ति अपने सहयोगियों एवं सहवर्गियों के सम्पर्क द्वारा स्वयं को समाजिक वातावरण के अनुकूल बनाता है। वृत्ति चयन क्रिया के अन्तर्गत व्यक्ति उपलब्ध वृत्तियों में से अनुकूल वृत्ति का चयन करता है। कृत्य गतिशीलता सामाजिक वातावरण में परिवर्तन लाती रहती है, अतः वातावरण परिवर्तन से आये सामाजिक वातावरण से संतुलन आवश्यक हो जाता है। वृत्ति विकास के ये तीनों अंग कर्मचारी के वृत्ति नियोजन एवं विकास में महत्त्वपूर्ण स्थान रखते हैं।

परिभाषा
(Definition)

वृत्ति नियोजन एवं विकास की कुछ महत्त्वपूर्ण परिभाषायें निम्न प्रकार हैः–

हेनेमन तथा श्वाब फवृत्ति प्रबन्ध में उस मार्ग का नियोजन होता है जिस पर कर्मचारीगण यात्रा करते हैं जिसमें सिखाना, मन्त्रणा तथा कर्मचारी का पदोन्नति मूल्यांकन, उन पदों का चयन जिन पर कर्मचारी बढ़ेगा, कृत्य से पृथक प्रशिक्षण तथा उसके द्वारा भौगोलिक स्थानान्तरण सम्मिलित हैं।य[1]

मैन्सपफील्ड– फवृत्ति विकास एक प्रक्रिया है जिसमें वैयक्तिक अनुभव अवधरणा तथा वृत्ति का लोक–दर्शनीय पक्ष, जीविका स्थितियों की प्रत्येक उत्तरोत्तर मंजिल को प्रवाहित बनाने के लिए प्रति–प्रभावित करते हैं।य[2]

शुलर फयह वैयक्तिक आवश्यकताओं, योग्यताओं तथा ध्येय तथा संगठन की कृत्य अपेक्षाओं एवं कृत्य पारितोषक के अभिज्ञान की क्रिया है तथा पिफर उत्तर संरचित वृत्ति विकास कार्यक्रमों द्वारा योग्यताओं का अपेक्षाओं एवं पारितोषण से मिलान है।य[3]

मिडिलमिस्ट, हिल एवं ग्रीयर फवृत्ति विकास किसी व्यक्ति के लिए किसी संगठन में उसके सेवाकाल में धरण की जाने वाली सम्भावित कृत्य श्रृंखला का नियोजन तथा उत्पन्न अवसरों के अनुसार आवश्यक कृतय कौशल प्रदान करने के लिए विकास व्यूह रचनाओं की प्रक्रिया है।य[4]

विशेषतायें
(Characteristics)

उपरोक्त परिभाषाओं की व्याख्या करने पर वृत्ति नियोजन एवं विकास के महत्वपूर्ण तत्व या विशेषतायें निम्नांकित हैंः–

1. वृत्ति नियोजन एवं विकास स्वयं कर्मचारी तथा संगठन दोनों का उत्तरदायित्व है। कर्मचारी के दृष्टिकोण से वृत्ति उसके सम्पूर्ण सेवाकाल में पद विकास एंव वृ(के लिए निरन्तर प्रयास है जिसके अधीन वह अपना कौशल तथा अनुभव बढ़ाता है ताकि अवसरानुसार वह उसका लाभ उठा सके एवं पद चरणों पर अग्रसर हो सके। संगठन के दृष्टिकोण से वृत्ति नियोजन एवं विकास कर्मचारी की उसके ध्येय में सहायता करना एवं ऐसी व्यवस्था करना है जो उसके पद वृ(एवं विकास में आने वाली बाधओं को दूर कर सके।
2. वृत्ति नियोजन एवं विकास ऐसी क्रिया है जो वैयक्तिक इच्छाओं, आकांक्षाओं, एवं लक्ष्यों का अध्ययन एवं संगठन में विविध कृतयों की अपेक्षाओं का अध्ययन करके इनमें सामंजस्य स्थापित करती है।

---

1. "Career management involves planning the paths along which employees travel, including coaching, counselling, and evaluating the promotability of the employee, election of the positions the individual passes through, the off the job training he receives, and the geographical transfers that he experiences."

–Heneman and Sehwab

2. "Career development is a process in which personnel experience concept and publicly observable aspect of career interact to precipitate each successive stage of occupational statuses."

–Mansfield

3. "It is an activity to identifiy the individla needs, abilities, and goasl nd the organisation's job demands and job rewards and then through well designed programmes of career development matching abilities with demands and rewards."

–Schuler

4. "Career development is a process of planning the series of possible jobs one may hold in an organisation over time and devlopment strategies designed to provide necessary job skills as the oportunities arise."

–Middlemist, Hill and Greer

3. वृत्ति नियोजन एवं विकास किसी संगठन में कार्यरत कर्मचारियों की सेवा—यात्रा के मार्ग का निर्धरण है जो यह स्पष्ट करता है कि कर्मचारी अपनी वृत्ति के किस उच्च स्तर तक पहुँच सकता है।
4. वृत्ति नियोजन एवं विकास द्वारा कर्मचारियों के ज्ञान, कौशल एवं व्यवहार में शिक्षण व्यूह रचनाओं द्वारा इस प्रकार के परिवर्तन लाये जाते है जिससे सही काम पर सही व्यंक्ति की युक्ति चरितार्थ हो त्था कृत्य श्रृंखला की गतिशीलता द्वारा उनके निष्पादन को प्रभावी बनाया जाये।
5. वृत्ति नियोजन तथा विकास एक सतत प्रक्रिया है। इसका वास्तविक लाभ इसकी निरन्तरता में ही निहित है। वृत्ति के दोनों पक्षकारों तथा कर्मचारी एवं संगठन के सतत प्रयासों से ही आशातीत परिणामों को प्राप्त किया जा सकता है।
6. वृत्ति नियोजन तथा विकस का लक्ष्य प्रभावी एवं कुशल कर्मचारीवर्ग काक विकासे है ताकि अध्कि उत्पादन एवं उत्पादकता का लक्ष्य प्राप्त किया जा सके । साथ ही कर्मचारी संतोष को भी बढ़ाया जा सके।
7. वृत्ति नियोजन एवं विकास कार्यक्रम मानव संसाध्न प्रबन्ध का अन्य प्रबन्ध्कीय कार्य यथा, मानवशक्ति नियोजन, कृत्य विश्लेषण, निष्पादन मूल्यांकन की भाँति एक महत्वपूण कार्य हैं।
8. वृत्ति का संगठन द्वारा प्रबन्ध कार्य मात्र 'प्रबन्ध विकास नहीं है। वृत्ति प्रबन्ध्कीय एवं प्रबन्ध विकास के लक्ष्य समान नहीं होते। प्रबन्ध विकास का ध्येय ऐसे कार्यक्रम का निर्माण होता है जिनके द्वारा प्रबन्ध्कीय कौशल को बढ़ाया जा सके । वृत्ति प्रबन्ध इससे आगे बढ़कर संगठानातमक उद्देश्यों की प्रभावी प्राप्ति तथा कर्मचारियों की सेवा—संतुष्टि पर बल देता है।

कार्य
(Functions)

वृत्ति नियोजन तथा विकास सम्बन्धी संगठन द्वारा सम्पन्न किये जाने कार्यों में निम्नांकित कार्य सम्मिलित हैः—

1. कर्मचारी की उसके सेवाकाल में वृत्ति नियोजन में सहायता करना ।
2. ऐसे वृत्ति मार्गों अथवा पथों की व्यवस्था करना जिन पर चढ़कर कर्मचारी आगे बढ़ सकें।
3. ऐसे आंतरिक वातावरण की स्थापना करना जिसमें कर्मचारी अपने योगदान को मात्र कृत्य ही न समझें अपितु वृत्ति के रूप में लें।
4. संगठन में कर्मचारियों के लिए स्व—विकास की अवस्थायें उत्पन्न करना ।
5. कर्मचारियों के लिए वृत्ति मन्त्रणा, कृत्य गतिशीलन, पदोन्नति मूल्यांकन आदि ऐसे उपकरणों की व्यवस्था करना जो उसके वृत्ति विकास में सहायक हों।
6. ऐसी वृत्ति सूचना प्रणाली का विकास करना जो वृत्ति पथ, पदारोहण प्रतिस्थापन आदि सूचनाओं का बैंक हो। इस सूचना बैंक में वैयक्तिक कौशल सूची तथा कृत्य स्थितियों का सही तथा सम्पूर्ण ब्यौरा उपलब्ध हो।

वृत्ति नियोजन एवं विकास कार्यक्रमों के लाभ
(Benefits of Career Planning & Development Programmes)

वृत्ति नियोजन एवं विकास संगठन तथा कर्मचारी दोनों के प्रकार के लाभ प्रदान करते हैः—

(A) कर्मचारी को लाभ
(Benefits to Employee)

वृत्ति नियोजन तथा विकास कार्यक्रम से कर्मचारियों का प्राप्त होने वाले लाभ निम्नलिखित हैः—

(i) यह कार्यक्रम कर्मचारी को अपने कौशल, शक्ति एवं कमजोरियों से अवगत कराते रहते हैं।

(ii) इनके द्वारा कर्मचारी अपनी छिपी इच्छाओं एवं ध्येय को सही प्रकार समझ पाता है।

(iii) कर्मचारी को उसके लिए उपलब्ध वृत्ति अवसरों की जानकारी हो जाती है।

(iv) यह कार्यक्रम कर्मचारी को अपनी अपेक्षाओं एवं योग्यताओं को उपलब्ध अवसरों के अनुकूल बनाने में सहायता करते हैं।

(v) वृत्ति परिवर्तनों में कर्मचारी के समायोजन में सहायता प्रदान करते हैं।

(vi) कर्मचारियों में वृत्ति उन्मुखी भावना जाग्रत करते हैं।

(vii) कर्मचारियों की कृत्य गतिशीलता में अभिवृ(करते हैं।

(viii) संगठन के प्रति कर्मचारी में रूचि एवं उसके हित संरक्षण के प्रति कर्मचारी को अध्कि संवेदनशील बना देते हैं।

(ix) कर्मचारी को अध्कि उत्पादनशील एवं संतुष्ट बना देते हैं।

(B) संगठन को लाभ
(Benefits to Organisation)

संगठन को इससे निम्नलिखित लाभ होते हैंः–

(i) कर्मचारियों का अध्कि प्रभावी उपयोग सम्भव होता है।

(ii) उच्च पदों के लिए भावी प्रबन्ध्को की जानकारी उपलब्ध हो जाती है।

(iii) रोζगार के समान अवसर की कर्मचारियों की इच्छा पूर्ण हो जाती है।

(iv) संगठन की छवि में सुधर होता है।

(v) कर्मचारियों के मनोबल में वृ(होती है जिसका लाभ संगठन को प्राप्त होता है।

(vi) कर्मचारी उत्पादकता मे वृ(होती है।

(vii) व्यवसाय के लाभ बढ़ते हैं।

(viii) कर्मचारी अनुपस्थिति में कमी आती है।

प्रभावी वृत्ति नियोजन एवं विकास की पूर्व–अपेक्षायें
(Pre-requisites of effective Career Planning and Development)

वृत्ति नियोजन एवं विकास कार्यक्रमों को बनते समय कुछ बातों का ध्यान रखना आवश्यक है। एक प्रभावी वृत्ति नियोजन एवं विकास कार्यक्रम कुछेक आधरभूत तत्त्वों पर आधरित होता है। प्रभावी वृत्ति नियोजन एवं विकास के निर्माण की पूर्व–आवश्यकतायें निम्न प्रकार हैंः–

1. यह संगठन की यथार्थ अवस्था को ध्यान में रखकर तैयार किया जाना चाहिए।
2. वृत्ति कार्यक्रम सभी प्रकार के कर्मचारियों के लिए तैयार किया जाना चाहिए।
3. वृत्ति कार्यक्रम नियमित एंव सतत क्रिया के रूप में विकसित किया जाना चाहिए।
4. वृत्ति कार्यक्रम को शीर्ष प्रबन्ध का पूर्ण समर्थन प्राप्त होना चाहिए।
5. वृत्ति कार्यक्रम का समन्वय सेववर्गीय प्रबन्ध के अन्य कार्य यथा मानवशक्ति नियोजन, कृत्य विश्लेषण, निष्पादन मूल्यांकन आदि के साथ होना चाहिए।
6. इन कार्यक्रमों में पदोन्नति तथा प्रगति के अतिरिक्त अन्य कर्मचारी विकास कार्यक्रमों को भी सम्मिलित किया जाना चाहिए।
7. इन कार्यक्रमों में कर्मचारी मन्त्रणा तथा सूचना प्रणाली को पर्याप्त स्थान दिया जाना चाहिए।
8. कार्यक्रमों में कर्मचारियों की अपेक्षाओं एवं योग्यताओं को भी ध्यान में रखना चाहिए।

वृत्ति नियोजन एवं विकास का उत्तरदायित्व
(Responsibility for Career Planning and Development)

वृत्ति नियोजन एवं विकास के प्रति निम्न दो पक्ष उत्तरदायी माने जाते हैः–

(1) स्वयं कर्मचारी

(2) संगठन

कर्मचारी सवयं अपनी वृत्ति के प्रति जागरूक रहता है तथा इस बात के लिए प्रयत्नशील रहता है कि अपने सेवाकाल में उसका वृत्ति विकास उस की आशा के अनुकूल होना चाहिए। दूसरी ओर संगठन कमग्चाी को उसके वृत्ति नियोजन एवं विकास में अपना समर्थन वृत्ति नियोजन एवं विकास कार्यक्रमें के निर्माण द्वारा प्रदान करता है, इस प्रकार एक ओर कर्मचारी वैयक्तिक वृत्ति नियोजन तथा व्यूह रचना करता है तो दूसरी ओर संगठन अपने कर्मचारी वर्ग के लिए वृत्ति पथों का निर्माण एवं उनकी जानकारी कर्मचारियों को प्रदान करके, उन्हें उच्च पदों के अनूकूल बनने में सहायता करता है। यहाँ वृत्ति नियोजन एवं विकास को कर्मचारी एवं संगठन दोनों के दृष्टिकोण से देखा जाना आवश्यक है । इससे स्पष्ट हो जायेगा कि दोनों पक्ष अलग–अलग वृत्ति प्रबन्ध में क्या भूमिका अदा करते हैं।

वृत्ति प्रबन्ध एवं कर्मचारी
(Career Management and Employees)

वृत्ति नियोजन एवं विकास वैयक्तिक दृष्टिकोण से कर्मचारी द्वारा आजीविका एवं संगठन का चयन, वृत्ति श्रृंखला के अनुरूप अपने को ढलना एवं उत्पन्न हुए वृत्ति अवसरों का लाभ उठाना है । इस अर्थ में यह एक विकास क्रिया है जिसके प्रति कर्मचारी स्वयं उत्तरदायी है । अतः कर्मचारी अपने वृत्ति के सम्बन्ध में आवश्यक व्यूह रचना करता हैं। यह भी ध्यान रखने योग्य बात है कि वृत्ति का अर्थ एक ही संगठन में वृत्ति श्रृंखला में आगे बढ़ना नहीं है। वृत्ति विकास के लिए यदि कोई कर्मचारी संगठन परिवर्तन आवश्यक समझता है तो वह ऐसा भी करता है। सामान्यतः यह देखा जाता है कि कर्मचारी एक बार आजीविका एवं संगठन का चयन कर लेने के पश्चात उसी आजीविका एवं संगठन में सेवाकाल के अन्त तक बने रहते हैं और वहीं अवसरानुसार पदोन्नति प्राप्त कर अपने वृत्ति विकास की कामना को पफलीभूत करते हैं। किन्तु परिस्थितिवश संगठन परिवर्तन भी किया जाता है।

यहाँ कर्मचारी द्वारा वृत्ति नियोजन एवं विकास के संदर्भ में तीन बातों पर विशेष रूप में विचार किया जायेगाः

(A) स्व विकास के तत्व

(B) वृत्ति परिवर्तन की आवश्यकता

(C) वैयक्तिक वृत्ति प्रबन्ध की प्रक्रिया

स्व विकास के तत्व

जैसा कि उल्लेख किया जा चुका है, वृत्ति वैयक्तिक क्रिया है तथा वृत्ति विकास की सम्भावना में वृ(् के लिए कर्मचारी द्वारा प्रयास किया जाना आवश्यक है । कर्मचारी द्वारा स्व विकास अनेक दिशाओं में होना चाहिए। स्व विकास के यह तत्व अथवा दिशाएं निम्नांकित हैंः–

(i) **प्रबन्ध्की स्व विकास**–इसका सम्बन्ध कर्मचारी द्वारा कृत्य सम्बन्धी प्रबन्ध्कीय कौशल के विकास से है जिसका उपयोग उसके द्वारा कृत्य तथा स्वयं के लाभ के लिए किया जायेगा।

(ii) **कृत्य स्व विकास**–कर्मचारी को अपने कृत्य को कुशलतापूर्वक सम्पन्न करना चाहिए । कृत्य सम्बन्धी कौशल का विकास स्वयं उसके भावी विकास की आधरशिला होती है। अपनी आलोचना के प्रति संवेदनशीलता, एवं कृत्य के प्रति जिज्ञासा प्रवृत्ति कर्मचारी की कृत्य स्व विकास में सहायता करते हैं।

(iii) **समाजीय स्व विकास**–इससे आशय कर्मचारी द्वारा अपने परिचय का दायरा बढ़ाने से है। अध्कि व्यक्तियों से सम्पर्क एवं विचार–विनिमय कर्मचारी के दृष्टिकोण को व्यापक बनाता है विचार परिवर्तन द्वारा उसे अध्कि सुलझा हुआ एवं सक्षम व्यक्ति के रूप में परिवर्तन कर सकता है।

(iv) **भावनात्मक स्व विकास**–मनाभावों की स्थिरता एवं उन पर नियन्त्रण व्यवहार पक्ष की महत्वपूर्ण आवश्यकताएं हैं। अन्तर्सम्बन्ध्ें में इनकी महती भूमिका होती है। आवेग की स्थिति से हट कर स्वयं की कमजोरियों के प्रति जागरूकता से उपस्थित चुनौतियों का सामना करने में आसानी होती है।

(v) **रचनात्मक स्व विकास**–कर्मचारी द्वारा रचनात्मकता के गुण का विकास भी किया जाना चाहिए। रचनात्मकता के लिए जिज्ञासा की अभिव्यक्ति आवश्यक है। खुले दिमाग से सोचना, दूसरे व्यक्तियों के विचार एवं निर्णयों पर ध्यान देकर मानसिक विकास की सम्भावनाओं को बढ़ाया जा सकता है।

वृत्ति परिवर्तन की आवश्यकता

एक ही वृत्ति एवं संगठन में बने रहने की सामान्य प्रवृत्ति होते हुए भी अनेक कर्मचारी वृत्ति एवं संगठन परिवर्तन की आवश्यकता अनुभव करते हैं। ऐसा परिवर्त परिस्थितिजनक अथवा आरम्भिक वृत्ति चयन के समय लिये गये संकल्मित निर्णय के अन्तर्गत हो सकता है। सामान्यतः वृत्ति परिवर्तन के कुछ महत्वपूर्ण कारण निम्नलिखित हैंः–

(i) **अल्पकालिक वृत्ति–**अल्प समय के लिए ही होती है। यदि कोई व्यक्ति किसी अवस्था में ऐसी वृत्ति का चयन कर लेता है, तो वह निरन्तर किसी स्थाई वृत्ति के लिए प्रयत्नशील रहता है।

(ii) **मार्गस्थल वृत्ति**– अनेक व्यक्ति चयनित वृत्ति को 'पैर रखने का पत्थर' मानते हैं। उनका लक्ष्य आरम्भ में चयनित वृत्ति द्वारा ऊँची छलांग लगाने का होता है।

(iii) **कृत्य अपेक्षाओं में परिवर्तन–**तकनीकी परिवर्तनों के साथ–साथ कृत्य अपेक्षायें पूर्व की भांति नही रहती । साथ ही अनेक कृत्य बेकार हो जाते हैं। अथवा अपना आकर्षण खो बैठते हैं। इन कारणों से भी वृत्ति परिवर्तन की आवश्यकता अनुभव की जाती है।

(iv) **वैयक्तिक परिवर्तन–**ऐसा भी सम्भव है कि एक कर्मचारी को चयनित संगठन में कार्य करते हुए अपनी छिपी हुई क्षमताओं का अनायास ही आभास हो जाये । अनेक सपफल व्यक्तियों ने वृत्ति परिवर्तन द्वारा अपनी क्षमताओं का सही उपयोग करके ही सपफलता अर्जित की है। कार्य करते हुए वैयक्ति कौशल में अभिवृ(ि भी वृत्ति परिवर्तन का कारण बन सकती है।

(v) **कृत्य प्रकृति में परिवर्तन**– जैसे–जैसे कर्मचारी अपने वृत्ति के सेपानों को पर करके उच्च्व पदों पर पहुँचता है, उसके कृत्य की प्रकृति भी बदलती जाती है। उच्चतर पद प्रशासनिक कृत्य पर अपने को सामान्य अनुभव नहीं करता।

वैयक्तिक वृत्ति प्रबन्ध् की प्रक्रिया

वैयक्तिक वृत्ति प्रबन्ध् की व्यूहरचना के लिए कर्मचारी द्वारा निश्चित चरण उठाये जाने आवश्यक हैं। ये निम्न प्रकार हैः–

(i) वृत्ति उद्देश्य का निर्धरण ;**Identifying Career Objectives**द्ध–वृत्ति नियोजन तथा विकास के निर्धरण के लिए प्राथमिक विचारणीय बात एक व्यक्ति के लिए यह है कि वह यह निश्चत करे कि वह किस प्रकार की वृत्ति का इच्छुक है। अपने वृत्ति के चयन के लिए व्यक्ति के समक्ष अनेक वृत्ति विकल्प होते हैं। इनमें से अपने उद्देश्यानुसार वृत्ति का चयन किय जा सकता है।

(ii) **सूचना स्रोतों के का निर्धरण ;Determination of Sources of Informationद्ध**–वृत्ति सम्बन्धी अन्तिम निर्णय में विविध् सूचनाओं का महत्त्वपूर्ण योगदान होता है। व्यक्ति का कृत्य तथा संगठन सम्बन्धी सूचनायें विविध् स्रोतों से प्राप्त करनी चाहिए। सूचनायें किन स्रोतों से प्राप्त की जायेंगी, इसका निश्चय किया जाना चाहिए तथा सूचनाएँ किन विध्यिों से प्राप्त की जायेंगी, इन विध्यिों सम्बन्धी निर्णय भी किया जाना चाहिये।

(iii) कृत्य तथा संगठन विश्लेषण ;**Analysis of Job and Organsiationद्ध**–वृत्ति नियोजन एंव विकास के इस चरण में एकत्रित की गई सूचनाओं के अवलोकन एंव मूल्यांकन किया जाता है। संगठन तथा कृत्य के चयन को अनेक तत्व प्रभावित करते हैं।

इनमें महत्वपूर्ण तत्व हैं– संगठन का स्थानीयकरण, सगंठन के ध्येय एवं मूल्य, कृत्य की पद प्रतिष्ठा, पदोन्नति के अवसर, रेखा पदोन्नतियाँ तथा खुली पदोन्नतियाँ की सम्भावनाएँ है। कृत्य के सम्बन्ध में अवलोकन के महत्वपूर्ण तत्व कृत्य क्षेत्र, कृतय विकास सम्भावनाएँ। इन सभी बातों की समीक्षा की जानी चाहिए।

(iv) **स्वः मूल्य एंव लक्ष्य विश्लेषण ;Analysis of self values and goalsद्ध– यह आवश्यक है कि वृत्ति** चयनकर्ता संगठन एवं कृत्य के संदर्भ में अपने मूल्यों, आस्थाओं, ध्येय एंव अपेक्षाओं की समीक्षा भी करें। इस चरण में कर्मचारी अपनी सामर्थ्य एवं कमजोरियों पर विचार करता है। वह अपने व्यक्तित्व का अवलोकन करता है और बनी अपेक्षाओं तथा संगठन एवं कृतय की अपेक्षाओं की तुलना करता है। विभिन्न संगठनों तथा कृत्यों में चयन के लिए व्यक्ति सम्बन्धी तत्व तथा संगठन सम्बन्धी तत्वों में समायोजन आवश्यक है।

(iv) **वृत्ति व्यूह रचना का क्रियान्वयन ;Implementation of Career Strategyद्ध**– यह **वृत्ति** नियोजन तथा विकास का वह चरण है जिस पर व्यक्ति कृत्य तथा संगठन का अन्तिम चयन करता है। ऐसे चयन में वह अपनी भावी विकास एंव संगठन द्वारा प्रदत्त **वृत्ति** सोपान को दृष्टि में रखता है। **वृत्ति** की भावी व्यूहरचना के लिए व्यक्ति अपनी तथा संगठन की आवश्यकताओं एवं सम्भावनओं में निरन्तर संतुलन स्थापित करने का प्रयास करता है।

(vi) **कृत्य का प्रभावी निष्पादन ;Effective Job performanceद्ध**– कर्मचारी की चयनित संगठन में प्रगति उसके कार्य निष्पादन एवं कार्य मूल्यांकन पर निर्भर करती है। अपने भावी विकास की सम्भावनाओं में वृ(करने के लिए कर्मचारी निष्ठा, योग्यता एवं पूर्ण सामर्थ्य के साथ अपने कृत्य एवं उत्तरदायित्व को पूरा करता है। संगठन के लाभ एवं हित की बात दृष्टिगत रखते हुए कृत्य एवं उत्तरदायित्य को पूरा करने से उच्च पदों पर पहुँचने का मार्ग खुल जाता है।

(vii) **वृत्ति प्रगति प्रबोधन ;Monitoroing Career Progressद्ध**–वृत्ति विकास के इस बात का सतत मूल्यांकन आवश्यक है कि अवसरों का लाभ उठाने के लिए व्यक्ति स्वयं कितना तैयार हो रहा है। प्रबोध्न द्वारा भावी प्रगति की बाधओं की जानकारी प्राप्त होती रहती है। अपनी कमियों एवं बाधओं को दूर करते रहने का प्रयास कर्मचारी द्वारा किया जा सकता है। आगे प्रगति के लिए वृत्ति अपक्षय को रोका जाना चाहिए।

संगठनात्मक वृत्ति नियोजन एवं विकास की प्रक्रिया

वृत्ति नियोजन एवं विकास में संगठन की भूमिका को भी कम करके नही आंका जा सकता। संगठन द्वारा अपने सभी कर्मचारियों के लिए **वृत्ति** नियोजन एंव विकास की व्यवस्था की जाती है। संगठन द्वारा **वृत्ति** प्रबन्ध के कार्यक्रमों के निर्माण के लिए **वृत्ति** को विविध स्तरों में बांटा जाता है और प्रत्येक स्तर के लिए अलग कार्यक्रम बनाया जाता है। मुख्यतः कर्मचारी **वृत्ति** को तीन स्तरों में विभक्त करके कार्यक्रम तैयार किय जाते हैं। कर्मचारी **वृत्ति** के स्तर क्रमशः निम्न प्रकार हैं:–

(i) **समन्वेषी स्तर**– नवीन कर्मचारियों के लिए प्रशिक्षण तथा विकास के अनेक कार्यक्रमों का निर्माण किया जाता है। कर्मचारी मन्त्रणा, मार्गदर्शन, सूचना प(ति, पारितोषिक विधि आदि इस कार्यक्रम के महत्वपूर्ण अंग होते हैं।

(ii) **स्थापना तथा अनुरक्षण स्तर– वृत्ति** प्रबन्ध के इस चरण पर कृत्य एवं वैयक्तिक विकास पर बल दिया जाता है। अतः कृत्य अनुक्रम, कृत्य सूचना प(ति तथा कृतय नियोजन मॉडल इस स्तर पर उपयोग में लाये जाने वाले उपकरण हैं। कृत्य अनुक्रम, सोपानिक पथों का निर्धरण करके, कर्मचारी को उनके अनुसार तैयार करने की प्रक्रियाहै। कृत्य सूचना प(ति द्वारा कर्मचारी को खुले पथों की सूचना दी जाती है और यह कृत्य अनुक्रम सोपानिक पथ को सम्मिलित किया जाता है। कृत्य सूचना प(ति के अन्तर्गत अन्य पथों की जानकारी कर्मचारी का प्रदान की जाती है जिन पर वह अपनी क्षमता एवं योग्यता के अनुसार बढ़ सकता है। कृत्य नियोजन मॉडल कृतय विकास के ऐसे मॉडल हैं जिनमें एक साथ एक से अधिक विकास कार्यक्रम सम्मिलित किये जाते हैं। मॉडल इस रूप में समग्र विकास कार्यक्रम है। उदाहरण के लिए किसी मॉडल में कृत्य सोपान, प्रशिक्षण एवं मन्त्रणा के रूप सम्मिलित हो सकते है। इन मॉडलों का आधर कर्मचारी का मूल्यांकन होता है। कर्मचारी मूल्यांकन के अधीन मूल्यांकनकर्ताओं का समूह कर्मचारी की क्षमताओं एवं व्यवहार का मूल्यांकन करता है।

(iii) **हास स्तर**– इस चरण में दो प्रकार के कर्मचारियों के लिए कार्यक्रम तैयार किये जाते हैं। ऐसे कर्मचारी जो पदोन्नत नहीं हो पाये हैं के लिए पुनः प्रशिक्षण, स्थानान्तरण, कृत्य पुनः संरचना आदि का उपयोग किया जाता है। सेवा निवृत्ति के समीप कर्मचारियों के लिए सेवानिवृत्ति मन्त्रणा की व्यवस्था की जाती है। उन्हें सेवा पश्चात् संगठन द्वारा प्रदान किये जाने वाले लाभों तथा समर्थन के प्रति आश्वस्त किया जाता है।

वृत्ति प्रबन्ध के लिए संगठन द्वारा उठाये जाने वाले चरण
(Steps to be taken by Organisation for Career Management)

वृत्ति प्रबन्ध की प्रक्रिया में संगठन द्वारा उठाये जाने वाले चरण अग्र प्रकार हैः–

(i) कृत्य आवश्यकता का अनुमान
(Career Need Assessment)

संगठन द्वारा कर्मचारियों के वृत्ति नियोजन तथा विकास कार्यक्रम का कृतय आवयश्यकता का अनुमान प्रथम चरण माना जा सकता है। इस चरण में संगठन कर्मचारियों का कृत्यों के सम्बन्ध में अधिकतम जानकारी प्रदान करते हैं। इसका उद्देश्य कर्मचारियों को अपना वृत्ति नियोजन करने में सहायता प्रदान करना होता है। संगठन को इस चरण में कर्मचारियों की भावी क्रमानुगत प्रगति की आशाओं एवं लालसाओं का अनुमान प्राप्त होता है। अपनी आवश्यकता के अनुकूल कर्मचारी किस अथवा किन वृत्ति पथों पर बढ़ना चाहता है, इसका अनुमान संगठन प्राप्त करने का इच्छुक होता है, ताकि वह प्रभावी वृत्ति नियोजन कर सके।

(ii) वृत्ति पथों की व्यवस्था
(Career Pathing)

इस चरण में संगठन कर्मचारियों के लिए प्रगति पथों का निर्धरण एवं व्यवस्था करता है। वृत्ति पथ वे मार्ग है जो कर्मचारी के समक्ष उसके सोपानिक विकास का ढाँचा प्रस्तुत करते हैं। इनमें कृत्य परिवार एवं वृत्ति निसेनी सम्मिलित होती हैं। कृत्य परिवार एक ही प्रकृति के कृत्य से सम्बन्धित तत्त्व हैं तथ वृत्ति निसेनी कृत्य परिवार के उत्तरोत्तर चरणों अथवा पदों का सम्बोध्न होता है। कृत्य परिवारों या कृत्य समूह का निर्धरण हो जाने के पश्चात् विभिन्न पदों के निर्धरण द्वारा वृत्ति निसेनी निर्मित की जाती है। ऐसा प्रत्येक कृतय परिवार अथवा समूह के विषय में किया जाता है। वृत्ति पथ के दो पक्ष होते हैं। एक उसकी लम्बाई तथा दूसरे उसकी चौड़ाई। वृत्ति पथ की लम्बाई से आशय कृतय परिवार की पथ निसेनी से है तथा चौड़ाई विविध् कृत्य परिवारों की पथ निसेनियो से सम्बन्ध रखती है। सामान्यतः किसी एक कृय परिवार में कार्य करने वाले कर्मचारी का प्रगति पथ उस कृत्य परिवार के वृत्ति पथ की लम्बाई तक सीमित होता है। किन्तु कर्मचारियों को अन्य वृत्ति पथों पर भी बढ़ने का अवसर देने के लिए उन्हें विभि प्रकार के अनुभव प्राप्त करने का अवसर भी संगठन द्वारा दिया जा सकता है। इस प्रकार कर्मचारी विभि वृत्ति पथों में से चयन का अवसर पा जाता है। चौड़े वृत्ति पथ का एक प्रमुख लाभ यह है कि इससे पथ चरमान्त की सम्भावना कम हो जाती है क्योंकि किसी एक वृत्ति पथ के अन्तिम छोर पर पहुँच कर वृत्ति यात्रा समाप्त नहीं होती।

वृत्ति पथों के निर्धरण हो जाने से उनके विभि चरणो के लिए कर्मचारियों से किन योग्यतओं एवं कौशल की आवश्यकता है, इनका भी सरलता से निर्धरण किया जा सकता है। यह जानकारी कर्मचारीयों का किस दिशा में विकास किया जाना चाहिए के लिए उपयोगी होती है।

(iii) मानव संसाध्न कौशल तालिका तैयार करना
(Preparation of Human Resource Skills Inventories)

कौशल तालिकाओं से तात्पर्य ऐसे 'डेटा बैंक' से है जिसमें मानव संसाध्न कौशल एवं ध्येयों को एकत्रित किया जाता है। सामान्यताः कौशल तालिकाओं में कर्मचारियों के सम्बन्ध में विभिन्न सूचनाएँ रखी जाती हैं जो उनकी शिक्षा, प्रशिक्षण, अनुभव, लक्ष्य, निष्पादन, अंकन समार्थ्य एवं कमियों के बारे में होती है।

(iv) वृत्ति सूचना प(ति
(Career Information System)

वृत्ति सूचना प(ति मानव संसाधन कौशल तालिकाओं की पूरक कही जा सकती है। वृत्ति सूचना प(ति कौशल तालिका से केवल इस बात में भिन्न है कि इसमें कर्मचारियों तथा संगठन दोनों से संबंध्ति कार्यक्रमों को सम्मिलित किया जाता है। यह दो कार्यक्रम क्रमशः पदापूर्ति एवं प्रतिस्थापन तथा कृत्य नियुक्ति प्रणाली है। वृत्ति सूचना प(ति संगठन में उपलब्ध पदों की सूचना भी प्रदान करती है।

(v) वृत्ति मन्त्रणा
(Career Counselling)

किसी भी वृत्ति नियोजन एंव विकास कार्यक्रम में वृत्तिमन्त्रणा की महती भूमिका होती है। अतः वृत्ति मन्त्रणा या परामर्श संगठन द्वारा अपने कर्मचारियों के लिए व्यवस्थित वृत्ति प्रबन्ध्ध की प्रक्रिया का उपयोगी अंग बन गया है। वृत्ति परामर्श व्यापक एंव प्रभावी होना चाहिए । इसके द्वारा कर्मचारियों को अपने वृत्ति नियोजन में पर्याप्त सहायता मिलती चाहिए। वृत्ति मन्त्रणा के लिए संगठन के पास कर्मचारी की सामर्थ्य, योग्यता, अपेक्षा, पद–अवसर, कार्य वातावरण एवं वातावरण के प्रति कर्मचारी का आचरण, व्यवहार एवं दृष्टिकोण आदि सूचनायें पर्याप्त मात्रा में होनी आवश्यक है।

सामान्यतः संगठन मे कर्मचारी विकास कार्यक्रमें के अपेक्षा से कम महत्व दिया जाता है। यही कारण है कि कर्मचारी वर्ग वृत्ति विकास को स्वयं का ही उत्तरदायित्व समझने लगा हैं आवश्यकता इस बात की है कर्मचारीवर्ग द्वारा अपने वृत्ति विकास के प्रयत्नों में संगठन का पूरा सहयोग हो। संगठन द्वारा कर्मचारियों के वृत्ति नियोजन एवं विकास कार्यक्रम तैयार किये जायें। वास्तव में वृत्ति नियोजन एंव विकास कर्मचारी एवं संगठन दोनों का ही उत्तरदायित्व है।

अध्याय–6

प्रशिक्षण एवं विकास

(Training and Develpment)

प्रशिक्षण का अर्थ

(Meaing of Training)

प्रशिक्षण एक ऐसी प्रक्रिया (Process) है जिसके द्वारा व्यक्ति की योग्यता, कुशलता तथा निपुणता में वृ(होती है। परिणामस्वरूप उनमें आत्मनिर्भरता (Self-reliances), आदर और आत्मगौरव में वृ(होती है।

1. **एडविन बी. फ्रिलप्पे** ;**E.B.Flippo**द्ध के अनुसार–फ्एक विशेष कार्य को करने के लिए कर्मचारी के ज्ञान एवं कौशल में वृ(करने का कार्य प्रशिक्षण कहलाता है।य्[1]

2. **डेल योडर** ;**Dale Yoder**द्ध के अनुसार–फ्प्रशिक्षण वह विधि है जिसके द्वारा श्रम शक्ति को उसके द्वारा किए जाने वाले कार्य के योग्य बनाता है।य्[2]

इस प्रकार प्रशिक्षण किसी भी कार्य को करने, समझने तथा सीखने की प्रक्रिया है जो व्यक्ति को पूर्णता की ओर ले जाती है। विश्वप्रसि(गायक, नर्तक, खिलाड़ी, डॉक्टर ये सब प्रशिक्षण प्राप्त करते हैं और यह प्रशिक्षण रुकता नहीं है अपितु निरन्तर चलता रहता है। फ्**सपफल व्यक्ति कभी सीखने का अन्त नहीं करते।य्**

प्रशिक्षण की आवश्यकता क्यों?

(Why Need of Training?)

मानवीय साधनों के विकास के लिए प्रशिक्षण की बहुत आवश्यकता हैं प्रशिक्षित श्रमिक एवं कर्मचारी ही राष्ट्र के आर्थिक विकास के लिए आधरशिला प्रदान करते हैं। शिक्षा एवं प्रशिक्षण का मुख्य उद्देश्य प्राकृतिक तथा मानवीय साध्नों तथा उनकी क्षमता व शक्तियों का समुचित प्रयोग करना है। मानवीय संसाध्नों का सही प्रयोग करने तथा उनकी क्षमताओं का विस्तार करने के लिए शिक्षण एवं प्रशिक्षण बहुत आवश्यक है। प्रत्येक कार्य एवं संस्था में प्रशिक्षण की व्यवस्था होनी चाहिए। प्रशिक्षण केवल नये कर्मचारियों एवं श्रमिकों के लिए आवश्यक नहीं है बल्कि पुराने कर्मचारियों एवं श्रमिकों को भी प्रशिक्षण दिया जाना आवश्यक है।

वर्तमान प्रगतिशील तथा तकनीकी युग में जब मशीनों, औजारों व उत्पदान विध्यिों में निरंतर परिवर्तन हो रहे हैं, कर्मचारियों को इन नई व सुध्री हुई विध्यिों की जानकारी देने के लिए भी शिक्षण एवं प्रशिक्षण आवश्यक है। यदि मानवीय साध्नों के शिक्षण व प्रशिक्षण का प्रबन्ध नहीं किया जाता तो ऐसी अवस्था में श्रमिकों की आकार्यकुशलता, कम उत्पादन, अध्कि कार्य एवं दुर्घटनाओं के रूप में संस्था को हानि उठानी पड़ती।

---

1. "Training is the act of increasing the knowledge and skill of an employee for doing a partidular job."
   –*E. B. Flippo*

2. "Training is the process by which manpower is fitted for the particular jobs it is to perform"
   –Dale Yoder.

प्रशिक्षण की आवश्यकता निम्नलिखित कारणों से होती है–

1. कर्मचारियों की उत्पादकता में वृ(करने के लिए **(To Increase Productivity of Employees),**
2. उत्पादन एवं सेवाओं के गुण में सुधर करना **(To Improve quality),**
3. संगठनात्मक वातावरण को बेहतर बनाने के लिए **(To Improve Organisational Climate),**
4. औद्योगिक दुर्घटनाओं को रोकने के लिए **(To Prevent Industrial Accidents),**
5. मानवीय अवरोधें को रोकने के लिए **(To Prevent Manpower Obsolescence),**
6. कर्मचारी के विकास के लिए **(Personnel Growth)**
7. उत्पादन में नई टैक्नॉलोजी के बढ़ते हुए प्रयोग के लिए **(An increased use of technology in Production)**

प्रशिक्षण एवं विकास
(Training and Development)

साधरण रूप से प्रशिक्षण और विकास (Development) शब्दों का प्रयोग एक ही अर्थ में किया जाता है किन्तु **प्रशिक्षण** (Training) और **विकास** (Development) दोनों शब्दों में कापफी अन्तर है।

प्रशिक्षण (Training)– प्रशिक्षण उन व्यक्तियों की सहायता करता है जो किसी विशेष कार्य को करते हैं या करने की क्षमता रखते हैं। **प्रशिक्षण कार्यक्रम किसी विशेष कार्य के लिए व्यक्ति को तैयार करने और उसके कार्य पूरा करने** (Performance) **के तरीके को सुधरने के लिए चलाये जाते हैं। यह अल्पकालीन होता है।**

विकास (Development)– विकास शब्द संस्थागत लक्ष्यों की तुलना में व्यक्तिगत लक्ष्यों से अध्कि जुड़ा हुआ है। व्यक्तियों का विकास आवश्यक रूप से स्वयं का विकास होता है। संस्था या प्रबन्ध्क (Management) व्यक्तियों को अपना विकास करने के लिए मात्र अवसर और प्रेरणाएं दे सकते हैं। विकास कार्यक्रम दीर्ध–अवध्ि का होता है।

प्रशिक्षण और विकास में अन्तर
(Difference between Training & Development)

आधर (Basis)	प्रशिक्षण (Training)	विकास (Development)
1. क्या (What)	तकनीकी एवं यान्त्रिक (Mechanical) क्रियाएँ इसके अन्तर्गत आती हैं	इसके अन्तर्गत सै(ान्तिक एवं मन की भावना सम्बन्धी विचार आते हैं।
2. कौन (Who)	इसके गैर प्रबंध्कीय कर्मचारी आते है।	इसमें प्रबंध्कीय कर्मचारी आते है।
3. अवध्ि (Period)	अल्पकालीन अवध्ि का होता है।	दीर्घकालीन अवध्ि का होता है।
4. क्यों (Why)	विशिष्ट कार्य के लिए प्रशिक्षण दिया जाता है।	सामान्य ज्ञान के लिए होता है।

कर्मचारियों के चुनाव, उनको उपयुक्त जॉब पर लगाने तथा अनुगमन के बाद, प्रशिक्षण का कार्य शुरू होता है। जो भी कर्मचारी चुने गये हैं, यदि संस्था चाहती है कि वे ठीक प्रकार से कार्य करें, तब उसे उनके प्रशिक्षण की व्यवस्था करना होगी। चुने गये कर्मचारी चाहे कितने योग्य व समझदार हों, उनसे ठीक कार्य करवाने के लिए उन्हें थोड़ा–बहुत प्रशिक्षण देना आवश्यक होता है। प्रतयेक कार्य व संस्था में प्रशिक्षण की व्यवस्था होनी अनिवार्य है क्योंकि यदि ऐसा नहीं होगा तब कर्मचारी भूल–सुध ार विध्ि द्वारा कार्य सीखने का प्रयत्न करते हैं जो संस्था को प्रशिक्षण की व्यवस्था करने से

अध्कि महंगा पड़ता है। यही कारण है कि आज प्रबन्ध्कों के सम्मुख समस्या प्रशिक्षण देने की नहीं है बल्कि प्रशिक्षण विध् के चुनाव की है। प्रशिक्षण केवल नये कर्मचारियों के लिए आवश्यक नहीं है बल्कि पुराने कर्मचारी, जो संस्था में कार्य कर रहे हैं, को भी प्रशिक्षण दिया जाना आवश्यक है ताकि उनकी कार्यशीलता बढ़ाकर उन्हें उच्च पदों पर पदोन्नित के योग्य बनाया जा सके। इतना ही नहीं, वर्तमान प्रगतिशील समय में जबकि मशीनों, औजारों व उत्पादन विध्यिों में निरन्तर परिवर्तन हो रहें हैं, कर्मचारियों को इन नई व सुध्री हुई विध्यिों की जानकारी देने के लिए भी प्रशिक्षण अनिवार्य है। इसी कारण सभी संस्थाएँ प्रशिक्षण की व्यवस्था करती हैं। यदि प्रशिक्षण का प्रबंध् नहीं किया जाता तो ऐसी अवस्था में श्रमिकों की अकार्यकुशलता, कम उत्पादन, अध्कि कार्य एवं अध्कि दुर्घटनाओं के रूप में संस्था को हानि उठानी पड़ती है जो प्रशिक्षण पर आने वाले व्यय से कई गुणा अध्कि होती है। प्रशिक्षण, कर्मचारियों के लिए भी विशेष महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि इसकी सहायता से उनकी जॉब अध्कि सुरक्षित हो जाती हैं प्रशिक्षण से स्वामी एवं कर्मचारियों–दोनों को ही लाभ प्राप्त होते हैं।

प्रशिक्षण का महत्त्व
(Importance of Training)

तेजी से होने वाले तकनीकी परिवर्तनों के कारण प्रशिक्षण का महत्व बहुत अध्कि हो गया है। आज के युग में श्रमिकों द्वारा किये जाने वाले कार्य यन्त्रों व तकनीक पर आधरित होते जाते हैं जिसके लिए समय–समय पर प्रशिक्षण की आश्यकता होती है। प्रशिक्षण सदैव उपयोगी होता है क्योंकि किसी भी काम में कभी पूर्णता प्राप्त नहीं की जा सकती। नर्तक या गायक विश्व–प्रसि(प्राप्त करने के बाद भी अपना रियाज ;प्रशिक्षणद्ध बन्द नहीं करते । विश्व प्रसि(खिलाड़ी भी नयी विध्यिाँ सीखने के लिए खेल के मैदानों में प्रैक्टिस करते रहते हैं। एक चिकित्सक अच्छी प्रैक्टिस चल जाने पर भी नित नई पुस्तकें पढ़ता ही रहता है। इस प्रकार एक सपफल व्यक्ति का जीवनपर्यन्त प्रशिक्षण चलता रहता है जैसा कि सी. आर. डुले. (C.R.Dooley) ने कहा है **फ्प्रशिक्षण ऐसी वस्तु नहीं है जो नये कर्मचारियों को एक बार दी जाती है अपितु प्रत्येक सु–चालित संस्था में इसका लगातार उपयोग किया जाता है। प्रत्येक क्षण जब तुम किसी व्यक्ति से अपनी मर्जी के ढंग से काम करने को कहते हो, तुम प्रशिक्षण दे रहे हो। प्रत्येक क्षण तुम निर्देश देते हो या विध् के विषय में विवेचन करते हो, तुम प्रशिक्षण दे रहे होते हो।य** इस प्रकार प्रशिक्षण से कर्मचारियों के कौशल का पूर्णरूप से विकास करके उनके प्रयासों का अनुकूलतम उपयोग किया जाता है।

फ्प्रशिक्षण समस्या समाधन की एक प्रक्रिया है। आज हमारे देश में मानवीय शक्ति की उत्पादन–क्षमता का मूल्यांकन शिक्षा एवं प्रशिक्षण के आधर पर ही होता है। यह पुरानी मान्यता है कि यदि कुछ अच्छा है तो अध्कांश उससे उत्तम (better) है। जिस प्रकार हम अपने स्वास्थ्य की समस्याओं के समाधन के लिए विटामिन की गोलियाँ खाते हैं, ठीक उसी प्रकार मानवीय शक्ति की समस्याओं के समाधन के लिए अध्कि प्रशिक्षण लाभदायक है। प्रशिक्षण विधओं को अध्कि या कम मात्रा में देने का अर्थ प्रशिक्षण के विचार या महत्त्व को कम या अध्कि समझना है।य

जान ए. शुबिन (John A. Shubin) के अनुसार– फ्एक विध्वित प्रशिक्षण योजना काम में गुणात्मक तथा परिणात्मक सुधर करती है, मशीनों को सुरक्षित रखती है, लागत में कमी करती है, कर्मचारी की आय तथा उसके मनोबल में वृ(करती है तथा संगठन की नीतियों को प्रणाली ढंग से लागू करवाती हैं।य

प्रशिक्षण के उद्देश्य
(Objectives of Training)
अथवा
प्रशिक्षण के महत्त्व के कारण
(Causes of Importances of Training)

(i) **उत्पादकता में वृ(करना ;To Incresae Productivity)**– प्रशिक्षण द्वारा कर्मचारी को कार्य करने के सही ढंग, जो अनुभव द्वारा विकसित किए जाते हैं और जिनकी सहायता से उत्पादन में वृ(होती है, सिखाये जाते है।

(ii) **किस्म सुधर ;Improvement in Quality)**– वस्तु निर्माण की प्रमाणिक विध् िका प्रयोग होने से वस्तु की किस्म में सुधर होता है।

(iii) **देखरेख में कमी ;Reduced supervision)**– प्रशिक्षित कर्मचारी प्रशिक्षण के बाद अपने उच्चाध्किारियों पर अध्कि निर्भर नहीं रहते तथा देखरेख की आवश्यकता भी कम होती है। एक ;Superviorद्ध अध्कि श्रमिकों को नियन्त्रित कर सकता है जिससे प्रबन्ध्कीय व्यय में कमी आती है।

(iv) **माल के अपव्यय में कमी ;Reduced Wastage of Scrap)**– प्रशिक्षित कर्मचारी अपने कार्य में दक्ष होने के कारण माल को ठीक तरह से प्रयोग करते है जिससे माल का कम अपव्यय होता है।

(v) **दुर्घटनाओं में कमी ;Reduced Accidents)**– कर्मचारियों को कार्य की सही विध् िआने पर दुर्घटनाओं में कमी आती है।

(vi) **श्रम परिवर्तन एवं अनुपस्थिति में कमी ;Reduced Absenteism and Labour Turnover)**– प्रशिक्षित कर्मचारी संस्था एवं कार्य से सन्तुष्ट रहते हैं, जिस कारण अनुपस्थिति एवं श्रम परिवर्तन में कमी आती है।

(vii) **साध्नों का उत्तम प्रयोग ;Best utilisation of Resources)**– प्रशिक्षित कर्मचारी संसाि के उत्पादन साध्नों को अनुकूलतम प्रयोग करने की सामर्थ्य रखते है।

(viii) **संगठनीय स्थिरता एवं लोच में वृ(ि ;Increased Organisational Stability and Flexibility)**– किसी कर्मचारी के चले जाते के बाद कार्यकुशलता स्थापित करना केवल उसी संस्था के लिए सम्भव है जो अपने पास कर्मचारियों को सुरक्षित रखती है। साथ ही विभिन्न कार्यों में प्रशिक्षित कर्मचारियों को आवश्यकतानुसार विभिन्न कार्यों में रखा जा सकता है जिससे संस्था में स्थायित्व रहता है।

(ix) **नैतिकता को ऊँचा उठाना ;Raise Moral)**– प्रशिक्षण प्राप्त करने के बाद श्रमिकों का मनोबल बढ़ जाता है कयोंकि प्रशिक्षण के बाद जाब की सुरक्षा बढ़ जाती है तथा पदोन्नति की आशा भी बढ़ जाती है।

(x) **अच्छे मानवीय सम्बन्ध ;Better Human Relations)**– प्रशिक्षित प्रशिक्षण श्रमिका अपनी संस्था तथा प्रंबध्कों के प्रति अध्कि सम्मान रखता है जिन्होंने उसे प्रशिक्षण दिया है। इससे स्वामी को प्रबन्ध्कों एवं कर्मचारियों में मध्ुर सम्बन्ध स्थापित करने में सहयोग प्राप्त होता है।

प्रशिक्षण के पहलू
(Aspects of Trining)

बढ़े पैमाने के उद्योगों में प्रशिक्षण के लिए अलग से प्रशिक्षण निर्देशक **(Training Director)** नियुक्त किया जाता है जो प्रशिक्षण नीति तथा योजनाओं में समन्वय स्थापित करता है।

प्रशिक्षण कार्य के निम्न चार पहलू होते हैंः–

1. **प्रशिक्षण आवश्यकता का अनुमान ;Assessing the Need of Trainingद्ध**– सभी वर्ग के कर्मचारियों की प्रशिक्षण आवश्यकताओं को अनुमान लगाकर प्रशिक्षण की प्राथमिकतायें तथा प्रमाप निश्चित करना ।

2. **प्रशिक्षण योजना बनाना ;Planning of Trainingद्ध**– आवश्यकताओं के अनुसार प्रशिक्षण की योजना व विध्याँ तय करना तथा बाहरी और आंतरिक प्रशिक्षण के विषय में नीति निर्धरण करना, प्रत्यक प्रकार के प्रशिक्षण के लिए सर्वश्रेष्ठ तकनीक का निर्धरण करना।

3. **संगठन करना ;Organisingद्ध**– प्रशिक्षण के उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए संगठन के साध्नों एवं सुविधओं के सर्वोत्तम उपयोग पर विचार करते हुए प्रशिक्षण योजना को लागू करना।

4. **मूल्यांन करना ;Evaluation of Trainingद्ध**– प्रशिक्षण कार्यक्रम कहाँ तक तथा किस सीमा तक वास्तविक आवश्यकताओं के अनुरूप हैं इसका मूल्यांकन किया जाता है और आवश्यकता पड़ने पर सुंधर के लिए कदम उठाये जाते है। प्रशिक्षण के साथ–साथ बजटीय नियन्त्रण भी किया जाता है।

प्रशिक्षण के प्रकार
(Type of Training)

सामान्य रूप से प्रशिक्षण चार प्रकार का होता है–

1. **नवशिक्षार्थी या कुशल कारीगरी के लिए प्रशिक्षण (Apprenticeship or Training for Skilled Worker)**– कुशल कारीगरों को प्रशिक्षण नवप्रशिक्षण प्रणाली ;Apprenticeshipद्ध द्वारा लम्बे समय तक दिया जाता है और प्रशिक्षण के निरन्तर निर्देशन और निरीक्षण की आवश्यकता होती है।
2. **शिल्पकारी प्रशिक्षण (Operative Training)**– यह प्रशिक्षण नये और स्थानान्तर वाले शिल्पी कर्मचारी को दिया जाता है। यह अल्पकालीन प्रशिक्षण होता है।
3. **प्रबन्ध्कीय प्रशिक्षण (Management Training)**– विभिन्न स्तरों पर कार्य करने वाले प्रबन्ध्कों को भी प्रशिक्षण दिया जाता है। लेकिन निन्नस्तरीय प्रबन्ध्कों के प्रशिक्षण पर विशेष ध्यान देना चाहिए।
4. **विशिष्ट प्रशिक्षण (Special Training)**– बड़े पैमाने पर उन्पादन करने वाली संस्थाओं में समय–समय पर परिवर्तित एवं आधुनिक तकनीकी ज्ञान कर्मचारियों को देने के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम की व्यवस्था की जाती है।

प्रशिक्षण की विध्यिाँ
(Methods of Training)

प्रशिक्षण की विध्यिों को दो भागों में बांटा जा सकता है (i) प्रबन्ध्कों को प्रशिक्षण देने की विध्यिाँ, (ii) श्रमिको को प्रशिक्षण देने की विध्यिाँ । इन दोनों में पर्याप्त अन्तर होता है, क्योंकि श्रमिकों को विशेष कार्य का प्रशिक्षण दिया जाता है जबकि प्रबन्ध्कों को सामान्य ज्ञान की शिक्षा दी जाती है। दोनों के लिए मुख्य विध्यिाँ निम्न तालिका में प्रदर्शित की गई हैः–

प्रशिक्षण विध्यिाँ

श्रमिकों को प्रशिक्षण देने की विध्यिाँ	प्रबन्ध्कों को प्रशिक्षण देने की विध्यिाँ
1. जॉब पर प्रशिक्षण	1. जॉब परिवर्तन
2. द्वार प्रकोष्ठ प्रशिक्षण	2. मीटिंग व कान्प्रेंस विधि
3. नवसिखिया प्रशिक्षण	3. केस अध्ययन विध्
4. अनुभवी कर्मचारियों द्वारा प्रशिक्षण	4. सहायक पदवी प्रणाली
	5. रोल अदा करने की विध्
	6. अस्थायी पदोन्नति
	7. विशिष्ट संस्थाओं में प्रशिक्षण
	8. बहुउद्देशीय प्रशिक्षण ।

इन विध्यिों का संक्षिप्त वर्णन निम्न प्रकार हैः–

(1) **जॉब पर प्रशिक्षण (On Job Training)**– यह श्रमिकों का प्रशिक्षण देने की सबसे प्राचीन विध् है। यह सरल है तथा सबसे अध्कि प्रयोग में आती है । इस विध् के अन्तर्गत श्रमिक वास्तविक कार्य करते हुए कार्य सीखता है। जो संस्था इस विध् को अपनाती है वह श्रमिकों को कुशल सुपरवाइजरों की देख–रेख में वास्तविक कार्य पर छोड़ देती है तथा वह सुपरवाइजर उन्हें समय–समय पर निर्देश देते रहते हैं। इस तरह अनुभव द्वारा श्रमिक अपना कार्य सीख जाता है। यह प(ति सस्ती, सरल तथा प्रशिक्षण में कम समय लेने वाली है।

(2) **द्वार प्रकोष्ठ प्रशिक्षण (Visible School Training)** – जॉब पर प्रशिक्षण के अन्तर्गत श्रमिक द्वारा वास्तविक कार्य करने के कारण उत्पादन की किस्म तथा मात्रा प्रभावित होती है। इसलिए इस कठिनाई से बचने के लिए बड़ी–बड़ी संस्थाएँ अपनी पैफक्ट्ररी के समीप श्रमिकों को प्रशिक्षण देने के लिए प्रशिक्षण केन्द्र का निर्माण करती हैं तथा इस केन्द्र पर नए श्रमिकों को प्रशिक्षण दिया जाता है। इस केन्द्र पर कार्य सम्बन्धी समस्त यन्त्र व औजार होते हैं तथा प्रशिक्षण देने के लिए प्रशिक्षण विशेषज्ञ होते है। वास्तव में इस केन्द्र में पैफक्ट्री जैसा ही वातावरण बनाया जाता है तथा श्रमिकों को जॉब पर प्रशिक्षण देने के समान ही प्रशिक्षण दिया जाता है। यह विध्ि अध्कि खर्चीली होने के कारण केवल बड़ी संस्था ही इसक प्रयोग करती है।

(3) **नवसिखिया प्रशिक्षण (Apprenticeship Training) –** यह विध्ि प्रायः कर्मचारियों को विशिष्ट कौशल सिखलाने के लिए प्रयोग की जाती है। इसके अन्तर्गत अलग कक्षाओं में अध्ययन होता है तथा जॉब पर भी वास्तविक कार्य करवाया जाता है। कक्षाओं में विशिष्ट ज्ञान रखने वाले विशेषज्ञ सै(ान्तिक अध्ययन करवाते हैं तथा पैफक्टरी में सुपरवाइजर की देख–रेख में उनसे वास्तविक कार्य करवाते हैं। इस तरह उन्हें जॉब का अनुभव तथा ज्ञान दोनों प्रदान किय जाते है। इस तरह के प्रशिक्षण की अवध्ि प्रायः लम्बी होती है।

(4) **अनुभवी कर्मचारियों द्वारा प्रशिक्षण (Training by Experienced Workers)–** इस विध्ि के अन्तर्गत सुपरवाइजर की बजाय नये कर्मचारी का अनुभवी तथा कार्यकुशल पुराने कर्मचारी की देख–रेख में प्रशिक्षण दिया जाता है। प्रतयेक औद्योगिक संस्था में कुछ कर्मचारी ऐसे होते हैं जो अपने कार्य में पूर्ण दक्ष होते है। तथा उत्पादन में बहुत अच्छा रिकार्ड बनाये होते हैं। एक संस्था, जिसके सुपरवाइजरों के पास श्रमिकों को प्रशिक्षण देने के लिए पर्याप्त समय नहीं होता तथा जो अन्य विध्ि पर भरी व्यय नही कर सकती हो, इन अनुभवी तथा कार्यकुशल श्रमिकों का लाभ उठाती हैं। यह विध्ि छोटे आकार की संस्थाओं में अध्कि लोकप्रिय है।

प्रबन्ध्कों को प्रशिक्षण
(Training to Managers)

प्रबन्ध्कीय प्रशिक्षण का मुख्य उद्देश्य संस्था में वर्तमान प्रबन्ध् अध्किारियों को इस योग्य बनाना है जिससे कि वे प्रबन्ध् में उच्च स्थान ग्रहण करने में समर्थ हो सकें। प्रशिक्षण की आवश्यकता केवल नये प्रबन्ध् अध्किारियों के लिए ही नहीं अपितु पुराने (i) पफोरमैन (ii) सहायक प्रबन्ध्कों, (iii) उच्च प्रबन्ध्कों के लिए भी जरूरी है। आज प्रबन्ध्कीय प्रशिक्षण की आवश्यकता के प्रमुख कारण निम्नलिखित हैंः–

(i) कुशल प्रबन्ध्कों की कमी है।

(ii) कुछ प्रबन्ध्कों को सै(ांतिक ज्ञान तो कापफी होता है किन्तु व्यावहारिक ज्ञान की कमी होती है।

(iii) संस्था की गतिविध्यिों का ज्ञान कराने हेतु।

(iv) गलाकाट प्रतियोंगिता का सामना करने के लिये।

(v) संस्था के संगठनात्मक कलेवर में परिवर्तन लाने के लिये।

(vi) प्रबन्ध् क्षमता में वृ(करने के लिए।

(vii) नई–नई मण्डियों की खोज के लिये।

प्रबन्ध्कीय अध्किारियों को सुनियोजित विकास के लिए उपक्रम में सेवारत (Appointed) प्रबन्ध्कों की योग्यता व दक्षता का पता लगाने के लिये 'प्रबन्ध्कीय मूल्यांकन' (Managerial Appraisal) आवश्यक है। इस मूल्यांकन से संस्था में वर्तमान प्रबन्ध्कों में से कौन अध्कि उपयुक्त और किन में कमियाँ हैं, उनकी कमियों को ज्ञात करके उन्हें प्रशिक्षण से दूर किया जाता है।

प्रबन्ध्कों को प्रशिक्षण देने की विध्यिाँ (Methods of Training of Managers)–श्रमिकों के प्रशिक्षण तथा प्रबन्ध्कों के प्रशिक्षण में आधरभूत अन्तर होता है। श्रमिकों को एक विशेष कार्यविध्ि का प्रशिक्षण देना होता है जिसके लिए उन्हें विशेष मशीन, औजार व उत्पादन विध्ि का प्रयोग करना सिखलाया जाता है जबकि प्रबन्ध्कों को विशेष तकनीक या विध्ि की बजाय व्यवसाय

का ज्ञान सिखलाया जाता है। उनके प्रशिक्षण की विध्यिाँ ऐसी हैं जो उनमें सामान्य विकास, व्यक्तित्व व नेतृत्व के गुण उत्पन्न करती हैं। यही कारण है कि कुद प्रबन्ध्क विद्वानों ने 'प्रबन्ध्कों का प्रशिक्षण' के स्थान पर 'प्रबन्ध्कों का विकास' शब्द का प्रयोग किया है। प्रबन्ध्कों के विकास की मुख्य विध्यिाँ निम्न हैंः—

;1द्ध **जॉब अदला बदली (Job Rotation)**—साधरण शब्दों में अदला—बदली से आशय प्रशिक्षण विध् िसे है जिसके अन्तर्गत कर्मचारियों को विभिन्न जॉब में प्रशिक्षण दिया जाता है। इसके अन्तर्गत एक कर्मचारी को समय—समय पर कार्य करने तथा अनुभव प्राप्त करने का अवसर दिया जाता है। उदारहणतः एक कर्मचारी को सामग्री की प्राप्ति, विक्रय नकदी की प्राप्ति, बही खाता आदि सभी में कार्य करने का अवसर दिया जाता है ताकि वह उस विभाग की सभी क्रियाओं में निपुणता प्राप्त कर ले तथा उस विभाग के प्रबन्ध्क के रूप में कार्य करने योग्य हो जाये।

;2द्ध **मीटिंग व कान्प्रफेन्स (Meeting and Conference)**—कर्मचारियों को मीटिंग व कान्प्रफेन्स पर प्रतिनिध्त्वि देकर समस्याओं को सुलझाने व सामूहिक निर्णय लेने की योग्यता का विकास किया जा सकता है। इस तरह उन्हें अन्य प्रबन्ध्कों के अनुभव जानने का भी अवसर मिलता है। प्रबन्ध्कों के सामान्य विकास में यह विध् िविशेष महत्त्व रखती है।

;3द्ध **समस्या अध्ययन (Case Study)**—इस विध् िके अन्तर्गत प्रबन्ध्कों के पद के लिए चुने हुए व्यक्तियों को समय समय पर कुछ लिखित समस्यायें दी जाती हैं जिनके अध्ययन के बाद उन्हें निश्चित करना होता है कि उन्हें उन हालात में प्रबन्ध्क के रूप में क्या करना है। इस तरह उन्हें समस्या सुलझाने, निर्णय लेने, स्वयं प्रबन्ध्क के रूप में समस्या सुलझाने का प्रशिक्षण व ज्ञान प्राप्त होता है।

;4द्ध **सहायक प्रणाली (Assistant to Positions)**—इस प(ति के अन्तर्गत संस्था में प्रत्येक प्रबन्ध्क के साथ एक—एक सहायक प्रबन्ध्क की नियुक्ति की जाती है जो प्रबन्ध्कों के कार्य में सहायता देने के साथ—साथ उनकी कार्यविध् िको बहुत ही नजदीक से देखते हैं। इस तरह उन्हें प्रबन्ध्कों की कार्यविध् िका अनुभव प्राप्त होता है तथा आवश्यकता के समय उन प्रबन्ध्कों के स्थान पर कार्य कर सकते हैं। इस तरह संस्था में प्रत्येक प्रबन्ध्कीय जॉब के योग्य प्रशिक्षित व्यक्तियों की व्यवस्था रहती है तथा संस्था को प्रबन्ध्कों के लिए वाह्य स्तर पर निर्भर नहीं रहना पड़ता।

;5द्ध **रोल अदा करने की विध् ि(Role Playing Method)**—इस विध् िके अन्तर्गत चुने गये व्यक्तियों को विभिन्न रोल अदा करने को कहा जाता है। उदाहरणतः उन्हें एक औद्योगिक संघर्ष की समस्या देकर श्रमिक प्रतिनिध् ितथा प्रबन्ध्क के रोल अदा करने को कहा जाता है। इस तरह विभिन्न दशाओं में उनसे रोल अदा कराया जाता है जिससे वह विभिन्न स्थिति में आने वाली कठिनाइयाँ तथा वैसी ही स्थिति में भविष्य में समस्या सुलझाने योग्य हो जाते हैं।

;6द्ध **अस्थायी पदोन्नति (Temporary Promotions)**—बहुत सी बड़ी संस्थाएँ इस विध् िका प्रयोग करती है। वे कुछ प्रबन्ध्कीय जॉब खाली रखती हैं व प्रबन्ध्कों को छुट्टी लेने को प्रोत्साहित करती हैं ताकि उनके स्थान पर अन्य कर्मचारियों को कार्य करने का अवसर प्रदान किया जाये। तब प्रबन्ध्क अनुपस्थित होते हैं उस समय उसके स्थान पर अन्य योग्य कर्मचारी को अस्थायी पदोन्नति देकर उस जॉब पर कार्य करवाया जाता है जिससे वह उस जॉब को करने योग्य हो जाता है।

;7द्ध **विशिष्ट संस्थाओं में प्रशिक्षण (Specialised Institutional Training)**—प्रत्येक देश में प्रबन्ध्कीय शिक्षा देने वाली विशिष्ट संस्थायें होती हैं जो प्रबन्ध्कीय क्षेत्र की शिक्षा प्रदान करने के साथ—साथ प्रबन्ध्कों को प्रबन्ध् की नई—नई तकनीकों की जानकारी देने के लिए व्यावसायिक प्रबन्ध्कों के लिए विशिष्ट कोर्स की व्यवस्था करती हैं। हमारे देश में Administrative Staff College of India, Hyderabad ऐसी ही एक संस्था है। लगभग सभी बड़ी—बड़ी संस्थायें अपने प्रबन्ध्कों को उचित प्रशिक्षण के लिए इन संस्थाओं में भेजती हैं।

;8द्ध **बहुउद्देशीय प्रशिक्षण (Multiple Training)**—कुछ संस्थायें अपने प्रबन्ध्कों को सामूहिक विचार विमर्श से प्रशिक्षण देने के लिए संगठन के विभिन्न स्तर पर समितियों की व्यवस्था करती हैं। कुछ संस्थायें तो संगठन में जूनियर संचालक बोर्ड बनाती हैं जिसमें भविष्य में उफँचे पदों पर आने वाले प्रबन्ध्क होते है। इस सभी को संस्था की वास्तविक समस्यायें दी जाती हैं जिन्हें वह द्वितीय स्तर के रूप में सुलझाते हैं। इस तरह उन्हें ऐसे कार्य का अनुभव हो जाता है तथा भविष्य में वह सरलता से ऐसे कार्य कर सकते हैं।

प्रशिक्षण कार्यक्रम के निर्देशन के लिए आवश्यक बातें
(Guidelines for Training Programme)

अथवा

प्रशिक्षण के सि(ान्त
(Principles of Training)

प्रशिक्षण एक सतत (Continuous) प्रक्रिया है और इसमें भारी मात्रा में व्यय तथा समय की खपत होती है, इसलिये प्रशिक्षण कार्यक्रम (Training Programme) कापफी सोच–विचार के बाद तथा सावधनीपूर्वक बनाना चाहिए। इसके अलावा आधुनिक समय में प्रशिक्षण देने की विधियों के अत्यध्कि भाषणबाजी, सिनेमा स्लाइड तथा पिफल्म–प्रदर्शन उपयोगी नहीं होता।

एक प्रभावी प्रशिक्षण कार्यक्रम के लिए निम्नलिखित सि(ान्तों का पालन किया जाना आवश्यक हैः–

;1द्ध ट्रेनिंग देने वाले व्यक्ति ;प्रशिक्षकद्ध को अपने कार्य (Job) के प्रति पूरी तरह जानकारी, योग्यता प्रभावी व्यक्तित्व एवं नेतृत्व की योग्यता से प्रशिक्षण देना चाहिए।

;2द्ध प्रशिक्षकों (Instructors) को प्रशिक्षण के उद्देश्य एवं आवश्यकताओं के बारे में पूर्ण ज्ञान होना चाहिए।

;3द्ध प्रशिक्षाणार्थी (Trainees) को प्रशिक्षण कार्यक्रम की तुलना में बहुत अध्कि लगन होनी चाहिए।

;4द्ध प्रशिक्षण (Training) का उद्देश्य, प्रशिक्षणार्थी को संस्था में भी सभी स्तरों पर कार्य करने, आवश्यक कुशलता प्राप्त करने तथा कार्य में निपुणता एवं उसके व्यवहार में नम्रता प्राप्त होनी चाहिए।

;5द्ध प्रशिक्षण कार्यक्रम व्यवसाय और प्रशिक्षाणार्थी की आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर बनाना चाहिये।

;6द्ध प्रशिक्षणार्थियों (Trainees) को अभ्यास (Practical) एवं पुनरावृत्ति (Repetition) के द्वारा अध्कि प्रशिक्षण देना चाहिये।

;7द्ध कर्मचारियों की कार्यकुशलता में वृ(ि के लिए बार–बार पुरस्कार अथवा दण्ड देने की अपेक्षा प्रशिक्षण देना अध्कि हितकर होता है।

;8द्ध दीर्घकाल में कर्मचारियों के व्यवहार में अपेक्षित परिवर्तन के उद्देश्य से पुरस्कार और प्रशिक्षण दोनों विध्याँ प्रभावी होंगी।

;9द्ध प्रशिक्षक (Instructor) का यह कर्त्तव्य है कि वह प्रशिक्षणार्थियों के साथ–साथ, प्रबन्ध्कों (Managers) को प्रशिक्षण की आवश्यकताओं, विकास नीतियों तथा प्रशिक्षण की योजनाओं के बारे में आवश्यक सुझाव समय–समय पर दे।

;10द्ध प्रभावी प्रशिक्षण कार्यक्रम के लिए यह आवश्यक है कि प्रबन्ध्क उपयुक्त विध्यों या कार्यो के द्वारा मूल्यांकन करे कि प्रशिणार्थी किस सीमा तक प्रशिक्षण से लाभान्वित हुआ है।

प्रशिक्षण–कार्यक्रम की व्यवस्था
(Arrangement of Training Programmes)

प्रशिक्षण कार्यक्रम या नीति बनाने वेफ लिए निम्नलिखित बातें अपनानी चाहिए–

;1द्ध **प्रशिक्षण टाइमटेबिल होना चाहिये (Have a Training Time Table)**–प्रशिक्षणार्थी में कितना ज्ञान और निपुणता आनी चाहिए और कितने समय में।

;2द्ध **कार्य का विभाजन (Breakdown of the Job)**–कार्य–विवरण (Job description) तथा कार्य विश्लेषण (Job Analysis) करके प्रशिक्षणार्थी के कार्य (Job) का विभाजन करना चाहये ओर उनके प्रमुख बिन्दुओं (Key Points) का पता लगाकर उनके प्रशिक्षण पर अध्कि बल देना चाहिए।

;3द्ध **सब कुछ तैयार रखा जाये (Have everything ready)**–प्रशिक्षण प्रारम्भ करने से पूर्व उससे सम्बन्धित उपकरण, पदार्थ तथा अन्य आवश्यक सामान की व्यवस्था कर लेनी चाहिए।

;4द्ध **प्रशिक्षण के स्थान की व्यवस्था ठीक हो (Have the Training place properly arranged)**—जिस सथान पर प्रशिक्षणार्थियों को प्रशिक्षण दिया जाना है उसकी व्यवस्था प्रशिक्षण कार्यक्रमानुसार करनी चाहिए।

प्रशिक्षण नीति
(Training Policy)

प्रत्येक कम्पनी या संगठन में एक मजबूत प्रशिक्षण नीति होनी चाहिए। एक बजबूत प्रशिक्षण नीति निर्धरण करने का उत्तरदायित्व संस्था के उच्च प्रबन्ध्कों पर होता है। प्रशिक्षण नीति व्यापक, उद्देश्यपूर्ण, नियमों पर आधरित होनी चाहिये। एक प्रशिक्षण नीति में निम्नलिखित बातों का होना आवश्यक हैः—

1. कर्मचारियों को प्रशिक्षण देने के लिए संस्था का दृप्किोण स्पप् करना चाहिये।
2. प्रशिक्षण कार्यक्रम को बनाने एवं लागू करने के लिए समय—समय पर उच्च प्रबन्ध्कों को परामर्श देना चाहिये।
3. वैज्ञानिक आधर पर प्रशिक्षण पाने वाले कर्मचारियों का चुनाव करके उन्हें प्रशिक्षण प्राप्त करने के बारे में सूचित करना चाहिए।
4. कर्मचारियों को प्रशिक्षण के द्वारा अपना विकास करने का पूर्ण अवसर प्रदान करना चाहिये।

भारत में विभिन्न प्रशिक्षण योजनाएँ
(Various Training Schemes in India)

युवाओं को किशोरावस्था में ही आजीविका के लिए तैयार करने के उद्देश्य से रोजगार तथा प्रशिक्षण महानिदेशालय ने विभिन्न प्रशिक्षण कार्यक्रम शुरु किए हैं। जहाँ तक सम्भव होता है, ये कार्यक्रम राप्ीय ढाँचे के अन्र्तगत बनाये जाते है और विदेशी सहयोग से भी बनाये जाते हैं।

भारत में पहली बार प्रशिक्षण योजनाएँ द्वितीय विश्वयु(के समय शुरू की गई थी। द्वितीय विश्वयु(के बाद भी प्रशिक्षण योजनाएँ विस्थापितों तथा सेना से रिटायर हुए व्यक्तियों के प्रशिक्षण के लिए चालू रहीं और इसके बाद श्रम मं.त्रालय के अन्तर्गत रोजगार महा—निदेशालय के द्वारा देश में तकनीक श्रमशक्ति की बढ़ती हुई मांग की पूर्ति के लिए 1905 में फ्प्रौढ़ (Adult) विलियन प्रशिक्षण योजनाय् प्रारम्भ की गई। वर्तमान समय में यह योजना फ्कारीगर प्रशिक्षण योजनाय् के नाम से पुकारी जाती है।

15 से 25 साल की उम्र वाले युवक—युवतियों को 38 इंजीनियरी और 26 गैर इंजीनियरी ध्न्धें में प्रशिक्षण देने के लिए समुचे देश में औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थान खोले गये हैं। इस समय 1,447 संस्थाएँ, जिनमें कुल 2.64 लाख स्थान है, देश में कारीगरों को प्रशिक्षण संस्थान दे रही हैं। इंजीनियरी ध्न्धें के लिए ट्रेनिंग काल 6 माह से 2 वर्ष का है, परन्तु सभी गैर—इंजीनियरी ध्न्धें के लिए ट्रेनिंग काल एक वर्ष है। अध्कितर ध्न्धें में प्रवेश के लिए शैक्षणिक योग्यता 8वीं या मैट्रीकुलेशन से 2 वर्ष कम या इसके बराबर है। 64 ध्न्धें के अलावा राज्य सरकारों तथा केन्द्र शासित प्रदेशों ने अपने क्षेत्रों की आवश्यकतानुसार, अतिरिक्त ध्न्धें के लिए प्रशिक्षण शुरू किया है।

कारीगारी का प्रशिक्षण पाने वालों की कार्यकुशलता में वृ(के लिए रोजगार तथा प्रशिक्षण महानिदेशालय इंजीनियरी ध्न्धे के लिए प्रशिक्षण पाने वाले कारीगारों के चुनाव के लिए अभिरुचि ;एप्टीच्यूडद्ध परीक्षा का आयोजन करता है। यह परीक्षा विभिन्न क्षेत्रों के उद्योगों में भी लागू कर दी गई है ताकि एप्रेन्टिस एक्ट 1961 के अधेन उपयुक्त उम्मीदवार को एप्रेन्टिस नियुक्त किया जा सके।

प्रशिक्षण विशेषज्ञों की समिति की सिपफारिशों के अनुरूप 1981.82 में चार आदर्श औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थाओं — हल्द्वानी ;उत्तरांचलद्ध, कालीकट ;केरलद्ध, जोध्पुर ;राजस्थानद्ध और चौदवार ;उड़ीसाद्ध की स्थापना की जा चुकी है। इनका उद्देश्य कारीगरों को दिये जाने वाले प्रशिक्षण कार्यक्रम को पुनः संगठित करना है। इस कार्यक्रम में पहले कारीगरों को व्यापक आधर वाले प्रशिक्षण प्राथमिक प्रशिक्षण और बाद में आदर्श प्रशिक्षण देने की व्यवस्था है।

शिल्प–प्रशिक्षकों का प्रशिक्षण

औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थाओं के लिए कलकत्ता, कानपुर, बम्बई, मद्रास, लुध्यिाना तथा हैदराबाद के 6 केन्द्रीय संस्थानों में शिल्प प्रशिक्षकों को प्रशिक्षित किया जाता है। इन 6 संस्थानों में से मद्रास स्थित को छोड़कर सन् 1882 के दौरान अन्य पाँचों को उच्च प्रशिक्षण संस्थान के रूप में पदोन्नत कर दिया गया है। ये छः संस्थान, जिनकी क्षमता 1,144 प्रशिक्षणार्थी लेने की है। विभिन्न कामों का प्रशिक्षण देते हैं। बम्बई संस्थान में रासायनिक वर्ग के व्यापारों में और बुनाई व्यापारों में और हैदराबाद संस्थान में होटल और खान–पान सम्बन्धी मामलों में प्रशिक्षकों को ट्रेनिंग देने के लिए सुविधएँ जुटा दी गई हैं। कानपुर और लुध्यिाना के संस्थाओं में क्रमशः छपाई और खेतीबाड़ी के यन्त्रों से सम्बन्ध्ति प्रशिक्षण की सुविधओं की व्यवस्था की जा रही है। प्रत्येक केन्द्रीय संस्थान से एक आदर्श प्रशिक्षण संस्थान सम्ब(हैं, जिसमें प्रशिक्षणार्थियों को व्यावहारिक प्रशिक्षण दिया जाता है।

उच्च व्यावसायिक प्रशिक्षण योजना

अक्तूबर 1977 में 'उच्च व्यावसायिक प्रशिक्षण योजना' नामक एक परियोजना कई प्रकार के उन उच्च तथा परिष्कृत कौशलों का प्रशिक्षण देने के लिये चालू की गई है, जिनका प्रशिक्षण कार्यक्रमों के अन्तर्गत नहीं दिया जाता। यह योजना बम्बई, कलकत्ता, हैदराबाद, कानपुर, मद्रास तथा लुध्यिाना में स्थित छः उच्च प्रशिक्षण संस्थाओं और 15 राज्य सरकारों के अधीन चुने हुए 16 औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थानों में चलाई गई है आधुनिकीकरण करके उक्त योजना के अन्तर्गत विभिन्न उच्च पाठ्यक्रम चलाए जा रहे हैं। पूरे देश के लिए प्रदास का उच्च प्रशिक्षण संस्थान शीर्ष संसीा का काम करता है और अन्य पाँच उच्च प्रशिक्षण संस्थान ;जो पहले केन्द्रीय प्रशिक्षण संस्थान कहलाते थेद्ध, जहाँ यह प्रणाली लागू की गई, प्रादेशिक संस्थाओं के रूप में काम करते हैं। इनमें 1982 में 9,300 औद्योगिक कार्मिकों को प्रशिक्षित किया गया।

इलैक्ट्रॉनिकी और प्रक्रिया सम्बन्धी उपकरणों का प्रशिक्षण देने के लिए 1974 में हैदराबाद में एक उच्च प्रशिक्षण संस्थान स्थापित किया गया। इसमें घरेलू, औद्योगिक, चिकित्सा सम्बन्धी, इलैक्ट्रॉनिक तथा प्रक्रिया उपकरणों के क्षेत्रों में उच्च प्रशिक्षण दिया जाता है। इलेक्ट्रोनिक्स व प्रक्रिया उपकरणों के लिए 1981 से देहरादून ;उत्तरांचलद्ध में एक अन्य संस्थान की स्थापना की गई है।

पफोरमैनों–सुपरवाइजरों को प्रशिक्षण

पफोरमैन को प्रशिक्षित करने के लिए एक संस्थान की स्थापना बंगलौर में 1971 में की गई थी। यह इस समय काम कर रहे 'शॉप पफोरमैनों' और सुपरवाइजारों को तथा भविष्य में ऐसे पद पर कार्य करने वाले व्यक्तियों को तकनीकी एवं प्रबन्ध्न क्षमता का और उद्योगों में आए श्रमिकों को उच्च तकनीकी हुनरों का प्रशिक्षण देता है। दक्ष पफोरमैनों की बढ़ती माँग को पूरा करने के लिए केन्द्र सरकार ने सन् 1982 में जमशेदपुर में द्वितीय पफोरमैन प्रशिक्षण संस्थान की स्थापना की।

एप्रैन्टिस प्रशिक्षण योजना

एप्रैन्टिस एक्ट (Apprentices Act, 1961) के अन्तर्गत माजिकों के लिये विशि‍ष्ट उद्योगों में एप्रेन्टिसों का लगाना अनिवार्य है। यह आधभूत प्रशिक्षण होता है जिसके साथ–साथ केन्द्रीय एप्रैन्टिशिप ;प्रशिक्षुद्ध परिषद के परामर्श से सरकार द्वारा निर्धरित प्रशिक्षण मानदण्डों के अनुसार ठीक काम के बारें में प्रशिक्षण दिया जाता है। 1988 तक इस अधिनियम के अन्तर्गत 217 वर्गो के उद्योगों तथा 134 ध्न्धें को ;3 ध्न्धें को छोड़करद्ध शामिल किया गया है। 1973 के एप्रैन्टिसशिप ;संशोध्नद्ध अधिनियम के अन्तर्गत अनुसूचित जातियों/जनजातियों के उम्मीदवारों के लिए स्थान सुरक्षित करने और इंजीनियरी के स्नाताकों तथा डिप्लोमाधरियों के लिए रोजगार बढ़ाने की व्यवस्था है।

यह अधिनियम लगभग 13,375 संस्थानों में लागू है। मार्च 1986 के अन्त तक विभिन्न प्रशिक्षण पाठ्यक्रमों के अर्न्तगत लगभग 1.37 लाख एप्रेन्टिस प्रशिाण प्राप्त कर रहे थे। मार्च 1986 के अन्त तक इन्जीनियगिं प्रोद्योगिकी से सम्बन्ध्ति विषयों पर लगभग 71 प्रकार के ऐसे क्षेत्र तैयार किए गये हैं, जिनमें लगभग 15,248 स्नातक तथा डिप्लोमाधरी एप्रेन्टिस प्रशिक्षण ले रहे थे।

औद्योगिक कामगारों के लिए अंशकालिक प्रशिक्षण

जो लोग उद्योगों में बिना किसी नियमित प्रशिक्षण के प्रवेश करते हैं, उनके लिए संध्याकालीन कक्षाएँ आयोजित की गई हैं इस पाठ्यक्रम में वे औद्योगिक श्रमिक, उनकी उम्र चाहे कुछ भी हो, प्रवेश पा सकते हैं, जिन्हें किसी विशेष ध्न्धें में दो वर्ष का काम करने का अनुभव प्राप्त है और जिनका नाम उनके मालिक भिजवाते हैं। प्रशिक्षण की अवध्‍ि दो वर्ष की है। केन्द्रीय प्रशिक्षण संस्थान, मद्रास तथा 48 औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थानों और पाँच ए॰ टी॰ आई॰ में यह पाठ्क्रम चलाये जाते हैं।

व्यावसायिक प्रशिक्षण अनुसन्धन

देशी प्रशिक्षण विध्यिों के विकास के लिये 1968 में कलकत्ता में केन्द्रीय कर्मचारी प्रशिक्षण तथा अनुसन्धन संस्थान स्थापित किया गया। संस्थान में केन्द्र और राज्य सरकारों के अध्किारियों तथा कर्मचारियों एवं उद्योगों से आये लोगों के लिए ;जिनके नियन्त्रण, निर्देशन और संचालन में प्रशिक्षण कार्यक्रम चलते हैंद्ध प्रशिक्षण कार्यक्रम चलाये जाते हैं। इसके अलावा यह ध्न्धें और प्रशिक्षण विध्यिों सम्बन्धी अनुसन्धन की व्यवस्था करता है, प्रशिक्षण सहायता सामग्री तैयार करता है और उद्योगों को औद्योगिक प्रशिक्षण विध्यिों से परामर्श देता है।

महिलाओं के लिए व्यावसायिक प्रशिक्षण कार्यक्रम

केन्द्रीय महिला प्रशिक्षण संस्थान, नई दिल्ली को राष्ट्रीय महिला व्यवसायिक प्रशिक्षण संस्थान में बदल दिया गया है। यह संस्थान महिलाओं के लिए विशेष व्यवसायों में प्रशिक्षक मूल, प्रशिक्षण तथा उच्चतर प्रशिक्षण देता है। बम्बई, बंगलूर तथा तिरूअनन्तपुर में महिलाओं के लिए तीन क्षेत्रीय व्यवसायिक प्रशिक्षण संस्थान कार्य कर रहे हैं।

अध्याय–7

निष्पादन एवं सम्भावना मूल्यांकन

(Performance and Potential Appraisal)

निष्पादन मूल्यांकन

(Performance Appraisal)

कर्मचारी विकास–कार्यक्रमों में कर्मचारी के कार्य निष्पादन का मूल्यांकन महत्त्वपूर्ण स्थान है। कर्मचारी के सतोषजनक चयन एवं प्रशिक्षण व्यवस्था के साथ–साथ व्यवसाय में उसके गुणों एवं योग्यताओं के सापेक्षिक मूल्यांकन की पर्याप्त व्यवस्था होना आवश्यक है। किसी समय कर्मचारियों का सापेक्षिक योग्यता स्तर क्या है, इसका ज्ञान प्रत्येक उपक्रम के लिए आवश्यक होता है प्रत्येक उपक्रम व्यवस्थित अथवा अव्यवस्थित रीति से जाने–अनजाने में कर्मचारियों के गुणों एवं योग्यताओं का मूल्यांकन करता है। **पिफलिप्पो** (Flippo) ने कर्मचारियों के निष्पादन मूल्यांकन की अनिवार्यता पर प्रकाश डालते हुए कहा है कि, फउपक्रम के समक्ष कर्मचारी एवं उनके कार्य–निष्पादन के मूल्यांकन करने अथवा न करने का विकल्प नहीं होता। जिस प्रकार चयन के पश्चात् प्रशिक्षण अनिवार्य है, उसी प्रकार चयनित कर्मचारियों के कार्य निष्पादन का किसी समय किसी न किसी के द्वारा मूल्यांकन किया जाना अनिवार्य है। विकल्प केवल विधि–**(Chrudenand Sherman)** व्यवस्थित अथवा अव्यवस्थित का होता है।य[1] इस प्रकार प्रश्न कर्मचारियों के निष्पादन के सम्बन्ध में यह नहीं रहता कि निष्पादन–मूल्यांकन हो अथवा नहींऋ प्रश्न केवल निष्पादन विधि सम्बन्धी रहता है। इसलिए सामान्यतः निष्पादन मूल्यांकन की परिभाषायें निष्पादन मूल्यांकन विधि पर जोर देती हैं और निष्पादन मूल्यांकन को कर्मचारियों के निष्पादन की अवधि एवं व्यवस्थित विधि के रूप में परिभाषित किया जाता है।

निष्पादन मूल्यांकन से आशय एवं परिभाषा

(Meaning and Definition of Performance Appraisal)

निष्पादन मूल्यांकन कर्मचारियों के कृत्य एवं परिणामों का अध्ययन एवं आंकलन है। इस अध्ययन एवं आंकलन द्वारा कर्मचारियों की कार्यक्षमता में वृ(के लिए आवश्यक प्रयास किये जाते हैं। निष्पादन मूल्यांकन के अर्थ को समझने के लिए कुछ परिभाषाओं का अध्ययन करना आवश्यक है। ये अग्रलिखित हैं–

1. **डेल योडर (Dale Yoder)** के अनुसार, फनिष्पादन मूल्यांकन' अथवा 'कर्मचारी मूल्यांकन' शब्द का आशय उन समस्त औपचारिक कार्यविधियों से है, जिनका प्रयोग कार्यरत संगठनों में कर्मचारियों के लिए किया जाता है।य[2]

2. **क्रूडन एवं शरमन** के अनुसार, फकर्मचारियों के मूल्यांकन की कार्यविधि को साधरणतः निष्पादन मूल्यांकन के नाम से सम्बोधित किया जाता है।य[3]

3. **पिफलिप्पो (Filppo)** के अनुसार, फनिष्पादन मूल्यांकन किसी कर्मचारी का उसके वर्तमान कार्य के सम्बन्ध में तथा उच्चतर कार्य के लिए उसकी क्षमताओं का व्यवस्थित, अवधि एवं जहाँ तक मानवीय ढंग ये से सम्बन्ध हो, एक निष्पक्ष अंकन है।य[4]

---

1. Edwin B. Flippo: Principles of Personnel Management, p. 277.
2. Dale Yoder: Personnel Management and Industrial Relations, p. 357.
3. Herbert J. Chruden and Arthur W. Sherman Jr: Personnel Management, p. 211.
4. Edwin B. Flippo: Principles of Personnel Management, p.277.

4. **स्कॉट, क्लाथियर एवं स्प्रीगल** के अनुसार, फ्निष्पादन मूल्यांकन कार्य पर पूर्वाश्यकताओं के संदर्भ में एक कर्मचारी के निष्पादन का मूल्यांकन (Evaluation) करने की एक प्रक्रिया है।[5]

उपर्युक्त परिभाषाओं के अध्ययन के पश्चात् यह कहा जा सकता है कि निष्पादन मूल्यांकन से आशय विभिन्न स्तरों पर कार्य कर रहे कर्मचारियों के योग्यता स्तर का पता लगाने के लिए उपयोग में लाई जाने विध् से है। यह मूल्यांकन कर्मचारी के पदोन्नत होने एवं विकास में ही सहायक नहीं होता, अपितु उसके निष्पादन–स्तर में सुधर करने में भी सहायक होता है।

पारिभाषिक शब्दावली
(Terminology)

निष्पादन मूल्यांकन (Performance Appraisal) के लिए अनेक पर्यायवाची शब्दों का उपयोग किया जाता है। विभिन्न व्यक्ति इसके लिए भिन्न–भिन्न शब्द जैसे, सेवा अंकन (Service rating), कर्मचारी अंकन (Employee rating), कार्यक्षमता अंकन (Efficiency rating), योग्यता अंकन (Merit rating) का उपयोग करते हैं। विभिन्न विद्वान अंकन (Rating) शब्द के स्थान पर मूल्यांकन (Appraisal) शब्द को अध्कि उपयुक्त मानते हैं और आवश्यकतानुसार निष्पादन मूल्यांकन (Performance appraisal) के कर्मचारी मूल्यांकन (Employee appraisal) अथवा निष्पादन मानांकन (Performance evaluation) के नाम से सम्बोध्ति करते हैं। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि अंकन (Rating) शब्द के स्थान पर आजकल मूल्यांकन (Appraisal) शब्द का अध्कि प्रचलन किया जाने लगा है। इसका कारण, कमचारियों की योग्यता सम्बन्धी मान्यताओं में आमूलचूल परिवर्तन है। वर्तमान समय में कर्मचारी ही व्यक्तिगत विशेषताओं एवे क्षमताओं के स्थान पर कर्मचारी निष्पादन मूल्यांकन पर अध्कि बल दिया जाने लगा है। देखा जाये तो निष्पादन मूल्यांकन (Performance Appraisal or evaluation) कर्मचारी के व्यक्तित्व, कार्य एवं परिणाम सभी का सम्मिलित मूल्यांकन प्रस्तुत करता है। यह कर्मचारी का एक व्यक्ति के रूप में अध्ययन नहीं करता, अपितु उसके कौशल, कार्य एवं परिणामों के संयुक्त अध्ययन पर बल देता है। यही कारण है कि अंकन शब्द के स्थान पर मूल्यांकन एवं योग्यता शब्द के स्थान पर निष्पादन शब्द का उपयोग अध्कि वैज्ञानिक, तर्कयुत्तफ एवं आधुनिक माना जाने लगा है।

(Scott, Clothier and Spregial) **(Merit Rating)**

निष्पादन मूल्यांकन तथा योग्यता अंकन
(Performance Appraisal and Merit Rating)

जैसा कि ऊपर उल्लेख किया जा चुका है, निष्पादन मूल्यांकन के लिए अनेक अन्य पर्यायवाची शब्दों का प्रयोग किया जाता है। योग्यता अंकन अथवा योग्यता निर्धरण भी ऐसा ही एक शब्द है। योग्यता अंकन योग्यता निर्धरण कार्य प्रमाप के संदर्भ में कर्मचारियों की योग्यताओं का तुलनात्मक अध्ययन है। इसके द्वारा अध्किारी अथवा पर्यवेक्षक कर्मचारी की कार्यकुशलता की जाँच करके उसकी योग्यताओं अथवा दुर्बलताओं का पता लगाता है। **टिपिफन एवं मैक्कोरमिक** (Tiffin and McCormick) के अनुसार योग्यताओं निर्धरण किसी कर्मचारी का उसके पर्यवेक्षण अथवा अन्य किसी योग्य व्यक्ति द्वारा जो उसके कार्य निष्पादन का ज्ञान रखता हो, व्यवस्थित मूल्यांकन है।[6] सामान्यतः योग्यता निर्धरण के लिए योग्यता निर्धरण पफार्म का उपयोग किया जाता है जिसका प्रारूप उपक्रम अपनी आवश्यकतानुसार निर्धरित करता है। कर्मचारी का योग्यता निर्धरण सामान्यतः एक सतत् प्रक्रिया होती है और निर्धरित समयान्तर से की जाती है। प्रायः ही योग्यता निर्धरण या अंकन कर्मचारियों के निकटतम बध्किारी या पर्यवेक्षण द्वारा वर्ष के अन्त में किया जाता है। परन्तु वार्षिक योग्यता निर्धरण कोई नियम नहीं है। आवश्यकतानुसार योग्यता निर्धरण संलेख प्रति मास, तिमाही अथवा अर्(वार्षिक भी तैयार किये जाते है। योग्यता निर्धरण के समय अध्किारी यह जाँच करता है कि मूल्यांकित व्यक्ति ने अपने कार्य के सन्दर्भ में अपनी योग्यताओं का उपयोग किस भाँति किया है और पिछले योग्यता निर्धरण के समय पायी गई दुर्बलताओं को उसके द्वारा कहाँ तक दूर किया जा सका है। योग्यता निर्धरण कर्मचारी के सम्बन्ध् में उपक्रम का स्थायी अभिलेख (Record) बन जाता है और इसका उपयोग उसकी भावी पदोन्नति, स्थानान्तरण आदि के लिए किया जा सकता है। इस अभिलेख के आधर पर उसकी कार्य योग्यता के सम्बन्ध् में सुधर के उपाय किये जा सकते हैं।

---

5. Scott, W.D., Clothier, R.C., and Spreigal, W.R.: Personnel Management, p. 160.
6. Joseph Tiffin and Earnest J. McCormick: Industrial Psychology, p. 204.

कर्मचारियों के योग्यता निर्धरण के लिए निश्चित प्रमापों का उपयोग किया जाता है। योग्यता निर्धरण में अन्तनिर्हित विभिन्न गुणों के लिए प्रमाप निश्चित कर दिये जाते हैं और उन्हीं के अनुसार विभिन्न गुणों का आंकलन किया जाता है। इसके अर्न्तगत जिन गुणों का आंकलन किया जाता है, वे हैं–

1. उसकी नियत कार्य को करने की क्षमता,
2. कार्य के तकनीकी एवं व्यक्तित्व तत्त्वों का ज्ञान,
3. उसकी आदतें एवं व्यक्तित्व सम्बन्धी विशिष्टताएँ,
4. कार्य के प्रति उसका गुणात्मक एवं संख्यात्मक योगदान।

कर्मचारियों के योग्यता निर्धरण द्वारा इन गुणों को ज्ञात करने के प्रमुख लक्ष्य दो होते हैं–

1. वर्तमान पद पर कर्मचारी के योग्यता स्तर का पता करना,
2. इस योग्यता स्तर के आधर पर उसके भावी विकास कार्यक्रम का निर्धरण करना।

योग्यता निर्धरण किसी उत्पाद की भाँति कर्मचारी का निर्धरण नहीं है, न ही यह उसका एक्स–किरण चित्र है। वास्तव में यह कर्मचारियों के लिए कार्य के लक्षण निर्धरित करके उसके विकास एवं उन लक्ष्यों की प्राप्ति का साध्न मात्र है। **जार्ज आर॰ टैरी** (George R. Terry) ने इस बात का उल्लेख करते हुए कहा है कि फ्योग्यता निर्धरण को उपक्रम की महत्त्वपूर्ण सम्पति–कर्मचारी वर्ग की योग्यता सारणी (Inventory) के रूप में देखा जाना चाहिए।य्[7] यह सारणी उपक्रम के प्रबन्ध के लिए अनेक प्रकार से सहायक होती है तथा उसकी प्रभावशीलता करती है।

योग्यता अंकन अथवा योग्यता निर्धरण (Merit Rating) शब्द का उपयोग व्यापक रूप में निष्पादन मूल्यांकन (Performance Appraisal) शब्द के स्थान पर किया जाता है, परन्तु इस विषय में अध्किांश लेखकों का मत यह है कि योग्यता अंकन या निर्धरण शब्द संकुचित है और निष्पादन मूल्यांकन व्यापक शब्द है। योग्यता अंकन या निर्धरण सम्पूर्ण निष्पादन मूल्यांकन के एक पक्ष को ही प्रकट करता है। योग्यता निर्धरण से तात्पर्य वास्तव में मूल्यांकन की उन विध्यिों से लिया जा सकता है जिसके द्वारा कर्मचारियों की सापेक्षित योग्यताओं की तुलना करके उन्हें श्रेणीब(किया जाता है। योग्यता अंकन इस अर्थ में कर्मचारी का मापन, तुलना एवं योग्यता के आधर पर वर्गीकरण है। योग्यता अंकन या निर्धरण द्वारा प्रत्येक कर्मचारी को उसकी योग्यताओं के आधर पर निश्चित वर्गों में रखना सम्भव हो जाता है। परन्तु निश्चित योग्यताओं के निर्धरित प्रमापों के आधर पर कर्मचारी के सम्पूर्ण व्यक्तित्व एवं निष्पादन पर उसके प्रभाव का मूल्यांकन सम्भव नहीं है। योग्यता अंकन अथवा निर्धरण कुछ कतिपय योग्यताओं का मूल्यांकन है। कर्मचारियों की इन कतिपय योग्यताओं के औपचारिक निर्धरण के साथ मूल्यांकन प्रक्रिया में उनके व्यापक मूल्यांकन की व्यवस्था होनी चाहिए। यही कारण है कि योग्यता अंकन या निर्धरण के साथ मूल्यांकन के व्यापक क्षेत्र का केवल एक औपचारिक अंग ही स्वीकार किया जाता है। कर्मचारियों का निर्धरण मूल्यांकन विभिन्न उद्देश्यों के लिए किया जाता है। इस मूल्यांकन में योग्यता अंकन या निर्धरण कर्मचारियों की पदोन्नति वेतन या परिश्रमिक समायोजन प्रशिक्षण कार्यक्रमों के निर्धरण आदि के लिए किया जाता है। वर्तमान प्रबन्ध्क योग्यता अंकन या निर्धरण का कर्मचारियों को योग्यताओं वर्गीकरण करने के लिए व्यापक उपयोग करते हैं। परन्तु इस औपारिक मूल्यांकन के साथ अन्य साक्ष्यों का उपयोग भी निष्पादन का मूल्यांकन करने के लिए किया जाता है। **डेल योडर** (Dale Yoder) के अनुसार, फ्वर्तमान प्रथा अब भी औपारिक अंकन को व्यापक उपयोग में लाना है अर्थात् व्यक्तिगत योग्यताओं के आधर पर श्रेणी तथा अंकों का आबंटन। परन्तु इसके अतिरिक्त आज व्यवहार में इन परिमित एवं वर्गीकृत मूल्यांकन के संपूरक, विवरण, उपाख्यान, घटना, अभिमत एवं प्रमाण हैं।य्अर्थात् निष्पादन मूल्यांकन औपचारिक योग्यता अंकन के अतिरिक्त कर्मचारी को निष्पादन का मूल्यांकन करने के लिए अवलोकन, अभिलेख एवं अन्य साक्ष्यों का सहारा लेता है। योग्यता अंकन तकनीकों का उपयोग निष्पादन मूल्यांकन का अभिन्न अंग है। इसके द्वारा कर्मचारी की प्रत्येक योग्यता का मापन हो जाता है। परन्तु इन मापदण्डों के अतिरिक्त अन्य साध्नों द्वारा निष्पादन मूल्यांकन को अध्कि यथार्थपरक, वैज्ञानिक एवं व्यावहारिक बनाने का प्रयास किया जाता है।

---

7. George R. Terry: Office Management and Control, p. 631.

निष्पादन मूल्यांकन किसी उपक्रम में कर्मचारियों, पर्यवेक्षकों एवं प्रबन्धें सभी का किया जाता है। प्रबन्ध्कों की निष्पादन योग्यता के मूल्यांकन के लिए योग्यता अंकन या निर्धरण शब्द को प्रबन्ध्कों द्वारा उपयूक्त न मानने के करण भी प्रायः निष्पादन मूल्यांकन एवं योग्यता अंकन या निर्धरण शब्दों में अन्तर किया जाता है। पर्यवेक्षकों से ऊपर के प्रबन्ध्कों के लिए व्यवहार में निष्पादन मूल्यांकन अथवा प्रबन्ध्कीय मूल्यांकन शब्द का उपयोग बहुध किया जाता है। पर्यवेक्षक एवं उनसे नीचे के कर्मचारियों के लिए निष्पादन मूल्यांकन के स्थान पर योग्यता अंकन या निर्धरण शब्द का उपयोग होता है।

निष्पादन मूल्यांकन के उद्देश्य
(Objective of Performance Apprisal)

प्रत्येक उपक्रम में उसके अन्तर्गत कार्य करने के लिए व्यक्तियों का निष्पादन मूल्यांकन आवश्यक हो जाता है। प्रत्येक व्यक्ति की यह इच्छा होती है कि उसके कार्य एवं योग्यताओं का सही मूल्यांकन किया जाये। प्रत्येक स्तर पर अध्किारी अपने अधेनस्थों के कार्य एवं योग्यताओं के सम्बन्ध् में निश्चित अभिमत बना लेता है। इसलिए यह अत्यन्त आवश्यक हो जाता है कि उपक्रम में कार्य करने वाले प्रत्येक व्यक्ति का मूल्यांकन सही एवं न्यायसंगत तथ्यों पर आधरित हो। यह सभी सम्भव है जबकि मूल्यांकन व्यवस्थित एवं उद्देश्यपरक हो। किसी उपक्रम में निष्पादन की उद्देश्यपरक व्यवस्था द्वारा कुछ निम्न निश्चित उद्देश्यों की प्राप्ति की जा सकती है–

1. अध्किारी वर्ग द्वारा अपने अपीनस्थों के सम्बन्ध् में निर्णयों को उद्देश्यपरक बनाया जा सकता है।
2. अधेनस्थों के सम्बन्ध् में निर्णय लेने के लिए पर्याप्त सूचनायें उपलब्ध् की जा सकती है।
3. अधेनस्थों के साथ व्यवहार में निष्पक्षता लाई जा सकती है तथा किसी कर्मचारी की योग्यता की अवहेलना की सम्भावना समाप्त की जा सकती है।

टिपिफन एवं मैक्कॉरमिक[8] (Tiffin and McCormick) ने यह उल्लेख किया है कि सामान्यतः निष्पादन मूल्यांकन के उद्देश्यों को दो मुख्य वर्गों में बाँटा जा सकता हैः प्रशासनिक तथा आत्मविकास। निष्पादन मूल्यांकन के प्रशासनिक उद्देश्यों में कर्मचारियों की पदोन्नति, स्थानान्तरण, जबरी छुट्टी, सेवा मुक्ति, पारिश्रमिक समायोजन, प्रशिक्षण की आवश्यकता एवं व्यवस्था सम्बन्धी उद्देश्य सम्मिलित होते हैं। निष्पादन मूल्यांकन के आत्मविकास सम्बन्धी उद्देश्य का सम्बन्ध् कर्मचारियों के अपने गुण एवं दोषों से है ताकि उनकी जानकारी प्राप्त करके दोषों को दूर कर आत्म विकास किया जा सके।

मेकग्रेगर[9](McGregor) के अनुसार, फऔपाचारिक निष्पादन मूल्यांकन योजनायें मुख्यतः तीन आवश्यकताओं को पता पूरा करने के लिए तैयार की जाती हैं। इनमें से एक संगठन से सम्बन्धित है और दो कर्मचारियों से सम्बन्धित है। यह हैं–

1. निष्पादन मूल्यांकन योजनायें कर्मचारियों के पारिश्रमिक में वृ(िस्थानान्तरण पदावनति या सेवामूक्ति के सम्बन्ध् में व्यवस्थित न्याय प्रस्तूत करती है।
2. निष्पादन मूल्यांकन योजनायें अधेनस्थों की –
   (i) यह कहने के साध्न है कि वे कार्य कैसे कर रहे है।
   (ii) यह सुझाव देने की यूक्ति है कि उन्हें के अपने व्यवहार, प्रवृतियों निपुणताओं यसा कृत्य ज्ञान में परिवर्तन की आवश्यकता है।
   (iii) यह अवगत कराने का माध्यम है कि उनके बारे में अध्किारी क्या विचार रखते हैं अर्थात् अध्किारियों के समक्ष अधेनस्थ की क्या स्थिति है।
3. निष्पादन मूल्यांकन योजनायें उच्च अध्किारियों द्वारा अपने अधेनस्थों को प्रशिक्षण, मार्गदर्शन एवं मन्त्रणा करने के आधर के रूप में प्रयोग में लाई जाती है।

संक्षेप में निष्पादन मूल्यांकन के निम्न उद्देश्य होते हैं–

---

8. Joseph Tiffin and Earnest. J McCormick: Industrial Psychology, p. 205.
9. McGregor, Douglas, "An Uneasy Look at Performance Appraisal" in Hardvard Business Review, May/June, p. 89-94.

1. कर्मचारियों की योग्यताओं के सम्बन्ध में उच्चतर अध्किारी द्वारा तर्कसंगत मूल्यांकन का विकास।
2. नवीन अथवा पूर्व प्रशिक्षित कर्मचारियों की प्रगति की अभिलेख उपलब्ध् करना।
3. कर्मचारी प्रशिक्षण की नवीन एवं परिवर्तित आवश्यकताओं का ज्ञान।
4. कर्मचारियों की अप्रकट योग्यताओं एवं क्षमताओं की जानकारी।
5. पदाध्किारों की पदोन्नति, स्थानान्तरण आदि के यथार्थपरक आधरों की उपलब्ध्ि।
6. कर्मचारियों को उनके उच्चतर अध्किारी के उनके सम्बन्ध में विचारों का ज्ञान।
7. पारिश्रमिक वृ(ि के औचित्य का आधर निर्माण करना।
8. परिवेदनाओं को कम करना।
9. कृत्य निष्पादन में सुधर करना।
10. कर्मचारी को उसके निष्पादन स्तर के बारे में जानकारी देकर व्यक्तिगत और समूह विकास को बनाये रखना।

रोलान्ड बेन्जामिन (Roland Benjamin) के अनुसार, पनिष्पादन मूल्यांकन निश्चित करता है कि कौन योग्यता वृ(ि प्राप्त करेगाः कर्मचारियों से उनके सुधर के लिए मन्त्रणा करता हैऋ उनकी प्रशिक्षण आवश्यकताओं को निश्चित करता हैऋ उनकी पदोन्नति निश्चित करता है तथा जिनका स्थानान्तरण किया जाना है उनका निश्चय करता है। इनके अतिरिक्त निष्पादन मूल्यांकन कर्मचारियों के कृत्य निष्पादन में सुधर करता हैऋ कर्मचारियों को अपने विचार व्यक्त करने के लिए या अपने कृत्य कर्त्तव्यों के सम्बन्ध में स्पष्टीकरण माँगने के लिए प्रोत्साहित करता हैऋ कर्मचारियों के दृष्टिकोण क्षमता एवं विकास सम्भावनाओं को विकसित करता हैऋ मानव शक्ति के अध्कि प्रभावी उपयोग का आधर विकसित करता हैऋ सर्वश्रेष्ठ योग्यता प्राप्त कर्मचारी के चयन, पारितोषण एवं पदोन्नति को सुलभ बनाता हैऋ परिवेदनाओं की रोकथाम करता है तथा पर्यवेक्षकों की विश्लेषणात्मक योग्यताओं में वृ(ि करता है।य

निष्पादन मूल्यांकन के प्रकार
(Kinds of Performance Appraisal)

1. वर्तमान रिक्त पदों के लिए योग्यतम कर्मचारियों का चयन करना,
2. कर्मचारियों की भावी पदोन्नति के लिए उनमें आवश्यक गुणों का विकास करना।

यहाँ यह उल्लेखनीय है कि निष्पादन मूल्यांकन या योग्यता अंकन कार्य मूल्यांकन (Job Evaluation) से भिन्न कार्य है। कार्य सम्बन्ध् विभिन्न कार्यों के सापेक्षिक मूल्य ये न होकर विभिन्न कर्मचारियों के सापेक्षिक गुणों एवं योग्यताओं से होता है। कार्य मूल्यांकन कर्मचारी की नियुक्ति से पूर्व किया जाता है। निष्पादन मूल्यांकन कर्मचारियों की नियुक्ति के बाद किया जाता है। निष्पादन मूल्यांकन के कार्य मूल्यांकन से इन तुलनात्मक अन्तर के आधर पर ही इन दोनों के उद्देश्यों को सरलता से समझा जा सकता है। कार्य मूल्यांकन कार्य का मूल्यांकन है और इसका उद्देश्य कार्यानुसार पारिश्रमिक दरें निर्धरित करना होता है। निष्पादन मुल्यांकन कर्मचारियों की योग्यताओं का अंकन उनकी कार्य–कुशलता की जानकारी के लिए करता है ताकि वह निर्धरित किया जा सके कि आवश्यकता प्रशिक्षण के पश्चात् भी चयनित कर्मचारी कार्य के योग्य है अथवा नहीं है। इसके अतिरिक्त निष्पादन मूल्यांकन कर्मचारियों के भावी विकास की सम्भावनाओं की जानकारी के लिए उनका आवध्कि मूल्यांकन करने की व्यवस्था करता है। अपने इन उद्देश्यों के आधर पर निष्पादन मूल्यांकन को निम्नाकित दो वर्गों में विभक्त किया जा सकता है–

1. प्रारम्भिक मूल्यांकन (Initial Appraisal)
2. पदोन्नति मूल्यांकन (Promotional Appraisal)

1. **प्रारम्भिक मूल्यांकन (Initial Appraisal):** प्रारम्भिक मूल्यांकन से आशय नवीन चयनित व्यक्तियों को प्रशिक्षण के पश्चात् उन्हें उनके उपयुक्त पदों पर नियुक्त करने के लिए मूल्यांकन से है। जब चयनित व्यक्तियों का शिक्षण–प्रशिक्षण

कार्य समाप्त हो जाता है तो नियुक्ति हेतु उनकी योग्यता का मूल्यांकन किया जाता है। यह मूल्यांकन इस बात की जानकारी प्राप्त करने के लिए किया जाता है कि चयनित व्यक्ति किसी विशेष पद के लिए उपयुक्त है अथवा नहीं है। इसे ही प्रारम्भिक मूल्यांकन की संज्ञा दी जाती है।

2. **पदोन्नति मूल्यांकन (Promotional Appraisal):** किसी उपक्रम में वर्तमान कर्मचारियों को उच्च पद पर नियुक्ति किये जाने के लिए मूल्यांकन 'पदोन्नति मूल्यांकन' कहा जाता है। अर्थात् 'पदोन्नति मूल्यांकन' वर्तमान कर्मचारियों को पदोन्नत करने के लिए किया जाने वाला मूल्यांकन है।

उपक्रम में पदाध्किारों के विभिन्न स्तर होते हैं, व्यावसायिक उपक्रम में प्रबन्ध्कों को प्रायः तीन स्तरों में विभक्त किया जाता है– उच्च–स्तरीय–प्रबन्ध्, मध्यस्तरीय प्रबन्ध् एवं निम्न–स्तरीय प्रबन्ध्। इन तीनों स्तरों पर कार्य करने वाले पदध्किारों की योग्यता, अनुभव आदि में पर्याप्त अन्तर है। अतः इस दृष्टि से पदोन्नति मूल्यांकन को दो भागों में विभक्त किया जा सकता है–

1. **निम्नवर्ती तथा मध्यवर्ती प्रबन्ध्कों का मूल्यांकन (Appraisal of Front line and Middle line Managers):** प्रायः उपक्रमों में प्रारम्भिक पदों पर नियुक्ति बाह्य स्रोतों से ही भरे जाते हैं। उपक्रम अपने कर्मचारियों को उनकी योग्यतानुसार प्रबन्ध्कीय पदों पर पदोन्नत होने का अवसर प्रदान करते हैं। यह पदोन्नति योग्यता मूल्यांकन के आधर पर ही की जाती है।

2. **उच्चवर्ती प्रबन्ध्कों का मूल्यांकन (Appraisal of Upper level Managers):** उपक्रम के उच्चवर्ती पदाध्किारी अपनी योग्यतानुसार उच्चतम पदों तक पहुँचने हैं। इनका मूल्यांकन भी योग्यता मूल्यांकन संलेखों (Merit rating or performance appraisal document) के आधर पर किया जाता है।

प्रारम्भिक मूल्यांकन तथा पदोन्नति मूल्यांकन में अन्तर
(Difference between Initial Appraisal and Promotional Appraisal)

प्रारम्भिक मूल्यांकन तथा पदोन्नति मूल्यांकन में निम्नांकित अन्तर हैं–

क्र॰ सं॰	अन्तर का आधर	प्रारम्भिक मूल्यांकन	पदोन्नति मूल्यांकन
1.	नियुक्ति	यह मूल्यांकन नवीन चयनित व्यक्तियों के उनके प्रशिक्षण के पश्चात् प्रारम्भिक पदों पर नियुक्ति के लिए होता है।	यह मूल्यांकन उपक्रम में कार्य कर रहे व्यक्तिओं की पदोन्नति के लिए किया जाता है।
2.	अनुभव	प्रारम्भिक मूल्यांकन उन व्यक्तियों का मूल्यांकन है जिन्हें कार्य का पूर्व–अनुभव प्राप्त नहीं होता।	पदोन्नति मूल्यांकन ऐसे व्यक्तिाओं का मूल्यांकन है जिन्हें कार्य–अनुभव प्राप्त होता है।
3.	मूल्यांकन	प्रारम्भिक मूल्यांकन व्यक्ति का व्यक्तिगत मूल्यांकन है।	पदोन्नति मूल्यांकन व्यक्ति के कार्य परिणामों का मूल्यांकन है।
4.	आधर	इस मूल्यांकन में व्यक्ति के व्यावहारिक ज्ञान तथा व्यक्तित्व को ध्यान में रखा जाता है और उसके उन गुणों पर विशेष ध्यान दिया जाता है जो उसे योग्य पदाध्किारी बना सकेंगे।	इस मूल्यांकन का आधर पर व्यक्ति के अनुभव तथा कार्यकुशलता को बनाया जाता है।

निष्पादन मूल्यांकन का आयोजन
(Planning for Performance Appraisal)

निष्पादन मूल्यांकन की प्रभावशीलता के लिए उसका उत्तम नियोजन आवश्यक है। निष्पादन मूल्यांकन एक विभागीय उत्तरदायित्व है और यह कर्मचारी प्रबन्ध के सहयोग से सम्पन्न किया जाता है। निष्पादन मूल्यांकन के लिए उच्चस्तरीय प्रबन्ध तथा कर्मचारी दोनों के सहयोग की आवश्यकता है। निष्पादन मूल्यांकन पर समय तथा ध्न दोनों का ही व्यय होता है और यह दोनों ही बेकार न जायें इसके लिए यह आवश्यक है कि इसकी योजना अथवा कार्यक्रम का निर्माण बहुत सोच–समझकर किया जाना चाहिए। **क्रुडन तथा शरमन** (Chruden and Sherman) ने कहा है कि फ्मूल्यांकन कार्यक्रम की नियोजन अवस्था पर ही कार्यक्रम की सपफलता असपफलता अध्किांशतः निर्भर करती है।य[10] निष्पादन मूल्यांकन के लिए जिन नीतियों एवं कार्यविध्यिों का इस समय विकास किया जाता है, वे सम्पूर्ण कार्यक्रम को प्रभावित करती हैं।

निष्पादन मूल्यांकन के कार्यक्रम का निर्माण उपक्रम की आवश्यकताओं के अनुकूल होना चाहिए। कर्मचारी प्रबन्ध के अन्य कार्यक्रमों की भाँति निष्पादन मूल्यांकन कार्यक्रम पर विशेष परिस्थितियों का प्रभाव पड़ता है। किसी एक उपक्रम में किसी एक निष्पादन कार्यक्रम की सपफलता से यह निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता कि वह कार्यक्रम प्रत्येक उपक्रम के लिए उपयुक्त होगा। यद्यपि मूल्यांकन की आवश्यकता एवं विध्यिों में अन्तर नहीं पाया जाता, परन्तु उसके वास्तविक उद्देश्यों एवं दृष्टिकोणों में भिन्नता हो सकती है। यही भिन्नता विभिन्न उपक्रमों के निष्पादन मूल्यांकन नियोजन एवं कार्यक्रमों में अन्तर उत्पन्न कर देती है।

सामान्यतः किसी उपक्रम में निष्पादन मूल्यांकन के नियोजन में निम्न बातों पर ध्यान दिया जाना आवश्यक है–

1. **उद्देश्यों का निर्धरिण (Determining Objectives):** निष्पादन मूल्यांकन के प्रारम्भ में इसके उद्देश्यों का भली–भाँति निश्चित किया जाना चाहिए। निष्पादन मूल्यांकन से सम्बन्ध्ति महत्त्वपूर्ण प्रश्न मूल्यांकन के उपयोग सम्बन्धी है। मूल्यांकन किस उद्देश्यों में पदोन्नति, पारिश्रमिक समायोजन, प्राशिक्षण की आवश्यकताओं का निर्धरण, कर्मचारी मनोबल में वृ(तथा कर्मचारियों की क्षमताओं की जानकारी प्राप्त करना सम्मिलित है। यद्यपि निष्पादन मूल्यांकन की इन समस्त उपयोगिता को ध्यान में रखा जाता है तथापि एक उपक्रम कुछ विशिष्ट उपयोगिता अथवा उद्देश्यों को दृष्टिगत रखकर निष्पादन मूल्यांकन कार्यक्रम का विकास करता है।

2. **मूल्यांकन का उत्तरदायित्व (Responsibility of Appraisal):** निष्पादन मूल्यांकन नियोजन के लिए यह भी निश्चित करना आवश्यक है कि मूल्यांकन किस के द्वारा किया जायेगा। **डेल योडर** (Dale Yoder) ने मूल्यांकन के उत्तरदायित्व के सम्बन्ध में विभिन्न विकल्प प्रस्तुत किये हैं।[11] इनके अनुसार मूल्यांकन तुरन्त ऊपर वाले अध्किारी या पर्यवेक्षक, समानस्तरीय कर्मचारी, अधेनस्थ कर्मचारी, विशेष मूल्यांकनकर्त्ता तथा स्वंय कर्मचारी द्वारा ही किया जा सकता है। परन्तु मुख्य रूप में मूल्यांकन का कार्य तुरन्त ऊपर वाले अध्किारी द्वारा ही किया जाता है। इस प्रकार श्रमिक का मूल्यांकन पफोरमैन, पफोरमैन का प्रथम पंक्ति प्रबन्ध्क, प्रथम पंक्ति प्रबन्ध्क का मध्यवर्ती प्रबन्ध्की, मध्यवर्ती प्रबन्ध्क का उच्चस्तरीय प्रबन्ध वर्ग द्वारा किया जाता है। उच्चस्तरीय प्रबन्ध का मूल्यांकन उन पक्षों द्वारा होता है जिनके प्रति वे अपने क्रियाकलापों के लिए जबावदेय होते हैं। तुरन्त ऊपर वाले अध्किारी के द्वारा मूल्यांकन के अतिरिक्त अनेक उपक्रमों में अन्य विकल्पों का भी उपयोग किया जाता है।

   जहाँ कर्मचारी को एक से अध्कि अध्किारियों को आदेश देने का अध्किार है वहाँ मूल्यांकन का उत्तरदायित्व निश्चित करना और भी अध्कि आवश्यक हो जाता है।

3. **मूल्यांकन पफार्म का निर्माण (Devising Appraisal Forms):** निष्पादन मूल्यांकन के लिए मूल्यांकन पफार्म का निर्माण भी आवश्यक है। मूल्यांकन के लिए किन योग्यताओं तथा विशेषताओं पर ध्यान केन्द्रित किया जायेगा? इस उद्देश्य

---

10. Herbert J. Chruden and Arthur W. Sherman Jr.: Personnel Management, p. 224.
11. Dale Yoder: Personnel Management and Industrial Relations, pp. 363-4.

के लिए दो प्रकार के मूल्यांकन में अन्तर करना आवश्यक होता है। कर्मचारियों का मूल्यांकन उनके कार्य निष्पादन एवं भावी विकास की निहित क्षमताओं के विषय में किया जा सकता है। इन दोनों प्रकार के मूल्यांकन के लिए योग्यता के ऐसे बिन्दु निर्धरित करके मूल्यांकन पफार्म का प्रारूप तैयार किया जाना चाहिए जिससे कर्मचारियों की योग्यताओं का यथार्थपरक मूल्यांकन हो सके। इस मूल्यांकन पफार्म में कर्मचारी के व्यक्तिगत एवं कार्य निष्पादन दोनों से सम्बन्धित प्रश्नों की व्यवस्था की जानी चाहिए।

4. **अंक एवं भार का निर्धरण (Developing Weight and Scoring Points):** कर्मचारियों के मूल्यांकन में समानता लाने एवं उन्हें तुलनात्मक बनाने की दृष्टि से विभिन्न कार्य लक्षणों एवं योग्यताओं को आवश्यक भार एवं अंकों का निश्चय भी करना आवश्यक है। भार एवं अंक योजना की अनेक विध्यिाँ प्रचलन में हैं और उपक्रम अपनी आवश्यकतानुसार उनमें से किसी का भी उपयोग करता है। अंक तथा भार, कार्य–लक्षण एवं योग्यताओं के सापेक्षित महत्त्व के आधर पर निर्धरित किये जाते हैं।

5. **मूल्यांकन का प्रशिक्षण (Training of Apparisal):** मूल्यांकन उपक्रम की आवश्यकता एवं उद्देश्यों के अनुसार हो, इसके लिए मूल्यांकन को आवश्यक प्रशिक्षण भी दिया जाना चाहिए। सामान्यतः यह मान कर चला जाता है कि मूल्यांककों अपने अधीनस्थों के मूल्यांकन की सामर्थ्य रखता है, परन्तु पिफर भी मूल्यांकक के प्रशिक्षण की आवश्यकता को कम करके नहीं आँका जा सकता। प्रशिक्षण की आवश्यकता मूल्यांकक को विभिन्न बिन्दुओं के महत्त्व का आँकने में समर्थ बनाने के लिए आवश्यक है। बातों को केवल मूल्यांकन के अनुमान पर ही न छोड़कर उनमें उसे दीक्षित किया जाना चाहिए। मूल्यांकक पफार्म एवं भार तथा अंक योजना से उसे पूर्ण अवगत कराया जाना चाहिए।

6. **मूल्यांकन की बारम्बारता (Frequency of Evaluation):** मूल्यांकन कब किया जाए तथ्स एक निश्चित कालविध् में कितनी बार किया जाए यह भी निश्चित होना चाहिए। सामान्यतः निष्पादन मूल्यांकन वर्ष में एक बार अथवा कहीं–कहीं अ(वार्षिक किया जाता है। विशेष अवस्थाओं में मूल्यांकन एक या दो बार से अध्कि भी किया जाता है।

7. **मूल्यांकन सूचनाओं का अन्य सूचनाओं से समन्वय (Relating Appraisal Information with other Information):** मूल्यांकन सूचनाओं को अध्कि सार्थक बनाने के लिए इनका सामंजस्य निष्पादन सम्बन्धी अन्य उपलब्ध् सूचनाओं के साथ किया जाना चाहिए। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए विभागीय मूल्यांककों एवं कर्मचारी विभाग के मूल्यांकक विशेषज्ञो के बीच सम्पर्क एवं समन्वय स्थापित होना चाहिए। निष्पादन मूल्यांकन सम्बन्धी विभिन्न निष्कर्षों की पारस्पारिकक जाँच की व्यवस्था की जानी चाहिए।

8. **कर्मचारियों के साथ सम्प्रेषण की व्यवस्था (Provision for Communication with Employee):** मूल्यांकन की विभिन्न अवस्थाओं में कर्मचारी एवं उनके प्रतिनिध्यिों के साथ विचार–विमर्श की व्यवस्था की जानी चाहिए। निष्पादन मूल्यांकन के पफार्म एवं भार तथा अंकों का निर्धरण जहाँ तक सम्भव हो, कर्मचारियों की स्वीकृति एवं सहयोग से ही किया जाना चाहिए। बहुध उपक्रमों द्वारा मूल्यांकन के परिणामों से सम्बन्धित कर्मचारी को भी अवगत कराने का चलन है। कर्मचारी को मूल्यांकन के परिणामों को देखने और उस पर अपनी टिप्पणी प्रस्तुत करने का अध्किार दिया जाता है। कर्मचारी से साक्षात्कार करके उसकी योग्यता के विकास के लिए आवश्यक सुझाव दिये जाते हैं। ऐसे साक्षात्कार के समय कर्मचारियों को मूल्यांकन के सम्बन्ध् में शिकायतें प्रस्तुत करने एवं अपने विचारनुसार समीक्षा करने का अवसर दिया जाना चाहिए।

एक प्रभावशील निष्पादन मूल्यांकन कार्यक्रम की विशेषताएँ
(Characteristics of an Effective Performance Appraisal Programme)

निष्पादन मूल्यांकन के नियोजन के आवश्यक अंगों का अध्ययन करने से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि एक प्रभावशाली मूल्यांकन कार्यक्रम में क्या विशेषताएँ होनी चाहिए। निष्पादन मूल्यांकन प्रभावशाली रीति से हो सके, इसलिए निम्न बातों पर ध्यान दिया जाना चाहिए–

1. **सहयोग प्राप्ति (Cooperation):** निष्पादन मूल्यांकन की व्यवस्था अध्किारी एवं कर्मचारी दोनों के सहयोग से की जानी चाहिए। मूल्यांकन के लिए कौन सी प(ति अपनाई जाये, मूल्यांकन किसके द्वारा हो आदि बातों पर विभिन्न पक्षों की सहमति प्राप्त होने से उनसे पूर्ण सहयोग की आशा की जा सकती है।

2. **सरलता (Simplicity):** मूल्यांकन योजना जटिल नहीं होनी आवश्यक है कि योजना का निर्धरण करने के लिए अन्य उपक्रमों द्वारा उपयोग में लाई जाने वाली मूल्यांकन योजनाओं का अध्ययन किया जाये और उनकी मुख्य–मुख्य बातों को अपनी आवश्यकता के अनुसार अपनी योजना में स्थान दिया जाये। मूल्यांकन योजना का निर्माण इस प्रकार किया जाए कि वह तुलनात्मक दृष्टिकोण से अन्य समान उपक्रमों की अपेक्षा जटिल प्रतीत न हो।
3. **सूचना (Information):** निष्पादन मूल्यांकन कार्यक्रम की पूर्व जानकारी उन व्यक्तियों को प्रदान की जानी चाहिए जिनके सम्बन्ध में उसे लागू किया जाना है। कार्यक्रम का ज्ञान कर्मचारी सहयोग प्राप्ति में सहायक सि(होता है।
4. **समन्वय (Coordination):** मूल्यांकन के लिए विभिन्न मूल्यांकन स्रोतों में समन्वय की भी आवश्यकता है। मूल्यांकन के लिए कार्य निष्पादन के अनेक मापदण्ड अनेक स्रोतों से प्राप्त हो सकते हैं। प्रभावी मूल्यांकन के लिए उन समस्त मापदण्डों का उपयोग होना चाहिए और इसके लिए विभागीय मूल्यांककों एवं समन्वय एवं उनके निष्कर्षों की पारस्पारिक जाँच की जानी चाहिए।
5. **सामयिक विचार–विमर्श (Periodic Discussion):** मूल्यांकन के निष्कर्षों की प्रभावित पक्षों के साथ विचार–विमर्श की व्यवस्था की जानी चाहिए। इसके द्वारा उनके गुण एवं अवगुण प्रकाश में आने चाहिए और सुधर के सुझाव प्राप्त होने चाहिए। विचार–विमर्श मधुर वातावरण में होना चाहिए और मूल्यांकन में परिणामों की व्याख्या द्वारा कर्मचारी के अच्छे बिन्दुओं की प्रंशसा करके उसे प्रोत्साहित किया जाना चाहिये।
6. **पुनः अवलोकन (Review):** निष्पादन मूल्यांकन कार्यक्रम का समय–समय पर पुनः अवलोकन किया जाना चाहिए और उसमें मूल्यांकन की सपफल एवं आधुनिकतम प(तियों को सम्मिलित करना चाहिए। पुनः अवलोकन का परिणाम मूल्यांकन प(ति को अध्कि सक्षम बनाने का होना चाहिए।

निष्पादन मूल्यांकन विध्याँ
(Methods of Performance Appraisal)

निष्पादन मूल्यांकन के लिए उपयोग में लाई जाने वाली कुछ प्रमुख विध्याँ निम्न हैं–

परम्परागत विध्याँ (Traditional Methods)

1. अंकन सोपान विध्ि (Rating Scale Method)
   - (i) रेखीय विध्ि (Graphic Method)
   - (ii) श्रेणीयन विध्ि (Grading Method)
2. कर्मचारी तुलना विध्याँ (Employee Comparison Methods)
   - (i) क्रम व्यवस्था (Ranking Order)
   - (ii) युगल तुलना (Paired Comparison)
   - (iii) बलात वितरण (Forced Distribution)
   - (iv) व्यक्ति–व्यक्ति तुलना (Man to Man Comparison)
3. जाँच सूची विध्ि (Checklist Method)
4. विवश चयन विध्ि (Forced Choice Method)
5. आलोचनात्मक घटना विध्ि (Critical Incident Method)
6. विवरणात्मक मूल्यांकन विध्ि (Descriptive Evaluation Method)
7. समूह मूल्यांकन विध्ि (Group Appraisal Method)
8. क्षेत्र–समीक्षा विध्ि (Field Review Method)

आधुनिक विधियाँ (Modern Method)

1. मूल्यांकन केन्द्र विधि (Assessment Centre Method)
2. परिणामों द्वारा मूल्यांकन या उद्देश्यानुसार प्रबन्ध [Appraisal by Results or Management by objective]

परम्परागत विधियाँ ;(Traditional Method):

1. **अंकन सोपान विधि (Rating Scale Method):** कर्मचारियों के निष्पादन मूल्यांकन के लिए प्रयोग में लाई जाने वाली एक परम्परागत विधि अंकन सोपान विधि है। इस विधि को विशिष्टता अंकन (Trait Rating), चार्ट विधि (Chart Systems) आदि नामों से भी सम्बोधित किया जाता है। इस विधि में कर्मचारियों के सम्बन्ध में कुछ विशिष्टताओं का चयन किया जाता है और उन चयनित विशिष्टताओं के आधर पर उनका अंकन किया जाता है। चयनित विशेषताओं पर मूल्यांकन से अपने अधीनस्थों के सम्बन्ध में अपना मत व्यक्त करने के लिए कहा जाता है। विभिन्न उपक्रमों में प्रयुक्त अंकन सोपान विधि समान नहीं होती है, न ही उन विशिष्टताओं में समानता पाई जाती है जिनके आधर पर मूल्यांकन की व्यवस्था की जाती है।

   अंकन सोपान विधि में रेखीय विधि (Graphic Method) का अधिकतम उपयोग होता है। रेखीय विधि में एक रेखा किसी विशेष विशिष्टता की सीमा निर्धरित करती है और मूल्यांकक उसमें किसी स्थान पर निर्धरित चिन्ह द्वारा निशान लगाकर कर्मचारी की विशिष्टता की अवस्था पर अपना मत व्यक्त करता है। रेखीय विधि में अंकों के अलावा श्रेणियों का उपयोग विशिष्टता की मात्रा को प्रकट करने के लिए किया जाता है। उदाहरण के लिए अंक सोपान विधि में किसी विशिष्टता के लिए निम्न अंक अथवा श्रेणी प्रदान की जा सकती है।

पहल शक्ति

विलक्षण	औसत से अधिक	औसत	खराब	बहुत खराब

रेखीय विधि में श्रेणियाँ का उपयोग

पहल शक्ति

10	9	8	7	6	5	4	3	2	1	0
उत्तम									खराब	

रेखीय अवधि में अंकों का उपयोग

उपरोक्त दोनों रेखीय विधियों में अंकों के स्थान पर श्रेणी अधिक उपयुक्त दृष्टिगोचर होती है। क्योंकि वह कर्मचारी की पहल–शक्ति सम्बन्धी योग्यता को अधिक स्पष्ट कर देती है। श्रेणीयन विधि (Grading Method) में कर्मचारियों को विलक्षण से बहुत खराब में वर्गीकृत कर दिया जाता है। सामान्यतः निर्धरित श्रेणियों को कोड अक्षर दे दिये जाते हैं उन्हीं के आधर की ही व्यवस्था है तो इन वर्गों के लिए स, उ, और ब अक्षरों का उपयोग किया जा सकता है। विशिष्टता के वर्गों की संख्या तीन न होकर अधिक भी हो सकती है और उनके लिए कोड अक्षरों का सुविधजनक चयन किया जा सकता है। श्रेणीयन करने से पूर्व प्रत्येक श्रेणी की भली प्रकार परिभाषा की जानी चाहिए।

श्रेणीयन के स्थान पर अंकों का उपयोग भी प्रचलित है। प्रत्येक कर्मचारी द्वारा प्राप्त अंकों के आधर पर कर्मचारी की योग्यता का अंकन किया जाता है। अंकों द्वारा अंकन की प्रणाली निम्न उदाहरण से स्पष्ट हो जाती है

कर्मचारी का नाम.. पद का नाम ....

तिथि... मूल्यांकन का नाम ....

गुण	विलक्षण	उत्तम	औसत	खराब	
कार्य का ज्ञान	4	3	2	1	3
कार्य की किस्म	4	3	2	1	2
पहल शक्ति	4	3	2	1	4
उद्यम	4	3	2	1	3
वपफादारी	4	3	2	1	2
नेतृत्व	4	3	2	1	2
सहयोगियों से व्यवहार	4	3	2	1	1
				कुल अंक	17

रेखीय अंक विधि

अंकों द्वारा अंकन विधि में योग्यता की प्रत्येक श्रेणी के लिए एक से अध्कि सोपान (Scale) भी रख जा सकते है। पहल शक्ति सम्बन्धी प्रारम्भ में दिये गये उदाहरण में वास्तव में खराब और औसत योग्यता श्रेणियों के लिए एक से अध्कि सोपानों का उपयोग किया गया है।

मूल्यांकक द्वारा अंकन में शुद्वता उत्पन्न करने के लिए योग्यता की प्रत्येक श्रेणी की स्पष्ट व्याख्या की जाती है और उसी के अनुसार मूल्यांकक अपना निर्णय अंकित करता है। यह बात अग्रांकित उदाहरण से स्पष्ट हो सकती है।

अंक सोपान	5	4	3	2	1
गुण	विलक्षण	उत्तम	औसत		खराब
कार्य की किस्म	सामान्यतः अत्यध्कि	प्रायः अच्छी	सामान्यतः संतोषजनक	प्रायः स्वीकृति योग्य	असंतोषजनक

अंकन सोपान में श्रेणी व्याख्या

गुण तथा दोष
(Advantages and Disadvantages)

अंकन सोपान विधि मूल्यांकन की अत्यन्त सरल विधि है। इस विधि का उपयोग परम्परा से निष्पादन मूल्यांकन के लिए किया जाता है। परन्तु इस वि धि का सबसे बड़ा दोष इस बात में निहित है कि यह बात निश्चित करना अत्यन्त कठिन है कि प्रबन्ध्कों में कौन–सी विशिष्टताओं का होना आवश्यक है। इस प्रकार प्रबन्ध्कीय तत्त्वों का निर्धरण इस विधि की एक विकट समस्या है। इस विधि का एक अन्य दोष मूल्यांकन के लिए इसमें वैयक्तिक विशेषताओं की प्रधनता है। देखा जाये तो किसी व्यवसाय की रूचि कर्मचारी की वैयक्तिक विशेषताओं से अध्कि उसके कार्य परिणाम में होती है। अंकन सोपान विधि अथवा विशिष्टता अंकन विधि की मान्यता यह है कि यदि किसी व्यक्ति में कुछ निश्चित गुण है तो वह इच्छित कार्य परिणाम में असपफल होते हैं। पिफर भी अनेक कार्य परिणाम सम्बन्धी तत्त्वों के उद्देश्यपरक निर्धरण की सम्भावता के कारण वैयक्तिक गुणों का सहारा लेना आवश्यक हो जाता है। परन्तु यहाँ प्रश्न यह व्यवस्थित होता है कि कौन से गुण मूल्यांकन के लिए चुने जाये तथा गुणों की क्या संख्या हो।

योग्यता की प्रत्येक श्रेणी में योग्यता मात्रा (Degree) का मूल्यांकन करना भी सरल कार्य नहीं है। मूल्यांकन द्वारा इस विषय में निर्णय उसके विवेकाधीन ही होता है।

2. **कर्मचारी तुलना विध्याँ (Employee Comparison Methods):** अंकन सोपान विधि या विशिष्टता अंकन विधि में निश्चित योग्यता प्रमापों के आधर पर कर्मचारी का मूल्यांकन किया जाता है। कर्मचारी विध्याँ किसी कर्मचारी का अंकन अन्य कर्मचारियों की तुलना में करती है। अंकन सोपान में कर्मचारी के पृथक् मूल्यांकन के कारण सदैव यह आशंका बनी रहती है कि मूल्यांकक प्रायः सभी कर्मचारियों का एक सा मूल्यांकन करेगा और वह कर्मचारियों के पक्ष में ही होगा। कर्मचारी तुलना विध्यों में यह आशंका कम हो जाती है क्योंकि इनमें मूल्यांकन सापेक्षिक दृष्टिकोण से किया जाता हैं। तुलनात्मक विध्यों को प्रायः निम्न प्रकार प्रयोग में लाये जाते हैं।

(i) **क्रम व्यवस्था (Ranking Order):** इस विधि के अर्न्तगत मूल्यांकक प्रत्येक कर्मचारी की अन्य सभी कर्मचारियों से तुलना करता है और उनका क्रमानुसार विन्यास करता है। इस प्रकार प्रत्येक कर्मचारी का अंकन वह स्थान होता है जिस पर उसे क्रमानुसार रखा गया है। सामान्यतः क्रमव्यवस्था में कर्मचारी एवं उसके कार्य को एक सम्पूर्ण इकाई माना जाता है और इसी के आधर पर कर्मचारियों की तुलना की जाती है। परन्तु जहाँ अलग–अलग विशिष्टताओं के आधर पर मूल्यांकन किया जाता हैं, वहाँ प्रत्येक विशिष्टता में अलग क्रम–व्यवस्था निश्चित की जाती है।

क्रम–व्यवस्था विधि मूल्यांकन की अत्यन्त सरल विधि है। प्रत्येक अध्किारी कर्मचारियों के सम्बन्ध में तुलनात्मक धरणा सदैव बनाये रखता है। प्रायः अध्किारी यह कहते पाये जा सकते है कि दो व्यक्तियों के बीच जो समान स्तर का कार्य कर रहे हैं कौन एक दूसरे से अपेक्षाकृत अध्कि कुशल है। परन्तु क्रमव्यवस्था में कर्मचारी का स्थान उसके अच्छे अथवा बुरे होने का साक्ष्य है, वह केवल उसका सापेक्षिक अंकन है। एक विशाल व्यवस्था में जहाँ समान स्तरीय कर्मचारियों की संख्या, जिनका मूल्यांकन किया जा रहा है, बहुत अध्कि हो तो क्रम–व्यवस्था निर्धरण कठिन हो जाता है।

(ii) **युगल तुलना (Paired Comparison):** युगल तुलना विधि द्वारा क्रम–व्यवस्था के दोषों को दूर करने का उपाय किया जाता है। इस विधि में एक कर्मचारी की तुलना प्रत्येक अन्य कर्मचारी के साथ की जाती है। उदाहरण के लिए यदि अ, ब, स, द, ग पाँच कर्मचारियों का मूल्यांकन किया जाना है तो पहले अ की तुलना क्रमशः ब, स, द, ग से की जायेगी। पिफर ब की तुलना स, द, ग से की जायेगी और इस क्रम के द्वारा प्रत्येक व्यक्ति की तुलना प्रत्येक अन्य व्यक्ति के साथ हो जायेगी। इस प्रकार इन पाँच व्यक्तियों के लिए दस जोड़ें बन जायेगें।

1. अ तथा ब, 2. अ तथा स, 3. अ तथा द, 4. अ तथा ग, 5. ब तथा स, 6. ब तथा द, 7. ब तथा ग, 8. स तथा द, 9. स तथा ग, 10. द तथा ग। इस संख्या का निर्धरण निम्न सूत्र द्वारा भी किया जा सकता है।

$$\text{तुलना के लिए युगल संख्या} = \frac{N(N-1)}{2}$$

$$\text{उदाहरण के अनुसार} = \frac{5(5-1)}{2} = \frac{5 \times 4}{2} = 10$$

तुलना के लिए प्रत्येक युगल के लिए अलग–अलग कार्ड बना लिये जाते हैं। प्रत्येक कार्ड पर एक दूसरे की तुलना अंकित की जाती है। मूल्यांकक प्रत्येक कार्ड पर अंकन का अध्ययन करता है। इस प्रकार इस विधि में प्रत्येक व्यक्ति का समग्र अंकन या क्रम प्राप्त हो जाता है।

इस विधि में कठिनाई तब उपस्थिति होती है जब युगलों की संख्या अध्कि हो और साथ ही उनका मूल्यांकन एक से अध्कि विशिष्टताओं के आधर पर किया जाना हो। उदाहरण के लिए, यदि युगल संख्या 10 है और मूल्यांकक को इनकी 10 विशिष्टताओं का मूल्यांकन करना है तो $(10X10)=100$ तुलना आवश्यक हो जायेगी। यही कारण है कि युगल तुलना में समग्र कार्य मूल्यांकन ही किया जाता है।

बलात वितरण (Forced Distribution): इस विधि का उपयोग उस समय किया जाता है जबकि कर्मचारियों की संख्या किसी विभाग में अधिक हो और युगल तुलना विधि का उपयोग सम्भव न हो। बलात वितरण में होता है। कर्मचारियों को मूल्यांकन के आधर पर इन वर्गों में ही स्थान दिया जाता है। उदाहरण के लिए बलात वितरण के लिए निम्न प्रतिशत का उपयोग किया जा सकता है।

निम्नतम 10÷, अगले 20÷, मध्यम 40÷, अगले 20÷, उच्चतम 10÷

कर्मचारियों का वितरण इन प्रतिशत वर्गों में इस प्रकार होगा—प्रथम 10÷ उच्चतम वर्ग में, अगले 20÷ अगले वर्ग में, 40÷ मध्यम वर्ग में, अगले 20÷ अगले वर्ग में तथा निम्नतम 10÷ अन्तिम वर्ग में स्थान प्राप्त करेंगे।

बलात वितरण विधि का उपयोग इस दृष्टि से बड़ा लाभकारी सि(होता है कि इसमें मूल्यांकक के अत्यधिक दयालुता बरत पाने की सम्भावना कम हो जाती है परन्तु इसका एक बहुत बड़ा दोष यह है कि यह विधि जान—बूझकर निर्धरित किये गये वर्ग विभाजन पर आधरित है तथा यह मान कर चलती है कि निर्धरित वर्ग अनुपात सभी परिस्थितियों में समान रहते हैं। परन्तु कार्य पर कर्मचारियों की संख्या के अनुसार वर्ग अनुपात भिन्न हो सकते है।

व्यक्ति से व्यक्ति की तुलना
(Man to Man Comparison)

इस विधि का विकास प्रथम विश्वयु(के समय हुआ। इस विधि में मूल्यांकन के लिए कुछ घटक जैसे, नेतृत्व, पहल शक्ति विश्वसनीयता आदि का चयन कर लिया जाता है और प्रत्येक घटक की सभी व्यक्तियों में विध्मानता की मात्रा अंकित की जाती है। विशिष्टता अंकन में इस बात का उल्लेख किया जा चुका है कि विशिष्टता मूल्यांकन के लिए मूल्यांकक एक आदर्श पैमाना निश्चित करता है और विशिष्टता का अंकन इस पैमाने पर किया जाता है। वह व्यक्ति जिसमें एक विशिष्टता अध्कितम हो, पैमाने के उच्चतम सिरे का अंकन और वह (iii) व्यक्ति जिसमें उस विशिष्टता का न्यूनतम अंश हो, पैमाने के न्यूनतम सिरे का अंकन प्रदान किया जाता है। शेष व्यक्ति इस पैमाने के चरम बिन्दुओं के बीच में कहीं स्थान प्राप्त करते हैं। प्रत्येक विशिष्टता के लिए इस प्रकार एक पैमाना तैयार हो जाता है। इस विधि में सम्पूर्ण व्यक्ति तुलना न करके व्यक्तियों की विभिन्न विशिष्टताओं की तुलना की जाती है। इस प्रकारे यह विधि विशिष्टता अंकन (Trait rating) विधि से मिलती—जुलती विधि है परन्तु इस विधि में विशिष्टता का पैमाना मूल व्यक्ति (Key man) होते है। इसके विपरित विशिष्टता मूल्यांकन (Trait rating) विधि में विशिष्टता का पैमाना विशिष्टता की व्याख्या करके निश्चित किया जाता है। व्यक्ति तुलना विधि का उपयोग आजकल कार्य मूल्यांकन (Job evaluation) के क्षेत्र में व्यापक रूप में किया जाता है। इसे वहाँ तत्त्व विधि (Factor Comparison Method) के नाम से सम्बोध्ति किया जाता है।

इस तुलना विधि में मूल्यांकक की मनोदशा का मूल्यांकन पर प्रभाव स्वतः ही निरस्त हो जाता है। किसी विशिष्टता के लिए पैमाना निश्चित करने में एक सबसे योग्य और एक सबसे अयोग्य व्यक्ति का चयन करने में मूल्यांकक की मनोदशा यदि प्रभाव डालती है तो शेष व्यक्तियों के अंकन पर इसका वैसा ही प्रभाव पड़ेगा। इस विधि के अर्न्तगत अन्य व्यक्तियों का मूल्यांकन मूल व्यक्ति (Key man) अनुसार होता है, इसलिए जिस सीमा तक विशिष्टता की अपेक्षा मूल व्यक्तियों (Key man) में की जायेगी, उसी के अनुसार अन्य व्यक्ति पैमाने पर स्थान पायेंगे।

व्यक्ति—व्यक्ति तुलना विधि में पैमाने का निर्धरण एक कठिन कार्य है। इसी प्रकार अलग—अलग मूल्यांकक द्वारा मूल व्यक्ति (Keyman) का निर्धरण भी अलग—अलग ही होगा और परिणामस्वरूप अलग—अलग मूल्यांककों द्वारा निकाले गये निष्कर्ष तुलनीय नहीं हो सकते।

यह विधि व्यक्ति विशिष्टताओं की अपेक्षा कार्य के मूल्यांकन के लिए अधिक उपयुक्त है और यही कारण है कि इसका उपयोग कार्य मूल्यांकन (Job evaluation) के लिए किया जाता है।

जाँच सूची विधि
(Check List Method)

निष्पादन मूल्यांकन की नवीन विधियों में एक प्रमुख विधि जाँच सूची विधि है। जैसा कि इसके नाम से ही प्रकट है, इस विधि में निष्पादन के लिए आवश्यक गुणों की एक सूची तैयार की जाती है। मूल्यांकक, मूल्यांकन के लिए इन गुणों की विद्यमानता अथवा अभाव के सम्बन्ध में हाँ या ना में उत्तर देता है। जाँच सूची विधि में इस प्रकार मूल्यांकक कर्मचारी के निष्पादन का मूल्यांकन नहीं करता अपितु उसके सम्बन्ध में केवल यह रिपोर्ट करता है कि कार्य निष्पादन के लिए निर्धरित किये गये आवश्यक गुणों में से उसमें है और कौन से नहीं हैं मूल्यांकक प्रत्येक कर्मचारी को एक–एक कर ध्यान में रखकर सूची को पढ़ता है और इसमें हाँ, नहीं अथवा अन्य निर्धरित चिन्ह लगाता जाता है।

जाँच सूचियाँ भारित (Weighted) अथवा अभारित (Unweighted) हो सकती है। भारित जाँच सूचियों में विभिन्न प्रश्नों को उनके महत्त्व के अनुसार भार भी प्रदान किये जा सकते है।

जाँच सूची का उदाहरण

		हाँ	नहीं
1.	क्या कर्मचारी अपने कार्य में रूचि रखता है?	☐	☐
2.	क्या कर्मचारी की कार्य पर उपस्थिति संतोषजनक है?	☐	☐
3.	क्या कर्मचारी को कार्य का तकनीकी ज्ञान है?	☐	☐
4.	क्या कर्मचारी उत्तरदायित्व से बचने का प्रयत्न करता है?	☐	☐
5.	क्या कर्मचारी द्वारा आदेशों का पालन किया जाता है?	☐	☐
6.	क्या कर्मचारी निर्धरित समय में कार्य पूरा कर लेता है?	☐	☐
7.	क्या अन्य सहयोगी उसके व्यवहार से प्रसन्न रहते है?	☐	☐
8.	क्या वह कार्य के सम्बन्ध में रचनात्मक विचार प्रस्तुत करता है?	☐	☐
9.	क्या वह अन्य कर्मचारियों की मदद के लिए सदैव तत्पर रहता है?	☐	☐
10.	क्या वह अपने उपकरणों को सही दशा में रखता है?	☐	☐
11.	क्या उसने कभी गलती की है?	☐	☐

जाँच सूची विधि का एक बार निर्माण कर लेने के पश्चात् मूल्यांकक द्वारा इसका समझना तथा उत्तर देना सरल कार्य हो जाता है। परन्तु इस सम्बन्ध में एक कठिनाई यह उपस्थिति होती है कि विभिन्न कार्यों की आवश्यकता, स्वभाव एवं प्रकृति में अन्तर होने के कारण प्रत्येक कार्य के लिए अलग–अलग जाँच सूचियों के निर्माण की आवश्यकता होती है।

इस विधि में विभिन्न कर्मचारियों में किसी गुण की विद्यमानता की विभिन्न मात्राओं के लिए भी कोई स्थान नहीं होता। उत्तर में केवल गुण की विद्यमानता या अभाव ही सम्मिलित होते हैं।

यह विधि मूल्यांकक को व्यक्तिगत पक्षपात का पूरा अवसर प्रदान करती है।

विवश चयन विधि
(Forced Choice Method)

विवश चयन विधि का विकास द्वितीय विश्वयु(के समय हुआ। प्रारम्भ में इस विधि में चार–चार कथनों के समूह निर्धरित किये जाते थे और प्रत्येक समूह में दो पक्ष में तथा दो विपक्ष में कथन सम्मिलित होते थे। मूल्यांकक को मूल्यांकन में ऐसा कथन, जो कर्मचारी पर पूर्णतः लागू होता है। तथा ऐसा कथन जो उस पर बिल्कुल लागू नहीं होता, का चयन करना पड़ता था।

कालान्तर में विवश चयन के लिए कथनों के समूह, उनमें सम्मिलित कथन तथा मूल्यांकक अनुक्रिया के स्वरूप आदि में विविध्ता उत्पन्न हुई है।

मुख्य रूप में विवश चयन विधि में मूल्यांकक को एक ही तथ्य के बारे में एक से अध्कि कथन दिये जाते हैं और उसे उसमें से किसी एक कथन को चिन्हित करना होता है। विभिन्न घटकों के सम्बन्ध में अलग–अलग कथन समूह की रचना की जाती है और मूल्यांकक को सभी कथन समूहों में से व्यक्ति के सम्बन्ध में ऐसे कथनों का चयन करना पड़ता है जो उस व्यक्ति पर सबसे अध्कि उपयुक्त बैठता हो। इस प्रकार इस विधि में मूल्यांकक की मूल्यांकन सीमा कथनों द्वारा निश्चित हो जाती है। अनेक समय किसी कथन समूह में सभी कथन व्यक्ति के सम्बन्ध में सही बैठते हैं, परन्तु पिफर भी मूल्यांकक को यह निश्चित करना होता है कि कौन से कथन सबसे उपयुक्त है। यही कारण है कि इस विधि को विवश चयन विधि कहा जाता है। प्रत्येक कथन समूह में पक्ष और विपक्ष दोनों प्रकार के कथन सम्मिलित होते हैं, इस कारण मूल्यांकक यह नहीं जान पाता कि वह व्यक्ति का उच्च अंकन कर रहा है अथवा निम्नतर अंकन कर रहा है।

विवश चयन की टेटराड (Tetrades) विधि में प्रत्येक कथन समूहों में चार कथन सम्मिलित किये जाते हैं जिनमें से दो कथन पक्ष के और दो विपक्ष के होते हैं। मूल्यांकक को प्रत्येक कथन समूह में से एक तो ऐसा कथन चुनना होता है जो व्यक्ति पर अध्कितम लागू होता हो तथा एक ऐसे का चयन करना होता है जो न्यूनतम लागू हो। मूल्यांकक द्वारा चुने हुए इन कथनों के आधर पर व्यक्ति के कार्य तथा योग्यताओं का मूल्यांकन किया जाता है। मूल्यांकन कुंजी को गोपनीय रखा जाता है और उसका ज्ञान मूल्यांकक को नहीं होता।

विवश चयन के लिए कथन समूहों के उदाहरण

कथन समूह I

1. अपने कार्य के लिए उपयुक्त है।
2. शीघ्रता में निर्णय लेता है।
3. सहयोगियों में लोकप्रिय है।
4. आलोचना सहज स्वीकार नहीं करता।

कथन समूह II

1. अधीनस्थों को स्पष्ट निर्देश देता है।
2. अधीनस्थों के बीच पक्षपात करता है।
3. कार्य का भार उठाने में समर्थ है।
4. निर्देशित कार्य को पूरा नहीं करता।

कथन समूह III

1. समय का पाबन्द है।
2. तीव्रता से कार्य नहीं करता।
3. पदोन्नति के लिए उपयुक्त है।
4. अध्कि प्रशिक्षण की आवश्यकता है।

विवश चयन विधि का सबसे बड़ा लाभ यह है कि इसमें मूल्यांकक के व्यक्तिगत पक्षपात का अंदेशा समाप्त हो जाता है, क्योंकि इसके अन्तर्गत उसे कर्मचारी के सम्बन्ध में अध्कितम लाभों और न्यूनतम लाभों दोनों पर ही अपना विचार व्यक्त करना पड़ता है। इस प्रकार इस विधि द्वारा निकाले गये निष्कर्ष विश्वसनीय माने जाते हैं।

परन्तु यह विधि भी दोषमुक्त नहीं है। इस विधि में मूल्यांकक की स्वतन्त्रता समाप्त हो जाती है क्योंकि उसे चयन कथन समूहों में से ही करने को विवश होना पड़ता है। दूसरे इस विधि की प्रभावशीलता मूल्यांकन कुँजी की गोपनीय पर निर्भर करती है। वह गोपनीयता सामान्यतः नहीं रह पाती। तीसरे इस विधि से कर्मचारी विकास को भी अधिक सहायता प्राप्त नहीं होती। मूल्यांकक अथवा कर्मचारी इस विधि में ज्ञात नहीं कर सकते कि कर्मचारी सुधर किस दिशा में आवश्यक है। सामान्यतः कर्मचारी वर्ग को मूल्यांकन की यह विधि स्वीकार्य नहीं होती है।

अपने दोषों के कारण इस विधि का सीमित उपयोग किया जाता है।

आलोचनात्मक घटना विधि
(Critical Incident Method)

आलोचनात्मक घटना विधि को आलोनात्मक आवश्यकता विधि (Critical Requirement Method) अथवा निष्पादन रिकार्ड कार्यक्रम (Performance Record Programme) के नाम से भी पुकारा जाता है। इस विधि का विकास पफेनेगन तथा बर्न्स (Flanagan and Burnes) के द्वारा किया गया। इस विधि में कर्मचारी के आलोचनात्मक आचरण को रिकार्ड किया जाता है। कर्मचारी जब कोई ऐसा कार्य करता है जिस पर ध्यान दिया जाना आवश्यक है अथवा जो अवांछनीय है तो इसका उल्लेख कर्मचारी के रिकार्ड में किया जाता है। कर्मचारी के आलोचनात्मक आचरणों का वर्गीकरण निश्चित वर्गों में किया जाता है और इन वर्गों में सम्मिलित आचरण करने पर मूल्यांकक कर्मचारी के आचरण को रिकार्ड कर लेता है।

आलोचनात्मक घटना विधि इस तर्क पर आधरित है कि प्रत्येक कर्मचारी अपने सेवाकाल में परिस्थितिवश विशेष प्रकार के आचरण करता है और ऐसे आचरण कार्य निष्पादन की सपफलता अथवा असपफलता का कारण बन जाते हैं। ऐसे ही आचरण आलोचनात्मक आचरण (Critical Incident) कहे जाते हैं। यह उल्लेखनीय है कि आलोचनात्मक घटना का अर्थ विपरित आचरण से नहीं है। फ्घटना आलोचनात्मक तब बन जाती है जब कि इससे यह प्रकट होता है कि कर्मचारी द्वारा किसी कार्य करने के परिणामस्वरूप उसके किसी कार्य में असाधरण उसके किसी सपफलता अथवा असपफलता प्राप्त हुई है।[1] आलोचनात्मक घटना प्रकट हुए तथ्य हैं और मूल्यांकक द्वारा प्रत्येक कर्मचारी के सम्बन्ध में इनका रिकार्ड किया जाता है। आलोचनात्मक घटनाओं का चयन कर्मचारियों के कार्य करते समय किया जाता है और यह निश्चित किया जाता है कि कौन–कौन सी घटनायें आलोचनात्मक मानी जायें। इसके आधर पर चुनी हुई घटनाओं को उनकी बारम्बारता तथा महत्त्व के अनुसार क्रमब(कर लिया जाता है। आलोचनात्मक घटनाओं पर ध्यान रखें तथा प्रत्येक कर्मचारी के विषय में उनका रिकार्ड रखें। पफलस्वरूप प्रत्येक कर्मचारी के पक्ष एवं विपक्ष में अनेक आलोचनात्मक घटनाओं का वितरण तैयार हो जाता है जिसके आधर पर उसका अंकन करना सम्भव हो जाता है।

आलोचनात्मक घटनाओं के उदाहरण

1. किसी कार्य को देखकर क्रोध्ति हो जाना।
2. किसी सहयोगी को सहायता देने से इन्कार करना।
3. प्रशिक्षण प्राप्त करने से मना करना।
4. सहयोगियों को प्रबन्ध्कीय निर्णय स्वीकार करने को प्रोत्साहित करना।
5. कार्य में सुधर हेतु सुझाव देना।
6. अधीनस्थ के स्थानान्तरण के लिए अपने अध्किारी से परामर्श न करना।
7. कार्य संघ के कर्मचारियों को तर्कपूर्ण उत्तर देना।
8. प्रास्तावित पदोन्नति से मना करना।

---

1. Herbert. J, Churden and Arthur W. Sherman Jr. Personnel Management,

आलोचनात्मक घटना विध्ि का एक प्रमुख लाभ यह है कि इसमें कर्मचारी का अंकन व्यक्तिपरक न होकर उपस्थित साक्ष्यों पर आधरित होता है।

कर्मचारी के सम्बन्ध् में उसके अध्किारी का कोई विचार उपस्थित घटनाओं अथवा साक्ष्यों द्वारा सि(होना चाहिए। दूसरे कर्मचारी के पक्ष तथा विपक्ष के आचरण का रिकार्ड उपलब्ध् होने से उसके विकास में भी सहायता मिलती है। परन्तु इस विध्ि में मूल्यांकक के पूर्वाग्रहों के प्रभाव को रोकने की व्यवस्था आवश्यक है और इसीलिए मूल्यांककों से घटना के तुरन्त पश्चात् उसका रिकार्ड करने को कहा जाता है ताकि उसे बाद में अपने पूर्वाग्रहों के अनुसार विचार कर अपना मत बदलने के अवसर न मिलें।

विवरणात्मक मूल्यांकन विध्ि
(Descriptive Evaluation Method)

इस विध्ि में मूल्यांकक प्रत्येक कर्मचारी के सम्बन्ध् में एक लिखित विवरण तैयार करता है जिसमें उसके व्यक्तित्व आचरण, तथा कार्य की समालोचनात्मक व्याख्या की जाती है। इस विवरण के विश्लेषण द्वारा ही कर्मचारी का मूल्यांकन किया जाता है। कर्मचारी सम्बन्धी यह विवरण जितना पूर्ण तथा स्पष्ट होगा, मूल्यांकन भी उतना उत्तम किया जा सकेगा। इस विध्ि को व्यक्तिनिष्ठ होने से बचाने के लिए उपाय करना आवश्यक है। प्रायः इस विध्ि में सर्वप्रथम कार्य–निष्पादन के प्रमाप निश्चित किये जाते है और इन्हीं प्रमापों के अनुसार कर्मचारी का मूल्यांकन किया जाता है। लिखित विवरण तैयार करने से पूर्व कर्मचारी से साक्षात्कार किया जाता है और उसे अपने निष्पादन का आत्म–निरीक्षण करने का अवसर प्रदान किया जाता है।

यद्यपि विवरणात्मक मूल्यांकन विध्ि कर्मचारी के कार्य–व्यवहार का विस्तार से विवरण प्रस्तुत करती है परन्तु इसका उपयोग निष्पादन मूल्यांकन की तुलनात्मक विध्यिों के साथ किया जाता है।

समूह मूल्यांकन विध्ि
(Group Appraisal Method)

इस विध्ि के अर्न्तगत कर्मचारियों का निष्पादन मूल्यांकन समूह (Appraisal Group) द्वारा किया जाता है। इस मूल्यांकन समूह में कर्मचारियों के निष्पादन की जानकारी रखने वाले पर्यवेक्षक (Supervisors) होते हैं। कर्मचारी का पर्यवेक्षक अपने अधीनस्थ के कर्त्तव्यों की प्रकृति से अन्य पर्यवेक्षकों को अवगत कराता है। तत्पश्चात् मूल्यांकन समूह के सदस्य उस कृत्य के लिए निष्पादन के स्तरों, प्रमापों (Standards), कृत्य धरक के वास्तविक निष्पादन और कर्मचारियों के निष्पादन के किसी विशिष्ट स्तर के कारणों आदि के सम्बन्ध् में विचार–विमर्श करते हैं तथा भावी सुधर हेतु यदि आवश्यक है तो सुझाव भी प्रस्तुत करते हैं।

यह विध्ि कर्मचारी निष्पादन मूल्यांकन की एक सरल, विस्तृत, गहन विध्ि है एवं पक्षपात पूर्ण व्यवहार को समाप्त करती है, लेकिन इसमें समय अध्कि लगता है।

क्षेत्र–समीक्षा विध्ि
(Field Review Method)

निष्पादन मूल्यांकन के लिए इस विध्ि का भी कापफी प्रयोग किया जाने लगा है। इस विध्ि के अर्न्तगत मानव संसाध्न विभाग का प्रशिक्षित अध्किारी प्रत्येक पर्यवेक्षक से उसके अधीनस्थ कर्मचारियों के बारे में आवश्यक प्रश्न पूछता है तथा उनके ;कर्मचारियोंद्ध कार्य निष्पादन के सम्बन्ध् में राय प्राप्त करता है। यह अध्किारी पर्यवेक्षक से प्राप्त सूचनाओं को लिपिब(करता है और उन पर पर्यवेक्षक से अनुमोदन प्राप्त कर कर्मचारी की अन्य व्यक्तिगत सूचना के साथ भविष्य में सन्दर्भ हेतु रख लेता है।

यह विध्ि ऐसे संगठन के लिए अध्कि लाभप्रद है जहाँ कार्य करने वाले कर्मचारियों की संख्या अध्कि होती है। इस विध्ि द्वारा कर्मचारी का पूर्ण मूल्यांकन सम्भव होता है। इसमें मूल्यांकन सामान्यतः (i) उत्तम, (ii) सन्तोषप्रद (iii) सामान्य, तीन श्रेणियाँ में किया जाता है। यह विध्ि निष्पादन मूल्यांकन की अन्य विध्यिों के दोषों को दूर करने में भी सहायक सि(हुई है। इस विध्ि द्वारा कर्मचारी–पर्यवेक्षक सम्बन्धें में सुधर होता है। लेकिन इस विध्ि की सपफलता साक्षात्कार–कर्त्ता ;मानव संसाध्न

विभाग का प्रशिक्षण अधि्कारीद्ध की योग्यता पर निर्भर करती है। यदि वह योग्य है तो कर्मचारियों के सम्बन्ध् में सही एवं आवश्यक सूचनायें प्राप्त कर सकता है। साथ ही इस विध् िका अन्य दोष यह है कि प्रबन्धक मूल्यांकन कार्य में अत्यधि्क व्यस्त रहने के कारण अन्य प्रबन्ध् कार्यों की ओर पर्याप्त ध्यान नहीं दे पाते है।

आधुनिक विधि्याँ
(Morden Methods)

1. **मूल्यांकन केन्द्र विध्** **(Assessment Centre Method):** इस विध् िके अर्न्तगत कर्मचारी के निष्पादन मूल्यांकन हेतु विभिन्न मूल्यांककों द्वारा विभिन्न परिस्थितियों में कर्मचारी की जाँच हेतु भी विभिन्न आधरों को अपनाया जाता है। इस विध् िका सर्वाधि्क प्रयोग प्रथम स्तर ;निम्न स्तरीयद्ध के कर्मचारियों को पदोन्नति प्रदान करने हेतु उनके चयन के लिए किया जाता है। पदोन्नति हेतु कर्मचारी क्षमताओं का निश्चय करने के लिए कर्मचारियों का मूल्यांकन किया जाना आवश्यक होता है। कर्मचारियों का मूल्यांकन 'पेपर पेन्सिल टेस्ट' (Paper-and-Pencil Test); साक्षात्कारऋ अवस्थित अभ्यास (Situational Exercise) जैसे इन–बास्केट अभ्यास (In-basket exercise), व्यावासिक खेल (Business Games), भूमिका निर्वाह घटना (Role Playing incident), नेताविहिन समूह परिचर्चा (Leaderless group discussion) आदि के अध्ययन से किया जाता है। मूल्यांकक, जो अनुभवी प्रबन्धकों में से होते हैं, कर्मचारियों की निष्पादन क्षमता का वैयक्तिव एवं सामूहिक दोनों ही परिस्थितियों में मूल्यांकन करते है और कर्मचारियों को विभिन्न श्रेणियों जैसे ;1द्ध स्वीकार योग्य से कहीं अधि्क (More than acceptable) ;2द्ध स्वीकार योग्य (Acceptable) ;3द्ध स्वीकार योग्य से कहीं कम (Less than acceptable) ;4द्ध अस्वीकार योग्य (Inacceptable) आदि में से कोई एक रिपोर्ट तैयार की जाती है। इस रिपोर्ट से सभी कर्मचारियों को अवगत कराया जाता है। और उनकी शंकाओं का समाधन किया जाता है, उनके द्वारा किये गये प्रश्नों का प्रत्युत्तर दिया जाता है। यह विध् िकिसी कर्मचारी में प्रबन्ध्कीय क्षमता की जानकारी करने के लिए अन्य मानव संसाध्न विधि्यों में से एक श्रेष्ठ विध् िमानी जाती है। लेकिन इसमें प्रति कर्मचारी मूल्यांकन की लागत अधि्क आती है।

2. **परिणामों द्वारा मूल्यांकन या उद्देश्यानुसार प्रबन्ध्** **(Apparisal by Result or M.B.O):** निष्पादन मूल्यांकन की इस विध् िके प्रादुर्भाव का श्रेय प्रबन्ध् जगत के विद्वान पीटर एपफ. ड्रपफर (Peter F.Drucker) को जाता है। गत कुछ वर्षों से कर्मचारियों के निष्पादन मूल्यांकन हेतु इस विध् िका सर्वाधि्क प्रयोग किया जाने लगा है। इस विध् िके अर्न्तगत कर्मचारी और उसका पर्यवेक्षक आपस में मिलकर एक निश्चित कार्यकाल के अर्न्तगत कर्मचारी द्वारा जिन उद्देश्यों की पूर्ति की जानी है, उनको निश्चित करते हैं, उन्हें परिभाषित करते है और उनके बारे में पर्याप्त चर्चा करते हैं। वे कर्मचारी प्रगति के मापन के साध्नों एवं विधि्यों के सम्बन्ध् में भी विचार–विमर्श करते हैं। इनके द्वारा ;कर्मचारी एवं पर्यवेक्षकद्ध जो उद्देश्य निर्धरित किये जाते हैं वे कार्य सम्बन्धि्त और प्रगतिन्मुख होते हैं। कर्मचारी निचिश्त समय अन्तराल में अपने पर्यवेक्षण से सम्पर्क स्थापित करता रहता है और पर्यवक्षेक कर्मचारी–उद्देश्यों की पूर्ति कर प्रगति का मूल्यांकन करता है। साथ ही यदि आवश्यक हुआ तो पर्यवेक्षण पूर्व निर्धरित कर्मचारी उद्देश्यों में संशोध्न भी करता है। इस विध् िमें पर्यवेक्षण कर्मचारी के लिए सहयोग प्रदान करने वाले, मान्त्रणा करने वाले, एवं कार्य सीखने वाले आदि के रूप में अपनी भूमिका निभाता है। इस विध् िमें कर्मचारी और पर्यवेक्षक के मध्य नियमित और पर्याप्त सूचनाओं का आदान–प्रदान आवश्यक है।

   निष्पादन मूल्यांकन की यह विध् िभूतकाल को छोड़कर वर्तमान और भविष्य पर आत्यधि्क बल देती है और कर्मचारी के निष्पादन मूल्यांकन में उसके व्यक्तिगत गुणों के स्थान पर उसके द्वारा प्राप्त किये गये उद्देश्यों एवं प्रस्तुत किये गये परिणामों पर अत्यधि्क ध्यान है। एक कर्मचारी का निष्पादन मूल्यांकन पहलशक्ति, सहकारी प्रवृत्ति, अभिरूचि, भावात्मक स्थिरता या अन्य किसी मानवीय गुण के आधर पर न किया जाकर उसके लिए पूर्व निर्धरित उद्देश्यों की पूर्ति या परिणामों के आधर पर किया जाता है। इस विध् िका सर्वाधि्क प्रयोग तकनीकी, पेशेवर, पर्यवेक्षीय या अधि्शासी मानव संसाध्नों के निष्पादन–मूल्यांकन हेतु किया जाता है। इस विध् िकी सपफलता इस बात पर निर्भर करती है कि पर्यवेक्षण

अपने अधीनस्थ ;कर्मचारीद्ध को कितना समय दे पाता है, उसके कार्य में कितनी रूचि लेता है और उसके साथ अपना व्यवहार कैसा रखता है।

निष्पादन मूल्यांकन विध्यिों की सीमाएँ
(Limitations of Performance Appraisal Methods)

यद्यपि निष्पादन मूल्यांकन के लिए अनेक विध्यिों का विकास हुआ है और अपनी सीमाओं में यह विध्यिाँ मूल्यांकन के लिए प्रयुक्त की जाती हैं, परन्तु निष्पादन मूल्यांकन के कार्यक्रम की उपयोगिता असंदिग्ध नहीं रहती है। निष्पादन मूल्यांकन की योजनाओं की यह सामान्य सीमायें निम्नांकित हैं।

1. **मूल्यांकक का निष्पादन के प्रति दृष्टिकोण (Attitude of Evaluation towards performance Appraisal):** कोई मूल्यांकक मूल्यांकन के कार्य को किस दृष्टिकोण से लेता है, यह बात निष्पादन मूल्यांकन की उपयोगिता को बड़ी सीमा तक प्रभावित करती है। अनेक मूल्यांकक मूल्यांकन के कार्य को एक अनावश्यक कार्य समझते हैं। उनके विचार में यह उन पर डाला गया एक अतिरिक्त भार है और उनके मूल्यवान समय को नष्ट करता है। इसी प्रकार मूल्यांकन के लिए निश्चित की गई विध् ितथा अंकन को भी अनेक मूल्यांकक संदेह की दृष्टि से देखते है। उन्हें ऐसा प्रतीत होता है कि उच्च अध्किारी वर्ग अविश्वास के कारण मूल्यांकन का सम्पूर्ण उत्तरदायित्व एवं मूल्यांकन विध् िका निर्धरण उन पर नहीं छोड़ना चाहता है। मूल्यांकन की निराशाजनक स्थितियों में मूल्यांकन का कार्य पूरी सच्चाई से सम्पन्न नहीं हो सकता है।

2. **परिवेश प्रभाव (Halo Effect):** ई. एल. थॉर्नडिक (E.L.Thorndike) ने परीक्षणों के आधर पर यह निष्कर्ष निकाला है कि मूल्यांकक कर्मचारी में किसी एक विशेषता के अध्कि या कम होने के आधर पर ही उसके सम्पूर्ण व्यक्तित्त्व एवं कार्य का मूल्यांकन करता है। यह देखा जाता है कि तब कोई व्यक्ति की विशेषता से अत्यध्कि प्रभावित होता जाता है तो वह उसके अन्य गुणों को बढ़ा–चढ़ा कर प्रकट करता है। इस प्रकार मूल्यांकक एक विशेषता से प्रभावित होकर शेष विशेषताओं को भी समान अंक प्रदान करता है। विपरीत दशा में मूल्यांकक की किसी कर्मचारी की एक विशेषता के सम्बन्ध में असंतोषजनक राय अन्य विशेषताओं को भी प्रभावित किये बिना नहीं रहती है। परिवेश प्रभाव इसलिए भी देखने को मिलता है क्योंकि कार्य–निष्पादन सम्बन्धी अनेक विशेषताएँ एक–दूसरे की पूरक ही होती है।

3. **विवेक का अभाव (Lack of Discrimination):** अनेक मूल्यांकक कर्मचारियों के कार्य मूल्यांकन में भेद करने में असमर्थ होते है और इसलिए वे ऐसा मार्ग चुनते है जिससे उनकी असमर्थता प्रकट न हो। बहुध ऐसे मूल्यांककों द्वारा मध्यम मार्ग चुना जाता है और वे कर्मचारियों को कमोबेश समान स्तर पर मूल्यांकित कर देते है।

   विवेक की कमी का एक प्रभाव कभी–कभी यह भी होता है। कि छोटा सा अपवाद ही मूल्यांकक को बहुत बड़ा प्रतीत होता है और कर्मचारी को मूल्यांकित करते समय यह अपवाद ही सर्वोपरि रहता है।

4. **मूल्यांकन में असमानता (Lack of Uniformity in Appraisal):** प्रत्येक व्यक्ति अनुभव से यह जानता है कि अनेक व्यक्ति अपने दृष्टिकोण में बड़े कड़े और अनेक नम्र होते हैं। ऐसी अवस्था में मूल्यांकन में भी भिन्नता होना स्वाभाविक है। परीक्षाओं में भी विद्याथियों के अंकों में असमानता प्रायः परीक्षकों के दृष्टिकोण का ही परिणाम होती है। अतः व्यावसायिक उपक्रमों में कुछ अध्किारी जो दृष्टिकोण का ही परिणाम होती है। अतः व्यावासायिक उपक्रमों में कुछ अध्किारी जो दृष्टिकोण से नम्र हैं, अपने अधेनस्थों का मूल्यांकन नरमी से करते है। यही नहीं, यदि किसी कर्मचारी को एक ही एक अध्कि ऐसे अध्किारियों के अधीन कार्य करना पड़े तो अलग–अलग प्रकृति के है, तो एक ही समय उसका मूल्यांकन भिन्न–भिन्न होगा। इसी प्रकार अपने सेवाकाल में विभिन्न अध्किारियों के अधीन कार्य करने वाले कर्मचारी का मूल्यांकन भिन्न समयों पर भिन्न–भिन्न पाया जाता हैं।

   मूल्यांकन में समानता का अभाव अनेक अन्य कारणों से भी होता है जिसमें तीन प्रमुख हैं ;1द्धअन्तर्विभागीय अन्तर (Interdepartmental difference); ;2द्ध कार्य अन्तर (Job difference) ;3द्ध आयु अन्तर (Age difference)। मूल्यांकक अन्तर्विभागीय अन्तर के कारण भी कर्मचारी मूल्यांकन में असमानता ला देते है। यह ही नहीं, जिस कार्य

पर व्यक्ति है उसके अनुसार भी मूल्यांकन में भिन्नता होती है। अनेक मूल्यांकक मूल्यांकन में आयु का विचार भी करते हैं। कर्मचारी की आयु मूल्यांकन को दो प्रकार से प्रभावित कर सकती है। अनेक मूल्यांकक आयु को अनुभव का पर्याप्त मानते हैं और अध्कि आयु प्राप्त व्यक्ति का कम आयु वाले कर्मचारी से अच्छा मूल्यांकन करते हैं। ऐसे भी मूल्यांकक मिल जायेंगे जो आयु का सम्बन्ध् कार्यक्षमता से जोड़ते है और अध्कि आयु अध्कि शिथिल के सि(ान्त के अनुसार मूल्यांकन करते है।

अन्य सीमाएँ
(Other Limitations)

निष्पादन मूल्यांकन विध्यिों की अन्य सीमाओं में निम्न को भी सम्मिलित किया जा सकता है।

1. कार्य निष्पादन के विभिन्न तत्त्वों को भार प्रदान करने की सामान्य विध्यिों का अभाव (Lack of Common Practices in providing weights to different traits)।
2. मूल्यांकन की यथार्थता को नापने के मापदण्डों का अभाव (Lack of Standards to measure the objective in appraisal)।

निष्पादन मूल्यांकन कार्यक्रम में सुधर के सुझाव
(Suggestions for Improving Performance Appraisal Programme)

निष्पादन मूल्यांकन का कार्यक्रम सपफलतापूर्वक कार्य कर सके तथा कर्मचारियों का सही मूल्यांकन हो सके इसके लिए निष्पादन मूल्यांकन योजना में आवश्यक सुधर किया जाना आवश्यक है। इस हेतु निम्न सुझाव प्रस्तुत किये जा सकता हैं

1. मूल्यांककों को पर्याप्त प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए। इस प्रशिक्षण कार्यक्रम में उसे परिवेश प्रभाव तथा तथ्यपूर्ण मूल्यांकन से अवगत कराया जाता चाहिए। किस प्रकार कर्मचारी के मूल्यांकन में समग्र कार्य निष्पादन को स्थान दिया जाये, इसका व्यवहारिक प्रशिक्षण उसे प्रदान किया जाना चाहिए।
2. मूल्यांकक को मूल्यांकन में दूसरों के परामर्श पर भी ध्यान देना चाहिए। इसके लिए सहयोगी अध्किारियों से विचार–विमर्श की सम्पूर्ण प्रक्रिया किसी योग्य मूल्यांकक के अधीन होनी चाहिए।
3. विभिन्न विभागों में कर्मचारियों का मूल्यांकन करते समय पर्याप्त सतर्कता बरतनी आवश्यक है। विभिन्न प्रकृति के कार्य करने वाले व्यक्तियों के मूल्यांकन के आधर समान नहीं रखे जाने चाहिए। तुलना करते समय इन आधरों का ध्यान रखा जाना चाहिए।
4. मूल्यांकन, कार्य सम्बन्धी तत्त्वों के संदर्भ में ही होना चाहिए। व्यक्ति की किसी अन्य क्षेत्र में दुर्बलता का प्रभाव इस पर नहीं पड़ना चाहिए।
5. कर्मचारियों के साथ मूल्यांकन पर विचार–विमर्श के समय संख्यात्मक मूल्यांकन (Numerical Values) को बीच में नहीं लाना चाहिए क्योंकि संख्या को प्रकट करने में जितनी सत्यता नजर आती है, आवश्यक नहीं कि वास्तविक परिस्थिति उसी के अनुरूप हो।
6. जहाँ वास्तविक तथ्य उपलब्ध् हो वहाँ सम्पत्ति का उपयोग वांछनीय नहीं है। उदाहरण के लिए, यदि उत्पादन की मात्रा उपलब्ध् है तो कर्मचारी के उत्पादन का मूल्यांकन इसी के द्वारा होना चाहिए न कि मूल्यांकक की सम्पत्ति अथवा विचारानुसार।

निष्पादन मूल्यांकन के गुण तथा दोष
(Merit and Demerits of Performance Appraisal)

अनेक व्यक्तियों का ऐसा विचार है कि निष्पादन मूल्यांकन व्यर्थ की क्रिया है और इसकी कोई उपयोगिता नहीं है। इस व्यक्ति के द्वारा दूसरे व्यक्ति का मूल्यांकन कदापि भी निष्पक्ष नहीं हो सकता और ऐसी अवस्था में पक्षपात–रहित मूल्यांकन

के अभाव में उपक्रम की कार्यकुशलता एवं सामान्य वातावरण भी प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता। निष्पादन मूल्यांकन रूपी अस्त्र कर्मचारियों में भय एवं निराशा की भावना उत्पन्न कर देता हैं इसका परिणाम कर्मचारियों के गिरे हुए मनोबल के रूप में देखा जा सकता हैं परन्तु निष्पादन मूल्यांकन में व्यक्तिपरक दोषों के उपस्थित होते हुए भी इसके उपयोगिताएँ कम नहीं हैं। एक निष्पक्ष एवं व्यवस्थित निष्पादन मूल्यांकन विध् िउपक्रम के लिए निम्न प्रकार से उपयोगी सि(हो सकती है।

1. **पारितोषण एवं दण्ड की प्रक्रिया में सहायक (Facilities the Process of Rewards and Punishment):** निष्पादन मूल्यांकन को कर्मचारियों को पुरस्कृत करने अथवा दण्ड देने का आधर बनाया जा सकता है। इसके आधर पर उन कर्मचारियों को जो अपना कार्य अध्कि कार्य–कुशलता से करते हैं, अतिरिक्त पारिश्रमिक अथवा पारितोषिक प्रदान किया जा सकता है। इसी प्रकार काम न करने वाले कर्मचारियों को दण्डित किया जा सकता है।

2. **पदोन्नति योग्य कर्मचारियों की जानकारी (Identify Promotable Executive):** निष्पादन मूल्यांकन के द्वारा कर्मचारियों की सापेक्षिक क्षमताओं को ज्ञान प्राप्त होता हैं इसका उपयोग करके कुशलता कर्मचारियों को पदोन्नति किया जा सकता हैं।

3. **भावी प्रशिक्षण द्वारा विकास की सम्भावनाओं का ज्ञान (Identify People who may Best Benefit by Further Training):** इसके द्वारा वर्तमान प्रशिक्षण कार्यक्रम की दुर्बलताओं का पता लगाया जा सकता है तथा ऐसे कर्मचारियों का भी पता लगाया जा सकता हैं जिनमें और विकास की सम्भावनाएँ है।

4. **उत्तम तथा प्रभावशाली पर्यवेक्षण (Better and Effective Supervision):** जब किसी व्यक्ति को अन्य व्यक्तियों के कार्य पर टिप्पणी करने का अध्किार प्राप्त होता है तो वह अध्कि सतर्कता से देख–रेख का कार्य सम्पन्न करता है। अधीनस्थों का सही और निष्पक्ष मूल्यांकन करने की इच्छा से उसके स्वयं के कार्य में सुधर आता है और इस प्रकार पर्यवेक्षण का कार्य अध्कि प्रभावशाली ढंग से सम्पन्न किया जाता है।

5. **कर्मचारियों का आत्म विकास (Self-development of Employees):** एक उत्तम निष्पादन मूल्यांकन व्यवस्था कर्मचारियों के लिए प्रेरणा एवं पथ–प्रदर्शक सि(होती है। प्रत्येक व्यक्ति यह जानने का इच्छुक होता है कि वह अपना कार्य कितना और किस प्रकार कर रहा है। निष्पादन मूल्यांकन से उसके कार्य–निष्पादन की कमियाँ प्रकट होती है और उनके आधर पर वह उनमें सुधर कर सकता है।

6. **कर्मचारी मनोबल बनाये रखने में सहायक (Helpful in Building Employees Morale):** प्रभावी निष्पादन मूल्यांकन विध् िसे कर्मचारियों का मनोबल बना रहता है। प्रत्येक कर्मचारी यह अनुभव करने लगता है कि उसकी योग्यताओं को पहचान कर उसका सम्मान किया जाता है। पफलस्वरूप उसके मनोबल में वृ(ि होती है।

7. **योग्य एवं महत्त्वाकांक्षी व्यक्तियों के लिए आकर्षण (Attractions to Competent and Ambitious People):** प्रभावी मूल्यांकन विध् िकी किसी उपक्रम में उपस्थित से अनेक योग्य और महत्त्वकांक्षी व्यक्ति ऐसे उपक्रम की ओर आकर्षित होते है। बहुध ऐसे व्यक्ति जो अपनी योग्यता के आधर पर उच्च पदों तक पहुँचने की सामर्थ्य रखते हैं, ऐसे उपक्रमों की ओर सरलता से आकर्षित किये जा सकते है।

निष्पादन मूल्यांकन के दोष
(Demerits of Performance Appraisal)

आधुनिक काल में निष्पादन मूल्यांकन का प्रायः विरोध् किया जाता है। इन विरोधें को ही इसके दोष कहा जा सकता है। यह दोष निम्न प्रकार है।

1. निष्पादन मूल्यांकन में आवश्यक ध्न तथा समय का व्यय होता है।

2. मूल्यांकन का कर्मचारियों की मनोदशा पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। मूल्यांकन के समय उसमें कार्य का जोश कम रहता है। मूल्यांकन के परिणामों की अनिश्चिता के कारण उनमें घबराहट रहती हैं और वह अपने कार्य पर ध्यान केन्द्रित नहीं कर पाते।

3. कर्मचारियों का निष्पक्ष मूल्यांकन सरल कार्य नहीं है। मूल्यांकन में व्यक्तिगत पक्षपात की सदैव गुंजाइश रहती है और इसका यथार्थपूरक होना संदिग्ध् रहता है।

4. जब मूल्यांकन एक से अध्कि व्यक्तियों के द्वारा किया गया है तो विचार भिन्नता के पफलस्वरूप मूल्यांकन भी भिन्न–भिन्न हो सकता है।
5. मूल्यांकन की उपयोगिता तभी है जब उसके आधर पर प्रकट दुर्बलताओं से कर्मचारियों को अवगत कराया जाये। परन्तु मूल्यांकन करने वाला व्यक्ति आधीनों से साक्षात्कार करके उनकी दुर्बलताओं से उन्हें अवगत कराने में संकोच करता है। ऐसा करने में एक तो उसे अपने आधीनों के कोप का भाजन बनना पड़ता है, दूसरे अपने मूल्यांकन की तर्कसंगत सत्यता सि(करनी पड़ती है।
6. ऐसे व्यक्ति जो योग्यता के आधर पर श्रेष्ठ पाये जाते है, वे तुरन्त पदोन्नति की माँग करने लगते है। पदोन्नति न मिलने पर उनके हृदय में कुण्ठाएँ जन्म लेने लगती है।
7. निष्पादन मूल्यांकन के आधर पर पदोन्नति की व्यवस्था से वरिष्ठता का महत्त्व कम हो जाता है और यह भी कर्मचारी असंतोष का कारण बनता है।

निष्पादन मंत्रणा
(Performance Counselling)

निष्पादन मूल्यांकन की कड़ी में अन्तिम कड़ी है–निष्पादन मंत्रणा, निष्पादन मूल्यांकन प्रणाली का एक अभिन्न भाग होता है, इसलिए प्रवर अध्किारियों का यह कर्त्तव्य है कि वे वर्ष में कम से कम एक बार अपने अधेनस्थ कर्मचारियों का उनके निष्पादन सम्बन्धी कार्यों के सम्बन्ध् में परामर्श अवश्य प्रदान करें। इस प्रकार की मंत्रणा के अर्न्तगत, प्रवर अध्किारी, ;उनकेद्ध अधेनस्थों ने वर्ष भर के दौरान जो कार्य निष्पादन किए हैं, उनका विश्लेषण करते है। और यह प्रयास करते हैं कि भविष्य में अधेनस्थों ने क्रिया–कलापों में सुधर करने की दृष्टि से क्या कदम उठाए जाएँ। यदि अधेनस्थों को प्रशिक्षण प्रदान करने की आवश्यकता महसूस की जाती है तो उसके लिए भी आवश्यक कार्यवाही करने हेतु विचार–विमर्श किया जाता है।

एक सामान्य अवधरणा यह है कि निष्पादन मूल्यांकन अधेनस्थों पर नियन्त्रणा करने की विध् िहै। निष्पादन मूल्यांकन के आधर पर अधेनस्थों की प्रशंसा ;पारितोषिकद्ध या प्रताड़ना ;दण्डितद्ध की जाती है। इसी प्रकार के मूल्यांकन के आधर पर अधेनस्थों की पदोन्नति या पद–अवनति भी की जा सकती है। लेकिन जब से मानव संसाध्न विकास (Human Resource Development) पर ध्यान दिया जाने लगा है, पूर्व अवधरणों में कापफी बदलाव आया है। अब निष्पादन मूल्यांकन को कर्मचारियों की पहचान कर, उन्हें दूर करने का प्रयास किया जाता है जिससे कि भविष्य में वे श्रेष्ठ निष्पादन करने में सक्षम हो सकें।

निष्पादन मंत्रणा की प्रक्रिया में निम्नांकित तीन चरण निहित होते हैं।

1. सम्वहन
2. प्रभाव डालना,
3. सहायता प्रदान करना।

सम्वहन का अर्थ है कर्मचारी को वातावरण से अवगत कराना तथा साथ ही उसका परिचयस उसकी स्वयं की कमजोरियों और कमियों से कराया जाना। प्रभाव डालने के अर्न्तगत, प्रवर अध्किारी, कर्मचारी का विश्वास प्राप्त करने का प्रयन्त करते हैं। विश्वास प्राप्त करने के लिए प्रवर अध्किारियों में परानुभूति (Empathy) का गुण होना आवश्यक है। सहायता प्रदान करने के अर्न्तगत कर्मचारियों के विकास की सम्भावनाओं पर ध्यान केन्द्रित किया जाता है जिससे कि भविष्य में निष्पादन को श्रेष्ठतर बनाया जा सके।

सम्भावना मूल्यांकन
(Potential Appraisal)

मानव संसाध्न प्रबन्ध् को आजकल मानव संसाध्न प्रबन्ध् (Human Resource Management) के नाम से जाना जाने वाला है। यह बात हम इस पुस्तक के प्रथम अध्याय में स्पष्ट कर चुके है। हमने यह भी स्पष्ट करने का प्रयास किया है कि

मानव संसाधन विकास (Human Resource Development) मानव संसाधन प्रबन्ध का ही एक अभिन्न भाग है। इस सब चर्चा का प्रयोजन पाठकों को यह याद दिलाता है कि आजकल प्रबन्धकों का ध्यान कर्मिकों के विकास पर केन्द्रित है। सम्भावना मूल्यांकन इसी कड़ी का एक भाग है।

कार्मिकों के निष्पादन मूल्यांकन के साथ ही साथ आजकल उनका सम्भावना मूल्यांकन भी किया जाता है। सम्भावना मूल्यांकन का प्रयोजन यह है कि कार्मिकों की उन छिपी हुई प्रतिभाओं एवं गुणों का पता लगाया जाए, जिनका अभी तक वर्तमान कृत्यों पर उपयोग नहीं हो पाया है। प्रबन्धकों का यह कर्त्तव्य है कि वे कार्मिकों में ऐसी प्रतिभाओं एवं गुणों का विकास करें तथा उनके उन्नति के मार्ग प्रशस्त करें। सम्भावना मूल्यांकन, वैयक्तिक विकास के क्रम की एक आवश्यक कड़ी है। सम्भावना मूल्यांकन की प्रक्रिया से व्यक्ति के साथ संगठन भी लाभान्वित होते हैं। विकासोन्मुख संगठनों के लिए, समय पर नई प्रतिभाओं एवं योग्यतायों की आवश्यकता होती है। सम्भावना मूल्यांकन, संगठनों की इस आवश्यकता की पूर्ति करता है।

संभावना मूल्यांकन में एक कठिनाई यह आती है कि सम्भावनाओं का मूल्यांकन किस प्रकार से किया जाए। निष्पादन मूल्यांकन कार्मिक के प्रवर अधिकारी द्वारा किया जाता है। सम्भावना मूल्यांकन भी सामान्यतः उसी प्रवर अधिकारी के द्वारा किया जाता है। यह आवश्यक नहीं है कि प्रवर अधिकारी इस प्रकार के मूल्यांकन की योग्यता रखता है, क्योंकि सम्भावना मूल्यांकन एक जटिल प्रक्रिया है। सम्भावना मूल्यांकन की विश्वसनीयता को बढ़ाने के उद्देश्य से सम्भावना मूल्यांकन विभिन्न व्यक्तियों एवं साधनों के माध्यम से किया जाना चाहिए। हमारी सम्पति में इस प्रकार के मूल्यांकन में, प्रवर अधिकारी को, जिस व्यक्ति ;अधिकारीद्ध का मूल्यांकन किया जा रहा है, उसके सहकर्मियों एवं अधीनस्थों का भी सहयोग लेना चाहिए। आजकल अभिरूचि (Aptitude) जानने हेतु, मनोवैज्ञानिक परीक्षणों का भी कापफी प्रचलन है। सम्भावना मूल्यांकन में भी ऐसे परीक्षणों का सहारा लिया जा सकता है। कार्मिक की विगत वर्षो की निष्पादन मूल्यांकन रिपोर्ट्स भी सम्भावना मूल्यांकन में सहायता प्रदान कर सकती है, अतः उन प्रतिवेदनों (Reports) को भी ध्यान में रखना आवश्यक होता है। सम्भावनाओं के अनुरूप कार्य करने का मौका दिया जाए। यदि ऐसा करना सम्भव हो तो उसका कोई विकल्प नहीं है। दूसरी ओर यदि इस प्रकार की सम्भावनाएँ उपलब्ध न हो तो, अनुरूपण खेलों तथा अभ्यासों (Simulation Games and exerices) का सहारा लिया जाना चाहिए।

सम्भावना मूल्यांकन की उपादेयता, पदोन्नति (Promotion) एवं स्थापन (Placement) के समय होती है। सामान्यतः पदोन्नति विगत श्रेष्ठ निष्पादन मूल्यांकनों का पारितोषिक माना जाता है। लेकिन आवश्यकता इस प्रकार की मान्यताओं को नकारने की है। पदोन्नति में कार्मिक ;अधिकारीद्ध का उच्च अवस्थिति (High position) में स्थापना की जाती है। उच्च पद की योग्यता–आवश्यकताएँ, निम्न पद जिस पर कि कार्मिक पूर्व में कार्यरत था, भिन्न होती है। अतः यह आवश्यक नहीं है कि पदोन्नति के प्रत्याशी में वे योग्यताएँ एवं गुण हैं या नहीं जिनकी कि उसे उच्च पद पर कार्य करने के लिए आवश्यकता होगी। सम्भावना मूल्यांकन इसी आवश्यकता की पूर्ति करता है।

सम्भावना मूल्यांकन के संदर्भ में हम दो बातों का और उल्लेख करना चाहेंगे। प्रथम तो यह है कि सम्भावना मूल्यांकन कर्मचारी की प्रार्थना पर भी किया जा सकता है। आजकल बहुत से कार्मिक यह महसूस करते हैं कि उनमें छिपी हुई प्रतिभाएँ हैं, जिनका न कभी आकलन किया गया है और न ही उपयोग। ऐसी परिस्थिति में कार्मिक स्वयं सम्भावना मूल्यांकन की प्रार्थना कर सकते हैं। दूसरी हमारी मान्यता यह है कि सम्भावना मूल्यांकन को प्रतिवर्ष करने की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि व्यक्तियों की प्रतिभाओं एवं गुणों में जल्दी–जल्दी परिवर्तन नहीं आते।

अध्याय–8
मजदूरी और मजदूरी के सि(ान्त
(Wages and Theories of Wages)

मजदूरी का अर्थ
(Meaning of Wages or Pay)

साधरण बोलचाल की भाषा में मजदूरी का अर्थ केवल शारीरिक श्रम करने वाले श्रमिकों को किए जाने वाले भुगतान से ही लिया जाता है। किन्तु अर्थशास्त्र में मजदूरी का अर्थ विस्तृत है। अर्थशास्त्र में मजदूरी से आशय उस मानवीय शारीरिक तथा मानसिक श्रम से है ध्न की उत्पत्ति के लिए किया जाता है जैसे—वकील की पफीस, अध्यापक का वेतन, कुली का भाड़ा आदि। अतएव मजदूरी से अभिप्राय शारीरिक+मानसिक दोनों प्रकार के श्रम से है।

मजदूरी (Wages or Pay) **से अभिप्राय उस भुगतान से है जो श्रमिकों को कार्य के बदले पारिश्रमिक** (Remunerations) **के रूप में दिया जाता है। यह भुगतान साप्ताहिक, पाक्षिक या मासिक हो सकता है।**

मजदूरी (Wages) और **वेतन** (Salary) में अन्तर होता है। वेतन से आशय उस भुगतान से है जो कार्य के अनुसार न देकर एक निश्चित समय के लिए निश्चित ध्नराशि के रूप में होता है। वेतन आपिफस में काम करने वाले कर्मचारी, प्रबन्ध्क, प्रशासकीय अध्किारी तथा अन्य मानसिक कार्य करने वाले व्यक्तियों को दिया जाता है।

'**Wages** or **Pay** is the remuneration paid for the service of labour in production periodically to a worker (Blue Collarworkers).'

'**Salary** refer to the weekly, Fortnightly or Monthly rates to professional, administrative and clerical employees (White Collar-workers).'

अर्थशास्त्र में **मजदूरी और वेतन** में कोई अन्तर नहीं किया जाता। **बोनस** (Bonus), **रायल्टी** (Royalties), **कमीशन** (Commission) आदि इन सबको भी अर्थशास्त्र में मजदूरी के अर्न्तगत मानते हैं।

मजदूरी की परिभाषा
(Definition of Wages)

1. **प्रो. मार्शल** (Marshall) के अनुसार, फ्मानवीय श्रम के बदले में दिया जाने वाला कोई भी पुरस्कार अर्थशास्त्र में मजदूरी कहलाता है।य

   (Any type of reward for human exertion whether paid by an hour, a day or any longer unit of time, whether paid in cash or in kind or in both, is known as wages in Economics.)

2. **प्रो. मैकोनल** (Mc Connell) के अनुसार, फ्श्रम के उपयोग के बदले भुगतान की गई कीमत को मजदूरी या मजदूरी की दर कहा जाता है।य

   (Wages or wage rates are the price paid for use of labour.)

3. **प्रो. बैन्हम** (Benham) के अनुसार, फ्मजदूरी मुद्रा के रूप में दिया गया वह भुगतान है जो एक मालिक किसी श्रमिक को एक समझौते के अनुसार उसकी सेवाओं के लिए देता है।य

   (A wage may be defined as a sum money paid under contract by an employer to a workers for the serives rendered.)

मजदूरी के उद्देश्य
(Objective of Wages)

मजदूरी के निम्नलिखित उद्देश्य हैं—

1. श्रमिकों को श्रम (Labour) के प्रयोग के बदले कीमत (Price) दिलाना।
2. श्रमिकों की न्यूनतम आवश्यकतओं की पूर्ति के लिए मजदूरी का आश्वासन दिलाकार औद्योगिक शान्ति स्थापित करना।
3. श्रमिकों की कार्यक्षमता में वृ(करना।
4. मजदूरी मानसिक और शारीरिक श्रम (Labour) की कीमत (Price) होती है।
5. श्रमिकों को उत्साहित करना।
6. अयोग्य औद्योगिक इकाइयों की समाप्ति।
7. प्रबन्ध में सुधर।
8. श्रमिक के भरण—पोषण का साध्न।

नकद मजदूरी तथा वास्तविक मजदूरी
(Money or Nominal Wages and Real Wages)

अर्थशास्त्र में मजदूरी शब्द का प्रयोग दो अर्थों में किया जाता है—

1. नकद मजदूरी या मौद्रिक मजदूरी (Nominal wages or Money wages), तथा
2. वास्तविक मजदूरी (Real wages)।

1. **नकद मजदूरी** (Nominal wages or Money wages): फकिसी मजदूर को उसके श्रम के बदले में मुद्रा के रूप में जो पारिश्रमिक दिया जाता है उसे नकद मजदूरी कहते हैं।य सेलिंगमैन (Seligman) के अनुसार, फ्नकद द्रव्य के रूप में दी गई मजदूरी, मजदूरी है।य (Money wages are actual wages paid in money) जैसे यदि कोई श्रमिक इस्पात के कारखाने में काम करता है जिसमें उसका पारिश्रमिक 100 रुपये प्रतिमाह है तो यह कहा जायेगा कि उसकी नकद मजदूरी 100 प्रतिमाह है। दूसरो शब्दों में, मुद्रा के रूप में दी जाने वाली मजदूरी को नकअ मजदूरी कहते हैं। मजदूर नकद मजदूरी इसलिए स्वीकार करते हैं कि इसके द्वारा वे अपनी आवश्यकता की वस्तुओं की वस्तुओं तथा सेवाओं को खरीदते हैं।

2. **वास्तविक मजदूरी** (Real Wages): मजदूरी अपनी नकद मजदूरी से जो वस्तुएँ या सेवाएँ खरीद सकता है वह उसकी वास्तविक मजदूरी कहलाती है। (Real wages indicate the quantity of goods and services which one can obtain with his money wages, In other words, real wages are the purchasing power of money wages.) मजदूरों को कभी—कभी मजदूरी के अलावा कुछ अन्य सुविधएँ भी दी जाती है। जैसे, कपड़ा खाना, मकान आदि। ये सारी सुविधएँ वास्तविक मजदूरी के अन्तर्गत ही सम्मिलित होती है। जैसे रेलवे कर्मचारियों को नकद मजदूरी के साथ—साथ सस्ती दर पर राशन, मकान, कपड़ा, चिकित्सा आदि भी प्राप्त होती हैं। ये सभी सुविधएँ उनकी वास्तविक मजदूरी के अन्तर्गत ही सम्मिलित हैं। इस प्रकार **टॉमस** (Thomas) के शब्दों में फ्वास्तविक मजदूरी श्रमिक के कार्य से सम्बन्धित शु(लाभों को बतलाती है, अर्थात् उन आवश्यक आरामदायक तथा विलासिता सम्बन्धी वस्तुओं को बतलाती है जो श्रमिक अपनी सेवाओं के बदले प्राप्त करता है।य (Real wages refer to the net advantages of the worker's ocupation, i.e. the amount of the necessaries, comforts and Luxuries of life which the worker can command in return for his services.)

नकद मजदूरी एवं वास्तविक मजदूरी में अन्तर
(Distinction between Money Wages and Real Wages)

सेलिंगमैन (Seligman) के शब्दों में, फ्नकद मजदूरी मुद्रा के रूप में भुगतान की गई असल मजदूरी है तथा वास्तविक मजदूरी वे वस्तुएँ हैं जिन्हें नकद मजदूरी से हम खरीद सकते हैं।य (Money wages are actual wages paid in Money; Real wages are commodities and services that money can buy.) इसी प्रकार **मॉरिस डॉब** (Maurice Dobb) के अनुसार, फ्मजदूर को जो मुद्रा दी जाती है वह उसकी मजदूरी है और उस नकद मजदूरी से वह आवश्यक, अरामदायक तथा विलासिता की जो वस्तुएँ खरीद सकता है वह उसकी वास्तविक मजदूरी होती है।य इस प्रकार नकद मजदूरी के अन्तर्गत केवल मुद्रा के रूप में प्राप्त मजदूरी पर ध्यान दिया जाता है किन्तु वास्तविक मजदूरी के अन्तर्गत उन समस्त सुख और सुविधओं पर भी ध्यान दिया जाता है जिन्हें मजदूर नकद मजदूरी के अलावा प्राप्त करता है।

नकद मजदूरी एवं वास्तविक मजदूरी का अन्तर अर्थशास्त्र में बहुत महत्त्वपूर्ण है। मजदूरों की आर्थिक स्थिति उनकी वास्तविक मजदूरी पर निर्भर करती है। **एडम स्मिथ** के अनुसार, फ्श्रम की वास्तविक मजदूरी से उन आवश्यकताओं तथा सुविधओं का ज्ञान होता है जो इसके बदले में प्रापत होती है। इसी प्रकार मौद्रिक मजदूरी से मुद्रा की मात्रा का ज्ञान होता है। श्रमिक मौद्रिक मजदूरी से नहीं वरन् वास्तविक मजदूरी के अनुपात में ही ध्नी तथा निर्ध्न होता है।य (The real wages of the labour may be said to consist in the quantity of the necessaries and convenience that are given for it, its nominal wages is the quantity of the money. The labourer is rich or poor, or well or all rewarded in proportion to the real not the nominal wages of his labour.)

वास्तविक मजदूरी को प्रभावित करने वाले घटक
(Factors Determining Real Wages)

वास्तविक मजदूरी निम्नलिखित घटकों पर निर्भर करती है—

1. **मुद्रा की क्रय शक्ति** (Purchasing power of money): वास्तविक मजदूरी मुद्रा की क्रय शक्ति पर निर्भर करती है। यदि मुद्रा की क्रय–शक्ति अध्कि हुई तो कम मुद्रा पर ही अध्कि वस्तुएँ खरीदी जा सकती है। इसके विपरित क्रय–शक्ति कम रहने पर अध्कि मुद्रा सें भी कम वस्तुएँ खरीदी जा सकती है। द्रव्य की क्रय–शक्ति समय–समय तथा स्थान–स्थान में अलग–अलग रहती है।

2. **सहायक आय** (Supplementary earnings): किसी श्रमिक की वास्तविक मजदूरी का पता लगाने के लिए यह जानना भी आवश्यक है कि नकद मजदूरी के अतिरिक्त उसे किसी बाहरी आय की सुविध है या नहीं। कुछ व्यवसायों में मजदूरों को नकद मजदूरी के अतिरिक्त अन्य प्रकार की सुविधएँ भी प्राप्त होती हैं। जैसे—मुफ्रत मकान, चिकित्सा तथा शिक्षा आदि। ऐसे व्यवसायों में वास्तविक मजदूरी अध्कि होती है।

3. **कार्य की प्रकृति** (Nature of work): अगर कार्य खतरनाक है तथा गंदी जगहों में करना पड़ता है तो वास्तविक मजदूरी कम होती है। जैसे–रेल तथा जहाज के चालकों का कार्य अध्कि खतरनाक तथा कप्रदायक होता है। अतः यहाँ अन्य कार्यों की तुलना में समान नकद मजदूरी रहने पर भी वास्तविक मजदूरी कम होता है।

4. **काम सीखने का समय और व्यय** (Period and Cost of Training): कुछ कार्य ऐसे होते हैं जिन्हें सीखने में अध्कि समय तथा खर्च लगता है। जैसे—डॉक्टर, इन्जीनियर इत्यादि के कार्य। ऐसे कार्यों में वास्तविक मजदूरी उन कार्यों की तुलना में कम होती है, जिन्हें सीखने में व्यय तथा समय कम लगता है।

5. **भविष्य में उन्नति की आशा** (Prospect of promotion in future): जहाँ मजदूरों को भविष्य में उन्नति की आशा अध्कि होती है वहाँ वास्तविक मजदूरी भी अध्कि होती है। इसके विपरित जहाँ पर इस प्रकार की आशा नहीं रहती, वहाँ नकद मजदूरी अध्कि होने पर भी वास्तविक मजदूरी कम होती है।

6. **कार्य की अवधि** (Period of work): जहाँ पर काम लगातार साल भर तक होता है, वहाँ वास्तविक मजदूरी अध्कि होती है। इसके विपरित जहाँ पर वर्ष में कुछ दिन बेकार रहना पड़ता है, वहाँ पर वास्तविक मजदूरी भी कम होती है।

7. **परिवार के सदस्यों को काम मिलने की सुविध** (Facilities for employment to dependents): कुछ व्यवसाय या कार्य ऐसे होते हैं जहाँ श्रमिकों के बच्चों तथा औरतों को भी कार्य मिल जाता है। जैसे—कपड़े के कारखाने में औरतों तथा बच्चों को भी सुविधपूर्वक काम मिल जाता है। अतः इसमें कार्य करने वांले मजदूरों की वास्तविक आय अध्कि होती है।
8. **आराम का समय एवं छुट्टिद्धयाँ** (Leisure and holidays): जहाँ पर मजदूरों को छुट्टद्धी तथा आराम का समय अध्कि मिलता है वहाँ वास्तविक मजदूरी भी, अन्य बातों के समान रहने पर, अध्कि होती है।
9. **सामाजिक सम्मानः** जिन व्यवसाय तथा कार्यों को समाज में आदर तथा सम्मान की दृप्टि से देखा जाता है उनमे वास्तविक मजदूरी अध्कि होती है। इसके विपरित जहाँ सामाजिक प्रतिद्गा नहीं होती वहाँ वास्तविक मजदूरी कम प्राप्त होती है।
10. **व्यापारिक खर्च** (Trade expenses): कुछ खास व्यवसाय इस प्रकार के होते हैं जहाँ कर्मचारियों को अपना कार्य चलाने के लिए कुछ खर्च करना पड़ता है। जैसे—शिक्षकों तथा वकीलों को पुस्तकों पर। अतएव इस प्रकार के व्यवसाय में वास्तविक मजदूरी अपेक्षाकृत कम होती है।

मजदूरी की दर में विभिन्नता के कारण
(Causes of Difference in Wages)

विभिन्न व्यवयसायों में मजदूरों की दर में विभिन्नता पाई जाती है। कुछ व्यवसाय ऐसे होते हैं जहाँ पर मजदूरी की दर अध्कि तथा कुछ में मजदूरी की दर कम होती है। इसके निम्नलिखित कारण हैं—

1. **मजदूरों की कार्यकुशलता में अन्तर** (Difference in efficiency of labourers): श्रमिकों की कार्यकुशलता में विभिन्नता के कारण ही विभिन्न व्यवसायों में मजदूरी की दर भिन्न—भिन्न होती है। जिन व्यवयसायों में मजदूरों की कार्यक्षमता अध्कि होती वहाँ अध्कि मजदूरी मिलती है। इसका करण यह है कि कोई भी उत्पादक किसी मजदूर को उसकी सीमान्त उत्पादकता से अध्कि मजदूरी नहीं देता है।
2. **कार्य स्थायी होना** (Regularity of work or employment): कुछ कार्य स्थायी तथा कुछ मौसमी (Seasonal) होते हैं। जो कार्य स्थायी होते हैं वहाँ मजदूरी की दर भी कम होती है तथा जो अस्थायी या मौसमी होते है वहाँ मजदूरी अध्कि होती है क्योंकि मौसमी व्यवसाय में मजदूरों को बहुत अध्कि समय तक बेकार रहना पड़ता है जिससे वे अध्कि मजदूरी लेते हैं। यही कारण है कि कपड़े के कारखाने की अपेक्षा चीनी के कारखाने में मजदूरों को अध्कि मजदूरी मिलती है।
3. **कार्य की प्रकृति** (Nature of Work): बहुत से कार्य बहुत खतरनाक होते हैं जिससे मजदूरों की शक्ति शीघ्र कम होती है। जैसे रेलवे ड्राइवर का कार्य, जहाज चलाने वाले का कार्य आदि। इसके अतिरिक्त कुछ ऐसे कार्य भी होते हैं, जिन्हें समाज में नीचा समझा जाता है जैसे सपफाई कर्मचारी (Sweeper) का काम। इसके अतिरिक्त बहुत सारे कार्य ऐसे हैं जिनसे सामाजिक प्रतिद्गा मिलती है तथा जोखिम की मात्रा भी बहुत कम होती है। अतः पहले प्रकार के कार्यों में मजदूरी दूसरे प्रकार के कार्यों की अपेक्षा सामान्यतः अध्कि मिलती है।
4. **मजदूरी के अतिरिक्त अन्य लाभ** (Other incidental advantages): कुछ व्यवसायों में मजदूरों की मजदूरी के अतिरिक्त अन्य प्रकार के लाभ तथा सुविधएँ भी मिलने की आशा रहती है। जैसे मुफ्रत मकान, मुफ्रत चिकित्सा सुविध आदि।
5. **भविष्य में उन्नति और सपफलता की आशा** (Prospect of Future Promotion): जिस व्यवसाय में भविष्य में उन्नति की आशा अध्कि रहती है, उसमें लोग प्रारम्भ में कम ही मजदूरी स्वीकार कर लेते हैं। इसी प्रकार जहाँ सपफलता तथा भविष्य में उन्नति की आशा अध्कि रहती है वहाँ मजदूरी कम होती है लेकिन जहाँ भविष्य में उन्नति की आशा कम रहती है वहाँ मजदूरी की दर भी अध्कि होती है।
6. **कार्य का दायित्व तथा जोखिम** (Responsibility of the work): जिस व्यवसाय में जोखिम की मात्रा अध्कि रहती है, वहाँ मजदूरी भी अपेक्षाकृत अध्कि रहती है, इसी प्रकार जिस कार्य में दायित्व अध्कि होता है, वहाँ मजदूरी भी अध्कि होती है।

7. **कार्य सीखने का खर्च तथा समय** (Cost and period of training): जिस व्यवसाय को सीखने का खर्च अध्कि होता है उसमें मजदूरी अपेक्षाकृत अध्कि मिलती है।

स्त्रियों को कम मजदूरी मिलने के कारण
(Causes of low Wages of Women)

अध्किांश व्यवसायों में पुरुषों की अपेक्षा औरतों को कम मजदूरी मिलती है। इसके निम्नलिखित कारण हैं—

1. **शारीरिक शक्ति की कमीः** स्त्रियों की शारीरिक शक्ति पुरुषों की तुलना में कम होती है। कम उत्पादन शक्ति के कारण इन्हें कम मजदूरी मिलती है।
2. **प्राचीन परम्पराः** प्राचीन सामाजिक रीति–रिवाजों के कारण औरतें भी बहुध काम नहीं चाहती है। वे अपना समय घरेलू कार्यो में ही लगाती हैं। इससे भी इन्हे कम मजदूरी मिलती है।
3. **लगातार कार्य पर न रहनाः** स्त्रियाँ लगातार कार्य करने पर नहीं रहती हैं। साधरणतया विवाह के बाद ये किसी व्यवसाय में नहीं जाना चाहती। इस कारण भी इन्हें कम मजदूरी मिलती है।
4. **संगठन का अभावः** स्त्रियों में संगठन का अभाव पाया जाता है। पुरुषों की तरह यदि इनमें संगठन होता तो ये मिल–जुलकर अपनी मजदूरी बढ़वा सकती थी।
5. **स्त्रियों के सीमित कार्यः** स्त्रियाँ सभी प्रकार के कार्य तथा सभी उद्योगों में कार्य नहीं कर सकती। ये कुछ इने–गिने कार्यो को ही कर सकती है।
6. **शिक्षा एवं ट्रेनिंग का अभावः** स्त्रियों में शिक्षा तथा ट्रेनिंग की कमी रहती है जिससे इन्हें पुरूषों की अपेक्षा कम मजदूरी मिलती है।
7. **सीमांत दायित्वः** पुरूषों की अपेक्षा औरतों का सामाजिक दायित्व कम होता है, अतएव इन्हें कम मजदूरी मिलती है। ये केवल अपनी आय पर निर्भर नहीं करती वरन् अपने पति, पुत्र, पिता या भाई की कमाई पर भी निर्भर करती है।

मजदूरी निर्धरण का सि(ांत अथवा मजदूरी कैसे निर्धरित होती है?
(How Wages are Determined?)

अथवा

मजदूरी के सि(ांत
(Theories of Wages)

श्रमिकों की मजदूरी निर्धरण के लिए समय–समय पर अनेक अर्थशास्त्रियों ने विभिन्न सि(ांतों की रचना की है। इनमें से प्रमुख सि(ांत निम्नलिखित हैं—

1. जीवन निर्वाह मजदूरी की सि(ांतऋ
2. मजदूरी का जीवन स्तर सि(ांतऋ
3. मजदूरी का अवशेष अध्किारी सि(ांतऋ
4. मजदूरी कोष सि(ांतऋ
5. मजदूरी का सीमान्त उत्पादकता सि(ांतऋ
6. मजदूरी का बट्टद्धा सहित सीमान्त उत्पादकता का सि(ांतऋ
7. मजदूरी का आधुनिक सि(ांत।

जीवन निर्वाह मजदूरी का सि(ांत
(The Subsistance Theory of Wages)

इस सि(ांत का प्रतिपादन 18वीं शताब्दी में प्रकृतिकवादी अर्थशास्त्रियों (Physiocrats Economist) ने किया था। इस सि(ांत का सर्वाध्कि समर्थन और स्पष्ट्रीकरण **रिकार्डो** (Recardo) ने किया था। जर्मन अर्थशास्त्री **लेसली** (Lessale) ने इस सि(ांत का मान्यता देते हुए इस सि(ांत को फ्मजदूरी का लौह नियमय़ (Iron Law of Wages) अथवा **ब्रजैन नियम** (Brazen Law of Wages) के नाम से पुकारा था।

सि(ांत मान्यताएँ (Assumptions of the Theory): यह सि(ांत दो मान्यताओं पर आधरित है।

1. **क्रमागत उत्पत्ति "ास नियम** (Law of Diminishing Returns) का लागू होना।
2. **जनसंख्या में तेजी से वृ(ि** (Rapid Increase of Population) होना।

उपर्युक्त दोनों मान्यताओं के अनुसार—

(i) खाद्य पदार्थो की वृ(ि एक सीमा के बाद बढ़ाई जा सकती, परिणामस्वरूप वस्तुओं के मूल्यों में वृ(ि होगी।

(ii) जनसंख्या वृ(ि से मजदूरों की मजदूरी में कमी आती है।

इन दोनों मान्यताओं के अनुसार, फ्एक ओर जनसंख्या वृ(ि से मजदूरों में कमी आती है तो दूसरी ओर मूल्य व(ि से श्रमिक की असल मजदूरी (Real Wage) कम हो जाती है।य़ प्रो. जीड (Prof. Jeede) ने इस विषम परिस्थितियों के बीच श्रमिक की स्थिति को बतलाते हुए लिखा है—फ्एक ओर कम मजदूरी और दूसरी ओर उफँचे मूल्य की स्थिति में श्रमिक अपने को हथौड़ा (Hammer) और निहाई (Envil) के बीच कुचला हुआ अनुभव करता है।य़

("Between low wages on the one hand and high prices on the other, the worker feels himself crushed as between the hammer and the Envil.")

तुर्गोत (Turgot) के अनुसार, फ्इस प्रकार की मजदूरी प्राकृतिक नियम के अनुसार निर्धरित होती है। यदि मजदूरी जीवन निर्वाह के न्यूनतम स्तर (Minimum level) से अध्कि हो जायेगी तब श्रमिक अपनी शादियों अध्कि करेंगे, परिणामस्वरूप श्रमपूर्ति में वृ(ि होगी। श्रमपूर्ति बढ़ जाने से उनकी मजदूरी कम हो जायेगी। इसके विपरित मजदूरी जीवन–निर्वाह स्तर से कम होने पर श्रमिकों की पूर्ति कम हो जायेगी और परिणामस्वरूप मजदूरी में वृ(ि होगी।य़ अन्ततः मजदूरी जीवन निर्वाह मजदूरी की दर के बराबर आ जायेगी।

रिकार्डो (Recardo) ने इस सि(ांत का समर्थन करते हुए लिखा है—फ्श्रम का प्राकृतिक मूल्य वह मूल्य है जो श्रमिक को एक–दूसरे के साथ निर्वाह करने के लिए तथा अपने अस्तित्व को, बिना वृ(ि या कमी के स्थिर बनाये रखने के लिए आवश्यक होता है।य़

("The natural price of labour is that price which is necessary to enable the labourers one with another to subsist and perpetuate their race without either increase or diminution.")

आलोचना (Criticism): यह सि(ान्त एक ओर 'आशवादी' और दूसरी ओर 'निराशावादी' है। 'आशावादी दृष्ट्रिकोण' इसलिए है कि इसके आधर पर इस तथ्य तक सरलता से पहुँचा जा सकता है कि श्रम की एक उचित पूर्ति को प्राप्त करने के लिए मजदूरी के एक फ्न्यूनतम सीमाय़ है और सामान्यतः इस सीमा से कम मजदूरी प्रदान नहीं की जा सकती है। इसी आधर पर आधुनिक अर्थशास्त्रियों ने मजदूरी के अन्य सि(ान्तों की रचना की है।

इस सि(ांत का निराशावादी दृष्ट्रिकोण इसलिए है कि मजदूरी का 'गठबंध्न' निर्वाह के न्यूनतकम स्तर से कर दिया है। परिणामस्वरूप मजदूरी को उससे उफपर उठाना असम्भव हो जाता है। इस सि(ांत के अन्य दोष निम्न हैं—

1. यह सि(ांत पूरी तरह **जनसंख्या सि(ांत** (Thoery of Population) पर आधरित है जबकि जनसंख्या का सि(ांत स्वयं दोषपूर्ण है। अतः उस पर आधरित यह सि(ान्त भी दोषपूर्ण है। इस सि(ान्त का यह कथन गलत है कि मजदूरों की आर्थिक स्थिति के अच्छा होने से उनकी जनसंख्या बढ़ेगी। यह विचार वास्तविक और व्यावहारिक नहीं है। उफँचे जीवन स्तर को बनाने और उसका आनन्द लेने की कामना जन्म दर को सदैव कम करती है।

2. यह सि(ांत माँग पक्ष पर विचार नहीं करता है। यह उत्पादन व्यय को ही महत्त्व देता है। केवल पूर्ति पर ही यह सि(ांत बनाया गया है, जबकि प्रत्येक वस्तु के मूल्य निर्धरण में माँग और पूर्ति दोनों पर ध्यान दिया जाना चाहिए।
3. फइतिहास इस सि(ान्त का खण्डन करता है।य इतिहास हमें बतलाता है कि विकसित देशों में श्रमिक वर्ग आराम और विलासिता की वस्तुओं का भी उपभोग कर रहा है। यदि मजदूरी जीवन निर्वाह के आधर से अध्कि न होती तब वह आराम और विलासिता की वस्तुओं का किस प्रकार उपभोग कर सकता था।
4. इस सि(ांत की रचना करने में पश्रमिकों की कार्यकुशलता पर कतई ध्यान नहीं दिया गया है।य कार्यकुशलता में वृ(ि हाने से श्रमिक की उत्पादकता में वृ(ि होगी, परिणामस्वरूप उसकी मजदूरी भी बढ़नी चाहिये।
5. यह सि(ांत विभिन्न व्यक्तियों, व्यवसायों तथा अन्य क्षेत्रों में पाये जाने वाले मजदूरी के अन्तर को नहीं समझता। इसके अनुसार, समस्त श्रमिकों को एक–सी मजदूरी मिलनी चाहिये थी, क्योंकि प्रायः जीवन निर्वाह सभी श्रमिकों के लिए समान ही है। इस प्रकार इस सि(ांत में जीवन–स्तर के विचार को नहीं माना गया है।

उपर्युक्त दोषों के कारण इस सि(ांत को 19वीं सदी के मध्य तक त्याग दिया गया था। अब यह सि(ांत इतिहास के पृष्ठों में समा गया है।

मजदूरी का जीवन–स्तर सि(ांत
(The Standard of Living Theory of Wages)

जीवन निर्वाह सि(ांत की कड़ी आलोचना के बाद उसके स्थान पर फमजदूरी जीवन–स्तर सि(ांतय को मान्यता दी गई है।

अर्थ एवं व्याख्या (Meaning and Explanation)

इस सि(ान्त के अनुसार जिस श्रमिक वर्ग का जैसा जीवन–सतर होगा उसके अनुसार ही उसे मजदूरी मिलेगी। जीवन–स्तर का आशय केवल आवश्यक आवश्यकताओं से नहीं है अपितु इसमें शिक्षा, आराम तथा विलासिता की वे आवश्यकताएँ सम्मिलित की जाती है जिनके उपयोग का श्रमिक आदी (Habitual) हो गया है।

सि(ांत के गुण (Merits of the Theory)

1. यह सि(ांत श्रमिक की कार्यक्षमता एवं उसकी उत्पादन–शक्ति को ध्यान में रखकर बनाया गया है। जितना उफँचा जीवन–स्तर श्रमिक का होगा उतनी ही श्रमिक की कार्यक्षमता में वृ(ि होगी, परिणामस्वरूप उत्पादन अध्कि होगा। अध्कि उत्पादन के कारण मजदूरी जीवन–स्तर के आधर पर दी जा सकती है।
2. यदि किसी श्रमिक को लम्बे समय तक अध्कि मजदूरी दी जाती रहेगी तो वह पहजे की अपेक्षा उफँचा जीवन व्यतीत करने का आदी हो जाता है। इस स्तर को बनाये रखने के लिए वह सदैव प्रयत्नशील रहेगा चाहे इसके लिए वह अविवाहित ही क्यों न रहे।
3. यदि श्रमिक को अपने जीवन निर्वाह से अध्कि मजदूरी मिलती है तो वह अपनी मजदूरी का कुछ भाग भविष्य के लिए बचाकर रख लेगा। इस बचत से वह एक ओर अध्कि समय तक सेवायोजकों से अध्कि मजदूरी प्राप्त करने के लिए संघर्श कर सकेगा तथा दूसरी ओर भविष्य में भी अपने जीवन–स्तर को उफँचा बनाये रखने में सपफल हो सकेगा।

आलोचना (Criticism)

1. यह सि(ांत श्रम के पूर्ति को लेकर चलता है तथा श्रम में माँग पक्ष की उपेक्षा करता है।
2. श्रमिक की मजदूरी केवल जीवन–स्तर से प्रभावित न होकर अन्य बातों से भी प्रभावित होती है।
3. उफँचा जीवन–स्तर केवल उफँची मजदूरी दर से नहीं हो सकता अपितु एक श्रमिक के उफँचे जीवन–स्तर को शिल्पकला में उन्नति, विनियोग की दर तथा उत्पादन विध्ि भी प्रभावित करती है।

मजदूरी का अवशेष अध्किारी सि(ांत
अथवा
मजदूरी का अवशि५ स्वत्व सि(ांत
(The Residual Claimant Theory of Wages)

प्रायः व्यवहार में यह देखने में आता है कि फ्मजदूरी श्रमिक की उत्पादका द्वारा निर्धरित होती है।य यही विचार इस सि(ांत का आधर है। सर्वप्रथम इस सि(ांत का प्रतिपादन **वाकर** (Walker) ने किया था। वाकर ने लिखा है—फ्कुल उत्पादन में से लगान, ब्याज और लाभ को घटाने के बाद जो कुछ शेष बचता है, मजदूरी उसी के बराबर होती है।य (Wages are equal to the whole product minus rent, interest and profit.)

प्रो. वाकर (Walker) के अनुसार उत्पादन चार भागों में बाँटा जाता है। जैसे—लगान, ब्याज, लाभ तथा मजदूरी। इसमें लगान, ब्याज, तथा लाभ का भुगतान कुल उत्पादन को ध्यान मे रखकर कर दिया जाता है। इन तीनों का भुगतान करने के बाद कुल उत्पादन में जो शेष बचता है उसे मजदूरी कहते हैं। अर्थात्

(Wages = Total Production - (Rent + Interest + Profit)

इस प्रकार **वाकर** (Walker) के अनुसार श्रमिक बचे हुए ध्न का अध्किारी है। इस सि(ान्त से यह सि(हो जाता है कि फ्श्रमिकों की कार्यक्षमता अथवा उत्पादन शक्ति में वृ(ि हो जाये तो कुल उत्पादन में अवश्य वृ(ि होगी। परिणामस्वरूप मजदूरों के अवशेष (Resident) भाग में वृ(ि होगी।

सि(ांत के गुण (Merits of the Theory)

मजदूरी का यह सि(ांत रा५ीय आय के उस भाग पर श्रमिक का अध्किार मानता है जो श्रमिक के श्रम और प्रयासों से उत्पन्न हुआ है। यह पहला सि(ांत है जिसने यह सि(किया कि यदि श्रमिक योग्य है और उसकी कार्यक्षमता बढ़ी हुई है तो उसे निश्चित रूप से अध्कि मजदूरी मिलेगी।

आलोचना (Criticism)

1. यह सि(ांत 'श्रम पूर्ति' पक्ष पर ध्यान नहीं देता।
2. यद्यपि यह सि(ांत यह बतलाता है कि विभिन्न देशों में मजदूरी भिन्न–भिन्न क्यों है लेकिन यह सि(ांत हमें यह नहीं बतलाता है कि एक ही देश में मजदूरी के भिन्न–भिन्न होने के क्या कारण है।
3. यह सि(ांत श्रमिक संघों के महत्त्व को स्वीकार नहीं करता जबकि व्यवहार में श्रमिक संघ मजदूरी वृ(ि में बड़ा सहयोग देते हैं।
4. इस समय सभी अर्थशास्त्री इस मत से सहमत हो गय हैं कि लाभ वास्तव में अतिरिक्त एवं बचत है और सभी साध्नों के मूल्य स्थिर हैं। इस सि(ांत में लाभ के स्थान पर मजदूरी को फ्अवशेष आयय (Residual Income) समझा गया है। यह तर्क उचित नहीं है।

मजदूरी कोष सि(ांत
(The Wages Fund Theory)

इस सि(ांत की झलक फ्**एडम स्मिथ** (Adam Smith) के विचार से मिलती है। परन्तु ठीक से इस सि(ांत का प्रतिपादन **जॉन स्टुअर्ट मिल** (John Stuart Mill) ने 1948 में किया था।

मिल ने कहा है—फ्अस्थिर (Unstable) पूँजी के उस भाग को, जिसे श्रमिकों पर खर्च किया जाता है जिसे मजदूरी कोष (Wages Fund) कहते हैं, तथा श्रमिकों की संख्या, जो मजदूरी (Wages) पर कार्य करती है, इन दोनों के अनुपात पर मजदूरी की दर निर्भर करती है।य

मिल के स्व्यं के शब्दों में—फ्मजदूरी प्रमुख रूप से श्रम की माँग (Demand) और पूर्ति (Supply) पर निर्भर करती है या जैसा कि प्रायः कहा जाता है, जनसंख्या (Population) और पूँजी (Capital) के बीच अनुपात पर निर्भर करती है। शब्दों की इन सीमाओं के साथ मजदूरी न केवल पूँजी तथा श्रम की मात्रा पर निर्भर करती है। अपितु प्रतियोगिता के नियमों के अनुसार किसी भी अन्य कारण से मजदूरी प्रभावित नहीं हो सकती है। मजदूरी की सामान्य दर (General rate), बिना उस कोष की कुल मात्रा को बढ़ाये हुए, जो श्रम को किराये पर रखने के लिए निश्चित कर दी गयी है अथवा किराये पर रखे जाने वाले प्रतियोगियों में कमी किए हुए बिना नहीं बढ़ाई जा सकती है और न उस कोष (Fund) में बिना कमी किए हुए अथवा बिना श्रमिकों की संख्या में वृ(ि किये मजदूरी को कम किया जा सकता है।य

जे.एस. मिल (J.S. Mill) के अनुसार—

(i) देश की पूँजी की एक स्थिर मात्रा श्रम क्रय करने के लिए निश्चित कर दी जाती है। इस पूर्वनिर्धरित पूँजी की मात्र को ही फ्मजदूरी कोषय (Wages Fund) कहते हैं। यह मजदूरी कोष श्रम की माँग (Demand) बतलाता है।

(ii) किसी दिये हुए समय में श्रमिकों की एक ऐसी संस्था होगी जोकि अवश्य काम करेगी। श्रमिकों की यह संख्या पूर्ति पक्ष (Supply Side) का निर्माण करती है।

(iii) श्रमिकों की संख्या द्वारा मजदूरी कोष (Wages fund) को भाग देने पर औसत मजदूरी (Average Wages) प्राप्त हो जाती है, यानी मजदूरी इन दोनों के अनुपात पर निर्भर करती है।

(iv) यदि जनसंख्या में वृ(ि के साथ–साथ श्रमिकों की संख्या में वृ(ि हो जाती है तब उसी हिसाब से प्रति श्रमिक मजदूरी कम हो जायेगी। जब श्रमिकों की संख्या में कमी होगी तब उन्हें मिलने वाली मजदूरी बढ़ जाएगी।

इस सि(ांत से यह निष्कर्ष (Conclusion) निकलता है कि श्रमिकों की मजदूरी केवल दो दशाओं में ही बढ़ सकती है—

(i) श्रमिकों को अध्कि मजदूरी देने के लिए मजदूरी कोष में वृ(ि की जाये।

(ii) जे.एस. मिल ने अपने सि(ांत में श्रमिकों की कार्यक्षमता और उत्पादन क्षमता पर कोई ध्यान न देकर बड़ी भूल की है।

(iii) इस सि(ांत के कथन और व्याख्या में बहुत अन्तर है। मिल के अनुसार—मजदूरी (Wages) श्रम की माँग और पूर्ति द्वारा निर्धरित होती है। श्रम की माँग (Demand of Labour) पूँजी के द्वारा निर्धरित होती है जो स्थिर (Constant) है। यह आधर कतई ठीक नहीं है, क्योंकि ऐसा मान लेने से कि मजदूरी कोष (Wages Fund) निश्चित है, यह कैसे संभव हो सकता है कि मजदूरी (Wages) पर पूँजी और माँग का प्रभाव पड़ता है। इस प्रकार केवल मजदूरी पर श्रम की पूर्ति (Supply of Labour) का ही प्रभाव पड़ता है जो कि एक पक्षीय है।

(iv) यह सि(ांत उत्पादन के क्रमागत उत्पत्ति वृ(ि नियम (Law of Increasing Returns) की भी अवहेलना करता है।

(v) यह सि(ांत विभिन्न उद्योगों में मजदूरी की विभिन्नता को स्प५ नहीं करता।

(vi) यह सि(ांत अवैज्ञानिक है क्योंकि पहले मजदूरी कोष निर्धरित किया जाता है और बाद में मजदूरी का निर्धरण किया जाता है। व्यवहार में इसका उल्टा होता है।

मजदूरी का सीमान्त उत्पादकता का सि(ांत
(Marginal Productivity Theory of Wages)

इस सि(ांत का प्रतिपादन **जेवन्स** (Jevons) ने किया है। इस सि(ांत के अनुसार—मजदूरी का निर्धरण श्रम की सीमान्त उत्पादकता के द्वारा होता है।

श्रम की सीमान्त उत्पादकता (Marginal Productivity of Labour) से आशय उस उत्पादन की मात्रा से है जो उत्पत्ति में प्रयोग होने वाले उत्पादन के अन्य साध्नों को स्थिर करके या पहले जैसा ही रहने पर एक श्रमिक के बढ़ने या कम होने से बढ़ती या घटती है। उदाहरण के लिए–यदि 25 मजदूर उत्पादन के अन्य साध्नों के साथ मिलकर 100 इकाइयों का उत्पादन करते हैं और अब यदि इसी उद्योग में 26 श्रमिक उत्पादन के साध्नों का उसी मात्रा के साथ मिलकर 115

इकाइयों का उत्पान करते हैं तो श्रम की सीमान्त उत्पादकता इन दोनों के अन्तर ;115–100=15द्ध15 इकाई के बराबर होगी। अतः एक उत्पादक मजदूरी 15 इकाईयों के बराबर ही प्रदान करेगा। इस दश में एक उत्पादक सीमान्त मजदूर को अपने यहाँ काम पर नहीं लगाना चाहता है क्योंकि उसे लगाने से उसे कोई लाभ नहीं होता। वह श्रमिक जितना उत्पादन करता है उतनी ही उसे मजदूरी मिल जाती है।

इस सि(ांत के अनुसार, मजदूरी श्रम की सीमान्त उत्पादकता द्वारा निर्धरित होती है और संतुलन बिन्दु पर इसके बराबर हो जाती है।

एक उत्पादक की दृप्ि से श्रमिकों की संख्या में वृ(करना उस समय तक लाभदायक रहता है जब तक सीमान्त उत्पादकता दी जाने वाली मजदूरी के बराबर नहीं हो जाती है।

आलोचना (Criticism)

1. यह सि(ांत केवल 'श्रम की माँग' पक्ष को महत्त्व देता है,
2. व्यवहार में सेवायोजक सदैव श्रमिकों को सीमान्त उत्पादकता से कम ही मजदूरी देते हैं लेकिन कभी–कभी श्रमिक भी श्रम संघों की सहायता लेकर अपनी माँगों को मनवाकर सीमान्त उत्पादकता से अध्कि मजदूरी लेने में सपफल हो जाते हैं।
3. यह सि(ांत यह मानकर चलता है कि अन्य उत्पत्ति के साध्नों को स्थिर श्रम की इकाई में वृ(की जा सकती है किन्तु व्यवहार में यह संभव नहीं है जैसे 10 टाइपराइटर पर 10 व्यक्ति टाइप कर रहे हैं। यदि 11वीं व्यक्ति टाइप करने के लिए लगायेंगे तो हमें 11वीं टाइप मशीन की आवश्यकता होगी।
4. यह सि(ांत श्रम बाजार में पूर्ण प्रतियोगिता पर आधरित है परंतु व्यवहार में पूर्ण प्रतियोगिता नहीं पाई जाती है।
5. इस सि(ांत में यह स्वीकार किया गया है कि प्रत्येक श्रमिक एक समान है। यह मान्यता ठीक नहीं है।
6. इस सि(ांत की अन्य मान्यताएँ भी व्यावहारिक नहीं है जैसे–श्रमिक पूर्ण गतिशील है। वस्तुओं के मूल्य सभी स्थानों पर समान रहते हैं।

मजदूरी का बट्टद्धा युक्त सीमान्त उत्पादकता का सि(ांत
(The Discount Marginal Productivity Theory)
अथवा
टॉजिंग का मजदूरी का सि(ांत
(Taussing's Theory of Wages)

इस सि(ांत का प्रतिपादन **प्रो. टॉजिंग** (Prof. Taussing) ने किया था। वास्तविकता यह है कि यह सि(ांत सीमान्त उत्पादकता सि(ांत का ही एक संशोध्ति रूप है। मजदूरी के पुराने सीमान्त उत्पादकता सि(ान्त के स्वरूप को सुधरते हुए प्रो. टॉजिंग कहते हैं—मजदूरी शुल्क सीमान्त उत्पादकता (Marginal Net Productivity) के बराबर नहीं हो सकती है क्योंकि मजदूरी के भुगतान और वस्तुओ के विक्रय के बीच समय का बड़ा अन्तर (Big Time Gap) आ जाता है, जबकि सेवायोतक श्रमिक को मजदूरी पहले देता है और उसकी वस्तु बाद में बाजार में बिकती है। ऐसी स्थिति में सेवायोजक श्रमिक को मजदूरी पहले देता है और उसकी वस्तु बाद में बाजार में बिकती है। ऐसी स्थिति में सेवायोजक श्रमिक को उतनी मजदूरी नहीं देना जितनी कि श्रमिक के द्वारा बनाई गई वस्तु के विक्रय के समय उसे प्राप्त होती है। वस्तु के विक्रय के समय में श्रमिक को सीमान्त उत्पादकता के बराबर मजदूरी मिलती है। वस्तु विक्रय से पूर्व सेवायोजक मजदूरी में से कुछ अंश, जिसे बट्टद्धा (Discount) कहते हैं, काट लेता है (Equal to Interest)। यह बट्टद्धा (Discount) उस ब्याज के बराबर होता है जो किसी श्रमिक को मजदूरी में दी जाने वाली राशि को किसी दूसरे व्यक्ति को उधर दिये जाने पर मिलता है।

इस प्रकार सेवायोजक श्रमिकों की मजदूरी में से बट्टद्ध (Discount) काट लेते हैं। यह कटौती या बट्टद्धा प्रचलित ब्याज दर के बराबर होती है।

आलोचना (Criticism)

1. इस सि(ान्त के अनुसार ब्याज के बराबर मजदूरी में से काटकर मजदूरी श्रमिक को दी जाती है। इससे स्प5 है कि मजदूरी का निर्धरण पहले ही हो चुका है। इस प्रकार यह सि(ान्त दोषपूर्ण है।
2. सीमान्त उत्पादकता सि(ान्त के विरु(सभी आलोचनाएं इस सि(ांत में लागू होती है।
3. आलोचक कहते हैं कि उत्पादन के अन्य साध्नों से बट्टद्धा (Discount) क्यों नहीं लिया जाता है। जैसे—लगान तथा ब्याज में बट्टद्धा क्यों नहीं काटा जाता? केवल मजदूरों की मजदूरी में से ही बट्टद्धा काटने की बात क्यों की जाती है।
4. यह सि(ान्त मजदूरी कोष सि(ानत का ही आधुनिक रूप है। इस सि(ान्त में अनेक दोष पाये जाते हैं।

माँग और पूर्ति सि(ान्त या मजदूरी का आध्ुनिक सि(ान्त
(Demand and Supply Theory or Modern Theory of Wages)

अथवा

पूर्ण प्रतियोगिता में मजदूरी निर्धरण
(Wages Determination under Perfect Competition)

अथवा

मजदूरी की दर का निर्धरण
(Determination of Wages Rates)

मजदूरी मजदूरों की सेवा का पफल है और यह मजदूरों की माँग तथा पूर्ति द्वारा निर्धरित होती है।

मजदूरों की माँग (Demand for Labour)

उद्यमी मजदूरों की माँग इसलिए करते हैं क्योंकि वे मजदूरों द्वारा पैदा की गई वस्तुओं को बेचकर लाभ कमाते हैं अथवा यों कह लें कि उद्यमी को मजदूरों से उत्पादकता प्रापत होती हैऋ इसलिए उद्यमी मजदूरों को मजदूरी देने को तैयार होता है। अब प्रश्न उठता है कि उद्यमी मजदूरों को कितनी मजदूरी देगा। यह मजदूरी सीमान्त उत्पादकता पर निर्भर करती है।। एक और मजदूर काम पर लगाने से कुल उत्पादन में जो वृ(होती है, उसे एक मजदूर की सीमान्त लागत उत्पादकता कहते हैं (Marginal productivity is the addition to total productivity as a result of employing one more labourer)।

मान लें 10 मजदूर काम पर लगाने से 1,00 रुपये मा काल पैदा होता है। यदि एक मजदूर लगाया जाय अर्थात् यदि 11 मजदूर काम पर लगाए जाएँ तो 1095 रुपये का माल पैदा हुआ तो 95 रुपये 11वीं मजदूर की सीमान्त उत्पादकता है। उत्पादक अथवा उद्यमी अध्कि से अध्कि सीमान्त उत्पादकता के बराबर मजदूरी दे सकता है। जब तक सीमान्त उत्पादकता मजदूरी से अध्कि होगी, उद्यमी अध्किाध्कि मजदूरों की काम पर लगायेगा। ऐसा करने से उसका लाभ बढ़ता जाता है और उसका उद्देश्य अध्कितम लाभ कमाना है। ज्यों—ज्यों वह अध्किाध्कि मजदूर काम पर लगाता जाएगा, त्यो—त्यों मजदूरों की सीमान्त उत्पादकता घटती जाएगी। जब वह घटती—घटती मजदूरी के समान हो जाएगी तो उद्यमी रूक जाएगा और उससे अध्कि संख्या में मजदूर काम पर नहीं लगाएगा अन्यथा उसे घाटा पड़ेगा। क्योंकि यदि वह स्तर से अध्कि मजदूर काम पर लगाता है तो उसे मजदूरी अध्कि देनी पड़ती है और मजदूरों से प्राप्त उत्पादन कम होता है अतः वह ऐसा नहीं कर सकता। इस सीमा पर ;जहाँ वक रूका हैद्ध अन्तिम मजदूर को सीमान्त श्रम (Marginal Labour) कहा जाता है और उसकी उत्पादकता को सीमान्त उत्पादकता कहते हैं।

हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि उद्यमी मजदूरों की सीमान्त उत्पादकता से अध्कि मजदूरी किसी हालत में नहीं दे सकता। मानो यदि सीमान्त उत्पादकता 5 रुपये है तो अध्कि—से—अध्कि मजदूरी 5 रुपये हो सकती है।

मजदूरों की पूर्ति (Supply of Labourers): मजदूर अपनी पूर्ति इसलिए करते हैं क्योंकि उन्हें मजदूरी तो मिलती है उससे वे अपने रहन—सहन के स्तर को बनाये रखते हैं। मजदूर कम—से—कम इतनी मजदूर अवश्य लेगा जिससे कि उसकी कम

–से–कम अनिवार्य आवश्यकताओं की पूर्ति हो सके अथवा यों कह ले कि उसका जीवन–स्तर या रहन–सहन बना रह सकें, नहीं तो यदि मजदूरी कमाकर भी भूखे ही मरता है तो पिफर काम करने का भला लाभ ही क्या? अल्पकाल में चाहे मजदूर इस स्तर के कम मजदूरी स्वीकार कर ले, परन्तु दीर्घकाल में वह कम–से–कम इतनी मजदूरी अवश्य प्राप्त करेगा जिनमें कि उसका जीवन–स्तर बना रहे। यदि मजदूर का जीवन–स्तर बनाए रखने के लिए उसे 2 रुपए कम–से–कम जरूर चाहिए तो इस अवस्था में मजदूरी 2 रूपये से कम नहीं होगी।

हमने उफपर देखा कि मजदूरी की उफपर की सीमा मजदूर की सीमान्त उत्पादकता है ओर निचली सीमा उसका रहन–सहन का स्तर है। इन दो सीमाओं के बीच वह मजदूरी नियत होगी जिस पर रम की माँग और पूर्ति दोनों में सन्तुलन हो। जैसा निम्नलिखित तालिका में दिखाया गया है

मजदूरी प्रतिदिन (Wages)	मजदूरों की माँग (Demand for Labour)	मजदूरों की पूर्ति (Supply of Labour)
1 रूपया	100	20
2 रूपया	80	40
3 रूपया	60	60
4 रूपया	40	80
5 रूपया	29	100

हम उफपर की तालिका में देखते हैं कि प्रतिदन मजदूरी 3 रूपये नियत होगी, क्योंकि केवल इसी मजदूरी पर मजदूरों की माँग और पूर्ति दोनों बराबर है अर्थात् दोनों 60 हैं। 2 रूपरे मजदूरी नहीं हो सकती क्योंकि इस मजदूरी पर मजदूरों की माँग 80 है, पर उनकी पूर्ति 40 है। माँग के अध्कि होने के कारण मजदूरी बढ़ेगी। 4 रूपये भी मजदूरी नहीं हो सकती क्योंकि इस मजदूरी पर मजदूरों की माँग 40 हैं पर उनकी पूर्ति 80 है। पूर्ति के अध्कि होने के कारण मजदूरी घटेगी।

रेखाचित्र द्वारा मजदूरी निर्धरित करते हैं:

हम OX पर मजदूरी की माँग और पूर्ति रखते है, OY पर उनकी मजदूरी, DD और SS रेखाएँ मजदूरों की माँग और पूर्ति को दिखती है। ये दोनों रेखाएँ एक–दूसरे को बिन्दू E पर काटती हैं। इसलिए मजदूरी EM या OR नियत होगी। इसी मजदूरी पर मजदूर की माँग और पूर्ति दोनों बराबर हैं, जैसे OM=OM हैं।

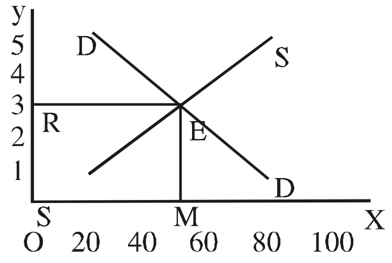

Demand and supply of labour

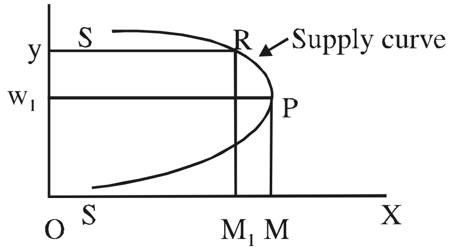

Units of labour

विलोम पूर्ति वक्र (Backward Supply Curve): वस्तुओं की कीमत में वृ(होने पर इसकी पूर्ति बढ़ाई जा सकती है, परन्तु श्रम के विषय में यह सत्य नहीं कि इनकी कीमत अर्थात् मजदूरी में वृ(होने पर इनकी पूर्ति बढ़े। यह सम्भव है कि श्रम की मजदूरी बढ़ने पर वह खाली समय (Leisure) को अध्कि पसन्द करने लगे और उनकी पूर्ति बढ़ने की जगह कम हो जाए। इसे एक पीछे झुकने वाले अर्थात् विलोम पूर्ति वक्र (Backward Supply Curve) द्वारा स्पषृ किया जा सकता है जो रेखाचित्र में दिखाया गया है। OW तक मजदूरी बढ़ने पर श्रमिकों की पूर्ति बढ़ती है। मजदूरी OW, हो

जाने की पूर्ति बढ़ने की जगह OM से कम हो कर OM रह जाती है। इसका अर्थ है कि OW के पश्चात् मजदूरी बढ़ने पर श्रमिक आराम (Leisure) को अध्कि पसन्द करने लगे हैं। अर्थात् श्रम की पूर्ति केवल आर्थिक तत्वों पर ही निर्भर नहीं करती बल्कि इसके निर्धरण करने में अनार्थिक तत्व भी इसमें महत्त्वपूर्ण होते हैं।

मजदूरी सम्बन्धी धरणाएँ न्यूनतम, उचित तथा निर्वाह मजदूरी
(Wage Concepts-Minimum, Fair and Living Wages)

भारत में स्वतन्त्रता के बाद, विशेषरूप से 1948 के बाद मजदूरी के सम्बन्ध में कुछ नवीन शब्दों (Terms) का प्रयोग किया गया। वे इस प्रकार हैं।

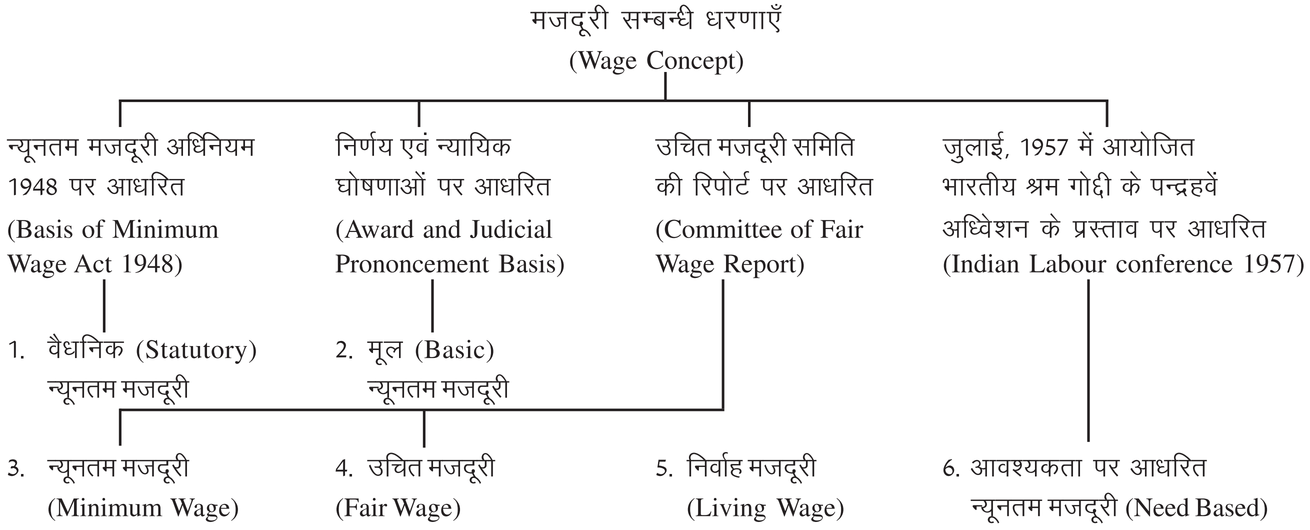

उपरोक्त चित्र में मजदूरी समबन्धी धरणाएँ (Concepts) निम्नलिखित हैं।

1. वैधनिक न्यूनतक मजदूरी
2. मूल (Basic) न्यूनतम मजदूरी
3. न्यूनतम मजदूरी
4. उचित मजदूरी
5. निर्वाह मजदूरी
6. आवश्यकता पर आधरित न्यूनतम मजदूरी

उपरोक्त मजदूरी धरणाओं (Concepts) का वर्णन निम्नलिखित है।

1. **वैधनिक न्यूनतम मजदूरी (Statutory Minimum Wages):** न्यूनतम मजदूरी का आशय मजदूरी की उस कम–से–कम राशि से है जो कि न्यूनतम मजदूरी अधिनियम, 1948 के अनुसार श्रमिक को अवश्य दी जानी चाहिए।
2. **मूल न्यूनतम मजदूरी (Bare or Basic Minimum Wage):** यह न्यूनतम मजदूरी न्यायिक घोषणाओं (Judicial Pronouncement), निर्णयों (Awards), औद्योगिक न्यायाध्किरण (Industrial Tribunals) तथा श्रम न्यायालय (Labour Court) के द्वारा निर्धरित की जाती है। यह न्यूनतम मजदूरी की राशि सेवायोजकों को अनिवार्य रूप से देनी होगी।
3. **न्यूनतम मजदूरी (Minimum Wages):** सर्वप्रथम यह जानना आवश्यक है कि न्यूनतम मजदूरी से अभिप्राय मजदूरी की किस दर से है? न्यूनतम मजदूरी के विषय में विभिन्न विद्वानों के भिन्न–भिन्न मत हैं। नियोक्ताओं के अनुसार–न्यूनतम मजदूरी की वह दर है जिससे श्रमिक अपनी तथा अपने परिवार की नग्न आवश्यक शारीरिक आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकता हो (A minimum wage is that wage which is sufficient to cover the bare physical needs of

a worker and his family)। परन्तु यह परिभाषा अध्कि संकुचित है क्योंकि नग्न शारीरिक आवश्यकताओं का आशय, उनका माप स्प५ नहीं है। इसके अलावा श्रमिक को कम से कम इतनी मजदूरी तो दी जानी चाहिये जिससे श्रमिक जीवन की आवश्यकताओं के अतिरिक्त अपनी कार्यकुशलता को भी बनाये रखा जा सके।

उचित मजदूरी समिति

(Committee on Fair Wages)

के अनुसार—फ्भारत में रा५्रीय आय का स्तर वर्तमान स्थिति में इनता कम है कि साधरणतया यह माना जाता है कि रा५ किसी कानून के द्वारा एक ऐसी न्यूनतम मजदूरी निर्धरित करने का भार नहीं उठा सकता है जो निर्वाह मजदूरी (Living Wages) की धरणा के बराबर हो न्यूनतम मजदूरी न केवल लीवन की अनिवार्य आवश्यकताओं के लिये अपितु श्रमिकों की कार्य कुशलता को बनाये रखने के लिये भी आवश्यक है। इस प्रकार न्यूनतम मजदूरी के अन्तर्गत के शिक्षा, चिकित्सा से सम्बन्ध्ति आवश्यकताओं एवं सुविधओं के लिये भी व्यवस्था करना आवश्यक है

इस प्रकार न्यूनतक मजदूरी में श्रमिक के पालन–पोषण की ही व्यवस्था नहीं है अपितु श्रमिकों को आराम सम्बन्धी सुविधएँ भी जुटाना है।

श्रम (Labour) उत्पादन का सक्रिय तथा महत्त्वपूर्ण साध्न है। इसलिये यह आवश्यक है कि श्रमिकों को कम से कम उतनी मजदूरी अवश्य दी जानी चाहिए जिससे श्रमिक न केवल अपना जीवन–निर्वाह कर सके अपितु अपनी कार्यक्षमता भी बनाये रखे तथा जीवन–स्तर को भी उँफचा उठा सके। श्रमिकों में सौदा करने की शक्ति (Bargaining Power) बहुत कम होती है इसलिये श्रमिक अपनी नियोक्ताओं से स्वयं तो अपनी सौदा करने की शक्ति द्वारा अपनी मजदूरी प्राप्त नहीं कर सकते इसलिये मजदूरी की एक ऐसी न्यूनतम सीमा निर्धरित करने की आवश्यकता होती है जिससे कम न तो कोई भी नियोक्ता मजदूरी देगा और न ही कोई कर्मचारी मजदूरी स्वीकार करेगा। जब मजदूरी की ऐसी कोई न्यूनतम सीमा किसी अधिनियम द्वारा निर्धरित कर दी जाती है तो ऐसी मजदूरी को न्यूनतम मजदूरी कहते हैं। दूसरे शब्दों में न्यूनतम मजदूरी से आशय मजदूरी की उस कम से कम राशि से है जो कि वैधनिक दृ५्किोण से श्रमिक को अवश्य दी जानी चाहिए।

न्यूनतम मजदूरी क्या हो? यह एक विवादग्रस्त विषय है क्योंकि यह प्रत्येक देश की आर्थिक, सामाजिक तथा राजनीतिक दशाओं के उफपर निर्भर करता है। इसलिए यह एक आपेक्षिक शब्द है परन्तु किसी भी देश की सभी परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए मजदूरी की राशि इतनी अवश्य होनी चाहिए जिससे श्रमिक अपनी कार्यक्षमता तथा जीवन–स्तर को बनाए रख सके। इससे स्प५ है कि न्यूनतम मजदूरी जीवन–निर्वाह मजदूरी (Living Wages) से अध्कि होनी चाहिए, परन्तु यह आवश्यक नहीं कि उचित मजदूरी (Fair Wages) के बराबर हो। उचित मजदूरी प्रायः न्यूनतम मजदूरी से अध्कि होती है। इस प्रकार न्यूनतम मजदूरी वह कम से कम मजदूरी है जो श्रमिकों के जीवन–स्तर तथा कार्यक्षमता के लिए अति आवश्यक है।

एक हजार अथवा अध्कि श्रमिक होने पर न्यूनतम मजदूरी का निर्धरण करना : किसी ऐसे अनुसूचित रोजगार के लिए, जिसमें परे राज्य में कुल मिलाकर 1000 या अध्कि श्रमिक कार्य करते हों, उपयुक्त सरकार न्यूनतम मजदूरी की दरें निर्धरित करेगी।

पुनर्विचार करना : उपयुक्त सरकार इस प्रकार निर्धरित न्यूनतम मजदूरी पर समय–समय पर पुनर्विचार (Review) करेगी। पुनर्विचार के मध्यान्तर (Intervals) 5 वर्ष से अध्कि नहीं होगे। पुनर्विचार करने पर यदि आवश्यक समझे तो उपयुक्त सरकार न्यूनतम मजदूरी दरों में संशोध्न (Revision) करेगी।

विभिन्न प्रकार से मजदूरी की न्यूनम दरें निर्धरित करना : उपयुक्त सरकार निम्न प्रकार से मजदूरी की न्यूनतम दरें निर्धरित कर सकती है।

1. समायानुसार कार्य की न्यूनतम मजदूरी दर, जिसको फ्न्यूनतम समय दर कहा जायेगा।

2. कार्यानुसार मजदूरी की न्यूनतम दर, जिसको फ्कार्यानुसार न्यूनतम दरय् कहा जायेगा।
3. उन श्रमिकों के लिए जो कार्यानुसार मजदूरी पर लगाये गये हैं, पारिश्रमिक की एक न्यूनतम दर का निर्धरण समयानुसार कार्य के आधर पर करना जिसे फ्संरक्षित समय दरय् या फ्गारण्टी समयय् (Graranteed Time Rate) कहा जायेगा।
4. अध्कि समय काम करने के सम्बन्ध में एक न्यूनतम दर का निर्धरण करना ;चाहे वह समय दर अथवा कार्यानुसार दर होद्ध जिसे फ्अध्कि समय काम की दीय् (Overtime Rate) कहा जायेगा।

फ्न्यूनतम मजदूरी, उचित मजदूरी एवं निर्वाह मजदूरी की धरणाएँ उचित मजदूरी की समिति (Committee on fair wages) की रिपोर्ट (1948) पर आधरित है।य् समिति के अनुसार 'न्यूनतम मजदूरी' उचित मजदूरी की न्यूनतम सीमा (Lower Limit) है तथा 'उचित मजदूरी' उच्चस्तर (Higher Level) होता है जबकि उचित मजदूरी से भी उच्चतम स्तर (Highset Level) निर्वाह मजदूरी (Living Wages) का होता है। ये तीनों मजदूरी के स्तर आर्थिक विकास (Economic development) के अनुसार होते रहेंगे। हन तीनों प्रकार की मजदूरियों का निम्न चित्र के द्वारा स्पष्टीकरण किया गया है।

निर्वाह मजदूरी ⟶ उच्चतम स्तर
(Living Wages) ⟶ (Highest Level)
↓ ↓
उचित मजदूरी ⟶ उच्च स्तर
(Fair Wages) ⟶ (Higher Level)
↓ ↓
न्यूनतम मजदूरी ⟶ न्यूनतम सीमा/स्तर
(Minimum Wages) ⟶ (Lower Level)

न्यूनतम मजदूरी के निर्धरण में कठिनाई

न्यूनतम मजदूरी का निर्धरण करना बहुत कठिन कार्य (Job) है क्योंकि एक स्थान से दूसरे स्थान, एक उद्योग से दूसरे उद्योग, एक समय से दूसरे समयः यहाँ तक कि एक श्रमिक और दूसरे श्रमिक तथा स्त्री श्रमिक तथा पुरुष की कार्य करने की दशाएं समान नहीं है। इसके अतिरिक्त न्यूनतम मजदूरी की दर निर्धरित करते समय श्रमिकों के किस औसत परिवार को आधर बनाया जाये? इन प्रश्नों का उत्तर कौन देगा? इन प्रश्नों का उत्तर देना बहुत कठिन है जबकि तेजी से बढ़ती हुई मूल्य वृ(ने रहन–सहन के खर्चो को बहुत बढ़ा दिया है।

उचित मजदूरी समिति ने 'निर्वाह गुजारा से अध्कि स्तर' की न्यूनतम मजदूरी की दर के निर्धरण का आधर (Base) स्वीकार किया है। निर्वाह स्तर से आशय श्रमिकों की आवश्यकताओं की पूर्ति, उनके औसत स्वास्थ्य एवं कार्यकुशलता की रक्षा तथा उसके परिवार के औसत आकार के भरण–पोषण से है। श्रमिक के औसत परिवार के अन्तर्गत स्वयं श्रमिक, अपनी पत्नी और तीन अवयस्क बच्चे आते हैं।

रहन–सहन लागतों (Cost of Living) के निर्धरण के लिये समिति ने सुझाव दिया है कि समय–समय पर रहन–सहन लागत सचूकांक (Cost of Living Index) बनाने चाहिए तथा इनके अनुसार न्यूनतम मजदूरी में संशोध्न करते रहना चाहिये।

न्यूनतम मजदूरी का संक्षिप्त इतिहास
(Brief History of Minimum Wages)

भारत में न्यूनतम मजदूरी के निर्धरण की सिपफारिश सर्वप्रथम राजकीय श्रम आयोग (Royal Commission on Labour) ने की थी। 1928 में अन्तर्राष्ट्रीय श्रम सम्मेलन (International Labour Conference) में यह प्रस्ताव स्वीकार किया गया था कि सभी सदस्य राष्ट्र न्यूनतम मजदूरी निर्धरण की दिशा में आवश्यक कदम उठाएँ। 1944 में रेगे समिति ने न्यूनतम मजदूरी निर्धरण के लिये सिपफारिश की थी। परन्तु भारत में इस दिशा में कोई सपफल प्रयास नहीं किया गया। भारत में सर्वप्रथम महत्त्वपूर्ण कदम 1945 में उठाया गया जिसके पफलस्वरूप 1946 में एक बिल तैयार किया गया जो संसद द्वारा न्यूनतम मजदूरी अधिनियम, 1948 में रूप में पास होकर 15 मार्च, 1948 से लागू किया गया। इस अधिनियम द्वारा केन्द्रीय तथा रात्य सरकारों को उद्योगों में कार्यरत श्रमिकों की न्यूनतम मजदूरी की दर निर्धरित करने का अधिकार दिया गया है।

न्यूनतम मजदूरी अधिनियम 1948
(The Minimum Wages Act, 1948)

उद्देश्य एवं महत्त्वः

श्रम, उत्पादन का एक महत्त्वपूर्ण एवं सक्रिय साध्न है। बिना श्रम के उत्पादन सम्भव नहीं। इसलिए उत्पादन की मात्रा श्रम की कार्यक्षमता निर्भर करती है। श्रमिक की कार्यक्षमता तथा उसका जीवन स्तर मजदूरी पर निर्भर करता है। श्रमिकों की कार्य क्षमता के लिये यह नितांत आवश्यक है कि उनको कम से कम उतनी मजदूरी दी जाए जिससे कि वे अपना जीवन–निर्वाह कर सकें तथा अपने जीवन–स्तर को भी उफँचा उठा सकें। यदि श्रमिकों की मजदूरी, उनकी अनुबन्ध करने की शक्ति (Bargaining Power) पर ही छोड़ दी जाये तो उन्हें अपनी मजदूरी के लिए सर्वदा नियोक्ताओं की दया पर निर्भर करना पड़ेगा। नियोक्ता सर्वदा श्रमिकों का शोषण करते हैं क्योंकि श्रमिकों में अनुबन्ध करने की शक्ति बहुत कमजोर होती है। नियोक्ताओं द्वारा श्रमिकों का शोषण को रोकने तथा उनकी कार्यक्षमता को बढ़ाने अथवा बनाए रखने के उद्देश्य से ही यह अधिनियम पास किया गया है हमारे देश के विधन (Constitution of India) के अनुच्छेद 43 (Article 43) में भी इस बात को स्वीकार किया गया है कि जीवन निर्वाह के अतिरिक्त श्रमिकों को अच्छे जीवन–स्तर के साध्न प्रदान किए जाये। अधिनियम के निम्नलिखित उद्देश्य हैं।

1. **शोषण को रोकना :** श्रमिकों की अनुबन्ध शक्ति (Bargaining Power) कम होती है। वे अपनी सेवाओं का उचित पारिश्रमिक नियोक्ता से अनुबन्ध करते समय नहीं माँग सकते। इसलिए नियोक्ता श्रमिकों की मजबूरी का पफायदा उठाकर उनका शोषण कर सकते हैं। श्रमिकों के इस प्रकार के शोषण को एक न्यूनतम मजदूरी निर्धरित करके ही रोका जा सकता है क्योंकि न्यूनतम मजदूरी, मजदूरी की वह न्यूनतय सीमा होती है, जिससे कम कोई भी नियोक्ता मजदूरी का भुगतान नहीं कर सकता और न ही कोई श्रमिक उससे कम मजदूरी स्वीकार कर सकता है।
2. **कार्य–क्षमता में वृ(ि :** श्रमिकों की कार्यक्षमता उनको दी जाने वाली मजदूरी पर निर्भर करती है। श्रमिकों को यदि अच्छी मजदूरी दी जाएगी तो ये अच्छा जीवन स्तर अपना सकेंगे और उनकी कार्यक्षमता बढ़ेगी। इसलिए श्रमिकों की कार्यक्षमता को बढ़ाना भी न्यूनतम मजदूरी का उद्देश्य है।
3. **जीवन–स्तर में सुधर :** श्रम कल्याण के लिए न केवल यही आवश्यक है कि श्रमिक जीवन भर अपनी निर्वाह ही करते रहें बल्कि जीवन–स्तर के पर्याप्त साध्न भी उपलब्ध होने चाहिए। जीवन स्तर तभी उफँचा उठ सकता है जबकि उन्हें एक ऐसी दर से कम मजदूरी न दी जाये तो कि जीवन–स्तर को उठाने व कायम रखने के लिए अति आवश्यक है।
4. **श्रम कल्याण :** श्रमिकों की कार्यक्षमता तथा जीवन–स्तर के साथ–साथ उनके सामान्य हितों की रक्षा भी आवश्यक हैं। किसी भी व्यक्ति के सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक तथा पारिवारिक उत्थान के लिए उनकी आर्थिक दशा का अच्छा होना अति आवश्यक है। आर्थिक दशा तभी अच्छी हो सकती है जब उन्हें अच्छी मजदूरी मिलती हो।
5. **उत्पादन में वृ(ि:** यदि वास्तव में गहराई एवं विशाल हृदय से सोचा जाये तो श्रमिक तथा नियोक्ताओं के हित एक–दूसरे के विरोधी नहीं होते बल्कि एक–दूसरे के उफपर निर्भर करते हैं। जहाँ प्रस्तुत अधिनियम का उद्देश्य श्रमिकों के हितों की रक्षा करना है वहाँ साथ ही साथ नियोक्ताओं को भी प्रोत्साहित करना है। उत्पादन की मात्रा श्रमिकों की कार्यक्षमता पर निर्भर होती है।

उचित मजदूरी
(Fair Wages)

उचित मजदूरी का अर्थ (Meaning) : उचित मजदूरी (Fair Wages) के सम्बन्ध में एक सर्वमान्य परिभाषा देना कठिन है। इसके सम्बन्ध में विभिन्न विद्वानों के मतों का उल्लेख करके एक सामान्य परिभाषा को रूप दिया जा सकता हैं। मार्शल (Marshall) का मत है कि कुछ व्यवसायों में जो कार्य करने पड़ते हैं वे एक समान ही अरूचि वाले और समान कठिनाइयों वाले होते हैं तथा उनको करने के लिये समान लागत के प्रशिक्षण की आवश्यकता पड़ती है। ऐसे व्यवसायों में औसतन रूप से जो मजदूरी दी जाती है उस मजदूरी के स्तर पर हर जो मजदूरी निर्धरित की जायेगी वह उचित मजदूरी महलायेगी।

पीगू (Pigou) ने उचित मजदूरी की परिभाषा दो दृष्किोणों से दी है—संकुचित और विस्तृत। पीगू के अनुसार एक ही प्रकार के श्रमिकों को एक ही प्रकार के व्यवसाय में तथा आस—पास के क्षेत्रों में मजदूरी की जो चालू दर दी जाती है उसी चालू दर (Current Rate) के बराबर ही मजदूरी की दर होने पर उसे उचित कहा जायेगा। यह परिभाषा संकुचित है। इसके विपरित सम्पूर्ण देश में अध्किाशं व्यवसायों के समान कार्य के लिए जब समान मजदूरी की दर प्रचलित होती है पीगू विस्तुत दृष्किोण से उस दर को उचित मानते हैं।

"A wage rate in this (Pigou's) opinion, is fair in the narrower sense when it is equal to the rate current for similar workmen in the same trade and neighbourhood and fair in the wider sense when it is equal to the predominent rate for similar work throughout the country and in the generality of trades." Report of the Committee on fair wages, 1954.

फऑपफसोशल साइन्सेजय पुस्तक के अनुसार श्रमिक को समान अरूचिकर, कठोर तथा कुशल—कार्य के लिए जो मजदूरी मिलती है वह उचित मजदूरी है। परन्तु यह परिभाषा अध्कि उपयुक्त नहीं है। उन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (I.L.O.) के अनुसार फन्यूनतम मजदूरी तय करने के लिये उस उद्योग को आदर्श मानकर चलना चाहिये जिसमें श्रमिक उचित रूप से संगठित हो तथा जिन्होंने सामूहिक समझौते की प(ति को प्रभावशाली बना लिया है। यदि ऐसा आदर्श नहीं है तो देश में प्रचलित मजदूरी की दरों को या विशेष स्थान की दरों को कम में लाया जाना चाहिये।य

इस प्रकार उचित मजदूरी के सम्बन्ध् में कोई भी एक सर्वमान्य परिभाषा नहीं है। उपरोक्त परिभाषाओं के आधर पर एक उचित परिभाषा दे सकते हैं—'उचित मजदूरी (Fair Wage) वह मजदूरी है जिससे श्रमिक के जीवन की न्यूनतम आवश्यकताओं की पूर्ति हो सके और सामाजिक स्तर के अनुसार श्रमिक अपना रहन—सहन का स्तर 'स्थायी रख कर जीवन को सुखी बना सके।'

उचित मजदूरी समिति (Committee on Fair Wages) के अनुसार—फउचित मजदूरी न्यूनतम मजदूरी से उफपर तथा निर्वाह मजदूरी (Living Wages) से नीचे होती हैय (It is the wage which is above the minimum wage but below the living wage)। समिति ने निश्चय किया कि जब न्यूनतम मजदूरी, उचित मजदूरी की निचली सीमा (Lower Limit) है इसकी उफपरी सीमा (Upper limit) उद्योग की भुगतान क्षमता (Capacity of the Industry to Pay) द्वारा निर्धरित होनी चाहिए।य यानी उचित मजदूरी (Fair Wage) उद्योग की भुगतान क्षमता के आधर पर निर्धरित होती है।

अब समस्या यह आती है कि उद्योग की भुगतान क्षमता को किस प्रकार मालूम किया जाये?

इसके लिए समिति ने सुझाव दिया है कि फहमारा लक्ष्य केवल मजदूरी निर्धरित करने का नहीं है अपितु हमें यह भी देखना होगा कि वर्तमान स्तर पर रोजगार स्थिर ही न रहे सम्भव हो कि रोजगार बढ़ जाये। इसलिए मजदूरी का स्तर ऐसा होना चाहिए जो उद्योग को कुशलता के साथ उत्पादन चालू रखनें में सहायता दे। अतः मजदूरी बोर्ड के द्वारा उद्योग की उत्पादन क्षमता का माप (Measurement) इस विचार के सन्दर्भ (Reference) में ही करना चाहियेय आगे समिति ने कहा है कि फउचित मजदूरी श्रमिक की उत्पादकता (Productivity) से जुड़ी हुई होनी चाहिये।य

उचित मजदूरी का महत्त्व (Importance) यदि किसी देश में श्रमिकों को न्यूनतम मजदूरी प्राप्त हो रही है तो उनके जीवन को पूरी तरह सुखी तथा आदर्श नहीं कहा जा सकता क्योंकि श्रमिकों को अपने बच्चों की शिक्षा और स्वास्थ्य सुरक्षा से वंचित रहना पड़ता है तथा वे अपनी कार्यक्षमता को भी बानये नहीं रख सकते। श्रमिकों के जीवन को सुखी बनाने के लिए यह आवश्यक है कि उनको इतनी मजदूरी दी जाये जिससे वे अपने तथा अपने परिवार की आवश्यकताओं को पूरा करने के बाद बच्चों तथा अपने स्थास्थ्य व कार्यक्षमता की भी रक्षा कर सकें। यह तभी सम्भव होगा जब श्रमिक को उचित मजदूरी दी जायेगी। इस प्रकार 'उचित मजदूरी' की उपेक्षा नहीं की जा सकती। आज विश्व 'उचित मजदूरी' के महत्त्व को स्वीकार कर चुका है और प्रत्येक देश 'उचित मजदूरी' के निर्धरण की ओर प्रयत्नशील है।

उचित मजदूरी की व्यावहारिकाता में कठिनाइयाँ—उचित मजदूरी के सि(ान्त को व्यावहारिक रूप प्रदान करने में भारत को अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। सर्वप्रथम भारत औद्योगिक दृष्टि से एक अविकसित देश है। इस कारण भारतीय उद्योगों की भुगतान क्षमता के कम होने के कारण वे श्रमिकों को उचित मजदूरी नहीं दे पाते। इसके अतिरिक्त भारतीय श्रमिक

अशिक्षित भी हैं जो अपने अधिकारों की रक्षार्थ आवाज तक नहीं उठाते। देश में श्रमिकों की संख्या माँग की अपेक्षा कहीं अधिक है जिससे बेकारी की स्थिति चारों ओर देखने को मिलती है। सेवायोजक श्रमिकों का शोषण करने में सपफल हो जाता है और श्रमिक सहर्ष कम मजदूरी लेने को तैयार हो जाता है। अतः जब तक बेकारी की समस्या का हल नहीं होगा तब तक 'उचित मजदूरी' की व्यवस्था में बाध पड़ेगी।

निर्वाह मजदूरी
(The Living Wages)

न्यूनतम मजदूरी समिति के अनुसार फ्हमारी मजदूरी नीति का अन्तिम लक्ष्य निर्वाह मजदूरी (Living Wage) होना चाहिए।य आगे समिति ने कहा है फ्निर्वाह मजदूरी वही होगी जो पुरुष श्रमिक को, उसके स्वयं के लिये तथा उसके परिवार के लिये न केवल भोजन, कपड़ा एवं रहने की न्यूतनम मात्रा ही प्रदान करे अपितु श्रमिक को बचतों से आराम की एक मात्रा, जिसमें बच्चों की शिक्षा, खराब स्वास्थ्य के प्रति सुरक्षा, आवश्यक सामाजिक आवश्यकताओं (Social Needs) को पूरा करने और वु(ावस्था (Old Age) के साथ–साथ अन्य विशेष कठिनाइयों के लिए किसी सीमा तब बीमा की सुविध भी दे।य

निर्वाह मजदूरी का निर्धरण राष्ट्रीय कार्य और उद्योग की भुगतान क्षमता को ध्यान में रखकर किया जाना चाहिये।

न्यूनतम मजदूरी आवश्यकता पर आधरित
(The Need & Based Minimum Wages)

जुलाई 1957 में भारतीय श्रमिकों के नई दिल्ली मे आयोजित 15वें अध्विेशन में एक प्रस्ताव पास हुआ (The Indian Labour Conference at its 15th session held at New Delhi in July 1957 suggested that minimum wage fixation should be Need-based) जिसमें कहा गया था कि न्यूनतम मजदूरी आवश्यकता पर आधरित होनर चाहिए यानि फ्न्यूनतम मजदूरी की दर ऐसी आवश्य हो जिससे श्रमिक की आवश्यकताओं की पूर्ति हो सके। गोद्यी ने न्यूनतम मजदूरी समितियों, मजदूरी बोर्डो और न्यायिक निर्णायकों (Adjudicaters) आदि तथा मजदूरी का निर्धरण करने वालों के लिए निम्नलिखित नियम का मानक (Norms) बनाये हैं।

1. एक श्रमिक परिवार के अन्तर्गत प्रत्येक कमाने के वाले तीन उपभोग इकाइयों को सम्मिलित करना चाहिए ;स्त्री, बच्चे और किशोरों की कमाई हुई मजदूरी को सम्मिलित नहीं करना चाहियेद्ध।
2. न्यूनतम भोतन की आवश्यकताबों की गणना डॉ॰ आक्रोयड (Dr. Alcroyed) द्वारा औसत भारतीय वयस्क के लिए सुझाये गये 2700 कैलोरीज सम्बन्धी शु(अन्तर्ग्रहण के आधर पर करनी चाहिए।
3. वस्त्र सम्बन्धी आवश्यकताओं का अनुमान प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष 18 गज कपड़े के उपभोग के आधर पर होना चाहिए जिसमें चार व्यक्तियों के औसत श्रमिक परिवार को कुल 72 गज कपड़ा प्रतिवर्ष प्राप्त होगा।
4. मकानों के सम्बन्ध में सरकारी औद्योगिक आवास योजना में जिस न्यूनतम जमीन के क्षेत्रपफल की व्यवस्था की गई है उसके किराये के बराबर ध्नराशि को न्यूनतम मजदूरी निर्धरित करते समय ध्यान में रखना चाहिये।
5. ईध्न, प्रकाश तथा अन्य प्रकार के खर्चे कुल न्यूनतम मजदूरी के 20÷ के बराबर होने चाहिएँ।

भारतीय श्रमिक गोद्यी में प्रस्ताव में जो उपरोक्त मानक (Norms) स्थातिप किये गए हैं उन्हें सम्बन्ध्ति एजेन्सी न्यूनतम मजदूरी को निर्धरित करते समय ध्यान में रखती है।

मजदूरी नियमन एवं सरकार
(Wage Regulations and Government)

वर्तमान स्थिति
(Present Position)

मजदूरी का नियमन : मजदूरी का भुगतान समय–समय पर संशोध्ति मजदूरी भुगतान अधिनियम, 1936 तथा न्यूनतम मजदूरी अधिनियम, 1948 द्वारा नियन्त्रित होता है। मजदूरी भुगतान अधिनियम, 1936 तथा न्यूनतम मजदूरी अधिनियम, 1948 सिक्किम

के अतिरिक्त सारे देश पर लागू होते हैं। मजदूरी भुगतान अधिनियम, 1936ऋ पफैक्ट्री अधिनियम 1948 के तहत पफैक्ट्री घोषित किये गये संस्थानों सहित किसी भी पफैक्ट्री, रेलवे एवं औद्योगिक संस्थानों, जैसे ट्राम–वे या मोटर परिवहन सेवा, बन्दरगाह, अन्तर्देशीय पोत, खान, खदान या तेल क्षेत्र, बागान, कार्यशाला ;जहाँ वस्तुएँ उत्पादित होती हैंद्ध तथा भवनों, सड़कों, पुलों और नहरों आदि के निर्माण, विकास तथा अनुरक्षण कार्य करने वाले संस्थानों में नियुक्त व्यक्तियों पर लागू होता है। ये अधिनियम केवल उन पर लागू होते हैं, जो प्रति–माह औसतन 1,600 रुपसे से कम मजदूरी प्रापत करते हों।

श्रमिकों द्वारा कमाई गई मजदूरी को मालिक रोक नहीं सकते, न ही वे अनध्किृत रूप से कटौतियाँ कर सकते हैं। श्रमिक की मजदूरी का भुगतान निश्चित दिवस के पूर्व हो जाना चाहिए। केवल उन्हीं कार्यों या अवहेलनाओं के लिए जुर्माने किये जाते हैं, जो सम्ब(सरकार द्वारा मान्य हैं। कुल जुर्माने की राशि काम की अवध्ि में दी जाने वाली मजदूरी के तीन प्रतिशत से अध्कि नहीं हो सकती। यदि मजदूरी की अदायगी देर से की जाती है या गलत कटौतियाँ की जाती हैं, तो मजदूर उनके लिए अपना दावा प्रस्तुत कर सकते हैं। निर्धरित रोजगार में समयोपरि ;ओवरटाइमद्ध भुगतान न्यूनतम मजदूरी अधिनियम, 1948 के अनुसार किया जाता है।

न्यूनतम मजदूरी अधिनियमः न्यूनतम मजदूरी अधिनियम, 1948 के अन्तर्गत सरकार विशिप्ट ध्न्धें में कार्य कर रहे कमचारियों की न्यूनतम मजदूरी निश्चित कर सकती है। इस अधिनियम में उपयुक्त समय–अन्तराल के बाद, जो 5 वर्ष से अध्कि नहीं होना चाहिए, पूर्व निर्धरित न्यूनतम मजदूरी की समीक्षा एवं संशोध्न का प्रावधन है। जुलाई, 1980 में हुए श्रम मंत्रीयों के सम्मेलन में यह सिपफारिश की गई थी कि अध्कि से अध्कि दो वर्ष के अन्तराल पर, या उपभोक्ता मूल्य सूचकांक के 50 अंक बढ़ने पर, दोनों में से जो भी पहले हो, न्यूनतम वेतन में संशोध्न किया जाए।

स्त्री तथा पुरुष श्रमिक के लिए समान पारिश्रमिकः समान पारिश्रमिक अधिनियम, 1976 स्त्री तथा पुरुष श्रमिकों का ‘समान कार्य या समान स्वरूप के कार्य के लिए’ समान पारिश्रमिक और रोजगार के मामले में स्त्रियों के साथ किसी प्रकार के भेद–भाव के विरु(व्यवस्था करता है। अधिनियम के उपबन्ध् सभी प्रकार के रोजगारों पर लागू किए गए हैं। अधिनियम में सलाहकार समितियों के गठन की व्यवस्था है, जो स्त्रियों के रोजगार को अध्कि अवसर देने पर सलाह देगी। ऐसी समितियाँ केन्द्रीय सरकार के अधीन तथा अध्किांश राज्य सरकारों और केन्द्र शासित प्रदेशों में स्थापित कर दी गई हैं।

स्त्री श्रमिकः श्रम मत्रालय ने कई स्वैच्छिक संगठनों को वित्तीय सहायता दी है ताकि वे स्त्री श्रमिकों के लाभ के लिए परियोजनायें चालू करें।

श्रम मंत्रालय स्त्री श्रमिकों से सम्ब(श्रमिक कानूनों और कानूनी उपबन्धें की भी विवेचना कर रहा है, ताकि उनकी कमियों और त्रुटियों का पता लगाया जा सके और उन्हें दूर करने के लिए, यदि जरूरी हो तो, कानूनों में संशोध्न किया जा सके। समान पारिश्रमिक अधिनियम में संशोध्न की बात विचाराधीन है।

बन्ध्ुआ मजदूरः बन्ध्ुआ मजदूरी प्रथा ;उन्मूलनद्ध अधिनियम, 1976 के अन्तर्गत 25 अक्टूबर, 1975 से सारे देश में बन्ध्ुआ मजदूरी की प्रथा समाप्त कर दी गई। इस कानून के लागू होने पर सभी बन्ध्ुआ मजदूर हर तरह की बन्ध्ुआ मजदूरी के दायित्व से मुक्त हो गये और उनके कर्जों को मापफ कर दिया गया। मुक्त कराये गये बन्ध्ुआ मजदूरों का पुनर्वास 20 सूत्री कार्यक्रम का अंग है।

बन्ध्ुआ मजदूरी प्रथा उन्मूलन अधिनियम, 1976 के अन्तर्गत बन्ध्ुआ मजदूरों का पता लगानो, उन्हें मुक्ति दिलाने तथा उनका पुनर्वास करने की पूरी जिम्मेदारी राज्य सरकारों की है। 12 राज्यों में बंध्ुआ मजदूरी की प्रथा के प्रचलन की सूचना मिली है। ये राज्य हैं—आन्ध्र प्रदेश, बिहार, गुजरात, कर्नाटक, केरल, मध्य प्रदेश, महाराप्ट्र, उड़ीसा, राजस्थान, तमिलनाडु, उत्तर प्रेदश और हरियाणा। राज्य सरकारों से प्राप्त अद्यतन रिपोर्टों से पता चलता है कि जिन बंध्ुओं मजदूरों का पता चला, उनकी संख्या 2,205,923 थी और उनमें से 1,60,268 का पुनर्वास किया जा चुका था। बंध्ुआ मजदूरों का पता लगाने और पिफर उन्हें मुक्त कराने तथा पुनर्वास करने का काम निरन्तर चलने वाला काम है। इसलिए राज्य सरकारों से कहा गया है कि वे अपने राज्य में बंध्ुआ मजदूरों का पता लगाने के लिए समय–समय पर सर्वेक्षण करती रहे, और उन्हें जल्दी से मुक्त कराने तथा

उनका पुनर्वास करने के लिए आवश्यक कदम उठाती रहें, ताकि बंधुआ मजदूरों के पुनर्वास कार्यक्रम को समय–ब(कार्यक्रम बनाया जा सके। विभिन्न राज्यों में वार्षिक और त्रि–मासिक लक्ष्य निर्धरित किये जाते हैं। 1 पफरवरी, 1986 से प्रति बंधुआ मजदूर को दी जाने वाली राशि की अध्कितम सीमा 4,000 रुपये से बढ़ाकर 6,250 रुपये कर दी गई है। इसमें से आधी राशि केन्द्र सरकार द्वारा दी जाती है।

भारत के विभिन्न राज्यों तथा केन्द्र प्रशासित प्रदेशों में कारखाना मजदूरों की औसत वार्षिक आय ;कारखाना मजदूरों की प्रति व्यक्ति औसत वार्षिक आयद्ध

राज्य/केन्द्र शासित प्रदेश	1975	1976	1978	1979	1980	1981	1982
आंध्र प्रदेश	2,824	3,731	3,625	5,082	5,186	6,095	6,095
असम	2,627	3,504	4,673	4,723	4,494	5,899	3,999
बिहार	2,158	5,262	5,527	5,481	5,584	5,760	5,277
गुजरात	2,749	4,793	5,645	6,437	8,544	7,447	7,447
हरियाणा	3,371	4,931	5,664	6,268	6,401	7,696	7,554
हिमाचल प्रदेश	2,745	4,395	3,636	4,691	4,745	7,022	7,022
जम्मू और कश्मीर	2,843	2,087	3,400	3,186	4,069	5,080	5,157
कर्नाटक	2,893	3,042	उपलब्ध नहीं	4,936	4,903	7,545	7,545
केरल	2,947	5,253	4,936	5,696	7,146	6,948	8,192
मध्य प्रदेश	3,942	6,378	7,391	7,065	7,964	8,295	8,972
महाराष्ट्र	3,459	5,680	7,210	7,154	7,190	8,762	8,762
उड़ीसा	4,194	5,417	6,119	7,414	6,728	7,497	8,445
पंजाब	3,089	3,675	4,285	5,066	5,196	5,645	5,645
राजस्थान	3,325	4,954	5,811	6,382	6,698	7,493	7,493
तमिलनाडु	2,543	4,817	5,388	4,822	6,477	6,845	7,115
त्रिपुरा	2,453	2,251	3,630	5,007	7,937	7,937	7,937
उत्तर प्रदेश	3,054	4,486	5,418	5,763	6,376	6,376	6,376
पश्चिम बंगाल	3,966	5,840	6,970	7,282	7,977	8,149	9,208
अंडमान और निकोबार–							
द्वीप समूह	3,300	2,831	3,620	4,602	4,096	6,270	6,331
दिल्ली	3,239	5,092	5,528	5,491	6,228	6,035	10,106
गोवा, दमन तथा दीव	3,792	5,965	5,715	7,490	5,211	11,768	7,222
पांडिचेरी	2,615	4,879	5,473	5,983	8,066	8,694	5,628
सम्पूर्ण भारत	3,158	5,125	6,068	6,244	6,997	7,423	7,711

1. अस्थायी
2. उफपर की सारणी के आँकड़े 1976 तक 400 रु. प्रतिमाह से कम पाने वाले तथा 1976 से 1,000 रु. प्रतिमाह से कम पाने वाले मजदूरों के हैं।
3. इसमें रेलवे वर्कशाप, मौसमी उद्योगों/खाद्य पदार्थ, तम्बाकू, शराब और निर्माण आदि की पफैक्ट्री में काम करने वाले मजदूर शामिल नहीं है।, किन्तु प्रतिष्ठान के मजदूर इसमें शामिल हैं।

श्रमिकों की स्थिति ;लिंग और कार्य के आधर परद्ध

श्रमिकों तथा गेर–श्रमिक संख्या बंटवारा ;1981 की जनगणना लाख मेंद्ध

श्रेणी संख्या का	पुरूष		महिलाएं		योग	
	कुल पुरूष जनसंख्या	संख्या का प्रतिशत	कुल स्त्री जनसंख्या	संख्या का प्रतिशत	कुल जनसंख्या	प्रतिशत
श्रमिक जनसंख्या						
कुल ;क+खद्ध	1,810	52.65	636	19.77	2,446	36.77
;कद्ध कुल मुख्य श्रमिक	2,775	51.62	450	13.99	2,225	33.45
(i) कृषक	776	22.56	149	4.65	925	13.45
(ii) कृषक मजदूर	347	10.10	208	6.46	555	8.34
(iii) घरेलू उद्योग	56	1.64	21	0.44	77	1.16
(iv) अन्य श्रमिक	596	17.32	72	2.24	668	10.04
;खद्ध सीमान्त श्रमिक	35	1.03	186	5.77	221	3.32
;गद्ध कुल गैर–श्रमिक जनसंख्या	1,629	47.35	2,578	80.23	4,207	63.23
;घद्ध कुल जनसंख्या ;क+ख+गद्ध	3,439	100.00	3,214	100.00	6,653	100.00

मजदूरी भुगतान
(Wage Payment)

प्रबन्ध्क अध्कि कार्यकुशलता तथा उत्पादन चाहते हैं जो श्रमिकों तथा अन्य कमचारियों के सहयोग के बिना नहीं हो सकता। प्रत्येक श्रमिक अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये कार्य करता है तथा इनमें से अध्किांश आवश्यकताएँ वृत्ति (Wages) द्वारा पूर्ण होती हैं। साथ ही एक संस्था किस सीमा तक कार्यकुशल तथा योग्य कर्मचारियों की नियुक्ति कर सकती है तथा उन्हें संस्था में बनाये रख सकती है, यह बात उचित चुनाव तथा प्रशिक्षण पर निर्भर नहीं करती बल्कि इस बात पर आधरित है कि कहाँ तक योग्य एवं कार्यकुशल प्रार्थियों (Applicants) को संस्था में आने एवं बने रहने के लिये प्रेरित करती है। इस प्रेरणा के लिये अध्कि वेतन सबसे महत्त्वपूर्ण तथा प्रभावशाली घटक (Factor) है। विभिन्न देशों में समय–समय पर किये गये अध्ययन इस बात की पुष्टि करते हैं कि प्रार्थियों के लिए अध्कि वेतन प्रभावशाली आर्कषण रखता है। श्रम परिवर्तन के सम्बन्ध् में किये गये अध्ययन स्पष्ट करते हैं कि अध्किांश कर्मचारियों का कार्य छोड़ने का कारण उनका वेतन से असन्तुष्ट रहना था। इसी तरह एक संस्था की औद्योगिक शांति को प्रभावित करने वाला सबसे अध्कि महत्त्वपूर्ण घटक वेतन होता है जो वे संस्था से अपने कार्य के लिए प्राप्त करते हैं। यद्यपि विभिन्न देशों में किये गये अध्ययन स्पष्ट करते हैं कि कर्मचारी कार्य की सुरक्षा तथा पदोन्नति के अवसर को वेतन की वृ(ि से भी अध्कि महत्त्व देते हैं पिफर भी यह सत्य है कि श्रम–संघों द्वारा की जाने वाली माँगों में वेतन से सम्बन्ध्ति माँगे सबसे अध्कि होती हैं। साथ ही औद्योगिक संस्थाओं में होने वाले संघर्षों के पीछे अपर्याप्त वेतन का ही कारण प्रायः दिया गया है। एक अनुमान के अनुसार किसी भी संस्था में होने वाले औद्योगिक संघर्षों में से 80÷ लगभग वेतन से सम्बन्ध्ति होते हैं। यह तथ्य संस्था में उचित वेतन निर्धरण के महत्त्व को स्पष्ट करने के साथ–साथ इस बात पर जोर देते हैं कि प्रबन्ध्कों को वेतन निर्धरण की ओर पर्याप्त ध्यान देना चाहिए तथा वेतन को ऐसे ढंग से विकसित करना चाहिए जो उद्योग में शान्तिमय वातावरण तैयार कर, उत्पादन में वृ(ि कर, उद्योग से सम्बन्ध्ति सभी समूहों को लाभ पहुँचायें।

मजदूरी निर्धरण के लिए आवश्यक कदम
(Steps for Wage Determination)

एक कर्मचारी प्रबन्ध्क को मजदूरी का निर्धरण करने में क्रमशः निम्नलिखित कदक उठाने होते हैं।–

1. **कार्य विश्लेषण (Job Analysis):** कर्मचारी विभाग का प्रथम कार्य प्रत्येक कार्य को निर्धरित करना होता है जिससे यह पता लग जायेगा कि किन–किन क्रियाओं को किया जाये तथा उनकी क्या प्रकृति होगी? डेल योडर ने इसे इस प्रकार कहा है, फ्यह एक ऐसी विध् िहै जिसके द्वारा प्रत्येक कार्य से सम्बन्ध्ति तथ्यों को व्यवस्थित ढंग से खोजा जाता है।ग्

   इसके द्वारा यह निश्चित किया जाता है कि कौन से कार्य के लिए कौन–कौन–सी व्यक्तिगत योग्यताओं की आवश्यकता होगी। कार्य विश्लेषण का उद्देश्य उस विशेष कार्य की अपेक्षा, विशेष प्रशिक्षण प्रवृत्ति एवं जोखिम आदि का पता लगाना होता है। इससे संगठन को श्रम सम्बन्धी आवश्यकताओं की निशिचित सूचना मिलती रहती है। यह औद्योगिक प्रशासन की जटिल क्रियाओं, समय एवं गति अध्ययन आदि का प्रारम्भ करने का प्रथम चरण है। कार्य विश्लेषण के द्वारा मजदूरी का सही निर्धरण किया जाता है।

   (i) कार्य के लगे व्यक्ति को कितना शारीरिक व मानसिक परिश्रम करना होगा।

   (ii) कर्मचारी में विशेष योग्यताओं का होना (Qualification of Employees)

   (iii) कर्मचारी का अनुभव (Employees Experience)

   (iv) कार्य की शर्तें (Working Conditions)

   (v) काम करते समय जोखिम की सीमा (Degree of Risk)

2. **कार्य की व्याख्या (Job-Description):** यहाँ जो कार्य–विश्लेषण के द्वारा तथ्य इकट्ठे किये गये हैं उन्हें वैज्ञानिक ढंग से प्रस्तुत करने के कार्य को व्याख्या कहते हैं। **मौरिस बी॰ कमिंग** (Maurice B. Cumming) के शब्दों में फ्कार्य व्याख्या, कार्य विशिष्ट के उद्देश्य, क्षेत्र, कर्त्तव्य एवं उत्तरदायित्वों की व्यापक व्याख्या है।ग्

   (i) कार्य का विस्तृत विवरण ;कर्त्तव्य एवं दायित्वों सहितद्ध,

   (ii) कार्य विभाजन ;निश्चित क्रम तथा सावधनियाँद्ध

   (iii) मजदूरी की विध् िएवं राशि,

   (iv) अपेक्षित (Required) शारीरिक एवं मानसिक योग्यतायें,

   (v) अपेक्षित प्रशिक्षण तथा अनुभव,

   (vi) काम करने की दशाएँ एवं जोखिम, तथा

   (v) कार्य–यन्त्र, सामग्री की प्राप्ति।

   कार्य व्याख्या का उद्देश्य उसकी प्रकृति, अपेक्षाओं से सम्बन्ध्ति व्यक्तियों को अवगत कराना होता है।

3. **कार्य मूल्यांकन (Job Evaluation):** कार्य मूल्यांकन ऐसे व्यवस्थित तरीके से किया जाता है जिसमें किसी उपक्रम में अन्य सम्बन्ध्ति कृत्यों की तुलना में किसी कृत्य का मूल्यांकन किया हो। बड़े उपक्रमों में विभिन्न प्रकार के कार्य विभिन्न व्यक्तियों द्वारा किये जाते हैं। ऐसी स्थिति में कार्यों का मूल्यांकन करना आवश्यक हो जाता है ताकि उस कार्य को करने वालों का पारिश्रमिक ठीक प्रकार से निर्धरित किया जा सके। प्रबन्ध्कों के लिए मजदूरी मनमाने ढंग से भी निर्धरित कर सकते हैं परन्तु वह औद्योगिक संघर्ष का कारण बन जाता है। अतः कृत्य–मूल्यांकन के आधर पर मजदूरी निर्धरण में मजदूर व नियोक्ता दोनों को भय नहीं रहता है। यह क्रिया भी ठीक उसी प्रकार से है, जब उत्पादक प्रति वस्तु उत्पादक लागत मालूम करके आसानी से विक्रय मूल्य निर्धरित कर सकता है। किसी कार्य को करने के

लिए अन्य समान कार्यों की तुलना में पारिश्रमिक क्या है? इसकी निर्धरित विध् िही कार्य–मूल्यांकन है।

1. **मारिस बी॰ कमिंग,** फकृत्य–मूल्यांकन प्रत्येक कृत्य का संगठन करके अन्य सभी कृत्यों की तुलना में मूल्यांकन करने की विध् िहै।य[1]

2. **जान ए0 शुबिन,** फकृत्य–मूल्यांकन सामान्य कारकों ;कौशल, प्रशिक्षण, प्रयत्न आदिद्ध के आधर पर मजदूरी तथा वेतन के अन्तरों का निर्धरण करने के उद्देश्य से, कार्यों का सापेक्षिक मूल्यांकन व महत्त्व–अंकन की व्यवस्थित विध् िहै।य[3]

3. **कार्य–वर्गीकरण (Classification of Job):** मजदूरी निर्धरण करने के लिए आवयक कदमों में कार्य का वर्गीकरण करना होता है। यह वर्गीकरण कार्य–विश्लेषण एवं कार्य व्याख्या के आधर पर किया जाता है। विभिन्न कार्यों के लिए विभिन्न योग्यता तथा अनुभव की आवश्यकता होती है। भिन्न–भिन्न कार्यों के लिए किन–किन योग्यताओं तथा अनुभव की आवश्यकता होगी इसका पता तो कार्य–विश्लेषण से लगेगा किन्तु किन आधरों पर कार्यों का श्रेणी विभाजन किया जायेगा यह इस कदम द्वारा विचार करना होगा।

4. **योग्यता मूल्यांकन (Merit Rating):** कार्य–मूल्यांकन में कार्य का मूल्य बताने का प्रयत्न किया जाता है। यहाँ कर्मचारी की योग्यता का मूल्यांकन करके ही समस्या का विस्तार से अध्ययन किया जायेगा। वास्तव में योग्यता अंकन किसी कर्मचारी की कार्य करने की निपुणता को स्पपृ करता हैं पुराने समय में यह कार्य पफोरमैन ही किया करते थे परन्तु आज की बदली हुई परिस्थितयों में यह कापफी उन्नत वैज्ञानिक विध्यिों (Highly developed scientific techniques) द्वारा किया जाता है। इसका एकमात्र उद्देश्य भेदभाव, पक्षपात और अन्यायपूर्ण निर्णयों का मूल्यांकन करना, दूसरी ओर इससे भी जरूरी पदोन्नति, हस्तान्तरण तथा अध्किार सौंपने के वैज्ञानिक पहलू पर विचार करता है।

परिभाषाएँ

1. **अल्पफोर्ड एवं बीटीः** फयोग्यता अंकन किसी व्यक्ति की अपने कृत्य पर की जाने वाली सेवाओं का कम्पनी को होने वाले सापेक्षिक लाभ का मूल्यांकन है।य[3]

2. **स्कॉट तथा स्प्रीगलः** फएक कर्मचारी का योग्यता अंकन, कृत्य की आवश्यकताओं के अनुरूप कर्मचारी का कृत्यनिष्पादन करने कर क्रिया है।य[4]

3. फयोग्यता–अंकन उस दक्षता को कहते हैं जिससे व्यक्ति अपने कार्य का निष्पादन करता है।य[5]

4. **मजदूरी सर्वेक्षण (Wage Survey):** किसी विशेष कार्य के लिए मजदूरी का निर्धरण करने में इस बात पर भी ध्यान देना चाहिए कि अन्य उपक्रमों में उसी कार्य के लिए कितनी मजदूरी दी जा रही है। उपयोगिता आदि के आधर पर एक उपक्रम में किसी विशेष कार्य के लिए वेतन का निर्धरण यदि अन्य उपक्रमों से कम होगा तो उसकी निम्न दो हानियाँ हो सकती हैं।

   (i) अच्छे व योग्य अच्छे उस वेतन पर प्राप्त नहीं होंगे।

   (ii) यदि मिल भी जाएं तो कुछ समय बाद वे अन्य उपक्रम में चले जायेंगे।

---

1. "Job evaluation is a technique of assessing the worth of each job in comparison with all others through an organisation.
   -Marurice B. Cumming
2. "Job-evaluation (or job rating) is a systematic procedure for measuring the relative value and important of occupation as the basis of their common factors (skill, training and efforts) for the purpose of determining wages and salary differentials.:
   -John A. Subin
3. "Employee of personnel rating is the evaluation or appraisal of the relative worth to the company of a man's services on his job."
   -Alford and Beaty
4. "Merit-Rating of an employee is the process of evaluating the employee's performance on the job in terms of the requirements of the job."
   Scott and Spriegel
5. "It is a systematic and (so far as possible) impartial procedure for determining the excellence with Which an individual is performing his job."

अतः मजदूरी सर्वेक्षण द्वारा विभिन्न उपक्रमों द्वारा किसी विशेष कार्य के लिए क्या वेतनमान निर्धरित किए गए हैं इसका ज्ञान होना भी आवश्यक है। मजदूरी सर्वेक्षण में निम्न बातों पर ध्यान देना चाहिए।

(i) सर्वेक्षण की अवध् ि;सप्ताह या महीनाद्ध

(ii) कुल मजदूरी का भुगतान—प्रतिदिन कार्य के घंटों अथवा मासिक भुगतान का ज्ञान।

(iii) कार्यों (Jobs) की परिभाषा।

(iv) आंकड़ों को इकट्ठा करने की वैज्ञानिक प्रणाली।

मजदूरी की दरों को प्रभावित करने वाले घटक (Factors Determining the Wage Rate)

किसी भी उपक्रम में किसी श्रमिक को कितनी मजदूरी या पारिश्रमिक दिया जाएगा इसको निर्धरित करना एक कठिन समस्या हैं। इसका निर्धरण करने के लिए अनेक तत्व हैं जिनपर विचार करना आवश्यक है। इनमें से कुछ का विवरण इस प्रकार है।

1. **न्यूनतम पारिश्रमिक (Minimum Wage)**: पारिश्रमिक निश्चित करते समय इस बात को ध्या न में रखना आवश्यक है कि श्रमिक को इतनी मजदूरी अवश्य दी जाए जिससे वह अपने जीवन स्तर को बनाये रखे। यदि उचित मजदूरी उसे न मिली तो वह अन्य कारखाने में चला जायेगा।

2. **माँग की पूर्ति (Demand and Supply):** जिस प्रकार वस्तुओं के मूल्य निर्धरण में माँग और पूर्ति का सि(ान्त लागू होता है। ठीक उसी प्रकार मजदूरी का निर्धरण करते समय श्रमिकों की माँग व पूर्ति पर ध्यान देना चाहिए। यदि माँग अध्कि और पूर्ति कम है तो मजदूरी की दर उफँची होगी। इसके विपरीत यदि श्रमिकों की माँग कम हैं एवं उनकी पूर्ति ज्यादा है तो मजदूरी की दर नीची होगी।

3. **सौदा करने की क्षमता (Bargaining Capacity):** यदि किसी उपक्रम में प्रबन्ध्कों को सौदा करने की क्षमता अध्कि होगी तो ऐसी दशा में मजदूरी की दर कम होगी, इसके दूसरी ओर यदि श्रमिकों की मोल—भाव की क्षमता अध्कि होगी तो मजदूरी की दर उफँची होगी।

4. **बाजार में प्रतिस्प(ार् का स्वरूप (Competition in the Market):** यदि श्रमिकों की उपलब्ध्ि बाजार में अध्कि होगी तो श्रमिकों में आपसी प्रतिस्प(ार् होगी जिसके कारण मजदूरी का निर्धरण नीची दर पर होगा। दूसरी ओर यदि श्रमिकों की उपलबध्ता में कमी है तो मजदूरी का निर्धरण उफँची दर से होगा।

5. **सरकारी नीति (Government Policy):** मजदूरी का निर्धरण सरकार की नीतियों पर भी कापफी निर्भर करता है। समाजवादी दृष्टिकोण की सरकार होने पर मजदूरी की दर उफँची होती है क्योंकि श्रमिकों के शोषण को रोकने के लिए सरकार इन्हें उचित वेतन अवश्य दिलाएगी। इसके दूसरी ओर तानाशाही व्यवस्था में मजदूरी की दर कम होगी और श्रमिक शोषण होगा।

6. **काम की प्रकृति (Nature of Work):** मजदूरी का निर्धरण इस बात पर निर्भर करता है कि कार्य में कितने जोखिम हैं। यदि कार्य अध्कि जोखिमपूर्ण होगा तो मजदूरी की दर अध्कि होगी, यदि जोखिम कम है तो मजदूरी की दर भी कम होगी।

7. **व्यक्तिगत कारण (Personal Reasons):** कई बार व्यक्तिगत गुणों के कारण भी किसी श्रमिक को अत्यध्कि उफँची दर से मजदूरी देनी पड़ती है। यह उसकी व्यक्तिगत योग्यता पर निर्भर करेगा। यदि कोई श्रमिक अन्य श्रमिकों की अपेक्षा अध्कि प्रशिक्षित है, तकनीकी योग्यता प्राप्त है तो उसकी मजदूरी का निर्धरण अन्य श्रमिकों की तुलना में उफँची दर पर होगा।

सन्तुष्टि प्रदान करने वाली मजदूरी योजना की विशेषताएँ
(Essentials of a Satisfactory Wage Plan)

यद्यपि सभी प्रबन्धक इस बात को मानते हैं कि संस्था में कर्मचारियों की कार्यकुशलता उनके उचित वेतन पर आधरित है पिफर भी अब तक किसी ऐसी प(ति का विकास नहीं पाया है जोकि सर्वमान्य हो तथा उद्योगों पर पूर्णतया सपफलता से लागू की जा सकती हो। वेतन निर्धरण की प(ति के विकास की समस्या पर्याप्त समय से प्रबन्धकों के लिए सरदर्द बनी हुई है। यह कार्य मानवीय प्रबन्धक के कार्यो में सबसे कठिन कार्य है। वेतन तथा मजदूरी व्यय, व्यवस्था की लागत का सबसे बड़ा भाग होता है तथा अध्कितर उद्योगों 70÷ के लगभग होता है। इस रूप में वेतन निर्धरण में की जाने वाली थोड़ी सी भी असावधनी प्रबन्ध्क की उत्पादन लागत पर महत्त्वपूर्ण प्रभाव डालती है। इसलिए वेतन प(ति का निर्धरण तथा निर्माण बहुत ही सावधनी से होना चाहिए। यद्यपि किसी भी ऐसी वेतन प(ति का वर्णन नहीं किया जा सकता जो भी तरह से उद्योगों तथा संस्थाओं के अनुकूल कहला सकती हो पिफर भी एक अच्छे वेतन प(ति की कुछ आधरभूत विशेषताएँ दी जा सकती है जो कि संस्था को उचित वेतन प(ति के निर्धरण में सहायक हो सकती है। प्रबन्ध्कीय दृष्टिकोण से एक उचित वेतन प(ति में निम्न विशेषताएँ होनी चाहिए।

उचित मजदूरी प(ति की विशेषताएँ
अथवा
आदर्श मजदूरी भुगतान प्रणाली की विशषताएँ
(Essentials of an Ideal Wage Payment System)

1. **सरल (Simple):** वेतन प(ति सदा सरल होनी चाहिये ताकि साधरण कर्मचारी भी उसे समझ सके तथा उसके अन्तर्गत मिलने वाले वेतन का अनुमान लगा सके।
2. **न्यूनतम वेतन पर आधरित (Based on Minimum Wage):** श्रमिकों को न्यूनतम वेतन का आश्वासन होना चाहिये ताकि वह स्वयं को सुरक्षित अनुभव कर सकें तथा बिना किसी भय से कार्य कर सकें। यह न्यूनतम वेतन प्रतिदिन जीवनयापन की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिये पर्याप्त होना चाहिये।
3. **सभी सम्बन्ध्ति पक्षों के हित में (Favourable to all Concerned):** यह प्रबन्ध्क का सबसे अध्कि महत्त्वपूर्ण सि(ान्त है जिसके व्याख्या हैनरी पिफयोल ने की है। इसके अनुसार कर्मचारी को दिया जाने वाला वेतन या वेतन प(ति ऐसी हो जो मालिक तथा श्रमिक दोनों ही समूहो को अध्कितम सन्तोष प्रदान करे। वेतन पर्याप्त होने के साथ–साथ इतना अध्कि भी नहीं होना चाहिये जो उद्योग के लिये असहनीय हो।
4. **तुलनात्मक (Competitive):** श्रमिकों को दिया जाने वाला वेतन कम से कम इतना अवश्य हो जितना वैसी ही अन्य संस्थाओं में हो। श्रमिकों की स्थायी एवं सन्तुष्ट टीम के निर्माण के लिये अनिवार्य है।
5. **कम कागजी कार्य (No Excessive Clerical Detail):** वेतन प(ति ऐसी जटिल न हो कि उसमें पर्याप्त कागजी कार्य की आवश्यकता हो। ऐसा होने से प(ति के प्रबन्ध् में अध्कि कर्मचारियों तथा लेखन सामग्री (Stationery) की आवश्यकता होगी तथा यह स्वयं संस्था पर अनावश्यक भार होगा।
6. **समानता (Equality):** फसमान कार्य के लिये समान वेतनय के सि(ान्त का पालन किया जाना चाहिए तथा संस्था में समान पद पर समान कार्य कर रहे प्रत्येक व्यक्ति को समान वेतन मिलना चाहिये। ऐसा न होने से कर्मचारियों की असन्तुष्टि बढ़ती है तथा नैतिक स्तर गिरता है।
7. **प्रेरणादायक (Incentive Oriented):** वेतन प(ति श्रमिकों को अध्कि कार्य करने के लिये प्रोत्साहन देने वाली हो तथा श्रमिकों को इसका विश्वास हो कि यदि वे अध्कि कार्य करेंगे तो उन्हें अध्कि वेतन प्राप्त होगा।
8. **निश्चित योजना पर आधरित (Based on Definite Plan):** वेतन प(ति निश्चित योजना पर आधरित होनी चाहिए। वेतन प(ति लागू करने से पहले उसके सभी पहलू पर विस्तृत रूप से विचार कर लेना चाहिये ताकि बाद में संघर्ष

उत्पन्न होने की सम्भावना ही न रहे। इसके लिए आवश्यक है कि वेतन प(ति की लिखित रूप से विस्तृत रूपरेखा तैयार कर ली जाए। साथ ही वेतन भी किसी निश्चित आधर पर आधरित हो। उदाहरणतः यह निश्चित किया जाये कि वेतन अन्य संस्थाओं के वेतन के माध्य पर आधरित होगा या देश में सुलभ सूचकांक पर आधरित होगा।

9. **सभी के हित में (Secure for all Interests):** वेतन प(ति के निर्धरण में प्रबन्ध्क, अंशधरी, क्रयकर्त्ता, उपभोक्ता, सरकारी कर्मचारी तथा सभी सम्बन्ध्ति समूह के हितों का ध्यान रखना चाहिये एवं किसी को भी वेतन प(ति के निर्धरण से अनावश्यक हानि नहीं होनी चाहिये।

10. **औद्योगिक शान्ति के लिय उपयुक्त (Suitable for Industrial Peace):** वेतन प(ति ऐसी हो जो उद्योग में शांति व्यवस्था बनाये रखने में सहयोगी हो। इसके लिए वेतन के साथ–साथ विभाजन प्रबन्ध में भाग आदि प(तियों को लागू किया जाना चाहिए।

11. **निश्चित समय पर वेतन भुगतान (Payment of Wages in Time):** वेतन प(ति में यह व्यवस्था होनी चाहिए कि प्रत्येक महीने की एक निश्चित तारीख तक वेतन बिल तैयार हो जायेंगे तथा उस तारीख को निश्चित रूप में वेतन मिल जायेगा अर्थात् वेतन मिलने में अनावश्यक देरी नहीं होनी चाहिए।

12. **व्यावहारिक (Practical):** वेतन प(ति केवल कागज पर ही न रह जायें बल्कि व्यावहारिक भी हो। यह न हो तैयार योजना जब लागू हो तो औद्योगिक संघर्षो के कारण संस्था का कार्य ठप्प हो जाये।

13. **लोचदार (Flexible):** वेतन प(ति के लागू हो जाने के बाद यदि आवश्यक हो तब उसमें सरलता से परिवर्तन किया जाना चाहिए। श्रमसंघों में समझौता करते समय इस बात की व्यवस्था होनी चाहिए कि यदि आवश्यक हुआ तो विशेष अवस्था में समझौतों में परिवर्तन किया जा सकता है।

14. **मितव्यायी (Economical):** वेतन प(ति का उद्देश्य अध्कितम उत्पादन ही नहीं होना चाहिए बल्कि वेतन प(ति यन्त्रों की सुरक्षा, तथा माल की व्यर्थता, शक्ति की अनावश्यक व्यर्थता आदि को रोकने को भी प्रोत्साहन देने वाली होनी चाहिए।

15. **स्थायित्व (Stable):** वेतन प(ति में बार–बार परिवर्तन नहीं होनी चाहिए। श्रमिकों का संस्था तथा वेतन प(ति के प्रति विश्वास बनाये रखने के लिए यह आवश्यक है कि इसमें परिवर्तन कम से कम किया जाएँ तथा जो भी परिवर्तन हों, बहुत ही सोच–विचार के बाद हों।

16. **श्रमसंघ तथा श्रमिकों को पूर्ण जानकारी (Full Information to Union and Labour):** कोई भी वेतन प(ति श्रमिकों तथा श्रमसंघों की सहमति से ही पूर्ण सपफल तथा प्रभावशाली हो सकती है। इसके लिये वेतन प(ति लागू करने से पूर्व श्रमिकों को विस्तार से बतला दिया जाये तथा उसके प्रति उनका दृष्टिकोण देखकर ही उसे लागू किया जाना चाहिए।

17. **श्रमिकों के नियन्त्रण से बाहरी रूकावट की क्षतिपूर्ति (Compensation for Time Beyond Labour Control):** वेतन प(ति में इस बात की व्यवस्था भी होनी चाहिए जिससे श्रमिकों को उस समय के लिए भी वेतन मिले जिससमें ऐसी घटना के कारण, जो श्रमिकों के नियन्त्रण में भी नहीं थी, कार्य न हो सका हो। उदाहरणतः सामग्री के आने में देरी, मशीन खराब होने या विद्युत पूर्ति (Electricity Supply) असपफल हो जाने आदि कारणों से उत्पन्न क्षति को श्रमिकों से पूरा नहीं किया जाना चाहिए।

18. **योग्य व्यक्तियों को अलग करना (Differentiate Qualified Men):** वेतन प(ति ऐसी हो जो एक ही पद पर कार्य करने वाले व्यक्तियों की योग्यता में अन्तर होने पर वेतन में भी अन्तर करती हो। दूसरे शब्दों में, एक ही पद पर कार्य करने वाले अलग–अलग व्यक्तियों की योग्यता भिन्न होने पर वेतन भी अलग–अलग हो। जैसे कि बैंकों में क्लर्क का पद मैट्रिक व स्नातक (Graduate) दोनों को मिलता है परन्तु स्नातक को या तो कुछ वृ((Increments) दी जाती है या स्नातक भत्ता दिया जाता था।

19. **तुलना में सहायक (Faciliates in Comparison):** वेतन प(ति ऐसी हो जिस पर बजटरी तथा लागत नियन्त्रण को लागू किया जा सकता हो ताकि इनकी सहायता से वेतन लागत पर नियन्त्रण रखा जा सके। साथ ही एक विभाग की अन्य विभागों के वेतन तथा कार्यकुशलता के आधर पर तुलना भी सम्भव होनी चाहिए।

20. **प्रभावशाली शिकायत विध्ि (Efficient Complaint Procedure):** अन्त में उचित वेतन व्यवस्था में ऐसा प्रबन्ध् होना अनिवार्य है जिससे कोई भी व्यक्ति, जिसे वेतन के प्रश्न पर कोई भी शिकायत है, वह अपनी शिकायत सम्बनिध्त प्रबन्ध्कों तक पहुँचा सके। साथ ही ऐसी शिकायतें सुनने, उनकी विस्तुत जाँच करने तथा हुए निर्णयों के अनुसार परिवर्तन करने के लिए भी उचित व्यवस्था तथा मशीनरी होनी अनिवार्य है।

    वेतन प(ति में उपरोक्त सभी बातों की व्यवस्था होन पर संस्था में शान्तिमय वातावरण की आशा की जा सकती है। ऐसी अवस्था में प्रबन्ध्क तथा श्रमिक, दोनों समूह पारस्परिक सहयोग से कार्यकुशलता तथा उत्पादन बढ़ाने में सपफल होते हैं जिससे अंशधरियों को अध्कि लाभांश, श्रमिक को अध्कि पारिश्रमिक, प्रबन्ध्कों को अध्कि वेतन तथा सुविधएँ सरकार को अध्कि कर तथा क्रेताओं एवं उपभोक्ताओं को उत्तम वस्तुएँ उचित कीमत पर प्राप्त होती है। इस रूप में उचित प(ति संस्था से सम्बन्ध्ति सभी व्यक्तियों के लिए हितकर प्रमाणित होती है।

मजदूरी या भुगतान की विध्याँ
(Theories or Methods of Wages Payment)

उचित वेतन निर्धरण की समस्या पर्याप्त समय से ही प्रबन्ध्कों के लिए सरदर्द बनी हुई है तथा प्रबन्ध्क इस ओर पर्याप्त ध्यान दे रहे हैं। पिफर भी अब तक किसी ऐसी प(ति का विकास नहीं हो सका है जो दोषरहित हो तथा प्रत्येक उद्योग व संस्था में जिसे समान रूप में सपफलतापूर्वक लागू किया जा सकता हो। प्रत्येक संस्था में अपने लिये ही अपनी आवश्यकतानुसार एवं अवस्थानुसार प(तियाँ होती हैं जिनमें से वह किसी विशेष प(ति का चुनाव कर सकती है या उनमें से किसी प(ति से मिलती–जुलती प(ति का विकास कर सकती है। जिन वेतन प(तियों में से संस्था को चुनाव करना होता है। उन्हें तीन भागों में बाँटा जाता है।

मजदूरी भुगतान की विध्याँ
(Theories or Methods of Wages Payment)

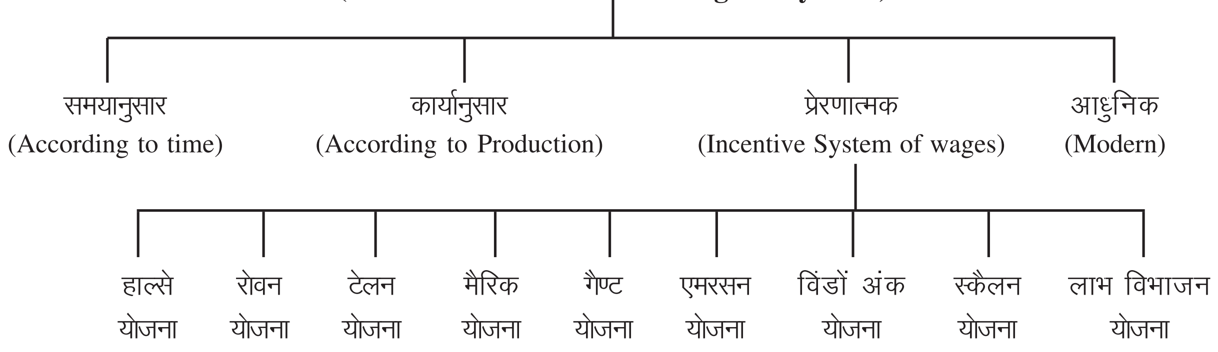

1. **समय पर आधरित प(तियाँ (Time Wages System)**: इस प(ति के अनुसार श्रमिक को समयानुसार पारिश्रमिक मिलता है। यह पारिश्रमिक प्रतिघण्टा, प्रतिदिन प्रतिमाह अथवा प्रतिवर्ष हो सकता है। काम की मात्रा और मजदूरी में कोई सम्बन्ध् नहीं होता। भारत में यह प्रणाली सभी उद्योगों में लागू है।

लाभ
(Advantages)

1. **सरलता एवं श्रेø उत्पादनः** यह पारिश्रमिक निश्चित करने की सबसे सरल प्रणाली है। समयानुसार पारिश्रमिक मिलने से श्रमिक सुविध और सोच–विचार से कार्य करते हैं तथा अच्छी किस्म की वस्तुओं का उत्पादन करते हैं।
2. **सामग्री तथा यन्त्रों का सदुपयोगः** इसमें श्रमिकों को पारिश्रमिक के लोभ में शीघ्रता से काम नहीं करना पड़ता और वे आराम से सामग्री तथा यन्त्रों का सदुपयोग करते हैं।
3. **श्रमिकों में पास्परिक एकता एवं निश्चित पारिश्रमिक का विश्वासः** इसमें सभी श्रमिकों को समान वेतन मिलता है जिससे उनमें एकता बनी रहती है। इस प(ति से उन्हें निश्चित पारिश्रमिक का विश्वास भी बना रहता है।

4. **प्रशासनिक व्यय में मितव्ययिताः** सेवायोजकों को अन्य प(तियों की अपेक्षा हिसाब–किताब रखने में प्रशासनिक व्यय नहीं करने पड़ते हैं तथा उनके रखने में विस्तृत आयोजन नहीं करना पड़ता है।
5. **उत्पादन बढ़ने पर प्रति इकाई कम परिव्ययः** इसमें जैसे–तैसे उत्पादन बढ़ता है वैसे–वैसे ही प्रति इकाई लागत कम होती जाती है। उदाहरणतः यदि कोई श्रमिक 8 घण्टें के दिन में 25 पैसे के हिसाब से 2 रुपये पारिश्रमिक लेता है और 10 वस्तुएँ पैदा करता है तो यहाँ प्रति वस्तु लागत 20 पैसे होगी परन्तु यदि वह उसी समय में 12 वस्तुएँ पैदा करना तो वहाँ प्रति वस्तु लागत

$$\frac{8 \text{ घण्टे X } 25 \text{ पैसे}}{12 \text{ वस्तुएं}} = 16.6 \text{ पैसे}$$

16.6 पैसे होती। इस प्रकार अध्कि उत्पादन के साथ–साथ प्रति इकाई लागत कम होती जाती है।

हानियाँ
(Disadvantages)

1. कुशल श्रमिकों पर इसका बुरा प्रभाव पड़ता है।
2. यह प्रणाली अध्कि परिश्रम को प्रोत्साहन नहीं देती है।
3. कार्य को अनावश्यक रूप से लम्बा या देरी करने की प्रवृति को प्रोत्साहन देती है।
4. कार्य की देख–रेख के लिए पफोरमैन या प्रबन्ध्कों को पुलिस की तरह निरीक्षण करना होता है।
5. इससे श्रमिकों की उत्पादन शक्ति को मापना कठिन होता है।
6. श्रमिक वर्ग काम से मुँह चुराते हैं।

उपयुक्तताः यह विध् िउस दशा में उपयुक्त है जिसमे कार्य का माप नहीं किया जा सकता, जैसे शिक्षक का कार्य, चित्रकार का कार्य आदि।

उत्पादन या कार्य पर आधरित प(ति
(Piece Rate System)

इस प(ति के अनुसार एक श्रमिक जितना काम करता है, उसी के अनुसार पारिश्रमिक कमा लेता है चाहे उसको कितने समय में पूरा करे। इसमे पारिश्रमिक देने का सम्बन्ध् समय से नहीं बल्कि काम से होता है।

लाभ
(Advantages)

1. **श्रमिकों को प्रोत्साहनः** इसमें श्रमिकों को पारिश्रमिक कमाने का प्रोत्साहन मिलता है क्योंकि जितनी वस्तुयें बनायी जाती हैं उतना ही पारिश्रमिक मिल जाता है।
2. **उत्पादन व्यय में कमी एवं उत्पादन में वृ(िः** इसके अन्तर्गत थोड़े समय में उत्पादन अध्कि होता है और उसके उत्पादन व्यय में कमी होती जाती है क्योंकि इससे प्रति इकाई कारखाना अभिव्यय एवं कार्यालय परिव्यय कम हो जाते हैं और इस प्रकार कुल लागत भी कम हो जाती है।
3. **श्रमिकों को कार्य की स्वतन्त्रताः** श्रमिक स्वतन्त्रतापूर्वक अपने कार्य को रुचि के साथ करते रहते हैं, उन पर विशेष नियन्त्रण की आवश्यकता नहीं पड़ती।
4. **प्रशासन एवं निरीक्षण व्यय में मितव्ययताः** इसमें श्रमिक स्वयं अध्कि पारिश्रमिक प्राप्त करने के लिए प्रयत्न करते रहते हैं इसलिए इस पर निरीक्षण व्यय कम होता है।
5. **टेण्डर मूल्य ज्ञात करने की सुविधः** इसमें टेण्डर मूल्य निकालने में सरलता रहती है क्योंकि इसके अन्तर्गत प्रति वस्तु श्रम व्यय पहले से ही ज्ञात रहता है।

हानियाँ
(Disadvantages)

1. अध्कि कार्य करने से श्रमिकों के स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ता है।
2. उद्योगपति श्रमिकों की मजदूरी काट लेते हैं।
3. अध्कि मजदूरी मिलती है तो उद्योगपति जलते हैं।
4. वस्तुओं की किस्म खराब हो जाती है।
5. यह विध्ि कलात्मक वस्तुओं के उत्पादन के लिए उचित नहीं है।
6. इस प्रणाली का श्रमसंघ विरोध् करते हैं।
7. इस प्रणाली से बेकारी पफैलने का भय रहता है।
8. इस प्रणाली में श्रमिकों को छुट्टिद्बयाँ नहीं मिलतीं।
9. अकुशल श्रमिकों को इससे हानि होती है।
10. यह प्रणाली श्रमिकों के स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव डालती है।

उपयुक्तताः
यह प्रणाली उन उद्योगों के लिए उपयुक्त है जहाँ उत्पादन क्रिया प्रमापीकरण तथा उचित किस्म की वस्तुओं का उत्पादन होता है, जैसे–हथकरघा उद्योग, जूता उद्योग आदि।

3. **प्रेरक या प्रेरणात्मक अथवा अध्लिाभांश प(तियाँ (Intentive Premium or Bonus Methos)**: ये प(तियाँ उपरोक्त प(तियाँ का सम्मिश्रण हैं। इनमें दोनों के गुणों को ग्रहण करने एवं दोषों से बचने का प्रयत्न किया गया है। ये प(तियाँ निम्न हैं।

   (i) **हाल्से प्रब्याजि योजना (Halsey Premium Scheme):** इसमें श्रमिक को एक निश्चित पारिश्रमिक के अतिरिक्त प्रमापित कार्य से ज्यादा करने पर उस कार्य के पारिश्रमिक का 33÷ से 50÷ तब प्रब्याजि (Bonus) के रूप में दिया जाता है।

   इस प(ति के अनुसार उत्दान का प्रमाप (Standard) एवं उसे समाप्त करने का प्रमापित समय (Standard time) पहले से ही निश्चित कर लिया जाता है। यदि प्रमापित समय के अन्दर, निर्धरित प्रमाप (Standard) की वस्तु तैयार हो जाती है तो श्रमिकों को निश्चित मजदूरी मिल ही जाती है। यदि श्रमिक निश्चित समय से पहले कार्य पूरा कर लेता है, अर्थात् कुछ समय बचा लेता है तो उसे बचाये हुए समय के लिए मजदूरी का निश्चित प्रतिशत अध्लिाभांश (Bonus) के रूप में दिया जाता है।

विशेषताएँ
(Characteristics)

1. उत्पादन का प्रमाप (Standard) तथा कार्य समाप्त करने का प्रमाप (Standard Time) पहले ही निश्चित किया जाता है।
2. श्रमिक को काम पूरा होने पर ही मजदूरी दी जाती है।
3. प्रमापित समय (Standard Time) से पूर्व कार्य समापित पर बचाये हुए समय के लिए मजदूरी का निश्चित प्रतिशत अध्लिाभाशं के रूप में दिया जाता है।
4. प्रमापित कार्य, प्रमापित समय में पूरा किये जाने पर श्रमिकों को न्यूनतम मजदूरी दी जाती है।
5. यह प्रणाली कुशलता पर बल देती है।

लाभ
(Advantage)

1. यह प(ति सरल है
2. इसमें श्रम और पूँजी के बीच संघर्ष नहीं होता
3. यह कुशल कारीगरों के लिए लाभदायक है
4. यह प(ति मनोवैज्ञानिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है।

हानियाँ
(Disadvantages)

1. यह प(ति अवैज्ञानिक आधरों पर प्रमाप निश्चित करती है।
2. यह प्रशासन की दृष्टि से उपयुक्त नहीं है।
3. श्रमिकों को अध्कि काम के लिए सदैव प्रोत्साहित नहीं करती।
4. यह नये कार्यो की तुलना में पिछले कार्य पर निर्भर करती है।

2. **रोवन प्रब्याजि योजना (Rowan Premium Scheme):** रोवन की इस योजनानुसार प्रब्याजि हाल्से योतना की तरह 33÷ या 50÷ नहीं होती हैं बल्कि दिन की मजदूरी का वह अनुपात होता है जो कि बचाये गया समय का प्रमाप सयम से होता है।

   प्रेरणा की इस प्रणाली का श्रेय स्कॉटलैंड निवासी जेम्स रोवन को है। श्रमिक को उस समय के लिए, जिसमे उसके कार्य किया है, साधरण दारों पर मजदूरी दी जाती है। शेष बचे हुए समय के आधर पर प्रब्याजि के रूप में श्रमिक को अतिरिक्त ध्न दिया जाता है। इसमें प्रताप समय और प्रमापित कार्य दोनों निश्चित होते हैं। बचे हुए ध्न की मजदूरी उसी प्रतिशत से बढ़ेगी, जितने प्रतिशत कमी उस काम के लिए निर्धरित समय में होती है। बचाये हुए समय की प्रब्याजि कुल प्रमाप मजदूरी से अध्कि नहीं हो सकती और इस प्रकार श्रमिक चालाकी से आवश्यकता से अध्कि मजदूरी ले सकता।

प्रब्याजि निकालने का नियम

$$\text{प्रब्याजि} = \text{कार्य किये समय का पारिश्रमिक} \times \frac{\text{बचाया समय}}{\text{प्रमाप समय}}$$

रोवन तथा हाल्से प(तियों की तुलना (Comparison Between Rowan and Halsey Wage Plans):

दोनों योजनाओं में निम्न अन्तर है

1. आरम्भ में रोवन योजना में प्रब्याजि की दर अध्कि रहती है और हाल्से योजना में दर कम रहती है।
2. हाल्से योजना में श्रमिक आध्े से अध्कि समय बचाने लगते हैं तब प्रब्याजि की दर एकदम बढ़ जाती है, किन्तु रोवन योजना में प्रब्याजि की दर एक–सी रहती है।

   हाल्से योजना में अध्कि काम करने पर वेतन दुगुना हो सकता है, किन्तु रोवन योजना में वेतन कभी दुगुना नहीं हो सक्ता।

3. **टेलर अन्तर्युक्त कार्य भाग पर योजना (Taylor Differential Piece Rate Scheme):** इस प(ति के अनुसार कार्य का प्रमाप स्तर निश्चित कर लिया जाता है। जो श्रमिक प्रमाप से अध्कि कार्य नहीं कर सकते उनको पारिश्रमिक नीची दर से दिया जाता है और जो श्रमिक प्रमाप अथवा प्रमाप से अध्कि कार्य कर पाते हैं, उनकों उफँची दर से पारिश्रमिक मिलता है।

4. **मैरिक बहुगुण कार्य भाग दर योजना (Merrick Defferential or Multiple Price Rate Scheme):** टेलर प(ति की कठोरता को दूर करने के लिए मैरिक योजना में दो दरों के स्थान पर तीन दरें रखी गयी हैं। पहली, प्रमाप कार्य के 80÷ तकऋ दूसरी प्रमाप बिन्दू परऋ तीसरी प्रमाप कार्य के उफपर।

5. **गैंट प्रब्याजि योजना (Gantt Premium Scheme):** इस योजना के अनुसार यदि कोई श्रमिक निश्चित समय में प्रमाप कार्यो के बराबर कार्य करता है तो उसे दैनिक पारिश्रमिक के अतिरिक्त उसका 20÷ से 50÷ तक प्रब्याजि रूप से मिलता है।

6. **इमरसन कार्यक्षमता प्रब्याजि योजना (Emerson Efficiency Premium Scheme):** इस योजना के अनुसार प्रत्येक श्रमिक को दैनिक पारिश्रमिक मिलने की गारण्टी दी जाती है परन्तु जो प्रब्याजि श्रमिकों को दिया जाता है, वह उनकी कार्यक्षमता के अनुसार कम या अध्कि होता है। 67÷ कार्य को प्रमाप समय माना जाता है, इससे उफपर प्रब्याजि सारण (Premium Table) की सहायता से विभिन्न कार्यक्षमता के प्रतिशतों के लिए प्रब्याजि का प्रतिशत नियत किया जाता हैं।

7. **बेडो योजना (Bedeux Scheme):** जो श्रमिक प्रमाप के बराबर अथवा उससे कम कार्य करते हैं उन्हें केवल दैनिक मजदूरी ही दी जाती है और जो श्रमिक इससे अध्कि काम करने हैं उन्हें बचाये हुए समय का 75÷ अध्कि लाभाशं मिलता है।

8. **उच्च पारिश्रमिक प्रणाली (High Wage System):** इस प(ति के अनुसार प्रचलित दर से 20÷ से 50÷ उफँची दर पर पारिश्रमिक दिया जाता हैं लेकिन श्रमिकों से पूर्ण आवश्वासन ले लिया जाता है कि वे सर्वोत्तम कार्यक्षमता से सर्वाध्कि उत्पादन करेंगे।

9. **सामूहिक अध्लिाभाशं योजनायें (Collective Bonus Plans):** इसमें प्रीस्टमैन एवं परिव्यय अध्लिाभांश योजनायें आती हैं। प्रीस्टमैन विध् के अनुसार लाभांश

$$\text{लाभांश} = \frac{\text{बड़ा हुआ कुल उत्पादन}}{\text{प्रमाप उत्पादन}}$$

उपर्युक्त सूत्रानुसार दिया जाता है एवं परिचय लागत एवं प्रमाप लागत का एक भाग अंध्लिाभांश के रूम में दिया जाता है।

10. **उतार चढ़ाव दर प्रणाली (Sliding Scale System):** इसमें पारिश्रमिक की दर को जीवन–निर्वाह परिव्यय सूचनांक (Cost of Living Index Number) से जोड़ दिया जाता है। जिसके अनुसार जीवन निर्वाह की वस्तुओं के मूल्यों के घटने–बढ़ने से पारिश्रमिक की दर घटती–बढ़ती रहती है।

11. **श्रम सहभागिता प्रणाली (Labour Co-partnership):** इससे श्रमिकों का जो लाभ मिजता है उसे वे पूँजी के रूप में व्यवसाय में लगा देते हैं और व्यवसाय के स्वामी बन जाते हैं। इसमें श्रमिक अंशधरी बन जाते हैं और उन्हें अंशधरियों को प्राप्त सभी अध्कार मिल जाते हैं।

13. **न्यूनतम पारिश्रमिक प्रणाली (Minimum Wages System):** कुछ व्यवसायों में श्रमसंघ संगठित एवं शक्तिशाली न होने के कारण श्रमिकों का शोषण किया जाता है। अतः ऐसे व्यवसायों में यह आवश्यक हो जाता है कि उस देश की सरकार अधिनियम बनाकर न्यूनतम पारिश्रमिक नियत करे जिससे कि कोई भी मिल मालिक अपने श्रमिकों को उससे कम वेतन न दे सके। न्यूनतम परिश्रमिक इतना अवश्य होना चाहिए कि श्रमिक अपना तथा अपने आश्रितों का जीवन निर्वाह एक साधरण स्तर पर कर सके।

3. **टेलर योजना (Taylor's Plan):** टेलर योजना प्रति इकाई मजदूरी पर आधरित है अर्थात् श्रमिक कितना उत्पादन करता है उस आधर पर उसे मजदूरी दी जाती है। इस सि(ान्त में मजदूरी की दरें एक साथ प्रयुक्त की जाती है। एक उफँची दर उन श्रमिकों के लिए जो निर्धरित समय में अपना कार्य पूरा करते हैं एवं दूसरी नीची दर उन श्रमिकों के लिए जो निर्धरित समय में अपना कार्य पूरा नहीं कर पाते। इस प्रणाली में कुशल श्रमिकों का स्प5 भेद हो जाता है।

4. **मैरिक योजना (Merrick Plan):** यह टेलर की योजना का ही थोड़ा–सा परिवर्तित रूप हैं इसमें मजदूरी की दरें दो के स्थान पर तीन होती हैं।

   (i) एक–नए मजदूरों के लिए–कापफी कम

   (ii) दूसरी–साधरण कुशल श्रमिकों के लिए–मध्यम

   (iii) तीसरी–कापफी कुशल श्रमिकों के लिए–उच्च कुशल श्रमिकों को स्वतः ही प्रोत्साहन मिल जाता हैं।

5. **गैंट योजना (Gantt Plan):** यह भी टेलर की योजना का ही एक उत्कृष्ट रूप है। इसमें एक ओर मजदूरी समय के अनुसार निश्चित की जाती है जबकि दूसरी ओर कुशल श्रमिक को प्रति इकाई मजूदरी दी जाती है। सामान्य कुशल श्रमिक को समयानुसार मजदूरी के साथ–साथ इसी का 90÷ बोनस के रूप में भी मिलता है।

6. **इमरशन योजना (Emerson Plan)**: यह योजना भी टेलर, मैरिक एवं गैण्ट का ही एक सम्मिलित रूप है। थोड़ा–सा परिवर्तन यह किया गया है कि बोनस की दरें भिन्न–भिन्न रखी गई हैं। अर्थात् कुशलता बढ़ने के साथ–साथ बोनस की राशि भी बढ़ जाती है। यह प्रतिशत निम्न हैं

   67.50÷ कुशलता पर बोनस 1÷

   90÷ ״ ״ ״ 10÷

   100÷ ״ ״ ״ 20÷

   100÷ ״ ״ ״ 20÷ + अध्क्यि का 30÷

7. **वेडो अंक प्रब्याजी योजना (Bedaux Point-premimum Plan):** यह एक जटिल एवं अव्यावहारिक योजना है। इसमें श्रमिक द्वारा किए जाने वाले कार्य को प्रति मिनट की सूक्ष्म इकाइयों में विभक्त किया जाता है। इस प्रकार सप्ताह भी में जिनती इकाई कार्य होता है उसी कें अनुसार मजदूरी निश्चित की जाती है प्रति मिनट इकाइयों में कार्य का विभक्तीकरण एक जटिल एवं अव्यावहारिक प्रक्रिया है।

8. **स्कैलन योजना (Scalan Plan):** यह योजना एक प्रकार से अतिरिक्त लाभ विभाजन योजना है अर्थात् यदि एक वर्ष कारखाने को गतवर्ष की अपेक्षा अध्कि लाभ है तो उस अतिरिक्त लाभ के प्रतिशत के बराबर ही बोनस दिया जाता है। इस बोनस की राशि में से पहले 15÷ काट कर कोष को जमा कर दिया जाता है एवं इस कोष को अगले वर्ष कर्मचारियों में ही वितरित कर दिया जाता हैं। यह योजना इस प्रकार समझी जा सकती है।

   माना 1976–77 लाभ 15÷ था

   एवं 1977–78 का लाभ 20÷ है

   अर्थात् गतवर्ष से इस वर्ष लाभ 5÷ अध्कि है। इस प्रकार श्रमिकों को उनकी मजदूरी का 5÷ बोनस के रूप में दे दिया जायेगा इसमें किसी श्रमिक की व्यक्तिगत कुशलता या अकुशलता का कोई अन्तर नहीं किया जाता। विवरण से पूर्व 5÷ का 15÷ काटकर एक कोष में अगले वर्ष में वितरण हेतु अवश्य जमा कर दिया जायेगा।

9. **लाभ विभाजन योजना (Profit Sharing Plan):** इस योजना के अन्तर्गत श्रमिकों को लाभ का एक निश्चित प्रतिशत बोनस के रूप में दिया जाता है परन्तु इस योजना की सबसे बड़ी हानि यह होती है कि यदि किसी वर्ष लाभ न हो तो श्रमिकों को बोनस नहीं मिलेगा। परिणामतः श्रमिक इसे प्रबन्ध्क की बेईमानी बताकर झगड़ा खड़ा कर देंगे जो

श्रमिक–प्रबन्ध्क असन्तोष के रूप में बढ़कर उत्पादन को प्रभावित करेगा। यह प्रणाली नवीन होने के साथ–साथ अच्छी तो है परन्तु श्रमिक संगठन इसका बहुत दुरूपयोग करते है।

आध्ुनिक विचार
(Modern Thought)

प्रत्येक वर्णित प्रणाली के दोष ही नवीन प्रणाली के जन्मदाता हैं। मानव की आवश्यकतायें, विचार सामाजिक एवं धर्मिक नीतियाँ आदि परिवर्तनशील हैं। अतः किसी भी युग में कोई एक प्रणाली सर्वसम्मत प्राप्त कर सकेगी यह सम्भव नहीं। पिफर भी निम्न प्रणाली पूर्व प्रणालियों के अध्कितम दोषों को दूर करने में समर्थ है, इसमें कोई अतिश्योक्ति नहीं है।

प्रो॰ वीरेन्द्र अग्रवाल ने इस सम्बन्ध में निम्न सूत्र अपनाया है

$$\frac{MW^1}{MP} \times EW^2 = AW$$

M = Minimum

W^1 = Wages

P = Production

E = Extra

W^2 = Work

A = Additional

अर्थात् यदि उत्पादक ईमानदारी से मजदूरी देना चाहता है एवं श्रमिक श्री ईमानदारी से कार्य करना चाहता है तो दर प्रणाली एक प्रभावशाली भूमिका निभा सकती है। यह प्रणाली कुछ मान्यताओं पर आधरित है जो निम्न हैं।

1. **वस्तु की निश्चित किस्मः** वस्तु की किस्म निश्चित कर दी जाती है एवं श्रमिकों को इस सम्बन्ध में पूर्ण ज्ञान रहता है।
2. **वस्तु बनाने का निश्चित समयः** एक इकाई को बनाने में कितना समय लगता है, यह भी प्रयोगों द्वारा निश्चित कर दिया जाता है।
3. **उत्पादन की पूर्ण सुविधएँः** श्रमिक को उत्पादन की पूण्र सुविधएं हों जैसे कच्चे माल की सुलभता, आवश्यक यन्त्रों की सुलभता।
4. **उत्पादक में शोषण भावना का अभावः** उत्पादक में यह भावना किसी भी स्थिति में नही आनी चाहिए कि उसे श्रमिकों का शोषण करना है।

यदि उपर्युक्त मान्यताएं प्रयुक्त हो सकें तो यह सि(ान्त सपफलतम एवं वैज्ञानिक दृष्टि से अत्यध्कि मान्य होगा।

सि(ान्त की विशेषताएँ

सि(ान्त की सबसे प्रमुख विशेषता यह है कि इसमें श्रमिक को कम से कम एक निश्चित मजदूरी दिलाने का प्रावधन है। कम से कम मजदूरी प्रायः श्रमिक की अनिवार्य आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु आवश्यक ध्न के बराबर ही होती है। इस संदर्भ में यह कहना आवश्यक न हो कि यद्यपि प्रत्येक श्रमिक की आवश्यकताएं अलग–अलग होती है पिफर भी कम से कम मजदूरी प्रत्येक दशा में समान ही रहती है जबकि एक आदर्श परिवार को आधर मानकर निश्चित कर जाती है।

दूसरी विशेषता यह है कि न्यूनतम उत्पादन भी निश्चित रहता है। जिसके कारण उत्पादक को हानि की सम्भावना नहीं रहती है।

तीसरे, अध्कि कार्य करने एवं कार्य कुशलता में वृ(की प्रेरणा भी श्रमिक को मिलती है जिससे श्रमिक एवं उत्पादन दोनों की ही लाभ होता है।

विवेचन

$$\frac{MW^1}{MP} \times EW^2 = AW^1$$

$$\frac{\text{न्यूनतम मजदूरी}}{\text{न्यूनत उत्पादन}} \times \text{अतिरिक्त कार्य} = \text{अतिरिक्त मजदूरी}$$

अर्थात प्रत्येक श्रमिक के लिए न्यूनतम उत्पादन एवं उसके लिए न्यूनतम मजदूरी निश्चित कर दी जाती है। यह प्रायः इतनी ही होती है कि अनिवार्य आवश्यकताओं की पूर्ति की जा सके परन्तु साथ ही जो श्रमिक अपनी जीवन स्तर उफँचा उठाना चाहते हैं एवं अपनी शारीरिक एवं मानवीय योग्यता का पूर्ण लाभ कमाना चाहते हैं उन्हें प्रेरणा देने के लिए इस सूत्र में उन्हें, उनके द्वारा किए गए अतिरिक्त कार्य के लिए, पूर्व–निश्चित दर पर अतिरिक्त मजदूरी देने की भी व्यवस्था है। इस व्यवस्था के कारण मजदूरों में आलस्य व निकम्मापन स्वतः ही दूर हो जाता है। साथ–साथ जब एक साथ ही कार्य करने वाले दो मजदूरों की मजदूरी अलग–अलग मिलती है ता कम मजदूरी प्राप्त करने वाले श्रमिक शर्मिन्दा होता है और पिफर वह भी अध्कि कार्य करने का प्रयत्न करता है।

इस सूत्र को निम्न उदाहरण द्वारा स्प5ζ किया जा सकता है

मान लीजिये कारखाने में जूते बनते हैं। जूते चूँकि विभिन्न विभागों की सहायता से बनते हैं अतः हम केवल सोल विभाग का उदाहरण लेते हैं। सोल विभाग में निम्न दर निश्चित की गई है।

न्यूनतम मजदूरी 5.00 रुपये

न्यूनतम उत्पादन 50 सोल

साथ–ही–साथ यह भी निश्चित किया गया कि जो श्रमिक इससे अध्कि कार्य करेगा उसे इसी दर से अतिरिक्त आय की प्राप्ति होगी। मान लीजिए 4 मजदूर हैं अ, ब, स एवं द। उनका उत्पादन निम्न हैं

अ 1000 सोल ब 95 सोल

स 80 सोल द 60 सोल

अब इसका भुगतान निम्न प्रकार होगा

नाम श्रमिक	कुल उत्पादन सोल	न्यूनतम उत्पादन	अतिरिक्त उत्पादन ;रुपयेद्ध	अतिरिक्त मजदूरी ;सोलद्ध	अतिरिक्त मजदूरी की दर	अतिरिक्त मजदूरी	कुल भुगतान	विशेष कथन
अ	100	50	5.00	50	10 पैसे	5.00	10.00	सर्वश्रे६ श्रमिक
ब	95	50	5.00	45	प्रति सोल	4.00	9.50	श्रे६
स	80	50	5.00	30		3.00	8.00	मध्य
द	60	50	5.00	10		1.00	6.00	सामान्य

इस प्रकार हम देखते हैं कि एक निश्चित समय के अन्दर विभिन्न श्रमिकों ने एक ही किस्म के उत्पादन का विभिन्न परिणाम (Quantity) प्रस्तुत किया। यह प्रस्तुतिकरण उनकी कार्यकुशलता का परिचायक है। इसी प्रस्तुतीकरण के आधर पर यदि हम चाहें तो श्रमिकों की पदोन्नति को आधरित कर सकते हैं।

इसी नियम में एक अन्य व्यवस्था भी है कि यदि श्रमिक निश्चित समय से अध्कि कार्य करना चाहता है तो उसे निश्चित समय के 25÷ तक अतिरिक्त समय कार्य करने की अनुमति दी जाये। इस अतिरिक्त समय में उत्पादित वस्तु पर उसको पूर्व दर के अनुसार मजदरूी निकालने के पश्चात् उस अतिरिक्त मजदूरी में से 10÷ कम कर दिया जाए। यह कमी वास्तव में "ास की राशि को प्रकट करती है। इसकी गणना निम्न प्रकार होगी।

निश्चित समय 800 घण्टे

निश्चित कार्य 500 सोल

निश्चित मजदूरी 10 रुपये

श्रमिक निम्न कार्य करता है।

1. कुल उत्पादन ;निश्चित समय मेंद्ध—550 सोल अतिरिक्त उत्पादन ;2 घण्टेद्ध—130 सोल। उसे मजदूरी निम्न प्रकार दी जायेगी।
2. न्यूनतम कार्य हेतु न्यूनतम मजदूरी = 10.00 रुपये

अतिरिक्त कार्य हेतु मजदूरी

$\frac{10}{500} \times 50 = 1.00$ रुपया

अतिरिक्त समय में कार्य

$\frac{10}{500} \times 130 = 2.60$

$$\frac{MW^1}{MP} \times EW^2 = AW^1$$

Less 10% for Dep. of Rs. 2.60 = .26 = 2.34 रुपया

कुल मजदूरी 10.00 + 1.00 + 2.60—26 = 13.34 रुपया

इस प्रकार इस प्रणाली में वे सभी गुण उपस्थित हैं जो एक अच्छी मजदूरी की प्रणाली में होनी चाहिएं—अर्थात् सरल, प्रेरणा—प्रद शोषण का अभाव, अन्य व्यक्तियों के रोजगारों के अवसरों में कमी न करना, श्रमिक के जीवनस्तर में वृ(ि, वस्तु के लागत मूल्य में कमी, अच्छी किस्म की वस्तुओं का उत्पादन, यन्त्रों की उचित देखभाल एवं श्रमिक संगठनों द्वारा मान्यता।

अध्याय–8

मजदूरी और मजदूरी के सि(ान्त

(Wages and Theories of Wages)

मजदूरी का अर्थ
(Meaning of Wages or Pay)

साधरण बोलचाल की भाषा में मजदूरी का अर्थ केवल शारीरिक श्रम करने वाले श्रमिकों को किए जाने वाले भुगतान से ही लिया जाता है। किन्तु अर्थशास्त्र में मजदूरी का अर्थ विस्तृत है। अर्थशास्त्र में मजदूरी से आशय उस मानवीय शारीरिक तथा मानसिक श्रम से है ध्न की उत्पत्ति के लिए किया जाता है जैसे—वकील की पफीस, अध्यापक का वेतन, कुली का भाड़ा आदि। अतएव मजदूरी से अभिप्राय शारीरिक+मानसिक दोनों प्रकार के श्रम से है।

मजदूरी (Wages or Pay) **से अभिप्राय उस भुगतान से है जो श्रमिकों को कार्य के बदले पारिश्रमिक** (Remunerations) **के रूप में दिया जाता है। यह भुगतान साप्ताहिक, पाक्षिक या मासिक हो सकता है।**

मजदूरी (Wages) और **वेतन** (Salary) में अन्तर होता है। वेतन से आशय उस भुगतान से है जो कार्य के अनुसार न देकर एक निश्चित समय के लिए निश्चित ध्नराशि के रूप में होता है। वेतन आपिफस में काम करने वाले कर्मचारी, प्रबन्ध्क, प्रशासकीय अध्किारी तथा अन्य मानसिक कार्य करने वाले व्यक्तियों को दिया जाता है।

'**Wages** or **Pay** is the remuneration paid for the service of labour in production periodically to a worker (Blue Collarworkers).'

'**Salary** refer to the weekly, Fortnightly or Monthly rates to professional, administrative and clerical employees (White Collar-workers).'

अर्थशास्त्र में **मजदूरी और वेतन** में कोई अन्तर नहीं किया जाता। **बोनस** (Bonus), **रायल्टी** (Royalties), **कमीशन** (Commission) आदि इन सबको भी अर्थशास्त्र में मजदूरी के अन्तर्गत मानते हैं।

मजदूरी की परिभाषा
(Definition of Wages)

1. **प्रो. मार्शल** (Marshall) के अनुसार, ॔मानवीय श्रम के बदले में दिया जाने वाला कोई भी पुरस्कार अर्थशास्त्र में मजदूरी कहलाता है।॑

   (Any type of reward for human exertion whether paid by an hour, a day or any longer unit of time, whether paid in cash or in kind or in both, is known as wages in Economics.)

2. **प्रो. मैकोनल** (Mc Connell) के अनुसार, ॔श्रम के उपयोग के बदले भुगतान की गई कीमत को मजदूरी या मजदूरी की दर कहा जाता है।॑

   (Wages or wage rates are the price paid for use of labour.)

3. **प्रो. बैन्हम** (Benham) के अनुसार, ॔मजदूरी मुद्रा के रूप में दिया गया वह भुगतान है जो एक मालिक किसी श्रमिक को एक समझौते के अनुसार उसकी सेवाओं के लिए देता है।॑

   (A wage may be defined as a sum money paid under contract by an employer to a workers for the serives rendered.)

मजदूरी के उद्देश्य
(Objective of Wages)

मजदूरी के निम्नलिखित उद्देश्य हैं—

1. श्रमिकों को श्रम (Labour) के प्रयोग के बदले कीमत (Price) दिलाना।
2. श्रमिकों की न्यूनतम आवश्यकतओं की पूर्ति के लिए मजदूरी का आश्वासन दिलाकार औद्योगिक शान्ति स्थापित करना।
3. श्रमिकों की कार्यक्षमता में वृ(ि करना।
4. मजदूरी मानसिक और शारीरिक श्रम (Labour) की कीमत (Price) होती है।
5. श्रमिकों को उत्साहित करना।
6. अयोग्य औद्योगिक इकाइयों की समाप्ति।
7. प्रबन्ध में सुधर।
8. श्रमिक के भरण—पोषण का साध्न।

नकद मजदूरी तथा वास्तविक मजदूरी
(Money or Nominal Wages and Real Wages)

अर्थशास्त्र में मजदूरी शब्द का प्रयोग दो अर्थों में किया जाता है—

1. नकद मजदूरी या मौद्रिक मजदूरी (Nominal wages or Money wages), तथा
2. वास्तविक मजदूरी (Real wages)।

1. **नकद मजदूरी** (Nominal wages or Money wages)ः फकिसी मजदूर को उसके श्रम के बदले में मुद्रा के रूप में जो पारिश्रमिक दिया जाता है उसे नकद मजदूरी कहते हैं।य सेलिंगमैन (Seligman) के अनुसार, फ्नकद द्रव्य के रूप में दी गई मजदूरी, मजदूरी है।य (Money wages are actual wages paid in money) जैसे यदि कोई श्रमिक इस्पात के कारखाने में काम करता है जिसमें उसका पारिश्रमिक 100 रुपये प्रतिमाह है तो यह कहा जायेगा कि उसकी नकद मजदूरी 100 प्रतिमाह है। दूसरो शब्दों में, मुद्रा के रूप में दी जाने वाली मजदूरी को नकअ मजदूरी कहते हैं। मजदूर नकद मजदूरी इसलिए स्वीकार करते हैं कि इसके द्वारा वे अपनी आवश्यकता की वस्तुओं की वस्तुओं तथा सेवाओं को खरीदते हैं।

2. **वास्तविक मजदूरी** (Real Wages): मजदूरी अपनी नकद मजदूरी से जो वस्तुएँ या सेवाएँ खरीद सकता है वह उसकी वास्तविक मजदूरी कहलाती है। (Real wages indicate the quantity of goods and services which one can obtain with his money wages, In other words, real wages are the purchasing power of money wages.) मजदूरों को कभी—कभी मजदूरी के अलावा कुछ अन्य सुविधएँ भी दी जाती है। जैसे, कपड़ा खाना, मकान आदि। ये सारी सुविधएँ वास्तविक मजदूरी के अन्तर्गत ही सम्मिलित होती है। जैसे रेलवे कर्मचारियों को नकद मजदूरी के साथ—साथ सस्ती दर पर राशन, मकान, कपड़ा, चिकित्सा आदि भी प्राप्त होती हैं। ये सभी सुविधएँ उनकी वास्तविक मजदूरी के अन्तर्गत ही सम्मिलित हैं। इस प्रकार **टॉमस** (Thomas) के शब्दों में फ्वास्तविक मजदूरी श्रमिक के कार्य से सम्बन्धित शु(लाभों को बतलाती है, अर्थात् उन आवश्यक आरामदायक तथा विलासिता सम्बन्धी वस्तुओं को बतलाती है जो श्रमिक अपनी सेवाओं के बदले प्राप्त करता है।य (Real wages refer to the net advantages of the worker's ocupation, i.e. the amount of the necessaries, comforts and Luxuries of life which the worker can command in return for his services.)

नकद मजदूरी एवं वास्तविक मजदूरी में अन्तर
(Distinction between Money Wages and Real Wages)

सेलिंगमैन (Seligman) के शब्दों में, फ्नकद मजदूरी मुद्रा के रूप में भुगतान की गई असल मजदूरी है तथा वास्तविक मजदूरी वे वस्तुएँ हैं जिन्हें नकद मजदूरी से हम खरीद सकते हैं।य (Money wages are actual wages paid in Money; Real wages are commodities and services that money can buy.) इसी प्रकार **मॉरिस डॉब** (Maurice Dobb) के अनुसार, फ्मजदूर को जो मुद्रा दी जाती है वह उसकी मजदूरी है और उस नकद मजदूरी से वह आवश्यक, अरामदायक तथा विलासिता की जो वस्तुएँ खरीद सकता है वह उसकी वास्तविक मजदूरी होती है।य इस प्रकार नकद मजदूरी के अन्तर्गत केवल मुद्रा के रूप में प्राप्त मजदूरी पर ध्यान दिया जाता है किन्तु वास्तविक मजदूरी के अन्तर्गत उन समस्त सुख और सुविधओं पर भी ध्यान दिया जाता है जिन्हें मजदूर नकद मजदूरी के अलावा प्राप्त करता है।

नकद मजदूरी एवं वास्तविक मजदूरी का अन्तर अर्थशास्त्र में बहुत महत्त्वपूर्ण है। मजदूरों की आर्थिक स्थिति उनकी वास्तविक मजदूरी पर निर्भर करती है। **एडम स्मिथ** के अनुसार, फ्श्रम की वास्तविक मजदूरी से उन आवश्यकताओं तथा सुविधओं का ज्ञान होता है जो इसके बदले में प्रापत होती है। इसी प्रकार मौद्रिक मजदूरी से मुद्रा की मात्रा का ज्ञान होता है। श्रमिक मौद्रिक मजदूरी से नहीं वरन् वास्तविक मजदूरी के अनुपात में ही ध्नी तथा निर्ध्न होता है।य (The real wages of the labour may be said to consist in the quantity of the necessaries and convenience that are given for it, its nominal wages is the quantity of the money. The labourer is rich or poor, or well or all rewarded in proportion to the real not the nominal wages of his labour.)

वास्तविक मजदूरी को प्रभावित करने वाले घटक
(Factors Determining Real Wages)

वास्तविक मजदूरी निम्नलिखित घटकों पर निर्भर करती है—

1. **मुद्रा की क्रय शक्ति** (Purchasing power of money): वास्तविक मजदूरी मुद्रा की क्रय शक्ति पर निर्भर करती है। यदि मुद्रा की क्रय–शक्ति अध्कि हुई तो कम मुद्रा पर ही अध्कि वस्तुएँ खरीदी जा सकती है। इसके विपरित क्रय–शक्ति कम रहने पर अध्कि मुद्रा सें भी कम वस्तुएँ खरीदी जा सकती है। द्रव्य की क्रय–शक्ति समय–समय तथा स्थान–स्थान में अलग–अलग रहती है।
2. **सहायक आय** (Supplementary earnings): किसी श्रमिक की वास्तविक मजदूरी का पता लगाने के लिए यह जानना भी आवश्यक है कि नकद मजदूरी के अतिरिक्त उसे किसी बाहरी आय की सुविध है या नहीं। कुछ व्यवसायों में मजदूरों को नकद मजदूरी के अतिरिक्त अन्य प्रकार की सुविधएँ भी प्राप्त होती हैं। जैसे—मुफ्रत मकान, चिकित्सा तथा शिक्षा आदि। ऐसे व्यवसायों में वास्तविक मजदूरी अध्कि होती है।
3. **कार्य की प्रकृति** (Nature of work): अगर कार्य खतरनाक है तथा गंदी जगहों में करना पड़ता है तो वास्तविक मजदूरी कम होती है। जैसे–रेल तथा जहाज के चालकों का कार्य अध्कि खतरनाक तथा कष्टदायक होता है। अतः यहाँ अन्य कार्यों की तुलना में समान नकद मजदूरी रहने पर भी वास्तविक मजदूरी कम होता है।
4. **काम सीखने का समय और व्यय** (Period and Cost of Training): कुछ कार्य ऐसे होते हैं जिन्हें सीखने में अध्कि समय तथा खर्च लगता है। जैसे—डॉक्टर, इन्जीनियर इत्यादि के कार्य। ऐसे कार्यों में वास्तविक मजदूरी उन कार्यों की तुलना में कम होती है, जिन्हें सीखने में व्यय तथा समय कम लगता है।
5. **भविष्य में उन्नति की आशा** (Prospect of promotion in future): जहाँ मजदूरों को भविष्य में उन्नति की आशा अध्कि होती है वहाँ वास्तविक मजदूरी भी अध्कि होती है। इसके विपरित जहाँ पर इस प्रकार की आशा नहीं रहती, वहाँ नकद मजदूरी अध्कि होने पर भी वास्तविक मजदूरी कम होती है।
6. **कार्य की अवध्** (Period of work): जहाँ पर काम लगातार साल भर तक होता है, वहाँ वास्तविक मजदूरी अध्कि होती है। इसके विपरित जहाँ पर वर्ष में कुछ दिन बेकार रहना पड़ता है, वहाँ पर वास्तविक मजदूरी भी कम होती है।

7. **परिवार के सदस्यों को काम मिलने की सुविध** (Facilities for employment to dependents): कुछ व्यवसाय या कार्य ऐसे होते हैं जहाँ श्रमिकों के बच्चों तथा औरतों को भी कार्य मिल जाता है। जैसे—कपड़े के कारखाने में औरतों तथा बच्चों को भी सुविधपूर्वक काम मिल जाता है। अतः इसमें कार्य करने वांले मजदूरों की वास्तविक आय अध्कि होती है।
8. **आराम का समय एवं छुट्टिद्धयाँ** (Leisure and holidays): जहाँ पर मजदूरों को छुट्टद्धी तथा आराम का समय अध्कि मिलता है वहाँ वास्तविक मजदूरी भी, अन्य बातों के समान रहने पर, अध्कि होती है।
9. **सामाजिक सम्मानः** जिन व्यवसाय तथा कार्यों को समाज में आदर तथा सम्मान की दृप्ि से देखा जाता है उनमे वास्तविक मजदूरी अध्कि होती है। इसके विपरित जहाँ सामाजिक प्रतिद्दा नहीं होती वहाँ वास्तविक मजदूरी कम प्राप्त होती है।
10. **व्यापारिक खर्च** (Trade expenses): कुछ खास व्यवसाय इस प्रकार के होते हैं जहाँ कर्मचारियों को अपना कार्य चलाने के लिए कुछ खर्च करना पड़ता है। जैसे—शिक्षकों तथा वकीलों को पुस्तकों पर। अतएव इस प्रकार के व्यवसाय में वास्तविक मजदूरी अपेक्षाकृत कम होती है।

मजदूरी की दर में विभिन्नता के कारण
(Causes of Difference in Wages)

विभिन्न व्यवयसायों में मजदूरों की दर में विभिन्नता पाई जाती है। कुछ व्यवसाय ऐसे होते हैं जहाँ पर मजदूरी की दर अध्कि तथा कुछ में मजदूरी की दर कम होती है। इसके निम्नलिखित कारण हैं—

1. **मजदूरों की कार्यकुशलता में अन्तर** (Difference in efficiency of labourers): श्रमिकों की कार्यकुशलता में विभिन्नता के कारण ही विभिन्न व्यवसायों में मजदूरी की दर भिन्न—भिन्न होती है। जिन व्यवयसायों में मजदूरों की कार्यक्षमता अध्कि होती वहाँ अध्कि मजदूरी मिलती है। इसका करण यह है कि कोई भी उत्पादक किसी मजदूर को उसकी सीमान्त उत्पादकता से अध्कि मजदूरी नहीं देता है।
2. **कार्य स्थायी होना** (Regularity of work or employment): कुछ कार्य स्थायी तथा कुछ मौसमी (Seasonal) होते हैं। जो कार्य स्थायी होते हैं वहाँ मजदूरी की दर भी कम होती है तथा जो अस्थायी या मौसमी होते है वहाँ मजदूरी अध्कि होती है क्योंकि मौसमी व्यवसाय में मजदूरों को बहुत अध्कि समय तक बेकार रहना पड़ता है जिससे वे अध्कि मजदूरी लेते हैं। यही कारण है कि कपड़े के कारखाने की अपेक्षा चीनी के कारखाने में मजदूरों को अध्कि मजदूरी मिलती है।
3. **कार्य की प्रकृति** (Nature of Work): बहुत से कार्य बहुत खतरनाक होते हैं जिससे मजदूरों की शक्ति शीघ्र कम होती है। जैसे रेलवे ड्राइवर का कार्य, जहाज चलाने वाले का कार्य आदि। इसके अतिरिक्त कुछ ऐसे कार्य भी होते हैं, जिन्हें समाज में नीचा समझा जाता है जैसे सपफाई कर्मचारी (Sweeper) का काम। इसके अतिरिक्त बहुत सारे कार्य ऐसे हैं जिनसे सामाजिक प्रतिद्दा मिलती है तथा जोखिम की मात्रा भी बहुत कम होती है। अतः पहले प्रकार के कार्यों में मजदूरी दूसरे प्रकार के कार्यों की अपेक्षा सामान्यतः अध्कि मिलती है।
4. **मजदूरी के अतिरिक्त अन्य लाभ** (Other incidental advantages): कुछ व्यवसायों में मजदूरों की मजदूरी के अतिरिक्त अन्य प्रकार के लाभ तथा सुविधएँ भी मिलने की आशा रहती है। जैसे मुफ्रत मकान, मुफ्रत चिकित्सा सुविध आदि।
5. **भविष्य में उन्नति और सपफलता की आशा** (Prospect of Future Promotion): जिस व्यवसाय में भविष्य में उन्नति की आशा अध्कि रहती है, उसमें लोग प्रारम्भ में कम ही मजदूरी स्वीकार कर लेते हैं। इसी प्रकार जहाँ सपफलता तथा भविष्य में उन्नति की आशा अध्कि रहती है वहाँ मजदूरी कम होती है लेकिन जहाँ भविष्य में उन्नति की आशा कम रहती है वहाँ मजदूरी की दर भी अध्कि होती है।
6. **कार्य का दायित्व तथा जोखिम** (Responsibility of the work): जिस व्यवसाय में जोखिम की मात्रा अध्कि रहती है, वहाँ मजदूरी भी अपेक्षाकृत अध्कि रहती है, इसी प्रकार जिस कार्य में दायित्व अध्कि होता है, वहाँ मजदूरी भी अध्कि होती है।

7. **कार्य सीखने का खर्च तथा समय** (Cost and period of training): जिस व्यवसाय को सीखने का खर्च अध्कि होता है उसमें मजदूरी अपेक्षाकृत अध्कि मिलती है।

स्त्रियों को कम मजदूरी मिलने के कारण
(Causes of low Wages of Women)

अध्किांश व्यवसायों में पुरुषों की अपेक्षा औरतों को कम मजदूरी मिलती है। इसके निम्नलिखित कारण हैं—

1. **शारीरिक शक्ति की कमीः** स्त्रियों की शारीरिक शक्ति पुरुषों की तुलना में कम होती है। कम उत्पादन शक्ति के कारण इन्हें कम मजदूरी मिलती है।
2. **प्राचीन परम्पराः** प्राचीन सामाजिक रीति–रिवाजों के कारण औरतें भी बहुध काम नहीं चाहती है। वे अपना समय घरेलू कार्यो में ही लगाती हैं। इससे भी इन्हे कम मजदूरी मिलती है।
3. **लगातार कार्य पर न रहनाः** स्त्रियाँ लगातार कार्य करने पर नहीं रहती हैं। साधरणतया विवाह के बाद ये किसी व्यवसाय में नहीं जाना चाहती। इस कारण भी इन्हें कम मजदूरी मिलती है।
4. **संगठन का अभावः** स्त्रियों में संगठन का अभाव पाया जाता है। पुरुषों की तरह यदि इनमें संगठन होता तो ये मिल–जुलकर अपनी मजदूरी बढ़वा सकती थी।
5. **स्त्रियों के सीमित कार्यः** स्त्रियाँ सभी प्रकार के कार्य तथा सभी उद्योगों में कार्य नहीं कर सकती। ये कुछ इने–गिने कार्यो को ही कर सकती है।
6. **शिक्षा एवं ट्रेनिंग का अभावः** स्त्रियों में शिक्षा तथा ट्रेनिंग की कमी रहती है जिससे इन्हें पुरूषों की अपेक्षा कम मजदूरी मिलती है।
7. **सीमांत दायित्वः** पुरूषों की अपेक्षा औरतों का सामाजिक दायित्व कम होता है, अतएव इन्हें कम मजदूरी मिलती है। ये केवल अपनी आय पर निर्भर नहीं करती वरन् अपने पति, पुत्र, पिता या भाई की कमाई पर भी निर्भर करती है।

मजदूरी निर्धरण का सि(ांत अथवा मजदूरी कैसे निर्धरित होती है?
(How Wages are Determined?)

अथवा

मजदूरी के सि(ांत
(Theories of Wages)

श्रमिकों की मजदूरी निर्धरण के लिए समय–समय पर अनेक अर्थशास्त्रियों ने विभिन्न सि(ांतों की रचना की है। इनमें से प्रमुख सि(ांत निम्नलिखित हैं—

1. जीवन निर्वाह मजदूरी की सि(ांतऋ
2. मजदूरी का जीवन स्तर सि(ांतऋ
3. मजदूरी का अवशेष अध्किारी सि(ांतऋ
4. मजदूरी कोष सि(ांतऋ
5. मजदूरी का सीमान्त उत्पादकता सि(ांतऋ
6. मजदूरी का बट्टद्धा सहित सीमान्त उत्पादकता का सि(ांतऋ
7. मजदूरी का आधुनिक सि(ांत।

जीवन निर्वाह मजदूरी का सि(ांत
(The Subsistance Theory of Wages)

इस सि(ांत का प्रतिपादन 18वीं शताब्दी में प्रकृतिकवादी अर्थशास्त्रियों (Physiocrats Economist) ने किया था। इस सि(ांत का सर्वाध्कि समर्थन और स्पष्टीकरण **रिकार्डो** (Recardo) ने किया था। जर्मन अर्थशास्त्री **लेसली** (Lessale) ने इस सि(ांत का मान्यता देते हुए इस सि(ांत को फ्मजदूरी का लौह नियमग् (Iron Law of Wages) अथवा **ब्रजैन नियम** (Brazen Law of Wages) के नाम से पुकारा था।

सि(ांत मान्यताएँ (Assumptions of the Theory): यह सि(ांत दो मान्यताओं पर आधरित है।

1. **क्रमागत उत्पत्ति “ास नियम** (Law of Diminishing Returns) का लागू होना।
2. **जनसंख्या में तेजी से वृ(ि** (Rapid Increase of Population) होना।

उपर्युक्त दोनों मान्यताओं के अनुसार—

(i) खाद्य पदार्थो की वृ(ि एक सीमा के बाद बढ़ाई जा सकती, परिणामस्वरूप वस्तुओं के मूल्यों में वृ(ि होगी।

(ii) जनसंख्या वृ(ि से मजदूरों की मजदूरी में कमी आती है।

इन दोनों मान्यताओं के अनुसार, फ्एक ओर जनसंख्या वृ(ि से मजदूरों में कमी आती है तो दूसरी ओर मूल्य व(ि से श्रमिक की असल मजदूरी (Real Wage) कम हो जाती है।ग् प्रो. जीड (Prof. Jeede) ने इस विषम परिस्थितियों के बीच श्रमिक की स्थिति को बतलाते हुए लिखा है—फ्एक ओर कम मजदूरी और दूसरी ओर उफँचे मूल्य की स्थिति में श्रमिक अपने को हथौड़ा (Hammer) और निहाई (Envil) के बीच कुचला हुआ अनुभव करता है।ग्

("Between low wages on the one hand and high prices on the other, the worker feels himself crushed as between the hammer and the Envil.")

तुर्गोत (Turgot) के अनुसार, फ्इस प्रकार की मजदूरी प्राकृतिक नियम के अनुसार निर्धरित होती है। यदि मजदूरी जीवन निर्वाह के न्यूनतम स्तर (Minimum level) से अध्कि हो जायेगी तब श्रमिक अपनी शादियों अध्कि करेंगे, परिणामस्वरूप श्रमपूर्ति में वृ(ि होगी। श्रमपूर्ति बढ़ जाने से उनकी मजदूरी कम हो जायेगी। इसके विपरित मजदूरी जीवन–निर्वाह स्तर से कम होने पर श्रमिकों की पूर्ति कम हो जायेगी और परिणामस्वरूप मजदूरी में वृ(ि होगी।ग् अन्ततः मजदूरी जीवन निर्वाह मजदूरी की दर के बराबर आ जायेगी।

रिकार्डो (Recardo) ने इस सि(ांत का समर्थन करते हुए लिखा है—फ्श्रम का प्राकृतिक मूल्य वह मूल्य है जो श्रमिक को एक–दूसरे के साथ निर्वाह करने के लिए तथा अपने अस्तित्व को, बिना वृ(ि या कमी के स्थिर बनाये रखने के लिए आवश्यक होता है।ग्

("The natural price of labour is that price which is necessary to enable the labourers one with another to subsist and perpetuate their race without either increase or diminution.")

आलोचना (Criticism): यह सि(ान्त एक ओर 'आशवादी' और दूसरी ओर 'निराशावादी' है। 'आशावादी दृष्टिकोण' इसलिए है कि इसके आधर पर इस तथ्य तक सरलता से पहुँचा जा सकता है कि श्रम की एक उचित पूर्ति को प्राप्त करने के लिए मजदूरी के एक फ्न्यूनतम सीमाग् है और सामान्यतः इस सीमा से कम मजदूरी प्रदान नहीं की जा सकती है। इसी आधर पर आधुनिक अर्थशास्त्रियों ने मजदूरी के अन्य सि(ान्तों की रचना की है।

इस सि(ांत का निराशावादी दृष्टिकोण इसलिए है कि मजदूरी का 'गठबंध्न' निर्वाह के न्यूनतकम स्तर से कर दिया है। परिणामस्वरूप मजदूरी को उससे उफपर उठाना असम्भव हो जाता है। इस सि(ांत के अन्य दोष निम्न हैं—

1. यह सि(ांत पूरी तरह **जनसंख्या सि(ांत** (Thoery of Population) पर आधरित है जबकि जनसंख्या का सि(ांत स्वयं दोषपूर्ण है। अतः उस पर आधरित यह सि(ान्त भी दोषपूर्ण है। इस सि(ान्त का यह कथन गलत है कि मजदूरों की आर्थिक स्थिति के अच्छा होने से उनकी जनसंख्या बढ़ेगी। यह विचार वास्तविक और व्यावहारिक नहीं है। उफँचे जीवन स्तर को बनाने और उसका आनन्द लेने की कामना जन्म दर को सदैव कम करती है।

2. यह सि(ांत माँग पक्ष पर विचार नहीं करता है। यह उत्पादन व्यय को ही महत्त्व देता है। केवल पूर्ति पर ही यह सि(ांत बनाया गया है, जबकि प्रत्येक वस्तु के मूल्य निर्धरण में माँग और पूर्ति दोनों पर ध्यान दिया जाना चाहिए।
3. फइतिहास इस सि(ान्त का खण्डन करता है।य इतिहास हमें बतलाता है कि विकसित देशों में श्रमिक वर्ग आराम और विलासिता की वस्तुओं का भी उपभोग कर रहा है। यदि मजदूरी जीवन निर्वाह के आधर से अध्कि न होती तब वह आराम और विलासिता की वस्तुओं का किस प्रकार उपभोग कर सकता था।
4. इस सि(ांत की रचना करने में फश्रमिकों की कार्यकुशलता पर कतई ध्यान नहीं दिया गया है।य कार्यकुशलता में वृ(ि हाने से श्रमिक की उत्पादकता में वृ(ि होगी, परिणामस्वरूप उसकी मजदूरी भी बढ़नी चाहिये।
5. यह सि(ांत विभिन्न व्यक्तियों, व्यवसायों तथा अन्य क्षेत्रों में पाये जाने वाले मजदूरी के अन्तर को नहीं समझता। इसके अनुसार, समस्त श्रमिकों को एक–सी मजदूरी मिलनी चाहिये थी, क्योंकि प्रायः जीवन निर्वाह सभी श्रमिकों के लिए समान ही है। इस प्रकार इस सि(ांत में जीवन–स्तर के विचार को नहीं माना गया है।

उपर्युक्त दोषों के कारण इस सि(ांत को 19वीं सदी के मध्य तक त्याग दिया गया था। अब यह सि(ांत इतिहास के पृष्ठों में समा गया है।

मजदूरी का जीवन–स्तर सि(ांत
(The Standard of Living Theory of Wages)

जीवन निर्वाह सि(ांत की कड़ी आलोचना के बाद उसके स्थान पर फमजदूरी जीवन–स्तर सि(ांतय को मान्यता दी गई है।

अर्थ एवं व्याख्या (Meaning and Explanation)

इस सि(ान्त के अनुसार जिस श्रमिक वर्ग का जैसा जीवन–सतर होगा उसके अनुसार ही उसे मजदूरी मिलेगी। जीवन–स्तर का आशय केवल आवश्यक आवश्यकताओं से नहीं है अपितु इसमें शिक्षा, आराम तथा विलासिता की वे आवश्यकताएँ सम्मिलित की जाती है जिनके उपयोग का श्रमिक आदी (Habitual) हो गया है।

सि(ांत के गुण (Merits of the Theory)

1. यह सि(ांत श्रमिक की कार्यक्षमता एवं उसकी उत्पादन–शक्ति को ध्यान में रखकर बनाया गया है। जितना उफँचा जीवन–स्तर श्रमिक का होगा उतनी ही श्रमिक की कार्यक्षमता में वृ(ि होगी, परिणामस्वरूप उत्पादन अध्कि होगा। अध्कि उत्पादन के कारण मजदूरी जीवन–स्तर के आधर पर दी जा सकती है।
2. यदि किसी श्रमिक को लम्बे समय तक अध्कि मजदूरी दी जाती रहेगी तो वह पहजे की अपेक्षा उफँचा जीवन व्यतीत करने का आदी हो जाता है। इस स्तर को बनाये रखने के लिए वह सदैव प्रयत्नशील रहेगा चाहे इसके लिए वह अविवाहित ही क्यों न रहे।
3. यदि श्रमिक को अपने जीवन निर्वाह से अध्कि मजदूरी मिलती है तो वह अपनी मजदूरी का कुछ भाग भविष्य के लिए बचाकर रख लेगा। इस बचत से वह एक ओर अध्कि समय तक सेवायोजकों से अध्कि मजदूरी प्राप्त करने के लिए संघर्श कर सकेगा तथा दूसरी ओर भविष्य में भी अपने जीवन–स्तर को उफँचा बनाये रखने में सपफल हो सकेगा।

आलोचना (Criticism)

1. यह सि(ांत श्रम के पूर्ति को लेकर चलता है तथा श्रम में माँग पक्ष की उपेक्षा करता है।
2. श्रमिक की मजदूरी केवल जीवन–स्तर से प्रभावित न होकर अन्य बातों से भी प्रभावित होती है।
3. उफँचा जीवन–स्तर केवल उफँची मजदूरी दर से नहीं हो सकता अपितु एक श्रमिक के उफँचे जीवन–स्तर को शिल्पकला में उन्नति, विनियोग की दर तथा उत्पादन विध् िभी प्रभावित करती है।

मजदूरी का अवशेष अध्किारी सि(ांत

अथवा

मजदूरी का अवशि५ स्वत्व सि(ांत

(The Residual Claimant Theory of Wages)

प्रायः व्यवहार में यह देखने में आता है कि फ्मजदूरी श्रमिक की उत्पादका द्वारा निर्धरित होती है।य यही विचार इस सि(ांत का आधर है। सर्वप्रथम इस सि(ांत का प्रतिपादन **वाकर** (Walker) ने किया था। वाकर ने लिखा है—फ्कुल उत्पादन में से लगान, ब्याज और लाभ को घटाने के बाद जो कुछ शेष बचता है, मजदूरी उसी के बराबर होती है।य (Wages are equal to the whole product minus rent, interest and profit.)

प्रो. वाकर (Walker) के अनुसार उत्पादन चार भागों में बाँटा जाता है। जैसे—लगान, ब्याज, लाभ तथा मजदूरी। इसमें लगान, ब्याज, तथा लाभ का भुगतान कुल उत्पादन को ध्यान मे रखकर कर दिया जाता है। इन तीनों का भुगतान करने के बाद कुल उत्पादन में जो शेष बचता है उसे मजदूरी कहते हैं। अर्थात्

(Wages = Total Production - (Rent + Interest + Profit)

इस प्रकार **वाकर** (Walker) के अनुसार श्रमिक बचे हुए ध्न का अध्किारी है। इस सि(ान्त से यह सि(हो जाता है कि फ्श्रमिकों की कार्यक्षमता अथवा उत्पादन शक्ति में वृ(ि हो जाये तो कुल उत्पादन में अवश्य वृ(ि होगी। परिणामस्वरूप मजदूरों के अवशेष (Resident) भाग में वृ(ि होगी।

सि(ांत के गुण (Merits of the Theory)

मजदूरी का यह सि(ांत रा५ीय आय के उस भाग पर श्रमिक का अध्किार मानता है जो श्रमिक के श्रम और प्रयासों से उत्पन्न हुआ है। यह पहला सि(ांत है जिसने यह सि(किया कि यदि श्रमिक योग्य है और उसकी कार्यक्षमता बढ़ी हुई है तो उसे निश्चित रूप से अध्कि मजदूरी मिलेगी।

आलोचना (Criticism)

1. यह सि(ांत 'श्रम पूर्ति' पक्ष पर ध्यान नहीं देता।
2. यद्यपि यह सि(ांत यह बतलाता है कि विभिन्न देशों में मजदूरी भिन्न–भिन्न क्यों है लेकिन यह सि(ांत हमें यह नहीं बतलाता है कि एक ही देश में मजदूरी के भिन्न–भिन्न होने के क्या कारण है।
3. यह सि(ांत श्रमिक संघों के महत्त्व को स्वीकार नहीं करता जबकि व्यवहार में श्रमिक संघ मजदूरी वृ(ि में बड़ा सहयोग देते हैं।
4. इस समय सभी अर्थशास्त्री इस मत से सहमत हो गय हैं कि लाभ वास्तव में अतिरिक्त एवं बचत है और सभी साध्नों के मूल्य स्थिर हैं। इस सि(ांत में लाभ के स्थान पर मजदूरी को फ्अवशेष आयय (Residual Income) समझा गया है। यह तर्क उचित नहीं है।

मजदूरी कोष सि(ांत

(The Wages Fund Theory)

इस सि(ांत की झलक फ्**एडम स्मिथ** (Adam Smith) के विचार से मिलती है। परन्तु ठीक से इस सि(ांत का प्रतिपादन **जॉन स्टुअर्ट मिल** (John Stuart Mill) ने 1948 में किया था।

मिल ने कहा है—फ्अस्थिर (Unstable) पूँजी के उस भाग को, जिसे श्रमिकों पर खर्च किया जाता है जिसे मजदूरी कोष (Wages Fund) कहते हैं, तथा श्रमिकों की संख्या, जो मजदूरी (Wages) पर कार्य करती है, इन दोनों के अनुपात पर मजदूरी की दर निर्भर करती है।य

मिल के स्व्यं के शब्दों में—फ्मजदूरी प्रमुख रूप से श्रम की माँग (Demand) और पूर्ति (Supply) पर निर्भर करती है या जैसा कि प्रायः कहा जाता है, जनसंख्या (Population) और पूँजी (Capital) के बीच अनुपात पर निर्भर करती है। शब्दों की इन सीमाओं के साथ मजदूरी न केवल पूँजी तथा श्रम की मात्रा पर निर्भर करती है। अपितु प्रतियोगिता के नियमों के अनुसार किसी भी अन्य कारण से मजदूरी प्रभावित नहीं हो सकती है। मजदूरी की सामान्य दर (General rate), बिना उस कोष की कुल मात्रा को बढ़ाये हुए, जो श्रम को किराये पर रखने के लिए निश्चित कर दी गयी है अथवा किराये पर रखे जाने वाले प्रतियोगियों में कमी किए हुए बिना नहीं बढ़ाई जा सकती है और न उस कोष (Fund) में बिना कमी किए हुए अथवा बिना श्रमिकों की संख्या में वृ(किये मजदूरी को कम किया जा सकता है।य

जे.एस. मिल (J.S. Mill) के अनुसार—

(i) देश की पूँजी की एक स्थिर मात्रा श्रम क्रय करने के लिए निश्चित कर दी जाती है। इस पूर्वनिर्धरित पूँजी की मात्र को ही फ्मजदूरी कोषय (Wages Fund) कहते हैं। यह मजदूरी कोष श्रम की माँग (Demand) बतलाता है।

(ii) किसी दिये हुए समय में श्रमिकों की एक ऐसी संस्था होगी जोकि अवश्य काम करेगी। श्रमिकों की यह संख्या पूर्ति पक्ष (Supply Side) का निर्माण करती है।

(iii) श्रमिकों की संख्या द्वारा मजदूरी कोष (Wages fund) को भाग देने पर औसत मजदूरी (Average Wages) प्राप्त हो जाती है, यानी मजदूरी इन दोनों के अनुपात पर निर्भर करती है।

(iv) यदि जनसंख्या में वृ(के साथ–साथ श्रमिकों की संख्या में वृ(हो जाती है तब उसी हिसाब से प्रति श्रमिक मजदूरी कम हो जायेगी। जब श्रमिकों की संख्या में कमी होगी तब उन्हें मिलने वाली मजदूरी बढ़ जाएगी।

इस सि(ांत से यह निष्कर्ष (Conclusion) निकलता है कि श्रमिकों की मजदूरी केवल दो दशाओं में ही बढ़ सकती है—

(i) श्रमिकों को अध्कि मजदूरी देने के लिए मजदूरी कोष में वृ(की जाये।

(ii) जे.एस. मिल ने अपने सि(ांत में श्रमिकों की कार्यक्षमता और उत्पादन क्षमता पर कोई ध्यान न देकर बड़ी भूल की है।

(iii) इस सि(ांत के कथन और व्याख्या में बहुत अन्तर है। मिल के अनुसार—मजदूरी (Wages) श्रम की माँग और पूर्ति द्वारा निर्धरित होती है। श्रम की माँग (Demand of Labour) पूँजी के द्वारा निर्धरित होती है जो स्थिर (Constant) है। यह आधर कतई ठीक नहीं है, क्योंकि ऐसा मान लेने से कि मजदूरी कोष (Wages Fund) निश्चित है, यह कैसे संभव हो सकता है कि मजदूरी (Wages) पर पूँजी और माँग का प्रभाव पड़ता है। इस प्रकार केवल मजदूरी पर श्रम की पूर्ति (Supply of Labour) का ही प्रभाव पड़ता है जो कि एक पक्षीय है।

(iv) यह सि(ांत उत्पादन के क्रमागत उत्पत्ति वृ(नियम (Law of Increasing Returns) की भी अवहेलना करता है।

(v) यह सि(ांत विभिन्न उद्योगों में मजदूरी की विभिन्नता को स्प৮ नहीं करता।

(vi) यह सि(ांत अवैज्ञानिक है क्योंकि पहले मजदूरी कोष निर्धरित किया जाता है और बाद में मजदूरी का निर्धरण किया जाता है। व्यवहार में इसका उल्टा होता है।

मजदूरी का सीमान्त उत्पादकता का सि(ांत
(Marginal Productivity Theory of Wages)

इस सि(ांत का प्रतिपादन **जेवन्स** (Jevons) ने किया है। इस सि(ांत के अनुसार—मजदूरी का निर्धरण श्रम की सीमान्त उत्पादकता के द्वारा होता है।

श्रम की सीमान्त उत्पादकता (Marginal Productivity of Labour) से आशय उस उत्पादन की मात्रा से है जो उत्पत्ति में प्रयोग होने वाले उत्पादन के अन्य साध्नों को स्थिर करके या पहले जैसा ही रहने पर एक श्रमिक के बढ़ने या कम होने से बढ़ती या घटती है। उदाहरण के लिए–यदि 25 मजदूर उत्पादन के अन्य साध्नों के साथ मिलकर 100 इकाइयों का उत्पादन करते हैं और अब यदि इसी उद्योग में 26 श्रमिक उत्पादन के साध्नों का उसी मात्रा के साथ मिलकर 115

इकाइयों का उत्पान करते हैं तो श्रम की सीमान्त उत्पादकता इन दोनों के अन्तर ;115–100=15द्ध15 इकाई के बराबर होगी। अतः एक उत्पादक मजदूरी 15 इकाईयों के बराबर ही प्रदान करेगा। इस दश में एक उत्पादक सीमान्त मजदूर को अपने यहाँ काम पर नहीं लगाना चाहता है क्योंकि उसे लगाने से उसे कोई लाभ नहीं होता। वह श्रमिक जितना उत्पादन करता है उतनी ही उसे मजदूरी मिल जाती है।

इस सि(ांत के अनुसार, मजदूरी श्रम की सीमान्त उत्पादकता द्वारा निर्धरित होती है और संतुलन बिन्दु पर इसके बराबर हो जाती है।

एक उत्पादक की दृप्ि से श्रमिकों की संख्या में वृ(करना उस समय तक लाभदायक रहता है जब तक सीमान्त उत्पादकता दी जाने वाली मजदूरी के बराबर नहीं हो जाती है।

आलोचना (Criticism)

1. यह सि(ांत केवल 'श्रम की माँग' पक्ष को महत्त्व देता है,
2. व्यवहार में सेवायोजक सदैव श्रमिकों को सीमान्त उत्पादकता से कम ही मजदूरी देते हैं लेकिन कभी–कभी श्रमिक भी श्रम संघों की सहायता लेकर अपनी माँगों को मनवाकर सीमान्त उत्पादकता से अध्कि मजदूरी लेने में सपफल हो जाते हैं।
3. यह सि(ांत यह मानकर चलता है कि अन्य उत्पत्ति के साध्नों को स्थिर श्रम की इकाई में वृ(की जा सकती है किन्तु व्यवहार में यह संभव नहीं है जैसे 10 टाइपराइटर पर 10 व्यक्ति टाइप कर रहे हैं। यदि 11वीं व्यक्ति टाइप करने के लिए लगायेंगे तो हमें 11वीं टाइप मशीन की आवश्यकता होगी।
4. यह सि(ांत श्रम बाजार में पूर्ण प्रतियोगिता पर आधरित है परंतु व्यवहार में पूर्ण प्रतियोगिता नहीं पाई जाती है।
5. इस सि(ांत में यह स्वीकार किया गया है कि प्रत्येक श्रमिक एक समान है। यह मान्यता ठीक नहीं है।
6. इस सि(ांत की अन्य मान्यताएँ भी व्यावहारिक नहीं है जैसे–श्रमिक पूर्ण गतिशील है। वस्तुओं के मूल्य सभी स्थानों पर समान रहते हैं।

मजदूरी का बट्टद्धा युक्त सीमान्त उत्पादकता का सि(ांत
(The Discount Marginal Productivity Theory)
अथवा
टॉजिंग का मजदूरी का सि(ांत
(Taussing's Theory of Wages)

इस सि(ांत का प्रतिपादन **प्रो. टॉजिंग** (Prof. Taussing) ने किया था। वास्तविकता यह है कि यह सि(ांत सीमान्त उत्पादकता सि(ांत का ही एक संशोध्ति रूप है। मजदूरी के पुराने सीमान्त उत्पादकता सि(ान्त के स्वरूप को सुधरते हुए प्रो. टॉजिंग कहते हैं—मजदूरी शुल्क सीमान्त उत्पादकता (Marginal Net Productivity) के बराबर नहीं हो सकती है क्योंकि मजदूरी के भुगतान और वस्तुओ के विक्रय के बीच समय का बड़ा अन्तर (Big Time Gap) आ जाता है, जबकि सेवायोतक श्रमिक को मजदूरी पहले देता है और उसकी वस्तु बाद में बाजार में बिकती है। ऐसी स्थिति में सेवायोजक श्रमिक को मजदूरी पहले देता है और उसकी वस्तु बाद में बाजार में बिकती है। ऐसी स्थिति में सेवायोजक श्रमिक को उतनी मजदूरी नहीं देना जितनी कि श्रमिक के द्वारा बनाई गई वस्तु के विक्रय के समय उसे प्राप्त होती है। वस्तु के विक्रय के समय में श्रमिक को सीमान्त उत्पादकता के बराबर मजदूरी मिलती है। वस्तु विक्रय से पूर्व सेवायोजक मजदूरी में से कुछ अंश, जिसे बट्टद्धा (Discount) कहते हैं, काट लेता है (Equal to Interest)। यह बट्टद्धा (Discount) उस ब्याज के बराबर होता है जो किसी श्रमिक को मजदूरी में दी जाने वाली राशि को किसी दूसरे व्यक्ति को उधर दिये जाने पर मिलता है।

इस प्रकार सेवायोजक श्रमिकों की मजदूरी में से बट्टद्ध (Discount) काट लेते हैं। यह कटौती या बट्टद्धा प्रचलित ब्याज दर के बराबर होती है।

आलोचना (Criticism)

1. इस सि(ान्त के अनुसार ब्याज के बराबर मजदूरी में से काटकर मजदूरी श्रमिक को दी जाती है। इससे स्प5 है कि मजदूरी का निर्धरण पहले ही हो चुका है। इस प्रकार यह सि(ान्त दोषपूर्ण है।
2. सीमान्त उत्पादकता सि(ान्त के विरु(सभी आलोचनाएं इस सि(ांत में लागू होती है।
3. आलोचक कहते हैं कि उत्पादन के अन्य साध्नों से बट्टद्धा (Discount) क्यों नहीं लिया जाता है। जैसे—लगान तथा ब्याज में बट्टद्धा क्यों नहीं काटा जाता? केवल मजदूरों की मजदूरी में से ही बट्टद्धा काटने की बात क्यों की जाती है।
4. यह सि(ान्त मजदूरी कोष सि(ानत का ही आधुनिक रूप है। इस सि(ान्त में अनेक दोष पाये जाते हैं।

माँग और पूर्ति सि(ान्त या मजदूरी का आधुनिक सि(ान्त
(Demand and Supply Theory or Modern Theory of Wages)
अथवा
पूर्ण प्रतियोगिता में मजदूरी निर्धरण
(Wages Determination under Perfect Competition)
अथवा
मजदूरी की दर का निर्धरण
(Determination of Wages Rates)

मजदूरी मजदूरों की सेवा का पफल है और यह मजदूरों की माँग तथा पूर्ति द्वारा निर्धरित होती है।

मजदूरों की माँग (Demand for Labour)

उद्यमी मजदूरों की माँग इसलिए करते हैं क्योंकि वे मजदूरों द्वारा पैदा की गई वस्तुओं को बेचकर लाभ कमाते हैं अथवा यों कह लें कि उद्यमी को मजदूरों से उत्पादकता प्रापत होती हैऋ इसलिए उद्यमी मजदूरों को मजदूरी देने को तैयार होता है। अब प्रश्न उठता है कि उद्यमी मजदूरों को कितनी मजदूरी देगा। यह मजदूरी सीमान्त उत्पादकता पर निर्भर करती है।। एक और मजदूर काम पर लगाने से कुल उत्पादन में जो वृ(होती है, उसे एक मजदूर की सीमान्त लागत उत्पादकता कहते हैं (Marginal productivity is the addition to total productivity as a result of employing one more labourer)।

मान लें 10 मजदूर काम पर लगाने से 1,00 रुपये मा काल पैदा होता है। यदि एक मजदूर लगाया जाय अर्थात् यदि 11 मजदूर काम पर लगाए जाएँ तो 1095 रुपये का माल पैदा हुआ तो 95 रुपये 11वीं मजदूर की सीमान्त उत्पादकता है। उत्पादक अथवा उद्यमी अध्कि से अध्कि सीमान्त उत्पादकता के बराबर मजदूरी दे सकता है। जब तक सीमान्त उत्पादकता मजदूरी से अध्कि होगी, उद्यमी अध्किाध्कि मजदूरों की काम पर लगायेगा। ऐसा करने से उसका लाभ बढ़ता जाता है और उसका उद्देश्य अध्कितम लाभ कमाना है। ज्यों—ज्यों वह अध्किाध्कि मजदूर काम पर लगाता जाएगा, त्यो—त्यों मजदूरों की सीमान्त उत्पादकता घटती जाएगी। जब वह घटती—घटती मजदूरी के समान हो जाएगी तो उद्यमी रूक जाएगा और उससे अध्कि संख्या में मजदूर काम पर नहीं लगाएगा अन्यथा उसे घाटा पड़ेगा। क्योंकि यदि वह स्तर से अध्कि मजदूर काम पर लगाता है तो उसे मजदूरी अध्कि देनी पड़ती है और मजदूरों से प्राप्त उत्पादन कम होता है अतः वह ऐसा नहीं कर सकता। इस सीमा पर ;जहाँ वक रूका हैद्ध अन्तिम मजदूर को सीमान्त श्रम (Marginal Labour) कहा जाता है और उसकी उत्पादकता को सीमान्त उत्पादकता कहते हैं।

हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि उद्यमी मजदूरों की सीमान्त उत्पादकता से अध्कि मजदूरी किसी हालत में नहीं दे सकता। मानो यदि सीमान्त उत्पादकता 5 रुपये है तो अध्कि—से—अध्कि मजदूरी 5 रुपये हो सकती है।

मजदूरों की पूर्ति (Supply of Labourers): मजदूर अपनी पूर्ति इसलिए करते हैं क्योंकि उन्हें मजदूरी तो मिलती है उससे वे अपने रहन—सहन के स्तर को बनाये रखते हैं। मजदूर कम—से—कम इतनी मजदूर अवश्य लेगा जिससे कि उसकी कम

–से–कम अनिवार्य आवश्यकताओं की पूर्ति हो सके अथवा यों कह ले कि उसका जीवन–स्तर या रहन–सहन बना रह सकें, नहीं तो यदि मजदूरी कमाकर भी भूखे ही मरता है तो पिफर काम करने का भला लाभ ही क्या? अल्पकाल में चाहे मजदूर इस स्तर के कम मजदूरी स्वीकार कर ले, परन्तु दीर्घकाल में वह कम–से–कम इतनी मजदूरी अवश्य प्राप्त करेगा जिनमें कि उसका जीवन–स्तर बना रहे। यदि मजदूर का जीवन–स्तर बनाए रखने के लिए उसे 2 रुपए कम–से–कम जरूर चाहिए तो इस अवस्था में मजदूरी 2 रूपये से कम नहीं होगी।

हमने उफपर देखा कि मजदूरी की उफपर की सीमा मजदूर की सीमान्त उत्पादकता है ओर निचली सीमा उसका रहन–सहन का स्तर है। इन दो सीमाओं के बीच वह मजदूरी नियत होगी जिस पर रम की माँग और पूर्ति दोनों में सन्तुलन हो। जैसा निम्नलिखित तालिका में दिखाया गया है

मजदूरी प्रतिदिन (Wages)	मजदूरों की माँग (Demand for Labour)	मजदूरों की पूर्ति (Supply of Labour)
1 रूपया	100	20
2 रूपया	80	40
3 रूपया	60	60
4 रूपया	40	80
5 रूपया	29	100

हम उफपर की तालिका में देखते हैं कि प्रतिदन मजदूरी 3 रूपये नियत होगी, क्योंकि केवल इसी मजदूरी पर मजदूरों की माँग और पूर्ति दोनों बराबर है अर्थात् दोनों 60 हैं। 2 रूपरे मजदूरी नहीं हो सकती क्योंकि इस मजदूरी पर मजदूरों की माँग 80 है, पर उनकी पूर्ति 40 है। माँग के अध्कि होने के कारण मजदूरी बढ़ेगी। 4 रूपये भी मजदूरी नहीं हो सकती क्योंकि इस मजदूरी पर मजदूरों की माँग 40 हैं पर उनकी पूर्ति 80 है। पूर्ति के अध्कि होने के कारण मजदूरी घटेगी।

रेखाचित्र द्वारा मजदूरी निर्धरित करते हैं:

हम OX पर मजदूरी की माँग और पूर्ति रखते है, OY पर उनकी मजदूरी, DD और SS रेखाएँ मजदूरों की माँग और पूर्ति को दिखती है। ये दोनों रेखाएँ एक–दूसरे को बिन्दू E पर काटती हैं। इसलिए मजदूरी EM या OR नियत होगी। इसी मजदूरी पर मजदूर की माँग और पूर्ति दोनों बराबर हैं, जैसे OM=OM हैं।

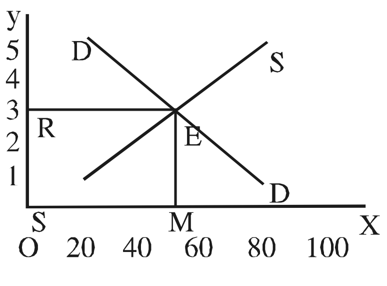

Demand and supply of labour

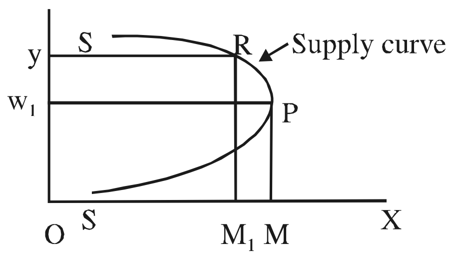

Units of labour

विलोम पूर्ति वक्र (Backward Supply Curve): वस्तुओं की कीमत में वृ(होने पर इसकी पूर्ति बढ़ाई जा सकती है, परन्तु श्रम के विषय में यह सत्य नहीं कि इनकी कीमत अर्थात् मजदूरी में वृ(होने पर इनकी पूर्ति बढ़े। यह सम्भव है कि श्रम की मजदूरी बढ़ने पर वह खाली समय (Leisure) को अध्कि पसन्द करने लगे और उनकी पूर्ति बढ़ने की जगह कम हो जाए। इसे एक पीछे झुकने वाले अर्थात् विलोम पूर्ति वक्र (Backward Supply Curve) द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है जो रेखाचित्र में दिखाया गया है। OW तक मजदूरी बढ़ने पर श्रमिकों की पूर्ति बढ़ती है। मजदूरी OW, हो

जाने की पूर्ति बढ़ने की जगह OM से कम हो कर OM रह जाती है। इसका अर्थ है कि OW के पश्चात् मजदूरी बढ़ने पर श्रमिक आराम (Leisure) को अध्कि पसन्द करने लगे हैं। अर्थात् श्रम की पूर्ति केवल आर्थिक तत्वों पर ही निर्भर नहीं करती बल्कि इसके निर्धरण करने में अनार्थिक तत्व भी इसमें महत्त्वपूर्ण होते हैं।

मजदूरी सम्बन्धी धरणाएँ न्यूनतम, उचित तथा निर्वाह मजदूरी
(Wage Concepts-Minimum, Fair and Living Wages)

भारत में स्वतन्त्रता के बाद, विशेषरूप से 1948 के बाद मजदूरी के सम्बन्ध में कुछ नवीन शब्दों (Terms) का प्रयोग किया गया। वे इस प्रकार हैं।

मजदूरी सम्बन्धी धरणाएँ
(Wage Concept)

- न्यूनतम मजदूरी अधिनियम 1948 पर आधरित (Basis of Minimum Wage Act 1948)
  - 1. वैधनिक (Statutory) न्यूनतम मजदूरी
- निर्णय एवं न्यायिक घोषणाओं पर आधरित (Award and Judicial Prononcement Basis)
  - 2. मूल (Basic) न्यूनतम मजदूरी
- उचित मजदूरी समिति की रिपोर्ट पर आधरित (Committee of Fair Wage Report)
  - 3. न्यूनतम मजदूरी (Minimum Wage)
  - 4. उचित मजदूरी (Fair Wage)
  - 5. निर्वाह मजदूरी (Living Wage)
- जुलाई, 1957 में आयोजित भारतीय श्रम गोष्ठी के पन्द्रहवें अध्विेशन के प्रस्ताव पर आधरित (Indian Labour conference 1957)
  - 6. आवश्यकता पर आधरित न्यूनतम मजदूरी (Need Based)

उपरोक्त चित्र में मजदूरी समबन्धी धरणाएँ (Concepts) निम्नलिखित हैं।

1. वैधनिक न्यूनतक मजदूरी
2. मूल (Basic) न्यूनतम मजदूरी
3. न्यूनतम मजदूरी
4. उचित मजदूरी
5. निर्वाह मजदूरी
6. आवश्यकता पर आधरित न्यूनतम मजदूरी

उपरोक्त मजदूरी धरणाओं (Concepts) का वर्णन निम्नलिखित है।

1. **वैधनिक न्यूनतम मजदूरी (Statutory Minimum Wages):** न्यूनतम मजदूरी का आशय मजदूरी की उस कम–से–कम राशि से है जो कि न्यूनतम मजदूरी अधिनियम, 1948 के अनुसार श्रमिक को अवश्य दी जानी चाहिए।
2. **मूल न्यूनतम मजदूरी (Bare or Basic Minimum Wage):** यह न्यूनतम मजदूरी न्यायिक घोषणाओं (Judicial Pronouncement), निर्णयों (Awards), औद्योगिक न्यायाध्किरण (Industrial Tribunals) तथा श्रम न्यायालय (Labour Court) के द्वारा निर्धरित की जाती है। यह न्यूनतम मजदूरी की राशि सेवायोजकों को अनिवार्य रूप से देनी होगी।
3. **न्यूनतम मजदूरी (Minimum Wages):** सर्वप्रथम यह जानना आवश्यक है कि न्यूनतम मजदूरी से अभिप्राय मजदूरी की किस दर से है? न्यूनतम मजदूरी के विषय में विभिन्न विद्वानों के भिन्न–भिन्न मत हैं। नियोक्ताओं के अनुसार–न्यूनतम मजदूरी की वह दर है जिससे श्रमिक अपनी तथा अपने परिवार की नग्न आवश्यक शारीरिक आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकता हो (A minimum wage is that wage which is sufficient to cover the bare physical needs of

a worker and his family)। परन्तु यह परिभाषा अध्कि संकुचित है क्योंकि नग्न शारीरिक आवश्यकताओं का आशय, उनका माप स्प५ नहीं है। इसके अलावा श्रमिक को कम से कम इतनी मजदूरी तो दी जानी चाहिये जिससे श्रमिक जीवन की आवश्यकताओं के अतिरिक्त अपनी कार्यकुशलता को भी बनाये रखा जा सके।

उचित मजदूरी समिति

(Committee on Fair Wages)

के अनुसार—फ्भारत में रा५्रीय आय का स्तर वर्तमान स्थिति में इनता कम है कि साधरणतया यह माना जाता है कि रा५् किसी कानून के द्वारा एक ऐसी न्यूनतम मजदूरी निर्धरित करने का भार नहीं उठा सकता है जो निर्वाह मजदूरी (Living Wages) की धरणा के बराबर हो न्यूनतम मजदूरी न केवल लीवन की अनिवार्य आवश्यकताओं के लिये अपितु श्रमिकों की कार्य कुशलता को बनाये रखने के लिये भी आवश्यक है। इस प्रकार न्यूनतम मजदूरी के अन्तर्गत के शिक्षा, चिकित्सा से सम्बन्ध्ति आवश्यकताओं एवं सुविधओं के लिये भी व्यवस्था करना आवश्यक है"

इस प्रकार न्यूनतक मजदूरी में श्रमिक के पालन–पोषण की ही व्यवस्था नहीं है अपितु श्रमिकों को आराम सम्बन्धी सुविधएँ भी जुटाना है।

श्रम (Labour) उत्पादन का सक्रिय तथा महत्त्वपूर्ण साध्न है। इसलिये यह आवश्यक है कि श्रमिकों को कम से कम उतनी मजदूरी अवश्य दी जानी चाहिए जिससे श्रमिक न केवल अपना जीवन–निर्वाह कर सके अपितु अपनी कार्यक्षमता भी बनाये रखे तथा जीवन–स्तर को भी उँफचा उठा सके। श्रमिकों में सौदा करने की शक्ति (Bargaining Power) बहुत कम होती है इसलिये श्रमिक अपनी नियोक्ताओं से स्वयं तो अपनी सौदा करने की शक्ति द्वारा अपनी मजदूरी प्राप्त नहीं कर सकते इसलिये मजदूरी की एक ऐसी न्यूनतम सीमा निर्धरित करने की आवश्यकता होती है जिससे कम न तो कोई भी नियोक्ता मजदूरी देगा और न ही कोई कर्मचारी मजदूरी स्वीकार करेगा। जब मजदूरी की ऐसी कोई न्यूनतम सीमा किसी अध्निियम द्वारा निर्धरित कर दी जाती है तो ऐसी मजदूरी को न्यूनतम मजदूरी कहते हैं। दूसरे शब्दों में न्यूनतम मजदूरी से आशय मजदूरी की उस कम से कम राशि से है जो कि वैधनिक दृ५्किोण से श्रमिक को अवश्य दी जानी चाहिए।

न्यूनतम मजदूरी क्या हो? यह एक विवादग्रस्त विषय है क्योंकि यह प्रत्येक देश की आर्थिक, सामाजिक तथा राजनीतिक दशाओं के उफपर निर्भर करता है। इसलिए यह एक आपेक्षिक शब्द है परन्तु किसी भी देश की सभी परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए मजदूरी की राशि इतनी अवश्य होनी चाहिए जिससे श्रमिक अपनी कार्यक्षमता तथा जीवन–स्तर को बनाए रख सके। इससे स्प५ है कि न्यूनतम मजदूरी जीवन–निर्वाह मजदूरी (Living Wages) से अध्कि होनी चाहिए, परन्तु यह आवश्यक नहीं कि उचित मजदूरी (Fair Wages) के बराबर हो। उचित मजदूरी प्रायः न्यूनतम मजदूरी से अध्कि होती है। इस प्रकार न्यूनतम मजदूरी वह कम से कम मजदूरी है जो श्रमिकों के जीवन–स्तर तथा कार्यक्षमता के लिए अति आवश्यक है।

एक हजार अथवा अध्कि श्रमिक होने पर न्यूनतम मजदूरी का निर्धरण करना : किसी ऐसे अनुसूचित रोजगार के लिए, जिसमें परे राज्य में कुल मिलाकर 1000 या अध्कि श्रमिक कार्य करते हों, उपयुक्त सरकार न्यूनतम मजदूरी की दरें निर्धरित करेगी।

पुनर्विचार करना : उपयुक्त सरकार इस प्रकार निर्धरित न्यूनतम मजदूरी पर समय–समय पर पुनर्विचार (Review) करेगी। पुनर्विचार के मध्यान्तर (Intervals) 5 वर्ष से अध्कि नहीं होगे। पुनर्विचार करने पर यदि आवश्यक समझे तो उपयुक्त सरकार न्यूनतम मजदूरी दरों में संशोध्न (Revision) करेगी।

विभिन्न प्रकार से मजदूरी की न्यूनम दरें निर्धरित करना : उपयुक्त सरकार निम्न प्रकार से मजदूरी की न्यूनतम दरें निर्धरित कर सकती है।

1. समायानुसार कार्य की न्यूनतम मजदूरी दर, जिसको फ्न्यूनतम समय दर" कहा जायेगा।

2. कार्यानुसार मजदूरी की न्यूनतम दर, जिसको फकार्यानुसार न्यूनतम दरय कहा जायेगा।
3. उन श्रमिकों के लिए जो कार्यानुसार मजदूरी पर लगाये गये हैं, पारिश्रमिक की एक न्यूनतम दर का निर्धरण समयानुसार कार्य के आधर पर करना जिसे फसंरक्षित समय दरय या फगारण्टी समयय (Graranteed Time Rate) कहा जायेगा।
4. अध्कि समय काम करने के सम्बन्ध में एक न्यूनतम दर का निर्धरण करना ;चाहे वह समय दर अथवा कार्यानुसार दर होद्ध जिसे फअध्कि समय काम की दीय (Overtime Rate) कहा जायेगा।

फन्यूनतम मजदूरी, उचित मजदूरी एवं निर्वाह मजदूरी की धरणाएँ उचित मजदूरी की समिति (Committee on fair wages) की रिपोर्ट (1948) पर आधरित है।य समिति के अनुसार 'न्यूनतम मजदूरी' उचित मजदूरी की न्यूनतम सीमा (Lower Limit) है तथा 'उचित मजदूरी' उच्चस्तर (Higher Level) होता है जबकि उचित मजदूरी से भी उच्चतम स्तर (Highset Level) निर्वाह मजदूरी (Living Wages) का होता है। ये तीनों मजदूरी के स्तर आर्थिक विकास (Economic development) के अनुसार होते रहेंगे। हन तीनों प्रकार की मजदूरियों का निम्न चित्र के द्वारा स्पष्टीकरण किया गया है।

निर्वाह मजदूरी ⟶ उच्चतम स्तर
(Living Wages) ⟶ (Highest Level)
↓ ↓
उचित मजदूरी ⟶ उच्च स्तर
(Fair Wages) ⟶ (Higher Level)
↓ ↓
न्यूनतम मजदूरी ⟶ न्यूनतम सीमा/स्तर
(Minimum Wages) ⟶ (Lower Level)

न्यूनतम मजदूरी के निर्धरण में कठिनाई

न्यूनतम मजदूरी का निर्धरण करना बहुत कठिन कार्य (Job) है क्योंकि एक स्थान से दूसरे स्थान, एक उद्योग से दूसरे उद्योग, एक समय से दूसरे समयः यहाँ तक कि एक श्रमिक और दूसरे श्रमिक तथा स्त्री श्रमिक तथा पुरुष की कार्य करने की दशाएं समान नहीं है। इसके अतिरिक्त न्यूनतम मजदूरी की दर निर्धरित करते समय श्रमिकों के किस औसत परिवार को आधर बनाया जाये? इन प्रश्नों का उत्तर कौन देगा? इन प्रश्नों का उत्तर देना बहुत कठिन है जबकि तेजी से बढ़ती हुई मूल्य वृ(ने रहन–सहन के खर्चो को बहुत बढ़ा दिया है।

उचित मजदूरी समिति ने 'निर्वाह गुजारा से अध्कि स्तर' की न्यूनतम मजदूरी की दर के निर्धरण का आधर (Base) स्वीकार किया है। निर्वाह स्तर से आशय श्रमिकों की आवश्यकताओं की पूर्ति, उनके औसत स्वास्थ्य एवं कार्यकुशलता की रक्षा तथा उसके परिवार के औसत आकार के भरण–पोषण से है। श्रमिक के औसत परिवार के अन्तर्गत स्वयं श्रमिक, अपनी पत्नी और तीन अवयस्क बच्चे आते हैं।

रहन–सहन लागतों (Cost of Living) के निर्धरण के लिये समिति ने सुझाव दिया है कि समय–समय पर रहन–सहन लागत सचूकांक (Cost of Living Index) बनाने चाहिए तथा इनके अनुसार न्यूनतम मजदूरी में संशोध्न करते रहना चाहिये।

न्यूनतम मजदूरी का संक्षिप्त इतिहास
(Brief History of Minimum Wages)

भारत में न्यूनतम मजदूरी के निर्धरण की सिपफारिश सर्वप्रथम राजकीय श्रम आयोग (Royal Commission on Labour) ने की थी। 1928 में अन्तर्राष्ट्रीय श्रम सम्मेलन (International Labour Conference) में यह प्रस्ताव स्वीकार किया गया था कि सभी सदस्य राष्ट्र न्यूनतम मजदूरी निर्धरण की दिशा में आवश्यक कदम उठाएँ। 1944 में रेगे समिति ने न्यूनतम मजदूरी निर्धरण के लिये सिपफारिश की थी। परन्तु भारत में इस दिशा में कोई सपफल प्रयास नहीं किया गया। भारत में सर्वप्रथम महत्त्वपूर्ण कदम 1945 में उठाया गया जिसके पफलस्वरूप 1946 में एक बिल तैयार किया गया जो संसद द्वारा न्यूनतम मजदूरी अधिनियम, 1948 में रूप में पास होकर 15 मार्च, 1948 से लागू किया गया। इस अधिनियम द्वारा केन्द्रीय तथा रात्य सरकारों को उद्योगों में कार्यरत श्रमिकों की न्यूनतम मजदूरी की दर निर्धरित करने का अध्किार दिया गया है।

न्यूनतम मजदूरी अधिनियम 1948
(The Minimum Wages Act, 1948)

उद्देश्य एवं महत्त्वः

श्रम, उत्पादन का एक महत्त्वपूर्ण एवं सक्रिय साध्न है। बिना श्रम के उत्पादन सम्भव नहीं। इसलिए उत्पादन की मात्रा श्रम की कार्यक्षमता निर्भर करती है। श्रमिक की कार्यक्षमता तथा उसका जीवन स्तर मजदूरी पर निर्भर करता है। श्रमिकों की कार्य क्षमता के लिये यह नितांत आवश्यक है कि उनको कम से कम उतनी मजदूरी दी जाए जिससे कि वे अपना जीवन–निर्वाह कर सकें तथा अपने जीवन–स्तर को भी उफँचा उठा सकें। यदि श्रमिकों की मजदूरी, उनकी अनुबन्ध करने की शक्ति (Bargaining Power) पर ही छोड़ दी जाये तो उन्हें अपनी मजदूरी के लिए सर्वदा नियोक्ताओं की दया पर निर्भर करना पड़ेगा। नियोक्ता सर्वदा श्रमिकों का शोषण करते हैं क्योंकि श्रमिकों में अनुबन्ध करने की शक्ति बहुत कमजोर होती है। नियोक्ताओं द्वारा श्रमिकों का शोषण को रोकने तथा उनकी कार्यक्षमता को बढ़ाने अथवा बनाए रखने के उद्देश्य से ही यह अधिनियम पास किया गया है हमारे देश के विधन (Constitution of India) के अनुच्छेद 43 (Article 43) में भी इस बात को स्वीकार किया गया है कि जीवन निर्वाह के अतिरिक्त श्रमिकों को अच्छे जीवन–स्तर के साध्न प्रदान किए जाये। अधिनियम के निम्नलिखित उद्देश्य हैं।

1. **शोषण को रोकना :** श्रमिकों की अनुबन्ध शक्ति (Bargaining Power) कम होती है। वे अपनी सेवाओं का उचित पारिश्रमिक नियोक्ता से अनुबन्ध करते समय नहीं माँग सकते। इसलिए नियोक्ता श्रमिकों की मजबूरी का पफायदा उठाकर उनका शोषण कर सकते हैं। श्रमिकों के इस प्रकार के शोषण को एक न्यूनतम मजदूरी निर्धरित करके ही रोका जा सकता है क्योंकि न्यूनतम मजदूरी, मजदूरी की वह न्यूनतय सीमा होती है, जिससे कम कोई भी नियोक्ता मजदूरी का भुगतान नहीं कर सकता और न ही कोई श्रमिक उससे कम मजदूरी स्वीकार कर सकता है।
2. **कार्य–क्षमता में वृ(ि :** श्रमिकों की कार्यक्षमता उनको दी जाने वाली मजदूरी पर निर्भर करती है। श्रमिकों को यदि अच्छी मजदूरी दी जाएगी तो ये अच्छा जीवन स्तर अपना सकेंगे और उनकी कार्यक्षमता बढ़ेगी। इसलिए श्रमिकों की कार्यक्षमता को बढ़ाना भी न्यूनतम मजदूरी का उद्देश्य है।
3. **जीवन–स्तर में सुधर :** श्रम कल्याण के लिए न केवल यही आवश्यक है कि श्रमिक जीवन भर अपनी निर्वाह ही करते रहें बल्कि जीवन–स्तर के पर्याप्त साध्न भी उपलब्ध होने चाहिए। जीवन स्तर तभी उफँचा उठ सकता है जबकि उन्हें एक ऐसी दर से कम मजदूरी न दी जाये तो कि जीवन–स्तर को उठाने व कायम रखने के लिए अति आवश्यक है।
4. **श्रम कल्याण :** श्रमिकों की कार्यक्षमता तथा जीवन–स्तर के साथ–साथ उनके सामान्य हितों की रक्षा भी आवश्यक हैं। किसी भी व्यक्ति के सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक तथा पारिवारिक उत्थान के लिए उनकी आर्थिक दशा का अच्छा होना अति आवश्यक है। आर्थिक दशा तभी अच्छी हो सकती है जब उन्हें अच्छी मजदूरी मिलती हो।
5. **उत्पादन में वृ(ि:** यदि वास्तव में गहराई एवं विशाल हृदय से सोचा जाये तो श्रमिक तथा नियोक्ताओं के हित एक–दूसरे के विरोधी नहीं होते बल्कि एक–दूसरे के उफपर निर्भर करते हैं। जहाँ प्रस्तुत अधिनियम का उद्देश्य श्रमिकों के हितों की रक्षा करना है वहाँ साथ ही साथ नियोक्ताओं को भी प्रोत्साहित करना है। उत्पादन की मात्रा श्रमिकों की कार्यक्षमता पर निर्भर होती है।

उचित मजदूरी
(Fair Wages)

उचित मजदूरी का अर्थ (Meaning) : उचित मजदूरी (Fair Wages) के सम्बन्ध में एक सर्वमान्य परिभाषा देना कठिन है। इसके सम्बन्ध में विभिन्न विद्वानों के मतों का उल्लेख करके एक सामान्य परिभाषा को रूप दिया जा सकता हैं। मार्शल (Marshall) का मत है कि कुछ व्यवसायों में जो कार्य करने पड़ते हैं वे एक समान ही अरूचि वाले और समान कठिनाइयों वाले होते हैं तथा उनको करने के लिये समान लागत के प्रशिक्षण की आवश्यकता पड़ती है। ऐसे व्यवसायों में औसतन रूप से जो मजदूरी दी जाती है उस मजदूरी के स्तर पर हर जो मजदूरी निर्धरित की जायेगी वह उचित मजदूरी महलायेगी।

पीगू (Pigou) ने उचित मजदूरी की परिभाषा दो दृष्टिकोणों से दी है—संकुचित और विस्तृत। पीगू के अनुसार एक ही प्रकार के श्रमिकों को एक ही प्रकार के व्यवसाय में तथा आस–पास के क्षेत्रों में मजदूरी की जो चालू दर दी जाती है उसी चालू दर (Current Rate) के बराबर ही मजदूरी की दर होने पर उसे उचित कहा जायेगा। यह परिभाषा संकुचित है। इसके विपरित सम्पूर्ण देश में अध्किाशं व्यवसायों के समान कार्य के लिए जब समान मजदूरी की दर प्रचलित होती है पीगू विस्तुत दृष्टिकोण से उस दर को उचित मानते हैं।

"A wage rate in this (Pigou's) opinion, is fair in the narrower sense when it is equal to the rate current for similar workmen in the same trade and neighbourhood and fair in the wider sense when it is equal to the predominent rate for similar work throughout the country and in the generality of trades." Report of the Committee on fair wages, 1954.

फऑपफसोशल साइन्सेजय पुस्तक के अनुसार श्रमिक को समान अरूचिकर, कठोर तथा कुशल–कार्य के लिए जो मजदूरी मिलती है वह उचित मजदूरी है। परन्तु यह परिभाषा अध्कि उपयुक्त नहीं है। उन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (I.L.O.) के अनुसार फन्यूनतम मजदूरी तय करने के लिये उस उद्योग को आदर्श मानकर चलना चाहिये जिसमें श्रमिक उचित रूप से संगठित हो तथा जिन्होंने सामूहिक समझौते की प(ति को प्रभावशाली बना लिया है। यदि ऐसा आदर्श नहीं है तो देश में प्रचलित मजदूरी की दरों को या विशेष स्थान की दरों को कम में लाया जाना चाहिये।य

इस प्रकार उचित मजदूरी के सम्बन्ध् में कोई भी एक सर्वमान्य परिभाषा नहीं है। उपरोक्त परिभाषाओं के आधर पर एक उचित परिभाषा दे सकते हैं—'उचित मजदूरी (Fair Wage) वह मजदूरी है जिससे श्रमिक के जीवन की न्यूनतम आवश्यकताओं की पूर्ति हो सके और सामाजिक स्तर के अनुसार श्रमिक अपना रहन–सहन का स्तर 'स्थायी रख कर जीवन को सुखी बना सके।'

उचित मजदूरी समिति (Committee on Fair Wages) के अनुसार—फउचित मजदूरी न्यूनतम मजदूरी से उफपर तथा निर्वाह मजदूरी (Living Wages) से नीचे होती हैय (It is the wage which is above the minimum wage but below the living wage)। समिति ने निश्चय किया कि जब न्यूनतम मजदूरी, उचित मजदूरी की निचली सीमा (Lower Limit) है इसकी उफपरी सीमा (Upper limit) उद्योग की भुगतान क्षमता (Capacity of the Industry to Pay) द्वारा निर्धरित होनी चाहिए।य यानी उचित मजदूरी (Fair Wage) उद्योग की भुगतान क्षमता के आधर पर निर्धरित होती है।

अब समस्या यह आती है कि उद्योग की भुगतान क्षमता को किस प्रकार मालूम किया जाये?

इसके लिए समिति ने सुझाव दिया है कि फहमारा लक्ष्य केवल मजदूरी निर्धरित करने का नहीं है अपितु हमें यह भी देखना होगा कि वर्तमान स्तर पर रोजगार स्थिर ही न रहे सम्भव हो कि रोजगार बढ़ जाये। इसलिए मजदूरी का स्तर ऐसा होना चाहिए जो उद्योग को कुशलता के साथ उत्पादन चालू रखनें में सहायता दे। अतः मजदूरी बोर्ड के द्वारा उद्योग की उत्पादन क्षमता का माप (Measurement) इस विचार के सन्दर्भ (Reference) में ही करना चाहियेय आगे समिति ने कहा है कि फउचित मजदूरी श्रमिक की उत्पादकता (Productivity) से जुड़ी हुई होनी चाहिये।य

उचित मजदूरी का महत्त्व (Importance) यदि किसी देश में श्रमिकों को न्यूनतम मजदूरी प्राप्त हो रही है तो उनके जीवन को पूरी तरह सुखी तथा आदर्श नहीं कहा जा सकता क्योंकि श्रमिकों को अपने बच्चों की शिक्षा और स्वास्थ्य सुरक्षा से वंचित रहना पड़ता है तथा वे अपनी कार्यक्षमता को भी बानये नहीं रख सकते। श्रमिकों के जीवन को सुखी बनाने के लिए यह आवश्यक है कि उनको इतनी मजदूरी दी जाये जिससे वे अपने तथा अपने परिवार की आवश्यकताओं को पूरा करने के बाद बच्चों तथा अपने स्थास्थ्य व कार्यक्षमता की भी रक्षा कर सकें। यह तभी सम्भव होगा जब श्रमिक को उचित मजदूरी दी जायेगी। इस प्रकार 'उचित मजदूरी' की उपेक्षा नहीं की जा सकती। आज विश्व 'उचित मजदूरी' के महत्त्व को स्वीकार कर चुका है और प्रत्येक देश 'उचित मजदूरी' के निर्धरण की ओर प्रयत्नशील है।

उचित मजदूरी की व्यावहारिकाता में कठिनाइयाँ—उचित मजदूरी के सि(ान्त को व्यावहारिक रूप प्रदान करने में भारत को अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। सर्वप्रथम भारत औद्योगिक दृष्टि से एक अविकसित देश है। इस कारण भारतीय उद्योगों की भुगतान क्षमता के कम होने के कारण वे श्रमिकों को उचित मजदूरी नहीं दे पाते। इसके अतिरिक्त भारतीय श्रमिक

अशिक्षित भी हैं जो अपने अध्किारों की रक्षार्थ आवाज तक नहीं उठाते। देश में श्रमिकों की संख्या माँग की अपेक्षा कहीं अध्कि है जिससे बेकारी की स्थिति चारों ओर देखने को मिलती है। सेवायोजक श्रमिकों का शोषण करने में सपफल हो जाता है और श्रमिक सहर्ष कम मजदूरी लेने को तैयार हो जाता है। अतः जब तक बेकारी की समस्या का हल नहीं होगा तब तक 'उचित मजदूरी' की व्यवस्था में बाध पड़ेगी।

निर्वाह मजदूरी
(The Living Wages)

न्यूनतम मजदूरी समिति के अनुसार फ्हमारी मजदूरी नीति का अन्तिम लक्ष्य निर्वाह मजदूरी (Living Wage) होना चाहिए।य आगे समिति ने कहा है फ्निर्वाह मजदूरी वही होगी जो पुरुष श्रमिक को, उसके स्वयं के लिये तथा उसके परिवार के लिये न केवल भोजन, कपड़ा एवं रहने की न्यूतनम मात्रा ही प्रदान करे अपितु श्रमिक को बचतों से आराम की एक मात्रा, जिसमें बच्चों की शिक्षा, खराब स्वास्थ्य के प्रति सुरक्षा, आवश्यक सामाजिक आवश्यकताओं (Social Needs) को पूरा करने और वु(ावस्था (Old Age) के साथ–साथ अन्य विशेष कठिनाइयों के लिए किसी सीमा तब बीमा की सुविध भी दे।य

निर्वाह मजदूरी का निर्धरण राष्ट्रीय कार्य और उद्योग की भुगतान क्षमता को ध्यान में रखकर किया जाना चाहिये।

न्यूनतम मजदूरी आवश्यकता पर आधरित
(The Need & Based Minimum Wages)

जुलाई 1957 में भारतीय श्रमिकों के नई दिल्ली मे आयोजित 15वें अध्विेशन में एक प्रस्ताव पास हुआ (The Indian Labour Conference at its 15th session held at New Delhi in July 1957 suggested that minimum wage fixation should be Need-based) जिसमें कहा गया था कि न्यूनतम मजदूरी आवश्यकता पर आधरित होनर चाहिए यानि फ्न्यूनतम मजदूरी की दर ऐसी आवश्य हो जिससे श्रमिक की आवश्यकताओं की पूर्ति हो सके। गोद्यी ने न्यूनतम मजदूरी समितियों, मजदूरी बोर्डो और न्यायिक निर्णायकों (Adjudicaters) आदि तथा मजदूरी का निर्धरण करने वालों के लिए निम्नलिखित नियम का मानक (Norms) बनाये हैं।

1. एक श्रमिक परिवार के अन्तर्गत प्रत्येक कमाने के वाले तीन उपभोग इकाइयों को सम्मिलित करना चाहिए ;स्त्री, बच्चे और किशोरों की कमाई हुई मजदूरी को सम्मिलित नहीं करना चाहियेद्ध।
2. न्यूनतम भोतन की आवश्यकताबों की गणना डॉ॰ आक्रोयड (Dr. Alcroyed) द्वारा औसत भारतीय वयस्क के लिए सुझाये गये 2700 कैलोरीज सम्बन्धी शु(अन्तर्ग्रहण के आधर पर करनी चाहिए।
3. वस्त्र सम्बन्धी आवश्यकताओं का अनुमान प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष 18 गज कपड़े के उपभोग के आधर पर होना चाहिए जिसमें चार व्यक्तियों के औसत श्रमिक परिवार को कुल 72 गज कपड़ा प्रतिवर्ष प्राप्त होगा।
4. मकानों के सम्बन्ध में सरकारी औद्योगिक आवास योजना में जिस न्यूनतम जमीन के क्षेत्रपफल की व्यवस्था की गई है उसके किराये के बराबर ध्नराशि को न्यूनतम मजदूरी निर्धरित करते समय ध्यान में रखना चाहिये।
5. ईध्न, प्रकाश तथा अन्य प्रकार के खर्चे कुल न्यूनतम मजदूरी के 20÷ के बराबर होने चाहिएँ।

भारतीय श्रमिक गोद्यी में प्रस्ताव में जो उपरोक्त मानक (Norms) स्थातिप किये गए हैं उन्हें सम्बन्धित एजेन्सी न्यूनतम मजदूरी को निर्धरित करते समय ध्यान में रखती है।

मजदूरी नियमन एवं सरकार
(Wage Regulations and Government)

वर्तमान स्थिति
(Present Position)

मजदूरी का नियमन : मजदूरी का भुगतान समय–समय पर संशोध्ति मजदूरी भुगतान अधिनियम, 1936 तथा न्यूनतम मजदूरी अधिनियम, 1948 द्वारा नियन्त्रित होता है। मजदूरी भुगतान अधिनियम, 1936 तथा न्यूनतम मजदूरी अधिनियम, 1948 सिक्किम

के अतिरिक्त सारे देश पर लागू होते हैं। मजदूरी भुगतान अधिनियम, 1936ऋ पफैक्ट्री अधिनियम 1948 के तहत पफैक्ट्री घोषित किये गये संस्थानों सहित किसी भी पफैक्ट्री, रेलवे एवं औद्योगिक संस्थानों, जैसे ट्राम–वे या मोटर परिवहन सेवा, बन्दरगाह, अन्तर्देशीय पोत, खान, खदान या तेल क्षेत्र, बागान, कार्यशाला ;जहाँ वस्तुएँ उत्पादित होती हैंद्ध तथा भवनों, सड़कों, पुलों और नहरों आदि के निर्माण, विकास तथा अनुरक्षण कार्य करने वाले संस्थानों में नियुक्त व्यक्तियों पर लागू होता है। ये अधिनियम केवल उन पर लागू होते हैं, जो प्रति–माह औसतन 1,600 रुपसे से कम मजदूरी प्रापत करते हों।

श्रमिकों द्वारा कमाई गई मजदूरी को मालिक रोक नहीं सकते, न ही वे अनध्कृित रूप से कटौतियाँ कर सकते हैं। श्रमिक की मजदूरी का भुगतान निश्चित दिवस के पूर्व हो जाना चाहिए। केवल उन्हीं कार्यों या अवहेलनाओं के लिए जुर्माने किये जाते हैं, जो सम्ब(सरकार द्वारा मान्य हैं। कुल जुर्माने की राशि काम की अवध् िमें दी जाने वाली मजदूरी के तीन प्रतिशत से अध्कि नहीं हो सकती। यदि मजदूरी की अदायगी देर से की जाती है या गलत कटौतियाँ की जाती हैं, तो मजदूर उनके लिए अपना दावा प्रस्तुत कर सकते हैं। निर्धरित रोजगार में समयोपरि ;ओवरटाइमद्ध भुगतान न्यूनतम मजदूरी अधिनियम, 1948 के अनुसार किया जाता है।

न्यूनतम मजदूरी अधिनियमः न्यूनतम मजदूरी अधिनियम, 1948 के अन्तर्गत सरकार विशिपृ ध्न्धें में कार्य कर रहे कमचारियों की न्यूनतम मजदूरी निश्चित कर सकती है। इस अधिनियम में उपयुक्त समय–अन्तराल के बाद, जो 5 वर्ष से अध्कि नहीं होना चाहिए, पूर्व निर्धरित न्यूनतम मजदूरी की समीक्षा एवं संशोध्न का प्रावधन है। जुलाई, 1980 में हुए श्रम मंत्रीयों के सम्मेलन में यह सिपफारिश की गई थी कि अध्कि से अध्कि दो वर्ष के अन्तराल पर, या उपभोक्ता मूल्य सूचकांक के 50 अंक बढ़ने पर, दोनों में से जो भी पहले हो, न्यूनतम वेतन में संशोध्न किया जाए।

स्त्री तथा पुरुष श्रमिक के लिए समान पारिश्रमिकः समान पारिश्रमिक अधिनियम, 1976 स्त्री तथा पुरुष श्रमिकों का 'समान कार्य या समान स्वरूप के कार्य के लिए' समान पारिश्रमिक और रोजगार के मामले में स्त्रियों के साथ किसी प्रकार के भेद–भाव के विरु(व्यवस्था करता है। अधिनियम के उपबन्ध् सभी प्रकार के रोजगारों पर लागू किए गए हैं। अधिनियम में सलाहकार समितियों के गठन की व्यवस्था है, जो स्त्रियों के रोजगार को अध्कि अवसर देने पर सलाह देगी। ऐसी समितियाँ केन्द्रीय सरकार के अधीन तथा अध्किांश राज्य सरकारों और केन्द्र शासित प्रदेशों में स्थापित कर दी गई हैं।

स्त्री श्रमिकः श्रम मत्रालय ने कई स्वैच्छिक संगठनों को वित्तीय सहायता दी है ताकि वे स्त्री श्रमिकों के लाभ के लिए परियोजनायें चालू करें।

श्रम मंत्रालय स्त्री श्रमिकों से सम्ब(श्रमिक कानूनों और कानूनी उपबन्धें की भी विवेचना कर रहा है, ताकि उनकी कमियों और त्रुटियों का पता लगाया जा सके और उन्हें दूर करने के लिए, यदि जरूरी हो तो, कानूनों में संशोध्न किया जा सके। समान पारिश्रमिक अधिनियम में संशोध्न की बात विचाराधीन है।

बन्ध्ुआ मजदूरः बन्ध्ुआ मजदूरी प्रथा ;उन्मूलनद्ध अधिनियम, 1976 के अन्तर्गत 25 अक्टूबर, 1975 से सारे देश में बन्ध्ुआ मजदूरी की प्रथा समाप्त कर दी गई। इस कानून के लागू होने पर सभी बन्ध्ुआ मजदूर हर तरह की बन्ध्ुआ मजदूरी के दायित्व से मुक्त हो गये और उनके कर्जों को मापफ कर दिया गया। मुक्त कराये गये बन्ध्ुआ मजदूरों का पुनर्वास 20 सूत्री कार्यक्रम का अंग है।

बन्ध्ुआ मजदूरी प्रथा उन्मूलन अधिनियम, 1976 के अन्तर्गत बन्ध्ुआ मजदूरों का पता लगानो, उन्हें मुक्ति दिलाने तथा उनका पुनर्वास करने की पूरी जिम्मेदारी राज्य सरकारों की है। 12 राज्यों में बंध्ुआ मजदूरी की प्रथा के प्रचलन की सूचना मिली है। ये राज्य हैं—आन्ध्र प्रदेश, बिहार, गुजरात, कर्नाटक, केरल, मध्य प्रदेश, महारापृ, उड़ीसा, राजस्थान, तमिलनाडु, उत्तर प्रेदश और हरियाणा। राज्य सरकारों से प्राप्त अद्यतन रिपोर्टों से पता चलता है कि जिन बंध्ुओं मजदूरों का पता चला, उनकी संख्या 2,205,923 थी और उनमें से 1,60,268 का पुनर्वास किया जा चुका था। बंध्ुआ मजदूरों का पता लगाने और पिफर उन्हें मुक्त कराने तथा पुनर्वास करने का काम निरन्तर चलने वाला काम है। इसलिए राज्य सरकारों से कहा गया है कि वे अपने राज्य में बंध्ुआ मजदूरों का पता लगाने के लिए समय–समय पर सर्वेक्षण करती रहे, और उन्हें जल्दी से मुक्त कराने तथा

उनका पुनर्वास करने के लिए आवश्यक कदम उठाती रहें, ताकि बंधुआ मजदूरों के पुनर्वास कार्यक्रम को समय–ब(कार्यक्रम बनाया जा सके। विभिन्न राज्यों में वार्षिक और त्रि–मासिक लक्ष्य निर्धरित किये जाते हैं। 1 पफरवरी, 1986 से प्रति बंधुआ मजदूर को दी जाने वाली राशि की अध्कितम सीमा 4,000 रुपये से बढ़ाकर 6,250 रुपये कर दी गई है। इसमें से आधी राशि केन्द्र सरकार द्वारा दी जाती है।

भारत के विभिन्न राज्यों तथा केन्द्र प्रशासित प्रदेशों में कारखाना मजदूरों की औसत वार्षिक आय ;कारखाना मजदूरों की प्रति व्यक्ति औसत वार्षिक आयद्ध

राज्य/केन्द्र शासित प्रदेश	1975	1976	1978	1979	1980	1981	1982
आंध्र प्रदेश	2,824	3,731	3,625	5,082	5,186	6,095	6,095
असम	2,627	3,504	4,673	4,723	4,494	5,899	3,999
बिहार	2,158	5,262	5,527	5,481	5,584	5,760	5,277
गुजरात	2,749	4,793	5,645	6,437	8,544	7,447	7,447
हरियाणा	3,371	4,931	5,664	6,268	6,401	7,696	7,554
हिमाचल प्रदेश	2,745	4,395	3,636	4,691	4,745	7,022	7,022
जम्मू और कश्मीर	2,843	2,087	3,400	3,186	4,069	5,080	5,157
कर्नाटक	2,893	3,042	उपलब्ध नहीं	4,936	4,903	7,545	7,545
केरल	2,947	5,253	4,936	5,696	7,146	6,948	8,192
मध्य प्रदेश	3,942	6,378	7,391	7,065	7,964	8,295	8,972
महाराष्ट्र	3,459	5,680	7,210	7,154	7,190	8,762	8,762
उड़ीसा	4,194	5,417	6,119	7,414	6,728	7,497	8,445
पंजाब	3,089	3,675	4,285	5,066	5,196	5,645	5,645
राजस्थान	3,325	4,954	5,811	6,382	6,698	7,493	7,493
तमिलनाडु	2,543	4,817	5,388	4,822	6,477	6,845	7,115
त्रिपुरा	2,453	2,251	3,630	5,007	7,937	7,937	7,937
उत्तर प्रदेश	3,054	4,486	5,418	5,763	6,376	6,376	6,376
पश्चिम बंगाल	3,966	5,840	6,970	7,282	7,977	8,149	9,208
अंडमान और निकोबार–							
द्वीप समूह	3,300	2,831	3,620	4,602	4,096	6,270	6,331
दिल्ली	3,239	5,092	5,528	5,491	6,228	6,035	10,106
गोवा, दमन तथा दीव	3,792	5,965	5,715	7,490	5,211	11,768	7,222
पांडिचेरी	2,615	4,879	5,473	5,983	8,066	8,694	5,628
सम्पूर्ण भारत	3,158	5,125	6,068	6,244	6,997	7,423	7,711

1. अस्थायी
2. उफपर की सारणी के आँकड़े 1976 तक 400 रु. प्रतिमाह से कम पाने वाले तथा 1976 से 1,000 रु. प्रतिमाह से कम पाने वाले मजदूरों के हैं।
3. इसमें रेलवे वर्कशाप, मौसमी उद्योगों/खाद्य पदार्थ, तम्बाकू, शराब और निर्माण आदि की पफैक्ट्री में काम करने वाले मजदूर शामिल नहीं है।, किन्तु प्रतिष्ठान के मजदूर इसमें शामिल हैं।

श्रमिकों की स्थिति ;लिंग और कार्य के आधर परद्ध
श्रमिकों तथा गेर–श्रमिक संख्या बंटवारा ;1981 की जनगणना लाख मेंद्ध

श्रेणी संख्या का	पुरूष		महिलाएं		योग	
	कुल पुरूष जनसंख्या	संख्या का प्रतिशत	कुल स्त्री जनसंख्या	संख्या का प्रतिशत	कुल जनसंख्या	प्रतिशत
श्रमिक जनसंख्या						
कुल ;क+खद्ध	1,810	52.65	636	19.77	2,446	36.77
;कद्ध कुल मुख्य श्रमिक	2,775	51.62	450	13.99	2,225	33.45
(i) कृषक	776	22.56	149	4.65	925	13.45
(ii) कृषक मजदूर	347	10.10	208	6.46	555	8.34
(iii) घरेलू उद्योग	56	1.64	21	0.44	77	1.16
(iv) अन्य श्रमिक	596	17.32	72	2.24	668	10.04
;खद्ध सीमान्त श्रमिक	35	1.03	186	5.77	221	3.32
;गद्ध कुल गैर–श्रमिक जनसंख्या	1,629	47.35	2,578	80.23	4,207	63.23
;घद्ध कुल जनसंख्या ;क+ख+गद्ध	3,439	100.00	3,214	100.00	6,653	100.00

मजदूरी भुगतान
(Wage Payment)

प्रबन्ध्क अध्कि कार्यकुशलता तथा उत्पादन चाहते हैं जो श्रमिकों तथा अन्य कमचारियों के सहयोग के बिना नहीं हो सकता। प्रत्येक श्रमिक अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये कार्य करता है तथा इनमें से अध्किांश आवश्यकताएँ वृत्ति (Wages) द्वारा पूर्ण होती हैं। साथ ही एक संस्था किस सीमा तक कार्यकुशल तथा योग्य कर्मचारियों की नियुक्ति कर सकती है तथा उन्हें संस्था में बनाये रख सकती है, यह बात उचित चुनाव तथा प्रशिक्षण पर निर्भर नहीं करती बल्कि इस बात पर आधरित है कि कहाँ तक योग्य एवं कार्यकुशल प्रार्थियों (Applicants) को संस्था में आने एवं बने रहने के लिये प्रेरित करती है। इस प्रेरणा के लिये अध्कि वेतन सबसे महत्त्वपूर्ण तथा प्रभावशाली घटक (Factor) है। विभिन्न देशों में समय–समय पर किये गये अध्ययन इस बात की पुष्टि करते हैं कि प्रार्थियों के लिए अध्कि वेतन प्रभावशाली आर्कषण रखता है। श्रम परिवर्तन के सम्बन्ध् में किये गये अध्ययन स्पष्ट करते हैं कि अध्किांश कर्मचारियों का कार्य छोड़ने का कारण उनका वेतन से असन्तुष्ट रहना था। इसी तरह एक संस्था की औद्योगिक शांति को प्रभावित करने वाला सबसे अध्कि महत्त्वपूर्ण घटक वेतन होता है जो वे संस्था से अपने कार्य के लिए प्राप्त करते हैं। यद्यपि विभिन्न देशों में किये गये अध्ययन स्पष्ट करते हैं कि कर्मचारी कार्य की सुरक्षा तथा पदोन्नति के अवसर को वेतन की वृ(ि से भी अध्कि महत्त्व देते हैं पिफर भी यह सत्य है कि श्रम–संघों द्वारा की जाने वाली माँगों में वेतन से सम्बन्ध्ति माँगे सबसे अध्कि होती हैं। साथ ही औद्योगिक संस्थाओं में होने वाले संघर्षों के पीछे अपर्याप्त वेतन का ही कारण प्रायः दिया गया है। एक अनुमान के अनुसार किसी भी संस्था में होने वाले औद्योगिक संघर्षों में से 80÷ लगभग वेतन से सम्बन्ध्ति होते हैं। यह तथ्य संस्था में उचित वेतन निर्धरण के महत्त्व को स्पष्ट करने के साथ–साथ इस बात पर जोर देते हैं कि प्रबन्ध्कों को वेतन निर्धरण की ओर पर्याप्त ध्यान देना चाहिए तथा वेतन को ऐसे ढंग से विकसित करना चाहिए जो उद्योग में शान्तिमय वातावरण तैयार कर, उत्पादन में वृ(ि कर, उद्योग से सम्बन्ध्ति सभी समूहों को लाभ पहुँचायें।

मजदूरी निर्धरण के लिए आवश्यक कदम
(Steps for Wage Determination)

एक कर्मचारी प्रबन्ध्क को मजदूरी का निर्धरण करने में क्रमशः निम्नलिखित कदक उठाने होते हैं।–

1. **कार्य विश्लेषण (Job Analysis):** कर्मचारी विभाग का प्रथम कार्य प्रत्येक कार्य को निर्धरित करना होता है जिससे यह पता लग जायेगा कि किन–किन क्रियाओं को किया जाये तथा उनकी क्या प्रकृति होगी? डेल योडर ने इसे इस प्रकार कहा है, फ्यह एक ऐसी विध् िहै जिसके द्वारा प्रत्येक कार्य से सम्बन्ध्ति तथ्यों को व्यवस्थित ढंग से खोजा जाता है।ग्

   इसके द्वारा यह निश्चित किया जाता है कि कौन से कार्य के लिए कौन–कौन–सी व्यक्तिगत योग्यताओं की आवश्यकता होगी। कार्य विश्लेषण का उद्देश्य उस विशेष कार्य की अपेक्षा, विशेष प्रशिक्षण प्रवृत्ति एवं जोखिम आदि का पता लगाना होता है। इससे संगठन को श्रम सम्बन्धी आवश्यकताओं की निशिचित सूचना मिलती रहती है। यह औद्योगिक प्रशासन की जटिल क्रियाओं, समय एवं गति अध्ययन आदि का प्रारम्भ करने का प्रथम चरण है। कार्य विश्लेषण के द्वारा मजदूरी का सही निर्धरण किया जाता है।

   (i) कार्य के लगे व्यक्ति को कितना शारीरिक व मानसिक परिश्रम करना होगा।

   (ii) कर्मचारी में विशेष योग्यताओं का होना (Qualification of Employees)

   (iii) कर्मचारी का अनुभव (Employees Experience)

   (iv) कार्य की शर्तें (Working Conditions)

   (v) काम करते समय जोखिम की सीमा (Degree of Risk)

2. **कार्य की व्याख्या (Job-Description):** यहाँ जो कार्य–विश्लेषण के द्वारा तथ्य इकट्ठे किये गये हैं उन्हें वैज्ञानिक ढंग से प्रस्तुत करने के कार्य को व्याख्या कहते हैं। **मौरिस बी॰ कमिंग** (Maurice B. Cumming) के शब्दों में फ्कार्य व्याख्या, कार्य विशिष्ट के उद्देश्य, क्षेत्र, कर्त्तव्य एवं उत्तरदायित्वों की व्यापक व्याख्या है।ग्

   (i) कार्य का विस्तृत विवरण ;कर्त्तव्य एवं दायित्वों सहितद्ध,

   (ii) कार्य विभाजन ;निश्चित क्रम तथा सावधनियाँद्ध

   (iii) मजदूरी की विध् एिवं राशि,

   (iv) अपेक्षित (Required) शारीरिक एवं मानसिक योग्यतायें,

   (v) अपेक्षित प्रशिक्षण तथा अनुभव,

   (vi) काम करने की दशाएँ एवं जोखिम, तथा

   (v) कार्य–यन्त्र, सामग्री की प्राप्ति।

   कार्य व्याख्या का उद्देश्य उसकी प्रकृति, अपेक्षाओं से सम्बन्ध्ति व्यक्तियों को अवगत कराना होता है।

3. **कार्य मूल्यांकन (Job Evaluation):** कार्य मूल्यांकन ऐसे व्यवस्थित तरीके से किया जाता है जिसमें किसी उपक्रम में अन्य सम्बन्ध्ति कृत्यों की तुलना में किसी कृत्य का मूल्यांकन किया हो। बड़े उपक्रमों में विभिन्न प्रकार के कार्य विभिन्न व्यक्तियों द्वारा किये जाते हैं। ऐसी स्थिति में कार्यों का मूल्यांकन करना आवश्यक हो जाता है ताकि उस कार्य को करने वालों का पारिश्रमिक ठीक प्रकार से निर्धरित किया जा सके। प्रबन्ध्कों के लिए मजदूरी मनमाने ढंग से भी निर्धरित कर सकते हैं परन्तु वह औद्योगिक संघर्ष का कारण बन जाता है। अतः कृत्य–मूल्यांकन के आधर पर मजदूरी निर्धरण में मजदूर व नियोक्ता दोनों को भय नहीं रहता है। यह क्रिया भी ठीक उसी प्रकार से है, जब उत्पादक प्रति वस्तु उत्पादक लागत मालूम करके आसानी से विक्रय मूल्य निर्धरित कर सकता है। किसी कार्य को करने के

लिए अन्य समान कार्यों की तुलना में पारिश्रमिक क्या है? इसकी निर्धरित विध् िही कार्य–मूल्यांकन है।

1. **मारिस बी॰ कमिंग,** फकृत्य–मूल्यांकन प्रत्येक कृत्य का संगठन करके अन्य सभी कृत्यों की तुलना में मूल्यांकन करने की विध् िहै।ए[1]

2. **जान ए0 शुबिन,** फकृत्य–मूल्यांकन सामान्य कारकों ;कौशल, प्रशिक्षण, प्रयत्न आदिद्ध के आधर पर मजदूरी तथा वेतन के अन्तरों का निर्धरण करने के उद्देश्य से, कार्यों का सापेक्षिक मूल्यांकन व महत्त्व–अंकन की व्यवस्थित विध् िहै।ए[2]

3. **कार्य–वर्गीकरण (Classification of Job):** मजदूरी निर्धरण करने के लिए आवयक कदमों में कार्य का वर्गीकरण करना होता है। यह वर्गीकरण कार्य–विश्लेषण एवं कार्य व्याख्या के आधर पर किया जाता है। विभिन्न कार्यों के लिए विभिन्न योग्यता तथा अनुभव की आवश्यकता होती है। भिन्न–भिन्न कार्यों के लिए किन–किन योग्यताओं तथा अनुभव की आवश्यकता होगी इसका पता तो कार्य–विश्लेषण से लगेगा किन्तु किन आधरों पर कार्यों का श्रेणी विभाजन किया जायेगा यह इस कदम द्वारा विचार करना होगा।

4. **योग्यता मूल्यांकन (Merit Rating):** कार्य–मूल्यांकन में कार्य का मूल्य बताने का प्रयत्न किया जाता है। यहाँ कर्मचारी की योग्यता का मूल्यांकन करके ही समस्या का विस्तार से अध्ययन किया जायेगा। वास्तव में योग्यता अंकन किसी कर्मचारी की कार्य करने की निपुणता को स्पष्ट करता हैं पुराने समय में यह कार्य पफोरमैन ही किया करते थे परन्तु आज की बदली हुई परिस्थितयों में यह कापफी उन्नत वैज्ञानिक विध्यिों (Highly developed scientific techniques) द्वारा किया जाता है। इसका एकमात्र उद्देश्य भेदभाव, पक्षपात और अन्यायपूर्ण निर्णयों का मूल्यांकन करना, दूसरी ओर इससे भी जरूरी पदोन्नति, हस्तान्तरण तथा अध्किार सौंपने के वैज्ञानिक पहलू पर विचार करता है।

परिभाषाएँ

1. **अल्पफोर्ड एवं बीटी:** फयोग्यता अंकन किसी व्यक्ति की अपने कृत्य पर की जाने वाली सेवाओं का कम्पनी को होने वाले सापेक्षिक लाभ का मूल्यांकन है।ए[3]

2. **स्कॉट तथा स्प्रीगल:** फएक कर्मचारी का योग्यता अंकन, कृत्य की आवश्यकताओं के अनुरूप कर्मचारी का कृत्यनिष्पादन करने कर क्रिया है।ए[4]

3. फयोग्यता–अंकन उस दक्षता को कहते हैं जिससे व्यक्ति अपने कार्य का निष्पादन करता है।ए[5]

4. **मजदूरी सर्वेक्षण (Wage Survey):** किसी विशेष कार्य के लिए मजदूरी का निर्धरण करने में इस बात पर भी ध्यान देना चाहिए कि अन्य उपक्रमों में उसी कार्य के लिए कितनी मजदूरी दी जा रही है। उपयोगिता आदि के आधर पर एक उपक्रम में किसी विशेष कार्य के लिए वेतन का निर्धरण यदि अन्य उपक्रमों से कम होगा तो उसकी निम्न दो हानियाँ हो सकती हैं।

   (i) अच्छे व योग्य अच्छे उस वेतन पर प्राप्त नहीं होंगे।

   (ii) यदि मिल भी जाएं तो कुछ समय बाद वे अन्य उपक्रम में चले जायेंगे।

---

1. "Job evaluation is a technique of assessing the worth of each job in comparison with all others through an organisation.
-Marurice B. Cumming

2. "Job-evaluation (or job rating) is a systematic procedure for measuring the relative value and important of occupation as the basis of their common factors (skill, training and efforts) for the purpose of determining wages and salary differentials.:
-John A. Subin

3. "Employee of personnel rating is the evaluation or appraisal of the relative worth to the company of a man's services on his job."
-Alford and Beaty

4. "Merit-Rating of an employee is the process of evaluating the employee's performance on the job in terms of the requirements of the job."
Scott and Spriegel

5. "It is a systematic and (so far as possible) impartial procedure for determining the excellence with Which an individual is performing his job."

अतः मजदूरी सर्वेक्षण द्वारा विभिन्न उपक्रमों द्वारा किसी विशेष कार्य के लिए क्या वेतनमान निर्धरित किए गए हैं इसका ज्ञान होना भी आवश्यक है। मजदूरी सर्वेक्षण में निम्न बातों पर ध्यान देना चाहिए।

(i) सर्वेक्षण की अवध्ि ;सप्ताह या महीनाद्ध

(ii) कुल मजदूरी का भुगतान–प्रतिदिन कार्य के घंटों अथवा मासिक भुगतान का ज्ञान।

(iii) कार्यों (Jobs) की परिभाषा।

(iv) आंकड़ों को इकट्ठा करने की वैज्ञानिक प्रणाली।

मजदूरी की दरों को प्रभावित करने वाले घटक (Factors Determining the Wage Rate)

किसी भी उपक्रम में किसी श्रमिक को कितनी मजदूरी या पारिश्रमिक दिया जाएगा इसको निर्धरित करना एक कठिन समस्या हैं। इसका निर्धरण करने के लिए अनेक तत्व हैं जिनपर विचार करना आवश्यक है। इनमें से कुछ का विवरण इस प्रकार है।

1. **न्यूनतम पारिश्रमिक (Minimum Wage)**: पारिश्रमिक निश्चित करते समय इस बात को ध्या न में रखना आवश्यक है कि श्रमिक को इतनी मजदूरी अवश्य दी जाए जिससे वह अपने जीवन स्तर को बनाये रखे। यदि उचित मजदूरी उसे न मिली तो वह अन्य कारखाने में चला जायेगा।
2. **माँग की पूर्ति (Demand and Supply):** जिस प्रकार वस्तुओं के मूल्य निर्धरण में माँग और पूर्ति का सि(ान्त लागू होता है। ठीक उसी प्रकार मजदूरी का निर्धरण करते समय श्रमिकों की माँग व पूर्ति पर ध्यान देना चाहिए। यदि माँग अध्कि और पूर्ति कम है तो मजदूरी की दर उफँची होगी। इसके विपरीत यदि श्रमिकों की माँग कम हैं एवं उनकी पूर्ति ज्यादा है तो मजदूरी की दर नीची होगी।
3. **सौदा करने की क्षमता (Bargaining Capacity):** यदि किसी उपक्रम में प्रबन्ध्कों को सौदा करने की क्षमता अध्कि होगी तो ऐसी दशा में मजदूरी की दर कम होगी, इसके दूसरी ओर यदि श्रमिकों की मोल–भाव की क्षमता अध्कि होगी तो मजदूरी की दर उफँची होगी।
4. **बाजार में प्रतिस्प(ा का स्वरूप (Competition in the Market):** यदि श्रमिकों की उपलब्ध्ि बाजार में अध्कि होगी तो श्रमिकों में आपसी प्रतिस्प(ा होगी जिसके कारण मजदूरी का निर्धरण नीची दर पर होगा। दूसरी ओर यदि श्रमिकों की उपलबध्ता में कमी है तो मजदूरी का निर्धरण उफँची दर से होगा।
5. **सरकारी नीति (Government Policy):** मजदूरी का निर्धरण सरकार की नीतियों पर भी कापफी निर्भर करता है। समाजवादी दृष्ि्रकोण की सरकार होने पर मजदूरी की दर उफँची होती है क्योंकि श्रमिकों के शोषण को रोकने के लिए सरकार इन्हें उचित वेतन अवश्य दिलाएगी। इसके दूसरी ओर तानाशाही व्यवस्था में मजदूरी की दर कम होगी और श्रमिक शोषण होगा।
6. **काम की प्रकृति (Nature of Work):** मजदूरी का निर्धरण इस बात पर निर्भर करता है कि कार्य में कितने जोखिम हैं। यदि कार्य अध्कि जोखिमपूर्ण होगा तो मजदूरी की दर अध्कि होगी, यदि जोखिम कम है तो मजदूरी की दर भी कम होगी।
7. **व्यक्तिगत कारण (Personal Reasons):** कई बार व्यक्तिगत गुणों के कारण भी किसी श्रमिक को अत्यध्कि उफँची दर से मजदूरी देनी पड़ती है। यह उसकी व्यक्तिगत योग्यता पर निर्भर करेगा। यदि कोई श्रमिक अन्य श्रमिकों की अपेक्षा अध्कि प्रशिक्षित है, तकनीकी योग्यता प्राप्त है तो उसकी मजदूरी का निर्धरण अन्य श्रमिकों की तुलना में उफँची दर पर होगा।

सन्तुपि् प्रदान करने वाली मजदूरी योजना की विशेषताएँ
(Essentials of a Satisfactory Wage Plan)

यद्यपि सभी प्रबन्ध्क इस बात को मानते हैं कि संस्था में कर्मचारियों की कार्यकुशलता उनके उचित वेतन पर आधरित है पिफर भी अब तक किसी ऐसी प(ति का विकास नहीं पाया है जोकि सर्वमान्य हो तथा उद्योगों पर पूर्णतया सपफलता से लागू की जा सकती हो। वेतन निर्धरण की प(ति के विकास की समस्या पर्याप्त समय से प्रबन्ध्कों के लिए सरदर्द बनी हुई है। यह कार्य मानवीय प्रबन्ध्क के कार्यो में सबसे कठिन कार्य है। वेतन तथा मजदूरी व्यय, व्यवस्था की लागत का सबसे बड़ा भाग होता है तथा अध्कितर उद्योगों 70÷ के लगभग होता है। इस रूप में वेतन निर्धरण में की जाने वाली थोड़ी सी भी असावधनी प्रबन्ध्क की उत्पादन लागत पर महत्त्वपूर्ण प्रभाव डालती है। इसलिए वेतन प(ति का निर्धरण तथा निर्माण बहुत ही सावधनी से होना चाहिए। यद्यपि किसी भी ऐसी वेतन प(ति का वर्णन नहीं किया जा सकता जो भी तरह से उद्योगों तथा संस्थाओं के अनुकूल कहला सकती हो पिफर भी एक अच्छे वेतन प(ति की कुछ आधरभूत विशेषताएँ दी जा सकती है जो कि संस्था को उचित वेतन प(ति के निर्धरण में सहायक हो सकती है। प्रबन्ध्कीय दृपि्कोण से एक उचित वेतन प(ति में निम्न विशेषताएँ होनी चाहिए।

उचित मजदूरी प(ति की विशेषताएँ
अथवा
आदर्श मजदूरी भुगतान प्रणाली की विशषताएँ
(Essentials of an Ideal Wage Payment System)

1. **सरल (Simple):** वेतन प(ति सदा सरल होनी चाहिये ताकि साधरण कर्मचारी भी उसे समझ सके तथा उसके अन्तर्गत मिलने वाले वेतन का अनुमान लगा सके।
2. **न्यूनतम वेतन पर आधरित (Based on Minimum Wage):** श्रमिकों को न्यूनतम वेतन का आश्वासन होना चाहिये ताकि वह स्वयं को सुरक्षित अनुभव कर सकें तथा बिना किसी भय से कार्य कर सकें। यह न्यूनतम वेतन प्रतिदिन जीवनयापन की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिये पर्याप्त होना चाहिये।
3. **सभी सम्बन्ध्ति पक्षों के हित में (Favourable to all Concerned):** यह प्रबन्ध्क का सबसे अध्कि महत्त्वपूर्ण सि(ान्त है जिसके व्याख्या हैनरी पिफयोल ने की है। इसके अनुसार कर्मचारी को दिया जाने वाला वेतन या वेतन प(ति ऐसी हो जो मालिक तथा श्रमिक दोनों ही समूहो को अध्कितम सन्तोष प्रदान करे। वेतन पर्याप्त होने के साथ–साथ इतना अध्कि भी नहीं होना चाहिये जो उद्योग के लिये असहनीय हो।
4. **तुलनात्मक (Competitive):** श्रमिकों को दिया जाने वाला वेतन कम से कम इतना अवश्य हो जितना वैसी ही अन्य संस्थाओं में हो। श्रमिकों की स्थायी एवं सन्तुप् टीम के निर्माण के लिये अनिवार्य है।
5. **कम कागजी कार्य (No Excessive Clerical Detail):** वेतन प(ति ऐसी जटिल न हो कि उसमें पर्याप्त कागजी कार्य की आवश्यकता हो। ऐसा होने से प(ति के प्रबन्ध् में अध्कि कर्मचारियों तथा लेखन सामग्री (Stationery) की आवश्यकता होगी तथा यह स्वयं संस्था पर अनावश्यक भार होगा।
6. **समानता (Equality):** फ्समान कार्य के लिये समान वेतनय् के सि(ान्त का पालन किया जाना चाहिए तथा संस्था में समान पद पर समान कार्य कर रहे प्रत्येक व्यक्ति को समान वेतन मिलना चाहिये। ऐसा न होने से कर्मचारियों की असन्तुपि् बढ़ती है तथा नैतिक स्तर गिरता है।
7. **प्रेरणादायक (Incentive Oriented):** वेतन प(ति श्रमिकों को अध्कि कार्य करने के लिये प्रोत्साहन देने वाली हो तथा श्रमिकों को इसका विश्वास हो कि यदि वे अध्कि कार्य करेंगे तो उन्हें अध्कि वेतन प्राप्त होगा।
8. **निश्चित योजना पर आधरित (Based on Definite Plan):** वेतन प(ति निश्चित योजना पर आधरित होनी चाहिए। वेतन प(ति लागू करने से पहले उसके सभी पहलू पर विस्तृत रूप से विचार कर लेना चाहिये ताकि बाद में संघर्ष

उत्पन्न होने की सम्भावना ही न रहे। इसके लिए आवश्यक है कि वेतन प(ति की लिखित रूप से विस्तृत रूपरेखा तैयार कर ली जाए। साथ ही वेतन भी किसी निश्चित आधर पर आधरित हो। उदाहरणतः यह निश्चित किया जाये कि वेतन अन्य संस्थाओं के वेतन के माध्य पर आधरित होगा या देश में सुलभ सूचकांक पर आधरित होगा।

9. **सभी के हित में (Secure for all Interests):** वेतन प(ति के निर्धरण में प्रबन्ध्क, अंशधरी, क्रयकर्त्ता, उपभोक्ता, सरकारी कर्मचारी तथा सभी सम्बन्धित समूह के हितों का ध्यान रखना चाहिये एवं किसी को भी वेतन प(ति के निर्धरण से अनावश्यक हानि नहीं होनी चाहिये।

10. **औद्योगिक शान्ति के लिय उपयुक्त (Suitable for Industrial Peace):** वेतन प(ति ऐसी हो जो उद्योग में शांति व्यवस्था बनाये रखने में सहयोगी हो। इसके लिए वेतन के साथ–साथ विभाजन प्रबन्ध में भाग आदि प(तियों को लागू किया जाना चाहिए।

11. **निश्चित समय पर वेतन भुगतान (Payment of Wages in Time):** वेतन प(ति में यह व्यवस्था होनी चाहिए कि प्रत्येक महीने की एक निश्चित तारीख तक वेतन बिल तैयार हो जायेंगे तथा उस तारीख को निश्चित रूप में वेतन मिल जायेगा अर्थात् वेतन मिलने में अनावश्यक देरी नहीं होनी चाहिए।

12. **व्यावहारिक (Practical):** वेतन प(ति केवल कागज पर ही न रह जायें बल्कि व्यावहारिक भी हो। यह न हो तैयार योजना जब लागू हो तो औद्योगिक संघर्षो के कारण संस्था का कार्य ठप्प हो जाये।

13. **लोचदार (Flexible):** वेतन प(ति के लागू हो जाने के बाद यदि आवश्यक हो तब उसमें सरलता से परिवर्तन किया जाना चाहिए। श्रमसंघों में समझौता करते समय इस बात की व्यवस्था होनी चाहिए कि यदि आवश्यक हुआ तो विशेष अवस्था में समझौतों में परिवर्तन किया जा सकता है।

14. **मितव्यायी (Economical):** वेतन प(ति का उद्देश्य अध्कितम उत्पादन ही नहीं होना चाहिए बल्कि वेतन प(ति यन्त्रों की सुरक्षा, तथा माल की व्यर्थता, शक्ति की अनावश्यक व्यर्थता आदि को रोकने को भी प्रोत्साहन देने वाली होनी चाहिए।

15. **स्थायित्व (Stable):** वेतन प(ति में बार–बार परिवर्तन नहीं होनी चाहिए। श्रमिकों का संस्था तथा वेतन प(ति के प्रति विश्वास बनाये रखने के लिए यह आवश्यक है कि इसमें परिवर्तन कम से कम किया जाएँ तथा जो भी परिवर्तन हों, बहुत ही सोच–विचार के बाद हों।

16. **श्रमसंघ तथा श्रमिकों को पूर्ण जानकारी (Full Information to Union and Labour):** कोई भी वेतन प(ति श्रमिकों तथा श्रमसंघों की सहमति से ही पूर्ण सपफल तथा प्रभावशाली हो सकती है। इसके लिये वेतन प(ति लागू करने से पूर्व श्रमिकों को विस्तार से बतला दिया जाये तथा उसके प्रति उनका दृष्टिकोण देखकर ही उसे लागू किया जाना चाहिए।

17. **श्रमिकों के नियन्त्रण से बाहरी रूकावट की क्षतिपूर्ति (Compensation for Time Beyond Labour Control):** वेतन प(ति में इस बात की व्यवस्था भी होनी चाहिए जिससे श्रमिकों को उस समय के लिए भी वेतन मिले जिससमें ऐसी घटना के कारण, जो श्रमिकों के नियन्त्रण में भी नहीं थी, कार्य न हो सका हो। उदाहरणतः सामग्री के आने में देरी, मशीन खराब होने या विद्युत पूर्ति (Electricity Supply) असपफल हो जाने आदि कारणों से उत्पन्न क्षति को श्रमिकों से पूरा नहीं किया जाना चाहिए।

18. **योग्य व्यक्तियों को अलग करना (Differentiate Qualified Men):** वेतन प(ति ऐसी हो जो एक ही पद पर कार्य करने वाले व्यक्तियों की योग्यता में अन्तर होने पर वेतन में भी अन्तर करती हो। दूसरे शब्दों में, एक ही पद पर कार्य करने वाले अलग–अलग व्यक्तियों की योग्यता भिन्न होने पर वेतन भी अलग–अलग हो। जैसे कि बैंकों में क्लर्क का पद मैट्रिक व स्नातक (Graduate) दोनों को मिलता है परन्तु स्नातक को या तो कुछ वृ((Increments) दी जाती है या स्नातक भत्ता दिया जाता था।

19. **तुलना में सहायक (Faciliates in Comparison):** वेतन प(ति ऐसी हो जिस पर बजटरी तथा लागत नियन्त्रण को लागू किया जा सकता हो ताकि इनकी सहायता से वेतन लागत पर नियन्त्रण रखा जा सके। साथ ही एक विभाग की अन्य विभागों के वेतन तथा कार्यकुशलता के आधर पर तुलना भी सम्भव होनी चाहिए।

20. **प्रभावशाली शिकायत विध्** **(Efficient Complaint Procedure):** अन्त में उचित वेतन व्यवस्था में ऐसा प्रबन्ध् होना अनिवार्य है जिससे कोई भी व्यक्ति, जिसे वेतन के प्रश्न पर कोई भी श्किायत है, वह अपनी शिकायत सम्बनिध्त प्रबन्ध्कों तक पहुँचा सके। साथ ही ऐसी शिकायतें सुनने, उनकी विस्तुत जाँच करने तथा हुए निर्णयों के अनुसार परिवर्तन करने के लिए भी उचित व्यवस्था तथा मशीनरी होनी अनिवार्य है।

    वेतन प(ति में उपरोक्त सभी बातों की व्यवस्था होन पर संस्था में शान्तिमय वातावरण की आशा की जा सकती है। ऐसी अवस्था में प्रबन्ध्क तथा श्रमिक, दोनों समूह पारस्परिक सहयोग से कार्यकुशलता तथा उत्पादन बढ़ाने में सपफल होते हैं जिससे अंशधरियों को अध्कि लाभांश, श्रमिक को अध्कि पारिश्रमिक, प्रबन्ध्कों को अध्कि वेतन तथा सुविधएँ सरकार को अध्कि कर तथा क्रेताओं एवं उपभोक्ताओं को उत्तम वस्तुएँ उचित कीमत पर प्राप्त होती है। इस रूप में उचित प(ति संस्था से सम्बन्ध्ति सभी व्यक्तियों के लिए हितकर प्रमाणित होती है।

मजदूरी या भुगतान की विध्यिाँ
(Theories or Methods of Wages Payment)

उचित वेतन निर्धरण की समस्या पर्याप्त समय से ही प्रबन्ध्कों के लिए सरदर्द बनी हुई है तथा प्रबन्ध्क इस ओर पर्याप्त ध्यान दे रहे हैं। पिफर भी अब तक किसी ऐसी प(ति का विकास नहीं हो सका है जो दोषरहित हो तथा प्रत्येक उद्योग व संस्था में जिसे समान रूप में सपफलतापूर्वक लागू किया जा सकता हो। प्रत्येक संस्था में अपने लिये ही अपनी आवश्यकतानुसार एवं अवस्थानुसार प(तियाँ होती हैं जिनमें से वह किसी विशेष प(ति का चुनाव कर सकती है या उनमें से किसी प(ति से मिलती–जुलती प(ति का विकास कर सकती है। जिन वेतन प(तियों में से संस्था को चुनाव करना होता है। उन्हें तीन भागों में बाँटा जाता है।

मजदूरी भुगतान की विध्यिाँ
(Theories or Methods of Wages Payment)

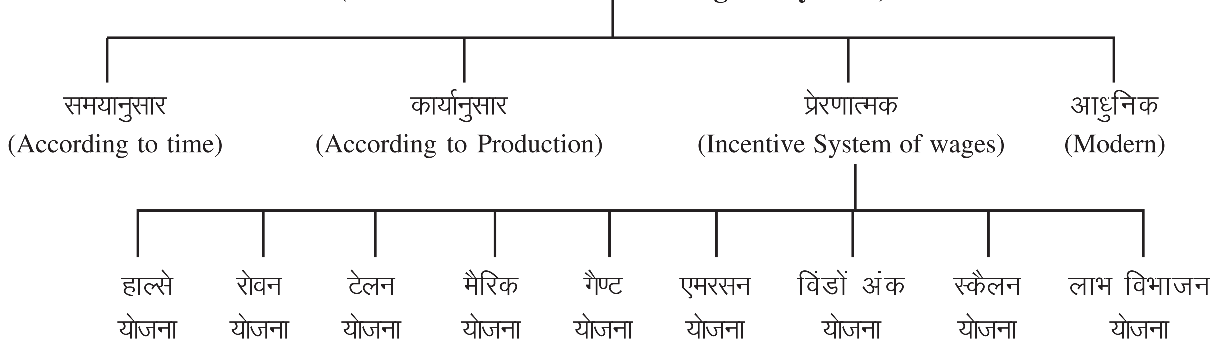

1. **समय पर आधरित प(तियाँ** **(Time Wages System)**: इस प(ति के अनुसार श्रमिक को समयानुसार पारिश्रमिक मिलता है। यह पारिश्रमिक प्रतिघण्टा, प्रतिदिन प्रतिमाह अथवा प्रतिवर्ष हो सकता है। काम की मात्रा और मजदूरी में कोई सम्बन्ध् नहीं होता। भारत में यह प्रणाली सभी उद्योगों में लागू है।

लाभ
(Advantages)

1. **सरलता एवं श्रेष्ठ उत्पादनः** यह पारिश्रमिक निश्चित करने की सबसे सरल प्रणाली है। समयानुसार पारिश्रमिक मिलने से श्रमिक सुविध और सोच–विचार से कार्य करते हैं तथा अच्छी किस्म की वस्तुओं का उत्पादन करते हैं।
2. **सामग्री तथा यन्त्रों का सदुपयोगः** इसमें श्रमिकों को पारिश्रमिक के लोभ में शीघ्रता से काम नहीं करना पड़ता और वे आराम से सामग्री तथा यन्त्रों का सदुपयोग करते हैं।
3. **श्रमिकों में पास्परिक एकता एवं निश्चित पारिश्रमिक का विश्वासः** इसमें सभी श्रमिकों को समान वेतन मिलता है जिससे उनमें एकता बनी रहती है। इस प(ति से उन्हें निश्चित पारिश्रमिक का विश्वास भी बना रहता है।

4. **प्रशासनिक व्यय में मितव्ययिताः** सेवायोजकों को अन्य प(तियों की अपेक्षा हिसाब–किताब रखने में प्रशासनिक व्यय नहीं करने पड़ते हैं तथा उनके रखने में विस्तृत आयोजन नहीं करना पड़ता है।
5. **उत्पादन बढ़ने पर प्रति इकाई कम परिव्ययः** इसमें जैसे–तैसे उत्पादन बढ़ता है वैसे–वैसे ही प्रति इकाई लागत कम होती जाती है। उदाहरणतः यदि कोई श्रमिक 8 घण्टें के दिन में 25 पैसे के हिसाब से 2 रुपये पारिश्रमिक लेता है और 10 वस्तुएँ पैदा करता है तो यहाँ प्रति वस्तु लागत 20 पैसे होगी परन्तु यदि वह उसी समय में 12 वस्तुएँ पैदा करना तो वहाँ प्रति वस्तु लागत

$$\frac{8 \text{ घण्टे } X \text{ } 25 \text{ पैसे}}{12 \text{ वस्तुएं}} = 16.6 \text{ पैसे}$$

16.6 पैसे होती। इस प्रकार अध्कि उत्पादन के साथ–साथ प्रति इकाई लागत कम होती जाती है।

हानियाँ

(Disadvantages)

1. कुशल श्रमिकों पर इसका बुरा प्रभाव पड़ता है।
2. यह प्रणाली अध्कि परिश्रम को प्रोत्साहन नहीं देती है।
3. कार्य को अनावश्यक रूप से लम्बा या देरी करने की प्रवृति को प्रोत्साहन देती है।
4. कार्य की देख–रेख के लिए पफोरमैन या प्रबन्ध्कों को पुलिस की तरह निरीक्षण करना होता है।
5. इससे श्रमिकों की उत्पादन शक्ति को मापना कठिन होता है।
6. श्रमिक वर्ग काम से मुँह चुराते हैं।

उपयुक्तताः यह विध् उस दशा में उपयुक्त है जिसमे कार्य का माप नहीं किया जा सकता, जैसे शिक्षक का कार्य, चित्रकार का कार्य आदि।

उत्पादन या कार्य पर आधरित प(ति

(Piece Rate System)

इस प(ति के अनुसार एक श्रमिक जितना काम करता है, उसी के अनुसार पारिश्रमिक कमा लेता है चाहे उसको कितने समय में पूरा करे। इसमे पारिश्रमिक देने का सम्बन्ध् समय से नहीं बल्कि काम से होता है।

लाभ

(Advantages)

1. **श्रमिकों को प्रोत्साहनः** इसमें श्रमिकों को पारिश्रमिक कमाने का प्रोत्साहन मिलता है क्योंकि जितनी वस्तुयें बनायी जाती हैं उतना ही पारिश्रमिक मिल जाता है।
2. **उत्पादन व्यय में कमी एवं उत्पादन में वृ(िः** इसके अन्तर्गत थोड़े समय में उत्पादन अध्कि होता है और उसके उत्पादन व्यय में कमी होती जाती है क्योंकि इससे प्रति इकाई कारखाना अभिव्यय एवं कार्यालय परिव्यय कम हो जाते हैं और इस प्रकार कुल लागत भी कम हो जाती है।
3. **श्रमिकों को कार्य की स्वतन्त्रताः** श्रमिक स्वतन्त्रतापूर्वक अपने कार्य को रुचि के साथ करते रहते हैं, उन पर विशेष नियन्त्रण की आवश्यकता नहीं पड़ती।
4. **प्रशासन एवं निरीक्षण व्यय में मितव्ययताः** इसमें श्रमिक स्वयं अध्कि पारिश्रमिक प्राप्त करने के लिए प्रयत्न करते रहते हैं इसलिए इस पर निरीक्षण व्यय कम होता है।
5. **टेण्डर मूल्य ज्ञात करने की सुविधः** इसमें टेण्डर मूल्य निकालने में सरलता रहती है क्योंकि इसके अन्तर्गत प्रति वस्तु श्रम व्यय पहले से ही ज्ञात रहता है।

हानियाँ
(Disadvantages)

1. अध्कि कार्य करने से श्रमिकों के स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ता है।
2. उद्योगपति श्रमिकों की मजदूरी काट लेते हैं।
3. अध्कि मजदूरी मिलती है तो उद्योगपति जलते हैं।
4. वस्तुओं की किस्म खराब हो जाती है।
5. यह विध्ि कलात्मक वस्तुओं के उत्पादन के लिए उचित नहीं है।
6. इस प्रणाली का श्रमसंघ विरोध् करते हैं।
7. इस प्रणाली से बेकारी पफैलने का भय रहता है।
8. इस प्रणाली में श्रमिकों को छुट्टिद्वयाँ नहीं मिलतीं।
9. अकुशल श्रमिकों को इससे हानि होती है।
10. यह प्रणाली श्रमिकों के स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव डालती है।

उपयुक्तताः

यह प्रणाली उन उद्योगों के लिए उपयुक्त है जहाँ उत्पादन क्रिया प्रमापीकरण तथा उचित किस्म की वस्तुओं का उत्पादन होता है, जैसे–हथकरघा उद्योग, जूता उद्योग आदि।

3. **प्रेरक या प्रेरणात्मक अथवा अध्लिाभांश प(तियाँ (Intentive Premium or Bonus Methos)**: ये प(तियाँ उपरोक्त प(तियाँ का सम्मिश्रण हैं। इनमें दोनों के गुणों को ग्रहण करने एवं दोषों से बचने का प्रयत्न किया गया है। ये प(तियाँ निम्न हैं।

   (i) **हाल्से प्रब्याजि योजना (Halsey Premium Scheme):** इसमें श्रमिक को एक निश्चित पारिश्रमिक के अतिरिक्त प्रमापित कार्य से ज्यादा करने पर उस कार्य के पारिश्रमिक का 33÷ से 50÷ तब प्रब्याजि (Bonus) के रूप में दिया जाता है।

   इस प(ति के अनुसार उत्दान का प्रमाप (Standard) एवं उसे समाप्त करने का प्रमापित समय (Standard time) पहले से ही निश्चित कर लिया जाता है। यदि प्रमापित समय के अन्दर, निर्धरित प्रमाप (Standard) की वस्तु तैयार हो जाती है तो श्रमिकों को निश्चित मजदूरी मिल ही जाती है। यदि श्रमिक निश्चित समय से पहले कार्य पूरा कर लेता है, अर्थात् कुछ समय बचा लेता है तो उसे बचाये हुए समय के लिए मजदूरी का निश्चित प्रतिशत अध्लिाभांश (Bonus) के रूप में दिया जाता है।

विशेषताएँ
(Characteristics)

1. उत्पादन का प्रमाप (Standard) तथा कार्य समाप्त करने का प्रमाप (Standard Time) पहले ही निश्चित किया जाता है।
2. श्रमिक को काम पूरा होने पर ही मजदूरी दी जाती है।
3. प्रमापित समय (Standard Time) से पूर्व कार्य समापित पर बचाये हुए समय के लिए मजदूरी का निश्चित प्रतिशत अध्लिाभाशं के रूप में दिया जाता है।
4. प्रमापित कार्य, प्रमापित समय में पूरा किये जाने पर श्रमिकों को न्यूनतम मजदूरी दी जाती है।
5. यह प्रणाली कुशलता पर बल देती है।

लाभ
(Advantage)

1. यह प(ति सरल है
2. इसमें श्रम और पूँजी के बीच संघर्ष नहीं होता
3. यह कुशल कारीगरों के लिए लाभदायक है
4. यह प(ति मनोवैज्ञानिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है।

हानियाँ
(Disadvantages)

1. यह प(ति अवैज्ञानिक आधरों पर प्रमाप निश्चित करती है।
2. यह प्रशासन की दृष्टि से उपयुक्त नहीं है।
3. श्रमिकों को अध्कि काम के लिए सदैव प्रोत्साहित नहीं करती।
4. यह नये कार्यो की तुलना में पिछले कार्य पर निर्भर करती है।

2. **रोवन प्रब्याजि योजना (Rowan Premium Scheme):** रोवन की इस योजनानुसार प्रब्याजि हाल्से योतना की तरह 33÷ या 50÷ नहीं होती हैं बल्कि दिन की मजदूरी का वह अनुपात होता है जो कि बचाये गया समय का प्रमाप सयम से होता है।

   प्रेरणा की इस प्रणाली का श्रेय स्कॉटलैंड निवासी जेम्स रोवन को है। श्रमिक को उस समय के लिए, जिसमे उसके कार्य किया है, साधरण दारों पर मजदूरी दी जाती है। शेष बचे हुए समय के आधर पर प्रब्याजि के रूप में श्रमिक को अतिरिक्त ध्न दिया जाता है। इसमें प्रताप समय और प्रमापित कार्य दोनों निश्चित होते हैं। बचे हुए ध्न की मजदूरी उसी प्रतिशत से बढ़ेगी, जितने प्रतिशत कमी उस काम के लिए निर्धरित समय में होती है। बचाये हुए समय की प्रब्याजि कुल प्रमाप मजदूरी से अध्कि नहीं हो सकती और इस प्रकार श्रमिक चालाकी से आवश्यकता से अध्कि मजदूरी ले सकता।

प्रब्याजि निकालने का नियम

$$\text{प्रब्याजि} = \text{कार्य किये समय का पारिश्रमिक} \times \frac{\text{बचाया समय}}{\text{प्रमाप समय}}$$

रोवन तथा हाल्से प(तियों की तुलना (Comparison Between Rowan and Halsey Wage Plans):

दोनों योजनाओं में निम्न अन्तर है

1. आरम्भ में रोवन योजना में प्रब्याजि की दर अध्कि रहती है और हाल्से योजना में दर कम रहती है।
2. हाल्से योजना में श्रमिक आध्े से अध्कि समय बचाने लगते हैं तब प्रब्याजि की दर एकदम बढ़ जाती है, किन्तु रोवन योजना में प्रब्याजि की दर एक–सी रहती है।

   हाल्से योजना में अध्कि काम करने पर वेतन दुगुना हो सकता है, किन्तु रोवन योजना में वेतन कभी दुगुना नहीं हो सक्ता।

3. **टेलर अन्तर्युक्त कार्य भाग पर योजना (Taylor Differential Piece Rate Scheme):** इस प(ति के अनुसार कार्य का प्रमाप स्तर निश्चित कर लिया जाता है। जो श्रमिक प्रमाप से अध्कि कार्य नहीं कर सकते उनको पारिश्रमिक नीची दर से दिया जाता है और जो श्रमिक प्रमाप अथवा प्रमाप से अध्कि कार्य कर पाते हैं, उनकों उफँची दर से पारिश्रमिक मिलता है।

4. **मैरिक बहुगुण कार्य भाग दर योजना (Merrick Defferential or Multiple Price Rate Scheme):** टेलर प(ति की कठोरता को दूर करने के लिए मैरिक योजना में दो दरों के स्थान पर तीन दरें रखी गयी हैं। पहली, प्रमाप कार्य के 80÷ तकऋ दूसरी प्रमाप बिन्दू परऋ तीसरी प्रमाप कार्य के उफपर।

5. **गैंट प्रब्याजि योजना (Gantt Premium Scheme):** इस योजना के अनुसार यदि कोई श्रमिक निश्चित समय में प्रमाप कार्यो के बराबर कार्य करता है तो उसे दैनिक पारिश्रमिक के अतिरिक्त उसका 20÷ से 50÷ तक प्रब्याजि रूप से मिलता है।

6. **इमरसन कार्यक्षमता प्रब्याजि योजना (Emerson Efficiency Premium Scheme):** इस योजना के अनुसार प्रत्येक श्रमिक को दैनिक पारिश्रमिक मिलने की गारण्टी दी जाती है परन्तु जो प्रब्याजि श्रमिकों को दिया जाता है, वह उनकी कार्यक्षमता के अनुसार कम या अध्कि होता है। 67÷ कार्य को प्रमाप समय माना जाता है, इससे उफपर प्रब्याजि सारण (Premium Table) की सहायता से विभिन्न कार्यक्षमता के प्रतिशतों के लिए प्रब्याजि का प्रतिशत नियत किया जाता हैं।

7. **बेडो योजना (Bedeux Scheme):** जो श्रमिक प्रमाप के बराबर अथवा उससे कम कार्य करते हैं उन्हें केवल दैनिक मजदूरी ही दी जाती है और जो श्रमिक इससे अध्कि काम करने हैं उन्हें बचाये हुए समय का 75÷ अध्कि लाभाशं मिलता है।

8. **उच्च पारिश्रमिक प्रणाली (High Wage System):** इस प(ति के अनुसार प्रचलित दर से 20÷ से 50÷ उफँची दर पर पारिश्रमिक दिया जाता हैं लेकिन श्रमिकों से पूर्ण आवश्वासन ले लिया जाता है कि वे सर्वोत्तम कार्यक्षमता से सर्वाध्कि उत्पादन करेंगे।

9. **सामूहिक अध्लिाभाशं योजनायें (Collective Bonus Plans):** इसमें प्रीस्टमैन एवं परिव्यय अध्लिाभांश योजनायें आती हैं। प्रीस्टमैन विध् िके अनुसार लाभांश

$$\text{लाभांश} = \frac{\text{बड़ा हुआ कुल उत्पादन}}{\text{प्रमाप उत्पादन}}$$

उपर्युक्त सूत्रानुसार दिया जाता है एवं परिचय लागत एवं प्रमाप लागत का एक भाग अंध्लिाभांश के रूम में दिया जाता है।

10. **उतार चढ़ाव दर प्रणाली (Sliding Scale System):** इसमें पारिश्रमिक की दर को जीवन–निर्वाह परिव्यय सूचनांक (Cost of Living Index Number) से जोड़ दिया जाता है। जिसके अनुसार जीवन निर्वाह की वस्तुओं के मूल्यों के घटने–बढ़ने से पारिश्रमिक की दर घटती–बढ़ती रहती है।

11. **श्रम सहभागिता प्रणाली (Labour Co-partnership):** इससे श्रमिकों का जो लाभ मिजता है उसे वे पूँजी के रूप में व्यवसाय में लगा देते हैं और व्यवसाय के स्वामी बन जाते हैं। इसमें श्रमिक अंशधरी बन जाते हैं और उन्हें अंशधरियों को प्राप्त सभी अध्किार मिल जाते हैं।

13. **न्यूनतम पारिश्रमिक प्रणाली (Minimum Wages System):** कुछ व्यवसायों में श्रमसंघ संगठित एवं शक्तिशाली न होने के कारण श्रमिकों का शोषण किया जाता है। अतः ऐसे व्यवसायों में यह आवश्यक हो जाता है कि उस देश की सरकार अधिनियम बनाकर न्यूनतम पारिश्रमिक नियत करे जिससे कि कोई भी मिल मालिक अपने श्रमिकों को उससे कम वेतन न दे सके। न्यूनतम परिश्रमिक इतना अवश्य होना चाहिए कि श्रमिक अपना तथा अपने आश्रितों का जीवन निर्वाह एक साधरण स्तर पर कर सके।

3. **टेलर योजना (Taylor's Plan):** टेलर योजना प्रति इकाई मजदूरी पर आधरित है अर्थात् श्रमिक कितना उत्पादन करता है उस आधर पर उसे मजदूरी दी जाती है। इस सि(ान्त में मजदूरी की दरें एक साथ प्रयुक्त की जाती है। एक उफँची दर उन श्रमिकों के लिए जो निर्धरित समय में अपना कार्य पूरा करते हैं एवं दूसरी नीची दर उन श्रमिकों के लिए जो निर्धरित समय में अपना कार्य पूरा नहीं कर पाते। इस प्रणाली में कुशल श्रमिकों का स्प5 भेद हो जाता है।

4. **मैरिक योजना (Merrick Plan):** यह टेलर की योजना का ही थोड़ा–सा परिवर्तित रूप हैं इसमें मजदूरी की दरें दो के स्थान पर तीन होती हैं।

   (i) एक–नए मजदूरों के लिए–कापफी कम

   (ii) दूसरी–साधरण कुशल श्रमिकों के लिए–मध्यम

   (iii) तीसरी–कापफी कुशल श्रमिकों के लिए–उच्च कुशल श्रमिकों को स्वतः ही प्रोत्साहन मिल जाता हैं।

5. **गैंट योजना (Gantt Plan):** यह भी टेलर की योजना का ही एक उत्कृष्ट रूप है। इसमें एक ओर मजदूरी समय के अनुसार निश्चित की जाती है जबकि दूसरी ओर कुशल श्रमिक को प्रति इकाई मजूदरी दी जाती है। सामान्य कुशल श्रमिक को समयानुसार मजदूरी के साथ–साथ इसी का 90÷ बोनस के रूप में भी मिलता है।

6. **इमरशन योजना (Emerson Plan):** यह योजना भी टेलर, मैरिक एवं गैण्ट का ही एक सम्मिलित रूप है। थोड़ा–सा परिवर्तन यह किया गया है कि बोनस की दरें भिन्न–भिन्न रखी गई हैं। अर्थात् कुशलता बढ़ने के साथ–साथ बोनस की राशि भी बढ़ जाती है। यह प्रतिशत निम्न हैं

   67.50÷ कुशलता पर बोनस 1÷

   90÷ ” ” ” 10÷

   100÷ ” ” ” 20÷

   100÷ ” ” ” 20÷ + अध्क्यि का 30÷

7. **वेडो अंक प्रब्याजी योजना (Bedaux Point-premimum Plan):** यह एक जटिल एवं अव्यावहारिक योजना है। इसमें श्रमिक द्वारा किए जाने वाले कार्य को प्रति मिनट की सूक्ष्म इकाइयों में विभक्त किया जाता है। इस प्रकार सप्ताह भी में जिनती इकाई कार्य होता है उसी कें अनुसार मजदूरी निश्चित की जाती है प्रति मिनट इकाइयों में कार्य का विभक्तीकरण एक जटिल एवं अव्यावहारिक प्रक्रिया है।

8. **स्कैलन योजना (Scalan Plan):** यह योजना एक प्रकार से अतिरिक्त लाभ विभाजन योजना है अर्थात् यदि एक वर्ष कारखाने को गतवर्ष की अपेक्षा अध्कि लाभ है तो उस अतिरिक्त लाभ के प्रतिशत के बराबर ही बोनस दिया जाता है। इस बोनस की राशि में से पहले 15÷ काट कर कोष को जमा कर दिया जाता है एवं इस कोष को अगले वर्ष कर्मचारियों में ही वितरित कर दिया जाता हैं। यह योजना इस प्रकार समझी जा सकती है।

   माना 1976–77 लाभ 15÷ था

   एवं 1977–78 का लाभ 20÷ है

   अर्थात् गतवर्ष से इस वर्ष लाभ 5÷ अध्कि है। इस प्रकार श्रमिकों को उनकी मजदूरी का 5÷ बोनस के रूप में दे दिया जायेगा इसमें किसी श्रमिक की व्यक्तिगत कुशलता या अकुशलता का कोई अन्तर नहीं किया जाता। विवरण से पूर्व 5÷ का 15÷ काटकर एक कोष में अगले वर्ष में वितरण हेतु अवश्य जमा कर दिया जायेगा।

9. **लाभ विभाजन योजना (Profit Sharing Plan):** इस योजना के अन्तर्गत श्रमिकों को लाभ का एक निश्चित प्रतिशत बोनस के रूप में दिया जाता है परन्तु इस योजना की सबसे बड़ी हानि यह होती है कि यदि किसी वर्ष लाभ न हो तो श्रमिकों को बोनस नहीं मिलेगा। परिणामतः श्रमिक इसे प्रबन्ध्क की बेईमानी बताकर झगड़ा खड़ा कर देंगे जो

श्रमिक–प्रबन्ध्क असन्तोष के रूप में बढ़कर उत्पादन को प्रभावित करेगा। यह प्रणाली नवीन होने के साथ–साथ अच्छी तो है परन्तु श्रमिक संगठन इसका बहुत दुरूपयोग करते है।

आध्ुनिक विचार
(Modern Thought)

प्रत्येक वर्णित प्रणाली के दोष ही नवीन प्रणाली के जन्मदाता हैं। मानव की आवश्यकतायें, विचार सामाजिक एवं धर्मिक नीतियाँ आदि परिवर्तनशील हैं। अतः किसी भी युग में कोई एक प्रणाली सर्वसम्मत प्राप्त कर सकेगी यह सम्भव नहीं। पिफर भी निम्न प्रणाली पूर्व प्रणालियों के अध्कितम दोषों को दूर करने में समर्थ है, इसमें कोई अतिश्योक्ति नहीं है।

प्रो॰ वीरेन्द्र अग्रवाल ने इस सम्बन्ध में निम्न सूत्र अपनाया है

$$\frac{MW^1}{MP} \times EW^2 = AW$$

M = Minimum

W^1 = Wages

P = Production

E = Extra

W^2 = Work

A = Additional

अर्थात् यदि उत्पादक ईमानदारी से मजदूरी देना चाहता है एवं श्रमिक श्री ईमानदारी से कार्य करना चाहता है तो दर प्रणाली एक प्रभावशाली भूमिका निभा सकती है। यह प्रणाली कुछ मान्यताओं पर आधरित है जो निम्न हैं।

1. **वस्तु की निश्चित किस्मः** वस्तु की किस्म निश्चित कर दी जाती है एवं श्रमिकों को इस सम्बन्ध में पूर्ण ज्ञान रहता है।
2. **वस्तु बनाने का निश्चित समयः** एक इकाई को बनाने में कितना समय लगता है, यह भी प्रयोगों द्वारा निश्चित कर दिया जाता है।
3. **उत्पादन की पूर्ण सुविधएँः** श्रमिक को उत्पादन की पूण्र सुविधएं हों जैसे कच्चे माल की सुलभता, आवश्यक यन्त्रों की सुलभता।
4. **उत्पादक में शोषण भावना का अभावः** उत्पादक में यह भावना किसी भी स्थिति में नही आनी चाहिए कि उसे श्रमिकों का शोषण करना है।

यदि उपर्युक्त मान्यताएं प्रयुक्त हो सकें तो यह सि(ान्त सपफलतम एवं वैज्ञानिक दृष्टि से अत्यध्कि मान्य होगा।

सि(ान्त की विशेषताएँ

सि(ान्त की सबसे प्रमुख विशेषता यह है कि इसमें श्रमिक को कम से कम एक निश्चित मजदूरी दिलाने का प्रावधन है। कम से कम मजदूरी प्रायः श्रमिक की अनिवार्य आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु आवश्यक ध्न के बराबर ही होती है। इस संदर्भ में यह कहना आवश्यक न हो कि यद्यपि प्रत्येक श्रमिक की आवश्यकताएं अलग–अलग होती है पिफर भी कम से कम मजदूरी प्रत्येक दशा में समान ही रहती है जबकि एक आदर्श परिवार को आधर मानकर निश्चित कर जाती है।

दूसरी विशेषता यह है कि न्यूनतम उत्पादन भी निश्चित रहता है। जिसके कारण उत्पादक को हानि की सम्भावना नहीं रहती है।

तीसरे, अध्कि कार्य करने एवं कार्य कुशलता में वृ(ि की प्रेरणा भी श्रमिक को मिलती है जिससे श्रमिक एवं उत्पादन दोनों की ही लाभ होता है।

विवेचन

$$\frac{MW^1}{MP} \times EW^2 = AW^1$$

$$\frac{\text{न्यूनतम मजदूरी}}{\text{न्यूनत उत्पादन}} \times \text{अतिरिक्त कार्य} = \text{अतिरिक्त मजदूरी}$$

अर्थात प्रत्येक श्रमिक के लिए न्यूनतम उत्पादन एवं उसके लिए न्यूनतम मजदूरी निश्चित कर दी जाती है। यह प्रायः इतनी ही होती है कि अनिवार्य आवश्यकताओं की पूर्ति की जा सके परन्तु साथ ही जो श्रमिक अपनी जीवन स्तर उफँचा उठाना चाहते हैं एवं अपनी शारीरिक एवं मानवीय योग्यता का पूर्ण लाभ कमाना चाहते हैं उन्हें प्रेरणा देने के लिए इस सूत्र में उन्हें, उनके द्वारा किए गए अतिरिक्त कार्य के लिए, पूर्व–निश्चित दर पर अतिरिक्त मजदूरी देने की भी व्यवस्था है। इस व्यवस्था के कारण मजदूरों में आलस्य व निकम्मापन स्वतः ही दूर हो जाता है। साथ–साथ जब एक साथ ही कार्य करने वाले दो मजदूरों की मजदूरी अलग–अलग मिलती है ता कम मजदूरी प्राप्त करने वाले श्रमिक शर्मिन्दा होता है और पिफर वह भी अध्कि कार्य करने का प्रयत्न करता है।

इस सूत्र को निम्न उदाहरण द्वारा स्प५ किया जा सकता है

मान लीजिये कारखाने में जूते बनते हैं। जूते चूँकि विभिन्न विभागों की सहायता से बनते हैं अतः हम केवल सोल विभाग का उदाहरण लेते हैं। सोल विभाग में निम्न दर निश्चित की गई है।

न्यूनतम मजदूरी 5.00 रुपये

न्यूनतम उत्पादन 50 सोल

साथ–ही–साथ यह भी निश्चित किया गया कि जो श्रमिक इससे अध्कि कार्य करेगा उसे इसी दर से अतिरिक्त आय की प्राप्ति होगी। मान लीजिए 4 मजदूर हैं अ, ब, स एवं द। उनका उत्पादन निम्न हैं

अ 1000 सोल ब 95 सोल

स 80 सोल द 60 सोल

अब इसका भुगतान निम्न प्रकार होगा

नाम श्रमिक	कुल उत्पादन सोल	न्यूनतम उत्पादन	अतिरिक्त उत्पादन ;रुपयेद्ध	अतिरिक्त मजदूरी ;सोलद्ध	अतिरिक्त मजदूरी की दर	अतिरिक्त मजदूरी	कुल भुगतान	विशेष कथन
अ	100	50	5.00	50	10 पैसे	5.00	10.00	सर्वश्रे६ श्रमिक
ब	95	50	5.00	45	प्रति सोल	4.00	9.50	श्रे६
स	80	50	5.00	30		3.00	8.00	मध्य
द	60	50	5.00	10		1.00	6.00	सामान्य

इस प्रकार हम देखते हैं कि एक निश्चित समय के अन्दर विभिन्न श्रमिकों ने एक ही किस्म के उत्पादन का विभिन्न परिणाम (Quantity) प्रस्तुत किया। यह प्रस्तुतिकरण उनकी कार्यकुशलता का परिचायक है। इसी प्रस्तुतीकरण के आधर पर यदि हम चाहें तो श्रमिकों की पदोन्नति को आधरित कर सकते हैं।

इसी नियम में एक अन्य व्यवस्था भी है कि यदि श्रमिक निश्चित समय से अध्कि कार्य करना चाहता है तो उसे निश्चित समय के 25÷ तक अतिरिक्त समय कार्य करने की अनुमति दी जाये। इस अतिरिक्त समय में उत्पादित वस्तु पर उसको पूर्व दर के अनुसार मजदरूी निकालने के पश्चात् उस अतिरिक्त मजदूरी में से 10÷ कम कर दिया जाए। यह कमी वास्तव में "ास की राशि को प्रकट करती है। इसकी गणना निम्न प्रकार होगी।

निश्चित समय 800 घण्टे

निश्चित कार्य 500 सोल

निश्चित मजदूरी 10 रुपये

श्रमिक निम्न कार्य करता है।

1. कुल उत्पादन ;निश्चित समय मेंद्ध—550 सोल अतिरिक्त उत्पादन ;2 घण्टेद्ध—130 सोल। उसे मजदूरी निम्न प्रकार दी जायेगी।
2. न्यूनतम कार्य हेतु न्यूनतम मजदूरी = 10.00 रुपये

अतिरिक्त कार्य हेतु मजदूरी

$\frac{10}{500} \times 50 = 1.00$ रुपया

अतिरिक्त समय में कार्य

$$\frac{MW^1}{MP} \times EW^2 = AW^1$$

$\frac{10}{500} \times 130 = 2.60$

Less 10% for Dep. of Rs. 2.60 = .26 = 2.34 रुपया

कुल मजदूरी 10.00 + 1.00 + 2.60—26 = 13.34 रुपया

इस प्रकार इस प्रणाली में वे सभी गुण उपस्थित हैं जो एक अच्छी मजदूरी की प्रणाली में होनी चाहिएं—अर्थात् सरल, प्रेरणा—प्रद शोषण का अभाव, अन्य व्यक्तियों के रोजगारों के अवसरों में कमी न करना, श्रमिक के जीवनस्तर में वृ(, वस्तु के लागत मूल्य में कमी, अच्छी किस्म की वस्तुओं का उत्पादन, यन्त्रों की उचित देखभाल एवं श्रमिक संगठनों द्वारा मान्यता।

अध्याय–10
सेविवर्ग अंकेक्षण एवं नियन्त्रण
(Personnel Audit and Control)

सेविवर्ग अंकेक्षण से अर्थ
(Meaning of Personnel Audit)

अंकेक्षण शब्द 'Audit' लैटिन भाषा के 'auditus' शब्द से बना है जिसका अर्थ सुनना (hearing) होता है। अंकेक्षण का अर्थ लेखा कर्म क्षेत्र में अच्छी तरह समझा जाता है, किन्तु आजकल इसका प्रयोग प्रबन्ध्कीय क्षेत्र में अच्छी तरह समझा जाता है, किन्तु आजकल इसका प्रयोग प्रबन्ध्कीय क्षेत्र में भी होने लगा हैऋ जैसे, प्रबन्ध्कीय अंकेक्षण, विपणन अंकेक्षण, सेविवर्गीय अंकेक्षण', आदि विभिन्न नामों से पुकारा जाता है। सेविवर्ग प्रबन्ध् अंकेक्षण की वैधनिक आवश्यकता नहीं होने हुए भी इसकी उपयोगिता को स्वीकार किया जाने लगा है। औद्योगिक सम्बन्ध् से उत्पादन प्रभावित होता है। प्रारम्भ में सेविवर्ग प्रबन्ध् अंकेक्षण का कोई महत्त्व नहीं था, किन्तु अब प्रबन्ध्कीय दर्शन बहुत कुछ बदल चुका है और श्रमिक भागिता, श्रमिक सुझाव, आदि को अध्किाध्कि महत्त्व दिया जा रहा है।

प्रारम्भिक काल में औद्योगिक सम्बन्धें का अंकेक्षण सेविवर्गीय प्रबन्ध् विभाग में कार्यकलापों से ही किया जाता था। वह विभाग प्रबन्ध्कों की ओर से सेवा–कार्य करता था, अतः उसका मूल कार्य प्रबन्ध् के हितों की रक्षा था और तब सेवा–कार्यों का मूल्यांकन मात्र ही सेविवर्गीय अंकेक्षण समझाा जाता था। इसके अन्तर्गत विभाग की विभिन्न कार्यवाहियों की प्रणाली जैसे, भर्ती, साक्षात्कार, परीक्षण, विचार–विर्मश, कर्मचारी आलेख रखना, सामूहिक सौदेबाजी प्रक्रिया, पंच–निर्णय प्रणाली, वरि्पुता प्रणालियों की गणना का मूल्यांकन सम्मिलित किया जाता था।

सेविवर्ग प्रबन्ध् विचार की दो विध्यिां विकसित की गयी हैंः (i) समस्त प्रबन्ध्कीय कार्यक्रमों का पुनरावलोकन करना जिनमें कर्मचारी का चयन, विकास, स्थापन, पर्यवेक्षण सम्मिलित हैं, (ii) प्रत्येक कार्यवाही का विस्तृत विवेचन एवं उसकी सम्पूर्ण सूचना चाही जाती है। अब अंकेक्षण केवल इस बात से ही सन्तुद्र नहीं हो जाता है कि कार्य निष्पादन कितना सपफल रहा है? वह यह भी जानना चाहता है कि असपफलता के क्या कारण हैं? तथा उसके सुधर के क्या सम्भव उपाय किये जा सकते हैं?

1. **पिफलप्पो** के अनुसार, फ्अंकेक्षण सेविवर्गीय कार्यक्रम की सभी प्रक्रियाओं तथा उनकी निष्पादन विध् िका अध्ययन है।य[1]
2. **पावेल तथा ड्रेक** ने सेविवर्गीय अंकेक्षण की आवश्यकता स्पपु करते हुए कहा कि फ्सेविवर्गीय कार्यक्रम के मुख्य अंगों का पुनरावलोकन करने के लिए वार्षिक विध् िके रूप में नियमपूर्वक प्रारम्भ किया गया कार्य अंकेक्षण है। इस उद्देश्य के लिए एक जांच सूची (Check list) बनायी जाती है। अंकेक्षण विभिन्न प्रणालियों के प्रभाव का मूल्यांकन करने में सहायक होता है तथा भावी कार्यक्रम बनाने में मार्गदर्शन देता है।य[2]

---

1. "The audit is a systematic survey of all the activities of a personnel programme and the manner in which these activities are undertaken."
–**Edwin B. Flippo,** op. cit., p.97.
2. "A review will be made of the major phases of the personnel programme, to be initiated as a regular annual procedure. A check list will be formulated for this purpose. The audit will help to evaluate the effectiveness of the procedure already instituted instituted and will indicate a further course of action."
–**Leona Powell and Francis S. Drake**

3. **ज्यूशियस** ने अंकेक्षण कार्यक्रम को तीन भागों में बांटा है—
   i. जनशक्ति कार्यों का क्षेत्र निर्धरण एवं मूल्यांकन करनाऋ
   ii. आलेख एवं प्रतिवेदन प्राप्त करनाऋ तथा
   iii. प्राप्त सूचना को विश्लेषित करने हेतु विभिन्न विध्यिों का प्रयोग।[3]

प्रक्रियात्मक अंकेक्षण एवं पूर्ण मानव अंकेक्षण
(Procedural Audit and Whole-man Audit)

कर्मचारी अंकेक्षण का प्रारम्भिक रूप केवल प्रक्रियात्मक अंकेक्षण था। इनमें कर्मचारी से सम्बन्धित विभिन्न कार्य—प्रणालियों की जांच की जाती है तथा विभागीय कार्यक्रम में सुधर के लिए प्रयत्न किया जाता था। आजकल कार्य पर लगे हुए सम्पूर्ण मानव का अंकेक्षण किया जाता है।

प्रक्रियात्मक अंकेक्षण
(Procedural Audit)

इस प्रणाली के अन्तर्गत सामान्यतः निम्नलिखित कार्य सम्मिलित किये जाते हैं:

1. कार्य विश्लेषण, 2. भर्ती, 3. परीक्षण, 4. साक्षात्कार, 5. प्रशिक्षण ;कक्षाएं, सम्मेलन, आदिद्ध, 6. प्रबन्ध्कीय विकास, 7. पदोन्नति एवं सथानान्तरण, 8. सेविवर्गीय मूल्यांकन, 9. श्रम सम्बन्ध ;प्रशासन, परिवाद निवारण, विचार—विमर्शद्ध, 10. कर्मचारी लाभ योजनाएं, 11. कर्मचारी व्यवहार/नैतिक आचरण, 12. सम्प्रेषण प्रणाली 13. कर्मचारी विचार—विर्मश, 14. वेतन एवं मजदूरी प्रशासन, 15. सेविवर्गीय प्रबन्ध/औद्योगिक सम्बन्ध अनुसन्धन।

सम्पूर्ण मानव अंकेक्षण
(Whole-man Audit)

इस प्रणाली के अन्तर्गत प्रबन्ध के सम्पूर्ण पक्ष, जो मानवीय ोतों के उपभोग से सम्बन्ध रखते हैं, अंकेक्षण के क्षेत्र में आते हैं। डेल योडर में अंकेक्षण को मुख्य छः भागों में बांटा है 1. आयोजन, 2. कर्मचारियों का प्रबन्ध, 3. संगठन, 4. बचनब(ता या समर्पण, 5. प्रशासन, 6. अनुसन्धन एवं अभिनवीकरण।

1. **आयोजन (Planning):** इसके अन्र्तगत संगठन तथा मानवीय आवश्यकताओं की दृपि् से आयोजन एवं सारणीयन किया जाता है तथा भावी अनुमान (Forecasting) लगाये जाते है। इन उद्देश्यों की सपफलता का मूल्यांकन करने से यह पता लग सकता है कि श्रमिकों की कमी है अथवा आध्क्यि, अध्सिमय भुगतान करना पड़ रहा है। या श्रमिक—छुटिटयां अध्कि हैं। इन निष्कर्षो के आधर पर विभिन्न कार्यक्रम बनाये जा सकते है। विद्यमान प्रणाली में सुधर न करने हेतु पंचवर्षीय योजनाएं और लागत बजट बनाना तथा कार्य—आयोजन करना सम्भव है। विभिन्न कार्यक्रमों से प्राप्त अनुभव के आधर पर नीति निर्धरण सम्भव है जिससे जनशक्ति का पूण्र सदुपयोग हो सके।

2. **कर्मचारियों का विकास एवं प्रबन्ध (Management and Development of Staff):** इस क्षेत्र में जनशक्ति की मांग के अनुसार, श्रमिकों की शिक्षा के बारें में मापदण्ड निश्चित करना, श्रम के ोतों का पता लगाना, उसकी भर्ती तथा चयन करना, प्रशिक्षण तथा पदोन्नति देना, आदि कार्य सम्मिलित किये जाते है। इन तथ्यों के अंकेक्षण से भर्ती का समय एवं लागत, प्रशिक्षण काल एवं लागत, श्रम प्रत्यावर्तन आदि बातें ज्ञात होती हैं जिनके आधर पर सुधरात्मक उपाय करक भविष्य के लिए आयोजन तथा विभिन्न प्रणालियों को अपनाया जा सकता है। प्रशिक्षण कार्यक्रमों के आयोजन और चरित्र—निर्माण सम्बन्धी सेवाओं के कार्यक्रम बनाये जा सकते हैं। विभिन्न कार्यक्रमों के अध्ययन के आधर पर दीर्घकालीन नीति का निर्धरण किया जा सकता है एवं वैज्ञानिक ढंग से सेविवर्गीय संगठन का विकास किय जा सकता है।

---

3. Dale Yoder, op. cit p.710

3. **संगठन (Organisation):** इस प्रक्रिया के अन्तर्गत समन्वय, सम्प्रेषण तथा समूह विध्यिों का अध्ययन किया जाता है। अध्ययन से प्राप्त निष्कर्ष के पफलस्वरूप अनौपचारिक संगठन बनाना, प्रतिवेदन एवं आलेख तैयार करना तथा पुनर्विनियोग प(ति का प्रयोग किया जा सकता है। इन निष्कर्षो के आधर पर व्यक्तिगत, विभाग, कार्य–प्रणाली तथा संगठन के अंग के रूप में कार्य की परिभाषाएं की जा सकती है। विभिन्न नामों से परिभाषित करने के उपरान्त यह अध्ययन नीति निर्धरण में सहायक होता है। नीति निर्धरण के अन्तर्गत संगठन में लोच एवं परिवर्तन कम करने का प्रयास तथा प्रभावी सम्प्रेषण प्रणाली लागू करना सम्मिलित किया जाता है।

4. **समर्पण (Commitment):** वचनब(ता या समर्पण के अन्तर्गत सामूहिक अभिप्रेरण, रुचि, प्रयास तथा अंशदान सम्मिलित किये जाते है। परिणामस्वरूप, उत्पादकता, निष्पादन प्रमाप, तुलनात्मक लागत, आदि के लिए सामग्री उपलब्ध् होती है। प्रथम चरण में विभिन्न परिणाम प्राप्त होने के उपरान्त कार्य विश्लेषण, वेतन एवं मजदूरी प्रशासन, नैतिक सर्वेक्षण, आनुषंगिक लाभ तथा साक्षात्कार, आदि का आयोजन एवं प्रक्रिया निर्धरण की जा सकती है। विभिन्न आयोजन एवं कार्यक्रमों के आधर पर पूर्ण सन्तुटि हेतु दीघ्रकालीन नीतियां बनायी जा सकती है।

5. **प्रशासन (Administration):** प्रशासन के अन्तर्गत नेतृत्व अथवा पर्यवेक्षण अध्किार, हस्तान्तरण, विचार–विमर्श, आदि सम्मिलिति किये जाते हैं। इन क्षेत्रों का अंकेक्षण करने से सुझाव, पदोन्नतियां, परिवाद, अनुशासन, श्रम संघ तथा प्रबन्ध्कों में सम्बध् एवं सहयोग का ज्ञान होता है। इस निष्कर्ष पर पहुंचने के उपरान्त कि आपसी सम्बन्ध् किस प्रकार के हैं? अनुशासन कैसा है? परिवाद के कारण क्या है? उनका स्तर क्या है? पदोन्नतियों के प्रति श्रमिकों के विचार किस प्रकार के हैं? विभिन्न समस्याओं के समाधन हेतु कार्यक्रम एवं कार्यप्रणाली निश्चित की जाती है। इसके अन्तर्गत विचार–विवर्श प्रशासन प्रणाली सामूहिक सौदेबाजी, संघ, प्रबन्ध् समितियां, आदि स्थापित की जाती है और सर्वाध्कि अच्छी प्रणाली को नीति रूप में स्वीकार कर लिया जाता है और तदनुसार श्रमिकों की सहभागिता, सामूहिक सौदेबाजी सम्बन्धी नीतिया बनायी जाती है।

6. **अनुसन्धन एवं नव प्रवर्तन (Research and Innovation):** सभी क्षेत्रों में प्रयोग तथा सि(ान्तों की जांच का कार्य इसमें सम्मिलित किय जाता है। इस उद्देश्य से कार्य करने पर विभिन्न परिवर्तनों की जानकारी तथा प्रयोगात्मक एवां अनुसन्धन प्रतिवेदन प्राप्त होती है। इसके आधर पर सभी क्षेत्रों में शोध् एवं विकास (R and D) प्रक्रिया के माध्यम से कार्यक्रम और विचार–विमर्श योजनाएं बनायी जा सकती है। कार्यक्रमों को अच्छी तरह परखने के उपरान्त पुराने और नये सि(ान्तों को जांचा जा सकता है तथा प्रबन्ध् में सृजनात्मकता (Creativity) लायी जा सकती है।

अंकेक्षण के विविध् क्षेत्रों में अध्ययन के उपरान्त यह कहा जा सकता है कि प्रत्येक क्षेत्र में अंकेक्षण अत्यन्त आवश्यक है। अंकेक्षण के माध्यम से व्यवसाय की समस्त गतिविध्यिां तथा उनके दोषों के कारण ज्ञात होते है। इन्हें सुधरने के कार्यक्रम बनाये जा सकते है तथा विभिन्न कार्यक्रमों के मूल्यांकन एवं अंकेक्षण के उपरान्त उन्हें रीतियों में परिणत किया जा सकता है।

सेविवर्गीय अंकेक्षण के प्रकार
(Types of Personel Audit)

अंकेक्षण का महत्त्व बढ़ने के साथ–साथ इसके कई प्रकार भी पाये जाते हैं। उद्देश्यों के आधर पर अंकेक्षण विभिन्न प्रकार के हो सकते है। आधुनिक अंकेक्षण केवल ‘क्यों हुआ तथा हो रहा है?’ से ही सन्तुट नहीं होते अपितु ‘कोई कार्य क्यों और कैसे हुआ?’ आदि पर अध्कि ध्यान देते हैं। परम्परागत अंकेक्षण आजकल के अंकेक्षण की भांति विस्तृत तथा सूक्ष्म–अन्वेषणात्मक (Penetrating and deep probing) नहीं था। अंकेक्षण के मुख्यतः तीन रूप हो सकते हैं। 1. परिणाम अंकेक्षण (Results Audit); 2. प्रक्रियात्मक अंकेक्षण (Procedural Audit); 3. नीति अंकेक्षण (Policy Audit)।

1. **परिणाम अंकेक्षण (Result Audit):** इस अंकेक्षण का उद्देश्य विभिन्न प्रबन्ध्कीय निर्णयों के पफलस्वरूप प्राप्त परिणामें का मूल्यांकन करना है। सपफल प्रबन्ध्क वह है तो श्रम प्रत्यावर्तन, अनुपस्थिति दर, थकान एवं कार्य नीरसता, आदि में कमी कर सके, पदोन्नति स्थानान्तरण, स्थापन, परिवाद निवारण, आदि की दृटि से कर्मचारियों को सन्तुट रख सके एवं संस्थान में शान्ति का वातावरण बनाये रख सके तथा उत्पादन लागत न्यूनतम रखने की दृटि से कर्मचारियों का विभाजन उप–विभागों में करके उनसे अध्कि–से–अध्कि कार्य लेने में सपफल हो सके।

रैबे (Rabe) ने परिणामें की विस्तृत सूची दी है[4] इनमें विभिन्न अनुपात दिये गये हैं जैसे व्यक्ति विक्रय मूल्य, प्रति श्रम घण्टा उत्पादन, उपस्थिति, नीरसता तथा अधिनियम एवं संगठनात्मक इकाई अनुपात, योग्य श्रमिकों से छुटिटयों का अनुपात, प्रति सैकड़ा किये गये कार्य मानव–दिन से बीमारी आवकाश का अनुपात, आदि। इनको आधर मानकर सेविवर्ग प्रबन्ध में सुधर किया जा सकता है।

यह प्रणाली दोषपूर्ण है क्योंकि यह केवल परिणामों पर आधरित है। परिणाम प्रबन्ध के अतिरिक्त अन्य कई कारणों से प्रभावित होते हैं जैसे कार्य की दशाएं, प्रबन्धक की नीतियां, श्रम की प्रवृति एवं चयन, आदि। इन सभी कारणों को इस अंकेक्षण में उपेक्षित किया जाता है। उदाहरणार्थ कहा जा सकता है कि बेरोजगारी अध्कि हाने पर श्रम प्रत्यावर्तन दर कम होगी, प्रशिक्षण कार्यक्रम अल्पकालीन होने के कारण श्रमिकों की शैक्षणिक योग्यता एवं पृदभूमि अध्कि सुदृढ़ हो सकती है। यह किसी प्रकार प्रबन्ध्क की योग्यता का सही मूल्यांकन ही कहा जा सकता है।

यह प्रणाली दीर्ध्कालीन एवं अल्पकालीन निर्णयों में भेद स्पष्ट करने में असमर्थ रहती है।। कई प्रबन्ध्क अल्पकालीन श्रम–सन्तुष्टि प्राप्त करने के लिए संस्था के दीर्ध्कालीन हितों को हानि पहुंचा सकता हैं।

2. **प्रक्रिया अंकेक्षण (Procedural Audit):** बड़े संस्थानों में जनशक्ति अंकेक्षण प्रक्रियात्मक प्रणाली से अध्कि किया जाता है। इस विध् िके अन्तर्गत अंकेक्षण प्रत्येक विभाग को स्थापित प्रविध्यिों के विरू(कार्य करने से रोकता है। समस्त कार्यकाल के कार्य निष्पादन की तुलना निर्धरित विध्यिों से की जाती है। जिस प्रकार यात्रा भत्ता अंकेक्षक निर्धरित कार्यक्रम के कार्य निष्पादन की तुलना निर्धरित विध्यिों से की जाती है। जिस प्रकार यात्रा भत्ता अंकेक्षक निर्धरित कार्यक्रम से यात्री बिलों की तुलना करता है/जांच करता है, उसी प्रकार पूर्व–निर्धरित कार्यक्रम के अनुसार वास्तविक कार्यप्रणाली की तुलना अंकेक्षक के द्वारा की जाती है।

   इस प्रणाली की भी आलोचना की गयी है। आलोचकों का कहना है कि यह प्रणाली पूर्व–निर्धरित प्रक्रिया के आधर पर अंकेक्षण करती है अतः परिवर्तन, नव–प्रवर्तन तथा शोध् कार्य को हतोत्साहित करती है। यह प्रणाली तभी सपफल हो सकती है जब आयोजन मूल्य तथा सीमाएं प्रभावी हो तथा उन्हें प्रयोगात्मक रूप दिया जा सके। यदि मूल्य निर्धरण एवं आयोजन भली भांति किया गया है तो यह प्रणाली सपफल सि(हो सकती है।

   यदि प्रक्रियात्मक अंकेक्षण प्रणाली में थोड़ा–सा परिवर्तन या विस्तार किया जाये तो इससे सेविवर्गीय विभाग की क्रियाओं पर अत्यध्कि प्रभाव पड़ता है।

3. **नीति अंकेक्षण (Policy Audit):** परिणामों तथा प्रक्रियाओं के आधर पर अंकेक्षण से यह ज्ञात होता है कि कार्यक्रम कितनी सपफलता से चल रहे हैं जबकि मूल प्रमाप उद्देश्य का काम करते हैं जिसकी प्राप्ति के लिए कार्यक्रम बनाये गये हैं। ये उद्देश्य नीति को व्यक्त करते है। अतः संकेक्षण मूलभूत नीतियों के आधर पर किया जाना चाहिए कि किसी प्रबन्ध /संगठन की नीतियां क्या हैं तथा उन नीतियों को सपफलतापूर्वक लागू करने में प्रबन्ध कहां तक सक्रिय रहा है? राष्ट्रीय औद्योगिक सम्प्रेषण बोर्ड (National Industrial Conference Board-N.I.C.B.) के अनुसार, फ्नीतियों का होना अथवा न होना, जो समस्त संगठन के उद्देश्य का निर्धरण करती हैं, अंकेक्षण की मात्रा का सपफल निर्धरण है[5] वास्तव मे यदि संकेक्षण के संगठन के उद्देश्यों एवं नीतियों से सम्ब(नहीं किया जाये तो वह निरर्थक हो जाता है।

   अंकेक्षक सभी प्रकार की लिखित नीतियों की जांच करते है, ऐसे क्षेत्रों का पता लगाते हैं जिनमें किसी प्रकार की नीतियां स्थापित की गयी है। जहां लिखित नीति नहीं है वहां परम्पराओं के आधर पर नीति निर्धरित की जाती है और उसी आधर पर मूल्यांकन किया जाता है।

   इस प्रकार नीति अंकेक्षण को अंकेक्षण की सर्वोत्तम प्रणाली कहा जा सकता है। इस प्रणाली के अन्दर दो विध्यिां भी स्वतः समाविष्ट हो जाती हैं।

   अंकेक्षण की दृष्टि से नीति का औचित्य देखने के लिए निम्न प्रश्न किये जा सकते हैं।

---

4. W.F. Rabe, "Yardsticks for measuing Department Effectiveness:. Personnel, Vol. 44.
   –Quoted by Dale Yoder
5. The existeence or lack of policies, which establish objectives for the whole of the organization an important determinant in the amount of auditing."

1. लिखित एवं स्पष्ट नीति किस क्षेत्र के लिए तथा किस सीमा तक उपलब्ध है?
2. क्या महत्त्वपूर्ण क्षेत्रों की अपेक्षा की गई है या उनके लिए किसी प्रकार की नीति बनायी गयी है या नहीं?
3. क्य नीति विवरण स्पष्ट है एवं किसी प्रकार की विवादास्पद स्थिति से मुक्त है?
4. नीति के सम्प्रेषण तथा निर्वचन किए क्या प्रयास किये गये हैं तथा वे कितने सफल रहे हैं?
5. क्या व्यवसाय की नीतियों और जन–नीति मे साम्य है?
6. क्या नीतियां आन्तरिक एवं बाह्य दोनो दृष्टियों में एक सी है अथवा उनमें कोई विरोधभास है, विशेषतः कर्मचारी, प्रबन्ध संगठन, प्रशासन, आदि क्षेत्र में?
7. व्यवसाय की नीतियां अन्य समकक्ष व्यवसायों की नीतियों से कितना साम्य रखती हैं?
8. नीतियां कैसे निर्धरित की जाती है उनमें परिवर्तन कैसे होता है, परिवर्तन कौन करता है। तथा श्रमिक, प्रबन्ध्क, साहसी, पर्यवेक्षक आदि किस प्रकार नीति–निर्धरण में भाग लेते हैं?
9. नीति के पीछे सैद्धान्तिक दृष्टिकोण क्या है तथा नीतियां कहां तक सिद्धान्तों को प्रयोगात्मक रूप देने में सफल हैं।

सेविवर्गीय अंकेक्षण प्रक्रिया
(Personnel Auditing Process)

सेविवर्गीय अंकक्षेण का महत्त्व स्पष्ट होने के उपरान्त अंकेक्षण प्रक्रिया जानना आवश्यक है। संगठन में परिवर्तन–प्रणाली में सुधर, कुशल श्रमिक की कमी, जन नीतियों में परिवर्तन, आदि कारणों से शिखर प्रबन्ध्क के लिए यह आवश्यक हो गया है कि वह सेविवर्गीय अंकेक्षण प्रणाली का उपयोग करे। औपचारिक दृष्टि से अंकेक्षण इन सभी अपेक्षाओं का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत करता है।

सेविवर्गीय अंकेक्षण प्रक्रिया में निम्नलिखित तत्त्व मुख्य हैं।

1. **क्षेत्र एवं समय निर्धरण (Area and Time Determination):** कोई भी कार्य आरम्भ करते समय उनका क्षेत्र निश्चित करना आवश्यक है। कार्यक्षेत्र निश्चित करने के उपरान्त अंकेक्षण का समय निर्धरित किया जाता है। सेविवर्गीय अंकेक्षण नियमित अथवा अनियमित कालान्तर में यदा–कदा किया जा सकता है। कुछ व्यवसायी विभिन्न मदों के महत्त्व के अनुसार निश्चित कालान्तर में यदा–कदा अंकेक्षण का निर्णय लेते हैं। अधिक महत्त्वपूर्ण मदों के लिए अंकेक्षण नियमित एवं निश्चित कालान्तर पर किया जाता है। सघन अंकेक्षण प्रायः आकस्मिक एवं असामयिक होते हैं। ऐसे अंकेक्षण का उद्देश्य तथ्य के किसी विशेष पक्ष का अंकेक्षण करना होता है। इसे हम सूक्ष्म खोजबीन या अनुसन्धन भी कहते हैं।
2. **आन्तरिक अथवा बाह्य अकेक्षण (Internal and External Audit):** कुछ व्यवसायों में आन्तरिक अंकेक्षण को प्राथमिकता दी जाती है और कुछ में बाह्य अंकेक्षण को। आन्तरिक अंकेक्षण कर्मचारियों द्वारा आपस में एक–दूसरे के कार्य को किया जाता है जबकि बाह्य अंकेक्षण के लिए अंकेक्षक बाहर से आमन्त्रित किये जाते है। वे सक्षम, मान्यता प्राप्त तथा स्वतन्त्र अंकेक्षक होते हैं जिन पर किसी प्रकार का व्यक्तिगत प्रभाव नहीं डाला जा सकता है। बड़े उद्योगों में दोनों पद्धतियों का प्रयोग किया जाता है, किन्तु उस स्थिति में आन्तरिक अंकेक्षण, प्रणाली, बाह्य अंकेक्षण प्रणाली के सहायक के रूप में कार्य करती है। सामान्यतः बाह्य अंकेक्षकों द्वारा किया गया मूल्यांकन अधिक विश्वसनीय माना जाता है।
3. **अंकेक्षण समंक (Audit Statistics):** अंकेक्षण अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए सेविवर्गीय प्रबन्ध्क से विभिन्न प्रकार की सूचनाएं मांग सकते हैं। उपलब्ध सूचनाओं के अतिरित्तफ वे सही मूल्यांकन की दृष्टि से स्वतन्त्र रूप से भी सर्वेक्षण कर सकते हैं, जैसे, कर्मचारी की धरणाओं तथा नीति सम्बन्धी सर्वेक्षण। वे प्रबन्ध्क, पर्यवेक्षक तथा कर्मचारी किसी से भी साक्षात्कार कर सकते हैं।

4. **आलेख एवं प्रतिवेदन (Record and Report):** अंकेक्षण अपनी आवश्यकतानुसार सभी प्रकार के आलेख मांग सकते हैं तथा समय–समय पर अध्ययन के उपरान्त तैयार किये गये प्रतिवेदन की प्रति प्राप्त कर सकते हैं। इसका कारण यह है कि आलेख तथा प्रतिवेदन ही मूल्यांकन का आधर होते हैं। सन्दर्भ समय की सूचना तथा उस काल से सम्बन्धित अन्य सभी प्रकार की सूचना भी अंकेक्षक मांग सकते हैं। विभि कार्यक्रमों, मूल्यांकन प्रतिवेदनों, कर्मचारी आलेखों के साथ व्यक्तिगत पंजिकाएं पदो ति, भर्ती, स्थापन, पुरस्कार योजनाओं आदि से सम्बन्धित आलेख परिवाद व्यवस्था, महत्त्वपूर्ण समझौतों का आलेख, विभि प्रतिवेदनों के निष्कर्ष्ज्ञ एवं संकलन, आदि भी मांगे जा सकते हैं।

5. **भावभंगिता तथा नैतिक आचरण की जानकारी करनाः** सेविवर्गीय अंकेक्षक श्रमिकों की भावभंगिमा तथा नैतिक आचरण के विषय में जानकारी करना आवश्यक समझते हैं। यह सूचना श्रमिकों एवं प्रबन्ध के मध्य हुए विभि आदान–प्रदान के पफलस्वरूप उत्पन्न प्रतिक्रिया के आधर पर प्राप्त की जाती है। भावभंगिमा का पता अनुपस्थिति, नीरसता, अनुशासन, उत्पादकता तथा वस्तु एवं समय के अपव्यय के आधर पर लगाया जा सकता है।

इस प्रकार के विभि अध्ययन अंकेक्षण प्रक्रिया को सुचारू रूप से चलाने में सहायक होते हैं। ये समंक पर्याप्त महत्त्वपूण्र सि(होते हैं। इन्हीं के आधर पर अंकेक्षक सुझाव देते हैं।

संक्षेप में, अंकेक्षण प्रक्रिया में व्यत्तिफगत संगठन के आलेख, साक्षात्कार, नीतियां प्रतिवेदन, अनुसन्धन एवं सर्वेक्षण, भौतिक परीक्षण, भावभंगिता अध्ययन, नैतिक मूल्यांकन, आदि सभी विध्यिां प्रयोग में लायी जाती हैं, जिससे श्रमिको, प्रबन्ध्कों तथा व्यवसाय की नीतियों का स्प5् एवं सही मूल्यांकन किया जा सके। अंकेक्षण के अन्तर्गत श्रमिक की भर्ती से लेकर सेवा–निवृत्ति एक सभी प्रकार के कार्यकलाप ;स्थापन, स्थानान्तरण, मजदूरी दर, पदो ति, पद अवनति, पदच्युति, निष्कासन, निलम्बन, परिवाद निवारण, कार्य की दशाएं, श्रम सम्बन्ध, औचित्य प्रबन्ध्कों द्वारा अंशदान, आनुषंगिक लाभ व्यवस्थाद्ध से सम्बन्धित आवश्यक सूचनाएं प्राप्त की जाती हैं तथा उनको मूल्यांकित किया जाता है।

सेविवर्गीय अंकेक्षण का महत्त्व
(Importance of Personnel Audit)

आधुनिक युग में सेविवर्गीय अंकेक्षण को औद्योगिक सम्बन्धें तथा सेविवर्गीय प्रबन्धें के नियन्त्रण हेतु आवश्यक समझा जाने लगा है। कुछ महत्त्वपूर्ण परिवर्तनों के कारण सेविवर्गीय अंकेक्षण का महत्त्व बढ़ गया है। ये इस प्रकार हैंः

1. **परिवर्तित प्रबन्ध्कीय दर्शन एवं सि(ान्तः** श्रम–संघों को मान्यता, श्रम की सहभागिता एवं इन प्रणालियों की सपफलता से सेविवर्गीय अंकेक्षण का महत्त्व बढ़ गया है।

2. **सरकार के विचारः** सरकार द्वारा व्यवसाय में अध्किाध्कि हस्तक्षेप किये जाने के कारण तथा श्रमिकों को अध्कि संरक्षण दिये जाने की नीति के कारण अंकेक्षण अध्कि आवश्यक एवं महत्त्वपूर्ण समझा जाने लगा है।

3. **श्रम–संघों की वृ(िः** श्रम–संघ अध्कि होने के कारण श्रमिक वर्ग रो८ागार नीतियों में हस्तक्षेप करने योग्य हो गया तथा प्रबन्ध प्रणाली को तर्कसंगत दृि5् से देखने लगा है। अतः सेविवर्गीय प्रबन्ध्क ही नियन्त्रण क्रियाओं का निष्पक्ष मूल्यांकन करने के लिए अंकेक्षण आवश्यक समझाा जाने लगा।

4. **शीघ्र बढ़ती हुई मजदूरीः** उत्पादन लागत में शीघ्र वृ(होने के कारण प्रबन्ध्कों द्वारा अध्कि स्प(ात्मक लाभ उठाने का विचार जाग्रत हुआ जिससे अंकेक्षण का महत्त्व भी अध्कि हो गया है।

5. **दक्षता में परिवर्तनः** कुशल तथा व्यावसायिक श्रमिकों की संख्या में वृ(के कारण प्रबन्ध्कीय समस्याएं अध्कि जटिल हो गयीं। जटिलताओं के कारण प्रबन्ध्क अध्कि आलोचना का पात्र बनने लगा। अतः अंकेक्षण द्वारा उसकी कार्यवाही का मूल्यांकन कर दिये जाने पर आलोचना एवं श्रमिक में असन्तोष के अवसर कम हो जाते हैं।

6. **औद्योगिक सम्बन्धें पर अध्कि व्ययः** औद्योगिक सम्बन्धें पर अध्कि व्यय किया जाने लगा तथा श्रमिकों की संख्या में वृ(हुई जिससे सेविवर्गीय प्रबन्ध्क के सम्मुख वेतन, मजदरूी, पदो तियां, भर्ती आदि की समस्याएं अध्कि मात्रा में आने लगीं। इन समस्याओं का निवारण सभी श्रमिकों के साथ एक ही ढंग से हुआ है अथवा नहीं, इसका विस्तृत अवलोकन अंकेक्षण द्वारा ही सम्भव है। अतः आजकल अंकेक्षण का महत्त्व बढ़ गया है।

7. **अन्तर्राप्ट्रीय स्प(र्ा में वृ(ि:** औद्योगिक क्षेत्र में व्यापकता आने के साथ अन्तर्राप्ट्रीय स्प(र्ा भी बढ़ी तथा श्रमिक को सन्तुप्ट रखने तथा प्रबन्ध के प्रति विश्वास स्थापित करने की दृप्टि से अंकेक्षण आवश्यक समझाा जाने लगा।
8. **प्रबन्ध की आलोचना:** कालान्तर में प्रबन्ध प्रणाली में कई परिवर्तन हो गये तथा श्रमिकों का विश्वास उनसे हटकर आलोचनात्मक रूप लेने लगा। आलोचना से बचाव के लिए निष्पक्ष मूल्यांकन ही एक उपाय था, जो अंकेक्षण के रूप में सामने आया है।

उपरोत्तफ परिर्वतनों के कारण अंकेक्षण का महत्त्व अत्यन्त व्यापक हो गया है। अब यह अनुभव किया जाने लगा है कि सेविवर्गीय अंकेक्षण, सेविवर्गीय प्रबन्ध के मार्ग–दर्शन के लिए आवश्यक है। जन शत्तिफ अंकेक्षण के विविध लाभों को संक्षेप में इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है:

1. विद्यमान व्यवस्था की कमियों की ओर ध्यान आकर्षित करता है तथा उनमें आवश्यक परिवर्तन हेतु वातावरण तैयार करताहैऋ
2. श्रमिकों और प्रबन्ध्कों के बीच विश्वास स्थापित करने में सहयोग देता हैऋ
3. व्यवसाय की नीतियों की तुलना अन्य व्यवसायों की नीतियों तथा जन–नीतियों से करता है तथा व्यवसाय की प्रतिष्ठा को बढ़ाने हेतु मेल नहीं खाने वाली नीतियों से अवगत कराता हैऋ
4. प्रबन्ध्क की योग्यता का मूल्यांकन करता हैऋ
5. कर्मचारियों को भलीभांति कार्य करने के लिए सचेत तथा अभिप्रेरित करता हैऋ
6. कर्मचारियों पर एक नैतिक अंकुश का काम करता हैऋ
7. कार्य निष्पादन में होने वाली अनियमितताओं को दूर करता हैऋ
8. नीतियों के सै(ान्तिक एवं प्रयोगात्मक रूप को स्पप्ट करता है तथा उनके भेद को सामने लाता है। इससे श्रमिक वर्ग को लाभ होता हैऋ
9. शोध् के आधर पर तैयार करता हैऋ
10. प्रबन्ध्क की नियन्त्रण क्षमता में वृ(करता हैऋ
11. श्रम–सम्बन्ध् मृदु बनाने में सहायक होता हैऋ
12. दैनिक कार्य प्रणालियों में सुधर होता है।

जनशत्तिफ अंकेक्षण के लिए उपयुत्तफ संगठन
(Organisations Suitable for Manpower Management Auditing)

अंकेक्षण के महत्त्व को देखते हुए अब कोई भी संस्थान इससे विमुख नहीं है, किन्तु पिफर भी यह कहना अनुचित न होगा कि कुछ छोटे एवं मध्यम स्तरीय व्यवसायों में जहां श्रमिकों की संख्या कम है, जनशत्तिफ अंकेक्षण आवश्यक नहीं माना जाता। ऐसे संगठन जहां प्रत्यक्ष नियन्त्रण ही पर्याप्त है, वहां अंकेक्षण प्रणाली लागू करना न्यायसंगत नहीं कहा जा सकता।

सामान्यतः निम्नलिखित संगठनों में जनशत्तिफ अंकेक्षण को आवश्यक एवं उचित ठहराया जा सकता है:

1. जहां कर्मचारियों की संख्या अध्कि हो।
2. प्रबन्ध्कीय ढांचा इस प्रकार का हो कि सेविवर्गीय प्रबन्ध् और औद्योगिक सम्बन्ध् विभाग दोनों पृथक् रूप से कार्य कर रहें हों तथा उन्हें विभि विभागों को समय–समय पर सही एवं विश्वसनीय सूचना भेजनी आवश्यक हो।
3. जहां औद्योगिक इकाइयों और उनकी शाखाओं में दूरी होने के कारण सम्भव नहीं हो।
4. जहां सम्प्रेषण प्रणाली भली–भांति विकसित न हो, अंकेक्षण आवश्यक है।
5. औद्योगिक सम्बन्ध् अध्किारी के लिए समंकों का लितना अध्कि महत्त्व होगा उतना ही अंकेक्षण आवश्यक होगा।

6. शत्तिफ विकेन्द्रीकरण तथा अध्किार हस्तान्तरण जितना अध्कि होगा अंकेक्षण की आवश्यकता भी उतनी ही अध्कि होगी।

अंकेक्षण तथा नियन्त्रण
(Auditing and Control)

संगठनात्मक तथा व्यत्तिफगत कार्य निष्पादन के बारे में प्रबन्ध्क द्वारा पूरी जानकारी रखना ही **'नियन्त्रण प्रक्रिया'** कहलाता है। नियन्त्रण के अन्तर्गत विश्लेषण, मूल्यांकन तथा विश्लेषण के आधर पर प्रबन्ध्क की क्रिया एवं पुनर्निर्देश सम्मिलित किये जाते है। नियन्त्रण प्रभावशाली होने के लिए उचित समय पर, सही एवं विश्वसनीय निर्णय होना आवश्यक है। उदाहरणार्थ, पिछले महीने उत्पादक कम होने की दशा में उत्पादन बढ़ाने के प्रयासों पर उचित ध्यान दिया जाना चाहिए। यदि किसी विभाग में परिवाद अपेक्षतया अध्कि हो रहे हों, तो पर्यवेक्षक का परिवर्तन या संघर्षप्रिय व्यक्ति का स्थानान्तरण करना सपफल नियन्त्रण का प्रतीक कहा जा सकता है। विक्रय प्रतिवेदनों के आधर पर विज्ञापन प्रणाली में सुधर हेतु सोचा जा सकता है। उत्पादन–क्रिया में त्रुटिपूर्ण उत्पादन, थकान, अध्सिमय कार्य, प्रति इकाई लागत व्यय, परिवाद तथा अन्य प्रकार के प्रतिवेदन नियन्त्रण के लिए शास्त्र का कार्य करते हैं। सुविध की दृष्टि से प्रबन्ध्क ऐसी कार्यप्रणाली लागू करते हैं जिससे नियन्त्रण में पुनर्विनियोग होता रहता है एवं अध्कि नियन्त्रण क आवश्यकता नहीं होती।

अंकेक्षण एवं नियन्त्रण के उद्देश्य एक ही हैं, किन्तु दोनों में कुछ अन्तर है। अंकेक्षण नियन्त्रण को अध्कि सपफल बनाने की दृष्टि से किया जाता है। आज के व्यस्त वातावरण में तथा विस्तृत क्रिया–कलापों को ध्यान में रखते हुए प्रबन्ध्क सभी व्यावसायिक क्षेत्रों पर पूर्ण सत्यता की गारण्टी नहीं दे सकता। वह यथासम्भव नियन्त्रण के लिए तो उत्तरदायी है, किन्तु सम्पूर्ण दृष्टि से प्राप्त विभि प्रतिवेदन चालू विश्लेषण से सम्बन्ध्ति होते हैं, अतः अध्कि महत्त्वपूर्ण सि(नहीं हो सकते। प्रतिवेदन प्रबन्ध्कीय समस्याओं तथा संकटकालीन अवस्था में अपर्याप्त सि(होते हैं।

अतः अध्कि विश्वसनीय तथा विस्तृत सूचना प्राप्त करने के लिए अंकेक्षण किया जाता है। अंकेक्षण एक ऐसा शोध कार्य है जिसके द्वारा विध्वित् सम्पूर्ण सूचना की जांच–पड़ताल की जाती है, सूचना एकत्रित तथा विश्लेषित की जाती है तथा निर्धरित समय के लिए सघन अध्ययन प्रस्तुत किया जाता है। इस प्रकार अंकेक्षण एक प्रकार की अनुसन्धनात्मक, विश्लेषणात्मक तथा तुलनात्मक प्रणाली है। यह किसी व्यावसायिक इकाई या पफर्म की सूचना की तुलना प्रमापित मूल्यों से तथा अन्तर्विभागीय तुलना करती है।

कर्मचारी नियन्त्रण हेतु आवश्यक आलेख (Essential Records for Employee's Control): कर्मचारी नियन्त्रण हेतु निम्नलिखित आलेख रखे जाने चाहिएः

1. कार्य विश्लेषणऋ
2. भर्ती एवं चयनऋ
3. मजदूरी एवं वेतन प्रशासनऋ
4. कर्मचारी मूल्यांकन एवं परीक्षणऋ
5. अवकाश स्थानान्तरण, पदो तियांऋ
6. स्वास्थ्य एवं सुरक्षाऋ
7. कर्मचारी सेवाएंऋ
8. अनुशासन एवं सेवा निष्कासनऋ
9. औद्योगिक विवाद एवं मनोबल।

इन सभी प्रकार के आलेखों से प्रबन्ध के अनेक उद्देश्यों की पूर्ति होती हैऋ जैसे–

1. किसी भी स्तर पर कर्मचारी की व्यक्तिगत तथा कार्य सम्बन्धी सूचना उपलब्ध हो जानाऋ
2. कर्मचारी की योग्यता का पता लगाना तथा उसकी प्रशिक्षण की आवश्यकता की जानकारी होनाऋ

3. संगठन की दृष्टि से सम्प्रेषण प्रणाली को आसान बनानाऋ
4. एक ही प्रकार की विशेषता वाले समूहों का निर्माण करनाऋ
5. औद्योगिक सम्बन्ध अंकेक्षण कार्यक्रम को सुलभ करना।

कर्मचारी आलेख, प्रबन्ध्क को प्रभावशाली नियन्त्रण में सहायता प्रदान करता है। विभि सूचनाओं का विश्लेषण करके वार्षिक प्रतिवेदन तैयार किया जाता है जिससे जन–शत्तिफ विकास सम्भव होता है। कर्मचारी नियन्त्रण के लिए समय–समय पर प्रतिवेदन तैयार किये जाते हैं। ये प्रतिवेदन आश्वश्यकतानुसार मासिक, त्रैमासिक, अर्ध्वार्षिक होते हैं।

शोध तथा अंकेक्षण
(Research and Auditing)

शोध विकास की कुंजी है। वैज्ञानिक प्रबन्ध प्रणाली के अन्तर्गत शोध व्यवयसाय का एक अभि अंग बन गया है। आजकज प्रबन्ध्क, शोध एवं विकास (Research and Development) विचारधरा के हो चुके हैं। शोध एक ऐसी प्रणाली है जो विकास को तीव्रता प्रदान करती है। व्यवस्थित अनुसन्धन का ही दूसरा नाम शोध है। शोध, अंकेक्षण प्रणाली में तो तीव्र विकास का साध्न रहा है। **हेनमैन** के अनुसार, फअंकेक्षण तथा शोध में निकट का सम्बन्ध है।[6] औद्योगिक सम्बन्ध अंकेक्षण के साथ यदि शोध को सम्ब(कर दिया जाय तो अंकेक्षण का मूल्य तथा विश्वसनीयता बढ़ जाती है। शोध सि(ान्तों की जाँच करने का शस्त्र है जिस पर नीतियां आधरित होती है, कार्यक्रम बनाये, चयनित एवं लागू किये जाते हैं। अंकेक्षण उन नीतियों की सार्थकता का मूल्यांकन करता है।

इस प्रकार शोध एवं अंकेक्षण एक–दूसरे के प्रतिस्पर्धी न होकर पूरक है। शोध की सहायता से अंकेक्षण अध्कि सपफल हो सकता है तथा अंकेक्षण में प्राप्त निष्कर्षों के आधर पर शेध का प्रारम्भ किया जा सकता है। आधुनिक सिमुलेशन विध्यिां, शोध को अध्कि सपफल बनाने में सहायक हैं। प्रमाप निर्धरण, मॉडल प्रस्तुतीकरण, आदि के आधर पर मूल्यांकन अध्कि प्रभावपूर्ण हो सकता है।

मूल्यांकन एवं अंकेक्षण
(Evaluation and Audit)

पूर्ण अंकेक्षण में औद्योगिक सम्बन्ध कार्यक्रम के प्रक्रियात्मक और नीति सम्बन्धी सभी महत्त्वपूण्र तथ्यों को सम्मिलित किया जाता है। इसके कार्य विश्लेषण तथा कार्य वर्णन, साध्नों को प्रयोग तथा परीक्षण, मजदूरी नीति का प्रयोग, सुझााव प(ति एवं परिवेदना निवारण प्रणाली, स्थानान्तरण एवं पदो ति प्रणाली, विशेष कार्य दशाओं का संधरण ;जैसे, काम के घण्टे, रोाागार में स्थायित्व, प्रकाश, ताप एवं स्वास्थ्यप्रद दशाएंद्ध कर्मचारी सेवाएं तथा सेवा–निवृत्ति कार्यक्रम, अनुशासन, कर्मचारी मनोबल, सामूहिक सौदेबाजी, आदि का नियन्त्रण तथा अन्य औद्योगक सम्बनधें से सम्बन्ध्ति कार्यक्रमों की जाँच सम्मिलित है। सेविवर्गीय प्रबन्ध क्षेत्र में शोध के कारण अंकेक्षण का क्षेत्र भी व्यापक हो गया है।

मूल्यांकन अंकेक्षण का ही अंग है। अंकेक्षण कार्यक्रम के साथ अथवा पृथक् से मूल्यांकन किया जा सकता है। अंकेक्षण का कार्य विभि सेविवर्गीय प्रक्रियाओं और नीतियों की जाँच करना है। यह मूल्यांकन है। इसके उपरान्त अंकेक्षण प्रतिवेदन तथ्यों का औचित्य विश्लेषण तथा उनको निष्पक्ष विवेचन अंकेक्षण की पूर्णता प्रदान करते है। तात्पर्य यह है कि मूल्यांकन कार्य अंकेक्षण का पूर्वार्ध है।

जनशत्तिफ प्रबन्ध सम्बन्धी अंकेक्षण प्रतिवेदन
(The Manpower Management Audit Report)

जनशत्तिफ प्रबन्ध अंकेक्षण करने के उपरान्त एक विस्तृत प्रतिवेदन तैयार किया जाना चाहिए। लेखा अंकेक्षण प्रतिवेदन की भांति यह प्रतिवेदन भी संविवर्गीय प्रबन्ध में पायी जाने वाली कमियों को बतलाता है किन्तु इसका उद्देश्य मूलतः प्रबन्ध प्रणाली

6. Heneman, *"Personnel Audits and Manpower Assets"*, p. 5. (Special release 5, University 0 Minnesota, Industrial Relations Centre, February 1967.)

द्वारा श्रमिक का विकास करना तथा अध्कि उत्पादन को प्रोत्साहन देना है। जनशत्तिफ प्रबन्ध अंकेक्षक निष्पक्ष होने चाहिए। सि(ान्त रूप में प्रतिवेदन का कोई निश्चित प्रारूप निर्धरित नहीं किया जा सकता किन्तु इसमें निम्नलिखित मुख्य बातों का समावेश होना चाहिएः

1. अंकेक्षण प्रतिवेदन में नियन्त्रण प्रणाली पर अध्कि जोर दिया जाये।
2. आलेख को आधर मानकर अंकेक्षक को छानबीन भी करनी चाहिए जिससे कर्मचारी आलेख की सत्यता का पता लग सके।
3. जनशत्तिफ प्रबन्ध अंकेक्षण में प्रशासनिक नियन्त्रण के अतिरित्तफ वित्तीय नियन्त्रण का भी उल्लेख किया जाये।
4. सूचना एवं सम्प्रेषण प्रणाली का विश्लेषण किया जाये।
5. कर्मचारी एवं नियोत्तफाओं के सम्बन्धें के बारे में मूल्य–विश्लेषण किया जाये।
6. अंकेक्षण प्रतिवेदन में प्रक्रियात्मक विश्लेषण सम्मिलित किया जाये।
7. अंकेक्षक यथासम्भव सम्पूण्र मानवीय क्षेत्र को अपने प्रतिवेदन में समावि५ करे।

सेविवर्ग संकेक्षण का समय
(Time of Personnel Auditing)

सेविवर्गीय कार्यप्रणाली के निरन्तर विश्लेषण एवं पुनरावलोकन के पूरक रूप में अंकेक्षण कार्यक्रम भी चलता रहता है। साधरणतः वित्तीय अंकेक्षण की भांति सेविवर्ग अंकेक्षण भी वार्षिक ही होता है। यह अंकेक्षण भी आन्तरिक अर्थात् अपने कर्मचारियों की सहायता से तथा बाह्य अर्थात् किसी अन्य संस्था के कर्मचारियों द्वारा किया जाता है। विशेष परिस्थितियों में विशि५ अंकेक्षण भी किया जा सकता है। अंकेक्षण प्रतिवेदन में कर्मचारी आलेख के प्रत्येक उपभाग के सम्बन्ध में कम–से–कम एक पैराग्रापफ होना चाहिए।

अध्याय–11

औद्योगिक सम्बन्ध: संघर्ष एवं निपटारा

(Industrial Relations: Disputes and Settlement)

परिचय
(Introduction)

आधुनिक औद्योगिक समाज में फऔद्योगिक सम्बन्ध्य एक बहुत नाजुक एवं जटिल समस्या है। आज औद्योगिक सम्बन्धें की समस्या हम जिस रूप में देखते हैं वह प्राचीन समय में नहीं पाई जाती थी। आज औद्योगिक सम्बन्धें की समस्या निश्चित रूप से बड़े पैमाने पर उत्पादन का परिणाम है। देश की बढ़ती हुई मजदूरी की दरें, श्रमिकों के रहन–सहन के स्तर में वृ(ि के कारण आज का श्रमिक वर्ग अच्छी शिक्षा और अध्कि गतिशीलता चाहता है, इसके अलावा आज का श्रमिक आधुनिकतम मशीनों पर कार्य करते–करते मशीन का एक हिस्सा बनकर रह गया है। इसलिए वह आज के पूँजीपति, सेवायोजकों से अपने अध्किारों, अपने आत्मसम्मान तथा गौरव प्राप्त करने के लिए लड़ रहा है। इसलिए वर्तमान में अध्कि औद्योगिक संघर्ष दिखाई देते है। इन सब समस्याओं का हल बेहतर औद्योगिक सम्बन्धें के अन्दर है।

औद्योगिक सम्बन्ध की अवधरणा
(Concept of Industrial Relations)

औद्योगिक सम्बन्ध एक विकासशील तथा गतिशील धरणा (Concept) है। सामान्यतः औद्योगिक सम्बन्ध शब्द सेवायोजक (Employer) और श्रमिकों (Employee) के बीच जो सम्बन्ध (Relation) होता है, उसकी प्रकृति (Nature) को प्रकट करने के लिए प्रयोग किया जाता है।

औद्योगिक सम्बन्धें को दो अर्थों में स्पष्ट किया जाता है। संकुचित अर्थ में इसका अभिप्राय औद्योगिक इकाई में नियोक्ता तथा कर्मचारियों के बीच स्थापित सम्बन्धें से है, जबकि विस्तृत अर्थों में, औद्योगिक सम्बन्धें में नियोजन से उत्पन्न सभी प्रकार के सम्बन्ध सम्मिलित होते हैं। औद्योगिक शान्ति बनाए रखने के लिए नियोक्ता और कर्मचारी के बीच सम्बन्ध मधुर होना आवश्यक है। औद्योगिक सम्बन्धें की अवधरणा (Concept) को निम्नलिखित विद्वान स्पष्ट करते हैं:–

1. वीथिल, स्मिथ एवं अन्य– फऔद्योगिक सम्बन्ध, प्रबन्ध का वह अंग है, जोकि संगठन की मानवशक्ति से सम्पर्क रखता है, चाहे यह मानवीय शक्ति, मशीन को चलाने वाली हो या कुशल श्रमिक या प्रबन्धक।य[1]
2. ई॰ एपफ॰ एल॰ ब्रेच– फऔद्योगिक सम्बन्ध एवं कर्मचारी सम्बन्ध में कोई विशेष अन्तर नहीं है, केवल इस अन्तर के साथ कि औद्योगिक सम्बन्ध को प्रोत्साहित करने के लिए, प्रशासन की नीतियों तथा क्रियाओं की नीतियों तथा क्रियाओं की तुलना में कर्मचारी सम्बन्धें पर अध्कि बल देता है।य[2]

---

1. "Industrial relations is that part of managment which is concerned with the manpower of the enterprice, whether machine operative, skilled worker or manager." **–Bethal, Smith etc.**
2. "Industrial relations and personnel management are almost synonymous terms with the only difference that the former places emphasis on the aspect of employee relationship rather than on the executive policies and activities that are set up to foster good relations." **–E.F.L. Breach**

3. डेल योडर (Dale Yoder) ने औद्योगिक सम्बन्धें के क्षेत्र के अन्तर्गत श्रमिकों की भर्ती, चुनाव, प्रशिक्षण, मानव संसाध्न प्रबन्ध्, सामूहिक सौदेबाजी आदि सभी को सम्मिलित किया है।
4. अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (I.L.O.) ने भी औद्योगिक सम्बन्ध के अन्तर्गत राज्य तथा सेवायोजकों के बीच सम्बन्धें (Relations) को सम्मिलित किया है।

मानवीय सम्बन्ध और औद्योगिक सम्बन्ध
(Human Relations and Industrial Relations)

आजकल मानवीय सम्बन्धें (Human Relations) शब्द का प्रयोग अध्कि प्रचलित है। कुछ लेखक मानवीय सम्बन्धें का अर्थ कर्मचारियों तथा सेवायोजकों अथवा नियोक्ताओं के बीच व्यक्तिगत तथा प्रत्यक्ष सम्बन्धें से लगाते हैं। इसके विपरीत कुछ मानवीय सम्बन्धें और **औद्योगिक सम्बन्ध** (Industrial Relations) सामूहिक सम्बन्धें (Collective Relations) के प्रतीक हैं। लेकिन मानवीय सम्बन्धें और औद्योगिक सम्बन्धें के बीच अन्तर की कोई स्पष्ट रेखा नहीं खींची जा सकती।

मानव संसाध्न प्रबन्ध और औद्योगिक सम्बन्ध
(Human Resource Management and Industrial Relations)

आध्ुनिक युग में मानव संसाध्न प्रबन्ध और औद्योगिक सम्बन्धें के बीच अन्तर न करते हुए इन दोनों शब्दों को पर्यायवाची मानते हैं। डेल योडर (Dale Yoder) के अनुसार, फऔद्योगिक सम्बन्धें के अन्तर्गत भर्ती, चुनाव, प्रशिक्षण तथा 'मानव संसाध्न चुनाव' (Personnel Management) सम्मिलित होता है।य3

इस प्रकार फऔद्योगिक सम्बन्ध्य की धरणा (Concept) सामाजिक और आर्थिक प्रणालियों की उपज है। इसका सम्बन्ध आध्ुनिक समाज में श्रमिक और सेवायोजकों (Employer) के व्यवहार से उत्पन्न सम्बन्धें (Relations) अथवा इनकी सम्ब(श्रृंखला (Set of Relations) से होता है। और यह सम्बन्धें की एक सामान्य श्रृंखला न होकर अनेक रूप वाले सम्बन्धें की परिचायक है जो आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक, वैधनिक, नैतिक, व्यावसायिक तकनीकी तथा मनोवैज्ञानिक स्तरों पर आधरित होते हैं।

औद्योगिक सम्बन्ध की परिभाषाएँ
(Definitions of Industrial Relations)

औद्योगिक सम्बन्धें की प्रमुख परिभाषाएँ निम्नलिखित हैं:

1. डेल योडर (Dale Yoder) के अनुसार, फऔद्योगिक सम्बन्ध्, से अभिप्राय, फप्रबन्ध्क एवं कर्मचारियों या कर्मचारियों और उनके संगठनों के मध्य उन सम्बन्धें से है जो उनके रोजगार से पैदा या उससे सम्बन्ध्ति होते हैं।य
2. जान टी. डनलप (John T. Dunlop) के अनुसार, फऔद्योगिक समाज निश्चित रूप से औद्योगिक सम्बन्धें को जन्म देते हैं जिसे श्रमिकों, प्रबन्ध्कों एवं सरकार के मध्य आपसी सम्बन्धें (Mutual Relations) के मिश्रण के रूप में स्पष्ट किया जा सकता है।य
3. एपफ.एच. हैरीबैसन और चार्ल्स ए. मेयर्स (F.H. Harribason and Charles A. Mlyers) के अनुसार, फऔद्योगिक सम्बन्ध किसी सन्दर्भ में पाये जाते हैं तथा ये औद्योगिक सम्बन्ध समाज में विचारशील तथ्य (Phenomena) के रूप में होकर अध्कितर आर्थिक, सामाजिक तथा राजनीतिक विचारों के निश्चित परिणाम होते हैं। औद्योगिक सम्बन्धें का अध्ययन करने के लिए उनके संदर्भों का अध्ययन करना आवश्यक होता है।य
4. श्री वी.बी. सिंह (Shri V.B. Singh) के अनुसार, फऔद्योगिक सम्बन्ध सामाजिक सम्बन्धें का एक महत्त्वपूर्ण हिस्सा/भाग होता है जो आध्ुनिक जगत में सेवायोजक तथा श्रमिकों के बीच पाया जाता है, जिनका नियमन राज्य के द्वारा विभिन्न

---

3. "The term Industrial Relations include Recruitment, selection, training and Personnel Management."

अंशों में किया जाता है तथा जो सामाजिक तत्त्वों एवं दूसरी संस्थाओं द्वारा क्रियाविन्त किये जाते हैं। इसके अर्न्तगत राज्य के कार्यों का अध्ययन, वैधनिक प्रणाली, नियोक्ता तथा श्रमिकों के संगठनों तथा आर्थिक क्षेत्र में पूँजीगत व्यवस्था प्रणाली, श्रमशक्ति का आयोजन, औद्योगिक संगठन तथा बाजार से सम्बन्धित घटक (Factors) सम्मिलित होते हैं।य

5. एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटानिका (Encyclopeadia Britannica) के अनुसार, फऔद्योगिक सम्बन्धें का विचार राज्य तथा नियोक्ताओं के सम्बन्धें और श्रमिक तथा उनके संगठनों तक पफैला हुआ है। इस प्रकार इसके अर्न्तगत–व्यक्तिगत सम्बन्ध, सामूहिक सुझाव प्रणाली ;श्रमिकों एवं नियोक्ताओं के मध्यद्ध, सामूहिक सम्बन्ध ;नियोक्ता एवं श्रम संगठनों के बीचद्ध तथा राज्य द्वारा की गई आवश्यक व्यवस्था आदि को सम्मिलित किया जाता है।य

औद्योगिक सम्बन्धें के उद्देश्य
(Objectives of Industrial Relations)

औद्योगिक सम्बन्धें को निम्नलिखित उद्देश्यों की दृष्टि से बेहतर बनाया जाता है–

1. श्रमिक वर्ग तथा प्रबन्ध्कों के हितों की रक्षा करना,

   (To safeguard the interests of workers and Management)

2. उत्पादन क्षमता में सर्वाध्कि वृ(करना,

   (To Raise Maximum Productivity)

3. औद्योगिक प्रजातन्त्र की स्थापना एवं उसका पालन–पोषण करना,

   (To establish and nurse the Industrial Democracy)

4. औद्योगिक विवादों को रोकना,

   (To avoid Industrial disputes)

5. हड़तालों, तालाबन्दी तथा घेराव आदि की प्रकृति पर रोक लगाना,

   (To eliminate the tendency of Strikes, Lockouts and Gheraos etc.)

6. हानि पर चल रही औद्योगिक इकाइयों तथा सार्वजानिक हित की दृष्टि से जिन औद्योगिक इकाइयों का उत्पादन नियन्त्रण में करना हो, उन पर सरकारी नियन्त्रण स्थापित करना,

   (To establish Government over industrial units which are incurring financial loss and those whose production control is essential in public interest.)

7. औद्योगिक सम्बन्धें को मधुर बनाना,

   (Good Industrial Relations)

8. पूर्ण रोजगार की स्थिति को प्राप्त करना,

   (To get full Employment position)

9. आधरभूत उद्योगों का राष्ट्रीयकरण तथा सामाजीकरण करना,

   (Nationalisation and Socialisation of Basic Industries)

10. कुल उत्पादन में वृ(करना।

    (To increase total production of the country)

औद्योगिक सम्बन्धें का क्षेत्र
(The Scope of Industrial Relations)

औद्योगिक सम्बन्ध मानवीय कार्यों एवं मानवीय विचारधरा पर आधरित हैं इसलिए इसका क्षेत्र बहुत अध्कि व्यापक है। इसके क्षेत्र के अन्तर्गत–ऐतिहासिक, आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक, वैधनिक, मनोवैज्ञानिक तथा तकनीकी सम्बन्धें आदि का अध्ययन होता है जो एक–दूसरे पर आधरित है।

इसके अतिरिक्त औद्योगिक सम्बन्धें के क्षेत्र के अंदर सबसे अध्कि महत्त्वपूर्ण विभाग, 'औद्योगिक सम्बन्ध विभाग' (Industrial Relations Department) होता है जिसके अधीन सैकड़ों कर्मचारी कार्य करते हैं जो प्रबन्ध संचालक की इस विभाग के कार्यभार को संभालने में सहायता करते हैं।

इस विभाग में एक सर्वोच्च अध्किारी अध्यक्ष (Chairman) अथवा प्रबन्ध–संचालक (Managing Director) कार्य करता है। इस अध्किारी की अनुपस्थिति में उपाध्यक्ष (Vice-chairman) अथवा औद्योगिक सम्बन्ध विभाग का निदेशक (Director) कार्य करता है। इस विभाग का उपाध्यक्ष या निदेशक संगठन के समस्त मानव संसाध्न प्रबन्ध की देख–रेख करता है तथा उच्च प्रबन्ध (Top-Management) को समय–समय पर इस सम्बन्ध में परामर्श देता है। इसके अतिरिक्त, प्रबन्ध्कीय नियोजन एवं प्रशासकों के विकास के लिए योजनाएँ बनाता है। पूरे संगठन का नियन्त्रण करते हुए मानव संसाध्न प्रबन्ध्कों के प्रशासन में सहयोग देता है। इस निदेशक या उपाध्यक्ष के नीचे कई विभाग कार्य करते हैं। जैसे–

1. **मानव संसाध्न शोध विभाग** (Human Resource Research Department): यह विभाग कर्मचारियों से सम्बन्धित आंकड़े, नई मानव संसाध्न तकनीक, कर्मचारियों की प्रवृत्ति का सर्वे तथा मानव संसाध्न प्रबन्ध से संबंधित शोध कार्य करता है।

2. **संगठनात्मक एवं विकास विभाग** (Organisational and Management Development): इस विभाग का सहायक संगठन के औद्योगिक सम्बन्धें तथा संगठनात्मक प्रचार सामग्री का प्रकाशन, शिक्षा, आधुनिक खोजें तथा अविष्कार, कर्मचारियों के स्वास्थ्य, प्रशिक्षण आदि का प्रकाशन तथा कर्मचारियों के विकास की योजनाएँ बनाता है।

3. **श्रम सम्बन्ध प्रबन्ध्क विभाग** (Labour Relations Department): इस विभाग का प्रबन्धक श्रमिकों की किसी भी तरह की शिकायत को दूर करता है, श्रम सन्नियमों को लागू करने का आश्वसन देता है, श्रम संघों से वार्तालाप के द्वारा श्रम संघर्षों को कम करता है तथा समय–समय पर सुपरवाइजर्स को श्रम कानून की व्याख्या करके समझाता है।

4. **सार्वजानिक सम्बन्धें का विभाग** (Public-Relations Department): इस विभाग का प्रबन्धक संगठन और जनता के बीच समन्वय स्थापित करता है। इसके अलावा समाचार–पत्रों से संबंध, समाज के विभिन्न अंगों के साथ सम्बन्ध, कॉलेज, विश्वविद्यालय के साथ सम्बन्ध, केन्द्रीय, राज्य एवं स्थानीय सरकार के साथ सम्बन्ध जोड़ने का कार्य करता है।

5. **कर्मचारी सम्बन्ध/मानव संसाध्न सम्बन्धें का विभाग** (Employee Relations Department): इस विभाग का प्रबन्ध (Manger) औद्योगिक सम्बन्धें के उपाध्यक्ष या निदेशक (Director) की अनुपस्थिति में उसकी जगह देख–रेख करता है। इसके अतिरिक्त श्रमिकों की भर्ती, श्रमिकों को सहायता, श्रम बाजारों की खोज आदि का कार्य करता है।

उपरोक्त विभागों के अलावा औद्योगिक सम्बन्धें को मजबूत और मधुर बनाने के लिए अनेक सुपरवाइजर्स कार्य करते हैं जैसे–रोजगार सुपरवाइजर, मजदूरी और वेतन श्रमिकों को प्रशिक्षण देने वाला सुपरवाइजर, श्रमिकों को स्वास्थ्य एवं सुरक्षा प्रदान करने वाला सुपरवाइजर, श्रमिकों से सम्बन्धित कल्याण योजनाओं की देख–रेख करने वाला सुपरवाइजर, कर्मचारियों और संगठन के बीच संचार–व्यवस्था को बनाये रखने वाला सुपरवाइजर तथा श्रमिकों के मनोरंजन की व्यवस्था करना, क्लबों की देख–रेख करना तथा श्रमिकों में टीम में भावना को जागृत करने का कार्य करना है।

औद्योगिक सम्बन्ध के कार्य का क्षेत्र
(Scope of Industrial Relations Work)

Chairnman of the Company or Managing Director of the Company
;कम्पनी का अध्यक्ष/प्रबन्ध संचालकद्ध

- Personnel Research Assistant ;मानव संसाध्न शोध सहायक)
- Vice Chairman/Director of Industrial Relations ;उपाध्यक्ष/औद्योगिक सम्बन्धें का निदेशकद्ध
  - Labour Relations Manager ;श्रम सम्बन्ध प्रबन्ध्कद्ध
  - Employee Relations Manager ;कर्मचारी सम्बन्ध प्रबन्ध्कद्ध
  - Public Relations Manager ;सार्वजानिक सम्बन्ध प्रबन्ध्कद्ध
- Organisational and Developement Assistant ;संगठनात्मक एवं विकास सहायकद्ध

Various Supervisors of Department
;विभिन्न विभागों के सुपरवाइजरद्ध

- Employment Supervisors ;रोजगार प्रबन्ध्क)
- Supervisors of Wage & Salary Adminstration ;मजदूरी एवं वेतन प्रबन्ध्कद्ध
- Training Supervisors ;प्रशिक्षण ;प्रबन्ध्कद्ध
- Health and Safety Supervisors ;स्वास्थ्य और सुरक्षा प्रबन्ध्कद्ध
- Welfare Services Supervisors ;श्रम कल्याण सेवाएं प्रबन्ध्कद्ध
- Employee Communication Supervisors ;कर्मचारी संदेशावाहन प्रबन्ध्कद्ध
- Supervisors of Recreational Activities ;मनोरंजन सेवाएं प्रबन्ध्कद्ध

औद्योगिक सम्बन्धें का महत्त्व
(Importance of Industrial Relations)
अथवा
औद्योगिक शान्ति का महत्त्व
(Importance of Industrial Peace)

प्रत्येक निर्माणी संस्था का मुख्य उद्देश्य, न्यूनतम लागत पर अध्कितम समय उत्पादन कर अध्कि–से–अध्कि ग्राहकों की आवश्यकताओं की पूर्ति करना है। एक संस्था अपने इस उद्देश्य में तभी सपफल हो सकती है यदि उद्योग में शन्ति–व्यवस्था बनी रहे तथा संस्था का उत्पादन कार्य निरन्तर चलता रहे। मशीनें, यन्त्र व सामग्री निर्जीव होते हैं तथा बिना श्रमिकों के प्रयत्नों के उपयोगिता वाले पदार्थों में परिवर्तित नहीं हो सकते। उत्पादन के लिए श्रमिकों का सहयोग अनिवार्य है। श्रमिकों से हृदय से सहयोग प्राप्त करने के लिए जरूरी है कि श्रमिकों के मध्य मनमुटाव न हो तथा उनके मध्य मधुर सम्बन्ध बने रहे। इस तरह स्पष्ट है कि एक संस्था की कार्यकुशलता व सपफलता के लिए मधुर औद्योगिक सम्बन्ध अत्यन्त आवश्यक है।

श्रमिकों की समस्या औद्योगिक क्रांति का विषैला शिशु है। श्रमिक, उत्पादन के अन्य सभी घटकों से अलग घटक है। वह एक जीवित प्राणी है जो अन्य अचेतन घटकों को प्रभावित करता है। वह सोच सकता है, समझ इच्छा कर सकता है और कार्य भी कर सकता है। किसी भी उपक्रम को सपफल होने के लिए श्रमिकों की समस्या को समझना चाहिए। कर्मचारियों पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। उत्पादन में प्रमुख रूप से चार घटक कार्य करते हैं Four M's -Material, Machines, Methods और चौथा घटक मनुष्य (Man) है। चौथे घटक के अभाव में कोई भी संस्था कार्य नहीं कर सकती।

यदि कोई उत्पादन की योजना मानवीय तथ्यों पर आधरित नहीं है तो वह प्रभावहीन सि(होगी। उद्योग में नियोक्ता–कर्मचारी सम्बन्ध का महत्त्व अब इतना विस्तृत हो गया है कि वित्त, उत्पादन और विपणन के साथ–साथ कर्मचारी वर्ग को भी उतना ही आदर दिया जाता है।

1. **कर्मचारी वर्ग प्रबन्ध्क से निम्न आशाएँ रखता है–**
   (i) **मानवीय साध्नों का उपभोग** – प्रबन्ध्क तभी किसी कर्मचारी से अध्कि कार्य ले सकता है जबकि उसमें निर्णय करने की क्षमता हो कि समय, किसको, कैसे सौंपा जाये।
   (ii) **प्रत्येक कर्मचारी का अध्कितम विकास** – कर्मचारियों के विकास का उत्तरदायित्व प्रबन्ध्क पर होता है।
   (iii) संघर्ष तथा विरोध् को यथासम्भव तथा शीघ्रता से समाप्त किया जाए।
2. **कर्मचारी वर्ग अपने श्रम के बदले में प्रबन्ध्क से निम्नलिखित सुविधएँ प्राप्त करना चाहता है–**
   (i) **अनिवार्य आवश्यकताओं की पूर्ति** – प्रत्येक कर्मचारी प्रबन्ध्क से अपने लिए मकान, कपड़ा, भोजन आदि की व्यवस्था करना चाहता है।
   (ii) **सुरक्षा** (Secuirty) – प्रत्येक कर्मचारी अपने पद पर बने रहने की सुरक्षा चाहता है।
   (iii) **स्तर** (Status) – कर्मचारी का सामाजिक स्तर, उसके कार्य स्तर से प्रभावित होता है। इसलिए वह कार्य स्तर से संतुष्ट होना चाहता है।
   (iv) **आत्मविश्वास** – अनेक कर्मचारी पदोन्नति के अवसर भी चाहते हैं।

बुरे औद्योगिक सम्बन्धें का प्रभाव
(Effect of Bad Industrial Relations)

उद्योग की कार्यकुशलता व सपफलता में मध्ुर औद्योगिक सम्बन्धें का विशेष महत्त्व है। यदि किसी संस्था में औद्योगिक सम्बन्ध मध्ुर नहीं है तब वहाँ औद्योगिक अंशति उत्पन्न हो जाती है तथा हड़ताल व तालाबन्दी तक की नौबत हो जाती है। इसका नियोक्ता पर तो प्रभाव पड़ता ही है, श्रमिक, उपभोक्ता तथा समाज भी इसके बुरे प्रभाव से बचे नहीं रह पाते। इनको तो वास्तव में विस्तृत हानि उठानी पड़ती है। औद्योगिक संघर्ष के कारण होने वाले मुख्य प्रभाव निम्नलिखित है–

1. **उद्योग पर प्रभाव** (Effect on Industry): औद्योगिक सम्बन्ध खराब होने से संस्था में औद्योगिक अशांति उत्पन्न हो जाती है जिससे संस्था का उत्पादन रूक जाता है। संस्था के साध्न बेकार पड़े रहते हैं। उत्पादन रूक जाने से ग्राहकों के आदेश समय पर पूरे नहीं हो पाते तथा बड़ी संख्या में ग्राहक टूट जाते हैं जिन्हें बाद में प्राप्त करना सरल नहीं रहता।

यदि श्रमिक संघर्ष हो जाये तो उसका निपटारा करने के लिए निम्न उपाय हैं–

(i) धरा 7 के अर्न्तगत श्रम न्यायालय (Labour Court)
(ii) धरा 7A के अर्न्तगत औद्योगिक न्यायाध्किरण (Industrial Tribunal)
(iii) धरा 7B के अर्न्तगत राष्ट्रीय न्यायाध्किरण (National Tribunal)
(iv) धरा 10A के अर्न्तगत पंचनिर्णय (Arbitration)

उपरोक्त के अलावा जब कभी भी देश में औद्योगिक अशान्ति पफैलने का भय हो तो केन्द्र सरकार के पास यह अध्किार होना चाहिए कि वह हड़ताल या तालाबन्दी पर रोक लगा दे। साथ ही सरकार को नियमों का पालन न करने वाली संस्थाओं की जानकारी भी होनी चाहिए जिनको दण्ड दिया जा सके।

2. **औद्योगिक प्रजातन्त्र की स्थापना** (To Establish Industrial Democracy): देश में औद्योगिक प्रजातन्त्र की स्थापना के लिए संयुक्त प्रबन्ध समितियों की स्थापना, श्रमिकों के साथ मानव व्यवहार, श्रमिकों को लाभ में हिस्सा देना आदि कार्य या क्रियाएँ औद्योगिक प्रजातन्त्र की स्थापना में सहयोग प्रदान करती है।

औद्योगिक सम्बन्धें की वर्तमान स्थिति
(Present Position of Industrial Relations)

औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 ऐसा प्रमुख केन्द्रीय कानून है जिसमें औद्योगिक विवादों को हल करने की व्यवस्था है। इसके अतिरिक्त **अनुशासन संहिता** 1958 और औद्योगिक शांति प्रभाव 1962 से भी सुचारू रूप से औद्योगिक सम्बन्ध बनाये रखने में मदद मिलती है।

1. **औद्योगिक रोजगार ;स्थायी आदेशद्ध अधिनियम, 1964** {Industrial Employment (Standing Orders)Act, 1946}: औद्योगिक शांति बनाये रखने के उद्देश्य से **औद्योगिक रोजगार ;रोजगार आदेशद्ध अधिनियम, 1946** पारित हुआ जिसके अर्न्तगत केन्द्र सरकार ने उन औद्योगिक संस्थाओं के लिए, जहाँ 100 या उससे अध्कि श्रमिक काम करते हैं, आदर्श नियम तैयार किये। इस अधिनियम का 1961 में संशोध्न किया गया। यह सम्बन्ध्ति राज्य सरकार को इस बात का अध्किार देता है कि वह इसे उन संस्थाओं पर भी लागू करे जहाँ 100 से कम श्रमिक काम करते हैं।

   1963 में किये गये एक और संशोध्न के अर्न्तगत सम्बंध्ति राज्य सरकार द्वारा तैयार किए गए आदर्श स्थायी आदेश उनके अर्न्तगत आने वाले तमाम औद्योगिक संस्थाओं पर तब तक लागू रहेंगे, जब तक औद्योगिक संस्थाओं द्वारा बनाये गये स्थायी आदेश प्रमाणित किये जाते। केन्द्र सरकार ने **19 मई, 1982** की अध्सिूचना द्वारा सरकारी नियंत्रण के सभी औद्योगिक संस्थानों में जहाँ 50 से अध्कि लेकिन 100 से कम कर्मचारी नियुक्त हों, औद्योगिक रोजगार ;स्थायी सरकारद्ध अधिनियम 1946 को लागू किया है।

2. **अनुशासन संहिता** (Code of Discipline): 1958 में हुए भारतीय श्रम सम्मेलन में तैयार की गई अनुशासन संहिता यह अपेक्षा करती है कि मालिक और मजदूरों के झगड़ों का निपटारा करने के लिए सीधि कार्यवाही का सहारा लेकर वर्तमान व्यवस्था का उपयोग किया जाये। कर्मचारियों व श्रमिकों के सभी संगठनों ने तथा कई अन्य संगठनों ने भी इसे स्वीकार किया है।

   केन्द्र और राज्यों के कार्यान्वयन संगठन विवादों को तय करने में सहायता करते हैं। अखिल भारतीय ट्रेड यूनियन कांग्रेस को छोड़कर मालिकों और मजदूरों के केन्द्रीय संगठनों तथा सार्वजानिक क्षेत्र के प्रतिष्ठानों ने भी विवाद की छानबीन के लिए ऐसी समितियाँ या कक्ष गठित किये हैं जो उनसे सम्ब(सदस्यों को औद्योगिक न्यायाध्किरण ;ट्रिब्यूनलद्ध और श्रम अदालतों जैसी निचली अदालतों के निर्णय के खिलापफ उच्च न्यायालयों में अपील करने के प्रति हतोसाहित करती है। केन्द्रीय प्रतिष्ठान जिन मामलों में अपील करना चाहते हैं उनकी छानबीन के लिए भी एक ऐसी प(ति 1964 से अपनायी जा रही है।

3. **औद्योगिक शान्ति प्रस्ताव** (Industrial Truce Resolution): 1962 में मालिकों और मजदूरों के केन्द्रीय संगठनों ने एक औद्योगिक प्रस्ताव का आशय था कि देश में उत्पादन में किसी प्रकार का विघ्न न पड़े, किन्तु श्रमिक और सेवायोजकों के हित सदैव टकराते रहे। यह टकराव (Confict) उतना ही पुराना है जितना कि मानवीय सभ्यता। औद्योगिक सम्बन्धें की समस्या का जो विकराल एवं विशाल रूप हम आज देखते हैं कि वह प्राचीनकाल में नहीं था क्योंकि उत्पादन प्रणाली बहुत अध्कि सरल थी। वस्तुओं का उत्पादन छोटे पैमाने पर होता या तथा वस्तुएँ स्थानीय उपभोग के लिए ही बनाई जाती थी। **उत्पादक स्वयं ही साहसी, पूँजीपति, प्रबन्ध्क तथा श्रमिक के रूप में कार्य किया करता था।** उत्पादन का कार्य कारगीरों के घरों पर ही होता था जिसमें उसके परिवार के सदस्य और काम सीखने वालों के द्वारा उत्पादन करने में सहायता प्रदान की जाती थी। इसलिए औद्योगिक सम्बन्धें की समस्या प्राचीनकाल में आज जैसी नहीं थी।

आधुनिक युग में औद्योगिक सम्बन्धें की समस्या का एकमात्र कारण बड़े पैमाने पर उत्पादन का नतीजा है जिसने मानव को मशीन का गुलाम बनाकर छोड़ दिया है। आज उद्योग का स्वरूप इतना अध्कि जटिल हो गया है कि बड़े पैमाने पर उत्पादन, भारी मात्रा में पूँजी का विनियोग, अध्कि मात्रा में श्रम विभाजन, वैज्ञानिक प्रबन्ध्, विशिष्टकरण तथा स्वचालित विभिन्न प्रकार का मशीनीकरण का प्रयोग हो रहा है। इसलिए श्रमिक वर्ग और सेवायोजक के बीच परस्पर वार्तालाप सम्बन्ध नष्ट हो गया। परिणामस्वरूप दोनों वर्गों के बीच एक खाई, एक अन्तर हो गया जो औद्योगिक सम्बन्धें को अच्छा बनाने में रूकावट पैदा कर रहा है।

इस प्रकार आधुनिक औद्योगिक जगत में श्रमिक मशीनों का दास बनकर रह गया। अत्यध्कि विशिष्टकरण (Specialsation) के कारण श्रमिक उत्पादन की पूरी क्रिया में एक छोटी–सी क्रिया सम्पन्न करता है इसलिए श्रमिकों में गर्व, आत्म–संतोष की भावना लुप्त होती जा रही है। आज का श्रमिक निराशा (Frustration) का अनुभव करता है और यह निराशा धेरे–धेरे औद्योगिक तनाव का रूप धरणा कर लेती है। इस निराशा को दूर करने का उपाय अच्छे औद्योगिक सम्बन्धें का निर्माण करना है।

औद्योगिक सम्बन्धें के पक्ष
(Aspects of Industrial Relations)

औद्योगिक सम्बन्धें के अन्तर्गत कर्मचारी (Personnel) और नियोक्ता (Employer) के सम्बन्ध होते हैं। इन दोनों के सम्बन्ध एक छोटे से सामाजिक संसार की रचना करते हैं जिसमें विभिन्न व्यक्ति, कर्मचारी, प्रबन्ध्क, पर्यवेक्षक आदि रहते हैं। ये सब औद्योगिक सम्बन्धें के पक्ष होते हैं।

अध्ययन की सुविध की दृष्टि से औद्योगिक सम्बन्धें के पक्षों को तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है–

1. **स्वस्थ श्रमिक–प्रबन्ध सम्बन्धें का विकास** (Healthy Labour Management Relations): अच्छे औद्योगिक सम्बन्धें के विकास एवं बनाये रखने के लिए मजबूत, सुव्यवस्थित तथा प्रजातन्त्र प्रणाली पर आधरित उत्तरदायी श्रम संघों का सहयोग मिलना आवश्यक है। औद्योगिक विवादों का समाधन सामूहिक सौदेबाजी के आधर पर हो तथा सरकार के अतिरिक्त श्रम संघ, नियोक्ता संघ भी श्रमिकों के कल्याणकारी कार्यों मे हाथ बटाएं।

2. **औद्योगिक शान्ति की स्थापना** (To Establish Industrial Harmony): औद्योगिक विवादों का निपटारा कानून के अंदर कानून के बाहर दोनों स्थानों पर शीघ्रता से करना चाहिए। भारत सरकार ने औद्योगिक संघर्ष को रोकने तथा संघर्ष होने पर निपटारा करने के लिए आठ कदम उठाये हैं।

   संघर्ष रोकने के लिए–

   (i) धरा 3 के अन्तर्गत कार्यशाला समितियाँ (Works Committees)

   (ii) धरा 4 के अन्तर्गत समझौता अध्किारी (Conciliation Officer)

   (iii) धरा 5 के अन्तर्गत समझौता बोर्ड (Board of Conciliation)

   (iv) धरा 6 के अन्तर्गत जाँच समितियाँ (Court of Inquiry)

4. **राष्ट्रीय मध्यस्थता प्रोत्साहन बोर्ड** (National Arbitration Promotion Board): अनुशासन संहिता तथा औद्योगिक शान्ति प्रस्ताव दोनों आपसी झगड़ों को स्वैच्छिक मध्यस्थता द्वारा पफैसला करने पर जोर देते हैं। लगभग सभी राज्यों तथा केन्द्र शासित प्रदेशों के प्रशासनों ने मध्यस्थता प्रोत्साहन बोर्डों की स्थापना कर दी है या इस उद्देश्य के लिए कुछ अन्य संस्थागत प्रबन्ध कर दिये हैं।

5. **शिकायतों से सम्बन्धित प्रक्रिया** (Procedure Regarding Complaints): अनुशासन संहिता के अन्तर्गत कर्मचारियों की शिकायतों को दूर करने के लिए प्रबन्ध्कों का ऐसी प्रक्रिया स्थापित करनी होगी, जिससे झगड़ों की पूरी जाँच के बाद पफैसला हो सके। केन्द्रीय औद्योगिक सम्बन्ध तन्त्र प्रबन्ध्कों को केन्द्र के क्षेत्राधिकार में आने वाले उपक्रमों में श्रमिकों की शिकायतों की जाँच के एक निर्धरित प्रक्रिया को अपनाने के लिए प्रेरित करता है।

6. **कामगारों की जबरन छुट्टद्धी और छंटनी पर प्रतिबन्ध** (Restructions on Strike and Lockout): औद्योगिक विवाद ;संशोध्नद्ध अधिनियम 1976 के अर्न्तगत मालिकों के जबरन, छुट्टद्धी, छंटनी और तालाबन्दी के अध्किार पर समुचित पाबन्दी लगा दी गई है। अब मालिकों को तालाबन्दी करने से पहले विशिष्ट प्राधिकारी या उपयुक्त सरकार से पूर्व–अनुमति लेनी पड़ेगी। उस नोटिस से जबरन छुट्टद्धी, छंटनी और ऐसे औद्योगिक संस्थान को, जिसमें 300 से उससे अध्कि कामगार नियुक्त हैं, बन्द करने के लिए कारणों को प्रार्थना–पत्र में सापफ–सापफ लिखना पड़ेगा। संशोध्ति अधिनियम में कारखाना बन्द करने से सम्बन्ध्ति प्रावधन कारगर नहीं थे, परंतु औद्योगिक विवाद ;संशोध्नद्ध अधिनियम, 1982 के द्वारा स्थिति को अब ठीक कर दिया गया है।

7. **समझौता और न्याय निर्णय** (Conciliation and Arbitration): केन्द्रीय औद्योगिक सम्बन्ध् संगठन, जिसे केन्द्रीय मुख्य श्रम आयुक्त का संगठन भी कहा जाता है, का काम औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 के अर्न्तगत औद्योगिक झगड़ों को रोकना, उनके बारे में जाँच–पड़ताल करना और उनको निपटाना है। यही संगठन केन्द्रीय सरकार के उद्योगों में भी कुछ श्रम कानूनों को लागू करने के लिए जिम्मेदार है।

   जब औद्योगिक विवाद आपसी बातचीत के द्वारा तय नहीं होते, तो समझौता कराने वाला संगठन झगड़ा निपटाने की कोशिश करता है। जब सार्वजानिक उपयोग की सेवा में कोई औद्योगिक विवाद हो या होने की आशंका हो और इसके लिए 1917 के औद्योगिक विवाद अधिनियम की 22वीं धरा के अर्न्तगत कोई सूचना प्राप्त हो, तो समझौता अधिकारी के लिये समझौते की कार्यवाही करना अनिवार्य करना अनिवार्य है। दूसरे औद्योगिक संस्थानों में यह कार्यवाही ऐच्छिक है।

8. **औद्योगिक विवाद अधिनियम** (Industrial Disputes Act, 1947) में औद्योगिक झगड़ों में ऐच्छिक/अनिवार्य रूप से समझौता कराने की व्यवस्था है। केन्द्रीय उद्योग क्षेत्र के विवादों को निपटाने के लिए 10 औद्योगिक न्यायाध्किरण ;ट्रिब्यूनलद्ध एवं श्रम न्यायालय स्थापित किये गये हैं। इनमें से 3 ध्नबाद में, 2 बम्बई में और एक–एक कलकत्ता, जबलपुर, चण्डीगढ़, दिल्ली और कानपुर में हैं। राज्यों के अपने अलग न्यायाध्किरण और श्रम न्यायालय हैं। कलकत्ता का न्यायाध्किरण एवं श्रम न्यायालय और बम्बई का औद्योगिक न्यायाध्किरण एवं श्रम न्यायालय के रूप में कार्य कर रहे हैं।

औद्योगिक संघर्ष
(Industrial Disputes)

अर्थ (Meaning)–**औद्योगिक संघर्ष** (Industrial Disputes) – औद्योगिक विवाद से तात्पर्य, नियोक्ताओं एवं नियोक्ताओं के बीच अथवा नियोक्ताओं एवं श्रमिकों के बीच अथवा श्रमिकों के बीच हुए किसी विवाद एवं मतभेद से है जो किसी व्यक्ति की नियुक्ति सेवा–मुक्ति, सेवा की शर्तों अथवा श्रमिकों की दशाओं से सम्बन्धित हो।

व्याख्याः उपर्युक्त परिभाषा के अनुसार,

(i) श्रमिक व उसके नियोक्ता के बीच, अथवा

(ii) अनेक श्रमिकों व नियोक्ता के बीच, अथवा

(iii) श्रमिकों व श्रमिकों के बीच, अथवा

(iv) विभिन्न औद्योगिक संस्थाओं के नियोक्ताओं के बीच, होने वाले विवाद भी औद्योगिक विवाद की श्रेणी में आते हैं।

औद्योगिक विवाद में तीन प्रमुख लक्षण होने चाहिएः

(i) वास्तविक विवाद हो।

(ii) विवाद के पक्षकारों का स्पष्ट होना।

(iii) विवाद का विषय स्पष्ट तथा श्रमिकों की अध्कितम संख्या विवाद के साथ होनी चाहिए किन्तु यह संख्या बहुमत में हो, यह आवश्यक नहीं।

औद्योगिक संघर्ष के कारण
(Causes of Industrial Disputes)

हमारे देश में औद्योगिक संघर्षों की स्थिति बहुत अध्कि जटिल है। उद्योग के स्वामी और श्रमिकों के मध्य वेतन, कार्य के घण्टे, छुट्टिद्वयाँ, बोनस, कार्य की दशा आदि प्रश्नों पर झगड़े होते रहते हैं तथा उद्योग में हड़ताल, तालाबन्दी, घेराबन्दी, घेराव, ध्रना आदि सामान्य घटनाएँ हो गई है। औद्योगिक सम्बन्धें की जटिलता का अनुमान इस बात से लगाया जा सकता है कि 1968 में हमारे देश में 2776 औद्योगिक संघर्ष हुए, जिनमें 16.7 लाख श्रमिकों ने भाग लिया तथा इससे 172 लाख मानवीय दिन नष्ट हो गए। औद्योगिक संघर्षों का देश की अर्थव्यवस्था पर बुरे प्रभाव पड़ता है इसलिये इन्हें रोका जाना अनिवार्य है। **औद्योगिक संघर्ष अनेक आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक व प्रबन्ध्कीय कारणों का परिणाम होते हैं।** इन कारणों का संक्षिप्त वर्णन निम्नलिखित है–

1. **वेतन व भत्तों में अपर्याप्तता** (Inadequacy of Wages and Allowances): वेतन व अन्य भत्तों की अपर्याप्तता संघर्षों का मुख्य कारण है, क्योंकि हमारे देश में श्रमिकों का वेतन अभी भी निम्न स्तर पर है, इसलिए वेतन व अन्य भत्तों में वृ(ि की माँग को लेकर प्रायः संघर्ष होते रहते हैं। साथ ही देश के बढ़ते हुए मूल्य स्तर के कारण महँगाई भत्ते में वृ(ि की माँग को लेकर बहुत से संघर्ष हुए हैं। अनुमान है कि कुल संघर्षों का एक–तिहाई भाग वेतन व अन्य सेवा शर्तों में वृ(ि की माँग को लेकर हुआ है।

2. **बोनस** (Bonus): भारतीय उद्योगों में संस्था के लाभ में से एक भाग बोनस के रूप में श्रमिकों को देने की प्रथा चल पड़ी है। उद्योग के प्रबन्ध्क लाभ में से कुछ भाग श्रमिकों को देने का निर्णय करते हैं। श्रमिकों ने इसे अपना अध्किार समझ लिया है तथा कई बार लाभ कम हो जाने पर बोनस में हुई कमी को लेकर संघर्ष हो जाता है। श्रमिक अध्कि बोनस की माँग करते हैं जबकि संस्था अध्कि बोनस देने की स्थिति में नहीं होती। इसके कारण संस्था में हड़ताल व तालाबन्दी, की स्थिति हो जाती है। औद्योगिक संघर्षों का 10 प्रतिशत भाग बोनस से सम्बन्ध्ति होता है।

3. **छुट्टिद्वयाँ तथा कार्य के घण्टे** (Leave and Hours of Work): कार्य से घण्टों में कमी करवाने, किसी विशेष दिवस या त्यौहार पर छुट्टद्वी करवाने या किसी श्रमिक को आवश्यकता के समय छुट्टद्वी न देने आदि प्रश्नों को लेकर संघर्ष होते रहते हैं। यद्यपि कुछ वर्ष पहले यह समस्या कापफी गंभीर थी परंतु अब इसमें पर्याप्त सुधर हुआ है तथा औद्योगिक संघर्षों का एक बहुत छोटा भाग ही इन कारणों से सम्बन्ध्ति होता है।

4. **कार्य की दशाएँ** (Working Conditions): पफैक्ट्री में पीने के पानी की कमी, रोशनी, हवा, सपफाई, कपड़े रखने का स्थान, पेशाब घर आदि की पर्याप्त व्यवस्था न होने पर भी औद्योगिक संघर्ष हो जाते हैं। पफैक्ट्री एक्ट पास होने के बाद इन दशाओं में कुछ सुधर हुआ है तथा इन कारणों से होने वाले संघर्ष नाममात्र रह गये हैं।

5. **निष्कासन तथा छंटनी** (Suspension, Dismissal and Retrenchment): प्रबन्ध्कों द्वारा श्रमिकों की मनमानी ढंग से छंटनी तथा निष्कासन के प्रश्न पर भी बहुत संघर्ष होते हैं। प्रबन्ध्क किसी श्रमिक को अनुशासन भंग करने के दोष में निष्कासित कर देते हैं। अन्य श्रमिक बिना श्रमिक की गलती देखे उस श्रमिक को वापस कार्य पर लेने की माँग लेकर हड़ताल कर देते हैं।

6. **श्रम संघ को मान्यता न देना** (Non-Recognition of Trade Union): कुछ संस्थानों के प्रबन्ध्क व मालिक श्रम संघ को संस्था को दुश्मन समझते हैं जिस कारण वह ऐसे प्रयत्नों में लगे रहते हैं कि उद्योग में श्रमसंघ विकसित न हो। इसलिए वह श्रम संघ को मान्यता देने से इंकार कर देते हैं। श्रम संघ की मान्यता की माँग को लेकर संस्थान में हड़ताल हो जाती है। कई बार श्रम संघ की मान्यता रद्द कर दी जाती है या वापस ले ली जाती है इससे भी संस्थान में संघर्ष हो जाते हैं।

7. **प्रबन्ध्कों या मालिकों का दुर्व्यवहार** (III Treatment of Employers and Managers): प्राचीनकाल में श्रमिक से सख्ती से कार्य लिया जाता था। अब समय बदल चुका है। श्रमिक चाहते हैं कि प्रबन्ध्क व मालिक उनसे मानवीय व्यवहार करें तथा उन्हें अपने से नीचा न समझें। अब भी कुछ संस्थायें ऐसी हैं कि जिनके प्रबन्ध्कों ने इस तथ्य

को महसूस नहीं किया है। ऐसी संस्थाओं में प्रबन्ध्क या मालिक कई बार श्रमिकों को गलियाँ दे देते हैं या उन पर हाथ उठा बैठते हैं। इस बात को लेकर वहाँ हड़ताल हो जाती है।

8. **सहानुभूति में हड़ताल** (Sympathetic Strike): एक उद्योग में हुए संघर्ष का प्रभाव अन्य उद्योगों पर भी पड़ता है। एक उद्योग में श्रमिक हड़ताल की सहानुभूति में अन्य उद्योगों के श्रमिक हड़ताल कर देते हैं। वर्तमान समय में इस तरह की हड़तालें बड़ी मात्रा में देखने को मिलती है।

9. **समझौते का पालन न करना** (Non-Fulfilment of Agreement): प्रबन्ध्क समय–समय पर विभिन्न बातों पर श्रमसंघ से समझौते करते रहते हैं। किसी कठिनाई की वजह से या अन्य कारण से यदि प्रबन्ध्क इनका पालन नहीं करते या उनको पूरा करने में देरी कर देते हैं तब इस पर भी संघर्ष हो जाते हैं।

10. **श्रमिक को तंग करना** (Victimisation of Labour): संस्था के प्रबन्ध्क या मालिक श्रमसंघ के नेताओं या अन्य श्रमिकों को व्यक्तिगत कारणों से तंग करते रहते हैं जिस कारण भी वहाँ औद्योगिक संघर्ष हो जाते हैं।

11. **विवेकीकरण, वैज्ञानिक प्रबन्ध् तथा स्वचालन** (Rationalisation, Scientific Management and Automation): प्रबन्ध्क संस्था की कार्यकुशलता में वृ(करने में प्रयत्नशील रहते है। जिस कारण वह संस्था के लिए विवेकीकरण, वैज्ञानिक प्रबन्ध् या स्वचालन लागू करने की योजना बनाते हैं। श्रमिक अपने रोजगार की सुरक्षा के भय के कारण इनका विरोध् करते हैं। ये विरोध् संघर्ष का रूप धरण कर लेते हैं।

12. **राजनीतिक कारण** (Political Causes): हमारे देश में श्रम संघों पर किसी–न–किसी राजनीतिक पार्टी से संबंध्ति है। राजनीतिक नेता इनके माध्यम से अपना स्वयं सि(करते हैं। यही कारण है कि उद्योगों में सरकार की नीतियों विरू(आज हड़ताल होती रहती है। जिस राज्य में अन्य पार्टी की सरकार होती है वहाँ श्रमिक उस सरकार की नीतियों के विरू(हड़ताल करते हैं। किसी राजनीतिक नेता की मृत्यु या उस पर हमले आदि के प्रश्न पर भी हड़ताल होती रहती है।

औद्योगिक विवादों का स्वरूप
(Form of Industrial Disputes)

औद्योगिक विवाद या संघर्ष के कई स्वरूप हैं। श्रमिक वर्ग तथा नियोक्ता वर्ग अलग–अलग अस्त्रों का प्रयोग करते हैं। औद्योगिक विवादों के स्वरूप को दो भागों में बाँटा जा सकता है–

1. **नियोक्ता की दृष्टि से विवादों का स्वरूप**
   (i) संदेहजनक कर्मचारियों को सूचीब(करना, (Blacklisting of Employees)
   (ii) तालाबन्दी, (Lock-out)
   (iii) काम देने से इंकार, (Lay-off)
   (iv) छँटनी (Retrechment)

2. **श्रमिकों की दृष्टि से विवादों का स्वरूप**
   (i) हड़ताल (Strike)
   (ii) बहिर्गमन (Walk-out)
   (iii) बहिष्कार (Boy-Cott)
   (iv) पिकेटिंग (Picketing)
   (v) ध्रना (Dharna)
   (vi) घेराव (Gherao)

भारत में औद्योगिक संघर्ष का उद्‌गम एवं वर्तमान स्थिति
(Origin and Present Position of Industrial Disputes in India)

औद्योगिक संघर्षों का जन्म औद्योगिक क्रांति (Industrial Revolution) के साथ हुआ था। परन्तु निश्चित रूप से यह बताना कठिन है कि संसार में किस स्थान पर सबसे पहले सामूहिक रूप से हड़ताल हुई थी। भारत में सन् 1780 तक हड़ताल का कोई उदाहरण नहीं मिलता। सन् 1877 का वर्ष ऐसा था जब भारत में सर्वप्रथम हड़ताल एम्प्रेस मिल, नागपुर के श्रमिकों ने संगाठित की। सन् 1921 में जब गांधी जी ने अपना असहयोग आन्दोलन चालू किया था, तभी श्रमिकों ने सामूहिक रूप से अपनी हड़ताल संगठित करके अपनी शक्ति का परीक्षण किया था। उसके बाद तो हड़तालों की झड़ी–सी लग गई जैसा कि निम्न तालिका से स्पष्ट होता है।

औद्योगिक संघर्ष

वर्ष	हड़तालों की संख्या	हड़तालों में भाग लेने वाले श्रमिकों की संख्या ;लाखों मेंद्ध	नष्ट हुए दिनों की संख्या ;लाखों मेंद्ध
1921	346	6	70
1947	1811	18	161
1951	1071	7	38
1961	1357	5.1	49
1966	2556	14.1	138
1971	2137	16	127
1978	1900	19	297
1979	2227	22	392
1980	2125	20	300
1981	2857	–	269

(Source: Labour Statistics 1982)

औद्योगिक संघर्षों की रोकथाम एवं निपटारे की व्यवस्था
(Machinery for the Prevention and Settlement of Industrial Disputes)

औद्योगिक संघर्ष रोकने की उपाय (Measures to check Industrial Disputes)

औद्योगिक संघर्ष रोकने के लिए दो तरह के उपाय किये जा सकते हैं। एक तो वह उपाय जो औद्योगिक संघर्षों के कारण को दूर कर उन्हें उत्पन्न ही न होने दें तथा संस्था में ऐसा वातावरण तैयार कर दें जिसमें श्रमिक सन्तुष्ट रहें। परंतु औद्योगिक संघर्षों को पूर्णतः समाप्त करना असम्भव है, जिस कारण उत्पन्न होने वाले संघर्षों की कार्यकुशलता व ठीक समय पर सुलझाने की व्यवस्था करनी होती है। इसके लिए औद्योगिक संघर्ष सुलझाने की विध् िव मशीनरी की व्यवस्था करनी होती है। प्रथम तरह के उपाय को निरोधत्मक उपाय तथा द्वितीय तरह के उपाय को विवाद सुलझाने के उपाय कहा जाता है। औद्योगिक संघर्ष को दूर करने के लिए एक कार्यकशुल योजना में दोनों तरह के उपाय में ही पर्याप्त व्यवस्था होना अनिवार्य है। इन दोनों तरह के उपायों का संक्षिप्त वर्णन निम्न हैं–

संघर्ष रोकने के उपाय (Preventive Measures)

1. **वेतन बोर्ड** (Wage Board): क्योंकि एक–तिहाई से भी अध्कि औद्योगिक संघर्ष वेतन से संबंध्ति होते हैं इसलिए इन्हें रोकने के लिए आवश्यक है कि उद्योग के श्रमिकों के वेतन को निर्धरित करने की उचित व्यवस्था हो। वेतन

निर्धरण के इस कार्य में देश की सरकार महत्त्वपूर्ण योगदान दे सकती है। वह तीन पक्षीय ;श्रमिक, नियोक्ता व स्वतन्त्र प्रतिनिध्द्धि वेतन बोर्ड बनाकर उसके माध्यम से समय–समय पर विभिन्न उद्योगों के श्रमिकों का उचित वेतन निर्धरण कर सकती है। साथ ही यह देश की अर्थव्यवस्था का समय–समय पर अध्ययन कर वेतन में आवश्यक परिवर्तन की व्यवस्था कर सकती है।

2. **समझौतों का पालन** (Enforcement of Agreement): संस्था की विभिन्न समस्याओं पर समय–समय पर श्रम संघ व प्रबन्ध्कों के मध्य समझौते होते रहते हैं। इसी तरह संघर्ष सुलझाने की सरकारी मशीनरी द्वारा भी पफैसले किए जाते हैं। संसाि में इन पफैसलों या समझौतों का ठीक समय व ठीक तरह पालन न होने के कारण भी कापफी संघर्ष होते है। यदि ऐसे समझौतों या पफैसलों के पालन की उचित व्यवस्था हो जाए तब इस तरह के संघर्ष रोके जा सकते हैं। यद्यपि औद्योगिक संघर्ष अधिनियम में पफैसलों का पालन न करने पर सजा की व्यवस्था है पिफर भी यह पर्याप्त व प्रभावशाली नहीं है। इसलिए समझौते व पफैसलों के पालन की जाँच करने, उन्हें ठीक समय व ठीक तरह से पालन करवाने के लिए प्रभावशाली व्यवस्था होना जरूरी है।

3. **शिकायत सुनने की व्यवस्था** (Grievance Procedure): औद्योगिक संघर्ष, कर्मचारियों के किसी समस्या पर असन्तोष उत्पन्न होने के परिणाम होते हैं। यदि कर्मचारियों की शिकायतों को संघर्ष उत्पन्न होने से पहले ही दूर कर दिया जाये तब संस्था ऐसे संघर्षों से बच सकती है। इसलिए एक संस्था श्रमिकों को शिकायत सुनने व उन्हें दूर करने की कुशल व्यवस्था कर औद्योगिक संघर्षो में कमी ला सकती है। इस व्यवस्था के अन्तर्गत शिकायत पुस्तक, शिकायत बक्स या अन्य विध् िसे श्रमिक की शिकायतें प्रबन्ध्कों तक पहुँचाने की व्यवस्था की जाती है।

4. **कार्य समितियाँ** (Works Committees): उद्योगपति तथा श्रमिकों के मध्य मध्ुर सम्बन्ध् कायम करने के लिए उद्योगपति के प्रतिनिध्यिों तथा श्रमिकों के प्रतिनिध्यिों की संयुक्त समिति का गठन किया जाना चाहिए जो पफैक्ट्री में श्रमिक की शिकायतें सुनकर उनका निपटारा कर सकें तथा इस तरह औद्योगिक संघर्ष रोकने में सहायता दे सकें। वर्तमान औद्योगिक संघर्ष अधिनियम में इनकर स्थापना की व्यवस्था है।

5. **शक्तिशाली श्रम संघ** (Strong Trade Union): एक व्यवस्थित तथा शक्तिशाली श्रम संघ का एक संस्था की औद्योगिक शांति में महत्त्वपूर्ण स्थान होता है। यदि संख्या में शक्तिशाली श्रम संघ है तब मालिक तथा प्रबन्ध्क गलत कार्य करने से घबराते हैं। साथ ही शक्तिशाली श्रम संघ उद्योग के प्रति अपनी जिम्मेदारी को अच्छी तरह जानते हैं जिस कारण वह गलत तथ्यों पर हड़ताल नहीं होने देते तथा बातचीत द्वारा सभी समस्याओं को सुलझााने का प्रयत्न करते हैं। इसलिए प्रबन्ध्कों को श्रम संघ को कमजोर करने की नीति त्यागकर उन्हें शक्तिशाली बनाने का प्रयत्न करना चाहिए।

6. **स्थायी आदेश** (Standing Orders): औद्योगिक शान्ति की स्थापना के लिए आवश्यक है कि रोजगार की शर्ते–जैसे वेतन देने का दिन, बांटने का विध्ि, नौकरी समाप्ति की विध्ि, पदोन्नति की विध्ि, आदि पूर्व निश्चित हों। ऐसा होने से संस्था में श्रमिकों से समान तथा न्यायपूर्ण व्यवहार संभव हो सकेगा तथा प्रबन्ध्क पक्षपात नहीं कर सकेंगे। इसलिए प्रबन्ध्कों को इन नियमों को बनाकर, श्रम संघ से स्वीकृत कराकर सरकारी अध्किारी के पास भेज देना चाहिए। यि नियम निश्चित हो जाने के बाद इनका सख्ती से पालन किया जाना चाहिए।

7. **संयुक्त प्रबन्ध्कीय समिति** (Joint Management Council): यह श्रमिक व प्रबन्ध्कों के प्रतिनिध्यिों की संयुक्त परिषद होती है जो वैधनिक दबाव से नहीं, बल्कि स्वेच्छा से बनाई जाती है। यह संस्था में विभिन्न स्तरों पर विभिन्न कार्यों के लिए बनाई जा सकती है, उदाहरणतः सुरक्षा, श्रम कल्याण, कैंटीन, उत्पादन आदि। ये अपने–अपने क्षेत्र की समस्याऐं दूर करती हैं।

औद्योगिक संघर्ष का निपटारा
(Solution of Industrial Disputes)

यद्यपि उपरोक्त उपाय औद्योगिक संघर्षो को कम करने में सहायता देते हैं परन्तु उन्हें पूर्णतः समाप्त नहीं कर सकते। इसलिए उत्पन्न होने वाले संघर्षो को सुलझाने की पर्याप्त व्यवस्था अनिवार्य है। हमारे देश में औद्योगिक संघर्ष को सुलझाने का महत्त्व

स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद महसूस किया गया तथा राष्ट्रीय सरकार ने औद्योगिक संघर्षो के निपटारे के लिए औद्योगिक संघर्ष अधिनियम 1947 के अन्तर्गत विस्तृत मशीनरी कर व्यवस्था की जो औद्योगिक संघर्षो को ठीक विधि से सुलझाने में महत्त्वपूर्ण योगदान देती है। समय–समय पर इसमें सुधर किए गए हैं। इस मशीनरी की वर्तमान व्यवस्था निम्न है—

औद्योगिक विवाद निपटारे की व्यवस्था
(Machinery for Settlement for Industrial disputes)

विवादों की जाँच के लिए अथवा विवादों को रोकने के लिए

1. धरा 3. कार्य समितियाँ
2. धरा 4. समझौता अधिकारी
3. धरा 5. समझौता बोर्ड
4. धरा 6. जाँच न्यायालय

न्यायिक प्रक्रिया अथवा न्याय के आधर पर निपटारा

1. धरा 7. श्रम न्यायालय
2. धरा 7A. औद्योगिक न्यायालय
3. धरा 7B. राष्ट्रीय न्यायालय
4. धरा 10A. पंचनिर्णय

सुलह व्यवस्था (Concillation Machinery)

यह व्यवस्था इस तथ्य को मानती है कि संघर्षो का निपटारा सलाह द्वारा होना चाहिए क्योंकि सलाह द्वारा निपटाए गए संघर्ष संस्था की कार्य सेना (Work force) पर बुरा प्रभाव नहीं डालते। सुलह व्यवस्था के अन्तर्गत निम्न व्यवस्थाएँ आती हैं—

1. **कार्य समितियाँ** (Work Committees): हमारे देश में औद्योगिक संघर्ष अधिनियम 1947 के अन्तर्गत सम्बन्धित सरकारों को यह अधिकार है कि वे किसी भी ऐसे कारखाने का जिसमें 100 या अधिक श्रमिक कार्य करते हैं, ऐसी समिति बनाने का आदेश दे सकती है। इस समिति में श्रमिक व नियोक्ता के समान प्रतिनिधि होते हैं तथा यह दोनों पक्षों के मध्य सद्भाव तथा सामान्य समझदारी की अवस्था बनाए रखने में प्रयत्नशाली रहती है। कर्मचारियों का चुनाव उनके श्रमसंघ के परामर्श से होता है। ये समितियाँ पफैक्ट्री में लगे कर्मचारियों की शिकायतों को सुनती हैं तथा उन्हें निपटा कर होने वाले संघर्ष को रोकती हैं। यह समितियाँ नियोक्ता को केवल सलाह दे सकती हैं लेकिन इन्हें अपने निर्णय को पूरा करवाने का कोई वैधनिक अधिकार प्राप्त नहीं होता। पफैक्ट्री में श्रमिकों की शिकायतें दूर करने के लिए समितियाँ अत्यन्त प्रभावशाली साबित हो सकती है। हमारे देश में पूर्णतः सपफल नहीं हुई है, क्योंकि—
   (i) प्रबन्ध्क इन समितियों के प्रति अच्छा दृष्टिकोण नहीं रखते। वे इन्हें वैधनिक औपचारिकता मानते हैं इसलिए इनकी सपफलता के लिए प्रयत्नशील नहीं रहते।
   (ii) इन समितियों के पास कोई अधिकार नहीं होते जिस कारण ये अपने द्वारा किए गये निर्णयों को कार्यान्वित नहीं करवा पाती हैं। इस कारण कुछ समय बाद श्रमिकों का इन पर से विश्वास उठ जाता है।

भारतीय प्रबन्ध संस्थान ने इन समितियों की कार्यविधि में सुधर के लिए निम्न सुझाव दिए हैं—

(i) इन समितियों को केवल सलाह व सुझाव देने का अधिकार हो।
(ii) इनमें सुपरवाइजर स्तर के कुछ कर्मचारी लिए जाने चाहिए।
(iii) इनके कार्य ऐसे हों जो श्रम संघ में कार्यक्षेत्र में न आते हों।
(iv) कर्मचारियों के प्रतिनिधि संस्था के कर्मचारी हों न कि बाहरी व्यक्ति।

2. **सुलह अधिकारी** (Conciliation Officer): औद्योगिक संघर्ष अधिनियम में संघर्ष को सुलझाने के लिए सुलह की व्यवस्था है जिसके लिए सरकार द्वार सुलह अधिकारियों की व्यवस्था की जाती है। सम्बन्धित सरकार किसी विशेष क्षेत्र, विशेष उद्योग या उद्योग के किसी समूह के लिए सुलह द्वारा अधिकारियों की नियुक्ति करती है जो अपने क्षेत्र

उद्योग या उद्योग के समूह में उत्पन्न औद्योगिक संघर्षो को सुलह द्वारा सुलझाने की व्यवस्था करती है। जब संघर्ष उत्पन्न हो जाता है या उत्पन्न होने की संभावना होती है तब वह वहाँ पहुँचकर दोनों पक्षों के मध्य बातचीत की व्यवस्था करता है तथा आपसी बातचीत द्वारा संघर्ष दूर करने का प्रयत्न करता है। यदि संघर्ष बातचीत द्वारा सुलझ जाता है तब वह अपनी रिपोर्ट तथा दोनों पक्षों द्वारा हस्ताक्षर किया गया समझौता सम्बन्धित सरकार को भेज देता है। यदि वह 14 दिन के अंदर संघर्ष सुलझाने में असपफल रहता है तो वह सरकार को अपने प्रयत्नों व असपफलता के कारणों की रिपोर्ट भेज देता है ताकि सरकार संघर्ष को सुलझाने की अन्य व्यवस्था कर सके। सुलह अध्किारी का कार्य सरल नहीं होता, इसलिए केवल योग्य तथा अनुभवी सुलह अध्किारी ही इस कार्य में सपफल हो सकते हैं। यदि यह कार्य आयोग्य तथा प्रशिक्षित अध्किारी को सौंप दिया जाता है तो संघर्ष सुलझने की बजाय जटिल हो जाता है। इसलिए सुलह अध्किारी व्यवस्था को सपफल बनाने के लिए देश में उनके प्रशिक्षण की व्यवस्था होनी अनिवार्य है।

सुलह बोर्ड तथा जाँच न्यायालय (Conciliation Board and Court of Enquiry)

यदि सुलह अध्किारी 14 दिन के अंदर उस संघर्ष को निपटाने में असपफल रहता है तब सरकार संघर्ष को समझौता मण्डल को सौंप सकती है। सुली बोर्ड सरकार द्वारा बनाया जाता है जिसमें एक अध्यक्ष, जो निष्पक्ष होता है तथा दो से चार तक अन्य सदस्य होते हैं। ये सदस्य नियोक्ता व श्रमिकों द्वारा चुने जाते हैं। यदि दोनों पक्ष अपने सदस्य नामांकित करने में असपफल रहते हैं तब सरकार स्वयं उनकी नियुक्ति कर देती है। यह बोर्ड समझौता अध्किारी की तरह ही दोनों में सुलह करने का प्रयत्न करता है तथा उसी तरह अपनी रिपोर्ट सरकार के पास पहुँचाने की व्यवस्था करता है। यदि औद्योगिक विवाद अध्कि जटिल है तथा इसे सुलझाने के लिए तथ्यों की जानकारी आवश्यक है तब औद्योगिक संघर्ष तथा तथ्यों की माँग के लिए सरकार एक जाँच न्यायालय को नियुक्त कर सकती है। इसके सदस्य पाँच तक हो सकते हैं। अध्यक्ष की नियुक्ति सरकार करती हैं तथा शेष सदस्य श्रमिक व नियोक्ता द्वारा बराबर–बराबर संख्या में मनोनीत किए जाते हैं। इस जाँच न्यायाल को अपनी रिपोर्ट 6 महीने के अंदर ही देनी होती है।

अध्निर्णय व्यवस्था (Adjusdication Machinery)

उपरोक्त तीनों व्यवस्थाओं के अन्तर्गत आपसी सुलह द्वारा संघर्ष सुलझाने के प्रयत्न किए जाते हैं। कुछ अवस्था में यह सपफल हो जाते हैं तथा कुछ में इन प्रयत्नों से संघर्ष का उन्मूलन नहीं हो पाता। ऐसे संघर्षो को सुलझाने के लिए औद्योगिक संघर्ष अध्निियम में अनिवार्य अध्निर्णय की व्यवस्था की गई जिसके अन्तर्गत सम्बन्धित सरकार औद्योगिक संघर्ष में निर्णय देने वाली मशीनरी की व्यवस्था कर सकती है। हमारे देश के औद्योगिक संघर्ष अध्निियम में इसके लिए तीन स्तरीय व्यवस्था की गई है जिसका संक्षिप्त वर्णन निम्न है—

1. **श्रम न्यायालय** (Labour Court): औद्योगिक संघर्ष के छोटे–छोटे मामलों में निर्णय देने के लिए सरकार द्वारा श्रम न्यायालय की स्थापना की जा सकती है। एक व्यक्ति जो कम से कम 7 वर्ष तक न्याय अध्किारी या कम से कम 5 वर्ष तक श्रम न्यायाजय का अध्यक्ष रह चुका हो, इस न्यायालय में नियुक्त किया जा सकता है। श्रम न्यायालय निम्नलिखित मामलों में अपने निर्णय दे सकता है—
   (i) स्थायी आदेश (Standing Orders) के अधीन नियोक्ता द्वारा निर्गमित किये गये आदेशों की वैधनिकता तथा वांछनीयता पर,
   (ii) स्थायी आदेश की व्याख्या तथा उनको लागू करना,
   (iii) कर्मचारियों की पदमुक्ति, निष्कासन, अनुचित निष्कासन होने की अवस्था में कर्मचारी को पुनः नियुक्ति या इसके लिए कुछ मुआवजा देने का निर्णय करना,
   (iv) किसी प्रचलित छूट या विशेषाध्किार को वापिस लेना,
   (v) हड़ताल या तालाबन्दी की वैधनिकता या अवैधनिकता की जाँच करना,
   (vi) अन्य समस्त मामले जो औद्योगिक न्यायाध्किरण के लिए सुरक्षित नहीं है।

2. **औद्योगिक न्यायाध्किरण** (Industrial Tribunal): श्रम संघर्षो के निपटारे के लिए यह एक अन्य महत्त्वपूर्ण व्यवस्था है। श्रम न्यायालय की तरह इसमें भी एक व्यक्ति होता है जिसका वर्तमान या अवकाश प्राप्त उच्च न्यायालय का न्यायाधीश होना अनिवार्य है। न्यायाध्किरण की सहायता के लिए दो सहायकों की नियुक्ति की जा सकती है। अध्निियम के अनुसार औद्योगिक न्यायालय निम्न मामलों पर निर्णय दे सकता है—
   - (i) वेतन भुगतान करने की अवध् तथा विध्।
   - (ii) क्षतिपूरक तथा अन्य भत्ते।
   - (iii) कार्य के घण्टे तथा विश्राम के लिए अवकाश।
   - (iv) सवेतन छुट्टिद्धयाँ तथा अवकाश।
   - (v) बोनस, लाभांग, प्राविडेण्ट पफंड तथा ग्रेचुटी।
   - (vi) शिफ्रट संचालन।
   - (vii) वेतन श्रेणियाँ।
   - (viii) अनुशासन सम्बन्धी नियम।
   - (ix) विवेकीकरण।
   - (x) छंटनी व संस्था का बन्द होना।
   - (xi) अन्य कोई मामला जो न्यायाध्किरण को सौंपा गया हो।
3. **राष्ट्रीय न्यायाध्किरण** (National Tribunal): इस न्यायालय में भी एक ही व्यक्ति होता है तथा इसमें भी न्यायाध्किरण की सहायता के लिए दो सहायकों की नियुक्ति की जा सकती है। राष्ट्रीय न्यायाध्किरण केन्द्रीय सरकार द्वारा नियुक्त किया जाता है। यदि मामला राष्ट्रीय महत्त्व का हो या ऐसे उपक्रम से सम्बन्धित हो जिसके उद्योग एक से अध्कि राज्यों में पफैले हों तब संघर्ष के निर्णय के लिए राष्ट्रीय न्यायाध्किरण की नियुक्ति की जाती है। यद्यपि सामान्य औद्योगिक उपक्रमों में विवाद न्यायाध्किरण को सौंपने का प्रश्न सरकार की इच्छा पर निर्भर होता है परंतु जनोपयोगी संस्थाओं में जब हड़ताल की सूचना हो, जो बेकार ध्मकी मात्र न हो, ऐसे विवाद को न्यायाध्किरण के सुपुर्द करना अनिवार्य है। न्यायाध्किरण का निर्णय सर्वप्रथम सरकार को दिया जाता है जिसे यह अध्किार होता है कि वह जनहित को ध्यान में रखकर यदि उसे स्वीकार करना चाहे, स्वीकार कर ले, उसमें आवश्यक परिवर्तन कर दे या उसे रद्द कर दे। यदि सरकार उसमें संशोध्न या उसे रद्द नहीं करती तब उसे गजट में प्रकाशित होने के 30 दिन बाद लागू माना जायेगा। संशोध्न या अस्वीकार की दशा में सरकार को 90 दिन दिए जाते हैं जिसके मध्य संशोध्न विधनसभा के सामने पेश किया जाना अनिवार्य है। यह सीमा एक वर्ष तक बढ़ाई जा सकती है।

प्रबन्ध में भागीदारी अथवा प्रबन्ध में श्रमिकों की सहभागिता
(Participation in Management or Worker's Participation in Management)

धरणा (Concept) फ्प्रबन्ध में श्रमिकों की सहभागिताय् शब्द बहुत अध्कि महत्त्वपूर्ण है किन्तु कहीं भी इस विचार (Concept) को स्पष्ट रूप से परिभाषित नहीं किया है। यह ऐसा शब्द है जिस पर औद्योगिक सम्बन्धें के क्षेत्र में विस्तर से चर्चा होनी चाहिये क्योंकि श्रमिकों द्वारा प्रबन्ध के भाग में एक बहुत ही लचीली (Elastic) प(ति है। इसका अर्थ श्रमिक वर्ग, उद्योगपति तथा सरकार ने अपने अपने ढंग से लगाया है।

;1द्ध श्रमिक वर्ग इसका अर्थ संयुक्त विचार विमर्श (Co-decision) तथा सह–निर्णय (Co-determination) से लगाते हैं।

;2द्ध उद्योगपति इसका अर्थ संयुक्त विचार विमर्श (Joint Consulation) से लगाते हैं।

;3द्ध जबकि सरकार इसका अर्थ सहभागिता (Co-partnership) तथा औद्योगिक प्रजातन्त्र (Industrial Democracy) की स्थापना का पूर्वाभ्यास से लगाती है। इस प(ति का मूलभूत दर्शन यह है कि श्रमिक और उद्योगपति, उद्योग के सह–प्रन्यासी (Co-Trustees) हैं।

यही नहीं, सहभागिता का स्वरूप प्रत्येक देश में भिन्न–भिन्न है। जैसेः—

(i) स्वीडन तथा इंग्लैंड में सहभागिता प्रणाली का उपयोग संयुक्त इकाइयों (Joint Councils) के रूप में किया गया हैं ये इकाईयाँ आपसी सहयोग पर आधरित हैं जिनका जन्म बिना किसी वैधनिक नियम के हुआ और ये इकाईया सलाहाकार के रूप में कार्य करती हैं।

(ii) बेल्जियम, प्रफांस तथा पश्चिमी जर्मनी में सहभागिता की नियमित–व्यवस्था है। यहाँ पर प्रबन्ध बोर्ड में श्रमिकों को प्रतिनिध्त्वि दिया जाता है।

(iii) यूगोस्लाविया में – सरकारी उपक्रम स्वयं कर्मचारियों के द्वारा संचालित होते हैं।

(iv) भारत में – संयुक्त समितियाँ (Joint Councils) कार्य समितियाँ (Works Committees) के रूप में श्रमिकों की सहभागिता है।

प्रबंध में सहभागिता का विचार इसी धरणा या मान्यता पर आधरित है कि जब व्यक्तियों को अपनी सरकार चुनने का अध्किार दिया गया है तो श्रमिकों को भी अपना प्रबन्ध (Management) चुनने का अध्किार दिया जाना चाहिए क्योंकि श्रमिक उस औद्योगिक इकाई में कार्य करते हैं तथा उत्पादन में अपना पसीना बहाकर योगदान करते हैं।

अन्त में कहा जा सकता है कि सहभागिता (Participation) से आशय श्रमिक द्वारा संगठन में निर्णय लेने की प्रक्रिया (Decesion Making Process) में सहयोग देना है। यह सहयोग प्रबन्ध में सभी स्तरों पर श्रमिकों को उचित प्रतिनिध्त्वि देकर संभव होता है। यह विचार औद्योगिक प्रजातन्त्र (Industrial Democracy) को अध्कि विकसित करता है तथा श्रमिक को परस्पर सहयोग की दृष्टि से उत्पादन में वृ(की और प्रेरित करता है।

सहभागिता प्रणाली के विभिन्न नाम
(Different Names of the Theory)

विभिन्न देशों में श्रमिकों कर सहभागिता प्रणाली को अलग–अलग नामों से पुकारा गया हैः—

;1द्ध इंग्लैंड एवं स्वीडन में – इसे सामूहिक सलाह (Joint Consultation) का नाम दिया गया है।

;2द्ध पश्चिमी जर्मनी में इसे संयुक्त निर्णय (Co-determination) कहा जाता है।

;3द्ध अमेरिका में – इसकी श्रमसंघ प्रबन्ध नियम (Union Management Co-operation) के नाम से पुकारा जाता है जो अन्त में सामूहिक सौदेबाजी का रूप ग्रहण करती है।

;4द्ध इजराइल में हिस्ट्राड्रट का प्रयोग (Histradrut Experiment) के नाम से पुकारा जाता है।

;5द्ध प्रफांस में – इसको श्रम प्रबन्ध निगम (Labour Management Corporation) के नाम से जाना जाता है जो कार्य समिति (Works Committee) का रूप लेता है।

;6द्ध भारत में – इसे प्रबन्ध में श्रमिकों का सहयोग (Worker's Participation in Management) कहा जाता है।

प्रबन्ध में भागीदारी की ऐतिहासिक झलक
(Historical Background of Participation in Management)

श्रमिकों को प्रबन्ध में भाग देने का विचार अध्कि प्राचीन है। ब्रिटेन की व्हीटले समिति ने सर्वप्रथम 1917 में अपनी रिपोर्ट में श्रम तथा पूंजी के सहयोग के लिए श्रमिकों को संस्था के प्रबन्ध में भाग देने का सुझाव दिया था। परन्तु व्यावहारिक रूप में इस दिशा में वास्तविक प्रगति प्रथम विश्वयु(के बाद ही हुई जब कुछ देशों की सरकारों ने अधिनियम पारिक कर उद्योगों में श्रम तथा प्रबन्ध्कों की संयुक्त समितियों की व्यवस्था की। इनमें से अध्किांश देशों ने अधिनियम द्वारा उद्योगों में ऐसी समितियों की स्थापना पर बल दिया था जिसमें श्रमिकों तथा प्रबन्ध्कों के प्रतिनिध् िहों। यद्यपि द्वितीय विश्वयु(के समय तक इस दिशा में विशेष प्रगति नहीं हो सकी परन्तु द्वितीय विश्वयु(आरम्भ होते ही इस विचार को प्रोत्साहन

मिला। यु(के समय उत्पादकता की बढ़ती माँग ने प्रबन्धकों का ध्यान इस व्यवस्था की ओर आकर्षित किया तथा विश्व के विभिन्न देशों में बड़ी–बड़ी औद्योगिक संस्थाओं की स्थापना की गई।

यद्यपि विभिन्न देशों में स्थापित की गई इन समस्त समितियों का उद्देष्य समान था परन्तु इनकी रचना आदि में महत्त्वपूर्ण तथा मूलभूत अन्तर देखने को मिलता है। जहाँ एक ओर ब्रिटेन और स्वीडन में ऐसी समितियों की स्थापना ऐच्छिक है। वहाँ प्रफांस तथा जर्मनी में एकसी समितियों की स्थापना वैधनिक रूप से अनिवार्य है। इसी तरह जहाँ ब्रिटेन और स्वीडन में इस समितियों को केवल सलाह देने का अध्किार हैं वहाँ प्रफांस तथा जर्मनी में श्रमिकों को संचालक मण्डल में प्रतिनिध्त्वि के साथ–साथ संस्था की नीतियों तथा कार्य विध् िको प्रभावित कर सकती हैं। यूगोस्लाविया जैसे देश में तो व्यापार तथा उद्योग का सम्पूर्ण प्रबन्ध् तथा नियन्त्रण ही श्रम समितियों के हाथ में है। रचना तथा अध्किार क्षेत्र के इस अन्तर के इस अन्तर का प्रबन्ध् में श्रमिकों के भाग के विचार पर विशेष अन्तर नहीं पड़ता।

श्रमिकों को प्रबध् में भाग देने का विचार द्वितीय महायु(के समय लोकप्रिय हुआ था जब उत्पादन वृ(ि की विशेष आवश्यकता थी। अध्किांश संस्थाएँ, जिन्होने इसे अपनाया, उत्पादन वृ(ि में सपफल हुई। जिन कम्पनियों ने यु(के समय उत्पादन वृ(ि का आन्दोलन प्रारम्भ किया उनमें से 48÷ कम्पनियाँ उत्पादन में विस्तृत वृ(ि करने में सपफल हुई थी तथा 9÷ कम्पनियों के प्रबन्ध्कों का विश्वास था कि ऐसी समितियों ने इस उद्देश्य की प्राप्ति में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है।

हमारे देश में श्रमिकों को प्रबन्ध् में भाग देने की वास्तविक शुरूआत स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद हुई। कुछ निजी उद्योगो ने इस व्यवस्था को इससे पहले ही लागू कर दिया था। जैसे टाटा आयरन एण्ड स्टील कम्पनी ने 1920 में तथा दिल्ली क्लाथ एण्ड जनरल मिल्स ने 1938 में श्रमिकों को प्रबन्ध् में प्रतिनिध्त्वि दिया। दिल्ली क्लाथ एण्ड जनरल मिल्स कम्पनी ने 1938 में श्रमिकों द्वारा चुने गए श्रम प्रतिनिध् िको मिल के बोर्ड आपफ डायरेक्टर्स में प्रतिनिध्त्वि दिया था। परन्तु वास्तविक प्रारम्भ 1947 से हुआ जब औद्योगिक संघर्ष अधिनियम (Industrial Disputes Act, 1947) पारित किया गया। जिसके अन्तर्गत सम्बन्ध्ति राज्य की स्थापना का अध्किार दिया गया है। 1968–69 में 89 औद्योगिक इकाईयों में संयुक्त परिषदें कार्य कर रही थीं जिनमें 34 सार्वजनिक तथा 55 निजी इकाइयाँ थी।

प्रबन्ध् में श्रमिकों के भाग लेने के उद्देश्य
(Objects of Workers Participation in Management)

प्रबन्ध् में भाग लेने के उद्देश्य की प्रमुख रूप से तीन भागों में विभाजित किया जा सकता हैः—

;1द्ध आर्थिक उद्देश्य (Economic objects),

;2द्ध सामाजिक उद्देश्य (Social objects),

(3) मनोवैज्ञानिक उद्देश्य (Psychological objects)

(1) **आर्थिक उद्देश्य (Economic objects)–** इसके अन्तर्गत उत्पादन में वृ(ि (Increase in Production) ओर अच्छे औद्योगिक सम्बन्धें की स्थापना आते हैं। इसके अतिरिक्त यह नवीन प्रणाली अध्कि लाभ (Maximum Profit) के स्थान पर अध्कितम आर्थिक कल्याण (Maximum economic welfare) पर बल देती है।

;2द्ध **सामाजिक उद्देश्य (Social objects)–** श्रमिकों को समाज में उचित मान्यता देना सामाजिक उद्देश्य होता है। संगठन में श्रमिक की मनुष्य के रूप में प्रतिष्ठा करना उसके अन्दर हीन भावना को समाप्त करना होता है।

;3द्ध **मनोवैज्ञानिक उद्देश्य (Psychological objects)–** प्रबन्ध् में श्रमिकों द्वारा भाग लेने के मनोवैज्ञानिक उद्देश्य के अन्तर्गत श्रमिकों के साथ मानवीय व्यवहार करके उनके अन्दर सम्मान की भावना, सुरक्षा तथा सामाजिक चेतना जागृत की जाती है। श्रमिक को मशीन एक पुर्जा (Cog) न समझकर, सहयोगी समझना चाहिए। यदि यह कहा जाए कि मशीन श्रमिकों के कार्य में सहयोग देती है तो गलत नहीं होगा।

इस प्रकार प्रबन्ध में श्रमप्रभागिता का उद्देश्य अध्कितम आर्थिक कल्याण, श्रमिक की आत्मसम्मान और प्रतिष्ठा की भूख को शान्त करना तथा श्रमिकों के साथ मानवीय व्यवहार करके उनके हृदय में सम्मान की भावना, दूसरों से सम्मान पाने का महत्त्व, सुरक्षा तथा सामाजिक चेतना उत्पन्न करना होता है।

जी॰ एस॰ वालपोल (G.S. Walpole) के अनुसार— फसमस्त मानवीय इच्छाओं में सबसे अध्कि तीव्र इच्छा मनुष्य में मनुष्य के रूप आदर पाये जाने की है। यह केवल शिकायत करने या सुझााव देने के अध्कािर तक ही सीमित नहीं है अपितु वह ऐसा करने के उत्तरदायित्व की मान्यता चाहते हैं, क्योंकि एक कर्मचारी होने के नाते वह एक उद्योग का संयुक्त भागीदार है, जिसमें उसका ध्न तो नहीं, पर जीवन जगा होता है।य[1] फ्रलेण्डर्स (Allen Flanders) के मतानुसार— फप्रबन्ध् में श्रमिकों की राय का लिया जाना मूलरूप से एक नैतिक प्रश्न है। इसका परिणामें से अपना अलग अस्तित्व है, मान प्रणी होने के नाते उनकी अपनी प्रतिष्ठा है और वे आत्मसम्मान के अध्किारी है।य[2]

अन्य उद्देश्य निम्नलिखित हैं—

;1द्ध औद्योगिक सम्बन्धें में सुधर करना तथा औद्योगिक शान्ति स्थापित रखकर औद्योगिक संघर्षो को समाप्त करना।

;2द्ध श्रमिकों में उद्योग के प्रति अपनत्व की भावना जागृत करना।

;3द्ध श्रमिकों को स्वयं को अभिव्यक्त करने का अवसर प्रदान करना जिसमें उनमें उत्पन्न भ्रम समाप्त किया जा सके।

;4द्ध किये जाने वाले निर्णयों की कार्य कुशलता में वृ(ि करना। यह सोचना गलत है कि कर्मचारी निर्णय में योगदान नहीं दे सकते तथा योग्य नहीं होते।

;5द्ध किए गए निर्णय कर्मचारियों द्वारा हृदय से स्वीकृत होते हैं जिससे उन पर कार्यकुशलता से अमल होता है।

;6द्ध कर्मचारियों की कार्य (Job) सन्तुष्टि में वृ(ि होती है और उनके मनोबल को उफँचा उठता है।

;7द्ध क्योंकि निर्णयों में कर्मचारियों के सुझाव भी सम्मिलित होते हैं, इसलिए श्रमिक उन निर्णयों को व्यावहारिक बनाने में अपना दायित्व अनुभव करते हैं।

;8द्ध जिन संस्थाओं में श्रमिक अनुपस्थिति की समस्या थी उसका भी इससे समाधन हुआ है।

;9द्ध जिन संस्थाओं में दुर्घटनाएं होती थीं वहाँ पर श्रमिकों में सुरक्षात्मक ढंग से कार्य करने की भावना जागृत करने तथा दुर्घटनाएँ कम करने में सपफलता मिली है।

;10द्ध श्रमिकों को संस्था की कार्यविध् िका ज्ञान होने से वे संस्था की कठिनाइयों को जानने में सपफल हुए हैं।

;11द्ध अपव्यय तथा खराबी (Spoilage) में महत्त्वपूर्ण कमी होती है।

;12द्ध श्रमिकों से संस्थाओं के लिए सुझाव वृ(ि प्राप्ति हुई है।

;13द्ध संस्था को विविध् मशीनों एवं योजनाओं के परिवर्तन को कार्यान्वित किया जा सका है तथा इसके कारण ही स्वचालन, विवेकीकरण तथा वैज्ञानिक प्रबन्ध् की योजना लागू की जा सकी है तथा उनका विरोध् इसी के कारण नहीं हुआ।

प्रबन्ध् में श्रमिकों की भागीदारी की पूर्व शर्तें
(Pre-requisites of Workers Participation in Management)

श्रमिकों की प्रबन्ध् में भागीदारी एक ऐसा विचार है जिसके संगठन में लागू करने से पूर्व बहुत बड़ी तैयारी करनी होती है। हमें पहले आवश्यक वातावरण तैयार करना होता है। प्रबन्ध् में श्रमिकों की भागीदारी का पौध ऐसा है। जिसको रोपना अथवा लगाने से पूर्व जमीन की कापफी तैयारी करनी होती है, अन्यथा इस पौध्े के नष्ट हो जाने का भय रहता हैं। यही

नहीं, श्रमिकों की भागीदारी रूपी यह पौध बिना तैयारी के लगा देने से पौध सूख जाने या सड़ जाने का भय बना रहता है। इस पौधे की मौसम से भी रक्षा करनी होती है।

उपरोक्त उदाहरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि बिना सोचे–समझे, बिना वातावरण तैयार किये यदि श्रमिकों को प्रबन्ध में भागीदारी दी गई तो यह प्रयोग असपफल हो जायेगा। इसलिए निम्नलिखित पूर्व शर्तो का पालन आवश्यक हैः–

;1द्ध श्रमिक और सेवायोजकों के बीच सहयोग, निष्ठा विश्वास एवं जिम्मेदारी की भावना उत्पन्न की जाए।

;2द्ध श्रमिक वर्ग ओर सेवायोजकों दोनों पक्ष अपनी–अपनी जिम्मेदारियों को समझकर उन्हें पूरा करे।

;3द्ध दोनों पक्ष सामूहिक सौदेबाजी का महत्त्व समझते हों।

;4द्ध मजबूत श्रमसंघ आंदोलन का होना परम आवश्यक है।

;5द्ध श्रमिकों के लिये व्यापक शिक्षा की व्यवस्था करना।

;6द्ध श्रमिकों को उत्पादन, नियोजन एवं नियन्त्रण (Production Planning and Control) का प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए।

;7द्ध श्रमिकों के रहन–सहन के स्तर को उफँचा किया जाना चाहिये।

;8द्ध जहाँ तक सम्भव हो सके श्रमिकों और नियोक्ताओं के बीच भारी अन्तर को समाप्त करना चाहिये।

;9द्ध श्रमिकों को संगठित होने तथा विचार प्रकट करने की स्वतन्त्रता होनी चाहिए।

;10द्ध कर्मचारियों को लाभ, उत्पादन कच्चे माल की उपलब्ध्, विदेशी प्रतिस्प(ा आदि के बारे में शिक्षित किया जाना चाहिये।

;11द्ध श्रमिकों की भागीदारी के विषय में नियोक्ता, कर्मचारी, विनियोगकर्ता तथा अंशधरी आदि सभी को शिक्षित किया जाना चाहिये।

श्रमिकों द्वारा प्रबन्ध में भाग लेने के रूप
(Forms of Worker's Participation in Management)

श्रमिकों को प्रबन्ध में भाग देने से हमारा आशय श्रमिकों को ऐसी समितियों, जो उनको प्रभावित करने वाले निर्णय करती हैं में प्रतिनिध्त्वि देने से है। इस रूप में श्रमिकों को प्रबन्ध में कई तरह से भागीदार बनाया जा सकता है। ये व्यवस्थायें मुख्यतः निम्न हैंः–

;1द्ध **सहभागिता (Co-ownership)**–एक संस्था में ऐसी व्यवस्था हो सकती है कि वहाँ श्रमिकों को संस्था के अंश क्रय करने को प्रोत्साहन दिया जाये। ऐसा होने से उन्हें संस्था में संचालक चुनने में मताध्कार प्राप्त हो जायेगा जिससे वे संस्था के संचालकों की समिति अपने प्रतिनिध् भेज सकते हैं तथा उनके माध्यम से संस्था के निर्णयों को प्रभावित कर सकते हैं।

;2द्ध **संचालक समिति में प्रतिनिध्त्वि (Representation in Board of Directors)**– संस्था के अंशधरी स्वेच्छा से या सरकारी अध्निय के माध्यम से ऐसी व्यवस्था कर सकते हैं जिसके अन्तर्गत संस्था की संचालक समिति में श्रमिकों में से एक निश्चित संख्या में प्रतिनिध् लिये जाने अनिवार्य हों। प्रफांस में सरकारी उद्योग की संचालक समिति में श्रमिकों की संख्या के 1/3 संचालक प्रतिनिध् हैं।

;3द्ध **कार्यसमिति या कार्य परिषद् (Works Committees of Work Council)**– इसके अन्तर्गत श्रमिकों तथा प्रबन्धकों की संस्था के विभिन्न स्तरों पर संयुक्त समितियाँ बनाई जाती है जो विचार विमर्श द्वारा संस्था व श्रमिकों की कार्य की दशाओं में सुधर के लिए प्रयत्नशील रहती हैं। ये समितियाँ विभिन्न विभागों के लिए अलग–अलग या सभी विभागों

के लिए एक हो सकती है। हमारे देश में औद्योगिक संघर्ष अधिनियम के अन्तर्गत ऐसी ही समितियों की स्थापना की व्यवस्था है।

श्रम–प्रबन्ध भागिता की विशेषताएं अथवा आवश्यक तत्त्व (Essential Features or Characteristics of Worker's Participation in Management)

प्रबन्ध में श्रमिकों को भाग देने की व्यवस्था कुछ विशेष अवस्थाओं में सपफल हो सकती है। इसलिए इसे सपफलता से कार्यान्वित करने के लिए एक संस्था को पहले ऐसा वातावरण तैयार कर लेना चाहिये। इसके लिए उसे निम्न तत्वों की ओर ध्यान देना चाहिएः—

;1द्ध **उत्तरदायित्व श्रम संघ (Responsible Labour Union)–** यह योजना उसी संस्था में सपफल हो सकती है जहाँ उत्तरदायी श्रम संघ हो, जा संस्था तथा श्रमिक दोनों के हितों में पर्याप्त रूचि रचाता हो। ऐसा होने पर ही श्रमिक प्रतिनिध् िप्रबन्ध्कों को हृदय से सहयोग दे सकेंगे तथा अपने हित के लिए अनावश्यक तौर पर अड़े नहीं रहेंगे।

;2द्ध **संगठन में विचार का उदय (Idea from Within)–** ऐसी समितियाँ वैधनिक दबाव के कारण नहीं बल्कि स्वेच्छा से बनाई जानी चाहिएँ तथा इनकी स्थापना का विचार श्रमिकों के हृदय से आना चाहिए। ऐसा न होने पर श्रमिक तथा प्रबन्ध्क दोनों ही इसे वैधनिक औपचारिकता मानते हैं और विशेष रूचि नहीं लेते।

;3द्ध **वेतन, लाभांश तथा व्यक्तिगत मामले क्षेत्र से बाहर (Excluding Wages, Bonus and Personal Grievances)–** वेतन, लाभांश, व्यक्तिगत मामले इन समितियों के कार्यक्षेत्र से बाहर हो क्योंकि इन्हे प्रबन्ध्क ही प्रभावशाली ढंग से कर सकते हैं। श्रमिक प्रतिनिध् ि"ास कोष, आकस्मिक घटनाओं के कोष आदि के महत्त्व को समझा नहीं सकते।

;4द्ध **सभी स्तर पर समितियों की स्थापना (Labour Management councils at all levels)–** कुछ संस्थाओं के अनुभव स्प"ट करते हैं कि ऐसी संयुक्त समितियाँ उद्योग के विभिन्न भागों तथा स्तरों पर होनी चाहिएँ क्योंकि ऐसा होने पर निम्नतम सतर के कर्मचारियों को इनमें प्रतिनिध्त्वि मिल सकेगा।

;5द्ध **सर्वसम्मति से किये गए निर्णयों की पूर्ति (Efficient Implementation of Unanimous Decision)–** संस्था में श्रमिकों को योजना के प्रति प्रोत्साहित रखने तथा योजना पर इनका विश्वास बनाये रखने के लिए आवश्यक है कि सर्वसम्मति से किये गये निर्णयों को तुरन्त व्यवहार में लाया जाये। इन निर्णयों में देरी होने पर श्रमिकों का इस व्यवस्था से विश्वास समाप्त हो जाता है।

;6द्ध **प्रशिक्षण की व्यवस्था (Arrangement of Training)–** प्रबन्ध्कों तथा श्रमिकों, दोनों पक्षों के प्रतिनिध्यिों को योजना लागू करने से पहले पर्याप्त प्रशिक्षण दिया जाए ताकि वे व्यवस्था को भली भांति चला सकें।

;7द्ध **श्रम संघ के पास व्यवसाय विशेषज्ञ (Busines Experts Services in the Labour Unions)–** श्रमिक संघों के पास व्यवसाय विशेषज्ञ हों जो उद्योग की समस्याओं का ज्ञान रखते हों तथा प्रबन्ध्कों से संस्था के तकनीकी मामलों पर विचार करने की क्षमता रखते हों।

;8द्ध **पारस्परिक विश्वास (Mutual Faith)–** प्रबन्ध्कों तथा श्रमिकों के प्रतिनिध् िएक दूसरे पर विश्वास करते हों तथा उनमें सहयोग की भावना हो। प्रबन्ध्कों तथा श्रमिक प्रतिनिध्यिों में प्रयोग की कार्यकुशलता में वृ(ि की भावना होनी चाहिए।

;9द्ध **संयुक्त समितियों के अध्किार का स्प"टीकरण (Clarity of rights duties of the Committee)–** संस्था के विभिन्न स्तरों पर कार्य कर रही संयुक्त परिषद्ों के अध्किार, कार्य दायित्व तथा लिखित रूपों में हों ताकि उनमें भ्रम न उत्पन्न हो तथा विवादों की अवस्था में लिखित सूची को देखकर समाधन किया जा सके।

;10द्ध **समान प्रतिनिध्त्वि** (Equal Represention)– बनाई जाने वाली संयुक्त समितियों में जहाँ तक हो सके दोनों पक्षों के समान प्रतिनिध् िहों। ऐसा होने पर श्रमिक प्रतिनिध् िस्वंय को अल्पमत में महसूस न करके वाद–विवाद में पूर्ण उत्साह से भाग लेंगे। साथ ही ऐसी व्यवस्था होने पर बहुमत से निर्णय लेने की अपेक्षा सर्वसम्मत निर्णय लिये जा सकेंगे क्योंकि किसी का भी बहुमत न होने के कारण उनमें सहयोग देने की भावना जागृत हो जायेगी।

;11द्ध **उच्च प्रबन्ध्कों को प्रतिनिध्त्वि** (Representation to Top Executives)– ऐसी समितियों में उच्च प्रबन्ध्कों को प्रतिनिध्त्वि दिया जाना चाहिये क्योंकि यह प्रबन्ध्क ही निर्णय को कार्यान्वित करने की स्थिति में होते हैं तथा उन निर्णयों के व्यवहार में होने की कठिनाइयों को जानते हैं जिस कारण उन निर्णयों को व्यवहार में लाना या न लाया जाना उसी समय नष्ट हो जाता है तथा श्रमिक प्रतिनिध्यिों को धेखे में नहीं रखा जाता है। ऐसा होने से दोनों पक्षों में उत्साह बना रहता है।

;12द्ध **कार्यविध् िका श्रमिकों को सन्देशवाहन** (Communication to Employees)– श्रमिकों में इस व्यवस्था के प्रति विश्वास व उत्साह बनाये रखने के लिए आवश्यक है कि उन्हें समिति की कार्यविध् िका ज्ञान रहे। इसके लिए संस्था में समिति की कार्य विध् िको श्रमिकों तक पहुँचने के लिए कार्यकुशल सन्देशवाहक की व्यवस्था होनी अनिवार्य है।

प्रबन्ध् में श्रमिकों की भागीदारी : विचारधराएं
(Concept of Worker's Participation in Management)

प्रबन्ध् में श्रमिकों की भागीदारी से सम्बन्ध्ति दो विचारधरायें हैंः–

(i) प्रचलित विचारधरा, (ii) वास्ताविक विचारधरा

(i) **प्रचलित विचारधरा** – इस विचारधरा में, श्रमिकों को औद्योगिक इकाई के लाभों तथा नीति निर्धरण में प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से भागीदार बनाया जाता है। इस प्रकार श्रमिकों का प्रबन्ध् में भाग लेना सहभागिता (Co-partnership) कहलाता है। सहभागिता (Co-partnership), लाभभागिता (Profit-Sharing), का संशोध्ति रूप है। सहभागिता के अर्न्तगत श्रमिकों को तीन लाभ (Triple Benefits) मिलते हैंः–

;1द्ध श्रमिकों को श्रम के बदले नियामित मजदूरी,

;2द्ध शु(लाभों का एक निश्चित भाग, नगदी या अंशों के रूप मेंऋ

;3द्ध अन्य लाभः–

(a) कम्पनी की बैठकों में अंशधरियों के साथ भाग लेने का अध्किार,

(b) अपने संचालक निर्वाचित करने का अध्किार,

(c) संचालक मण्डल की सभाओं में भाग लेने का अध्किार।

प्रौ॰ चैपमैन (Chapmen) ने कहा है, फसहभागिता में लाभभागिता एवं नियन्त्रण दोनों ही सम्मिलित हैं।य ("Co-partnership implies both profit-Sharing and control-Sharing")

भारतवर्ष में औद्योगिक संघर्ष अध्निियम, 1947 (Industrial Disputes Act, 1947) सहभागिता (Co-partnership) के विचार को खुले रूप में मान्यता न देकर आंशिक रूप से लागू करने का प्रयास करता है। इसलिए भारत में सहभागिता का प्रचलन नहीं है।

(ii) **वास्ताविक विचारधरा** – प्रबन्ध् में श्रमिकों की भागीदारी से अभिप्राय औद्योगिक इकाइयों की वित्तीय, कर्मचारी प्रबन्ध् एवं प्रशासनिक नीति या निर्णय लेने में प्रतिनिध्त्वि प्रदान करने से हैं। किन्तु प्रबन्ध् में श्रमिकों की भागीदारी के वास्तविक रूप को, कार्य समितियाँ, कल्याण समितियाँ अथवा संयुक्त शिकायत समाधन व्यवस्था तक सीमित करके बिगड़ना नहीं चाहिये। वास्तव में, प्रबन्ध् शब्द के अर्न्तगत निर्णय लेने वाली संस्था (Decision Making Body) तक श्रमिकों को निर्णय लेने (Decision making) में प्रतिनिध्त्वि नहीं दिया जाता, सच्चे अर्थों में प्रबन्ध् में श्रमिकों की भागीदारी नहीं हो सकती।

प्रबन्ध में श्रमिकों के भाग लेने में रूकावटें
(Handicaps in the Way of Worker's Participation in Management)

कुछ देशों के अनुभव यह स्पष्ट करते हैं कि वहाँ यह योजना पूर्णरूप से सपफल नहीं हुई तथा उद्योग इससे वे उद्देश्य प्राप्त नहीं कर सके। हमारे देश में भी यह कुद उद्योगों में पूर्णतः सपफल नहीं हुई, जैसाकि अहमदाबाद की आठ औद्योगिक इकाइयों अध्ययन से पता चलता है कि वहाँ इसका प्रयोग से न तो श्रमिकों की उत्पादकता में वृ(हुई और ही वहाँ सहयोग एवं सद्भाव का वातावरण बना। इसकी असपफलता के निम्न कारण हैंः–

(i) श्रमिक की मुख्य रूचि वेतन, लाभांश एवं जॉब सुरक्षा में होती है जबकि ये समितियाँ वेतन, लाभांश आदि के सम्बन्ध में अध्किार नहीं रखतीं तथा कार्य की दशाओं के सम्बन्ध में भी इनके अध्किार सीमित हैं। साथ ही श्रमिक अशिक्षित होने के कारण ऐसी व्यवस्था के महत्त्व को नहीं समझते जिस कारण वे इससे अप्रभावित रह गये हैं। प्रबन्ध्क ऐसी व्यवस्था को हृदय से स्वीकार नहीं करते क्योंकि वे अनुभव करते हैं कि यह व्यवस्था श्रम संघों का श्रमिकों पर नियन्त्रण करने के लिए लागू की गई है।

(ii) श्रम संघों के नेता इसका विरोध् करते हैं क्योंकि वे अनुभव करते हैं कि यह व्यवस्था श्रम संघों का श्रमिकों पर नियन्त्रण करने के लिए लागू की गई है।

(iii) कुछ संस्थाओं मे एक से अध्कि श्रमिक संघ होते हैं जो ऐसी समितियों द्वारा सर्वसम्मति से निर्णय लेने में रूकावटें डालते है।

(iv) सार्वजानिक उद्योगों में, जिनमें यह योजना प्रयोग के तौर पर शुरू की गई थी, यह श्रमिकों का विश्वास प्राप्त करने में असपफल रहीं है क्योंकि सर्वसम्मति से किये गये निर्णय भी सरकार से पारित करवाने पड़ते हैं जिनमें बहुत समय लगता है। साथ ही कुछ निणयों को सरकार रद्द कर देती है।

(v) देश में उत्तरदायित्वपूर्ण श्रम संघों का विकास नहीं हो पाया है जिस कारण इन समितियों के श्रमिक प्रतिनिध् िसंस्था के हित की अपेक्षा श्रम संघों तथा श्रमिकों के हितों को वरीयता देते हैं। वे संस्था की कठिनाइयों को समझने का प्रयत्न नहीं करते।

(vi) प्रबन्ध्कों को श्रमिक प्रतिनिध् िकी उपस्थिति में महत्त्वपूर्ण निर्णय लेने में कठिनाई होती है तथा उसमें देर लग जाती है। श्रमिक प्रतिनिध् िकी अनुपस्थिति में उन्हें सलाह देने की आवश्यकता नहीं होती, जिस कारण तुरन्त निर्णय हो जाते हैं। परन्तुं ऐसी व्यवस्था में तुरन्त निर्णयों में रूकावट आती है। इस कारण भी संस्था के स्वामी ऐसी व्यवस्था को नहीं चाहते हैं।

श्रमिकों को प्रबन्ध में भाग देने से लाभ
(Advantages of Worker's Pariticipation in Management)

श्रमिकों को प्रबन्ध में भाग देने से औद्योगिक संस्था तथा श्रमिक दोनों को निम्न प्रमुख लाभ प्राप्त होते हैंः–

(i) **उत्पादकता में वृ((Increase in Productivity)–** श्रमिकों को प्रबन्ध में भाग देने की उनकी कार्य सन्तुष्टि तथा मनोबल बढ़ता है जिससे वे दिल लगाकर कार्य करते हैं और उत्पादकता में वृ(होती है। उत्पादकता की वृ(का तथ्य द्वितीय विश्वयु(के मध्य स्पष्ट देखने को मिला था जिसमें श्रम–प्रबन्ध्क समितियों का मुख्य योगदान माना गया था।

(ii) **अच्छे औद्योगिक सम्बन्ध (Good Industrial Relations)–** श्रमिकों को अपनी समस्याएं प्रबन्ध्कों तक पहुँचने का माध्यम प्राप्त हो जाता है जिससे औद्योगिक सम्बन्धें में सुधर होता है और ये न्यूनतम हो जाते हैं तथा इनसे सहयोग की भावना जागृत होती है। द्वितीय विश्वयु(में जिन उद्योगों में यह योजना लागू की गई वहाँ लम्बे समय तक हड़ताल या तालाबन्दी नहीं हुई।

(iii) **सुझावों को प्रोत्साहन (Encouraging Suggestion)–** प्रबन्ध्क कार्य में इतने व्यस्त होते हैं कि सब ओर ध्यान नहीं दे सकते। इसलिए कुछ क्षेत्रों में कुछ कठिनाइयाँ या समस्याएं रह जाती हैं। श्रमिक प्रबन्ध्कों को उन कठिनाईयों

व समस्याओं के सम्बन्ध में जानकारी देकर सुलझा सकते हैं। इस योजना के द्वारा सुझावों में वृ(होती हैं जिससे संस्था की समस्याओं को कार्यकुशलता से सुलझाने में महत्त्वपूर्ण योगदान मिलता है।

(iv) **परिवर्तन के विरोध को समाप्त करना (Overcoming Resistance of Change)–** वैधनिक प्रबन्ध, स्वचालन तथा विवेकीकरण ऐसे परिवर्तन है जिनका श्रमिक विस्तृत विरोध करते हैं। ये परिवर्तन तथा संस्था दोनों के हित में होते है। ऐसे परिवर्तनों को सपफल बनाने के लिए उनका हार्दिक सहयोग प्राप्त कर सकती है।

(v) **प्रभावशाली निर्णय लेना (Effective Decision Making)–** प्रायः यह सोचा जाता था कि श्रमिक प्रबन्ध्कीय निर्णयों में योग्य नहीं हैं तथा इसमें योगदान नहीं दे सकते। यह बात गलत है। अनुभव से स्पष्ट हो चुका है श्रमिकों को प्रबन्ध में भाग देने से प्रबन्ध्क प्रभावशाली तथा कार्यकुशल निर्णय लेने में सपफल होते हैं।

(vi) **सुरक्षा की भावना जागृत करना (Creation of Safety Consciousness)–** प्रबन्ध्क इस साध्न द्वारा श्रमिकों में सुरक्षित विध् िसे कार्य करने की भावना जागृत करने में सपफल हुए हैं क्योंकि संयुक्त समितियों द्वारा लिये गये निर्णय उन्हें हृदय से मान्य होते हैं।

(vii) **अपव्यय और व्यर्थता में कमी (Reduction in Wastage and Spoilage)–** प्रबन्ध में श्रमिकों को भाग देने से उनमें उद्योग के प्रति अपनत्व की भावना उत्पन्न होती है जिससे वे संस्था के अपव्यय को अपना अपव्यय समझते है तथा इसे न्यूनतम करने में प्रयत्नशील रहते हैं।

(viii) **उत्तरदायित्व की भावना का विकास (Developing a Sense of Responsibility)–** चूँकि लिये जाने वाले निर्णय श्रमिक प्रतिनिध् िकी विचारधरा को ध्यान में रखकर लिए जाते हैं इसलिए उनको व्यावहारिक रूप देने से उत्तरदायित्व की भावना श्रमिकों में उत्पन्न होती है। उत्तरदायित्व की भावना जागृत होने से वे अध्कि कार्यकुशलता से कार्य करते हैं।

(ix) **श्रमिकों की प्रतिष्ठा में वृ((High Respect of Emplotyees)–** इस योजना द्वारा श्रमिकों को स्वयं को अभिव्यक्त करने के अवसर प्राप्त होते हैं जिससे उनकी प्रतिष्ठा एवं आत्म–सम्मान में वृ(होती है। इससे उनकी सामाजिक प्रतिष्ठा बढ़ती है।

(x) **अनावश्यक आलोचना की समाप्ति (Avoiding Un-necessary Criticism)–** श्रमिकों को प्रबन्ध में भाग देने पर से संस्था की कार्यविध् िके जानकर हो जाते हैं। वे संस्था तथा प्रबन्ध्कों की कठिनाईयों को नजदीक से देखते हैं जिससे वे अनावश्यक आलोचना एवं विरोध बन्द कर देते है।

(xi) **स्थायी श्रम समूह (Stable Labour Force)–** यह योजना श्रम परिवर्तन को कम करके स्थायी तथा सन्तुष्ट श्रम समूह के निर्माण में महत्त्वपूर्ण योग देती है।

भारत में श्रमिकों को प्रबन्ध में भाग
(Worker's Participation in Management in India)

जहाँ तक भारत में श्रमिकों को प्रबंध में भाग देने का प्रश्न है, भारतीय अर्थव्यवस्था का आधर ही समाजवाद है। समाजवाद और श्रमिकों के प्रबंध में भाग देना दो पृथक् शब्द नहीं है, दोनों शब्दों का एक ही अर्थ निकलता हैं। राष्ट्रपिता महात्मा गांधी को तो वर्तमान भारत में श्रमिकों को प्रबन्ध में भाग देने का प्रवर्त्तक माना गया है। क्योंकि गाँधी जी के अनुसार– **पनियोक्ता और श्रमिक दोनों बराबर के हिस्सेदार हैं श्रमिकों को मालिकों से श्रेष्ठता नहीं दी जा सकती।य ("In my opinion employers and employees are equal partners even if employees are not considered superior."- M.K. Gandhi)** इसी प्रकार प्रो. कौल (Prof. G.D.H. Cole) के अनुसार कोई भी समाज सबसे वास्तव में उस समय तक प्रजातान्त्रिक आधर पर खड़ा नहीं हो सकता जब तक यह अपने प्रजातान्त्रिक विचारों को उद्योग और राजनीतिक क्षेत्र में समान रूप से लागू न करें।य (No society can rest on a really democratic basis unless it applies the democratic method on its industrial as well as to its political affairs".)

सर्वप्रथम भारत में श्रमिकों को प्रबंध में भाग देने वाली संस्था ;देहली क्लाथ मिल्ज क. लि.द्ध थी। द्वितीय पंचवर्षीय योजना में स्पष्ट स्वीकार किया गया कि सहभागिता के लिए देश में प्रबन्ध परिषदों की स्थापना की जानी चाहिए। इन परिषदों में तीन वर्गों का प्रतिनिध्त्वि–प्रबन्ध्क, तकनीकियों तथा श्रमिकों – का होगा। इस समस्त सुझावों को कार्य रूप में परिणित करने के उद्देश्य से भारत सरकार ने एक विस्तृत रूपरेखा तैयार करने के उद्देश्य से एक त्रिदलीय मण्डल का गठन करके विदेशों को भेजा।

अध्ययन मण्डल के सुझाव
(Suggestions of Study Panel)

अध्ययन मण्डल ने 1953 में इंग्लैंड, ंनस, जर्मनी, यूगोस्लाविया, स्वीडन तथा बेल्जियम आदि देशों का दौरा किया तथा निम्नलिखित सुझाव 1957 में प्रकाशित कियेः

1. छोटे उद्योगों को छोड़कर शेष उद्योगों में सरकार यह योजना लागू कर सकती है। अच्छा यह होगा कि सरकार उत्तम प्रबंध वाले उद्योगों में यह योजना प्रारम्भ करे।
2. उद्योग की जितनी शाखाएँ हों उतनी ही संयुक्त परिषदें भी हों।
3. संयुक्त परिषादों में शिल्पकार और तकनीकी कर्मचारियों का प्रतिनिध्त्वि अवश्य हो।
4. श्रम संघ और संयुक्त परिषादों के बीच स्पष्ट रेखा हो।
5. श्रमिकों को प्रशिक्षण दिया जाये।
6. श्रमिकों को प्रशासकीय अध्किारी दिये जाएँ।

भारत में सार्वजानिक तथा निजी क्षेत्र में इस योजना को पर्याप्त सपफलता मिली है।

कार्य समितियाँ
(Works Committees)

उन औद्योगिक संस्थानों में जिनमें 100 या उससे अध्कि श्रमिक काम करते है, समितियाँ स्थापित की गई हैं। इनमें मालिकों और श्रमिकों का समान प्रतिनिध्त्वि रहता है इनका उद्देश्य दोनों के बीच शांति की भावना बनाए रखने के लिए अध्कि कारगार कदम उठाना तथा सौहार्द एवं अच्छे सम्बन्ध स्थापित करना है। 30 जून, 1956 तक 625 प्रतिष्ठानों में कार्य समितियाँ कार्य कर रही थी।

प्रबंध में श्रमिकों की भागीदारी की वर्तमान स्थिति (Present Position)

सरकार ने प्रबंध में श्रमिकों की भागीदारी के लिए अक्तूबर 1975 और जनवरी 1977 में लागू पिछली योजनाओं की विवेचना की और इस विवचेना तथा अब तक प्राप्त अनुभव के आधर पर सरकार ने अपने 30 दिसम्बर 1983 के एक प्रस्ताव द्वारा केन्द्रीय सार्वजानिक क्षेत्र के उपक्रमों में प्रबन्ध में श्रमिकों की भागीदारी की एक नई और व्यापक योजना लागू की। राज्य सरकारों से भी अनुरोध् किया गया कि वे अपने सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों में इस योजना को लागू करें। निजी क्षेत्र को भी यह योजना लागू करने के लिए प्रोत्साहित किया जाएगा।

इस योजना के अर्न्तगत एक त्रिपक्षीय समिति बनाई गई है, जिसमें केन्द्रीय सरकार के मंत्रालयों/राज्य सरकारों, सार्वजनिक क्षेत्र के बड़े उपक्रमों और केन्द्रीय ट्रेड यूनियन संगठनों के प्रतिनिध् होते हैं। यह समिति समय–समय पर इस योजना की प्रगति की विवेचना करती है और उसमें सुधर लाने के उपाय सुझाती है। त्रि–पक्षीय समिति की सहायता के लिए मानीटरिंग ;निगरानीद्ध सैल बनाया गया है। इस त्रि–पक्षीय समिति की तीन बैठकें हो चुकी है। और इनमें निम्नलिखित विषयों के बारे में महत्त्वपूर्ण निर्णय किए गए हैं– मंत्रालयों/विभागों द्वारा अपने उपक्रमों की समय–समय पर की गई विवेचनाएं, इस योजना के काम करने के ढंग का समय–समय पर विश्लेषणात्मक मूल्याँकन, प्रबन्ध्कों और श्रमिकों के लिए संयुक्त प्रशिक्षण पाठ्यक्रम, मूल्याँकन सम्बन्धी अध्ययन आदि। विभिन्न औद्योगिक त्रि–पक्षीय समितियों में भी इस योजना की प्रगति पर विचार–विमर्श किया जाता

है। यह योजना केन्द्रीय सार्वजनिक क्षेत्र के 91 उपक्रमों में शॉप फ्रलोर/संयत्र स्तर पर लागू की जा चुकी है। कुछ और उपक्रमों में इस योजना के लागू करने को काम चल रहा है।

प्रबंध् में श्रमिकों की भागीदारी पर 25–26 नवम्बर, 1986 को भारतीय श्रमिक सम्मेलन ने सिं(ात रूप में यह स्वीकार कर लिया कि सार्वजनिक, निजी और सहकारी क्षेत्र में प्रबंध् में श्रमिकों की भागीदारी योजना लागू की जाए। यह योजना कानून द्वारा लागू की जाए या नहीं और इसे कार्यान्वित करने का तौर–तरीका क्या हो, इस प्रश्न की भारतीय श्रमिक सम्मेलन ने स्थायी श्रमिक समिति को सौंप दिया है।

30 दिसम्बर 1983 के एक प्रस्ताव द्वारा केन्द्रीय सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों में प्रबंध् में श्रमिकों की भागीदारी की एक नई और व्यापक योजना लागू की। राज्य सरकारों से भी अनुरोध् किया गया है कि वे भी अपने सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों में इस योजना को लागू करें। निजी क्षेत्र को भी यह योजना लागू करने के लिए प्रोत्साहित किया जाएगा।

इस योजना के अर्न्तगत एक त्रि–पक्षीय समिति बनाई गई है, जिसमें केन्द्रीय सरकार के मंत्रालयों, राज्य सरकारों, सार्वजनिक क्षेत्र के बड़े उपक्रमों और केन्द्रीय ट्रेड यूनियन संगठनों के प्रतिनिध् िहोते हैं। यह समिति समय–समय पर इस योजना की प्रगति की विवेचना करती है और उसमें सुधर लाने के उपाय सुझाती है। **त्रि–पक्षीय समिति की सहायता के लिए मानीटरिंग ;निगरानीद्ध सैल बनाया गया है।** इस त्रि–पक्षीय समिति की तीन बैठकें हो चुकी है इनमें निम्नलिखित विषयों के बारे में महत्त्वपूर्ण निर्णय लिए गए हैं– मंत्रालयों, विभागों द्वारा अपने उपक्रमों की समय–समय पर की गई विवेचनाएँ, इस योजना के काम करने के ढंग का समय–समय पर विश्लेषणात्मक मूल्यांकन, प्रबन्ध्कों और श्रमिकों के लिए संयुक्त प्रशिक्षण पाठ्यक्रम, मूल्यांकन, सम्बन्धी अध्ययन आदि। विभिन्न औद्योगिक त्रि–पक्षीय समितियों में भी इस योजना की प्रगति पर विचार–विमर्श किया जाता है। यह योजना केन्द्रीय सार्वजानिक क्षेत्र 91 उपक्रमों में शॉप फ्रलोर/संयत्र स्तर पर लागू की जा चूकी है। कुछ और उपक्रमों में भी इस योजना के लागू करने का कम चल रहा है।

प्रबन्ध् में श्रमिकों की भागीदारी पर 25–26 नवम्बर, 1986 को भारतीय श्रमिक सम्मेलन ने सि(ांत रूप में यह स्वीकार कर लिया कि सार्वजानिक, निजी और सहकारी क्षेत्र में प्रबंध् में श्रमिकों की भागीदारी योजना लागू की जाए। यह योजना कानून लागू की जाए या नहीं और इसे कार्यान्वित करने का तौर–तरीका क्या हो, इस प्रश्न को भारतीय श्रमिक सम्मेलन ने स्थायी श्रमिक समिति को सौंप दिया है।

लाभ–भागिता
(Profit Sharing)

लाभ–भागिता का इतिहास (History)

लाभ विभाजन का विचार कोई नया नहीं है। 1840 में **लैकलेयर (H. Laclaire)** ने अपनी सजावट वाली वस्तुओं का व्यापार करने वाली संस्था 'पैरिस हाउस' (Paris House) में लागू किया था। यह योजना वहाँ पर्याप्त सपफल हुई तथा ंस एवं ब्रिटेन में उसका विस्तृत प्रयोग होने लगा। अनुमान है कि 1880 तक ब्रिटेन में लगभग वैसी ही 35 अन्य योजनाएं लागू हो गयी वे सभी योजनाएं इस बात पर आधरित थीं कि औद्योगिक संघर्षों का मुख्य कारण वेतन से सम्बन्ध्ति होता है। यदि कर्मचारियों को लाभ में हिस्सेदार बना दिया जाये तो औद्योगिक संघर्ष कम होंगे तथा उत्पादन में वृ(ि होगी।

लाभ–भागिता का आशय (Meaning)

लाभ–भागिता से अभिप्राय श्रमिकों को उनकी निश्चित मजदूरी के अलावा संस्था के लाभों में से भी एक निश्चित हिस्सा दिये जाने से है। इसी को लाभ–भागिता के नाम से पुकारते हैं।

जहाँ तक लाभ विभाजन के अर्थ का सम्बन्ध् है, आज भी वही अर्थ तथा परिभाषा सर्वमान्य है, जो लाभ विभाजन पर हुए अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन ने, जो पेरिस में हुआ था, 1889 में दी थी। इसके अनुसार–

("Profit sharing should be applied to those cases in which an employer agrees with his employees that they shall receive in partial remuneration of their labour and in addition to their wages, a share fixed before hand in the profits realised by the undertaking to which the profit scheme relates.)

लाभ–भागिता की परिभाषाएँ (Definition)

1. **डॉ. किम्बाल एवं किम्बाल** के शब्दों में, फलाभ विभाजन एक ऐसी योजना है जिनके अनुसार लाभ का एक निश्चित प्रतिशत, निश्चित समयांतर के साधरण रूप से वार्षिक या अ(–वार्षिक, उस अवधि में लगे हुये समस्त श्रमिकों को एक निश्चित अनुपात में बाँटा जाता है।य

2. **श्री एच. आर. सीगर** (H.R. Seager) के अनुसार, फयह एक समझौता है, जिसके अनुसार श्रमिकों को लाभ का एक हिस्सा मिलता है, जो लाभ होने से पहले ही निश्चित कर दिया जाता है।य

3. **श्री राबर्ट** के अनुसार, फलाभ विभाजन एक मुक्त समझौता है, जो लिखित या मौखिक हो सकता है और जिसके अनुसार नियुक्त श्रमिकों को उनकी साधरण मजदूरी के अलावा लाभ का हिस्सा प्राप्त करने का अध्किार प्राप्त होता है, किन्तु हानि का नहीं।य

4. **I.L.O** की 1948 की रिपोर्ट ने भी उचित परिभाषा दी है जिसके अनुसार, फलाभ विभाजन औद्योगिक पारिश्रमिक का वह ढंग है जिसके अर्न्तगत संस्था का नियोक्ता अपने कर्मचारियों को उनके वेतन के अतिरिक्त संस्था के शु(लाभ में से भी एक निश्चित अंश देने का वचन देता है।य

लाभ–भागिता की विशेषताएँ (Characteristics)

1. श्रमिकों तथा नियोक्ताओं में समझौता होना अनिवार्य है लेकिन यह समझौता योजना लागू किये जाने से पहले किया जाना चाहिए।

2. इस प्रकार दी जाने वाली राशि उनको दिये जाने वाले वेतन के अतिरिक्त होनी चाहिए। दूसरे शब्दों में योजना को लागू किए जाने का प्रभाव उनके वेतन पर न पड़े। साथ ही यह वेतन अवश्य होना चाहिए जितना अन्य संस्थाएं वैसे ही कार्य (job) के लिए देती हैं।

3. लाभ में से दिया जाने वाला भाग पहले निश्चित किया जाना चाहिये। इस लाभ में नियोक्ता को बाद में परिवर्तन का अध्किार नहीं होना चाहिए।

4. लागू की जाने वाली योजना का ज्ञान श्रमिकों को होना चाहिए।

5. श्रमिकों को दिया जाने वाला लाभांश का सम्बन्ध लाभ से होना चाहिए अर्थात् वह लाभ का एक निश्चित प्रतिशत होना चाहिए।

लाभ–भागिता के रूप (Forms of Profit Sharing)

लाभ विभाजन की योजना दो तरह की हो सकती हैं– ;1द्ध नगद भुगतान पर आधरित लाभ विभाजन योजना, ;2द्ध ट्रस्ट योजना (Trust or Deffered Payment)। नगद भुगतान पर आधरित योजना के अनुसार प्रत्येक वर्ष में एक बार भुगतान अवश्य नकदी के रूप में दिया जाता है। Deffered की तरह योजना में यह लाभ एक ट्रस्ट में रखा जाता है तथा मृत्यु/रिटायर होने या अयोग्य Disable होने की अवस्था में ही दिया जाता है। कुछ प्रबन्ध्क इन दोनों योजनाओं को सयुंक्त रूप में लागू करते हैं जिसमें लाभ का एक हिस्सा ट्रस्ट में रखा जाता है। ऐसी योजना दोनों तरह की योजनाओं का लाभ प्राप्त करने के लिए प्रयोग की जाती हैं। अमेरिका में एक अनुमान के अनुसार आधी संस्थाओं में लाभ विभाजन नगद भुगतान पर आधरित है और आधी Trust or Deffered पर आधरित है।

---

4. "Profit-sharing is a method of industrial remuneration under which an employer undertakes to pay his employees a share in the net profits of the enterprise, in addition to their regular wages."

–I.L.O Wage (a) General Report, 1948

लाभ–भागिता के उद्देश्य (Objects of Profit Sharing)

1. **औद्योगिक संघर्षों में कमी (Reduction in Industial Disputes):** औद्योगिक संघर्ष कम हो जाते हैं क्योंकि लाभ में हिस्सा देने से श्रमिकों में उत्तरदायित्व की भावना आ जाती है।
2. **प्रेरणादायक (Incentive Oriented):** यह योजना प्रेरणादायक होने के कारण श्रमिक कार्यकुशलता से कार्य करते हैं एवं उत्पादन बढ़ता है।
3. **श्रमिक परिवर्तन में कमी (Reduction in Labour Turnover):** इससे श्रमिक परिवर्तन कम हो जाता है तथा स्थायित्व के लाभ प्राप्त होने के साथ—साथ एक अनुभवी टीम का निर्माण हो जाता है।
4. **पक्ष में प्रचार (Favour Publicity):** जनता की निगाह में पफर्म की प्रभाव अच्छा हो जाता है तथा कार्य करने के लिए अच्छी पफर्म समझी जाने लग जाती है जिससे कार्यकुशलता तथा अनुभवी व्यक्ति इसमें आने के लिए आकर्षित होते हैं।
5. **आर्थिक सुरक्षा (Economic Security):** श्रमिकों को आर्थिक सुरक्षा प्राप्त होती है क्योंकि उन्हें वेतन के अतिरिक्त आय का एक अन्य साध्न प्राप्त हो जाता है।
6. **सामाजिक न्याय (Social Justice):** क्योंकि लाभ श्रमिकों तथा स्वामी दोनों के संयुक्त प्रयत्नों का परिणाम होता है इसलिये यह आवश्यक होता है कि श्रमिकों को भी लाभ में उचित भाग मिले जो कि वेतन पर प्राप्त नहीं हो सकता। इस रूप में लाभ विभाजन श्रमिकों को सामाजिक न्याय प्रदान करने में सहायक होता है।
7. **संतुष्टि में वृ((Improved Morale):** श्रमिकों को संतुष्टि में वृ(होती है तथा उनमें सहयोग एवं साझेदारी की भावना भी उत्प होती हैं।
8. **साझे उद्देश्य की प्राप्ति (Provide Common goal):** लाभ विभाजन इस तथ्य को स्पष्ट करता है कि श्रमिक तथा स्वामी का उद्देश्य समान है। उत्पादन वृ(से केवल स्वामी को ही नहीं, श्रमिकों को भी लाभ होता है।
9. **मृत्यु, अवकाश प्राप्ति एवं अयोग्यता की दशा में सुधर (Security in the event of Death, Retirement & Disability):** श्रमिकों के अवकाश प्राप्ति, मृत्यु एवं अयोग्यता की अवस्था में उन्हें पर्याप्त राशि देकर आर्थिक सुरक्षा प्रदान करता है जिससे वे अपना व्यवसाय कर सकते हैं एवं अपने परिवार की रक्षा कर सकते हैं।
10. **प्रबन्ध कर्मचारी सम्बन्ध (Management Employee Relations):** प्रबन्धकों तथा कर्मचारियों के सम्बन्धें में सुधर के लिए लाभ विभाजन योजना महत्त्वपूर्ण योगदान देती है।
11. **अनुपस्थिति में कमी (Reduced Absenteeism):** अनुपस्थितियाँ कम करने में भी ये योजनायें महत्त्वपूर्ण हैं। कुछ संस्थाएँ, जिनमें अनुपस्थिति अध्कि होती है, लाभ विभाजन का सम्बन्ध उपस्थिति से जोड़कर अनुपस्थिति कम की जा सकती है। कई संस्थायें इस रूप में भी इसका प्रयोग कर रही हैं।
12. **उन्नति के लिए सुझावों को प्रोत्साहन (Encouragement to Suggestions for Improvement):** श्रमिकों में प्रत्येक क्षेत्र में सुधर के लिये एवं विभि क्षेत्रों की समस्याओं को दूर करने के लिए सुझाव देने की भावना उत्प होती है।
13. **माल के अपव्यय में कमी (Reduction in Wastage of Material):** जिन संस्थाओं में सामग्री का अपव्यय अध्कि होता हो वहाँ लाभ विभाजन का सम्बन्ध सामग्री प्रयोग से जोड़कर महत्त्वपूर्ण बचत हो सकती है।
14. **निरीक्षण में कमी (Reduction in Supervision):** श्रमिकों में ईमानदारी से कार्य करने की भावना जागृत होती है जिससे उनके निरीक्षण की अध्कि आवश्यकता नहीं रहती।
15. **श्रमसंघों के विकास पर अंकुश (Prevention of the Growth of Union):** लाभ विभाजन से श्रमिक सन्तुष्ट हो जाने की अवस्था में श्रमसंघ का विकास रुक जाता है जिससे उद्योगपतियों का सिरदर्द दूर हो जाता है और वे आद्योगिक विकास में जुट जाते हैं।

16. **पूँजीवाद को सुरक्षित रखना (Prevention of the Capitalism):** श्रमिकों को निजी उद्योंगों में रखने के लिए प्रोत्साहन देकर पूँजीवाद को बनाये रखने में यह प(ति सहायक होती है। इस तरह से राजनीतिक लाभ के लिए इसका प्रयोग होता है। अमेरिका, ब्रिटेन आदि में तो इसका महत्त्वपूर्ण लाभ उठाया जाता है।
17. **उपभोक्ताओं एवं समाज के लिए लाभदायक (Benefit to Consumers and Socity):** इससे समाज तथा उपभोक्ता भी लाभन्वित होते है। उपभोक्ता को अच्छी वस्तुएँ ठीक समय तथा कीमत पर एवं समाज को अध्कि वस्तुएँ, श्रमिकों की आय वृ(के कारण राष्ट्रीय उत्पादन आदि प्राप्त होते है तथा समाज का आर्थिक स्तर ऊँचा उठता है एवं आर्थिक विकास तेजी से होता है।

लाभ विभाजन की समस्याएँ
(Problems of Profit Sharing)

इसमें सभी लाभ ही लाभ दिखाई देता है परन्तु वास्तव में ऐसा नहीं है। इसकी भी कड़ी आलोचना की गई है। अध्कि आलोचना या तो श्रमसंघ नेताओं ने की है या उन संस्थाओं ने जो इसका प्रयोग नहीं करती। पिफर भी उनकी आलोचना पर्याप्त सीमा तक ठीक है। इस पर लगाये गये दोष निम्न हैं—

1. **कम प्रेरणादयी (Poor Incentive):** श्रमिकों का प्रयास तथा मिलने वाला लाभ सम्बन्ध्ति होता है क्योंकि लाभ का भाग व्यक्तिगत योग्यता के आधर पर न देकर सामूहिक रूप में मिलता है जिससे श्रमिकों को अध्कि प्रेरणा नहीं मिलती। इससे यह भ्रम उत्प   होता है कि काम वे करते हैं और लाभ में भाग सभी को मिलता है।
2. **प्रयास एवं भुगतान में समयावध्ि (Time Lag between Effort and Payment):** प्रयत्न करने के तुरन्त बाद हिस्सा नहीं मिलती क्योंकि वह वर्ष के अन्त में मिलता है जिसका कार्यकुशलता पर बहुत कम प्रभाव पड़ता है।
3. **अनिश्चितता (Uncertainity):** लाभ विभाजन में दिया जाने वाला भाग लाभों में से ही दिया जाता हैं लेकिन लाभ अनिश्चित होता है जिससे कर्मचारियों को मिलने वाला भाग भी अनिश्चित रहता है जिससे उनमें उत्साह नहीं रहता।
4. **नैतिक गिरावट (Morale Depression):** कई बार श्रमिकों द्वारा अत्याध्कि परिश्रम एवं प्रयत्नों के बावजूद बाजार की दशाओं में परिवर्तन होने के कारण लाभ बहुत कम होता है या नहीं होता। ऐसी अवस्था में श्रमिकों के मन को बहुत ध्क्का पहुचता है। वे हताशा हो जाते है एवं लाभ के लिए अतिरिक्त कार्यकुशलता का कार्य नहीं करते।
5. **पेन्शन की योजना में वरीयता (Pension Plan Preferable):** श्रमिक संघ तथा श्रमिक पेन्शन योजना को महत्त्व देते हैं, इस कारण लाभ विभाजन का विरोध् करते हैं। क्योंकि लाभ अनिश्चित होने के कारण लाभ—विभाजन भी अनिश्चित होता है लेकिन पेन्शन में सुरक्षा एवं निश्चितता दोनों होते हैं, इससे वे पेंन्शन चाहते हैं।
6. **प्रशासन में कठिनाई (Diffcult to Administrate):** ऐसी योजना में सबसे महत्त्वपूर्ण कठिनाई यह है इसके संचालन का प्रबन्ध् कठिन है। लाभ के निश्चित करने में पूरी सावधनी रखनी पड़ती है। श्रमिकों को लाभ की शु(ता के लिए विश्वास करना पड़ता है। अविश्वास या मतभेद की दशा में स्थिति को नियंत्रित करना कठिन होता है।
7. **श्रमसंघों द्वारा विरोध् (Opposition by Unions):** श्रमसंघों द्वारा इसका विरोध् किया जाता है क्योंकि इसके लागू होने से उनका श्रमिकों पर नियंत्रण शिथिल हो जाता है। नेताओं का नेतृत्व चले जाने के भय से वे इसका विरोध् करते हैं।
8. **प्रबन्ध्कों द्वारा विरोध् (Opposition by Management):** क्योंकि ऐसी योजना में प्रबन्ध्कों को भाग नहीं दिया जाता इसलिए वे इनकी सपफलता में रुचि नहीं लेते एवं सपफलता के लिए प्रयत्न भी नहीं करते बल्कि इसका विरोध् करते हैं।
9. **न्याय पर आधरित नहीं (Not Based on Justice):** इस प(ति में श्रमिक केवल लाभ में ही भागीदार होते है, हानि में नहीं। इस कारण यह स्वामियों के प्रति न्याय नहीं है।

10. **स्वामित्व या प्रबंध्कों में परिवर्तन होने पर (Change in ownership of Management):** संस्था में प्रबंध्कों या स्वामित्व के बदल जाने पर इस योजना को ध्क्का पहुंचता है। ऐसे प्रबन्ध्क या स्वामियों के आने पर, जो इसे नहीं चाहते, यह योजना हटा दी जाती है।

लाभ विभाजन योजना का प्रबन्ध् बहुत ही कठिन है। यदि संस्था ने जिस उद्देश्य के लिए योजना आरम्भ की थी वह पूरा नहीं हो रहा तब इसका अर्थ है कि इस योजना का प्रबन्ध् सपफलतापूर्वक नहीं चल रहा है। यद्यपि कोई भी ऐसी योजना नहीं बतलाई जा सकती है जो प्रत्येक संस्था में सपफलतापूर्वक लागू की जा सके, पिफर भी कुछ ऐसे आधर दिए जा सकते हैं जिन पर ध्यान देकर उन्हें सपफल बनाने में सहायता मिलती है।

लाभ विभाजन की योजना की सपफलता के लिए कदम
(Steps for Successful Profit Sharing)

1. **कम्पनी की अंशदन की राशि और प्रकृति स्पष्ट हो (Clarity of Nature and Amount of Company Contribution):** कम्पनी द्वारा किए जाने वाले लाभ का सम्बन्ध् शु(लाभ से होगा या अंशधरियों को दिए जाने वाले लाभ से। Dividends निश्चित होगे या Slide आधर पर। ये हिस्से लाभांश देने से पहले निकाले जायेगें या बाद में निकाले जायेंगे, हिस्सा नगद मिलेगा या जमा किया जाएगा आदि सभी बातें पहली ही स्पष्ट कर देने चाहिएं तथा समझौते में विस्तृत रूप में लिख दिया जाए ताकि बाद में उन पर झगड़ा न हो सके।

2. **हिस्से के लिए योग्य व्यक्ति (Personnel Eligible for Participation):** लाभांश में हिस्सा के लिए आरम्भ में ही श्रमसंघ या प्रबन्ध्कों द्वारा यह निश्चय कर देना चाहिए कि उनमें कौन—कौन से कर्मचारी आयेंगें और कौन से नहीं।

3. **योजना का समय (Period of Plan):** योजना का समय निश्चित कर दिया जाए तथा निश्चित समय के बाद प्रबन्ध्कों को उसमें परिवर्तन करने अथवा करने अथवा हटाने का अध्किार अपने पास सुरक्षित रखना चाहिए। अध्किांश संस्थायें एक वर्ष के लिए ऐसा समझौता करती हैं और उचित होता है तो प्रतिवर्ष वही आगे बढ़ा दिया जाता है।

4. **व्यक्तिगत भाग के निर्धरण के लिए आधर (Base for Determination of Individurals Share):** लाभ की मात्रा बिना भेद—भाव के बराबर बांटी जाएगी या किसी आधर पर। यह आधर क्या होगा, यह विस्तृत रूप में स्पष्ट कर दिया जाना चाहिए। यह आधर कर्मचारी मूल्यांकन के निष्कर्ष, उपस्थिति सामग्री में बचत या उनका मिला—जुला रूप हो सकता है कुछ पफर्म अनुभवी व्यक्ति को अध्कि भाग तथा अन्य को कम देती हैं। कुछ भी आधर हो वह पूर्णतया स्पष्ट होनी चाहिए।

5. **साझेदारी का अनुभव (Feeling of Partnership):** योजना का उद्देश्य श्रमिक तथा प्रबंध्कों में साझेदारी की भावना उत्प करने से ही पूरा हो सकता है। अतः प्रत्येक कार्य ऐसा किया जाए जो यह भावना उत्प करे। इसके लिए योजना संयुक्त प्रबन्ध्, योजना की सपफलता के लिए निर्देश देने वाली संयुक्त श्रमिक तथा तथा प्रबंध्क समितियों की नियुक्ति लाभपूर्ण है। यह समिति हिसाब तैयार करने, जाँच करने आदि का अध्किार रखती है।

6. **शिक्षा योजना (Education Plan):** श्रमिकों को समय—समय पर योजना की रूपरेखा, उद्देश्य, उनको इससे प्राप्त होने वाले लाभ, इसकी सपफलता के लिस आवश्यक बातें श्रमिकों को बतलाने चाहिए जो लाभ होने की अवस्था में श्रमिकों पर गलत प्रभाव नहीं डालतीं।

7. **सहयोग प्रेरक वातावरण (Co-operative Atmosphere):** लाभ विभाजन योजना का प्रयोग उस समय तक न किया जाये तब तक वहां प्रबन्ध्कों, स्वामियों तथा श्रमिकों में मध्ुर सम्बन्ध् एवं सहयोग न हो। यदि विरोधी या असहयोगी अवस्था में यह योजना लागू की जाए तो आ बैल मुझे मार वाली कहावत चरितार्थ हो जाती है।

प्रबन्ध्कों को इन सब बातों के अतिरिक्त लाभ योजना के कुशल प्रबन्ध् के विषय में पर्याप्त ज्ञान हो, साथ ही उन्हें अन्य संस्थाओं में चल नही ऐसी योजनाओं की कार्य विध् िपर अपनी निगाह रखनी चाहिऐ ताकि कम्पनी की योजना में समयानुसार परिवर्तन किया जाता रहे।

श्रम सहभागिता
(Labour Co-Partnership)

आश्य ;Meaningद्ध— इस प(ति के अनुसार श्रमिकों को उद्योग की पूँजी तथा प्रबन्ध में भी भग लेने का अध्किार मिल जाता है इससे श्रमिक अपने उद्योग के साझीदार ;Partnerद्ध बन जाते हैं।

परिभाषा
(Defination)

चैपमैन ;Chapman) के अनुसार—फसहभागिता के अर्न्तगत लाभ का विभाजन तथा नियंतत्र दोनों सम्मिलित होते हैं।य

विशेषतायें
(Characteristics)

1. श्रमिकों को वेतन के अतिरिक्त जो लाभ मिलता है उसे वे उद्योग में पूँजी के रूप में विनियोजित कर देते हैं।
2. श्रमिकों को उद्योग के शु(लाभ में से एक निश्चित भाग प्राप्त होता है।
3. श्रमिकों को पश्रमिक सहभागिता समितिय (Co -Partnership Committee) बनकर उद्योग का साझीदार बनाया जाता है।

श्रम सहभागिता के लाभ
(Advantages)

1. श्रमिकों को इस प(ति से तीन लाभ प्राप्त होते हैं— ;aद्ध वेतन मिलता है, (b) लाभांश मिलता है, (c) उद्योगों के प्रबन्ध में भाग लेने का अध्किार मिलता है,
2. श्रमिकों का मनोबल ऊँचा होता है,
3. जीवन स्तर ऊँचा होता है,
4. श्रम और पूँजी के बीच मध्ुर सम्बन्ध स्थापित होते है,
5. हड़ताले कम होती है।
6. अध्कि उत्पादन होता है।

श्रमसंघ एवं श्रमसंघ आन्दोलन
(Trade Union and Trade Union Movement)

श्रम संघ का जन्म औद्योगिक क्रांति के पफलस्वरूप हुआ है। औद्योगिक क्रांति के पश्चात् ऐसी अवस्था उत्प हो गई थी जिसके कारण श्रमिक परस्पर मिलकर ही पफैक्ट्रियों के स्वामियों से अपने अध्किारों की माँग कर सकते थे। औद्योगिक क्रांति के पफलस्वरूप श्रमिकों के एक ऐसे वर्ग का जन्म हुआ तो केवल वेतन पर ही निर्भर था। पफैक्ट्रियों के स्वामी सरकारी हस्तक्षेप न होने के कारण मनमाने ढंग से श्रमिकों के वेतन, कार्य की दशायें, कार्य के घण्टे आदि निश्चित करते थे तथा श्रमिकों का शोषण कर रहे थे। ऐसी अवस्था में श्रमिक पारस्परिक सहयोग एवं मिलकर ही अपना बचाव कर सकते थे। श्रमिकों ने इस तथ्य को अनुभव जिससे श्रम संघों के निर्माण की नींव पड़ी।

श्रमसंघ का अर्थ
(Meaning of Trade Union)

श्रम संघ, श्रमिकों की संयुक्त संस्था है जो संयुक्त शक्ति द्वारा श्रमिकों के अध्किारों की रक्षा करती है। यह श्रमिकों के लिए उचित वेतन, कार्य की दशाओं, कार्य के घण्टों, सुरक्षा आदि की व्यवस्था करने के लिए स्वामियों पर दबाव डालती

---

5. "Co-partnership implies both profit-sharing and control-sharing.

–Chapman

है। श्रम संघों के विकास के प्रारम्भिक समय में श्रमसंघ का मुख्य उद्देश्य श्रमिकों के मध्य भातृत्व की भावना उत्प कर उनमें एकता स्थापित करना था ताकि वे संयुक्त रूप से अपने अध्किारों के लिए लड़ सकें। परन्तु अब इस विचार में पर्याप्त परिवर्तन हो चुका है तथा श्रम संघों का कार्य अब केवल एकता स्थापित करने का ही नहीं रह गया बल्कि अब तो वे आर्थिक, सामाजिक तथा राजनीतिक क्षेत्रों में भी श्रमिकों के हितों की रक्षा करते हैं।

श्रमसंघ की परिभाषाएँ
(Defination of Trade Union)

विभि विद्वानों ने श्रम संघ को भि —भि रूप से परिभाषित किया है। अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से श्रमसंघ की परिभाषाओं को दो वर्गों में विभाजित किया जाता है—

1. संकुचित परिभाषाएँ (Narrow Definitions)
2. विस्तृत परिभाषाएँ अथवा आधुनिक परिभाषाएँ (Wider defination or Modern Definations)

संकुचित परिभाषाएँ ;Narrow Definationsद्ध

1. श्रमसंघ की परिभाषा देते हुए **सिडने** तथा **वैब** (Sidney adn Web) ने लिखा है, फ्श्रमसंघ मजदूरी कमाने वालों का, उनके कार्यरत जीवन की दशाओं को बनाए रखने अथवा उनमें सुधर करने के उद्देश्य से, बनाया गया संघ है।[6]
2. **पिफलिप्पे** के अनुसार— फ्एक श्रमसंघ या व्यवसाय संघ श्रमिकों का यह संगठन है जिसकी स्थापना सामूहिक कार्यवाही द्वारा उनके सदस्यों के सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक हितों को प्रेरित (Promote) करने, रक्षा करने तथा सुधरने के लिए की जाती है।य[7]
3. **वी. वी. गिरि** के अनुसार,फ्श्रमसंघ श्रमिकों का एक ऐच्छिेक संगठन है जो संयुक्त प्रयास द्वारा श्रमिकों के आर्थिक हितों की सुरक्षा तथा विकास के लिए स्थापित किया जाता है।य[8]
4. **डेल योडर** (Dale Yoder) के अनुसार, फ्श्रमसंघ एक निरन्तर तथा दीर्घकालीन श्रमसंघ है जो विशेष उद्देश्य की प्राप्ति के लिए, अपने सदस्यों की रक्षा करने तथा श्रम सम्बन्धें में सुधर लाने के लिए बनाए जाते है।य
5. **एस. डी. पुनेकर** (S.D. punekar) के अनुसार,फ्श्रमसंघ औद्योगिक कर्मचारियों का निरन्तर संगठन है जो नियोक्ता या श्रमिकों के द्वारा स्वतन्त्र रूप से बनाया जाता है। इसका उद्देश्य अपने सदस्यों के हितों की रक्षा करना होता है।
6. **मिलने बेले** (Milney Bailey) ने उपरोक्त परिभाषाओं को स्थिर (Static) बतलाते हुए आज के समय के लिए अनुपयुक्त कहा है। उनके अनुसार, फ्उपरोक्त परिभाषाएँ प्राचीन हो चुकी है तथा अध्कि स्थैतिक (Static) है क्योंकि वर्तमान में श्रमसंघ केवल श्रमिक संघ नहीं रहे अपितु ये सभी वर्ग के कर्मचारियों के संघ हैं जिनका उद्देश्य अपने सदस्यों की काम की दशाएँ सुधरने तक ही सीमित न होकर अन्य क्षेत्रों से भी सम्बन्ध्ति हैं। इसमें मजदूरी भुगतान कार्य के घण्टों, कार्य की दशाओं तथा कार्य के स्थान आदि से सम्बन्ध्ति होनी चाहिए।य

विस्तृत या आधुनिक परिभाषाएँ (Wider or Modern Definationsद्ध

1. **जी. डी एच कोल** (G.D.H Cole) के अनुसार, फ्श्रमिक संघ एक या एक से अध्कि व्यवसायों के मजदूरों का संगठन है जिसका उद्देश्य सदस्यों के दैनिक कार्यो से सम्बन्ध्ति आर्थिक हितों की रक्षा एवं उनकी वृ(करना है।य

---

6. "A trade union is a Continuous association of wage earners for the purpose of maintaining or improving the the condition of their working lives." –Sidney and Web.
7. "A labour union or trade union is an organisation of workers formed to promote, protect and improve through collective action, the social, economic and political interests of its members." –Phillippo
8. "A trade union is a Voluntary from of organisaton or workers, formed to promote and protect their economic interest by collective action."

2. **आर. ए. लेस्टर** (R.A Lester) के अनुसार,प एक श्रमिक संघ कर्मचारियों का ऐसा संगठन है जिसका उद्देश्य सदस्यों के रोजगार की दशाओं को ठीक—ठीक रखना और सुधरना है।य

3. **कन्नीसन** (Cunnison) के अनुसार,प एक श्रमिक संघ मजदूरों का एकाध्किार संगठन है जो अपने श्रम को बेचने के लिए और यहाँ तक कि उसके उत्पादन के लिए भी सेवायोजकों पर निर्भरता की दशा में रहते हैं तथा ऐसे संगठन का सामान्य उद्देश्य उस निर्भरता के सन्दर्भ में नियोक्ताओं के साथ सौदा करने की शक्ति को मजबूत बनाना है।य

4. **एन. एम. जोशी** (N,M Joshi) के अनुसार,पश्रमिक संघ निश्चित रूप से कर्मचारियों का संघ है। यह नियोक्ता का संगठन नहीं है, न यह सह—भागियों (Co- partners) का ही संगठन है और न ही स्वतंत्र श्रमिकों का संगठन है।

5. **एन. बेरन** (N. Baron) के अनुसार,पश्रमिकों संघ, मजदूरी तथा वेतन पाने वालों और शुल्क द्वारा आय कमाने वाले व्यक्तियों का एक ऐच्छिक संघ है जो—(i) काम में लगे कर्मचारियों की दशाएँ सुधरने का प्रयास करते है, ;सेवायोजका के साथ अच्छे सम्बन्ध् बनाकरद्ध तथा सेवाओं एवं लाभ का अवसर देते हैं, (ii) दोनों पक्षों के सम्बन्ध् राज्य की दृष्टि से अच्छे बनाते हैं, (iii) राष्ट्रीय जीवन में उत्पादकों, मजदूरों और वेतनभोगी व्यक्तियों के बीच सहयोग की भावना पफैलाते हैं।य

6. **ब्रिटिश श्रम मन्त्रालय** (The British Mininstry of Labour) के अनुसार,प श्रमसंघ, वेतन भोगी, व्यावसायिक कर्मचारियों, तथा शारीरिक श्रम के बदले में आय प्राप्त करने वाले श्रमिकों सहित कर्मचारियों का एक संगठन है जिसका मुख्य उद्देश्य सदस्यों को रोजगार की दशाओं को ठीक रखने के लिए नियोक्ताओं से वार्ता (Negotiation) करना है।य

   (All organisations of employees including those of salaried and professional workers, as well as those of manual wage earners, which are known to include among their functions that of negotiating with employers with object of regulating conditions of employment)

7. **श्रमसंघ अधिनियम, 1926 की धरा 2** (h) (The trade Unions Act,1926, Section 2(h) के अनुसार,पश्रमिक संघ एक स्थायी अथवा अस्थायी संगठन है जो मुख्य रूप से श्रमिक और नियोक्ताओं के बीच अथवा श्रमिकों और श्रमिकों के बीच अथवा नियोक्ताओं और नियोक्ताओं के बीच सम्बन्धें का नियमन करने के लिए या किसी व्यापार अथवा व्यवसाय के कार्यों पर प्रतिबन्ध् लगाने के लिए बनाया जाता है। इसमें दो या अध्कि श्रमसंघों के संगठन सम्मिलत हैं।य[9]

   विभि विद्वानों ने श्रमिक संघ को अलग—अलग ढंग से परिभाषित किया है, किन्तु उपरोक्त सभी विद्वान यह मानकर चलते हैं कि—पश्रमिक संघ का प्रधन उद्देश्यों सदस्यों के हित में वृ(करना हैय जैसाकि अपनी परिभाषा में वैब (Web) ने कहा है।

   श्रमिक संघ की सभी परिभाषाओं में वैब (Web) द्वारा दी गई परिभाषा सर्वाध्कि लोकप्रिय रही है, बावजूद इसके कि इस परिभाषा में उन सभी कार्यों को, जो आधुनिक समय में श्रमिक संघ कर रहे हैं, सम्मिलित नहीं किया गया है। इसलिए वैब (Web) की परिभाषा में संशोध्न और विस्तार करने की आवश्यकता है।

एक श्रमिक संघ की उचित ;Appropriateद्ध परिभाषा इस प्रकार दी जा सकती है पश्रमिक संघ वेतन भोगी कर्मचारियों या मजदूरी पर काम करने वाले श्रमिकों का एक ऐच्छिक संगठन है जो अपने सदस्यों के हितों की रक्षा करने और उद्योग व समाज में उन्हें एक बेहतर और ठोस स्थान दिलाने का प्रयत्न करते हैं।य

श्रम संघों का जन्म एक प्रतिक्रिया मात्र है

(The origin of Trade Unions Due to Reaction)

श्रम संघों का विकास ;Growth) स्वयं (Spontaneous) हुआ है परन्तु वास्तव में इनके जन्म का कारण शोषण के विरू(प्रक्रिया मात्र है। आज के युग में उद्योगपति श्रमिकों की अपेक्षा मशीनों का प्रयोग अध्कि कर रहे हैं। मशीनीकरण ने ही

9. "Trade Union" means any combination, whether temporary or permanent, formed primarily for the purpose of regulating the relations between the between workman and employers, between workman and workman, of between employers and employers, or for imposing restrictive conditions on the conduct of any trade or business and include any federation of two or more trade unions.
–Section 2 (h), Trade Union Act, 1926.

अनेक श्रम समस्याओं को जन्म दिया है जिससे श्रमिकों का जीवन कष्टमय बन गया है। श्रमिकों के जीवन को कष्टों से राहत देने के लिए ही श्रम संघों का जन्म हुआ है। फश्रमसंघ श्रमिकों का वह स्थायी संगठन है जो श्रमिकों को शोषणपूर्ण क्रियाओं से बचाता है और उनके रहन–सहन के स्तर को ऊँचा रखकर उसके जीवन में खुशियाँ भर देता है।य

श्रमसंघों के आधरभूत तत्त्व या विशेषताएँ

(Basic Element or Characteristics of trade Unions)

भारतीय श्रम संघों की प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैं—

1. श्रमिक संघों का बुनियादी उद्देश्य अपने सदस्यों के हित में वृ(करना होता है।
2. श्रमिक संघों के अन्तर्गत—नियोक्ता संघ, कर्मचारी संघ, पेशेवर विशेषज्ञों का संघ तथा श्रमिकों का संघ सम्मिलित होते है।
3. श्रमिक संघ के बहुउद्देशीय कार्य होते है जैसे— आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक तथा सांस्कृतिक।
4. श्रम संघों की कार्य—प्रणाली में समय के अनुसार परिवर्तन होता रहता है।
5. श्रमिक संघों का जन्म एक प्रतिक्रिया मात्र है।

   इसका आशय यह है कि श्रमिक संघों का विकास स्वयं (Spontaneous Growth) हुआ है। उसका विकास शोषण के विरू(एक प्रतिक्रिया स्वरूप हुआ है।
6. श्रमिक संघ औद्योगिक प्रजातान्त्र और सामूहिक सौदेबाजी का आधर है। लेनिन ने कहा है—फश्रमिक संघ एक शिक्षा प्रदान करने वाला संगठन है— एक प्रशासकीय पाठशाला है। श्रमिक संघ एक आर्थिक प्रबन्ध का स्कूल है—तथा साम्यवाद का प्रवर्त्तक है।य

श्रमसंघों की आवश्यकता

(Needs of Trade Unions)

श्रम संघों की आवश्यकता निम्नलिखित कारणों से है—

1. श्रमिकों के जीवन को कष्टों से बचकर उसे सुखमय बनाने के लिए ही श्रमसंघों का जन्म हुआ। विशालकाय मशीनों के प्रयोग ने ही अनेक श्रम समस्याओं को जन्म दिया जिससे श्रमिकों का जीवन कष्टमय बन गया है।
2. श्रमिकों के अध्किारों को नष्ट होने से बचाने के लिए श्रमसंघों की आवश्यकता है।
3. श्रमिकों के कार्य के घण्टे, मजदूरी की दर, काम करने के स्थान पर उपलब्ध सुविधओं, श्रमिकों की कार्यकुशलता में वृ(आदि पर विचार करने के लिये।
4. श्रमिक संघों की आवश्यकता का कारण यह भी है कि श्रमिकों को बीमारी, बेकारी, वृ(ावस्था या मृत्यु के समय आवश्यक सहायता और सहारा चाहिए।
5. श्रमिक और नियोक्ता के बीच मध्ुर सम्बन्ध स्थापित करने के लिए भी श्रमसंघों की आवश्यकता होती है।
6. समाज एवं देश के लिए मजबूत श्रमसंघ या श्रम संघवाद न केवल आवश्यक है अपितु अनिवार्य भी है।

इस प्रकार हम देखते है कि श्रमिक संघ श्रमिकों का वह स्थायी संगठन है जो श्रमिकों को उद्योगपतियों की शोषणपूर्ण क्रियाओं से बचाता है तथा उनके रहन—सहन के स्तर को ऊँचा रखकर उनके जीवन को सुखमय बना देता है। पूजीवादी अर्थव्यवस्था में पूँजीपति अपने स्वार्थ की पूर्ति के लिए श्रमिक वर्ग का शोषण करने की नीति अपनाते हैं। व्यथित ;दुखीद्ध श्रमिकों ने अपने आपको इस शोषण से बचाने के लिये अपने श्रमसंघ बनाने प्रारम्भ कर दिये। इस प्रकार श्रमसंघों को जन्म देने वाला प्रधन कारण पूँजीवादी अर्थव्यवस्था है।

श्रम संघों के उद्देश्य
(objectives of Trade Unions)

भि —भि लेखकों ने श्रमसंघों के उद्देश्य अलग—अलग दिये हैं— जैसे ब्रिटिश ट्रेड यूनियन कांग्रेस ;British Trade Union Congressद्ध तथा फ्रलेण्ड्स और क्लेग ;Flandes and Cleggद्ध ने अलग—अलग उद्देश्यों का वर्णन किया है।

समस्त लेखकों द्वारा प्रतिपादित श्रमसंघों के उद्देश्यों में से प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं—

1. सेवायोजक (Employer) और श्रमिकों के बीच आपसी मतभेदों को समाप्त करके उनमें सहयोग की भावना पैदा करना।
2. श्रमिकों के अध्किारों की रक्षा करना।
3. श्रमिकों के बीच आपसी मतभेदों को समाप्त करके उनमें मैत्रीपूर्ण भावनाएँ उत्प करना।
4. विशेष कठिनाइयों के समय श्रमिकों का मार्गदर्शन करना।
5. श्रमिकों के कार्य करने के घण्टे, मजदूरी की दर, काम करने के स्थान पर उपलब्ध् सुविधओं व श्रमिकों की कार्यकुशलता आदि पर विचार करना तथा आवश्यकतानुसार उनमें सुधर करने के लिए कदम उठाना।
6. श्रमिकों के काम करने से सम्बन्ध्ति आँकड़े एकत्रित करना।
7. श्रमिकों तथा उनके परिवार के सदस्यों को आर्थिक, सामाजिक तथा नैतिक विकास करके शिक्षित करना।
8. सहकारी साख, चिकित्सा बीमा तथा प्राविडेण्ट पफण्ड (Provident Fund) आदि की योजनाएँ प्रारम्भ करना।
9. श्रमिकों को आवश्यकतानुसार वैधनिक सलाह देना।
10. श्रमिकों को इसे योग्य बनाना कि वह प्रबन्ध्कों से उचित सौदा कर सकें।
11. किसी संघर्ष के समय नियोक्ता से मिलकर शातिपूर्ण रीति से संघर्ष का समाधन करना।

श्रम संघों के कार्य
(Functions of Trade Union)

श्रमसंघों के विकास के प्रारम्भिक चरण में श्रमिकों के बीच भाईचारा स्थापित करना ही श्रम संघों का मुख्य कार्य था। अब श्रमसंघ विस्तृत रूप में कार्य कर रहे हैं जिनकी पूर्ण सूची बनाना सम्भव नहीं हैं अब श्रमसंघ का सम्बन्ध् केवल श्रमिकों के कार्यशील जीवन (Working life) से ही नहीं बल्कि सामाजिक, आर्थिक व औद्योगिक जीवन से भी हो गया है। वे केवल श्रमिकों के वेतन तथा सुविधओं में वृ(एवं कार्य की दशायें सुधरने का कार्य ही नहीं करते बल्कि वे सामाजिक तथा राजनीतिक क्षेत्र में भी श्रमिकों के हितों की रक्षा करने के लिए प्रयत्नशील हैं। ब्रिटेन जैसे देश में तो राजनीतिक सत्ता पर भी इनका अध्किार रह चुका है। संक्षिप्त रूप में इनके कार्यो को निम्नांकित रूप से प्रकट किया जा सकता है—

1. **कार्यरत जीवन से सम्बन्ध्ति कार्य (Function Relating to Factory Atmosphere):** श्रमिकों संघों के उद्गम का मूलभूत कारण मालिकों द्वारा श्रमिकों का शोषण था। इस रूप में श्रमिकों की रोजगार सम्बन्धी दशाओं में सुधर करने आदि कार्य प्रमुख है तथा प्रत्येक श्रम संघ इनकी ओर ही अध्कि प्रयत्नशील रहते हैं। इसके अन्तर्गत उचित वेतन, भत्ते, अनुकूल कार्य की दशायें, कार्य के घण्टों में कमी, मालिक तथा प्रबन्ध्कों का श्रमिकों के प्रति अच्छा व्यवहार आदि कार्य आते हैं। आधुनिक समय में संस्था के लाभ तथा प्रबन्ध् में श्रमिकों को भाग दिलाने के लिए श्रम संघ प्रयत्नशील हैं। अनेक देशों में तो उन्हें इस कार्य में सपफलता भी मिली है। इनकी प्राप्ति के लिए वे हड़ताल या सामूहिक अवकाश का सहारा लेते हैं।

श्रम संघों के कार्य
(Fuctions of Labour Unions)

कार्यगत जीवन से सम्बन्धित कार्य (Fuctions Relating to Factory Atmosphere) अथवा अन्तर्मुखी कार्य अथवा आन्तरिक कार्य ;Intra- mural fuctionsद्ध

श्रम संघों के आतंरिक कार्य

1. श्रमिकों को उचित मजदूरी दिलाना।
2. काम के घण्टों में कमी।
3. कार्य करने के स्थान पर विभि सुविधयें दिलाना।
4. औद्योगिक लाभ में श्रमिकों को हिस्सेदार बनवाना।
5. औद्योगिक प्रबन्ध में श्रमिकों को भाग दिलाना आदि

पफैक्ट्री से बाहर के कल्याण से सम्बन्धित कार्य ;Fuctions Relating to Welfare outside the Factory) अथवा बहिर्मुखी कार्य अथवा बाहर के कार्य ;Extra -mural fuctions)

श्रम संघों के बाहरी कार्य

1. अच्छे रहन—सहन की व्यवस्था करना।
2. सपफाई की व्यवस्था करना।
3. पानी की पर्याप्त सुविधएँ देना।
4. मूत्रालयों और शौचालयों का निर्माण करवाना।
5. श्रमिकों को शिक्षित करना।
6. पुस्तकालयों व वाचनालयों की व्यवस्था करना।
7. मनोरंजन की सुविधयें देना।

राजनीतिक कार्य ;Political fuctions)

श्रमिक संघ स्वयं चुनाव लड़ते हैं और अपने अध्कि से अध्कि सदस्य निर्वाचित करा कर अपनी सरकार बनाने को प्रयत्न करते हैं। श्रमिकों की सरकार बन जाने से उस देश में श्रमिकों के कल्याण में वृ(हो जाना और उनके जीवन का सुखमय बन जाना स्वाभाविक ही है।

2. **पफक्ट्री से बाहर के कल्याण कार्यो से सम्बन्धित कार्य (Fuctional Relating to Welfare Outside the Factory):** आवश्यकता के समय श्रमिकों को वित्तीय या अवित्तीय रूप से सहायता प्रदान करना भी श्रम संघों का महत्त्वपूर्ण कार्य है। ये श्रमिकों के पारस्परिक झगड़ो को सुलझाने और भ्रातभाव स्थापित करने का भी कार्य करते हैं। उनके ज्ञान में वृ(के लिए शिक्षा की व्यवस्था करते हैं, बिमारी, दुर्घटना या अन्य बुरे दिनों में वित्तीय सहायता प्रदान करते हैं, हड़ताल के दिनों में वेतन न मिलने की अवस्था में परिवार के जीवनयापन के लिए उचित वित्तीय सहायता देते हैं, उनके बच्चों की शिक्षा के लिए शिक्षा संस्थाएँ चलाते हैं, श्रमिकों तथा उनके परिवार के लिए पुस्तकालय खोलते हैं तथा सायंकालीन क्लब तथा सामुदायिक केन्द्र खोलते हैं कुछ श्रम संघ तो मकान योजना (Housing scheme) भी चला रहे हैं ताकि श्रमिका परिवारों को उचित मकान मिल सके। श्रमिकों को श्रम संघों के विकास एवं सामान्य ज्ञान तथा देश—विदेश की स्थिति से जानकारी रखने के लिए वे पत्रिकाये भी छपवाते हैं। इन सभी कार्यो की वित्तीय आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए श्रमिकों से निर्धरित चंदा लिया जाता हैं।
3. **राजनीतिक कार्य (Political Function):** विश्व के विकसित देशों में, जहाँ के श्रमिक शिक्षित है, श्रम संघों नेराजनीतिक क्षेत्र में भी भाग लेना आरम्भ कर दिया है। वे अनुभव करते हैं कि श्रमिकों को देश की सरकार में प्रतिनिध्त्वि देकर उनके हितों की रक्षा अध्कि कुशलता से की जा सकती है। कुछ देशों में तो वहाँ के श्रम संघ देश की सरकार पर अध्किार करने में प्रयत्नशीन हैं तथा इंग्लैण्ड में तो वे कई बार सरकार बना भी चुके हैं।

श्रम संघों के सि(ान्त
(Principles of Trade Union)

श्रमिक संघ के सि(ान्तों के विषय में भि —भि विद्वानों ने समय—समय पर अलग—अलग विचार प्रकट किये हैं जैसा कि निम्न से स्पष्ट होता है—

1. **मार्क्सवादी दृष्टिकोण (Karl Marx views)** श्रमिक संघवाद, सरकार और उद्योगों दोनों में अपने को क्रांतिकारी कार्यक्रम द्वारा पूँजीपतियों को पूरी तरह समाप्त करने के एक साध्न के रूप में पाता है।
2. **वेब** (Web) ने यह विश्वास प्रकट किया है कि श्रमिक संघ एक ऐसा साध्न है जिससे राजनीतिक जगत में पाये जाने वाले जनतंत्र के सि(ान्त को औद्योगिक क्षेत्र में पफैलाया जा सकता है।
3. **स्लिचर (Slitcher)** के अनुसार— श्रमिक अपने संघों द्वारा औद्योगिक न्याय की एक प(ति विकसित करते हैं जो उनको उनके कार्य में सुरक्षा प्रदान करती है।
4. **पर्लमैन** (Perlman) के अनुसार— श्रमिक संघ लगातार आर्थिक दशाओं एवं सम्बन्धें में सामाजिक एवं आर्थिक सुधर की व्यापक योजनाओं के द्वारा प्रगति का प्रयत्न करता है।
5. **टेनेबाम (Frank Tannenbaum)** के अनुसार— श्रमिक संघ औद्योगिक समाज के यन्त्रीकरण के विरू(एक अज्ञात बगावत है।
6. **गाँधीवादी दृष्टिकोण (Gandhian Theory)** के अनुसार— श्रमिक संघ आवश्यक रूप से एक सुधर लाने वाला संगठन तथा वर्ग सहयोग को बढ़ाने वाली आर्थिक संस्था है। पूँजी और श्रम को एक—दूसरे के प्रति सहायता करनी चाहिए। उन्हें एकता और शान्ति में रहने वाला एक बड़ा परिवार होना चाहिये।

अतः आजकल श्रमिक संघों के सि(ान्त इस प्रकार बताये जा सकते हैं—

1. **समाजवाद का सि(ान्त अथवा समान कार्य के लिए समान वेतन प्राप्त करने का सि(ान्त (Theory of Socialism or equal pay for equal work theory):** समाजवादी समाज को स्थापना करना तथा ध्न का समाज में समान वितरण करना यानी आदमी और औरतों को समान कार्य के लिए समान वेतन मिलना चाहिए (Men and women should recieve equal remuneration for work of equal value)
2. **सन्निहित हितों का सि(ान्त** (Doctrine of vested Interest): श्रमिक संघों को अपने कार्यक्रम इस सि(ान्त पर बनाने चाहिए कि जो कुछ उन्हें मिल रहा है उससे कम न मिले तथा श्रमिकों को प्राप्त सुविधएं तथा मजदूरी की दरों में किसी भी प्रकार कमी न आने पाये।
3. **माँग और पूर्ति के सि(ान्त अथवा एकता में ही शक्ति है (Theory of Supply and Demand or Theory if Unity is Strenght):** इस सि(ान्त की मान्यता यह है कि सामूहिक सौदेबाजी से अपने हितों की रक्षा की जा सकती है। जैसा कि निम्न पंक्तियों से स्पष्ट होता है।

   (All your strength is in your union; All you danger is in your discord; Therefore, be at peace hence-forward, and as brother, live together" **-Song of Hiawatha**
4. **आजीविका मजदूरी का सि(ान्त अथवा सुरक्षा का सि(ान्त (Theory of living wages or theory of Security of Service):** यह सि(ान्त श्रमिक संघों को अपने अध्कि सुरक्षित करने का अध्किार देता है। इसके अन्तर्गत उद्योग की लाभ अर्जन करने की क्षमता या भुगतान करने की क्षमता पर ध्यान न रखते हुए प्रत्येक श्रमिक को न्यूनतम आजीविका मजदूरी देने की गारण्टी तथा सेवा सुरक्षा की गारण्टी दी जाती है। जिससे श्रमिक आर्थिक, सामाजिक सुरक्षा के वातावरण में रह सकें।
5. **सहभागिता का सि(ान्त (Theory of Workers Participation):** एक समाजवादी समाज की स्थापना के लिए औद्योगिक जनतंत्र का विकास एक आवश्यक शर्त हैं यदि राजनीति व्यवस्था किसी अधेन (Subject) व्यक्ति को नागरिक

(citizen) बन सकती है तो **आर्थिक व्यवस्था** में भी औद्योगिक प्रणाली के अन्तर्गत अधीन श्रमिकों को सांझेदार श्रमिकों (Workers Partners) में बदल दिया जाना चाहिए। सामूहिक सौदेबाजी, संयुक्त प्रबन्ध परिषद, कार्य समितियाँ तथा श्रमिकों की प्रबन्ध में सहभागिता आदि कार्यक्रम इसी सि(ान्त पर बने हैं।

श्रम संघों का ढाँचा
(Structure of the Trade Union)

सामान्य रूप से प्रत्येक देश में श्रम संघों का ढाँचा चार प्रकार का होता है—

1. **दस्तकारी संघ (Craft-Union):** इन संघों को समतल (Horizontal) अथवा व्यवसाय (Occupational) संघ के नाम से पुकारा जाता है। यह रूप सबसे अध्कि प्राचीन एवं सरल है। ये संघ एक ही प्रकार के कौशल, योग्यता तथा प्रशिक्षण प्राप्त कर्मचारियों के संघ होते है। इन संघों के अध्किांश सदस्य शारीरिक श्रम करने वाले व्यक्ति होते हैं। भारत में अहमदाबाद वीवर्स यूनियन तथा कानपुर सूति मिल मजदूर सभा आदि इसके उदाहरण हैं।

   इंग्लैण्ड में भी दस्तकारी संघों को शक्तिशाली शत्रुओं के विरु(मोर्चा खड़ा करना पड़ा था और वहाँ का श्रमिक आंदोलन इन संघों की दूरदर्शिता का णी है।

2. **सामान्य श्रमिक संघ (General Labour Union):** यह एक व्यापक श्रमिक संगठन है। इसमें कोई भी व्यक्ति, चाहे उसके कार्य का स्थान या स्वभाव या उसकी औद्योगिक योग्यता कुछ भी हो , इस संघ का सदस्य बन सकता है। यह संघ किसी भी प्रकार की समस्या के लिए श्रमिकों का प्रतिनिध्त्वि करने के लिए सदैव तैयार रहता है।

3. **औद्योगिक संघ (Industrial Union):** ये संघ एक उद्योग में अथवा सम्बन्ध्ति उद्योगों या सेवाओं के एक समूह में कार्य करने वाले श्रमिकों का प्रतिनिध्त्वि करते हैं। ये संघ किसी भी उद्योग में कार्य करने वाले प्रत्येक श्रमिक को अपना सदस्य बना लेते हैं, चाहे उस श्रमिक में कारीगरी, निपुणता, श्रेणी या स्थिति सम्बन्धी कितना भी अन्तर क्यों

श्रम संघों का ढाँचा
(Structure of Trade Union)

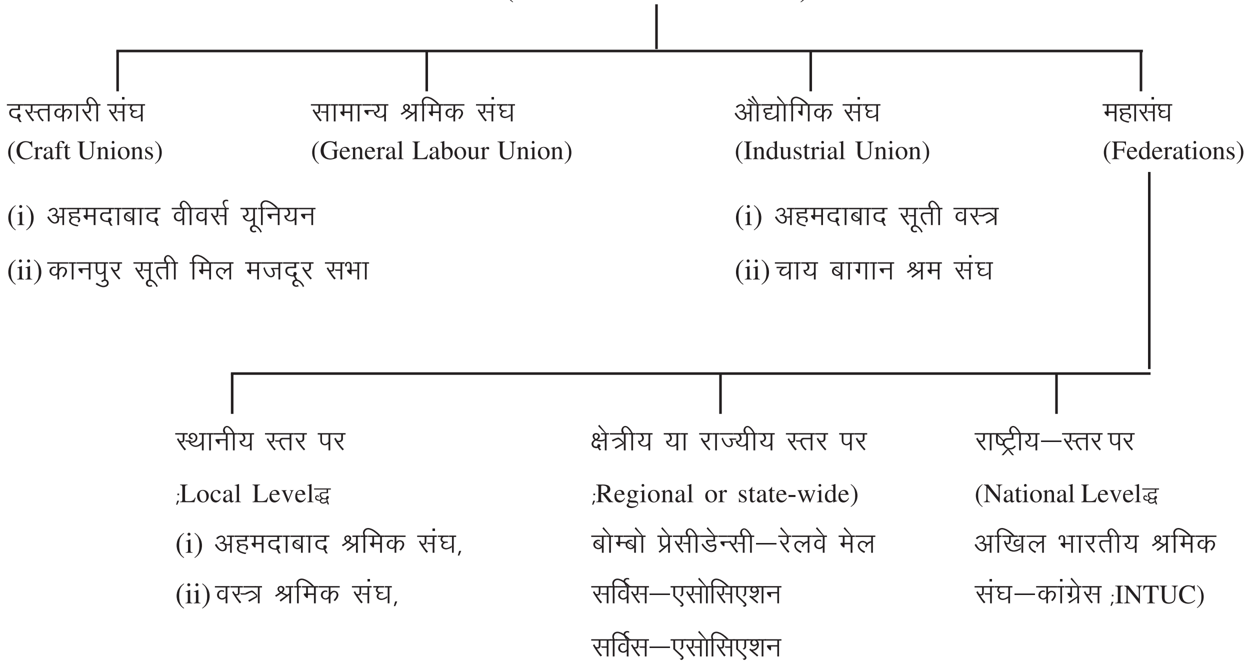

न हो। इस प्रकार के श्रम संघ ही अध्कि लोकप्रिय हैं। भारत में इस संघ के —फअहमदाबाद सूती वस्त्र उद्योगय तथा फचाय बागान श्रमिक संघय उदाहरण है।

एक विद्वान स्ट्रमथाल (Stramthal) ने ठीक कहा है कि फऔद्योगिक संघ के विकसित होने के पफलस्वरूप भारत में श्रम संघ व्यवसायी तथा दस्ताकारी ;Craft Union) युग को पार कर चुके हैं, पूँजीवादी अर्थव्यवस्था से निकल चुके हैं तथा कृषि उत्पादन से चलकर औद्योगिक उत्पादन में प्रवेश कर चुके हैं, यह एक ऐतिहासिक घटना तथा तथ्य है।य

महासंघ ;Federationद्ध— ये महासंघ विभिन्न संघों को शक्ति और मजबूती प्राप्त करने के लिए बनाये जाते हैं। ये महासंघ स्थानीय, क्षेत्रीय या राज्यीय तथा राष्ट्रीय स्तर पर कार्य कर सकते हैं। प्रत्येक श्रम संघ चाहे वह किसी उद्योग से सम्बन्ध्ति हो, महासंघों का उद्देश्य नये श्रम संघ स्थापित करना, संघों को शक्तिशाली बनाना आदि होता है।

उदाहरण

1. **स्थानीय स्तर पर**— (i) अहमदाबाद श्रमिक संघ, (ii) वस्त्र श्रमिक संघ।
2. **क्षेत्रीय या राज्यीय स्तर पर**— बोम्बे प्रेसीडेन्सी रेलवे मेल सर्विस एसोसिएशन।
3. **राष्ट्रीय स्तर पर**— अखिल भारतीय श्रमिक संघ कांग्रेस (INTUC)!

भारत में कुछ उद्योगों में एक ही श्रम संघ न होकर एक से अध्कि श्रम संघ हैं। ये श्रमिक संघ विभि अखिल भारतीय महासंघों ;Federationsद्ध से सम्बन्ध्ति हैं या उनका स्वयं का अस्तित्व है। कुछ श्रमसंघों को स्वयं केन्द्रीय संगठनों ने उद्योगों के लिए अपनी विशेष एजेन्सियों के रूप में स्थापित किया है।

श्रम संघों से लाभ
(Advantages from the Trade Unions)

श्रमिक संघ श्रमिकों के लिये बहुत ही अध्कि हितकर सि(हुए हैं। यह एक प्रकार से श्रमिकों के लिये रीढ़ की ह्यस्त्री के समान हैं अगर इनको श्रमिक का भगवान कहें तब भी कोई अतिशयोक्ति न होगी। श्रमिक संघों के प्रमुख लाभ निम्नलिखित हैं—

1. **उचित मजदूरी की प्राप्तिः** जब सेवायोजक श्रमिकों को कम मजदूरी देकर उनका शोषण करते हैं तब श्रमिक की समस्त आवश्यकताएँ पूरी नहीं हो मातीं जिससे उसका तथा उसके परिवार का जीवन कष्टमय हो जाता है। उसे अनेक संकटों का सामना करना पड़ता है। समय—समय पर उसे णदाता की शरण लेनी पड़ती है जो अन्त में उसके लिये हानिकारक सि(होती है। ऐसी दशा में श्रम संघ सेवायोजक से उचित मजदूरी (Fair wage) देने का अनुरोध् करते हैं। उचित मजदूरी की प्राप्ति से श्रमिकों के हाथ में क्रयशक्ति (Purchasing Power) बढ़ जाती है जिसके कारण अब वे पहले की अपेक्षा अध्कि वस्तुओं का उपभोग कर पाते हैं।
2. **शोषणपूर्ण नीति से रक्षाः** सेवायोजक, श्रमिकों के कार्य करने के घण्टों में वृ(करके तथा अवकाश का समय कम करके अपने स्वार्थ की पूर्ति का प्रयास करता है। इससे श्रमिकों की कार्यकुशलता कम होने लगती है तथा उनको जीवन बोझ लगने लगता है। श्रम संघ सेवायोजकों की इस प्रवृत्ति को नियन्त्रित करते हैं तथा श्रमिकों की शोषणपूर्ण नीति से रक्षा करते हैं।
3. **श्रमिकों की शिक्षित करनाः** श्रमिक संघ श्रमिकों तथा उनके परिवारों के सदस्यों को शिक्षित करके उनका मानसिक विकास करते हैं। इससे उनकी उत्पादन क्षमता बढ़ जाती है। तथा श्रमिक अन्य अनेक समस्याओं से अपने आपको बचाने के योग्य हो जाता है।
4. **राजनीतिक लाभः** श्रमिक संघों के राजनीतिक कार्य श्रमिकों को सरकार की सहानुभूति का पात्र बना देते हैं और सरकार श्रमिकों की समस्याओं रुचि लेकर उनके कल्याण के कार्य करने लगती है।
5. **मनोरंजन की सुविधएँः** श्रमिक संघ श्रमिकों के मनोरंजन के लिए भी अनेक योजनाओं को आयोजित करते हैं। उदाहरणार्थ— सिनेमा शो, खेल—कूद की व्यवस्था, पुस्तकालय आदि।

6. **श्रमिकों के रहन सहन का ऊँचा स्तरः** श्रमिक संघ श्रमिकों के जीवन के प्रत्येक क्षेत्र का विकास करते हैं जिससे उनका सामाजिक, आर्थिक, शारीरिक तथा मानसिक विकास सम्भव हो जाता है। इससे श्रमिक के जीवन का विकास होता है और उसका रहन–सहन का स्तर (Standard of living) ऊँचा हो जाता है, जो अन्त में श्रमिक की कार्य–क्षमता में वृ(करता है।
7. **उत्तरदायित्व और कर्त्तव्य की भावना जागृत करनाः** श्रमिक संघ श्रमिकों में उत्तरदायित्व तथा कर्त्तव्य की भावना को जागृत करते हैं जिससे वे उत्पादन कार्य में मन लगाकर वस्तु का अध्कि उत्पादन करने लगते हैं।
8. **औद्योगिक शांति स्थापित करनाः** एक आदर्श श्रमिक संघ देश में सदा औद्योगिक संघर्षों को समाप्त करके औद्योगिक शांति (industrial peace) की स्थापना करते हैं। इससे देश में उत्पादन की मात्रा में वृ(होती है।
9. **आर्थिक सहायताः** हड़ताल, तालाबन्दी, बीमारी, चोट तथा बेकारी के समय श्रमिकों की आय के साध्न समाप्त हो जाने से उनका जीवन कष्टमय हो जाता है। श्रमिक संघ इस प्रकार की स्थिति में श्रमिकों की आर्थिक सहायता करते हैं जिससे इन संकटों से श्रमिकों की रक्षा हो जाती है।
10. **एकता की भावना का प्रसारः** एकता की भावना सम्पूर्ण राष्ट्र को एक सूत्र में बांध् सकती है। इस प्रकार से आपसी सहयोग तथा एकता की भावना राष्ट्रीय सुरक्षा का वातावरण उत्पन्न कर देते हैं। वह एकता श्रमिकों को इतना सबल कर देती है कि शोषणकर्त्ता वर्ग का श्रमिकों के शोषण करने का साहस समाप्त हो जाता है और वह श्रमिकों के साथ सहानुभूति व्यवहार करने लगता है।

श्रम संघों से हानियां

(Disadvantages of Trade Unions)

श्रमिक संघ से निम्नलिखित हानियां हैं–

1. श्रमिक संघ के नेता स्वार्थी होते हैं इसलिये श्रमिक संघों के माध्यम से वे अपने स्वार्थ की पूर्ति के लिए कार्य ही करते हैं और अशिक्षित तथा भोले श्रमिकों को अन्ध्कार में रखकर उनके हितों की ओर से उदासीन रहते हैं।
2. अनेक श्रमिक संघ अपना प्रभाव दिखाने के लिए हड़ताल कराना ही अपना लक्ष्य बना लेते हैं तथ समय–समय पर श्रमिकों को भड़काकर हड़ताल करवा देते हैं। इससे एक ओर श्रमिकों को आर्थिक हानि होती है तथा दूसरी ओर उत्पादन कार्य में विध्न पड़ जाने से उपभोक्ता को कष्ट होता है, साथ ही राष्ट्रीय आय में कमी हो जाती है। इस प्रकार से औद्योगिक संघर्ष किसी देश के लिए लाभदायक नहीं है।
3. श्रमिक संघ नवीनता से घृणा करते हैं। औद्योगिक उत्पादन के गुण तथा मात्रा को बढ़ाने वाली नवीन विध्यिों का यह विरोध् करते हैं जिससे औद्योगिक विकास तीव्रगति से आगे न बढ़कर धीमी गति पकड़े रहता है। भारत में विवेकीकरण (Rationalisation) की योजना का श्रम संघों द्वारा विरोध् इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है।
4. श्रमिक संघ साम्यवादी विचारों पर आधरित होने के कारण श्रमिकों को साम्यवादी बना देते हैं। इससे श्रमिक हिंसक कार्यों में भाग लेने लगते हैं। इससे राष्ट्रीय सम्पति की हानि होती है।

इस प्रकार श्रमिकों संघ अनेक दोषों को भी अपने साथ लिए हुए हैं। प्रत्येक वस्तु में अच्छाई तथा बुराई का होना स्वाभाविक ही है। शायद विश्व में कोई भी ऐसी वस्तु नहीं मिलेगी जिसमें केवल अच्छाइयां ही हों और वह दोषरहित हो। अगर किसी वस्तु में दोषों की अपेक्षा गुण अध्कि हों तो उसे बिना किसी हिचकिचाहट के स्वीकार कर लेना हमारी बु(मित्ता होगी। इस प्रकार हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि हानियों के होते हुए भी श्रमिक संघ अध्कि महत्त्वपूर्ण हैं। विश्व में श्रम समस्याओं का समाधन केवल श्रम संघों के द्वारा ही सम्भव है।

श्रम आदोन्लन तथा श्रम संघ में अन्तर

(Difference between Labour Movement and Labour Union)

कुछ लोग कभी–कभी **'श्रम आंदोलन'** तथा **'श्रम संघ'** शब्द को एक ही अर्थ में प्रयोग करते हैं किन्तु श्रम आंदोलन श्रम संघ की तुलना में अध्कि व्यापक (Wider) शब्द है। श्रम आंदोलन के लिये विभिन्न उद्योगों में कार्यरत श्रमिकों में मजबूती (solidarity) का होना आवश्यक है। इस प्रकार श्रम संघ श्रम आंदोलन का एक आवश्यक आधर है। श्रम संघों

के बिना श्रम आंदोलन का अस्तित्व रहना सम्भव नहीं है। इस संदर्भ में G.D.H. Cole का कथन महत्त्वपूर्ण है– फश्रम संघ आंदोलन के विकास के लिए श्रम संघ आधर स्तम्भ होते हैं। क्योंकि की खास पाठशालाएँ हैं जहाँ ये आत्मनिर्भरता (self-reliance) तथा मजबूती का पाठ सीखते हैं **टेनेनबाम** (Tannebaum) के अनुसार– फ्व्यक्तियों के शोषण का विशेष कारण मशीनों का प्रयोग है और श्रम आंदोलन इसका परिणाम है और मशीन सबसे बड़ा कारण है कि श्रम आंदोलन औद्योगिक संस्था में लाभ की जगह सेवा तथा उद्योग में सेवा को प्रजातन्त्र से बदलकर समाज के औद्योगिक कार्यों पर पूरा नियंत्रण प्राप्त कर लेगा।य इस दृष्टि से श्रमसंघवाद का जन्म अपने आप हुआ है और ये पूँजीवाद की देन है।

भारत में श्रम संघ आंदोलन के विकास का इतिहास
(History of the Growth of Trade Union Movement in India)

अथवा

भारत में श्रम संघ आन्दोलन का इतिहास
(History of Trade Union Movement in India)

अथवा

भारत में श्रम संघ आन्दोलन
(Trade Union Movement in India)

यद्यपि भारतीय श्रमिक संघ आंदोलन का इतिहास बहुत संक्षिप्त है। परन्तु इस संक्षिप्त इतिहास में श्रम संघों ने जो क्रांति की लहर उत्पन्न की है, इस प्रकार की लहर विश्व के अन्य किसी देश के श्रमिक संघ आंदोलन के इतिहास में देखने को नहीं मिलती। यही भारतीय श्रमिक संघ आंदोलन के इतिहास की प्रमुख विशेषता है। प्रत्येक देश में श्रमिक संघ आंदोलन का जन्म औद्योगिक विकास के कारण हुआ। भारतीय श्रमिक संघ आंदोलन के साथ भी यही नियम लागू होता है। औद्योगिक क्रांति ने अन्य देशों में बहुत पहले जन्म लिया था परिणामस्वरूप उन देशों में श्रमिक संघ आंदोलन बहुत समय पूर्व से कार्यरत हैं परन्तु भारत में दूसरे देशों की अपेक्षा औद्योगिक क्रांति ने बहुत समय बाद जन्म लिया है जिसके कारण श्रमिक संघ आंदोलन का विकास भी देर से हुआ।

अध्ययन की सुविध की दृष्टि से भारत में श्रमिक संघ आंदोलन को 6 भागों में बांटा जा सकता है–

श्रमिक संघ आंदोलन

प्रथम चरण ;1875 से 1918 तकद्ध	समाज कल्याण का समय (Social Welfare Period)
दूसरा चरण ;1918 से 1924 तकद्ध	श्रमिक संघ का प्रारम्भिक काल (Beginning of Trade Union Era)
तीसरा चरण ;1924 से 1935 तकद्ध	साम्यवादी विचारधरा का समय (Communist Period)
चौथा चरण ;1935 से 1939 तकद्ध	श्रम संघ काल (Trade Union Period)
पांचवां चरण ;1939 से 1947 तकद्ध	द्वितीय विश्वयु(काल (2nd World War Period)
छठा चरण ;1947 से 1984 तकद्ध	आधुनिक समय (Modern Period)

प्रथम चरण (1875 से 1918) : समाज कल्याण का समय
(1st stages: Social Welfare Period)

1914 से पूर्व श्रमिकों के कल्याण के लिए जो भी प्रयास किए गए वे स्वयं श्रम संघों के द्वारा न किये जाकर धर्मिक नेताओं तथा समाज सुधरकों द्वारा ही किए गये थे।

1. बंगाल के पी0सी0 मजूमदार ने 1872 में बम्बई नगर में श्रमिकों के कल्याण के लिए रात्रि के 8 स्कूलों की स्थापना की थी। 1878 में कलकत्ता में कर्मचारी परिवारों के लिए एक मिशन की स्थापना की गई। इस मिशन (Mission) ने श्रमिकों के लिए रात्रि में पढ़ाने के विद्यालय प्रारम्भ किए थे।
2. 1882 से 1890 के दौरान मद्रास और बम्बई में 25 हड़तालों का उल्लेख है।
3. भारत में आधुनिक श्रम संघों की स्थापना 1875 में हुई, जब पहली बार बम्बई पफैक्टरी कमीशन के सामने, स्त्रियों और बच्चो की खराब दशा के विरू(दो महान् व्यक्तियों ;सोराबजी सपूरजी बंगाली और एन0 एम0 लोखण्डेद्ध ने प्रदर्शन किया। 1889 में लोखण्डे ने श्रमिकों के लिए सीमित कार्य के घण्टे, साप्ताहिक छुट्टी, मध्यावकाश आदि मांगों को स्वीकार करवाया। 1904—11 की अवध्ि में वास्तव में श्रम संघ आंदोलन पफैला।
4. बम्बई में अप्रैल 1990 में एक बड़ी सभा आयोजित की गई जिसमें 10,000 श्रमिक उपस्थित थे।
5. 1891 में पफैक्ट्ररी अध्निियम पास किया गया। श्री बंगाली और श्री लोखण्डे जी की मृत्यु से श्रमसंघ आंदोलन के विकास में बड़ी रूकावट आ गई। इसके बाद ऐसा कोई योग्य नेता नहीं मिला जिसकी देख—रेख में श्रमिक आंदोलन प्रगति के मार्ग पर आगे चलता रहे।
6. 1884 को श्रम आंदोलन का प्रारम्भिक काल माना जाता है। इसी समय कुछ महत्त्वपूर्ण श्रमसंघो की स्थापना हुई। इसी समय अनेक नियोक्ता संघ एवं उत्पादक संघ स्थापित हुए।
7. 1879 से 1881 के बीच Bombay and Bengal Chamber of Commerce, Calcutta Trading Association तथा British India Association आदि की स्थापना की गयी।
8. श्रम आंदोलन अध्कितर बाहरी विचारधरा, आदर्श तथा नेतृत्व पर निर्भर था। अध्किाशं संगठन अस्थाई तथा कमजोर थे।
9. भारत में प्रथम विश्वयु(;1914—18द्ध से पहले श्रमिक आंदोलनों ने संगठित स्वरूप नहीं लिया था। देश के कई इलाकों से इस शताब्दी के प्रथम 14 वर्षों की संगठित कारवाही के मामले सामने आये। कहीं यह कारवाही श्रमिकों की माँगों को लेकर हुई, तो कहीं राजनीतिक उद्देश्यों के लिए।
10. श्रमसंघों का नेतृत्व वकीलों, शिक्षित व्यक्तियों, समाज सुधरकों, सम्पादकों तथा शिक्षकों के हाथ में था।

दूसरा चरण (1918 से 1924): श्रमसंघों का प्रारम्भिक काल
(2nd Stage: Beginning of Trade Union Era)

सन् 1914 तक जीतने भी श्रमिक संघ बने उनकों वास्तव में श्रमिक संघ नहीं कहा जा सकता। वास्तविक अर्थों में श्रमिक संघों की स्थापना 1914—18 के प्रथम विश्वयु(के बाद ही हुई है। श्रमिक संघों के विकास में यु(की भी महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है। यु(से वापस आने वाले श्रमिकों ने श्रमसंघों का प्रचार किया । इसी समय बहुत से औद्योगिक संघर्ष हुए, परिणामस्वरूप श्रमिक संघों के लिए उचित आधर तैयार हो गया।

1. भारतीय श्रमिक संघ आन्दोलन की दृष्टि से सन् 1918 एक महत्त्वपूर्ण वर्ष था जबकि श्रमिक आंदोलन के आधुनिक इतिहास का शुभारम्भ हुआ। इस वर्ष श्रमिक संघ का नेतृत्व समाज—सुधरकों के हाथों से निकलकर राजनीतिज्ञों के हाथ में चला गया। 1918 में ही श्री वाडिया ने मद्रास के चुलाई नामक स्थान पर वस्त्र उद्योग के श्रमिकों को संगठित करके प्रथम श्रम संघों की स्थापना की। यह ऐसा समय था जबकि श्रम संघों की स्थापना बड़े जोर—शोर के साथ की जा रही थी। इस वर्ष 4 श्रमिक संघों की स्थापना की गई, जिनके 20 हजार सदस्य थे।

2. सन् 1917 से 1919 के अन्त तक कुल मिलाकर 17 नये श्रमिक संघों स्थापित हो चुके थे। इन श्रमिक संघों का विकास जुट एवं सूती वस्त्र उद्योग, रेलवे तथा परिवाहन उद्योगों में विशेष रूप से हुआ।
3. 1919 में अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (I.L.O) की स्थापना हुई। 1919 में अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन की स्थापना से देश में मजदूर संघों के विकास पर असल पड़ा। कुछ मजदूर संघों ने स्वतन्त्र रूप से कार्रवाई करने और अपनी गतिविध्यिाँ एक औद्योगिक केन्द्र इकाई तक ही सीमित रखने का पफैसला किया तो दूसरी ओर कुछ संघों ने राष्ट्रीय स्तर पर अपनी गतिविध्यिा में तालमेल की जरूरत महसूस की। भारतीय श्रमिकों के एक वर्ग ने अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन द्वारा प्रस्तावित अवसरों के माध्यम से श्रमिक वर्ग को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर संगठित करने का विचार रखा। इसके परिणामस्वरूप 1920 में अखिल भारतीय स्तर पर एक परिसंघ फअखिल भारतीय मजदूर संघ कांग्रेसय की स्थापना हुई।
4. अखिल भारतीय संघ कांग्रेस (All India Trade Union Congress): पहली ऐसी संस्था थी जिसने इस बात की घोषणा की कि सभी श्रमिकों का उद्देश्य एक ही है। इस कांग्रेस के प्रथम अध्विेशन का सभापतित्व लाला लाजपतराय ने किया था। इनके बाद इस संघ के अध्विेशन में कांग्रेसी नेता श्री देशबन्ध्ु चितंरजनदास, सुभाषचन्द्र बोस, पं0 जवाहारलाल नेहरू तथा श्री वी0 गिरी के नाम उल्लेखनीय हैं।
5. 1920 में महात्मा गाँधे के आह्वान पर अहमदाबाद टेक्सटाइल लेबर एसोसिएशन की स्थापना की गई।
6. 1922 में रेल कर्मचारियों ने एक अखिल भारतीय रेल कर्मचारी संघ की स्थापना की।

तीसरा चरण (1924 से 1935): साम्यवादी विचारधरा काल

(III rd Stage: Communist Period)

1. 1924 में साम्लयवादियों (Communists) के प्रभाव के कारण श्रमिकों की प्रवृत्ति संघर्षपूर्ण दिखाई दे रही थी जिसको ब्रिटिश सरकार किसी प्रकार से सहन नहीं कार सकती थी। परिणामस्वरूप विदेशी सरकार ने 1924 में कानपुर में साम्यवादी श्रमिकों पर षड्यन्त्र का आरोप लगाकर उनको बन्दी बना लिया। उन पर मुकदमा चलाया गया जिसमें उनको विभिन्न अवध्ि के लिए कारावास की सजा दी गई। इससे श्रमिकों के उत्साह को ठेस पहुँची। 1924 में इन्हीं नेताओं का प्रभाव पुनः बढ़ गया।
2. 1927 में एक अधिनियम पास किया गया जो भारत के श्रम संघ आन्दोलन के इतिहास व सदैव सूर्य की भाँति चमकता रहेगा। इस अधिनियम द्वारा रजिस्टर्ड श्रम संघों को कानूनी मान्यता प्राप्त हो गई।
3. 1927 में कानपुर की ट्रेड युनियन कांग्रेस ;जिनकी स्थापना कांग्रेसी नेताओं द्वारा हुई थीद्ध के अध्विेशन में विदेशी साम्यवादी नेताओं ने सक्रिय रूप से भाग लिया। इसी वर्ष मजदूर तथा किसान की स्थापना के उद्देश्य को लेकर साम्यवादियों ने बम्बई में एक नये संघ की स्थापना की जो गिरनी कामगार संघ के नाम से प्रसि(हुआ। इस संघ की सदस्यता 53 हजार हो गई तथा इस संघ ने 1928 में एक हड़ताल का आयोजन किया जो 6 महीने तक चली। इस हड़ताल की सपफलता ने साम्यावादियों के हौंसले बुलन्द कर दिये।
4. 1928 में ही साम्यावादियों ने झरिया में अखिल भारतीय ट्रेड यूनियन कांग्रेस (All India Trade Union Congress–AITUC) पर अपना अध्किार जमाने का प्रयास किया। इनके बढ़ते प्रभाव को देखकर सरकार चिन्तित हुई और उसने दोहरी नीति अपनाकर इसके बढ़ते प्रभाव को कम करने का प्रयास किया। दोहरी नीति में सरकार ने दो कार्य किए–प्रथम कार्य– साम्यावादियों का कठोरता से दबाने की नीति अपनाई जिसके अन्तर्गत साम्यवादी नेताओं को बन्दी बनाकर उन पर मुकद्दमा चलाया गया। यह मुकदमा मेरठ ट्रायल के नाम से प्रसि(है। दूसरा कार्य–सरकार ने सुधर के लिए कुछ वचन देने का वायदा किया।
5. 1929 में विश्व प्रसि(मेरठ षड्यन्त्र ट्रायल (Meerut Conspiracy Case) साम्यवादी नेताओं पर चला। यह मुकदमा चार वर्ष तक चलता रहा। यह मुकदमा विश्व के खर्चीले मुकदमों में से एक था। इस मुकदमे के अन्तर्गत साम्यवादी नेताओं को भिन्न–भिन्न अवध्ि की सजा देकर हतोत्साहित किया गया। इस मुकद्दमे से AITUC में पफूट पड़ गई, जो नागपुर सम्मेलन मे दिखाई दी।

6. 1929 के नागपुर के इस सम्मेलन में अखिल भारतीय ट्रेड युनियन कांग्रेस पर अधिकार जमाने के लिए साम्यवादी तथा सुधरवादी, दोनों नेताओं की ओर से प्रयत्न जारी थी। सन् 1929में कानपुर में पं0 जवाहरलाल की अध्यक्षता में जो 10वाँ अध्विेशन हुआ था। उसमें साम्यवादी नेताओं ने कुछ इस प्रकार के प्रस्ताव पास करा लिए थे जो पूर्णतया साम्यवादी विचारधरा पर आधरित थे। इनमें प्रमुख प्रस्ताव तो शाही श्रम आयोग का बहिष्कार करने से सम्बन्ध्ति था। परन्तु संयमी और शान्तिप्रिय श्रम नेता इन प्रस्तावों के पक्ष मे न थे जिसके परिणामस्वरूप श्री एन0 एम0 जोशी के नेतृत्व में शान्तिप्रिय तथा संयमी दल अखिल भारतीय ट्रेड यूनियन कांग्रेस से अलग हो गया और उसने एक नई संस्था की स्थापना की जो अखिल भारतीय ट्रेड यूनियन पफेडरेशन (ITUF) के नाम से प्रचलित है। आगे चलकर अखिल भारतीय ट्रेड यूनियन कांग्रेस के अध्यक्ष जब सुभाषचन्द्र बोस बने तब इसकी स्थिति और शोचनीय हो गई। मतभेद बढ़ गया जिसके परिणामस्वरूप सन् 1931 में श्री देशपांडे और श्री रणदिवे के नेतृत्व में एक नई संस्था की स्थापना कर दी गई जो अखिल भारतीय रैड ट्रेड यूनियन कांग्रेस (RTUC) के नाम से प्रचलित हुआ।

इस प्रकार हम देखते हैं कि आपसी मतभेद के कारण 1930 अखिल भारतीय ट्रेड यूनियन कांग्रेस तीन भागों में बँट गयी—AITUC, ITUF और RTUC । परन्तु खोई एकता को पाने का पुनः प्रयत्न किया गया।

चौथा चरण (1935 से 1939): श्रमसंघ काल

(4th Stage: Trade Union Period)

1934 में पं0 हरिहरनाथ शास्त्री की अध्यक्षता में फ्ट्रेड यूनियन कांग्रेसय का वार्षिक उत्सव आयोजित हुआ जिसमें साम्यवादियों से समझौता हो जाने के कारण रैड ट्रेड यूनियन कांग्रेस (RTUC) को समाप्त करके इसके नेता पुनः अखिल भारतीय ट्रेड यूनियन कांग्रेस (AITUC) में सम्मिलित हो गये।

श्री वी0 गिरी के कठिन प्रयत्नों के पफलस्वरूप 1938 में फ्नेशनल ट्रेड यूनियन पफैडरेशनय (NTUF) का भी INTUC में विलय हो गया तथा इससे इस संगठन ने खोई हुई एकता पुनः प्राप्त कर ली। इस प्रकार जो संस्था आपसी मतभेदों के कारण तीन भागों में बँट गई थी वही संस्था पुनः एक हो गई।

पांचवां चरण (1939 से 1949): द्वितीय विश्वयु(काल

(5th stages 2nd World War Period)

1. सन् 1939 में पुनः मतभेद उत्पन्न हो गए। राष्ट्रीय कांग्रेस के समस्त अनुभवी नेता जेलों में चले गए थे जिसके कारण AITUC पर पुनः साम्यवादियों का अधिकार हो गया। इस संस्था के कुछ ऐसे अनुयायी थे जो दूसरी लड़ाई के विरोध में तटस्थ रहना चाहते थे तथा कुछ इस लड़ाई में पूर्णतया सहयोग देने के पक्ष में थे। लड़ाई में सहयोग देने वाले श्रमिकों ने श्री एम0 एन0 राय के नेतृत्व में एक अलग संस्था की स्थापना की जो इण्डियन पफैडरेशन ऑपफ लेबर (IFL) के नाम से पुकारी गई। इस संस्था को ऊँचा उठाने के लिए सरकार ने इसकी आर्थिक सहायता की। सन् 1994 तक IFL का तीव्रगति से विकास हुआ। इस समय तक 222 श्रमिक संघ इसके सदस्य थे जिनकी संख्या 4.7 लाख थी।
2. यु(के समय संघ की दो अखिल भारतीय संस्थाएं कार्य कर रही थीं—;कद्ध अखिल भारतीय ट्रेड यूनियन कांग्रेस (AITUC) और ;खद्ध इण्डिन पफैडरेशन ऑपफ लेबर (IFL) शुरू मे सरकार ने इण्डियन पफैडरेशन ऑपफ लेबर के साथ पक्षतापूर्ण व्यवहार किया था, परन्तु शीघ्र ही सन् 1944 में सरकार ने यह स्वीकार किया कि अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनों (International Conferences) में दोनों ही संस्थाओं को बारी—बारी से प्रतिनिध्वि करने का अधिकार प्राप्त होना चाहिए। इसी मान्यता को व्यावहारिक रूप प्रदान करने के उद्देश्य से सन् 1944 में इण्डियन पफैडरेशन ऑपफ लेबर से अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन के लिए और सन् 1945 में ट्रेड यूनियन कांग्रेस से प्रतिनिध्ि भेजने की सलाह ली गई। सन्1946 में सरकार ने यह पता करने का प्रयत्न किया कि इन दोनों संस्थाओं में से कौन— सी संस्था श्रम कल्याण के अध्कि कार्य कर रही है। जाँच के अनुसार ट्रेड यूनियन काँग्रेस ही ऐसी संस्था घोषित की गई जो अध्कि लोकप्रिय बनकर कार्य कर रही थी।
3. द्वितीय विश्वयु(का श्रम संघों पर गहरा प्रभाव पड़ा। श्रमसंघों में सौदा करने की क्षमता तथा नियोक्ताओं के साथ वार्तालाप करने की क्षमता आ गई। इस दौरान श्रमसंघों की संख्या में बहुत अधिक वृ(हुई। श्रम संघों की प्रगति का

कारण—मूल्यवृ(ि, यु(कालीन पंचनिर्णय तथा श्रमिकों में जागृति थी। इसके अतिरिक्त Indian Trade Union Act, 1946, Industrial Relations Act, 1946, तथा औद्योगिक बिल आदि ने श्रमिकों के अन्दर राजनीतिक चेतना उत्पन्न की।

छठा चरण (1947 से 1984): आधुनिक समय
(6th stage Modern Period)

1. सन् 1947 में स्वतन्त्रता प्राप्ति के समय कांग्रेस सरकार ने पुनः यह देखा कि ट्रेड यूनियन कांग्रेस पर साम्यवादियों का अध्कि अध्कार था, इसलिए उसने श्रम समस्याओं का समाधन हिन्दुस्तान मजदूर सेवक संघ के द्वारा करने का प्रयास किया। वह ट्रेड यूनियन कांग्रेस को साम्यवादियों के नियन्त्रण से बाहर निकालकर अपने नियन्त्रण में लाने का प्रयत्न करने लगी। परन्तु मई, 1947 में जो सम्मेलन हुआ उसमें राष्ट्रीय कांग्रेस के प्रमुख नेताओं ने भाग लिया और इस सम्मेलन में अखिल भारतीय ट्रेड यूनियन कांग्रेस (INTUC) नाम की नई संस्था की स्थापना की निर्णय किया गया।
2. इस संस्था को कांग्रेस का समर्थन प्राप्त होने के कारण तीव्र प्रगति का अवसर प्राप्त हुआ। 1946 तथा 1947 में अखिल भारतीय ट्रेड यूनियन कांग्रेस (AITUC) ने ही अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में श्रमिकों का प्रतिनिध्त्वि किया था, परन्तु 1947 में अखिल भारतीय राष्ट्रीय ट्रेड यूनियन कांग्रेस ने श्रमिकों के अध्कि प्रतिनिध्त्वि का दावा किया। सरकार सन्1948 मे जाँच के उपरान्त इस निष्कर्ष पर पहुँची कि देश में भारतीय राष्ट्रीय ट्रेड यूनियन कांग्रेस (INTUC) का प्रतिनिध्त्वि अध्कि था। इसी कारण उस समय से राष्ट्रीय सम्मेलनों में इसी संस्था ;अखिल भारतीय राष्ट्रीय ट्रेड यूनियन कांग्रेसद्ध का प्रतिनिध्त्वि प्राप्त हो रहा है।
3. सन् 1948 में सामाजवादियों के पृथक् हो जाने के बाद इसका एक और विभाजन हो गया और इन समाजवादियों ने हिन्द मजदूर सभा (HMS) नाम की संस्था की स्थापना की और श्री एम0 एन0 राय के नेतृत्व में, जो भारतीय पफैडरेशन ऑपफ लेबर (IFL) नाम की एक अलग संस्था की स्थापना हुई थी वह भी इसी हिन्द मजदूर सभा में सम्मिलित हो गई। सन् 1947 में प्रो0 के0 टी0 शाह और श्री मृणाल कान्ति बोस के नेतृत्व में श्रमिकों की एक नई संस्था स्थापित की गई जो संयुक्त ट्रेड यूनियन कांग्रेस UTUC) के नाम से प्रचलित हुई। इसी समय रेलवे कर्मचारियों के एक नवीन संघ की भी स्थापना की गई । इसका प्रमुख कारण यह था कि रेलवे कर्मचारियों के पुराने संघ पर समाजवादियों का अध्किार हो गया था और जो कर्मचारी समाजवादी विचारधरा को स्वीकार नहीं करते थे उन्होनें मिलकर श्री हरिहरनाथ शास्त्री की अध्यक्षता में एक नये संघ की स्थापना की जो पभारतीय राष्ट्रीय रेलवे कर्मचारी संघघ के नाम से जाना जाता है।
4. 1949 में श्रमिक संघ पुनः विभाजित हो गये। इस समय मुख्य रूप से चार श्रमिक संघ उल्लेखनीय थे जो इस प्रकार थे—

संक्षिप्त नाम	पूरा नाम	विचारधरा
NTUC इंटक	Indian National Trade Union Congress भारतीय राष्ट्रीय श्रम संघ कांग्रेस	कांग्रेसी
AITUC ऐटक	All India Trade Union Congress संयुक्त श्रम संघ कांग्रेस	साम्यवादी
UTUC उटक	Union Trade Union Congress संयुक्त श्रम संघ कांग्रेस	निष्पक्ष
HMS एच॰एम॰एस॰	Hind Mazdoor Sabha हिन्द मजदूर सभा	वामंपथी

5. 1955 में भारतीय जनसंघ पार्टी ने भारतीय मजदूर संघ (B.M.S.) की स्थापना की।

   1959 में पहिन्दू मजदूर पंचायतय (HMP), 1962 में फ्दी पफैडरेशन ऑपफ पफ्री ट्रेड यूनियनय (The Federation of Free Trade Union), 1970 में सेण्टर ऑपफ इण्डियन ट्रेड यूनियन (centre of indian Trade Unions) (CITU) की स्थापना की गई।

6. मजदूर संघों की सदस्यता: मजदूर संघों को अन्तराष्ट्रीय श्रम संगठन सहित राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर त्रि—पक्षीय सलाहकार समितियों, विकास परिषदों और बोर्डो आदि में प्रतिनिध्वि देने के लिए श्रम आयुक्त कार्यालय ;केन्द्रीयद्ध, केन्द्रीय मजदूर संघ संगठनों की सदस्यता की जाँच—पड़ताल करता है। 31 दिसम्बर,1968 तक के लिए चार केन्द्रीय मजदूर संघ सगठनों से सम्ब(संघों की सदस्यता की आम जाँच—पड़ताल 1969 के दौरान की गई थी। ये संगठन है—भारतीय राष्ट्रीय मजदूर संघ कांग्रेस,अखिल भारतीय मजदूर संघ कांग्रेस, हिन्द मजदूर सभा और सयुंक्त मजदूर संघ कांग्रेस।

भारतीय श्रमिक संघों की वर्तमान स्थिति
(Present Position of Indian Trade Union)

वर्तमान समय में 43000 रजिस्टर्ड श्रम संघ तथा 10 केन्द्रीय मजदूर संघ ;Central Labour OrganisationS) भारतवर्ष में कार्यरत है।

हाल में ऐसे अनेक नये मजदूर संगठन बने हैं, जो अखिल भारतीय स्वरूप और सदस्यता का दावा करते है। अतः दस केन्द्रीय मजदूर संघ संगठनों से सम्ब(संघों की 31 दिसम्बर, 1977 और 31 दिसम्बर, 1979 तक की सदस्यता की जाँच—पड़ताल करने का पफैसला किया गया। ये केन्द्रीय श्रमिक संगठन ;Central Labour Organisationद्ध है—

1. भारतीय राष्ट्रीय मजदूर संघ कांग्रेस (INTUC)
2. अखिल भारतीय मजदूर संघ कांग्रेस (AITUC)
3. हिन्द मजदूर सभा (HMS)
4. यूनाइटेड ट्रेड यूनियन कांग्रेस (UTUC)
5. सेण्टर ऑपफ इण्डियन ट्रेड यूनियन (CITU)
6. भारतीय मजदूर संघ (BMS)
7. यूनाइटेड ट्रेड यूनियन कांग्रेस (UTUC) (LS)
8. नैशनल पफ्रण्ट ऑपफ इण्डियन ट्रेड यूनियन (NFITU)
9. ट्रेड यूनियन कोआर्डिनेशन सेंटर (TUCC)
10. राष्ट्रीय श्रम संगठन (NLO)।

श्रमिकों के केन्द्रीय संगठनों के बीच आम सहमति ने होने के कारण जाँच का काम शुरू नहीं हो सका। उनमें तीव्र मतभेद होने के कारण सरकार ने एक उपाय निकाला। इसके अनुसार दस केन्द्रीय संगठनों से कहा गया कि वे 31 दिसम्बर, 1980 तक सदस्यता की जाँच के लिए अपने दावे पेश करें। एटक और सीटू को छोड़कर सभी केन्द्रीय संगठनों ने अपने दावे पेश किए। एटक और सीटू से सम्ब(मजदूर सदस्यों की सूची मजदूर संघों के पंजीयक के कार्यालय से प्राप्त की गई। जाँच—पंचड़ताल का काम नवम्बन, 1981 में शुरू किया गया। अब यह काम पूरा हो गया है और 31 दिसम्बर,1980 की अन्तिम जाँच—पचंड़ताल के परिणामों की घोषणा निम्न सारणी में दी गई। यह घोषणा 30 अगस्त, 1984 को की गई।

क्र॰ सं॰	केन्द्रीय संगठन	अभ्यर्थित क्लेम्ड		प्रमाणित	
		संघों की संख्या	सदस्यता	संघों की संख्या	सदस्यता
1	2	3	4	5	6
1	इंटक	3,457	35,09,326	1,604	22,36,128
2	बी॰ एम॰ एस॰	1,725	18,79,728	1,333	12,11,345
3	एच॰ एम॰ एस॰	1,122	18,48,147	426	7,62,882
4	यूटक ;एल॰एस॰द्ध	154	12,38,891	134	6,21,359
5	एन॰ एल॰ ओ॰	249	4,05,189	172	2,46,540
6	यूटक	618	6,08,052	175	1,65,614
7	टी॰यू॰ सी॰ सी॰	182	2,72,229	65	1,23,048
8	एन॰ ए॰ आइ॰ टी॰ यू॰	166	5,27,375	80	48,123
9	एटक	1,366	10,64,330	1,080	3,44,746
10	सीटू	1,737	10,33,432	1,474	3,31,031
	योग	10,776	1,23,86,669	6,543	61,26,816

नोटः इन आकड़ो में डाक—तार विभाग के BMS के 13 संघों तथा इंटक के एक संघ को सम्मिलत नहीं किया गया है क्योंकि इस विषय पर एक आपात्ति उठाई गई है। **Source:** India 1986

भारतीय श्रम संघ के विकास के प्रेरणा स्रोत
(Sources of Growth of IndiaTrade Unions)

अथवा

भारतीय श्रम संघों के विकास में सहयोग देने वाले तत्व
(Determinents of Indian Trade Union Growth)

भारत में श्रम संघों के विकास के लिए चार पहलू अध्कि प्रभावशाली रहे—

1. प्रथम विश्वयु((First World War),
2. अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (International Labour Organisation),
3. समाल सुधरक (Social Reformers), एवं राजनीतिक नेताओं का प्रभाव (Effect of Political Leaders)
4 रूस की क्रान्ति।

1. वास्तव में श्रम संघों का विकास प्रथम विश्वयु(से ही हो सका है। इस दौरान मूल्य वृ(हो रही थी, उत्पादक मनचाहा लाभ प्राप्त कर रहे थे परन्तु श्रमिकों के वेतन यथास्थित थें। परिणामस्वरूप श्रमिकों का जीवन—स्तर अस्त—व्यस्त हो गया। प्रतिक्रियास्वरूप श्रमिकों में एकता बढ़ती गई। जैसाकि स्वयं श्री वी॰वी॰ गिरि ने कहा था—फ्प्रथम विश्वयु(की विभीषिका ने मूल्यों में वृ(की किन्तु श्रमिकों के वेतन उसके अनुपात नहीं बढ़ाये गये, जबकि नियोक्ता वर्ग ने प्रचुर मात्रा में लाभ प्राप्त किया। परिणामस्वरूप कापफी संख्या में श्रम संघ स्थापित हुए।य़[10]

---

10. "The close of this war saw the beginning of the labour movement in the truly modern sense of the term. Economic and Political conditions alike eontributed to the new awakening. Prices had shot up during the war, and there has been no corresponding increase in the wages, though the employers had amassed fantastic profits. In the political field, new ideas were in the air.....................
All this was reflected in profound labour unrest and this was a marked feature of the twenties.
These conditions led inevitably to the formation of a large number of Trade Unions."
***V.V. Giri** 'Labour Problems in Indian Industry." P. 4.*

2. अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन की स्थापना ने भी आग में घी का काम किया यानी श्रम संघों की शक्ति को बढ़ाया और श्रम संघों की स्थापना के लिए आधर तैयार किया।[11]

3. भारत में श्रम संघ आन्दोलन का प्रारम्भ समाज—सुधरकों द्वारा हुआ और इसका पालन—पोषण राजनीतिक नेताओं द्वारा हुआ। कुछ सीमा तक राजनीतिक वातावरण तथा राजनीतिक नेताओं के प्रयत्न भी श्रम संघों की स्थापना तथा विकास के कारण रहे है। श्री लोकमान्य तिलक द्वारा आन्दोलन प्रारम्भ करना, महात्मा गाँधि का असहयोग आन्दोलन आदि ने श्रम संघों के विकास में बहुत योगदान किया।

4. रूसी क्रान्ति और साम्यवादियों के बढ़ते हुए प्रभाव ने भी श्रम संघों के विकास में सहयोग दिया था।[12]

भारतीय श्रम संघ आन्दोलन की विशेषताएँ
(Characteristics or Features of the Trade Union Movement of India)

अथवा

भारतीय श्रम संघ आन्दोलन के दोष और समस्याएँ
(Weakness and Problems of the Trade Union Movement of Indiaa)

भारतीय श्रमिक संघ अभी भी बाहरी नेताओं पर आश्रित हैं जो अपने साथ स्प(एिँ एवं राजनीतिक विचार लाते हैं जिनसे श्रम संघें को स्वस्थ इकाई के रूप में बनाये रखने में सदेव सहायता नहीं मिलती। कापफी प्रयासों के बाद भी भारतीय श्रमसंघ आन्दोलन अभी पूर्ण विकसित नहीं है। पश्चिमी देशों और विकसित देशों की अपेक्षा भारतीय श्रमसंघ आंदोलन कमजोर तथा बिखरा हुआ है। भारतीय श्रम संघ आंदोलन की प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैः

भारतीय श्रमसंघ आंदोलन

आन्तरिक विशेषताएँ अथवा बाधएँ

1. सदस्यता का लघु आकार,
2. देश में शिक्षा का नीचा स्तर होना,
3. तकनीकी शिक्षा की कमी,
4. श्रमिकों की प्रवासी स्वभाव,
5. श्रमिकों की विभिन्नता,
6. श्रमिकों की निर्धनता और मजबूरी का नीचा स्तर,
7. श्रमिक नेताओं का श्रमिक में से न होना,
8. श्रमसंघों के बीच परस्पर सहयोग की कमी
9. सामूहिक कल्याण की भावना का अभाव,
10. काम करने की दशाएं असंतोषजनक,
11. विध्वंसकारी नीति,

बाहरी विशेषताएँ या बाधएँ

1. मध्यस्थों द्वारा विरोध।
2. सेवायोजकों द्वारा विरोध–
   (i) विरोधी श्रम संघों की स्थापना,
   (ii) भ्रष्टाचारपूर्ण नीति,
   (iii) रहने के स्थान में पक्षपातपूर्ण व्यवहार।

---

11. "A more direct cause for the formation of Trade Union was the establishment of the I.L.O.
12. The great upheaval in Russia after the fall of Czar and the establishment of communist state in Soviet Russia, gave a further fillip to the worker's cause in India. *–Ibid. P. 5*

1. **श्रम संघों की सदस्यता का छोटा आकार (Small size of membership of the indian Trade Unions):** भारतीय श्रम संघों की सदस्यता का आकार बहुत छोटा है। परिणामस्वरूप यह श्रमसंघ उद्देश्यों को पूरा करने में अध्कि प्रभावशाली सि(नहीं हो सके है। कुल औद्योगिक श्रमिकों में बहुत ही कम श्रमिक ऐसे हैं जो श्रम—संघों के सदस्य है। सदस्यता की इस कमी के अनेक कारण हैं— भारतीय श्रमिक गरीब है और मासिक चन्दे का भुगतान करने की स्थिति में न होने के कारण वे संघों के सदस्य नहीं बनते। इसके अतिरिक्त जातीय तथा भाषा—भेद के कारण भी श्रमिक संघों का सदस्य बनते समय संकोच करते हैं। एक भाषा बोलने वाले श्रमिकों के संघ का, दूसरी भाषा बोलने वाले श्रमिक, सदस्य बनना पसन्द नहीं करते। श्रमिक संघों का सदस्य बन जाने से श्रमिक को सेवायोजक घृणा की दृष्टि से देखने लगता है तथा उसे अनेक सुविधओं से वंचित रखता है। कुछ उद्योगों में श्रम संघ की सदस्यता का प्रतिशत इस प्रकार है—खान उद्योग में 41÷ निमार्ण उद्योग, गैस उद्योग तथा बिजली उद्योग में 36÷ से 45÷ बागान उद्योग में 28÷ बीमा तथा रेलवे उद्योग में 33÷, बैकों में 51÷ कोयला उद्योग में 41÷, तम्बाकू उत्पादन में 75÷ तथा इस्पात उद्योग में 63÷।

2. **अशिक्षित श्रमिक (un–educated workers):** भारतीय श्रमिक की यह खास बात विशेषता है कि उसको शिक्षा न मिलने के कारण उसका पूर्ण मानसिक विकास नहीं हो सका है। परिणामस्वरूप अन्य देशों की तुलना में उनकी कार्यक्षमता बहुत कम है। अशिक्षित होने के कारण वे अपने उत्तरदायित्व तथा कर्त्तव्यों से भी बेखबर हो रहे है। जब तक श्रम संघ का सदस्य अपने कर्त्तव्यों तथा उत्तरदायित्व की ओर जागृत नहीं होगा तब तक वह संघ कभी भी सपफल नहीं हो सकता।

3. **तकनीकी शिक्षा की कमी (Lack of technical education):** तकनीकी शिक्षा के अभाव के कारण श्रमिक में कार्यकुशलता की कमी नियोक्ता को श्रमिकों की माँगों को पूरा करने में रुकावट डालती है जिससे श्रम संघ अपने उद्देश्यों की पूर्ति में असपफल हो जाते है। श्रम संघ की असपफलता के कारण श्रमिक इन संघों के कार्यों में रुचि लेना बन्द कर देते हैं, जिससे श्रम संघों का विकास रुक जाता है।

4. **प्रवासी स्वभाव (Migratory character of workers):** औद्योगिक संस्थाओं के बहुत से श्रमिक काम करने नजदीक के ग्रामों से आते है और सायंकाल अपने ग्राम वापिस चले जाते है। इस प्रवृति के कारण वह श्रमिकसंघों के सदस्य बनना ही पसन्द नहीं करते। जो श्रमिक संघों के सदस्य बन जाते हैं वे भी सक्रिय रूप से इन संघों के कार्यों में रुचि नहीं लेतें। त्यौहारों के अवसर पर वे अपने—अपने ग्रामों में चले जाते हैं। किसी औद्योगिक संस्था में श्रमिक संघ जब हड़ताल की व्यवस्था करता है तो औद्योगिक नगर में ही रहकर इन हड़तालों में सहयोग दें ताकि कहीं पर दुर्बलता रह जाने के कारण हड़ताल असपफल न होने पाये। श्रमिकों का प्रवासी स्वभाव इन हड़तालों को असपफल कर देता है।[13]

5. **श्रमिकों की विभिन्नता (Heterogenity of the workers):** भारतीय श्रमिक औद्योगिक संस्थाओं में देश के विभिन्न क्षेत्रों से आते है जहाँ विभिन्न भाषाओं का प्रयोग किया जाता है तथा रहन—सहन, खाना—पीना, पहनावा आदि में भी विभिन्नता होती है। एक ही औद्योगिक संस्था में जो श्रमिक कार्य करते हैं वे विभिन्न ध्र्मों को मानने वाले विभिन्न प्रकार के स्वभाव के व्यक्ति होते है, जिनके कारण उन श्रमिकों का एक श्रमिक संघ में सगठित करना कठिन हो जाता है। अतः एक जाति के श्रमिक अन्य जाति के श्रमिकों के साथ रहना, बोलना,खाना—पीना तथा साथ–साथ कार्य करना पसन्द नहीं करते। इस प्रकार की विभिन्नताओं ने श्रमिकों के संगठन को दुर्बल कर दिया है।

6. **श्रमिकों की निर्ध्नता और मजदूरी का निम्न स्तर (Poverty and low level of wages of workers):** भारतीय श्रमिकों के परिवार बड़े है जिनकी आवश्कताओं की पूर्ति के लिए अध्कि ध्न की आवश्यकता होती है। परन्तु उनको

---

13. "The majority of our workers still remain an inarticulate, incoherent and floating mass and have not yet become self-conscious. Permanent class with a well recognised status and with distinct right and Privileges as with well-developed sense of duty and obligation in modern industrial society."

–Rama, Shiva State: ***in Relation to Labour in India. Chapter VI.***

जो मजदूरी दी जाती है वह बहुत की कम है जो उनके तथा उनके परिवार के लिए पर्याप्त नही होती। अनेक आवश्यकताओं से श्रमिकों को वंचित रहना पड़ता है। विशेष परिस्थितियों में इन श्रमिकों को महाजन तथा पठानों की शरण में जाकर ण तथा ब्याज का भुगतान करना पड़ता है। आर्थिक दशा की दुर्बलता के कारण श्रमिक इन संघों का प्रवेश शुल्क तथा मासिक शुल्क नहीं दे पाते जिसके कारण श्रमिक उनके सदस्य ही नही बनते । सदस्य श्रमिकों की इस प्रकार की कमजोर आर्थिक स्थिति के कारण संघ अच्छे कोषों की स्थापना नहीं कर पाते जिससे श्रम— संघों की आर्थिक स्थिति भी दुर्बल हो जाती है और उनके पास आवश्यकतानुसार ध्न न होने के कारण वे असपफल हो जाते है। कोषों की कमी के कारण ही श्री राबर्टस (roberts) ने भारतीय श्रमिक संघों को कागजी संघ कह कर पुकारा है।

7. **श्रमिक नेताओं का श्रमिकों में से न होना (outside leadership):** भारत में श्रमिक—संघ आन्दोलन का नेतृत्व वकीलों, समाज सुधरकों तथा राजनीतिज्ञों द्वारा हुआ है। इन बाहरी व्यक्तियों के अपने—अपने स्वार्थ होते हैं जिनकों पूरा करने के लिए यह नेता—वर्ग श्रमिक संघ आंदोलन को तोड़—मोड़ कर इसका सहारा लेते है। इन नेताओं को श्रम समस्याओं का कतई ज्ञान नहीं होता जिसके कारण श्रमिक संघ विध्वंसकारी कार्यो में लग जाते है। इन राजनीतिक नेताओं, ध्ुरन्ध्रों का एक ही उद्देश्य होता है कि अपना उल्लू सीध करो। भारतीय संघ ऐसे मंझधर में पफँसे हुये हैं जिससे निकलना आसान नहीं है। अकसर ये बाहरी व्यक्ति राजनीतिक अखाड़े के खिलाड़ी होते है जिनमें स्वार्थ की भावना कूट—कूट कर भरी होती है। वे राजनीति के दूषित वातावरण में पले और बड़े होने के कारण श्रमिक संघ आंदोलन के वातावरण को भी दूषित कर देते हैं। ऐसे व्यक्ति अपने स्वार्थ को लेकर आते है और उसी स्वार्थपूर्ति के लिए श्रम संघों को पफूँक देते है।

8. **श्रम संघों के बीच परस्पर सहयोग का अभाव (lack of mutual co-operation between trade Unions):** भारत में संघों राजनीतिक दलों के आधर पर बने है जिसके कारण इन संघों के बीच उसी प्रकार के सम्बन्ध हैं जिस प्रकार के सम्बन्ध राजनीतिक दलों के बीच पाये जाते है। विभिन्न राजनीतिक दल परस्पर एक—दूसरे के बीच दोष निकालना, कार्य की आलोचना करना तथा एक—दूसरे की सपफलता मे मार्ग में बाध्क बनकर उसे असपफल बनाने का प्रयत्न करना ही अपना कर्त्तव्य समझते है। यही स्थिति इस समय भारत में श्रम संघों की है। विभिन्न श्रमिक—संघों का आधर विभिन्न राजनीतिक विचारधराएँ होने के कारण वे एक—दूसरे की सपफलता के लिए सहयोगी बनने के स्थान पर उनकी सपफलता के मार्ग मे बाध्क बनकर खड़े होते हैं तथा उनके कार्यो की आलोचना करके उस संघ के सदस्य श्रमिकों को सदस्यता तोड़ने के लिए उकसाते है।

9. **सामूहिक कल्याण की भावना का अभाव (lack of spirit of collective welfare):** भारतीय श्रमिक सदैव स्वयं के हितों को ध्यान में रखकर कार्य करते हैं परिणामस्वरूप प्रत्येक श्रम संघ अपने स्वार्थ पर ध्यान देता है। इस प्रकार जिस उद्योग में या औद्योगिक इकाई में एक से अध्कि श्रम संघ होते है वे आपसी स्वार्थ एवं पफूट में ही एक—दूसरे के ऊपर कीचड़ उछालते रहते है। यदि एक श्रम संघ हड़ताल करता है। तो दूसरा श्रम संघ उस हड़ताल को तोड़ता है। श्रमिक संघों को तो व्यक्तिगत स्वार्थ के स्थान पर सामूहिक स्वार्थ या हितों को ध्यान में रखकर चलना चाहिये लेकिन भारतीय श्रम संघ इस भावना से काम नहीं करते।

10. **कार्य की दशांए सन्तोषजनक नहीं (unhealthy working conditions of the workers):** भारतीय श्रमिक की कार्य करने की दशायें अस्वास्थ्यप्रद तो हैं ही, खतरनाक, थका देने वाली तथा हानिप्रद भी है। काम करने की ऐसी दशाओं में भारतीय श्रमिक 8 से 10 घण्टे तक कार्य करने के बाद शाम को जब अपने घर वापिस लौटता है तो बहुत थका हुआ होता है। उसकी दशा एक बीमार व्यक्ति की भाँति होती है। ऐसी स्थिति में वह पहले तो आराम करना चाहेगा जिससे उसकी थकान मिट सकें या कम हो सके। इस थकान के बाद उसके पास श्रम संघ की बैठकों में भाग लेने का समय ही नहीं बचता। परिणामस्वरूप श्रम संघ कमजोर होते जाते हैं। उन्हें अपने कार्यों के लिए श्रमिक कार्यकर्त्ता नहीं मिल पाते।

11. **विध्वंसकारी कार्य (destructive function):** अधिकांश भारतीय श्रमिक संघ अपने राजनैतिक स्वार्थपूर्ति के लिए असमय बिना सोचे—विचारे औद्योगिक इकाइयों में तोड़—पफोड़, हड़तालें तथा संघर्षपूर्ण वातावरण को जन्म देते है। इस प्रकार भारतीय श्रमिक संघ रचानात्मक कार्यो के स्थान पर विध्वंसकारी कार्यों पर अधिक बल देते है। श्रमिक संघों की इस विध्वंसकारी नीति ने सेवायोजकों के मन में श्रम संघ के प्रति घृणा उत्पन्न कर दी है। इसलिए अधिकांश नियोक्ता वर्ग श्रम संघों का कड़ा विरोध करता है। यही कारण कि भारत में श्रम संघ आंदोलन अभी भी पूर्ण विकसित नहीं हो पाया है।

12. **राजनीतिक प्रभाव (Political effect):** भारत मे श्रम संघों को जन्म राजनीतिक दलों ने दिया है, राजनीतिक दलों ने ही इनका पालन—पोषण किया है। 1884 में भारत में श्रम संघ आंदोलन की शुरूआत श्री एन0 एम0 लोखण्डे द्वारा हुई थी लेकिन शीघ्र ही भारतीय श्रम संघ आंदोलन की बागडोर राजनीतिक नेताओं के हाथ में चली गई।

    (i) गाँधी जी ने अहमदाबाद में सूती वस्त्र संघ की स्थापना की थी।

    (ii) 1926 तक श्रमिक संघ आंदोलन भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस पार्टी के नियंत्रण में रहा।

    (iii) इसके बाद श्रमिक आंदोलन पर साम्यवादियों का एकाधिकार स्थापित हो गया। इन्होंने श्रम संघों की आड़ में अपने राजनीतिक षड्यंत्रों की रचना की।

    (iv) 1947 में सम्पूर्ण भारतीय श्रम संघ आंदोलन विभिन्न राजनीतिक दलों के आधर पर बिखर गया जैसे—INTUC कांग्रेसीद्ध, AITUC ;साम्यवादी विचारधराद्ध, UTUC ;साम्यवादी या थोड़ी—निष्क्ष विचारधराद्ध, तथा HMS ;वामपंथी विचारधराद्ध में बँट गये।

13. **श्रमिकों के एक केन्द्रीय श्रमसंघ का अभाव (Lack of one central Trade Union of the Workers):** भारत में एक केन्द्रीय श्रमिक संघ के अभाव में विभिन्न श्रमिक संघ अपनी—अपनी ढपली और अपना—अपना रोग अलपते रहते है यानी एक श्रमिक संघ दूसरे श्रमिक संघ के कार्यों में बाध उत्पन्न करता रहता है। वर्तमान समय में केन्द्रीय स्तर पर भारत में 11 श्रम संघ है, जिनकी तालिका (Table) इस अध्याय के अन्तर्गत पहले दी जा चुकी है। भारत में केन्द्रीय श्रमिक संघों की अधिकता ने भारतीय श्रमिक संघ आंदोलन को कमजोर किया है।

श्रम संघ आंदोलन के विकास में बाहरी बाधएँ
(Out Side Interference in the Development of Trade Union Movenment)

भारतीय श्रम संघ आंदोलन या श्रम संघों के विकास के मार्ग में अनेक प्रकार की शक्तियाँ या कारण रहे हैं जिन्होनें इस आंदोलन को बड़ी ठेस पहुँचाई है ये कारण निम्न हैं—

1. **मध्यस्थों द्वारा विरोध (Opposition of Intermediaries):** भारतीय उद्योगपति स्वयं प्रत्यक्ष रूप से श्रमिक को कार्य पर न लगाकर मध्यस्थों द्वारा लगता है। इससे मध्यस्थों को श्रमिकों से रिश्वत और आय प्राप्त होती है। इसलिए ये मध्यस्थ सदैव यह प्रयास करते है कि श्रमिक संघ असपफल हो जाये जिससे वे श्रमिकों की विवशता का पफायदा उठा सकें। यदि श्रम संघ प्रगति करता है तो श्रमिक आत्मनिर्भर बनता है। इसलिए प्राचीनकाल से ही ये मध्यस्थ श्रमिकों का खून चूसते चले आ रहे है तथा श्रम संघों का कड़ा विरोध करते हैं।

2. **सेवायोजकों द्वारा विरोध (Opposition of exployes):** श्रमिक संघ आंदोलन के शक्तिशाली बन जाने से श्रमिकों की समस्त माँगों का सेवायोजकों को पूरा करने के लिए विवश होना पड़ता है जिससे सेवायोजकों को आर्थिक हानि होती है। इस आर्थिक हानि से बचने के लिए सेवायोजकों सदा इस श्रम आंदोलन को असपफल करने का प्रयास करता रहता है। इसे असपफल करने के लिए वह उचित तथा अनुचित सभी प्रकार के साध्नों को अपनाता है।

    नियोक्ता वर्ग श्रम संघों को निम्नलिखित हथियारों से असपफल करने का प्रयास करता है—

    (i) **विरोधी संघों की स्थापना:** सेवायोजकों कुछ विरोधी संघों (Rival Union) की स्थापना को प्रोत्साहन देते है, जिससे वे श्रमिक संघों के साथ प्रतियोगिता कराकर उनको नष्ट कर सकें।

(ii) **भ्रष्टचारपूर्ण नीतिः** सेवायोजक श्रमिक संघों के नेताओं को विभिन्न प्रकार की रियातें देकर अपनी ओर मिला लेते है जिससे वे सेवायोजकों के विरोध में कोई कार्य न कर सकें। यह नेता गुप्त रूप से सेवायोजकों का साथ देने लगते है और बनावटी रूप से अपने आपको श्रमिकों का नेता कहकर उन्हें धेखे में डाल देते हैं। इसके अतिरिक्त सेवायोजक सच्चे श्रमिक नेताओं को गुण्ड़ों द्वारा पिटवाकर हतोत्साहित करते हैं। पण्डित जवाहरलाल नेहरू तथा डॉ0 राजेन्द्रप्रसाद ने कहा था कि जमशेदपुर गुण्डो का अड्डा चला जा रहा है।

(iii) **निवास व्यवस्था में पक्षपातपूर्ण व्यवहारः** जो श्रमिक संघों में सक्रिय रूप से भाग लेते हैं उनको रहने की सुविध प्रदान नही की जाती और अगर पहले से प्रदान कर दी गई है तो किसी प्रकार से वापिस ले लिया जाता है। इसके अलावा श्रम संघों के सदस्य श्रमिकों को अन्य सुविधओं से भी वंचित रखा जाता है तथा उनका नाम ब्लैकलिस्ट करके झूठे आरोप लगाकर काम से भी अलग कर दिया जाता है। इस प्रकार की क्रियायें सेवायोजकों द्वारा इसलिए की जाती है ताकि वे श्रमिक संघों के सदस्य बनकर इनके कार्यक्रमों में भाग न लें। इस प्रकार स्पष्ट है कि सेवायोजक श्रम संघ के विकास में एक बहुत बड़ी बाध है।

भारत में श्रम संघ आंदोलन को मजबूत बनाने के उपाय
(Measures of Strengthening Trade Union Movenment in India)

अथवा

भारतीय श्रमिक आंदोलन के विकास के उपाय
(Measures for the Growth and Development of Indian Trade Union Movement)

औद्योगिक प्रजातंत्र की स्थापना तथा श्रमसंघों का सपफलता एवं इनके विकास के लिए निम्नलिखित सुझाव दिये जा सकते है–

1. शत–प्रतिशत सदस्यता,
2. एक उद्योग में एक ही श्रम संघ,
3. शिक्षा एवं प्रशिक्षण सुविधओं का विस्तार,
4. वेतन प्राप्त कार्यकर्त्ता,
5. श्रमिक संघ के बीच एकता की स्थापना,
6. राजनीति से दूर,
7. हड़ताल कोष की स्थापना,
8. मजबूत आर्थिक स्थिति,
9. श्रमिकों में उत्तरदायित्व की भावना भरना
10. तकनीकी विशेषज्ञों की नियुक्ति
11. श्रमिकों को प्रबन्ध में भाग देना,
12. जनमत को अनुकूल बनाना,
13. आंतरिक नेतृत्व (Leadership from within),
14. उचित मजदूरी,
15. सेवायोजकों द्वारा सहयोग,
16. कार्य करने की दशाओं में सुधर करना,
17. रचनात्मक कार्यों पर बल।

1. **शत–प्रतिशत सदस्यता (100»Membrership):** किसी भी संघ की शक्ति और सपफलता उसके सदस्यों के आकार पर निर्भर करती है। इसलिए भारतीय श्रम संघों की सपफलता का मूलमंत्र उसकी शत–प्रतिशत सदस्यता का होना है। जब तक भारतीय श्रमिक संघों में सभी श्रमिक सदस्य नहीं बनेगें या 80÷ से 90÷ तक सदस्यता नहीं होगी उस समय तक श्रम संघ सपफल नही हो सकते।

2. **एक उद्योग में एक ही श्रमिक संघ (One Union one Industry):** श्री बी0 वी0 गिरी के अनुसार एक उद्योग में एक ही श्रम संघ होना चाहिए। इससे श्रम संघ अध्कि प्रभावी ढंग से काम कर सकेगा। ऐसा होने पर संघों के आपसी मतभेद समाप्त हो जायेगें।[14]

3. **शिक्षा एवं प्रशिक्षण सुविधओं का विस्तार (Extension of Educational and training facilities):** श्रमिकों को अभी भी शिक्षा और प्रशिक्षण देने के साध्नों का पर्याप्त मात्रा में विस्तार नहीं हो पाया है जबकि स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद सरकार ने इस क्षेत्र में कुछ कार्य अवश्य किया है। पिफर भी नियोक्ताओं, श्रम संघों तथा सरकार को मिलाकर श्रमिकों के लिए बड़े पैमाने पर शिक्षा एवं दीक्षा का कार्यक्रम चलाना चाहिए क्योकि अशिक्षित श्रमिक की अपेक्षा शिक्षित श्रमिक अपने कर्त्तव्यों तथा उत्तरदायित्व को शीघ्र ही समझ जाता है। समस्त श्रमिकों को शिक्षित तथा प्रशिक्षित कर देने से उनकी कार्यक्षमता बढ़ सकती है। जिससे उत्पादन लागत में कमी होगी और नियोक्तावर्ग संघों की माँगों को पूरा करने के लिए तैयार हो जायेगा। शिक्षित श्रमिक का मानसिक विकास भी हो जाता है जिससे वह कार्य की गुप्त ग्रन्थियों को शीघ्र समझने लगता है। शिक्षित श्रमिक आन्दोलन के महत्त्व को शीघ्र समझ सकता है जिससे इसकी सदस्यता में अपना ही हित देखकर वह सदस्य बनना अपना गौरव समझता है, अन्यथा एक अशिक्षित श्रमिक अपना मौलिक विचार व्यक्त नहीं करेगा बल्कि दूसने के विचारों का समर्थन करता रहेगा जो श्रमिक संघ को सपफल नहीं बना सकते। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् सरकार शिक्षा के विस्तार में लगी हुई है।

4. **वेतन प्राप्त कार्यकर्त्ता (paid Union Officials):** जब तक श्रमिक संघों के कार्यकर्त्ता थोड़े समय के लिए बिना पारिश्रमिक या वेतन दिये रखे जाते रहेगें उस समय तक श्रम संघ का कार्य सुचारू रूप से नहीं चलेगा क्योंकि ये अवैतनिक कार्यकर्त्ता एक तो पूरा समय श्रम संघों को नहीं देते, दूसरे बेईमानी करने से भी नहीं चुकते। इसलिए श्रम संघों का तेजी से विकास करने के लिए यह परमावश्यक है कि इन संघों में पूरे समय (Whole Time) के लिए वैतनिक कार्यकर्त्ता रखे जाँए।

5. **श्रमिक संघों के बीच एकता की स्थापना (Unity in different Trade Unions):** भारतीय श्रमिक संघों में आपसी सहयोग की भावना न होकर एक दूसरे से प्रतिद्वन्दिता की भावना है। वे समय—समय पर एक दूसरे को गिराने का प्रयास करते है। इस प्रकार की भावनाओं का अन्त करके जब तक उनमें आपसी सहयोग व एकता की भावना को उत्पन्न नहीं किया जायेगा तब तक इस आन्दोलन का विकास नहीं हो सकता। वास्तव में श्रम संघों की सपफलता केवल श्रम संघों की अपनी व्यवस्था, योग्यता एवं दूरदर्शिता पर निर्भर करती है। अन्य स्रोतों से मिलने वाली सहायता पर निर्भर नहीं रहा जा सकता। समस्त श्रमिक संघ एक ही संस्था के अधीन होने चाहिएँ। अतः इस समय भारत में जो 11 केन्द्रीय संस्थाएँ कार्य कर रही हैं उनको मिलाकर एक ही संस्था का निर्माण किया जाना चाहिए। इससे श्रमिक संघ आन्दोलन की शक्ति बढ़ेगी।

6. **राजनीति से दूर (Away from Politics):** श्रमिक संघ एक पवित्र संगठन होता है, जिसका उद्देश्य एवं कार्य श्रमिक वर्ग के कल्याण में वृ(करना होता है। जब इन संघों में राजनीति प्रवेश कर जाती है तो ये संघ कल्याणकारी न होकर विध्वंसकारी कार्यो में लग जाते हैं। भारत में तो ये संघ राजनीतिक नेताओं की गोद में जन्मे तथा यहीं इनका पालन —पोषण हुआ। अतः इनके विकास के लिए अभी भी यह प्रयास होना चाहिए कि इनको राजनीति से दूर रखा जाए।

---

14. "A Strong Trade Union Movement is, therefore, necessary both to safeguard the interests of labour and to help in achieving the target of production. If the trade union movement is not united and strong enough to achieve those objectives the industrial structure to be built in India in the basis of full-fledged socialised democracy would not have firm foundations and the the state inspite of its best ideals and designs would find it difficult to assume fundamental rights to the working class.

–**V.V. Giri:** *Labour Problems in Indian Industries.*

7. **हड़ताल कोष की स्थापना (Creation of Strike fund):** हड़ताल कोष की स्थापना करके संघों द्वारा आयोजित हड़तालों को लम्बे समय तक चलाया जा सकता है। इस कोष का प्रयोग हड़ताल की स्थिति में गरीब श्रमिकों के लिए भोजन तथा अति आवश्यक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए किया जा सकता है। इससे श्रम संघों का तेजी से विकास होगा क्योंकि वे अपने उद्देश्यों की पूर्ति में सपफलता प्राप्त कर सकेंगे।

8. **मजबूत आर्थिक स्थिति (Strong Financial Position):** भारतीय श्रमिक संघों के पास ध्नराशि की बहुत कमी है। प्रत्येक संस्था का विकास उसकी आर्थिक स्थिति पर निर्भर करता है, ठीक इसी प्रकार श्रम संघों को भी अपने कार्यक्रम चलाने के लिए बड़ी मात्रा में ध्न की आवश्यकता होती है। इसलिए श्रम संघों के सदस्यों को समय पर अपने चन्दे की राशि का भुगतान करना चाहिए तथा अन्य स्थानों से चन्दा करके अपनी आर्थिक स्थिति को मजबूत करना चाहिए।

9. **श्रमिकों में उत्तरदायित्व की भावना भरना (To Create Spirit of Responsibility):** श्रम संघों के सदस्यों को उनके कर्त्तव्यों तथा उत्तरदायित्व की भावना के प्रति संजग करना होगा। इससे वे संघ के कार्यक्रमों में सक्रिय भाग लेंगे और श्रमिक संघ अपने उद्देश्यों में अध्कि सपफल होगें।

10. **तकनीकी विशेषज्ञों की नियुक्ति (Appointment of Technical Personnel):** अगर तकनीकी विशेषज्ञों की नियुक्ति कर दी जाये तो वे सेवायोजक से वाद–विवाद करके श्रमिकों की माँगों को पूरा करा सकते हैं। परन्तु भारत में श्रमिक संघ के नेताओं ने इसका सदैव ही विरोध् किया है जिसके कारण श्रमिकों की सौदा करने की दुर्बल शक्ति के कारण श्रमिकों को सदा ही दबना पड़ा है।

11. **श्रमिकों को प्रबन्ध् में भाग देना (Workers Participatiion in Management):** सेवायोजक श्रम संघों की माँगों की उपेक्षा करते है तथा उसे असपफल करने का प्रयास करते रहते हैं। यदि श्रमिक स्वयं औद्योगिक प्रबन्ध् में भाग लेने लगें तो श्रम संघों के विरोध् में कोई पग नहीं उठाने दिया जाएगा तथा श्रम संघों की माँगों को शीघ्रता से पूरा कराया जा सकेगा।

12. **जनमत को अनुकूल बनाना (Favourable Public Opinion):** श्रमिक संघ, श्रम कल्याण का कार्य करके प्रसिि(प्राप्त कर सकते हैं, तथा जनता को अपनी ओर आकर्षित करके लोकमत अपने पक्ष में कर सकते हैं जिससे श्रमिक संघ आन्दोलन के विकास में जनता भी सहयोग दे सकती है।

13. **आन्तरिक नेतृत्व (Leadership from Within):** श्रमिक संघों की प्रगति श्रमिक संघ के नेताओं पर निर्भर हुआ करती है। एक योग्य, परिश्रमी नेता संघ को प्रगति की ओर ले जा सकता है। परन्तु दुर्भाग्यवश भारतीय श्रमिक संघों के नेता श्रमिकों में से न होकर बाहरी व्यक्ति हैं जो श्रम समस्योओं से अनभिज्ञ हैं तथा स्वार्थ में पड़ हुए हैं। अतः आवश्यकता इस बात की है कि श्रम संघ आन्दोलन को, राजनीति से दूर रखकर श्रमिकों में से किसी नेता के नेतृत्व में कर दे। इससे श्रम संघ आन्दोलन का विकास होगा।

14. **उचित मजबूरी (Fair Wage):** भारतीय श्रमिकों को जो मजदूरी दी जाती है वह बहुत की कम है, उस मजबूरी से उनके परिवार की आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं होती। ऐसी दशा में श्रमिक चन्दों का भुगतान नहीं कर पाता। इसलिए यह उनका सदस्य ही नहीं बनता। अगर श्रमिक के लिए उचित मजदूरी की व्यवस्था कर दी जाए तो उसकी आर्थिक स्थिति में सुधर होगा जिससे वह संघ का सदस्य बनकर नियमित रूप से चन्दे का भुगतान करेगा।

15. **सेवायोजकों द्वारा सहयोग (Co-Operation by Employers):** हमारे यहाँ श्रम संघों द्वारा ऐसा वातावरण स्थापित करना चाहिये जिससे नियोक्ता वर्ग श्रम संघों के शत्रु न बनकर मित्र बनें। इसके लिए सबसे उत्तम उपाय यह है कि श्रमिक संघ अपनी विध्वंसकारी नीति को त्यागें और रचनात्मक कार्यों में लगें। श्रमिक संघ केवल जायज माँगे ही नियोक्ता वर्ग के सामने रखें और उनको सामूहिक सौदेबाजी से पूरा करायें। इससे नियोक्ता के ह्रदय में श्रम संघों के प्रति घृणा की भावना समाप्त होगी और उसके स्थान पर सहानुभूति, सहयोग का वातावरण बनेगा।

16. **श्रमिकों की कार्य करने की दशाओं में सुधर (To improve the working conditions of the workers):** औद्योगिक संस्थाओं में जिन स्थानों पर श्रमिक काम करते हैं वहाँ के दूषित वातावरण को शु(बनाकर श्रमिकों के स्वास्थ्य की रक्षा की जा सकती है जिससे उनकी कार्यक्षमता में वृ(होगी तथा दिन भर कार्य करने के बाद जब

सांयकाल वे घर वापिस लौटेंगे तो शारीरिक व मानसिक थकान इतनी नहीं होगी जितनी पहले हुआ करती थी। परिणामस्वरूप श्रमिक संघ के कार्यें में सक्रिय रूप से भाग लेंगे।

17. **रचनात्मक कार्ये पर बल (Emphasis on constructive functions):** श्रमिक संघों को जनता तथा सेवायोजको एवं सहानुभूति प्राप्त करने के लिए उनको श्रमिकों के लिए रचनात्मक कार्ये की रूपरेखा तैयार करनी होगी अन्यथा सेवायोजक, श्रमिक तथा जनता का सहयोग इस संघों को प्राप्त नहीं होगा।

श्रम संघों को निम्न रचनात्मक कार्ये पर विशेष ध्यान देना चाहिए

1. श्रमिकों के लिए मकानों की व्यवस्था
2. शिक्षा एवं प्रशिक्षण सुविधओं का विस्तार
3. काम करने की दशाओं में सुधर
4. उचित मजदूरी की व्यवस्था करना
5. वेतन सहित अवकाश की व्यवस्था
6. सेवायोजक द्वारा शोषण के विरू(रक्षा।
7. बीमारी, चोट, दुर्घटना के समय चिकित्सा सुविधएँ उपलब्ध कराना तथा बेकारी के समय आर्थिक सहायता प्रदान करना।
8. मनोरंजन के साध्नों की व्यवस्था करना आदि।

भारतीय श्रमिक संघ उपरोक्त या सुझावों पर यदि अमल करें तो उनके विकास के रास्ते में आने वाली अध्किाशं बाधएँ समाप्त हो जाएंगी।

अच्छे श्रमसंघ के आवश्यक तत्त्व
(Requisites of a good Trade Union)

अथवा

एक मजबूत और सपफल श्रम–संघ की विशेषताएँ या तत्त्व
(Basic Essentials of Characteristics of Strong and Successful Trade Union)

वर्तमान समयय में श्रमिक की स्थिति बहुत अध्कि दयनीय हो गई है। सेवायोजक का हर प्रयास यह रहता है कि श्रमिकों का शोषण किया जाए, उनको न्यूनतम वेतन देकर अध्कि से अध्कि उत्पादन कराया जाए। ऐसी स्थिति में श्रमिक संघ ही श्रमिकों को सेवायोजक के शोषण से बचा सकते हैं। लेकिन कमजोर श्रमिक संघ अपने सदस्यों की कोई सहायता नहीं कर सकेगा इसलिए श्रमसंघों को शक्तिशाली बनाने के लिए उसमे निम्नलिखित गुणों का होना अति आवश्यक है।

1. विशाल सदस्यता वाले श्रमिक संघ।
2. सदस्यों का शिक्षित एवं प्रशिक्षित होना।
3. संघ का प्रजातंत्र आधर।
4. संघ का मजबूत आर्थिक स्थिति।
5. सदस्यों का आदर्श चरित्र।
6. संघों को मान्यता प्राप्त होना।
7. श्रमिक संघों के नेता श्रमिकों में से ही हों।

8. श्रमिक संघ के पदाध्किारियों का निःस्वार्थ होना।
9. संघों को राजनीति से अलग रहना चाहिए।
10. संघों के रचनात्मक कार्य होने चाहिए।
11. कल्याणकारी कार्यो के प्रति विशेष रूचि।

1. **विशाल सदस्यता वाले श्रमिक संघः** श्रमिक संघों की शक्ति उनके सदस्यों में होती है। जिस संघ के सदस्यों की संख्या अध्कि होगी वही श्रमिक संघ अध्कि शक्तिशाली होगा। इसलिए एक सपफल श्रमिक संघ के लिए यह आवश्यक है कि उनकी सदस्य संख्या शत—प्रतिशत हो।
2. **सदस्यों का शिक्षित एवं प्रशिक्षित होनाः** प्रत्येक संघ के लिए यह आवश्यक है कि इसके सदस्य शिक्षित तथा प्रशिक्षित हों। इससे मनुष्य कर्त्तव्यपरायण तथा विचारशील बनता है। इसलिए श्रमसंघों के सदस्य भी शिक्षित तथा प्रशिक्षित होने चाहिएँ।
3. **श्रमिक संघों का प्रजातान्त्रिक आधरः** श्रमिक संघ की सपफलता के लिए आवश्यक है कि उसे प्रजातन्त्र प्रणाली पर आधरित होना चाहिए। ऐसा होना पर समस्त सदस्यों को समान दृष्टि से देखा जायेगा। सभी को बोलने का अपने विचार प्रकट करने का अध्किार होगा और प्रत्येक सदस्य को समान रूप से एक वोट देने का अध्किार होगा। संघ मे जो निर्णय होंगे वे बहुमत के आधर पर ही होंगे। अगर श्रमिक संघ में इस प्रकार की व्यवस्था की गई तो सभी सदस्य संघ को अपना संघ समझकर तन, मन ध्न से उसकी सपफलता का प्रयास करेंगें।
4. **आर्थिक स्थिति सुदृढ़ होनाः** जिस प्रकार से एक देश के आत्मनिर्भरता प्राप्त करने तथा प्रगति की ओर अग्रसर होने के लिए यह आवश्यक होता है कि उसकी आर्थिक स्थिति मजबूत हो, उसी प्रकार से श्रमिक संघ की सपफलता के लिए यह भी आवश्यक हो जाता है कि उसकी आर्थिक स्थिति मजबूत हो। पर्याप्त कोष होने पर ही श्रमिक संघ सदस्यों के कल्याण के लिए कुछ कार्य कर सकेगा। जब संघ सदस्यों के कल्याणार्थ अध्कि कार्य करता है तब सदस्य भी संघ की सपफलता में विशेष रूचि लेने लगते हैं जिससे संघ की सपफलता की आशा बढ़ जाती है।
5. **सदस्यों का आदर्श चरित्रः** सपफल श्रमिक संघ के लिए यह भी आवश्यक है कि उसके सदस्य अपने कर्त्तव्यों के प्रति जागरूक हों और उत्तरदायित्व को समझते हों। प्रत्येक सदस्य में निःस्वार्थ भावना हो, प्रत्येक सदस्य के हृदय में अन्य सदस्यों के प्रति सहानुभूति होनी चाहिए और वे श्रमिक संघ के कार्यो में रूचि लें, प्रत्येक सदस्य तथा कर्मचारी ईमानदार हो। अगर किसी श्रमिक संघ के सदस्यों में यह गुण पाए जाते हैं तो उसकी सपफलता को कोई रोक नहीं सकता।
6. **संघों को मान्यता प्राप्त होः** एक आदर्श तथा सपफल श्रमिक संघ को सरकार तथा सेवायोजक दोनों के द्वारा मान्यता प्राप्त होनी चाहिए। सेवायोजकों को श्रमिक संघ की सपफलता के मार्ग में बाध्क न बनकर उसकी सपफलता में सहायक बनना चाहिए।
7. **श्रमिक संघ का नेता श्रमिकों में से होः** सपफल श्रमिक संघ की एक विशेषता यह भी है कि उसका नेता कोई बाहरी व्यक्ति न होकर श्रमिकों के अन्दर से ही होनी चाहिए। संघ की सपफलता और असपफलता नेतृत्व करने वाले नेता पर ही निर्भर हुआ करती है। अगर नेता योग्य तथा निःस्वार्थ व्यक्ति है और श्रम समस्याओं को अच्छी प्रकार से समझता है तो श्रम संघ अवश्य सपफल होंगे।
8. **श्रमिक संघ के मुख्य अध्किारियों का निःस्वार्थी होनाः** यदि श्रमिक संघ का प्रत्येक कर्मचारी तथा अध्किारी ईमानदारी से और निःस्वार्थ भावना से कार्य करता है तो श्रमिक संघ की सपफलता को कोई नहीं रोक सकता।
9. **राजनीति की ओर से उदासीन रहनाः** श्रमिक संघ को अपना कार्य—क्षेत्र श्रम कल्याण कार्यो तक ही सीमित रखना चाहिए और किसी भी प्रकार से राजनीतिक क्षेत्र में प्रवेश नहीं करना चाहिए। एक आदर्श श्रम संघ का राजनीति से दूर रहना ही मुख्य उद्देश्य होना चाहिए।

10. **श्रमिक संघ के रचनात्मक कार्य होने चाहिए:** यदि श्रमिक संघ तोड़—पफोड़ के कार्यो को छोड़कर रचनात्मक कार्यो में लग जाए तो श्रमिक संघ अध्कि लोकप्रिय एवं सपफल हो सकते हैं तथा सेवायोजक भी श्रमिक संघों की सपफलता में सहयोगी बन सकते हैं।

11. **कल्याणकारी कार्यो के प्रति विशेष रूचि लेना:** एक सपफल श्रमिक संघ उस संघ को कहा जा सकता है जो श्रमिकों के कल्याणकारी कार्यो में विशेष रूचि लेते है। शिक्षा, मनोंरजन, चिकित्सा की सुविध आदि कार्य कल्याणकारी कार्यो के अन्तर्गत आते है। जब श्रमिक संघ इस प्रकार के कार्य करने लगते हैं तो सदस्य श्रमिकों का जीवन सुखी हो जाता है तथा उनका रहन—सहन का स्तर (Standard of living) ऊँचा हो जाता है। सम्पूर्ण समाज, सरकार तथा उद्योगपति भी ऐसे संघ के प्रति सहानुभूति रखते हैं इनकी सपफलता में सहायक सि(होते हैं।

उपरोक्त विवरण से हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि जिस श्रमिक संघ में उपरोक्त विशेषताएँ पाई जाती है उस संघ को आदर्श तथा सपफल श्रमिक संघ माना जा सकता है।

श्रमिक संघ तथा मजदूरी
(Trade Union and Wages)

श्रमिक संघ मजदूरी में वृ(करा सकते हैं। इस विषय में दो विचारधरायें हैं जो एक—दूसरे के विपरीत विचार प्रकट करती हैं।

श्रमिक संघ तथा मजदूरी के विषय में दो विचारधराएँ	
प्रतिष्ठित अर्थशास्त्री ;classical Economistद्ध	**आधुनिक अर्थशास्त्री** ;Modern Economistद्ध
इनके अनुसार श्रमिक संघों का श्रमिकों के लिए कोई उपयोग नहीं है वे श्रमिकों की मजदूरी और कुशलता में कमी लाते है। वाकर (Walkerद्ध, कैरनीज ;carines), मैक्कूलपफ ;Mc Coullochद्ध, जे॰ एस॰ मिल ;J.S Millद्ध, बस्तियात ;Bastiatद्ध तथा जेवन्स ;Jevons) आदि।	इनके अनुसार श्रमिक संघ श्रमिकों की मजदूरी में दो प्रकार से निश्चित रूप से वृ(करा सकते है। (i) सामूहिक सौदेबाजी के द्वारा (ii) श्रमिकों की सीमांत उत्पादकता में वृ(करके। जे॰ एम॰ कीन्स ;J.M Keynes)।

प्रायः यह प्रश्न उठता है कि क्या श्रमिक संघ श्रमिकों की मजदूरी में वृ(करा सकते हैं? इस प्रश्न के उत्तर में दो विचारधरा हैं।

1. प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियों का मत (Classical Economists Views)
2. आधुनिक अर्थशास्त्रियों का मत (Modern Economists views)

1. **प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियों के अनुसार (Classical Economist Views):** J. Evons, J.S Mill Walker, cairnes Bastiat तथा MC Coulloch आदि अर्थशास्त्रियों के अनुसार—श्रमिकों के लिए श्रमिक संघों की कोई उपयोगिता नहीं है। श्रमिक संघ श्रमिकों की कुशलता और मजदूरी में कमी करते हैं। इस प्रकार प्राचीन अर्थशास्त्रियों के अनुसार श्रमिक संघ मजदूरी वृ(में श्रमिकों की कोई सहायता नहीं कर सकते। यदि श्रमिकों की मजदूरी में वृ(हो जाएगी तो सेवायोजक के लाभों में आवश्यक रूप से कमी जाएगी। यदि लाभ कम हो गए तो औद्योगिक क्रिया (production process) सुस्त हो जाएगी और श्रमिकों की माँग (Demand of Labour Force) कम हो जाएगी। तब श्रमिकों को या तो घटी हुई मजदूरी पर काम करना होगा तथा उन्हें बेकारी का सामना करना पड़ेगा। इस प्रकार श्रमिक संघ मजदूरी (Wages) में स्थायी वृ(नहीं कर सकते।

जेवन्स (Jevons) के अनुसार फ्यह सोचने का कोई कारण नहीं है कि श्रमिक संघों का मजदूरी वृ(में कोई स्थायी प्रभाव हो सकता है।ब्ब जैसा कि निम्न चित्र से स्पष्ट होता है।

Wage and Marginal Producativity मजदूरी की दर एवं सीमान्त उत्पादकता

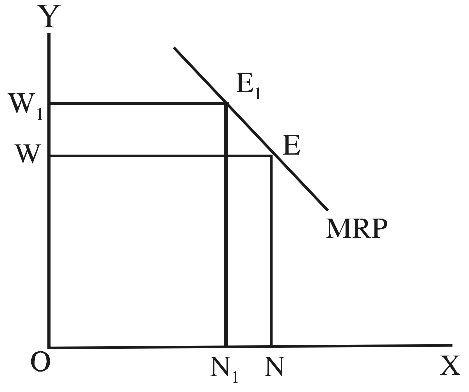

LaborSupply (श्रमपूर्ति)

X रेखा पर श्रमिकों की पूर्ति, तथा Y रेखा पर मजदूरी और श्रमिको की सीमान्त उत्पादकता को प्रदर्शित किया गया हैं इन दोनों रेखाओं के बीच में MRP सीमान्त आय उत्पादकता रेखा (Marginal Revenue Productivity Curve) जो नियोक्ता की श्रमिकों के लिए माँग रेखा (Deman of Labour curve) को भी प्रदर्शित करती है।

1. जब ON के बराबर श्रमिकों की पूर्ति है तो श्रमिकों की माँग तथा साम्य E बिन्दु पर होता है और श्रमिकों को OW (NE) मजदूरी है।
2. यदि मजदूरी की दर को श्रम संघ OW, तक बढ़वा देते हैं तो इस मजदूरी पर श्रमिकों को पहले की अपेक्षा काम पर कम लगाया जाता है। यानी केवल व्छए श्रमिकों को रोजगार दिया जायेगा तथा N_1N श्रमिकों की मात्रा बेकारी का सामना करेगी अथवा OW मजदूरी की दर पर काम करेगी।
3. **आधुनिक अर्थशास्त्रियों के अनुसार (Modern Economist Views):** जे0 एम0 कीन्स (J.M Keynes) के अनुसार, फ्प्रत्येक श्रमिक संघ मौद्रिक मजदूरी में कटौती कितनी भी न्यूनतम हो, विरोध करेगा। प्रत्येक श्रमिक संघ जीवन निर्वाह की लागत (Cost of living) में वृ(होने पर हर समय हड़ताल करने की कल्पना नहीं करता। इसलिये श्रमिक संघ कुल रोजगार में किसी वृ(के विरू(कोई बाध उत्पन्न नहीं करते जबकि यह आरोप श्रमिक संघों पर प्रतिष्ठित अर्थ शास्त्री (Classical Economist) लगाते आ रहे है।

   क्या श्रमिक संघ मजदूरी रूप से बढ़ावा सकते है? इस प्रश्न का उत्तर आधुनिक अर्थशास्त्री श्रमिक संघों के पक्ष में देते है। इनके अनुसार श्रमिक संघ श्रमिकों की मजदूरी में वृ(दो प्रकार से करवा सकते है

   (i) चूकि व्यवहार में (In practical) श्रम बाजार में पूर्ण प्रतियोगिता का अभाव रहता है इसलिए श्रमिक संघ श्रमिकों को संगठित (Unite) करके उनकी सौदा करने की शक्ति (Bargaining power) मे वृ(करते है और श्रमिकों की मजदूरी की दर को उनकी सीमांत शु(उत्पादकता तक बढ़वाने में सहायता देते हैं।

   (ii) श्रमिक संघ की सीमांत उत्पादकता को बढ़ाकर भी अध्कि मजदूरी दिलाने में समर्थ होते है—श्रमिकों को अच्छी शिक्षा, प्रशिक्षण, समझदारी तथा ईमानदारी में वृ(करके श्रमिकों की कुशलता तथा उनकी सीमान्त उत्पादकता में वृ(करते हैं।

श्रम संघों की मजदूरी नीति
(Trade Union Wages Policy)

सदैव श्रम संघों के विरू(यह आरोप लगाया जाता है कि श्रम संघ मजदूरी बढ़वाने के लिए अपनी माँगों के द्वारा कीमतों पर मुद्रा प्रसार ;Inflationaryद्धका दबाव डालते आ रहे हैं। लेकिन यह आरोप सही नहीं है। इस आरोप के उत्तर में यह कहा जा सकता है कि मजदूरी लागतें (Wages costद्ध कुल उत्पादन लागतों ;Total cost of productionद्ध के एक बहुत कम प्रतिशत के रूप में होती है। इसलिए इस सम्बन्ध में उचित ध्यान रखा जाए तो मजदूरी में थोड़ी वृ(से कुल लागत में कोई वृ(से कुल लागत में कोई वृ(होना आवश्यक नहीं है।

श्रम संघों की मजदूरी नीति का अध्ययन दो प्रकार की अर्थ—व्यवस्थाओं के सन्दर्भ में किया जाता है

1. अल्पविकसित अथवा अ(विकसित अर्थव्यवस्था (Under developed ecomnomy),
2. नियोजित अर्थव्यवस्था (Plannned Economy)

1. **अल्पविकसित या अ(विकसित अर्थव्यवस्था में श्रम संघों की मजदूरी नीति (Trade Union Wages Policy Under Undeveloed Economy):** अल्पविकसित देशों मे श्रम संघ सामान्य रूप में कमजोर होते हैं इसलिये यहाँ पर श्रमिकों की मजदूरी में वृ(, जीवन निर्वाह की लागत में वृ(होने के बाद होती है तथा सदैव जीवन निर्वाह की लागत (Cost of Living) से मजदूरी की दरें पीछे होती हैं यानी कम होती है।

   श्रमिकों को अध्कि मजदूरी दिलाने में श्रम संघों का दीर्घकालीन प्रभाव अल्पविकसित अर्थव्यवस्था के लिये बहुत लाभदायक होता है। क्योंकि आय का वितरण यदि श्रमिकों के पक्ष में जाये तो श्रमिक अपनी अतिरिक्त आय से या बढ़ी हुई आय से उपभोक्ता वस्तुएँ खरीदते हैं और स्वदेशी बाजार का विस्तार होता है। इस प्रकार अल्पविकसित अर्थव्यवस्था में मजदूरी की ऊँची दरें श्रमिकों के रहन—सहन के स्तर को ऊँचा उठाकर उनकी उत्पादन क्षमता में वृ(करती है।

2. **नियोजित अर्थव्यवस्था में श्रम संघों की मजदूरी नीति (Trade Union Wages Policy Under Developming Economy):** इस अर्थव्यवस्था में श्रम संघों द्वारा श्रमिकों को ऊँची मजदूरी की दरें दिलाना अर्थव्यवस्था के लिये हानिकारक हो सकता है क्योंकि मजदूरी सम्बन्धी लागतों में असाधरण वृ(आधरभूत उद्योगों के विकास में रूकावटें उत्पन्न करके समूचे देश के आर्थिक विकास को अवरू(कर सकती है। इसलिये इस अर्थव्यवस्था में श्रम संघों की मजदूरी नीति के तीन विकल्प (Alternatives) हो सकते हैं

   (i) श्रमिक संघ का यह निश्चित कर सकते हैं कि योजनाकाल में वे मजदूरी वृ(के लिये कोई माँग नहीं करेंगें। लेकिन कोई भी श्रम संघ इस योजना को स्वीकार नहीं करेगा।

   (ii) श्रमिक संघ मजदूरी वृ(के लिये यदि बहुत आवश्यक हुआ तो माँग तो कर सकते हैं किन्तु नियोक्ताओं के साथ कोई समझौता नहीं हुआ तो हड़ताल आदि तो नहीं करेगें किन्तु अनिवार्य पंच निर्णय (Compulsory Arbitration) स्वीकार करेंगे।

   (iii) श्रमिक संघों को यह अध्कार होगा कि वे बढ़ी हुई उत्पादकता के आधर पर या देश में कीमतों में वृ(होने पर मजदूरी बढ़ाने की माँग कर सकते है। इस माँग को पूरा करने में नियोक्ताओं के साथ कुछ मतभेद की स्थिति में सामूहिक सौदेबाजी (Collective Bargaining) अथवा समझौता प्रणाली के द्वारा समाधन किया जायेगा।

श्रमिक संघ एवं आर्थिक विकास

(Trade Union and Economic Development)

एक अल्पविकसित अर्थव्यवस्था को विकसित अथव्यवस्था में परिवर्तित करने के क्षेत्र में श्रम संघ बहुत सहायक हो सकते हैं।श्रमिकों के हितों के साथ—साथ सामाजिक आवश्यकताओं के अनुसार श्रमिक संघ रचनात्मक उद्देश्यों को पूरा करने के लिए सहायक सि(हो सकते है। इसके अतिरिक्त बहुत से ऐसे कार्य है जो श्रमिक संघ देश की आर्थिक प्रगति के लिए कर सकते है।

प्रो0 ल्यूइस (W.A LEWIS) ने आर्थिक विकास के तीन प्रमुख घटक बतलाये है (i) आर्थिक क्रिया ;Economic Function), (ii) ज्ञान में वृ(;Increase in Knowledgeद्ध, (iii) पूँजी निर्माण ;Capital Formationद्ध।

आर्थिक क्रिया के अन्तर्गत न्यूनतम लागत पर अध्कितम उत्पादन करना सम्भव होता हैं। इस प्रकार किसी वस्तु की उत्पादन लागत में कमी, व्यक्तियों की काम करने की योग्यता तथा काम करने की इच्छा पर निर्भर है। कार्य करने की इच्छा पर निर्भर है। कार्य करने की इच्छा को भी बहुत—सी बातें प्रभावित करती हैं, जैसे मनोबल ;Morale), रूचि ;Interestद्ध आदि। इस प्रकार श्रमिकों की आशा और विश्वास आर्थिक विकास के लिए बहुत आवश्यक है। एक मजबूत श्रम संघ ओदोलन सामूहिक सौदेबाजी तथा अन्य उपायों के द्वारा श्रमिकों के हितों की रक्षा कर सकते है। श्रमिक संघ श्रमिकों के अन्दर आशा और विश्वास की भावना जाग्रत करके राष्ट्रीय उत्पादन में सहयोग दे सकते है।

वर्तमान समय में बड़े पैमाने के उद्योगों तथा तकनीकी परिवर्तन के कारण यह आवश्यक हो गया है कि श्रमिकों को नई विध्यिों का प्रशिक्षण दिया जाये, उनके ज्ञान में वृ(की जाए, श्रमिकों संघों (ारा उचित रूप से शिक्षा और प्रशिक्षण का

कार्यक्रम श्रमिकों के लिए किया जा सकता है। श्रमिक संघ अपने सदस्यों को कच्चे माल की बरबादी को रोकने मे सहयोग दे सकते हैं। इस प्रकार श्रमिकों को आधुनिक तकनीकी प्रशिक्षण, आवश्यक रूप से वस्तुओं की कम लागत पर उत्पादन तथा श्रमिकों की कार्यकुशलता में वृ(ि श्रम संघ कर सकते हैं।

श्रमिक संघ छोटी—छोटी बचतों की एकत्रित करके देश में पूँजी निर्माण की गति को तेज कर सकते है। यही नहीं, आवश्कता पड़ने पर श्रमिक संघ अपने सदस्यों पर अनिवार्य बचत योजना लागू करके पूँजी निर्माण कर सकते है।

सामूहिक सौदेबाजी
(Collective Bargaining)

सामूहिक सौदेबाजी से आशय उस स्थिति से है जिसमें रोजगार की आवश्यक शर्तो का निर्धरण श्रमिकों के एक समूह के प्रतिनिध्यिों तथा दूसरी ओर एक या अध्कि नियोक्ताओं के प्रतिनिध्यिों के बीच सौदेबाजी की विध् िसे किया जाता है।

यह समझौते ;Agreement) सामूहिक इसलिए कहलाते हैं क्योंकि श्रमिक वर्ग अपने हितों का संयुक्त रूप से एक समूह के रूप में सौदा अथवा समझौता ;Agreement) करते है। यह सि(ान्त इस बात पर आधरित है कि श्रम बाजार में अकेला श्रमिक अपनी सेवाओं के बदले उचित मजदूरी प्राप्त करने में असपफल रहता है क्योंकि उसको श्रम बाजार की स्थिति का ज्ञान नहीं होता। ऐसी दशा में श्रमिक संघ को अपना प्रतिनिध् िबना देता है तथा श्रम संघ के द्वारा नियोक्ताओं से समझौता किया जाता है। जिसको श्रमिक स्वीकार कर लेता है।

सामूहिक सौदेबाजी की परिभाषा
(Definitions of Collective Bargaining)

सामूहिक सौदेबाजी का अर्थ निम्नलिखित परिभाषाओं से स्पष्ट होता है।

1. डेल योडर (Dale Yoder) के अनुसार, फ्सामूहिक सौदेबाजी का प्रयोग उस स्थिति में होता है जिसमें रोजगार की आवश्यक शर्तो का निर्धरण एक ओर श्रमिक के एक समूह के प्रतिनिध्यिों तथा दूसरी ओर एक या अध्कि नियोक्ताओं के प्रतिनिध्/ प्रतिनिध्यिों के द्वारा सौदेबाजी की विध् िसे किया जाता हैं।य
2. एडबिन बी0 पिफलिपो (E.B Flippo) के अनुसार, फ्सामूहिक सौदेबाजी वह विध् िहै जिसमें श्रमिक संगठन के प्रतिनिध् ितथा व्यापार संगठन के प्रतिनिध् िमिलते हैं और एक अनुबन्ध या समझौता करने का प्रयास करते हैं जिसमें श्रमिकों एवं नियोक्ता संघ के सम्बन्धें की प्रकृति को स्पष्ट किया जाता है।य
3. एम0 बी0 कमिंग (M.B Cumming) के अनुसार, फ्सामूहिक समझौता का सम्बन्ध उन व्यवस्थाओं से है जिनके अन्तर्गत सामान्य रूप से रोजगार की शर्तो , मजबूरी का निर्धरण, नियोक्ता तथा श्रमिक संगठनों के बीच हुए समझौता से होता है।य
4. Archibald Cox के अनुसार, फ्सामूहिक सौदेबाजी से आश्य नियोक्ताओं के प्रतिनिध्यिों और श्रमिकों के स्वतन्त्र रूप से मनोनीत प्रतिनिध्यिों के बीच कम से कम सरकारी आदेश के साथ सामूहिक रूप से कार्य करते हुए औद्योगिक समस्याओं के समाधन से सम्बन्ध्ति समझौते से हैं।य
5. आर0 एपफ0 होक्सी (Robert F. Hoxie) के अनुसार, फ्सामूहिक सौदेबाजी साधरणतया अध्कृित प्रतिनिध्यिों के द्वारा कार्य करने वाले श्रमिकों अथवा कर्मचारियों की एक संगठित संस्था तथा किसी नियोक्ता (Employer) या नियोक्ताओं के किसी संघ अथवा संगठन के बीच रोजगार की शर्तो को तय करने की एक विध् िहै। सामूहिक सौदेबाजी का निष्कर्ष बाहरी पक्षकारों से आदेशित न होकर व्यक्तिगत रूचि रखने वाले पक्षकारों के बीच एक समझौता या अनुबन्ध होता है।य
6. जे0 एच0 रिचर्डसन (J.H richardson) के अनुसार, फ्सामूहिक सौदेबाजी तक सम्भव है जब बहुत से अध्कि से श्रमिक मिलकर एक सौदेबाजी की इकाई के रूप में सेवायोजक अथवा सेवायोजक—वर्ग के साथ वार्तालाप करते हैं जिसके द्वारा सम्बन्ध्ति श्रमिक की रोजगार सम्बन्धी स्थिति के बारे में समझौता किया जा सके।य

7. एन्सायक्लोपीडिया सामाजिक विज्ञान (Encyclopaedia, of Social Science) के अनुसार, फ्सामूहिक सौदेबाजी दो पक्षकारों के बीच वाद—विवाद तथा विचारों के आदान—प्रदान का निर्णय श्रमिकों की काम की दशाओं तथा नियोजन सम्बन्धी समझौते का रूप लेता है। अध्कि स्पष्ट रूप में सामूहिक सौदेबाजी वह कार्य विध्ि (Procedure) है जिसमें एक नियोक्ता या बहुत से नियोक्ता और नियोक्ताओं का समूह श्रमिकों की काम की दशाओं से सम्बन्ध्ति कोई समझौता करते हैं।य

8. नेशनल ऐसोसिएशन आपफ मैन्यूपफैक्चरर्स (National Association of the Manufactures) के अनुसार, फ्सबसे अध्कि सरल परिभाषा के अनुसार सामूहिक सौदेबाजी एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें प्रबन्ध् तथा श्रमिक एक दूसरे की समस्याओं के बारे में जानकारी प्राप्त करते हैं तथा रोजगार सम्बन्धी विकास की रूपरेखा तैयार करते है। दोनो पक्ष परस्पर सहयोग, प्रतिष्ठिा एवं लाभ की दृष्टि से काम करते हैं।य

9. एल0 जी0 रेनोल्ड (L.G Raynold) के अनुसार, फ्श्रमिक संघ अपने सदस्यों के हितों को विशेष रूप से सेवायोजकों के साथ वार्तालाप के द्वारा किये गए समझौते के माध्यम से जिनको संघ अनुबन्ध् (Union Contracts) अथवा सेवायोजकों के साथ सामूहिक समझौता कहते हैं। यह प्रक्रिया (Process), जिसके द्वारा इन समझौतों के लिए बातचीत होती है और उन्हे ंलागू किया जाता है, सामूहिक सौदेबाजी शब्द में सम्मिलित होती है।य

10. जे0 टी0 डनलप (J.T Dunlop) के अनुसार, फ्सामूहिक सौदेबाजी (i) एक प्रणाली है जो श्रमिकों के कार्य स्थान से सम्बन्ध्ति बहुत से नियमों को स्थापित, संशोध्ति एवं प्रशासित करती है (ii) एक विध्ि है तो कर्मचारियों द्वारा प्राप्त की जाने वाली क्षतिपूर्ति की मात्रा निश्चित करती है तथा आर्थिक दोषों के वितरण को प्रभावित करती है (iii) एक ढंग (Method) है जिसके माध्यम से किसी समझौते के समय विवादों का समाधन किया जाता है और उसकी समाप्ति पर यह तय किया जाता है कि क्या झगड़े का प्रारम्भ पुनः किया जाना चाहिए या कोई हड़ताल या तालाबन्दी होनी चाहिए या नहीं।य

सामूहिक सौदेबाजी की विशेषताएँ
(Characteristics of Collective Bargaining)

सामूहिक सौदेबाजी की उपरोक्त परिभाषाओं के आधर पर कुछ विशेषताएँ इस प्रकार है।

1. सामूहिक सौदेबाजी एक सामूहिक प्रणाली (System) है जिसमें श्रमिकों / कर्मचारियों तथा सेवायोजकों/ प्रबन्ध्कों के प्रतिनिध्ि परस्पर भाग लेकर वार्तालाप (Negotiations) करते है।
2. प्रबन्ध्कों/सेवायोजाकों में प्रगतिशील तथा उदार दृष्टिकोण की उपस्थिति।
3. सामूहिक सौदेबाजी में तथ्यों की खोजबीन और निष्पक्ष जाँच में आस्था तथा औद्योगिक विवादों के समाधन के लिए नए प्रगतिशील साध्नों तथा उपायों को प्रयोग में लाने की इच्छा होती है।
4. इस प्रणाली में दोनों पक्षों को उत्पादन प्रक्रिया में बराबर का उत्तरदायी साझेदार समझा जाता है।
5. यह प्रणाली दो और लो (Give and take) की भावना पर आधरित है।
6. यह एक द्विपक्षीय क्रिया है जिसमें दोनों पक्षों को आमने—सामने वार्तालाप का अवसर मिलता है।
7. यह औद्योगिक प्रजातन्त्र तथा औद्योगिक न्याय प्रक्रिया के लिये पहला कदम है।
8. सामूहिक सौदेबाजी आन्तरिक अनुशासन स्थापित करने का अच्छा प्रयास है।

सामूहिक सौदेबाजी की आवश्यकता
(Need of collective Bargaining)

सामूहिकि सौदेबाजी की आवश्यकता निम्न कारणों से होती है।

1. सेवायोजकों को श्रमिक से अपेक्षित सहयोग प्राप्ति के लिए तथा श्रम और पूँजि के बीच मध्ुर सम्बन्ध्ति स्थापित करने के लिए इस प्रणाली की आवश्यकता होती है।

2. शोषण के विरू(पाने के लिए सामूहिक सौदेबाजी की आवश्यकता होती है क्योकि एक श्रमिक व्यक्तिगत रूप से सेवायोजकों का सामना नहीं कर सकती है।
3. समस्योओं के समाधन के लिए सामूहिक विचार—विमर्श आवश्यक है।
4. सेवायोजकों के स्वतन्त्र निर्णयों पर प्रतिबन्ध लगाने के लिए यह प्रणाली असवश्यक है।
5. श्रम संघों को अपना अस्तित्व बनाये रखने के लिए सामूहिक सौदेबाजी आवश्यक है।
6 औद्योगिक वातावरण शान्तिपूर्ण बनाये रखने के लिए सामूहिक सौदेबाजी का होना अनिवार्य है।

सामूहिक सौदेबाजी की सपफलता की शर्ते
(Conditions for the Scuccess of Collective Bargaining

अथवा

सामूहिक सौदेबाजी की पूर्व आवश्यक शर्ते
(Pre-requisites of Collective Bargaining)

सामूहिक सौदेबाजी प्रणाली औद्योगिक जगत में व्याप्त हर वातावरण में लागू नहीं की जा सकती है। यह एक ऐसा पौध ;Plantद्ध है जिसकों लगाने के लिए पहले से श्रम और सेवायोजकों के बीच अच्छा तथा मानवीय वातावरण बनाना होता हैं अन्यथा यह सामूहिक सौदेबाजी वाला पौध सड़ जायेगा। इसलिए निम्न शर्तो का होना आवश्यक है।

1. प्रबन्ध्कों में प्रगतिशील तथा उदार दृष्टिकोण का होना।
2. दोनों पक्षों में ;श्रमिक और सेवायोजकद्ध दो और लो (Give and take) की भावना का होना अनिवार्य है।
3. मूल उद्देश्यों के बारे में सहमति होनी चाहिए।
4. दोनों पक्ष अपने आपको उत्पादन क्रिया में बराबर का हिस्सेदार समझते हों।
5. तथ्यों की खोजबीन, निष्पक्ष जाँच करने विश्वास तथा औद्योगिक विवादों के समाधन के लिए नये प्रगतिशील साध्नों को प्रयोग मे लाने की इच्छा।
6. श्रम संघों का शक्तिशाली होना तथा उनमें उत्तरदायित्व की भावना होनी चाहिए।
7. दोनों पक्षों की वैधनिक उपायों के प्रयोग में आस्था होनी चाहिए।

प सामूहिक सौदेबाजी केवल शन्तिपूर्ण, उदार, मित्रता वाले वातावरण में पनप सकती हैं। दोनों पक्षों में सामूहिक सौदेबाजी के ढंग को अपनाने के लिए जिज्ञासा होनी चाहिए और समझौता करने के बाद परस्पर मित्रता की भावना होनी चाहिए।य

सामूहिक सौदेबाजी का विकास
(Growth of Collective Bargaining)

सामूहिक सौदेबाजी शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम अमेरिका में सैमुअल गोम्पर्स (SamuleGompers) ने किया था। इसके बाद इस शब्द का प्रयोग सिडनी एवं बीट्राइस वैब (Sydney and Beatrice Webb) प्रसि(इतिहास लेखक ने किया। धीरे—धीरे यह विचार विकसित होने लगा सामूहिक सौदेबाजी का विचार संसार में अच्दी तरह समझा जाने लगा है।

सामूहिक सौदेबाजी का विकास श्रमिक संघवाद के विकास के साथ घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित रहा है सामूहिक सौदेबाजी के क्षेत्र में श्रमिकों से सम्बन्धित विषयों की संख्या में निरन्तर वृ(होती रही है। ब्रिटेन में 1872 और 1913 के बीच सामूहिक सौदेबाजी की शुरूआत मानी जाती है। इस समय ब्रिटेन को सामूहिक सौदेबाजी का देश कहा जाता है।

अमेरिका में 19 वीं शताब्दी से लेकर वर्तमान समय तक सामूहिक सौदेबाजी लिखित समझौता, एक ठोस आधर के रूप में पाये जाते है। वर्तमान समय में यह प्रणाली अमेंरिकी अर्थ—व्यवस्था का एक आधर बन गई है।

भारतवर्ष में भी अन्य देंशों की भाँति सामूहिक सौदेबाजी को बहुत प्रोत्साहन मिला है। त्रिदलीय सम्मेलन, वर्क्स समितियों, सयुंक्त परामर्श बोर्ड, समझौता अध्किारी, आदि श्रम संघर्ष को रोकने के उपायों ने सामूहिक सौदेबाजी के विचार के विकास में कापफी योगदान दिया। लेकिन अन्य देशों की तुलना में भारत में सामूहिक सौदेबाजी अध्कि सपफल नहीं हुई है। इसके लिए निम्नलिखित कारण है।

1. आज भी कुछ प्रबन्ध्क/सेवायोजकों श्रम संघों से घृणा करते हैं।
2. अनेक श्रम संघों के कारण आपसी पफूट, खराब वित्तीय व्यवस्था तथा नेतृत्व के अभाव में भारतीय श्रमिक संघ कमजोर है।
3. श्रम—सन्नियम और सरकारी हस्तक्षेप के कारण भी सामूहिक सौदेबाजी की प्रणाली भारत में अध्कि उन्नति नहीं कर पाई है।
4. आवश्यकता से अध्कि श्रमिकों की पूर्ति।
5. भारतीय श्रम संघ राजनीतिक दलों पर आधरित हैं।
6. भारत की आर्थिक, सामाजिक तथा राजनीतिक आबोहवा सामूहिक सौदेबाजी के पक्ष में नहीं है।

सामूहिक सौदेबाजी की प्रक्रिया
(Process of collective Bargaining)

सामूहिक सौदेबाजी के अन्तर्गत केवल नियोक्ता अपने स्तर पर कोई निर्णय नहीं ले सकता अपितु उसको श्रम समस्याओं पर श्रमिक अथवा उनके संघों के साथ विचार—विमर्श करना होता है। इसके लिए निम्नलिखित प्रक्रिया ;Process or procedure) अपनानी होती है।

सामूहिक सौदेबाजी की प्रक्रिया
(Procedure or Process of Collective Bargaining)

↓

वातावरण तैयार करना

↓

समस्या के अनुरूप हल निकलने के लिए प्रणाली का चयन करना

↓

उपयुक्त प्रतिनिध्यिों का निर्धरण

↓

विचार—विमर्श करना

↓

सौदेबाजी में दोनों पक्षों के बीच सहमति लाना

↓

लिखित समझौता करना

↓

समझौता लागू करना

सामूहिक सौदेबाजी प्रक्रिया के उपरोक्त सात चरण (Stages) है। श्रमिकों/श्रमिक संघों के प्रतिनिध्यिों को सौदेबाजी करते समय औद्योगिक वातावरण का सम्पूर्ण ज्ञान तथा सावधनी रखनी चाहिसे क्योंकि सेवायोजक सदैव समझौता अपने पक्ष में कराने का प्रयास करते हैं।

सामूहिक सौदेबाजी की विषय–सूची एवं क्षेत्र
(Contents and Scope collections Bargaining)

वर्तमान समय में सामूहिक सौदेबाजी की विषय सूची और इसका क्षेत्र अध्कि विस्तृत हो गया है। इसके कई कारण हैं जैसे– धिरे–धिरे श्रमिक संघ का शक्तिशाली होते जाना, निरन्तर मूल्यवृ(ि सरकार तथा न्यायायलयों का श्रमिकों के प्रति सहानुभूति पूर्ण रवै या तथा तेजी से औद्योगीकरण का विकास आदि।

प्रारम्भिक काल में सामूहिक सौदेबाजी का प्रयोग मजदूरी, काम के घण्टे तथा रोजगार से सम्बन्धित शर्तो के लिए ही हुआ करता था

आज सामूहिक सौदेबाजी की विषय–सूची बहुत लम्बी हो गई है। इस सूची में श्रमिकों से सम्बन्धित लगभग 23 विषय सम्मिलित किये गये है।

सामूहिक सौदेबाजी की विषय–सूची और क्षेत्र
(Scope and Contents of Collective Bargaining)

मजदूरी एवं भत्तों से सम्बन्धित विषय
;Regarding Wages and Allowances)

1. मजदूरी की दर, महँगाई भत्ता आदि
2. मजदूरी भुगतान का समय एवं विधि,
3. कठिन कार्य के लिए भत्ते,
4. थकान तथा लम्बे समय तक कार्य के लिए भुगतान।
5. कठिन तथा अस्वास्थ्यप्रद कार्य के लिए बोनस,
6. ग्रेच्युटी, भविष्य निधि

अवकाश से सम्बन्धित विषय
(Regarding Leave)

7. सेवतन अवकाश
   वार्षिक अवकाश
   आकस्मिक अवकाश
   तथा बीमारी अवकाश आदि

अन्य विषय
(Others)

8. अध्कि समय काम के लिए क्षति पूर्ति अतिरिक्त काम के काम घण्टे,
9. उत्पादन प्रमाप का निर्धरण,
10. तकनीकी विध्यिाँ।
11. योग्यता–मूल्यांकन की उचित विधि का निर्धरण।
12. नियुक्तियाँ, कार्यस्थापना तथा पदोन्नति
13. जबरी छुट्टद्धी, छँटनी, विवेकीकरण,
14. प्रबन्ध्क में सहभागिता,
15. श्रम संघों को मान्यता देना,
16. श्रमिकों का दुर्घटनाओं से बचाव,
17. अनुशासन विध्यिाँ,
18. श्रम–संघर्षो के समाधन के लिए प्रक्रिया,
19. कच्चे माल के प्रयोग की विध्यिाँ,
20. नियमों के पालन न करने पर दण्ड व्यवस्था,
21. उत्पादन तथा श्रमिक संघ की कार्यवाहियों में भाग लेना
22. श्रमिक संघर्षो के समाधन के लिए प्रणाली का निर्धरण,
23. श्रमिक संघों की सुरक्षा आदि।

सामूहिक सौदेबाजी के कार्य
(Fuctions of Collective Bargaining)

सामूहिक सौदेबाजी के कार्यो को मुख्य रूप से तीन भागों में विभाजित किया जाता है–

1. सामाजिक परिवर्तन से सम्बन्ध्ति कार्य (Fuctions Related to Social Change)
2. औद्योगिक सन्धि या समझौता कराना (Industrial Truce or Agreement)
3. औद्योगिक न्याय की रक्षा के लिए कार्य (Fuctions Related to Induastrial Jurisprudence)

1. सामाजिक परिवर्तन से सम्बन्ध्ति कार्यः इसके अन्तर्गत वे समस्त कार्य सम्मिलत होते है जो दोनों पक्षों के बीच शक्ति संतुलन बनाये रखने के लिए आवश्यक होते है। श्रमिक वर्ग–नियोक्ता वर्ग को नष्ट नहीं करना चाहता अपितु सामूहिक सौदेबाजी प्रक्रिया से स्वयं उसके बराबर होना चाहता है।
2. औद्योगिक सन्धि या समझौता करनाः सामूहिक सौदेबाजी में उसी का पलड़ा भारी रहता है जो शक्तिशाली होता है यदि श्रमिक पक्ष शक्तिशाली होगा तो वे अपने पक्ष में समझौता कराने में सपफल होंगे और यदि नियोक्ता शक्तिशाली होगा तो समझौता उनके पक्ष में होगा। यदि समझौता एक पक्षीय होगा तो यह समझौता अध्कि देर तक नहीं चलेगा लेकिन नैतिक दृष्टि से दोनों पक्ष उसको मानने के लिए बाध्य होते हैं। औद्योगिक सन्धि ही सामूहिक सौदेबाजी का आधर हो सकती है और इसके लिए श्रम संघों को कई आर्थिक और अनार्थिक कार्य करने होते हैं।
3. औद्योगिक न्याय की रक्षा से सम्बन्ध्ति कार्यः सामूहिक सौदेबाजी से औद्योगिक न्याय का प्रारम्भ होता है। इसलिए सामूहिक सौदेबाजी की प्रक्रिया ऐसी होनी चाहिए जिससे औद्योगिक न्याय की रक्षा हो सके।

   औद्योगिक न्याय में नागरिक अध्किारों को लागू करने की प्रक्रिया सम्मिलत होती है यानि सामूहिक सौदेबाजी में कानूनी अध्किारों की हत्या न की जाये। यदि कोई समझौता लिखित न भी तो प्रचलित परम्परानुसार उसको लागू किया जाना चाहिए।

सामूहिक सौदेबाजी का महत्त्व
(Importance of Collective Bargaining)

सामूहिक सौदेबाजी एक ऐसा वरदान है जिससे राष्ट्र के प्रत्येक अंग को लाभ पहुँचता है। यह एक शान्तिप्रिय श्रमिक और सेवायोजकों का सहारा है जिसके द्वारा देश के औद्योगिक जगत में विध्वंसकारी हथियारों का प्रयोग न होकर औद्योगिक प्रजातन्त्र की स्थापना की जाती है।

इस प्रणाली के महत्त्व का अध्ययन हम चार भागों में करते हैं–

1. श्रमिकों के लिए महत्त्व,
2. श्रम संघों के लिए महत्त्व,
3. सेवायोजकों के लिए महत्त्व,
4. राष्ट्र के लिए महत्त्व,

1. **श्रमिकों के लिए महत्त्व** (Importance to workers): एक श्रमिक में व्यक्तिगत रूप में शक्तिशाली प्रबन्धें/सेवायोजकों के साथ अनुबन्ध या समझौता करने की शक्ति बहुत कम होती है लेकिन वह सामूहिक रूप से नियोक्ताओं से अपनी माँगे मनवा सकती है। यही नहीं, वह सामूहिक रूप से अपने को शक्तिशाली महसूस करता है।
2. **श्रमसंघों के लिए महत्त्व** (Importance to Trade Union): श्रमिक संघों को बनाये रखने के लिए तथा उन्हे ̀अपने उद्देश्यों की पूर्ति के लिए सामूहिक सौदेबाजी सहयोग प्रदान करती है। सामूहिक सौदेबाजी प्रबन्ध्कों या नियोक्ता वर्ग का एकतरपफा निर्णय लेने से रोकती है तथा नियोक्ताओं को श्रमिकों के लिए अच्छी कार्य की दशाएँ, उचित मजदूरी की दर ,महँगाई भत्ता, बोनस, ग्रेच्युटी, भविष्यनिध्, सेवतन अवकाश, श्रमिकों की योग्यता को मूल्यांकन आदि करने का बाध्य करती है। इससे श्रमिकों का श्रम संघों के प्रति विश्वास जाग्रत होता है।

3. **सेवायोजकों को लाभ** (Advantages to Employers): बहुत से श्रम संघ आपसी नासमझी या मनमुटाव के कारण उग्र रूप धरण कर लेते हैं। परिणामस्वरूप लाखों रूपये की हानि होती है। इसके विपरीत सामूहिक सौदेबाजी, औद्योगिक शान्ति स्थापित करती है। दोनों पक्षों उदार नीति अपनाते हैं। दो और लो (Give and Take) की भावना पर काम करते हैं। मूल उद्देश्यों के बारे में दोनों की सहमति होती है। यही नहीं, दोनों पक्ष ;श्रमिक और सेवायोजकद्धअपने आपको उत्पादन प्रक्रिया में बराबर का साझेदार समझते हैं। परिणामस्वरूप औद्योगिक शान्ति, उत्पादन की मात्रा में वृ(ि, उत्पादन की किस्म में सुधर तथा न्यूनतम लागत पर अध्कितम उत्पादन संभव होता है। यह सब सेवायोजका श्रमिक से चाहता है।

4. **राष्ट्र के लिए महत्त्व** (Importance to Nation): सामूहिक सौदेबाजी के द्वारा औद्योगिक वातावरण शान्त हो जाता है। श्रमिकों की हड़तालें, तोड़—पफोड़ सब समाप्त हो जाता है। परिणामस्वरूप चारों तरपफ अमन शान्ति होती है। देश में औद्योगिक उत्पाद में तेजी से वृ(ि होती है और राष्ट्र समृ(ि के मार्ग पर स्वयं चलने लगता है। इस प्रकार सामूहिक सौदेबाजी से औद्योगिक प्रजातन्त्र का आधर तैयार होता है।

भारत में न्याय निर्णय और सामूहिक सौदेबाजी
(Adjudication and Collective Bargaining in India)

वर्तमान समय में औद्योगिक समस्याओं का शान्तिपूर्वक हल निकालने के लिए भारत में दो प(ति कार्यान्वित हैं—

1. सामूहिक सौदेबाजी प(ति।
2. अनिवार्य न्याय निर्णय प(ति।

इस समय उपर्युक्त दोनों प(तियों के साथ—साथ चलने पर वि(ानों में बहुत मतभेद पाया जाता है। कुछ विद्वान इस पक्ष में है कि भारत में न्यायिक निर्णयों ने सामूहिक सौदेबाजी को लगभग समाप्त कर दिया है इसलिए अनिवार्य निर्णय प्रक्रिया के स्थान पर केवल सामूहिक सौदेबाजी प्रक्रिया चालू रखनी चाहिए। इसके विपरित अनिवार्य न्याय निर्णय का पक्ष लेने वाले यह कहते हैं कि भारत में सामूहिक सौदेबाजी औद्योगिक क्रान्ति स्थापित करने में असपफल सि(हुई है इसलिए केवल न्यायिक निर्णय की प्रक्रिया चालू रहे। दोनों पक्षों ने अपने पक्ष में निम्नलिखित तर्क दिए हैं—

1. **सामूहिक सौदेबाजी प(ति के पक्ष में तर्क:** इसके पक्ष में तर्क देने वालों का यह कहना है कि फअनिवार्य न्याय निर्णयय् प्रक्रिया ने सामूहिक सौदेबाजी प्रणाली के विकास में बाध पहुँचाई है। श्री वी.वी. गिरी ने कहा है—फराज्य निष्पक्ष या स्वतन्त्र है, इस पर विश्वास नहीं किया जा सकता क्योंकि हाल के वर्षो में ;राज्य सरकारद्ध स्वयं एक महत्त्वपूर्ण सेवायोजक (Employer) बनती जा रही है।य्इसलिए न्याय निर्णय श्रमिकों के साथ निष्पक्ष नहीं देते। भारत के वर्तमान औद्योगिक सम्बन्धें में सामूहिक सौदेबाजी की अपेक्षा केवल न्यायिक निर्णयों का बोलबाला है जबकि न्यायिक निर्णय श्रमिकों के साथ न्याय करने में असपफल रहे है और इस प्रक्रिया ने श्रमिक संघों के विकास को रोककर श्रमिकों को मुकदमेबाज बनाया है। इसलिए औद्योगिक शान्ति बनाये रखने के लिए जितनी जल्दी हो सके तीसरे पक्ष पर निर्भरता को त्यागकर सामूहिक सौदेबाजी को स्वीकार किया जाये तथा इसे प्रणाली के विकास का ही प्रयास किया जाना चाहिए।

2. **अनिवार्य न्याय निर्णय के पक्ष में तर्क:** न्याय निर्णय के पक्षधरियों का यह दावा है कि औद्योगिक संघर्षो का सामूहिक सौदेबाजी के द्वारा समाधन किया गया तो श्रमिकों के काम करने की दशाएँ और अध्कि खराब होगीं, औद्योगिक सम्बन्ध बिगड़ेगे तथा औद्योगिक इकाइयों में तालाबन्दी अध्कि लम्बे समय के लिए होती जायेगी। इसलिए औद्योगिक विवादों का हल न्यायिक निर्णय ही ठीक से कर सकते हैं। हाँ, न्याय निर्णय प्रक्रिया में जो कमियाँ है उनको दूर करने का प्रयास सरकार को करना चाहिए। लेकिन वर्तमान समय में यदि न्याय निर्णय प्रक्रिया को समाप्त कर दिया गया तो निश्चित रूप से औद्योगिक क्षेत्र में गड़बड़ी उत्पन्न हो जायेगी। क्योंकि आजकल श्रमिक या श्रम संघ अपनी कमजोरियों के कारण सामूहिक सौदेबाजी का पूरा उत्तरदायित्व निभाने के लिए तैयार नहीं है।

निष्कर्ष ;Conclusion)

mijksDr rksuksa i¼fr;ksa ds i{k vkSj foi{k esa rdksaZ dk vè;;u djus ds ckn rFkk Hkkjrh; vkS|ksfxd dkrkoj.k dks è;ku esa j[krs gq, ;g dgk tk ldrk gS fd][U;k; fu.kZ; çf؟;k dks lkewfgd lkSnsckth dh fdlh i¼fr esa rqyUr cnyuk O;kogkfjd ugha gksxkA¸ bl ifjorZu dks /hjsu/hjs lkewfgd lkSnsckth dh fn'kk मेंयह घोषणा करतेहुए लेजाना चाहिए कि औद्योगिक संघर्षो के समाधन में सामूहिक सौदेबाजी को प्राथमिकता दी जायेगी। इसके अतिरिक्त सामूहिक सौदेबाजी प(ति को सपफल बनाने के लिए श्रम संघों को कानूनी तथा व्यावहारिक रूप से मान्यता प्रदान करना तथा श्रमिकों को परिपक्व ;Matureद्धबनाना होगा।

यह ठीक है कि कुछ परिस्थितियों में न्यायिक निर्णय आवश्यक तथा उपयोगी हो सकते हैं किन्तु देश में औद्योगिक शान्ति एवं अच्छे सम्बन्ध केवल सामूहिक सौदेबाजी के द्वारा ही बनाये जा सकते हैं।

भारत में सामूहिक सौदेबाजी की सपफलता की शर्ते या सुझाव (Conditions or Suggestions for the Success of Collective Bargaining in India)

यदि नीचे दी गई कुछ विशेष शर्तो को पूरा किया जाये तो भारत में सामूहिक सौदेबाजी प्रभावी हो सकती है—

1. भारत में, ब्रिटेन की संयुक्त औद्योगिक परिषद् (Joint Industrial Councils of U.K.) के आधर पर संयुक्त वार्ता समितियों (Joint Negotiation Bodies) की स्थापना उद्योगों में की जानी चाहिए जो विवादों को हल कर सकें।
2. वार्तालाप (Negotiation) के लिए दोनों पक्ष ;श्रमिक एवं सेवायोजकद्ध पूरी तरह संगठित होने चाहिए। उद्योग के विषय में दोनों पक्षों को पूरी जानकारी होनी चाहिए।
3. श्रम संघों का शक्तिशाली होना—सामूहिक सौदेबाजी की सपफलता के लिए यह परम आवश्यक है कि अच्छी तरह संगठित तथा ठीक से निश्चित की गई नीतियों वाले, पूरी तरह मान्यता प्राप्त, शक्तिशाली श्रम संघ होने चाहिए।
4. श्रमिकों और सेवायोजकों के बीच दो और लो (Give and Take) की भावना होनी चाहिए।
5. दोनों ही पक्ष, अपनी जिम्मेदारी समझें और सामूहिक सौदेबाजी को सपफल बनायें।

सामूहिक सौदेबाजी के रूप (Forms of Collective Bargaining)

स्वतन्त्र सामूहिक सौदेबाजी (single plant Bargainingद्ध	बहु—संयत्र सौदेबाजी ;Multi-Plant Bargaining)	बहु—नियोक्ता सौदेबाजी ;Multi&Employer bargainingद्ध
यह सौदेबाजी एक श्रमिक संघ और एक सेवायोजक के बीच हो सकती है। ऐसी सौदेबाजी भारत तथा अमेरिका में प्रचलित है।	यह सौदेबाजी एक औद्योगिक इकाई, जिसके अधीन कई प्लाण्ट हो सकते हैं, उन सभी प्लाण्ट के श्रमिकों तथा एक सेवायोजकों के साथ होती है।	एक उद्योग में समस्त श्रमिक संघ या इनके पफैडरेशन और सेवायोजकों तथा सेवायोजकों के पफैडरेशन के बीच जो सौदेबाजी होती है उसे बहु—नियोक्ता सौदेबाजी कहते है।

सामूहिक समझौता स्तर (Level of Collective Agreements)

1. **संयत्र स्तर पर समझौते** (Agreement at Plant Level): जब किसी एक औद्योगिक इकाई में दोनों पक्षों के बीच मन—मुटाव गलत धरणाओं के आधर पर हो जाता है तो उसके निवारण के लिये जो समझौता होता है वह सिपर्फ एक औद्योगिक इकाई पर लागू होता है। इस प्रकार के समझौतों से कुछ प्रमाप निर्धरित होते हैं।

2. **उद्योग स्तर पर समझौता** (Industry level Asgreement): जब किसी विवाद के समाधन के लिए पूरे उद्योग के श्रमिकों और सेवायोजकों के बीच कोई समझौता होता है तो इसे उद्योग स्तर पर समझौता कहते है।

3. **राष्ट्रीय स्तर पर समझौता** (Agreement At the National level): इस प्रकार के समझौते पूरे देश में लागू होते है तथा सरकार द्वारा आयोजित गोष्ठियों में श्रमिकों तथा प्रबन्ध्कों के प्रतिनिध्यिों के द्वारा ये समझौते किये जाते है जैसे 7 जनवरी, 1951 का दिल्ली समझौता जनवरी, 1956 का बागान श्रमिकों का बोनस समझौता आदि।

उपरोक्त तीनों स्तर का विस्तृत वर्णन इस प्रकार है—

संयंत्र स्तर पर समझौते ;Agreement at Plant level)

1955 से इस प्रकार के कई समझौते भारतीय कम्पनियों में हुये हैं। प्रमुख समझौते इस प्रकार किये गये—

1955 में बाटा शू कम्पनी का समझौता,

1955 में टाटा आयरन एण्ड स्टील कम्पनी समझौता,

1956 में मोदी स्पिनिंग एण्ड वीविंग मिल्स समझौता,

1956 में बैंगलूर समझौता,

1956 में नेशनल न्यूजप्रिंट, नेपानगर समझौता आदि।

इन समझौतों के कारण औद्योगिक विवादों के समाधन की दिशा में सुधर तैयार हुए है। इनसे रूढ़ियों में परिवर्तन हुआ तथा संघर्षो के समाधन में प्रजातन्त्रीय विध् िका जन्म हुआ।

1. बाटा शू कम्पनी और बाटा मजदूर यूनियन के बीच सामूहिक समझौते में यह निर्णय हुआ कि— समझौते का मूल आशय, औद्योगिक तथा आर्थिक सम्बन्धें में सुधर लाना है तथा विवादों का शीघ्रातिशीघ्र समाधन करना है जिससे कार्य की सन्तोषप्रद दशाएँ प्राप्त हो सकें। समझौते का मूल आधर कम्पनी में सामान्य कल्याण को स्थापित करके निरन्तर कार्य सुरक्षा प्रदान करना है।

2. टाटा आयरन एण्ड स्टील कम्पनी तथा टाटा वर्कर्स यूनियन के बीच 1956 के समझौते के कुछ अंश इस प्रकार है—
   - (i) सहयोग एवं नियमित सम्बध (Relations) कम्पनी और संघों के बीच सम्बन्ध स्थापित करके, कर्मचारियों के हितों की रक्षा करना तथा कम्पनी के व्यवसाय को दक्षतापूर्वक चलाना।
   - (ii) कम्पनी तथा श्रम सघों ने परस्पर एक—दूसरे को निम्नलिखित आश्वासन दिए जिससे आपसी हितों की रक्षा हो सकें—
   - (a) श्रम संघ को सौदाबाजी के लिए मान्यता प्रदान कर दी जायेगी।
   - (b) कम्पनी ने ;श्रम संघद्ध सदस्यता पफीस एकत्र करने के लिए वेतन में कटौती कर ध्नराशि एकत्र करना स्वीकार किया।
   - (c) श्रम संघ ने कम्पनी के इस अध्किार को मान्यता दी कि कम्पनी सुधर तथा नये उपकरण लगाने में स्वयं निर्णय ले सकती है, नई मशीन स्थापित करने के लिए स्थान का चुनाव कर सकती है।
   - (d) श्रम संघ ने कम्पनी के चयन (Selection), स्थानातरण, पदोन्नति, अनुशासन आदि से सम्बन्ध्ति अध्किार सुरक्षित रखे हैं।
   - (e) छँटनी, कार्य— परिवर्तन, नई नियुक्तियों आदि के समय जहाँ कहीं भी श्रमिकों के हितों को हानि होने की सम्भावना हो तो उस समय कर्मचारियों से सलाह ली जानी चाहिए।
   - (f) कम्पनी जब कभी भी महत्त्वपूर्ण विषयों पर निर्णय लेगी उस समय श्रमिकों का सहयोग लेगी तथा सहभागिता का अध्किार प्रदान करेगी।

उद्योग स्तरीय समझौते ;industry level agreement)

अहमदाबाद का सूती वस्त्र उद्योग इसका प्रमुख उदाहरण है। अहमेदाबाद मिल मालिक संघ ;Ahmedabad mill owners association) तथा अहमदाबाद सूती वस्त्र मजदूर संघ ;Ahmedabad Textile labour Association) के मध्य बोनस भुगतान के लिए तथा औद्योगिक विवाद के समाधन के लिए 27 जून, 1955 को दो समझौते किए गये। पहले समझौते के अशं इस प्रकार है—

1. यह समझौंता 1953 से 1957 की बोनस सम्बन्धी समस्याओं पर लागू होगा तथा यह समझौता संगठन की सभी स्थानीय इकाइयों पर लागू होगा। इस समझौते में स्वीकार किया गया कि बोनस वार्षिक लाभ में से दिया जाएगा। सम्पत्ति पर ”ास, विकास छूट, पुनर्स्थापन छूट, पुनर्स्थापन एर्व नवीनीकरण तथा निर्गमिक पूँजी पर उचित लाभांश की व्यवस्था के बाद अतिरिक्त लाभ में से बोनस दिया जाएगा। उचित लाभांश निर्गमित पूँजी के 6÷ तक सीमित किया गया, इसमे बोनस का अंश तथा कार्यशील पूँजी कोष भी सम्मिलित होगा। बोनस की राशि में श्रमिकों को दिया जाने वाला ध्न, जिसकी न्यूनतम सीमा मूल वेतन तथा मजदूरी का 4.8÷ तथा अध्कितम 25÷ थी जो श्रमिकों द्वारा वर्ष में अर्जित किया गया हो।
2. दोनों संघों ;मिल मालिक संघ एवं मजदूर संघद्ध ने यह भी समझौता किया कि उपलब्ध् लाभ अतिरेक (surpluss) का निर्धरण सामूहिक रूप से किया जाएगा तथा बोनस की मात्रा प्रत्येक मिल मे वितरित की जायेगी। इस विषय पर यदि दोनें पक्षो के बीच कोई मतभेद होगा तो विवाद लेबर अपीलेट ट्रिब्यूनल के सुपुर्द किया जाएगा। यदि ट्रिब्यूनल की व्यवस्था नही हो सकेगी तो निष्पक्ष निर्णायक की नियुक्ति होगी अथवा अन्त में किसी ऐसे व्यक्ति की नियुक्ति की जाएगी जिसमें दोनों पक्षकारों का विश्वास हो। इस व्यक्ति का निर्णय दोनों पक्षकारों पर लागू होगा।

दूसरे समझौते के अशं इस प्रकार है— दोनों संघ के बीच होने वाले विवाद पहले परस्पर वार्तालाप द्वारा हल किए जायेंगे। यदि यह तरीका असपफल रहता है तो विवाद पंचनिर्णय के लिए सुपुर्द किये जायेगें। प्रत्येक पक्ष पंचों का एक समूह प्रस्तुत कर सकता है। इस समूह/ दल में कम से कम 2 निर्णायक तथा अध्कि से अध्कि 5 निर्णायक हो सकते है। जब कभी भी औद्योगिक विवाद होगा तो प्रत्येक पक्ष अपना पंच नियुक्त करेगा तथा 2 निर्णायक से निर्णायक बोर्ड ;Board of Arbitrationद्ध गठित होगा। यह बोर्ड उपलब्ध् सूची मे ;panelद्ध से या किसी बाहरी व्यक्ति को निर्णायक करेगा जिससे दोनों पक्षकारों में असहमति की दशा में निष्पक्ष निर्णय के लिए वे अपना विवाद निर्णायक के सुपुर्द कर सके । इस निर्णायक का निर्णय दोनों पक्षो पर लागू होगा।

रांष्ट्रीय स्तर पर समझौता ;Agreement At National level)

इस समझौते में **1956 का बागान श्रमिकों का बोनस समझौता** तथा **1951 का दिल्ली समझौता** महत्त्वपूर्ण है। इन दोनो समझौतों के मुख्य अंश इस प्रकार है—

1. **जनवरी, 1956 में लगान श्रमिकों का बोनस समझौता** पफभारतीय चाय संघ तथा भारतीय चाय बागान संघय (Indian tea association and indian tea planter associaton) तथा हिन्द मजदूर सभा और इण्टक के बीच हुआ। इस समझौते से लगभग 10 लाख श्रमिक लाभान्वित हुए।
2. **7 जनवरी 1951 का दिल्ली समझौता** श्रमिकों और प्रबन्ध्कों के बीच उस सम्मेलन में किया गया जो विवेकीकरण और अन्य समस्याओं के लिए आयोजित किया गया था। इस समझौते के मुख्य अंश निम्नलिखित है–
   (i) शोध् (Research) के लिए प्रबन्ध्कों तथा श्रमिकों के द्वारा चयन किये गये विशेषज्ञों को रखा जाना चाहिए। कार्य करने की दशाएँ प्रमापित (Sstandard) होनी चाहिए। नई मशीनों की स्थापना के लिए एक न्यूनतम समय प्रमापीकरण (Standardisation) के लिए दिया जाना चाहिए ताकि श्रमिक पर्याप्त अनुभव प्राप्त कर सके।
   (ii) जहाँ भी राष्ट्रीयकरण (Nationalisation) किया जायेगा, नई नियुक्तियाँ नहीं की जायेगी तथा श्रमिक की मृत्यु या रिटायर होने पर खाली स्थानों को नही भरा जायेगा।

(iii) अतिरिक्त (surplus) श्रमिकों को अन्य विभागों में लगाया जायेगा तथा उनकी नौकरी में किसी भी प्रकार की रूकावट नहीं पैदा होने दी जायेगी और जहाँ तक संभव होगा, श्रमिकों की मजदूरी की दर में कोई कमी नहीं की जाएगी।

(iv) उद्योग द्वारा उत्पादित की गई वस्तुओं की माँग बढ़ने पर जहाँ कहीं संभव होगा नई मशीनों स्थापित की जायेगी।

(v) ऐच्छिक रूप से जो श्रमिक रिटायर होगे उन्हे ग्रैच्युटी (Gratunity) दी जाएगी।

(vi) प्रशिक्षण काल (Training Period) में श्रमिक का वेतन / साधरण व्यय, प्रबन्ध्क द्वारा वहन किया जाएगा जबकि प्रशिक्षण लागत सरकार के द्वारा दी जायेगी ।

(vii) अतिरिक्त (Surplus) श्रमिकों को लगाने के लिए सरकार द्वारा अन्य योजनाएँ आरभं की जानी चाहिए।

भारत में सामूहिक सौदेबाजी का मूल्यांकन
(Evaluation of collective Bargainng in India)

भारत मे अध्किांश समझौते संस्था कारखाने के स्तर पर किये गये है। जबकि बम्बई एवं अहमदाबाद के महत्त्वपूर्ण वस्त्र केन्द्रों में, उद्योग के स्तर पर भी समझौते हुए है। गत वर्षो में ऐच्छिक समझौतों द्वारा विवादों को हल किये जाने के अनेक उदाहरण मिलते हैं। जैसे—रसायन, पैट्रोलियम, तेल शोध्न एवं वितरण, एल्युमिनियम, ऑटोमोबाइल रिपेयरिंग तथा विघुत एवं अन्य सामग्री के निर्माण जैसे उद्योग आदि। बन्दरगाह तथा जहाजों पर व्यक्तिगत केन्द्रों में ये समझौते अकसर होते रहते है। समस्त बन्दरगाहों को प्रभावित करने वाले कुछ विवादो पर राष्ट्रीय स्तर के समझौते किय गये है। बैकिगं क्षेत्र में सामूहिक समझौते के माध्यम से दोनों पक्ष एक दूसरे के नजदीक आ रहे है। भारत के जीवन बीमा निगम ने भी सामूहिक समझौतो के आपसी मतभेद सुलझाने का प्रयास किया है। औद्योगिक शान्ति प्रस्ताव ;Industrial Truce Resolution 1962द्ध, नियोक्तिाओं तथा श्रमिकों के केन्द्रीय संगठन की बैठक में स्वीकृत किया गया था। इस प्रस्ताव ने भी सामूहिक सौदाबाजी को बढावा दिया।

भारत में सामूहिक समझौते की स्थिति कुल मिलाकर असंतोषजनक नहीं है यद्यपि एक विस्तृत क्षेत्र में इसका विकास होना निश्चित रूप से आवश्यक है। अभी भी सामूहिक सौदेबाजी को भारत के औद्योगिक समाज के अन्दर विकसित होना है तथा इसका उद्योग एवं श्रमिकों पर अपने प्रभाव को शक्तिशाली बनाना है।

गत वर्षो मे भारत सरकार ने श्रमिक शिक्षा योजना, प्रबन्ध में श्रमिकों की भागीदारी, कारखाना स्तर पर वर्कर्स कमेटियों, सयुक्त परिषदों तथा शिकायत संबंधे क्रियाविध् ;Grievance Redressal Procedure) अन्तः सगंठन शान्ति संहिता (Code of Efficiency and Welfare), अनुशासन संहिता (Code of Discipline) आदि से सामूहिक सौदाबाजी का बहुत अध्कि प्रोत्साहन देने का प्रयास किया है। इसके अतिरिक्त त्रिपक्षीय सम्मेलनों, सयुक्त परामर्श बोर्डो तथा औद्योगिक समितियों ने भी सामूहिक सौदेबाजी को प्रोत्साहित किया है।

अन्त में कहा जा सकता है कि जिस रूप से सामूहिक सौदेबाजी ने पश्चिमी देशों में प्रगति की है वह भारत के लिए उचित न होगा क्योकि भारत की नियोजित अर्थव्यवस्था है जिसमे विशेष उत्पादन के लक्ष्यों को पूरा करना होता है, इसके साथ पश्चिमी ढंग से प्रयोग नहीं किया जा सकता।

औद्योगिक श्रमिकों का स्वास्थ्य एवं सुरक्षा
(health and safety of indsutrialworkers)

श्रमिकों के स्वास्थ्य की समस्या
(The Problem of Workers Health)

श्रमिकों के स्वास्थ्य की समस्या के दो पहलू (Aspectsद्ध है—

1. श्रमिकों के स्वास्थ्य को होने वाली हानि

2. व्यवसायजनिक बीमारियों (occupational diseases) के कारण श्रमिकों का स्वास्थ्य संकट मे पड़ जाता है। औद्योगिक स्वास्थ्य राष्ट्रीय स्वास्थ्य का अंग है और इसमें सुधर की आशा तब तक नही की जा सकती जब तक सामान्य सार्वजनिक स्वास्थ्य में सुधर न आये। औद्योगिक श्रमिक के रूप में उसके व्यवसायजनिक बीमारियों ;शीशा, ध्ुआँ, पफास्पफोरस, पारे के विष के प्रयोग से तथा बन्द हवा आदि से होने वाली बीमारियाँद्ध जिनसे श्रमिकों को भय रहता है, उचित रीति से बनाये गये औद्योगिक श्रम– स्वास्थ्य सेवा के द्वारा दूर किये जा सकते है। यह दुर्भाग्य की बात है कि भारत में, जहाँ बड़े पैमाने पर औद्योगीकरण हो रहा है वहाँ अभी कोई सुव्यवस्थित और प्रभापपूर्ण औद्योगिक स्वास्थ्य सुधर के लिए सेवा देश में नही है।

औद्योगिक श्रमिक का स्वास्थ्य
(HEALTH OF INDUSTRIAL WORKERS)
अथवा
;औद्योगिक स्वास्थ्यद्ध
(industrial health)

औद्योगिक स्वास्थ्य एक नई प्रणाली है जो औद्योगिक इकाइयों में श्रमिकों के स्वास्थ्य को सुधरने तथा रोग या चोट लगने की रोकथाम करने के विशेष उद्देश्य से अपनाई जाती है। औद्योगिक स्वास्थ्य का मुख्य उद्देश्य रोग एवं चोट को रोकना है न कि इलाज के लिए दवाई देना।

परम्परागत अर्थ में औद्योगिक स्वास्थ्य से आशय फकेवल एक निश्चित की जाने वाली बीमारी अथवा अस्वस्थताय् से किया जाता रहा है। किन्तु आधुनिक औद्योगिक जगत में स्वास्थ्य—व्यक्ति एवं उसके वातावरण के बीच आन्तरिक क्रिया का परिणाम समझाा जाता है।

आधुनिक दृष्टि से औद्योगिक स्वास्थ्य—

1. श्रमिकों को उनके काम के दौरान औद्योगिक वातावरण से उत्पन्न होने वाली कठिनाइयों (hazards) से सुरक्षित करना।
2. श्रमिकों के भौतिक, शारीरिक एवं मानसिक समायोजनों (Adjustement) में सहायता करना।
3. श्रमिकों के सामाजिक कल्याण में वृ(करना आदि कार्य सम्मिलित होते है। आज जनसंख्या का बहुत बड़ा भाग महिलाओं और पुरूष श्रमिकों के रूप में है। इनका बहुत अध्कि समय अस्वास्थ्यप्रद औद्योगिक वातावरण मे, जिसमें वे कार्य करते है, बीत जाता है। उद्योग में ऐसे रोजगार का श्रमिकों के स्वास्थ्य की दृष्टि से विशेष महत्त्व होता है। व्यावसायिक खतरों को कम करने तथा श्रमिकों के स्वास्थ्य की रक्षा की दृष्टि से **औद्योगिक स्वास्थ्य प्रणाली का सार्वजनिक स्वास्थ्य की एक शाखा के रूप में विकास हुआ है।**

सेवायोजकों ने यह महसूस किया है कि स्वस्थ रहे बिना श्रमिक कुशल नही बन सकता अथवा उसक उत्पन्न शक्ति मे वृ(नही की जा सकती है। स्वस्थ औद्योगिक वातावरण से– श्रमिकों की अदला—बदली में कमी तथा व्यावसायिक रोगों में कमी आती है।

किसी उद्योग में काम कर रहे कर्मचारियों के स्वास्थ्य की सुरक्षा करना उद्योग के मालिकों का कर्त्तव्य है। अगर कर्मचारियो का स्वास्थ्य अच्छा होगा तो उनके कार्य करने की क्षमता बढ़ेगी जिससे उत्पादन में वृ(होगी। इसके लिए उद्योग मे स्वास्थ्य सुरक्षा सम्बन्ध्ति अच्छी कार्य की दशाएँ प्रदान की जाएँ। कई कार्य स्वास्थ्य को हानि पहुँचनें वाले होते है। प्रायः श्रमिक को दूषित वातावरण में कार्य करना पड़ता है तथा उत्पादन प्रविध् ;Techniqueद्ध उसके स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव डालती है।अतः सुरक्षा के लिए समय—समय पर चिकित्सा सहायता, शारीरिक परीक्षण तथा पौष्टिक भोजन से कार्यकारी क्षमता में किसी प्रकार की कमी नहीं हो पाती।

कार्य की अच्छी दशाएँ कर्मचारी के स्वास्थ्य को ठीक बनाए रखती है, जिससे उसकी कार्यकुशलता नही गिरने पाती। प्रकाश एवं उत्पादकता, शोरगुल एवं दत्तचित्तता तथा गर्मी एवं दुर्घटनाओं आदि में ध्नात्मक सम्बन्ध् पाया गया है।

भारत में स्वास्थ्य कठिनाइयों या संकट से सुरक्षा
(Protectiom Against Health Hazards in India)

भारत के उद्योगों में श्रमिकों की स्वास्थ्य रक्षा के लिए किये गये प्रयास संताषजनक नहीं है। भारतीय उद्योगपति आधुनिक औद्योगिक स्वास्थ्य सेवा को कल्याण सम्बन्धी उपाय मात्र समझते है। आज औद्योगिक स्वास्थ्य रक्षा का उता ही महत्त्व है जितना आधुनिक उद्योग में मशीनरी को सही दशा में रखने का होता है।

भोर समिति ;Bhore Committee) ने अपनी रिर्पोर्ट में कहा था कि भारत में औद्योगिक श्रमिकों के स्वास्थ्य सम्बन्धी आँकड़ों ;Statisticsद्ध ज्ञात करने की कोई उचित व्यवस्था नहीं थी। भारत में अधिकाशं औद्योगिक संस्थाएँ श्रमिकों की बीमारी तथा उद्योगजनित बीमारियों का कोई रिकार्ड नहीं रखते थे। केवल बड़े पैमाने के प्रगतिशील औद्योगिक संस्थायें ही अपने यहाँ इस सम्बन्ध में रिकार्ड रखती थी। जैसे— टाटा उद्योग ;Tata Industry) की अनुपस्थिति सम्बन्धी आँकड़ो से ज्ञात होता है कि बीमारी के कारण होने वाली अनुपस्थिति की दर कापफी ऊँची थी। **प्रो. वी. वी. अदारकर, स्वास्थ्य सर्वेक्षण समिति तथा डॉ. टॉमस बेडपफोर्ड** के द्वारा दी गई रिपोर्ट से यह पता चलता है कि भारत में औद्योगिक श्रमिकों के रहने और कार्य करने की दशायें वास्तव में संतोषजनक नहीं थी।

सरकारी प्रयास ;government roleद्ध— भारत सरकार ने औद्योगिक श्रमिकों के स्वास्थ्य रक्षा की आवश्यकता को मान्यता प्रदान करने हुए इनका स्वास्थ्य सम्बन्धी अनुसंधन ;Researchद्ध करने के लिए अध्कि पूछताछ की है। औद्योगिक स्वास्थ्य से सम्बन्ध्ति उपचार उपायों का वैधनिक रूप से लागू किया है। एक उल्लेखनीय काम सरकार ने यह किया है कि फ्भारतीय गवेषणा निध्ि परिषद्" ;Indian Research Fund Association)के अधीन कुछ विशेष उद्योगों की स्वास्थ्य समस्याओं के समाधन के लिए एक विशेष सलाहकार समिति (Special Advisory Committee)की स्थापना की गई। इस परिषद् की स्वास्थ्य गणना युनिट ने स्वास्थ्य समस्याओं पर कुछ अनुसंधन किये हैं जैसे—श्रमिकों पर अध्कि शोर पर प्रभाव, दुर्घटनाओं के कारण अनुपस्थिति, छापेखानों ;Printing Pressद्ध में शीशे द्वारा पैदा विष का प्रभाव आदि। इसके अलावा भारतीय जूट कारखानों में श्रमिकों की डाक्टरी परीक्षा की गई है। औद्योगिक स्वास्थ्य परीक्षण के लिए सुविध्एँ प्रदान की है। स्वास्थ्य एवं सुरक्षा से संबंध्ति एक पत्रिका का प्रकाशन नियमित रूप से हो रहा है। कलकत्ता में **अखिल भारतीय स्वास्थ्य विज्ञान तथा सार्वजनिक संस्थान** (All India Institure of Hygiene and Public Health Calcutta) में एक विशेष औद्योगिक स्वास्थ्य विज्ञान पाठ्यक्रम का आयोजन किया गया है। भारत के कई राज्यों, बागानों में तथा मोटर यातायात श्रमिकों के लिए चिकित्सा इन्सपेक्टस तथा स्वस्थ प्रमाणित करने वाले डॉक्टरों की नियुक्ति की गई है। भारत सरकार की प्रार्थना पर अमेरिका ने तकनीकी सहयोग कार्यक्रम ;Tecnical Co-Operation Programme) के अधीन एक औद्योगिक स्वास्थ्य विज्ञान संघ की सेवा प्रारम्भ की है। भारत सरकार ने एक **औद्योगिक स्वास्थ्य विज्ञान संगठन** की स्थापना की है जिसने अनेक संकटपूर्ण व्यवसायों का सर्वेक्षण किय है। इसके अलावा एक केन्द्रीय श्रम संस्थान, बम्बई ;Central Labour Institute, Bombay) की स्थापना की गई । इस संस्थान में स्वास्थ्य, सुरक्षा, कल्याण, राष्ट्रीय संग्राहलय,स्वास्थ्य विज्ञान प्रयोगशाला, प्रशिक्षण केन्द्र, सूचना केन्द्र तथा पुस्तकालय भी है।

पंचवर्षीय योजनाओं में सरकारी प्रयास
(Government Role in Five Year Plan)

प्रथम पंचवर्षीय योजना— इस पंचवर्षीय योजना में श्रमिकों की कार्य करने की दशाएँ अच्छी हों, इस पर बल दिया व्यवसायजनित बीमारियों से श्रमिकों का बचाव हो सके इस दिशा में प्रयास किये गये। प्रथम योजना में श्रमिकों के स्वास्थ्य कार्यक्रमों 65.20 करोड़ रूपये व्यय हुए।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना इस योजना में वर्तमान स्वास्थ्य कार्यक्रम का विस्तार किया गया। इस योजना में 140.80 करोड़ रूपये व्यय किये गये।

तीन वार्षिक योजनाएँ ;Annual Plan– 1966–69द्ध– इन वार्षिक योजनाओं मे श्रमिकों के स्वास्थ्य सम्बन्धी कार्यक्रमों पर 140.20 करोड़ रूपये व्यय किये गये।

चौथी वार्षिक योजनाएँ (1969-74)– इस योजनाकाल में ग्रामीण क्षेत्र मे प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों को मजबूत बनाया गया। इन केन्द्रों रोग पफैलाने से रोकना तथा रोग होने पर उसका इलाज होने की व्यवस्था की गई। इस योजना में 335.50 करोड़ रूपये व्यय किये गये।

पांचवीं पंचवर्षीय योजना (1974-79)–इस योजनाकाल में न्यूनतम सार्वजनिक स्वास्थ्य सुविधओं की व्यवस्था, परिवार नियोजन, गर्भवती एवं दूध पिलाने वाली माताओं की पौष्टिक भोजन की व्यवस्था आदि कार्यक्रमों पर जोर दिया गया। इस योजना में स्वास्थ्य कार्यक्रमों पर 681.66 करोड़ रूपये के व्यय का प्रावधन रखा गया था।

छठी पंचवर्षीय योजना (1980- 85)– इस योजना में ग्रमीण क्षेत्रों, आदिवासी क्षेत्रों तथा गरीबी लोगों के लिए अच्छी चिकित्सा सुविधओं की व्यवस्था करना था। इस योजनाकाल में स्वास्थ्य कार्यक्रमों पर 1881.05 करोड़ रूपये के व्यय का प्रावधन था।

सातवीं पंचवर्षीय योजना (1985-90)–इस अवधि में चिकित्सा व स्वास्थ्य कर्मचारियों की शिक्षा तथा प्रशिक्षण की वर्तमान व्यवस्था में परिवर्तन करने का लक्ष्य रखा गया। स्वास्थ्य की देख–रेख सम्बन्धी सुविधओं में गुणनात्मक सुधर की व्यवस्था की गई। इस योजना मे स्वास्थ्य में स्वास्थ्य कार्यक्रमो पर 3392.89 करोड़ रूपये के व्यय का प्रावधन रखा गया।

भारत की पंचवर्षीय योजना में विभिन्न स्वास्थ्य कार्यक्रमों को चलाने की व्यवस्था की गई। केन्द्रीय श्रम संस्थान और इसी संस्थान के एक विभाग के रूप में फऔद्योगिक स्वास्थ्य विज्ञान प्रयोगशालाय की स्थापना की गई है जो समय–समय पर श्रमिकों के स्वास्थ्य या औद्योगिक स्वास्थ्य का सर्वेक्षण करती है। कारखाना अधिनियम, 1948 ;Factories Act,1948द्ध इस सम्बन्ध में उल्लेखनीय है। इसके अलावा भारत में विभिन्न संस्थाओं जैसे Central and Regional Labour InstituteAll India Institute of public Health and Hygiene] Industrial Hygiene division of the central Public Health Research Institute Employees State Insurance Corporation-ESI आदि से श्रमिकों के स्वास्थ्य सुरक्षा, स्वास्थ्य कार्यक्रमों में सुधर तथा श्रमिकों के स्वास्थ्य को कठिनाइयों या संकट से बचाने के लिए सहायता प्राप्त की जा सकती है।

औद्योगिक श्रमिकों की स्वास्थ्य रक्षा या उनके स्वास्थ्य का खतरों से बचाने के लिए सेवायोजको/ प्रबन्ध्कों को विशेष रूप से निम्नलिखित कार्यो पर ध्यान देना चाहिए–

1. उद्योग मे प्रकाश, तापमान और वायु–संचालन की पर्याप्त व्यवस्था करना।
2. खतरनाक धुएँ से कर्मचारियों के बचाव की पूरी व्यवस्था करना।
3. कारखाने मे की जाने वाली किसी ऐसी निर्माण प्रक्रिया में, जिससे आँखों का हानि पहुँचने का सदंह है, सुरक्षा हेतु प्रभावकारी परदों या उपयुक्त चश्मों का प्रबन्ध किया जाए।
4. सासँ लेने के उपयुक्त यन्त्र की व्यवस्था तथा प्रशिक्षण व अभ्यास किया जाये।
5. यदि आग लगने से विस्पफोट होने की संभावना हो तो समस्त प्रभावकारी उपाय किये जाएँ।
6. प्राथमिक उपचार के उपकरण की व्यवस्था हो।
7. कर्मचारियों को प्राथमिक चिकित्सा सम्बन्धी प्रशिक्षण दिया जाये।
8. शोरगुल को, जो उत्पादन प्रक्रिया से उत्पन्न होता है, कम किया जाये।
9. नीरसता (Monotony), उदासीनता एवं उत्साहहीनता को बढ़ावा देती है, इसे प्रारम्भिक स्तर पर ही रोकने के उपाय करना चाहिए।
10. श्रमिकों के स्वास्थ्य का समय–समय पर निरीक्षण करवाते रहना चाहिए।

कारखाना अधिनियम, 1948 में औद्योगिक श्रमिकों के स्वास्थ्य सम्बन्धी व्यवस्थाएँ (Provision Regarding Health of Industrial Workers Under Factories Act 1948)

धराएं 11से 20— अधिनियम मे जहाँ और प्रावधन किये गये हैं वहाँ श्रमिकों के स्वास्थ्य ;Healthद्धके विषय में भी महत्त्वपूर्ण प्रावधन किए हैं। ये प्रावधन निम्न हैं—

1. **सपफाई** (Cleanliness): प्रत्सेक कारखाना स्वच्छ एवं दुर्गन्ध्मुक्त रखा जायेगा जो कि गदं नाले, शौचालय आदि की गदगी से उत्पन्न होती है। कारखाने के प्रत्येक भाग को प्रतिदिन झाड़—पोछ कर ध्ूल आदि को दूर किया जायेगा एवं सप्ताह में कम से कम एक बार धेकर ;यदि आवश्यक हो तो कीटाणुनाशक औषध् िप्रयोग करकेद्ध प्रभावशाली ढंग से सापफ किया जाये।

   प्रत्येक 12 माह में एक बार सपेफदी वार्निश एवं रंग—रोगन अवश्य किया जाए। ;धरा 11द्ध

2. **बेकार तथा गन्दे पदोर्थो को हटाने की व्यवस्था** (disposal of wastes and Effuents): प्रत्येक कारखाने की निर्माण प्रक्रिया से उत्पन्न गन्दे पदार्थो को प्रभावी ढंग से हटाने की व्यवस्था होनी चाहिए।

   राज्य सरकार इस संबंध् में नियम बना सकती है अथवा निर्देश दे सकती है। ;धरा 11द्ध

3. **रोशनदान एवं तापमान** (Ventilation and temperature): प्रत्येक कारखाने में ताजी हवा आने के लिए पर्याप्तम मात्रा में रोशनदान होने चाहिए एवं ऐसे तापमान की व्यवस्था होनी चाहिए जिसमें श्रमिकों को पूर्ण आराम मिल सके। परन्तु यदि किसी निर्माणी प्रक्रिया के लिए किसी विशेष तापमान की आवश्यकता है तो श्रमिकों की रक्षा हेतु ऐसे कदम उठाये जाएँ जो व्यावहारिक हों। इस सम्बन्ध् में कारखाने की दीवारों का डिजाइन इस प्रकार का बनाया जाए कि ताप अध्कि न बढ़ने पाए।

   राज्य सरकार किसी कारखाने वर्ग या वर्ण के कारखाने के लिए स्थान निश्चित कर सकती है एवं किसी स्थान विशेष पर थर्मामीटर रखने का आदेश दे सकती है।

   यदि सरकार समझती है कि कारखाने का अत्यध्कि तापमान सपफेदी करने, छिड़काव करने, विभक्तिकरण करने, खिड़कियों के बाहरी भाग पर पर्दे लगाने, छत की ऊँचाइ बढ़ाने या बाहरी दीवारें या छत बनाने से कम हो सकती है तो सरकार निर्देश दे सकती है।

4. **ध्ूल एवं ध्ुआँ** (Dust and Fume): यदि किसी निर्माणी प्रक्रिया के कारण कापफी मात्रा में ध्ूल या ध्ुआँ एकत्रित होता है जिससे श्रमिकों के स्वास्थ्य को हानि होने का भय हो तो ऐसे उपकरण लगाने होंगे जो ध्ूल एवं ध्ुएँ को सापफ कर सकें एवं श्रमिकों के स्वास्थ्य की रक्षा हो सके।

5. **कृत्रिम आर्द्रता** (Artificial Humidity): यदि किसी कारखाने में हवा में कृत्रिम आर्द्रता ;नमीद्ध उत्पन्न हो जाती है तो उस संबंध् में राज्य सरकार नमी का स्तर निर्धरित कर सकती है। राज्य सरकार उन साध्नों की जाँच करने का आदेश दे सकती है जो कृत्रिम नमी उत्पन्न करने के लिए प्रयुक्त किए गये हैं।

   ऐसे कारखानों में उपयोग किया जाने वाला पानी किसी सार्वजनिक स्रोत से लेना होगा परंतु यदि अन्य किसी स्रोत से लिया गया है तो उसका प्रयोग करने से पूर्व उसे शु(करना आवश्यक है जिससे श्रमिकों के स्वास्थ्य पर कोई बुरा प्रभाव न पड़े।

   यदि निरीक्षक को यह प्रतीत हो कि पानी शु(नहीं है तो वह लिखित रूप से प्रबन्ध्क को आदेश दे सकता है।

6. **अत्यध्कि भीड़—भाड़** (Overcrowding): यदि किसी स्थान पर अध्कि भीड़—भाड़ होगी तो निश्चय ही वहाँ गन्दगी भी होगी एवं वायु भी अशु(हो जायेगी जिसका स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ेगा। इस संबंध् मे भी सरकार ने नियम बनाये हैं।

   किसी कमरें में इतनी भीड़ न हो कि श्रमिकों के स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़े।

अध्निियम से पूर्व स्थापित कारखाने मे प्रत्येक व्यक्ति के लिए 350 घन पफुट एवं अध्निियम के लागू होने के पश्चात् स्थापित कारखाने में प्रत्येक व्यक्ति के लिए 500 घन पफुट से कम क्षेत्र नहीं होना चाहिए।

यदि कारखाना निरीक्षक चाहे तो कार्यकक्ष में अध्कि से अध्कि श्रमिकों की संख्या निश्चित कर सकता है परन्तु यदि नियमों के पालन हेतु आवश्यक हो तो कुछ निश्चित शर्तो के अधीन कारखाने को मुक्त भी कर सकता है।

;धरा 16द्ध

7. **प्रकाश** (Lighting)ः उचित प्रकाश की व्यवस्था अत्यन्त आवश्यक है। क्योकि इसके विपरित अवस्था होने पर श्रमिकों की आँखों पर इसका बुरा प्रभाव पड़ता है।

कारखाने के प्रत्येक उस स्थान पर, जहाँ से होकर श्रमिक आते—जाते हैं, कृत्रिम एवं प्राकृतिक दोनों प्रकार के प्रकाश की व्यवस्था करनी होगी।

प्रकाश आने के लिये रोशनदान एवं खिड़कियों को पूर्णरूप से स्वच्छ रखना चाहिये जिससे प्रकाश के आने में किसी प्रकार की रूकावट न हो।

प्रकाश कभी भी चकाचौंध् करने वाला न हो जिससे आँखों पर बुरा प्रभाव पड़े।

राज्य सरकार उचित प्रकाश का स्तर निर्धरित कर सकती है।

8. **पीने का पानी** (Drinking Water)ः कारखाने में पीने के शु(जल की पर्याप्त व्यवस्था होगी। जिस स्थान पर पीने का पानी हो, वहाँ स्पष्ट शब्दों में पीने का जल शब्द लिखना चाहिए।

पीने के जल के स्थान से स्नानगृह, शौचालय एवं मूत्रालय की दूरी 20 पफूट हो। मुख्य निरीक्षक इस सम्बन्ध् में कम दूरी रखने की आज्ञा भी प्रदान कर सकता है।

राज्य सरकार यदि चाहे तो कोई नियम बना सकती है।

9. **शौचालय एवं मूत्रालय** (Latrines and urinals)ः प्रत्येक कारखाने में पर्याप्त मात्रा में शौचालय एवं मूत्रालय होगें जिनकी सपफाई का समुचित प्रबन्ध् हो।

स्त्रियों एवं पुरूषों के लिए पृथक् शैचालय तथा मूत्रालय बनाये जाने चाहिए एवं ऐसे स्थान पर होने चाहिए जहाँ हवा एवं प्रकाश अच्छी मात्रा में आता हो।

जहाँ पर श्रमिकों की संख्या 250 से अध्कि हो वहाँ पर शौचालय एवं मूत्रालय निर्धरित किस्म के होंगे। शौचालय एवं मूत्रालय के ध्रातल से 3 पफूट ऊपर तक दीवारों पर चिकनी टाइलें लगी होनी चाहिए।

सरकार चाहे तो शौचालय एवं मूत्रालयों की संख्या निर्धरित कर सकती है।

10. **थूकदान** (Spitoons)ः उपयुक्त स्थानों पर थूकदान एवं पीकदान दोनों की पूर्ण व्यवस्था होनी चाहिए एवं इन्हें पूर्णरूप्ेण सापफ रखने की व्यवस्था होनी चाहिए।

थूकदान या पीकदान के अतिरिक्त कोई भी व्यक्ति दीवारों या पफर्श पर नही थूकेगा इससे सम्बन्धित सूचनाएँ लगी होनी चाहिए।

यदि कोई उपरोक्त नियम का उल्लंघन करता है तो उसे अध्कितम 5 रूपये का आर्थिक दण्ड दिया जा सकता है। राज्य सरकार जो उपयुक्त समझे इस संबंध् में नियम बना सकती है।

स्वास्थ्य सम्बन्धी व्यवस्थाएँ एक नजर मे

धराएँ	**विषय**
11	सपफाई ;cleanlinessद्ध
12	बैकार तथा गन्दे पदोर्थो को हटाने की व्यवस्था ;disposal of wasteges adn effuents)
13	रोशनदान तथा तापमान ;ventilation and temperature)

14 धूल एवं धुआँ ;dust and fume)

15 कृत्रिम आर्द्रता (Artificial Humidity)

16 अत्याध्कि भीड़–भाड़ ;Overcrowding)

17 प्रकाश ;Lighting)

18 पीने का पानी ;Drinking Water)

19 शौचालय एवं मूत्रालय ;Latrins and urinals)

20 थूकदान (Spitoons)

कारखाना अधिनियम, 1948 के अन्तर्गत औद्योगिक श्रमिकों की सुरक्षा सम्बन्धी व्यवस्थाएँ

(provision regarding Safety of Industrial Workers under Factory Act]1948)

सुरक्षा
(Safety)

धराएँ 21 से 41— कारखानों में विभिन्न प्रकार की मशीनों आदि का प्रयोग होता है जिनके कारण कभी–कभी श्रमिकों का अपने जीवन से हाथ धेना पड़ता है। अतः कारखाने में सुरक्षा नियमों का होना भी अत्यन्त आवश्यक है। सुरक्षा अधिनियम में सुरक्षा के लिए निम्न प्रावधन दिये गये है—

1. **यन्त्रों की घेराबन्दी** (Fencing of Machinery): प्रत्येक मशीन के मुख्य चालक (Prime Mover) का प्रत्येक गतिशील भाग तथा उसमें जुड़ा हुआ पहिया (Flywheel) चाहे मुख्य चालक या पहिया इन्जन घर मे हो या नहीं, पूर्णतः घेराबन्दी करके सुरक्षित करना आवश्यक है।

   प्रत्येक जल–पहिया (Water wheel) तथा जल–चक्की (Water turbine) का सिरे व अन्त का भाग पूर्णतः घेराबन्दी करके सुरक्षित करना आवश्यक है।

   परन्तु यदि किसी यन्त्र की बनावट इस प्रकार है कि उसमे प्रत्येक कर्मचारी को उतनी ही सुरक्षा प्राप्त है जितनी कि घेराबन्दी करने से होती है तो उस स्थिति में घेराबन्दी करना आवश्यक नहीं है। यदि राज्य सरकार आवश्यक समझे तो किसी विशेष यन्त्र से सुरक्षा के लिए विशेष ;धरा 21द्धनियम बना सकती है।

2. **चलती हुई मशीन पर काम करना** (Work on or near machinery in motion): यदि किसी चलती हुई मशीन की जाँच करनी हो या उस पर कार्य करना हो जैसे पट्टद्धा चढ़ाना, उतारना, तेल देना आदि तो ऐसा कार्य विशेष रूप से शिक्षित प्रौढ़ पुरूष श्रमिकों द्वारा ही किया जाना चाहिए एवं उसका नाम निर्धरित रजिस्टर में अवश्य लिखा होना चाहिए। जाँच करते समय कोई भी श्रमिक किसी चलती हुई चरखी (Pulley) को उस समय तक हाथ नही लगायेगा जब तक इस बात से संतुष्ट न हो जाए कि पट्टद्धे की चौड़ाई 6 इंच से कम है एवं पट्टद्धे के जोड़ो को समतल कर दिया गया है या पफीते से बाँध दिया गया है।

   मशीन के प्रत्येक ऐसे भाग की घेराबन्दी करनी आवश्यक है जिससे श्रमिक को क्षति पहुँचने की आशंका हो।

   इस प्रकार के जोखिमपूर्ण कार्य पर स्त्रियाँ एवं नवयुवकों को नियुक्त नहीं करना चाहिए, यदि मशीन के सम्पर्क से उन्हे चोट लगने का भय हो।

   राज्य सरकार किसी भी कारखाने की किसी भी मशीन को सापफ करने, तेल देने, ग्रीस देने या जाँच करने आदि पर राजपत्र में घोषणा करके उस समय तक प्रतिबन्ध लगा सकती है जिस समय मशीन चल रही हो। ;धरा 22द्ध

3. **खतरनाक यन्त्रों पर नवयुवकों की नियुक्ति** (Employment of young persons on dangerous machines): कोई भी नवयुवक उस समय तक इस धरा के अन्तर्गत उस मशीन पर कार्य नहीं करेगा जब तक कि उसे मशीन से होने वाले

खतरों से पूर्णतः अवगत न करा दिया गया हो एवं इस सम्बन्ध में सुरक्षा सम्बन्धी कदम न उठा लिये गए हों, एवं

(i) उसे पूर्ण प्रशिक्षण किया गया हो,या

(ii) किसी ऐसे व्यक्ति के अधीन कार्य कर रहा हो जिसे मशीन का पूर्ण ज्ञान है।

यह धरा केवल उन्हीं यन्त्रों पर लागू होगी जो राज्य सरकार के विचारानुसार खतरनाक प्रकृति के हैं।

4. **शक्ति से सम्बन्धविच्छेद करना** (Striking gear and devices for cutting off power):

(i) प्रत्येक कारखाने में इस प्रकार की क्षमतापूर्ण मशीनों एवं यन्त्रों का प्रबन्ध होना चाहिए जिससे चलते हुए पट्टद्धों को चरखियों पर इध्र–उध्र किया जा सके।

(ii) जब पट्टद्धे गतिशील न हों तो उन्हें ध्ुरी पर नहीं रहने देना चाहिए।

(iii) प्रत्येक काखाने में संकट के समय शक्ति का सम्बन्ध विच्छेद करने (Cutting off Power) एवं चलती हुई मशीनों को रोकने के उपयुक्त यन्त्रों की उपर्युक्त प्रावधन केवल उस कमरे पर लागू होगा जहाँ पर विद्युत से कार्य किया जाताहै।

5. **स्वयं संचालित यन्त्र** (Self acting machine): यदि किसी कारखाने में स्वचालित यन्त्रो का प्रयोग किया गया है एवं ये यन्त्र ऐसे स्थानों पर लगे हैं जहाँ से श्रमिकों को कार्य के बीच से गुजरना पड़ता है तो उनके इध्र–उध्र 18 इंच का स्थान रहना आवश्यक है, जिससे सम्भावित दुर्घटना को रोका जा सके। ;धरा25द्ध

6. **नए यन्त्रों को ढककर रखना** (Casing of New Machinery): ऐसे समस्त यन्त्र, जिनमें शक्ति का प्रयोग किया जाता है एवं जो अधिनियम बनने के बाद लगाये गए है, वे पूर्ण रूप से सुरक्षित एवं ढके होने चाहिए।

कोई भी व्यक्ति, जो यन्त्रों को बेचता है या किराये पर देता है परन्तु उपर्युक्त शर्त को पूरा नही करता उस पर 500 रूपये का आर्थिक दण्ड या 3 माह का कारावास या दोनों प्रकार का दण्ड दिया जा सकता है।

राज्य सरकार खतरनाकों यन्त्रों के विषय में नियम बना सकती है। ;धरा 26द्ध

7. **कपास डालने वाले यन्त्रों पर स्त्रियों एवं बच्चों की नियुक्ति पर प्रतिबन्ध** (Prohibition of employment of women and children near cotton&openers): किसी स्त्री या बच्चे की नियुक्ति कपास डालने वाली मशीन पर कपास दबाने के लिए नहीं हो सकती। परन्तु यदि मशीन के कपास दबाने वाले यन्त्र का किनारा किसी अलग कमरे में है एवं निरीक्षक संतुष्ट है तो वह लिखित रूप से स्त्री एवं बच्चों की नियुक्ति वैध घोषित कर सकता है। ;धरा 27द्ध

8. **माल और मनुष्यों को ऊपर – नीचे लाने वाले यन्त्र** (Hoists and lifts): प्रत्येक ऐसी मशीन जिसकी सहायता से माल चढ़ाने में या मनुष्यों को किसी ऊपर की मंजिल से नीचे लाने या नीचे से ऊपर ले जाने के लिए प्रयोग किया जाता है वह अच्छे मजबूत माल (Material) से बनी होनी चाहिए।

प्रत्येक ऐसा यन्त्र घेरे द्वारा पूर्ण रूप से सुरक्षित होना चाहिए एवं उसमे मजबूत दरवाजे लगे होने चाहिए।

अध्कितम भार की सीमा जिसे ऐसा यन्त्र सुरक्षितपूर्वक ले जा सके, स्पष्ट रूप से लिखा होना चाहिए।

जहाँ पर यह यन्त्र रस्सी या चेन के सहारे कार्य करते है वहाँ पर दो विभिन्न रस्सी या चेन होनी चाहिए एवं प्रत्येक में पूर्ण कार्य करने की क्षमता होनी चाहिए।

यदि इस प्रकार के यन्त्र अधिनियम के लागू होने से पूर्व लगाए गए हैं तो ये व्यवस्थाएँ पूरी न होने पर भी कारखाना निरीक्षक उन्हें चालू रखने की अनुमति प्रदान कर सकता है।

9. **वजन उठाने वाले यन्त्र, जंजीर, रस्सी आदि** (Lifting machines, chains, ropes and lifting tackeles): धरा 28 के समान ही इन यन्त्रों के लिए भी प्रावधन किए गए है। ये यन्त्र पूर्णरूपेण सुदृढ़ किस्म के माल से बने होने चाहिए एवं पूर्ण सुरक्षित होने चाहिए। प्रत्येक 12 महीने में एक बार एक प्रशिक्षित व्यक्ति द्वारा इन यन्त्रों की जाँच होनी चाहिए। ;धरा 29द्ध

प्रत्येक 12 महीने में एक बार एक प्रशिक्षित व्यक्ति द्वारा इन यन्त्रों की जाँच होनी चाहिए। ;धरा 29द्ध

10. **घूमने वाले यन्त्र** (Revolving machine): जिस कारखाने में यन्त्रों द्वारा पीसने का कार्य होता है उस कारखाने के प्रत्येक इस कार्य के लिए प्रयुक्त कमरे में एक सूचना स्पष्ट रूप से लिखी होनी चाहिए कि यन्त्र की अध्कितम सुरक्षित गति क्या है? इस गति से अध्कि का प्रयोग नहीं किया जा सकता।

    राज्य सरकार इस सम्बन्ध में जाँच के नियम बना सकती है। ;धरा 30द्ध

11. **दबाव यन्त्र** (Pressure Plant): यदि किसी कारखाने में प्राकृतिक वायु के दबाव से अध्कि दबाव डालने वाले यन्त्रों का प्रयोग किया जाता है तो इस बात के आवश्यक प्रयत्न करने चाहिए कि निर्धरित दबाव से अध्कि दबाव का प्रयोग न किया जाए।

    राज्य सरकार इस सम्बन्ध में किसी यन्त्र की जाँच के लिए एवं सुरक्षा से सम्बन्ध्ति प्रयत्नों के लिए नियम बना सकती है। ;धरा 31द्ध

12. **पफर्श, सीढ़ियाँ एवं पहुँचने के साध्न** (Floors, stairs and means of access): कारखाने में सभी पफर्श, सीढ़ियाँ एवं आने—जाने के मार्ग मजबूत एवं सुरक्षित बने होने चाहिए। जहाँ आवश्यक हो वहाँ पकड़ने के लिए डण्डों की व्यवस्था करना आवश्यक है।

    इसी प्रकार, जहाँ तक व्यावहारिक दृष्टि से उचित हो, प्रत्येक ऐसे स्थान तक आने—जाने के लिए, जहाँ श्रमिकों का कार्य करना पड़ता है, सुरक्षित साध्न लगाए एवं बनाए जाने चाहिए। ;धरा 32द्ध

13. **गड्ढा, हौज, पफर्श के सूराख** (Pits, sumps opening in floors etc-): प्रत्येक कारखाने में प्रत्येक स्थायी बर्तन, हौज, तालाब, गड्ढे या मैदान या पफर्श में खुला हुआ कोई स्थान जिसकी गहराई, स्थिति, बनावट या सामग्री के कारण जोखिमपूर्ण है वह या तो सुरक्षित ढंग से ढका होना चाहिए या उसकी सुरक्षित घेराबन्दी होनी चाहिए।

    यदि राज्य सरकार चाहे तो किसी भी कारखाने को उपर्युक्त प्रावधनों से मुक्त कर सकती है। ;धरा 33द्ध

14. **अत्यध्कि भार** (Excessive Weight): किसी भी व्यक्ति को अध्कि वजन उठाकर ले जाने के लिए नियुक्त नहीं किया जा सकता, यदि वजन इतना भारी हो कि उससे चोट लगने का भय हो।

    राज्य सरकार इस सम्बन्ध में विभिन्न श्रेणी के श्रमिकों ;स्त्री, पुरूष, नव—युवक ,किशोर आदिद्धद्वारा अध्कितम उठाये जाने वाले वजन की सीमा निर्धरित कर सकती है। ;धरा 34द्ध

15. **आँखों की सुरक्षा** (Protection of eyes): यदि किसी कारखाने में इस प्रकार का कार्य किया जाता है जिससे आँखों में कुछ गिर जाने का भय है या अत्यध्कि रोशनी के कारण ;जैसे वैल्डिंग कीद्ध आँखों को हानि का भय है तो इस प्रकार के कारखानों में आँखों की सुरक्षा का प्रबन्ध करना आवश्यक है।

    राज्य सरकार नेत्र सुरक्षा के लिए प्रयोग किए जाने वाले विभिन्न प्रकार के चश्मों को निर्धरित कर सकती है।

    ;धरा 35द्ध

16. **खतरनाक ध्ुएँ के विरू(सावधनियाँ** (Precautions against dangerous fumes): यदि किसी बन्द कमरे, तालाब,गड्ढे, नल, चिमनी अथवा अन्यत किसी घिरे हुए स्थान में इतना ध्ुआँ एकत्रित हो जाए जिससे श्रमिक को हानि पहुँचने का भय हो तो वहाँ किसी श्रमिक को प्रवेश करने की आज्ञा नहीं दी जाएगी।

    यदि ध्ुआँ ज्वलनशील है तो ऐसी स्थिति में केवल प्रकाश का वही साध्न प्रयुक्त किया जाएगा जिससे अग्नि प्रज्वलित न हो सके (FLame Proof)। इस प्रकार के स्थान पर 24 वाट से अध्कि का विद्युत प्रकाश ले जाने की भी अनुमति नहीं है।

    ध्ुएँ से दुष्प्रभाव को रोकने के लिए जब तक आवश्यक कार्यवाही न कर दी गई हो उस समय तक किसी को भी प्रवेश आज्ञा नहीं दी जा सकती। ऐसे स्थान का परीक्षण किसी प्रशिक्षण व्यक्ति द्वारा कराया जाना चाहिए एवं उससे लिखित प्रमाण —पत्र लेना चाहिए।

प्रत्येक कारखाने में श्वांस उपकरण आदि की व्यवस्था होनी चाहिए जिनका परीक्षण समय—समय योग्य व्यक्ति द्वारा कराना चाहिए।

धुएँ युक्त स्थान पर जांच आदि के लिए उस समय तक प्रवेश की अनुमति नहीं दी जा सकती जब तक कि उसे वायु संचालन द्वारा या अन्य किसी साध्न द्वारा उपयुक्त रीति से ठंडा न कर दिया गया हो।

राज्य सरकार प्रवेश करने वाले छिद्रों के आकार का निर्धरित कर सकती है एवं किसी कारखाने को कुछ विशेष शर्तो पर मुक्त भी कर सकती है।

17. **विस्पफोटक या ज्वलनशील ध्ूल एवं गैस** (Explosive or Inflammable dust, gas etc.):

(i) जहाँ किसी कारखाने में उत्पादन क्रिया में ध्ूल, गैस, धुआँ या भाप आदि पैदा होती हो तो उसमें—

a. प्रभावशाली ढंग से यन्त्रों एवं मशीन की घेराबन्दी करना,

b. इस प्रकार की ध्ूल, गैस आदि को एकत्रित होने से रोकना अथवा हटाना,

c. आग लगने के सभी सम्भावित साध्नों को पृथक करना या उनकी समुचित घेराबन्दी करना।

(ii) यदि कारखाने में लगे किसी यन्त्र या मशीन की बनावट इस प्रकार की है कि वह विस्पफोटक ध्क्के को सहन नहीं कर सकता तो उस स्थिति में विस्पफोटक के प्रभाव एवं प्रसार को रोकने के लिए प्रभावपूर्ण कदम उठाने चाहिए।

(iii) वायुमण्डल में अध्कि दबाव की स्थिति में सम्बन्ध्ति यन्त्रों के सुराक्षत्मक कदम उठाने चाहिए।

(iv) यदि किसी यन्त्र या मशीन में कोई विस्पफोटक या ज्वलनशीन पदार्थ भरा है तो उस पर बैल्डिंग आदि का कार्य उस समय तक नहीं किया जा सकता जब तक कि यन्त्र या मशीन को पूरी तरह ठंडा न कर दिया गया हो।

राज्य सरकार किन्हीं विशेष शर्तों के अधीन उक्त प्रावधन से मुक्ति दे सकती है। ;धरा 37द्ध

18. **अग्नि की दशा में सावधनियाँ** (Precautions in case of fire): प्रत्येक कारखाने में अग्नि से बचाव के ऐसे कुशल साध्नों की व्यवस्था होनी चाहिए जो इसके लिए निर्धरित किए गए है। यदि कारखाना निरीक्षक प्रबन्ध् से सन्तुष्ट नही है तो लिखित रूप से कारखाने के प्रबन्ध्क को आदेश दे सकता है।

कारखाने के दरवाजे बाहर की ओर खुलने वाले होने चाहिए जिससे अन्दर वाला व्यक्ति किसी आवश्यकता के समय शीघ्रतापूर्वक दरवाजा खोल सके।

बाहर निकलने के रास्तों पर निकास द्वार शब्द उस भाषा के लाल शब्दों में लिखा रहना चाहिए जिसे अध्कि श्रमिक समझते है, जिससे आग लगने की दशा में वे उसका प्रयोग कर सकें।

प्रत्येक कारखाने में इस प्रकार के साध्न प्रयुक्त किए जाने चाहिए जो आग लगने की तुरन्त सूचना दे सके, जिन्हें प्रत्येक श्रमिक सुन व समझ सके। जहाँ प्रथम मंजिल पर साधरणतः20 से अध्कि श्रमिक कार्य करते हों अथवा जहाँ पर ज्वलनशील या विस्पफोटक पदार्थ का संग्रह किया जाता हो या वहाँ पर श्रमिकों को आग लग जाने पर बचने के उपायों की शिक्षा देनी चाहिए।

19. **दोषपूर्ण भागों की जाँच का आदेशा** (Power to require specifications of defective parts or tests of stability): यदि कोई निरीक्षक यह महसूस करता है कि कारखाने का भवन या उसका कोई यन्त्र दोषपूर्ण स्थिति में है एवं उससे मानवीय जीवल को खतरा उत्पन्न हो सकता है तो वह लिखित रूप से निर्दिष्ट तिथि से पूर्व—

(i) इस कार्य हेतु ;अर्थात् क्या भवन, मशीन आदि सुरक्षित रूप से प्रयोग किये जा सकते हैंद्ध निर्दिष्ट विवरण ड्राइंग्स या विशिष्ट बातें प्रस्तुत करने,

(ii) निर्दिष्ट रीति से जाँच करने एवं उसके परिणाम को निरीक्षक से सूचित करने का आदेश दे सकता है।

;धरा 39द्ध

20. **भवन तथा यन्त्रों की सुरक्षा** (Safety of Building and Machinery): यह भी लगभग धरा 39 के समान ही है। यदि निरीक्षक को यह प्रतीत होता है कि भवन या यन्त्र का कोई भाग इस दशा में है कि उससे मानव जीवन को खतरा उत्पन्न हो सकता,तो वह प्रबन्ध्क को, उस दोष के निर्दिष्ट समय मे सुधरने का आदेश दे सकता है।

;धरा 40द्ध

21. **नियम बनाने का अध्किार** (power to make rules to supplement this chapter): राज्य सरकार कि भी कारखाने वर्ग या वर्णन के कारखाने के लिए सुरक्षा के ऐसे नियम बना सकती है जो आवश्यक हों।

सुरक्षा से सम्बन्ध्ति व्यवस्थाएँ एक नजर मे

धराएँ	विषय
21	यन्त्रो की घेराबन्दी (Fencing of Machinery)
22	चलती हुई मशीन पर कार्य करना (Work on Machinery in motion)
23	खतरनाक यन्त्रो पर नवयुवको की नियुक्ति (Employment of young person on dangerous machines)
24	शक्ति से सम्बन्ध अलग करना (Strinding gear and devices for cutting of power)
25	स्वंयचालित यन्त्र (self &acting Machinery)
26	नए यन्त्रो का ढक्कर रखना (casing of new Machinery)
27	कपास डालने वाले यन्त्रो पर स्त्रियो एवं बच्चो की नियुक्ति पर प्रतिबन्ध (prohibition of employment of women and chikdren near cotton openers)
28	माल और मनुष्यों को ऊपर–नीचे लाने वाले यन्त्र (Hoists and Lifts)
29	वजन उठाने वाले यन्त्र (Lifting machines] chairs]ropes and Lifting tackles)
30	घूमने वाले यन्त्र (Revolving machines)
31	दबाव यन्त्र (Pressure Plants)
32	पफर्श सीढ़ियाँ एवं पहुँचने के साध्न (Floors]stairs and means of access)
33	गड्ढा, हौज,पफर्श के सूराख (pits, sumps]opening]in Floors etc)
34	अत्याध्कि भार (excessive weights)
35	आँखों की सुरक्षा (protection of eyes)
36	खतरनाक ध्ुएँ के विरू(सावधनियाँ (precautions against dangerous fume)
37	विस्पफोटक या ज्वलनशील ध्ूल एवं गैस (explossive or inflammable dust]gas etc)
38	आग लगने की दशा मे सावधनियाँ (precautions in case of fire)
39	दोषपूर्ण भागो की जाचँ का आदेश (power to require specification to defectiove parts or test of stability)
40	भवन तथा यन्त्रो की सुरक्षा (safety of building and machinery)
41	नियम बनाने का अध्किार (power to make rules to supplement this chapter)

औद्यागिक घटनाएँ
(Industrial Accidents)

औद्योगिक घटनाएँ (industrial accidents): औद्योगिक श्रमिको की दुर्घटनाओ से सुरक्षा ठीक उतनी ही महत्त्वपूर्ण है जितना कि उनकी स्वास्थ्य। औद्योगिक दुर्घटनाओ से औद्योगिक इकाइयों में काम रूक जाता है।

औद्योगिक दुर्घटना का अर्थ ;meaning of industrial accidentद्ध

भारतीय कारखाना अधिनियम, 1948 (the factirt act] 1948) की धरा 88 के अनुसार–फ्जब किसी कारखाने मे कोई दुर्घटना हो जाती है जिससे श्रमिक की मृत्यु हो जाए अथवा ऐसी कोई चोट पहुंचे जिससे चोटग्रस्त व्यक्ति दुर्घटना के बाद 48 घटे या अध्कि समय के लिए काम न कर सके।य सामान्य रूप से दुर्घटना से आशय ऐसी घटना अथवा संयोग से होती हैं जिसकी हमे पूर्व जानकारी या कल्पना तक नही होती अर्थात् अकस्मात् घटने वाली घटना दुर्घटना है। किन्तु श्रमिक क्षतिपूर्ति अर्धिनियम, 1923;workmen compensation Act,1923द्ध के अन्तर्गत दुर्घटना (accident) को विशेष अर्थ मे प्रयोग किया गया है। इस अधिनियम मे दुर्घटना का अर्थ ऐसी घटना या सयोग से है जो किसी व्यवसाय मे काम करने के दौरान हो सकती है। जैसे श्रमिक को चोट लगना,शरीर का कोई अंग कट जाना आदि। इसी प्रकार किसी उद्योग मे लगातार कार्य करने से श्रमिक को कोई रोग ;Diseaseद्धहो जाये तो उसे भी दुर्घटना मे सम्मिलत किया जाता है।

आधुनिक युग मशीनो का युग है। उत्पादन के वास्तविक कार्य से लेकर सामग्री को उठावा–ध्री तक के सभी कार्यो मे मशीनों व यन्त्रों का प्रयोग होने लगा है। मशीनो व यन्त्रो मे खराबी उत्पन्न हो जाने से या श्रमिकों की असावधनी से पफैक्ट्री मे प्रायः दुर्घटनाएँ होती रहती है। यद्यपि प्रबन्ध्क कापफी समय पहले से ही इनको रोकने मे प्रयत्नशील है। पिफर भी इनकी संख्या मे कभी नही आई है। वर्तमान समय मे यह एक अति जटिल समस्या बन चुकी है तथा प्रत्येक औद्योगिक इकाई को इन दुर्घटनाओं के कारण प्रतिवर्ष बड़ी मात्रा मे हानि उठानी पड़ रही है। इस हानि की मात्रा का ठीक अनुमान लगाना सरल नही है पिफर भी यह सत्य है कि यह हानि अत्यध्कि होती है। कुछ वर्ष पूर्व प्रबन्ध्कों का विचार था कि औद्योगिक दुर्घटना से केवल उद्योग को हानि होती है तथा वह भी बहुत कम। वह श्रमिको को संस्था से कानूनी दायित्व के रूप मे मिलने वाली क्षतिपूर्ति राशि को ही मुख्य हानि समझते थे। परन्तु यह विचार सत्य नही है। वर्तमान समय मे औद्योगिक दुर्घटना के संबंध मे किये गयें अध्ययन व अनुसंधन यह स्पष्ट कहते हैं कि एक संस्था को औद्योगिक दुर्घटना से केवल कानूनी दायित्व के रूप मे दी जाने वाली राशि को ही हानि नही होती बल्कि वास्तविक हानि तो इससे कई गुना अध्कि होती है। इतना ही नही, दुर्घटना से न केवल उद्योग को, बल्कि श्रमिक,उपभोक्ता व समाज सभी को हानि होती है। उदाहरण रूप मे एक दुर्घटना से होने वाली हानि को देखकर जाना जा सकता है कि विभिन्न वर्गो को होने वाली हानि क्या है। इसका संक्षिप्त वर्णन निम्नलिखित है–

1. **संस्था को हानि** (loss to industry): कुछ औद्योगिक संस्थाओं का दुर्घटना मे क्षतिपूर्ति की राशि की तो हानि होती रहती ही है इसके अतिरिक्त उसे निम्न हानि भी होती है–
   - (i) श्रमिक की चिकित्सा पर आने वाला व्यय।
   - (ii) दुर्घटना मे घायल श्रमिक को ठीक होने तथा कार्य पर आने तक के लिए दिया जाने वाला वेतन जबकि श्रमिक कोई कार्य नही करता है।
   - (iii) दुर्घटना मे घायल श्रमिक की सहायता के लिए सहानुभूति के लिए या डर के कारण यदि अन्य श्रमिक काम छोड़ देते हैं, ऐसे समय की लागत।
   - (iv) पफोरमैन, सुपरवाइजर तथा अन्य प्रबन्ध्कों द्वारा घायल श्रमिक सहायता, की दुर्घटना की जाँच,उच्च प्रबन्ध्कों व सरकारी अध्किारियों से दुर्घटना सम्बन्धी वाद–विवाद मे लगने वाले समय का मूल्य।
   - (vi) मशीनो व यन्त्रों की जाचँ कराने व ठीक कराने पर आने वाला व्यय।
   - (vii) घायल या मृत श्रमिक के स्थान पर नये श्रमिक की नियुक्ति व प्रशिक्षण पर आने वाला व्यय।
   - (viii) उत्पादन रूक जाने के कारण ग्रहको के आदेश समय पर पूरा करने के लिए अतिरिक्त समय (overtime)पर कार्य करवाया जाता है जिसमें सामान्य दर से अध्कि दर वेतन दिया जाता है। इस अतिरिक्त वेतन की मात्रा।
   - (ix) एक दुर्घटना होने से उसका प्रभाव अन्य श्रमिकों पर भी पड़ता है जिससे प्रायः घबराहट व डर से अन्य दुर्घटनाएँ हो जाती हैं।

यद्यपि औद्योगिक दुर्घटनाएँ लागत की यह सूची (list of cost of industrial Accident) पूर्ण नही है पिफर भी यह दुर्घटना पर आने वाली अत्यध्कि लागत को स्पष्ट करने मे पूर्णतः सपफल है। यह सूची स्पष्ट करती है कि एक दुर्घटना मे होने वाली वास्तविक हानि क्षतिपूर्ति व्यय से कई गुना अध्कि होती है। हैनरिच (hennrich) ने औद्योगिक दुर्घटना व्यय के अध्ययन के बाद अनुमान लगाया है कि सामान्य अवस्था मे श्रमिक क्षतिपूर्ति व्यय मे 1: 4 का अनुपात होता है। अन्य शब्दों मे एक संस्था का दुर्घटना मे आने वाला कुल व्यय कानूनी दायित्व के रूप मे दी जाने वाली राशि का पाँच गुणा होता है। स्पष्ट है कि एक संस्था को औद्योगिक दुर्घटना से विस्तृत हानि उठानी पड़ती है।

2. **श्रमिकों को हानि** (loss to workers)ः औद्योगिक दुर्घटनाओं से निर्माणी संस्था को हानि होती है। श्रमिक पर भी इनका बुरा प्रभाव पड़ता है। वास्तव मे श्रमिक को ही दुर्घटना मे अन्य सभी की तुलना मे अध्कि हानि होती है। श्रमिक को प्रायः आर्थिक हानि तो होती है। उसे शारीरिक कष्ट भी उठानी पड़ती हैं। यदि श्रमिक की मृत्यु हो जाती है तब उसका परिवार बेसहारा हो जाता है तथा जब अयोग्य हो जाता है, तब वह जीवन भर अपने परिवार पर भार बन जाता है। ऐसा होने पर उसके परिवार की आय का साध्न तो समाप्त होता ही है साथ ही अयोग्य श्रमिक का भार भी उसके परिवार पर बना रहता है।

3. **उपभोक्ता को हानि** (loss to consumer)ः क्योंकि दुर्घटना व्यय उत्पादन लागत मे शामिल होता है, इसिलए दुर्घटनाएँ उत्पादक की उत्पादन लागत मे वृ(कर देती हैं। इससे उत्पादन का मूल्य बढ़ जाता हे तथा भोक्ता को वस्तुएँ मंहगी प्राप्त होती है जिससे वह पर्याप्त मात्रा मे उपभोग नही कर पाता तथा उसके जीवन स्तर मे सुधर नही हो पाता।

4. **समाज को हानि** (loss of society)ः दुर्घटना से मृत या अपंग श्रमिक का परिवार बेसहारा हो जाता है जिसके लिए समाज को व्यवस्था करनी पड़ती है। दुर्घटनाग्रस्त श्रमिक का परिवार दानी संस्थाओं की सहायता पर निर्भर रहता है जो समाज के लिए एक भारी कलंक होता है। साथ ही ऐसे बेसहारा परिवारों के कारण समाज का वातावरण दुःखमय बन जाता है।

   इस तरह उपरोक्त अध्ययन से स्पष्ट है कि दुर्घटनाओं के कारण उत्पादन को ही हानि नही होती बल्कि इसका प्रभाव उपभोक्ता,श्रमिक, समाज सभी पर पड़ता है। इसलिए दुर्घटनाओं को रोकना, संस्था,उपभोक्ता,श्रमिक, समाज उद्योगपति व प्रबन्धक सभी के लिए महत्त्वपूर्ण व सबके हित मे है।

दुर्घटनाओं के कारण
(Causes of Accident)

कुछ समय पूर्व प्रबन्ध्कों का विचार था कि औद्योगिक दुर्घटनाएं अकस्मात होती है। इसी कारण एक लम्बे समय तक उन्होने दुर्घटनाएं रोकने की ओर न तो कोई विशेष ध्यान दिया तथा न ही विशेष प्रयास किया। परन्तु अब स्पष्ट हो चुका है कि यह विचारधरा सत्य नही है। दुर्घटनाएं स्वयं घटित नही होती बल्कि यह तो कुछ कारणों का परिणाम होती है। एक संस्था, जो इन दुर्घटनाओं को रोकने मे इच्छुक है, दुर्घटनाओं के इन कारणों को दूर करके ही अपने उद्देश्य मे सपफल हो सकती है।

औद्योगिक दुर्घटनाओं के कारणों को अध्ययन की सुविध की दृष्टि से निम्न दो भागों में बांटा जा सकता है–

1. यन्त्रों से सम्बन्ध्ति असुरक्षित कारण।
2. असुरक्षित व्यक्तिगत कारण।

इन दोनो तरह के कारणों का संक्षिप्त वर्णन नीचे दिया गया है–

1. **असुरक्षित यांत्रिक कारण (unsafe mechanical causes)**ः यह कारण संस्था की मशीनों तथा यन्त्रों की कार्य –विध् तथा कार्य के वातावरण से सम्बन्ध्ति है। इसके कारण घटने वाली दुर्घटनाओं मे कर्मचारी का कोई दोष नही होता बल्कि यह तो संस्था मे सुरक्षित वातावरण व अपर्याप्त सुरक्षा व्यवस्था का परिणाम होता है। इसके मुख्य कारण निम्नलिखित है–

   (i) ***दोषपूर्ण घेरबन्दी (defective guarding)***ः पफैक्ट्री मे सुरक्षा के लिए आवश्यक है कि मशीनों व यन्त्रो के खतरनाक भाग जाली या टीन से ढके रहें। ऐसी मशीनो को चारो ओर से तार या जाली द्वारा ध्ेराबन्दी की

जानी चाहिए पास गुजरने वाले श्रमिक उससे सुरक्षित रहें। यदि संस्थान में ऐसी व्यवस्था नहीं है तब इससे संस्थान की दुर्घटनाओं में वृ(ि हो जाती है क्योंकि ऐसी मशीनों के पास से गुजरने वाले श्रमिक इनकी लपेट में आ जाते है।

(ii) ***दोषपूर्ण उत्पादन विध्ि (defective production method):*** सुरक्षा के लिये आवश्यक है कि श्रमिकों को मशीन व यन्त्र प्रयोग की सही विध्ि का ज्ञान हो। कई बार प्रयोग की सही विध्ि का ज्ञान न होने से भी संस्थान मे यदि संस्थान में दुर्घटनाओं में वृ(ि हो जाती है।

(iii) ***मशीनों का दोषपूर्ण डिजाइन (defective design of machine):*** आकार मे एक ही कार्य करने के विभित्र तरह व किस्म की मशीनों मिलती हैं। इनमें से कुछ की कार्य विध्ि अध्कि सुरक्षित होती है तथा कुछ की कम यदि संस्था की मशीनों के डिजाइन अध्कि सुरक्षित तरह के नहीं हैं तब संस्थान मे दुर्घटनाओं में वृ(ि होती है।

(iv) ***मशीनों का टूटना (breadking of machines):*** सुरक्षा की दृष्टि से आवश्यक है कि संस्थान का इंजीनियरिंग विभाग समय –समय पर मशीनों व यन्त्रों की जाँच करवाते रहे तथा दुर्घटना होने से पहले ही उनके दोष को दूर कर दे। ऐसी अवस्था के अभाव में मशीनों में खराबी उत्प होने पर श्रमिक दुर्घटनाग्रस्त हो जाते हैं।

(v) ***अपर्याप्त रोशनी (poor lighting)***: पफैक्ट्री में पर्याप्त रोशनी की व्यवस्था न होने के कारण भी दुर्घटना की संख्या में वृ(ि हो जाती है क्योंकि ऐसा होने पर श्रमिकों की आँखों पर बुरा प्रभाव पड़ता है जिसके कारण कम दिखाई देने से दुर्घटना हो जाती है।

(vi) ***अपर्याप्त हवा व्यवस्था (poor ventilation)***: पफैक्ट्री में शु(हवा आने की व्यवस्था न होने पर वहाँ घुटा–घुटा वातावरण हो जाता है जिसमें श्रमिक का ध्यान उस ओर बंटा रहता है तथा वह सर्तकता व रुचि से कार्य नही कर पाता जिससे दुर्घटनायें होती रहती हैं।

(vii) ***दोषपूर्ण पोशाक (Improper dress):*** सुरक्षा के लिए मशीनों के पास कार्य करने वाले तथा आग के पास कार्य करने वाले श्रमिकों को चुस्त व मोटे कपड़े पहनने चाहिए । यदि संस्था में श्रमिकों को ऐसा पोशाक पहनने की व्यवस्था नहीं है तब वहां दुर्घटनायें होती रहती हैं।

(viii) ***सुरक्षा साध्नों की पर्याप्त व्यवस्था (inadequate Arrangement of safety Devices)***: वर्तमान समय में विभि तरह के खतरनाक कार्य करने वाले श्रमिकों की सहायता के लिए विभि तरह के सुराक्षात्मक साध्नों के सुराक्षत्मक साध्नों ;safety devicesद्ध का विकास हो चुका है जिसकी सहायता से श्रमिक अध्कि सुरक्षित रहकर कार्य कर सकते हैं उदाहरणार्थ वैल्डिंग का कार्य करने वाले के लिए रंगदार चश्मा,बिजली का कार्य करने वालों के लिए रबर के दस्ताने व जूते तथा आग के समीप कार्य करने वालों के लिए आग से सुरक्षित कपड़े वे जूते प्राप्त हों। यदि संस्थान में प्रबन्ध्कों की अज्ञानता या अन्य कारणो से इनकी व्यवस्था न हो तब दुर्घटनायें अध्कि होती हैं।

2. **असुरक्षित व्यक्तिगत कारण (unsafe Human causes)**: यन्त्रीकृत कारणों का सम्बन्ध यन्त्रों व कार्य की दशाओं के दोष से है तथा इन कारणों के लिए उच्च प्रबन्ध्क उत्तरदायी होते हैं जबकि असुरक्षित व्यक्तिगत कारण में वह कारण आते हैं जो कार्य करने वाले श्रमिकों के दोष के कारण होते है। एक संस्थान में सुरक्षा की दृष्टि से बहुत ही उत्तम व्यवस्था हो सकती है पिफर भी इन व्यक्तिगत कारणों से दुर्घटनायें हो सकती हैं। मनुष्य की मानसिक स्थिति व व्यवहार सामान्य न रहने पर असावधनी के कारण दुर्घटनायें हो सकती है। इस प्रकार दुर्घटना होने के कारण निम्नलिखित हैं–

(i) ***शारीरिक दोष (physical Defects):*** श्रमिकों के शारीरिक दोष भी दुर्घटनाओं के लिए जिम्मेदार होते हैं। एक श्रमिक को कम दिखाई देता है तो मशीन की गति को ठीक तरह से न देख सकने के कारण दुर्घटनाग्रस्त हो जाता है। इसी तरह यदि किसी श्रमिक को कम सुनाई देता है तब मशीन में खराबी होने पर उसकी आवाज में परितर्वन को नहीं सुन पाता तथा खराबी की अवसर में भी कार्य करता रहता है जिससे मशीन का कोई भी भाग टूटने या मशीन खराब होने पर दुर्घटना हो जाती है।

(ii) ***कार्य कुशलता की कमी (lack of skill)***: मशीन पर कार्य करने वाले श्रमिकों को पता होना चाहिए कि मशीन कैसे व रुकेगी, उसके विभि   भाग क्या कार्य करते हैं तथा मशीन पर कार्य करते समय क्या सावधनी रखना चाहिए। यदि उन्हें इन बातों का ज्ञान नहीं होगा तब गलती करने की अवस्था में दुर्घटनाग्रस्त हो जाते हैं।

(iii) ***दोषपूर्ण दृष्टिकोण (improper attitude)***: कुछ श्रमिक प्रत्येक बात को हँसी में रखने की आदत रखते हैं तथा जानते हुए भी सुरक्षा के लिये सतर्कता से कार्य नहीं करते। सामान्य जीवन में ऐसे व्यक्ति भी देखने को मिलते हैं जो कार या स्कूटर को तेज चलाते हैं। वह स्वयं को निडर दिखाना चाहते हैं तथा जानबूझकर उसकी स्पीड अध्कि कर देते हैं तथा दुर्घटना का शिकार हो जाते हैं। पफैक्ट्री में ऐसे श्रमिकों का पाया जाना असम्भव नहीं है। संस्थान में ऐसे दृष्टिकोण वाले श्रमिक ही दुर्घटनाओं के लिए अध्कि उत्तरदायी होते हैं।

(iv) ***कार्य मे अरुचि (no interest in job)***: जब कोई श्रमिक अपने कार्य में रुचि नहीं रखता तब वह उस कार्य को मन लगाकर तथा सर्तकता से नहीं करता जिससे भी वह दुर्घटनाग्रस्त हो जाता है।

(v) ***पारिवारिक उलझनें (Family Worriers):*** कुछ श्रमिक पारिवारिक उलझनों से परेशान रहते हैं जिस कारण वह कार्य करते समय सोच में डूबे रहते हैं तथा कार्य के प्रति सावधनी न रख पाने के कारण दुर्घटना का शिकार हो जाते हैं।

(vi) ***गलत कार्य पर लगाना (improper placement):*** श्रमिक को उसकी योग्यता व शारीरिक शक्ति के अनुरूप कार्य पर न लगाने से भी दुर्घटनाओं में वृ(हो जाती है क्योंकि ऐसे श्रमिक उस जाॅब पर रुचिकर कार्यकुशलता से कार्य नही कर पाते तथा दुर्घटनाओं का शिकार हो जाते हैं

स्पष्ट है कि यान्त्रिक व मानवीय दोनों तरह के कारण दुर्घटनाओ के लिए उत्तरदायी हैं। दोनों में असुरक्षित व्यक्तिगत कारण अध्कि महत्त्वपूर्ण हैं क्योंकि अध्कितशतः दुर्घटनाएं इन कारणों का परिणाम होती हैं। अनुमान है कि कुल दुर्घटनाओं में से 80÷ से अध्कि इन्हीं कारणों से होती हैं। साथ ही यान्त्रिक कारणों को तो एक संस्था के प्रबन्ध्क पर्याप्त सीमा तक दूर व नियन्त्रित कर सकते हैं जबकि असुरक्षित व्यक्तिगत कारणों को दूर करना सरल नहीं है।

दुर्घटना रोकने की व्यवस्था
(Approach to Accident Preventation)

औद्योगिक दुर्घटनाएँ यान्त्रिक दोष व दोषपूर्ण वयक्तिगत व्यवहार के कारणों से होती हैं। यान्त्रिक कारणों से सम्बन्ध मशीन, यन्त्र, पफैक्ट्री, के वातावरण के दोषों से है तथा व्यक्तिगत कारणों का सम्बन्ध कार्य करने वालों के व्यक्तिगत स्वभाव तथा व्यवहार से है। एक संस्थान में दुर्घटनाएँ रोकने के लिए दोनों तरह के दोषों में सुधर किया जाना आवश्यक है। यान्त्रिक दोषों को दूर करने में इन्जीनियर तथा व्यक्तिगत दोषों को दूर करने के लिए मनोवैज्ञानिक महत्तवपूर्ण योगदान दे सकते हैं। इसलिये दुर्घटनाएँ रोकने की समस्या एक इन्जीनियर तथा एक मनोवैज्ञानिक दोनों के दृष्टिकोण से सुलझाई जानी चाहिए। दुर्घटनाओं को कम करने के लिए इन्जीनियर तथा मनोवैज्ञानिक दोनों दृष्टिकोण से किया जाने वाले उपायो का संक्षिप्त वर्णन निम्न है–

दुर्घटनाओं से सुरक्षा
(safety measures)

इन्जीनियरिंग दृष्टिकोण ;engineering Approachद्ध

मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण ;Psychological Approachद्ध

1. **इन्जीनियरिंग के दृष्टिकोण से किए जाने वाले उपाय (Engineerings Approach)**: इन उपायों का सम्बन्ध संस्थान की मशीनों व यन्त्रो के दोष व संस्था के दोषपूर्ण कार्य के वातावरण से है। इन दोषों को दूर करने में एक इन्जीनियरिंग निम्न योगदान देता है।–

   (i) ***मशीनों के खतरनाक व गति वाले भागों को ढकना (To cover moving and Dangerous Party)***: एक इंजीनियर संस्थान की मशीनों व यंत्रो की जाँच करता है तथा उनके ऐसे भाग जो गति से चलते हैं या खतरनाक हैं, को लोहे की जाली या प्लेट से ढकने की व्यवस्था करता है। ऐसा होने से श्रमिक ऐसे खतरनाक भाग से सुरक्षित रहते हैं जिससे दुर्घटनाएँ कम हो जाती हैं।

   (ii) ***खतरनाक मशीनों की बदली (Replacement of Dangerous Machines):*** संस्थान का सुरक्षा इन्जीनियरिंग मशीनों में हो रहे सुधरों तथा बाजार में आने वाली नई मशीनों से जानकर होता है तथा संस्थान के उच्च प्रबन्धकों को संस्थान की खतरनाक मशीनों के स्थान पर उनको बदलवाने का सुझाव देकर नई मशीनों को लगवाने की व्यवस्था करता हैं।

   (iii) ***घेराबन्दी करना (Arrangement of Guardss):*** पफैक्ट्री में श्रमिक प्रायः मशीनों के स्मीप से गुजरते हुए उसकी लपेट में आ जाते हैं। ऐसी दुर्घटनाओं को रोकने के लिए एक इन्जीनियर खतरनाक मशीनों को एक जाली या लकड़ी की दीवार द्वारा घेराबन्दी की व्यवस्था करता है। ऐसा करने से जगह से दूसरी जगह जाने के लिये मशीनों के पास से गुजरने वाले कर्मचारी सुरक्षित हो जाते हैं।

   (iv) ***सुरक्षा साध्नों की व्यवस्था (Arrangement of safety devices)***: एक इन्जीनियरिंग पफैक्ट्ररी मे खतरनाक कार्य कर रहे श्रमिकों की सहायता के लिए मशीनों व कार्य के अनुरूप सुरक्षा साध्नों का विकास कर उनके प्रयोग की व्यवस्था कर सकता है। खतरनाक मशीनों के पास कार्य कर रहे श्रमिक के लिए चुस्त कपड़े,आग के समीप कार्य कर रहे श्रमिक के लिए अलग– सुरक्षित कपड़े व मोटे बूट तथा वैल्डिंग का कार्य कर रहे श्रमिक के लिए रंगदार चश्मे की व्यवस्था दुर्घटना रोकने में महत्त्वपूर्ण योगदान दे सकती हैं।

   (v) ***बिजली करंट व पिफसलन से सुरक्षित पफर्श (Shockproof and slip proof Floor)***: पफैक्ट्ररी में प्रायः ऐसा होता है कि श्रमिक भारी बोझ लेकर चलते हुए पफर्श पर पिफसल जाते हैं व पास की पशीन की लपेट में आ जाते हैं। कई बार पफर्श नम होने से उसमें कनन्ट आने से दुर्घटना हो जाती है। इन्जीनियरिंग पफर्श मे सुधर कर उसे बिजली के करण्ट तथा पिफसलन से सुरक्षित बनाकर ऐसी दुर्घटनाओं को कम कर सकते हैं।

   (vi) ***मशीन कार्यविध् में सुधर (Improvement in Operation):*** इन्जीनियर मशीन की कार्यविध् को जाँच कर, उन्हें सुधर कर सुरक्षित बना सकते हैं।

   (vii) ***आग बुझाने की व्यवस्था (Arrangement of fire Equipment)***: पफैक्ट्ररी मे आग लगने की अध्कि सम्भावना होती है जिससे कई बार आग लगने से वहाँ भयंकर दुर्घटना हो जाती है। संस्था में आग बुझाने वाले यन्त्रों की व्यवस्था कर ऐसी दुर्घटना को कम किया जा सकता है।

   (viii) ***गति सीमाब(करना (limited speed):*** कुछ दुर्घटनाएँ इसलिए हो जाती हैं कि कुछ श्रमिक अध्कि उत्पादन कर वेतन व सम्मान प्राप्त करने के लालच में मशीनों को सामान्य से बहुत अध्कि गति पर चलाने लगते हैं। ऐसी दुर्घटनाएँ रोकने के लिए इन्जीनियर मशीनों की सैटिंग कर ऐसी व्यवस्था कर सकते हैं कि मशीन एक निश्चित गति से तेज न चल सके ।

   (ix) ***स्वचालित रोक की व्यवस्था (use of automatic Switch)***: स्वचालित स्विच का प्रयोग कर के मशीनों मे ऐसी व्यवस्था की जा सकती है कि मशीन में खराबी उत्प होते ही वह स्वयं ही रुक जाए या चलना बन्द कर दे। एक इन्जीनियर मशीनों में ऐसी व्यवस्था कर दुर्घटना कम कर सकता है।

(x) ***कार्य की अच्छी विशेषताएँ (Good Working Conditions):*** पफैक्ट्ररी में पर्याप्त रोशनी व स्वच्छ हवा तथा हानिकारक ध्ुआँ व गैस निकलने की व्यवस्था करने से भी दुर्घटनाएँ कम हो जाती हैं। ऐसा होने से आंतरिक वातावरण सुध्रता है जिससे श्रमिक मन लगाकर कार्य कर सकते हैं।

(xi) ***निरन्तर जाँच की व्यवस्था (Arrangement of Conditions Inspection):*** संस्था के सुरक्षा इन्जीनियर को समय –समय पर पफैक्ट्ररी के वातावरण, मशीनों व यन्त्रों की जाँच करनी चाहिए ताकि वह यन्त्रों के दोष दुर्घटना से पहले जान सके तथा उसमें सुधर कर सके।

यह सभी उपाय दुर्घटना रोकने में महत्वपूर्ण योगदान दे सकते हैं तथा इनकी कार्य कुशल व्यवस्था एक योग्य तथा कार्यकुशल इंजीनियर ही कर सकता है। इसी कारण इन्हें इंजीनियरी उपाय कहते है।

2. **मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से किए जाने वाले उपाय (Psyochological Approach):** एक इंजीनियर तो केवल मशीनों व यन्त्रों तथा कार्य की दशाओं को सुधरने के उपाय करता है। इससे दुर्घटनाओं का एक छोटा भाग ही रुक पाता है क्योंकि एक पफैक्ट्री में होने वाली कुल दुर्घटनाओं का 80÷ भाग मानवीय दोषों का परिणाम होता है। मानवीय असुरक्षित कार्य व कारणों को दूर करने के लिए मनोवैज्ञानिक की सहायता ली जाती है जो एक संस्था में सुरक्षा व्यवस्था के लिए निम्न कदम उठाता है–

(i) ***उचित चुनाव (proper selection):*** पफैक्ट्ररी में कापफी दुर्घटनाएँ इसलिए हो जाती हैं कि कार्य करने वाले श्रमिक कार्य में रुचि नहीं रखते, मशीनों पर कार्य करते हुए डरते हैं या दुर्घटना रोकने के आदेशों का पालन नही करते। एक संस्थान श्रमिकों की भर्ती के समय मनोवैज्ञानिक टैस्ट का प्रयोग कर ऐसे श्रमिकों को ज्ञात कर उन्हे संस्था में आने से रोक सकती है।

(ii) ***प्रशिक्षण (Training):*** यद्यपि पफैक्ट्ररी में संयुक्त प्रशिक्षण की पर्याप्त व्यवस्था होती है पिफर भी कुछ श्रमिक प्रशिक्षण के समय सतर्क नहीं रहते हैं। प्रबंन्ध्क समझते हैं कि वे सीख चुके हैं जबकि ऐसा नहीं होता तथा उन्हें कार्य पर लगाया जाता है, वह दुर्घटनाग्रस्त हो जाते हैं। इसलिये श्रमिकों के प्रशिक्षण की व्यवस्था में मशीनों व यन्त्रों तथा कार्यविध्ि के सुरक्षित प्रयोग सिखाने की व्यवस्था हो तथा प्रशिक्षण के बाद यह तसल्ली हो जाए कि वह पूर्ण प्रशिक्षित हो चुके हैं तब ही उन्हें कार्य पर लगाया जाना चाहिए।

(iii) ***उपयुक्त कार्य पर लगाना (proper placement):*** श्रमिकों के चुनाव के बाद उनको उनके स्वभाव,रुचि तथा योग्यता के अनुरूप उपयुक्त जॉब पर लगाया जाना चाहिए। जो श्रमिक भार ढोने में अध्कि रुचि रखता है उसे भार ढोने में, मशीन चलाने में रुचि रखने वाले को मशीन चलाने पर तथा जो खतरनाक काम से डरते हैं उन्हें सुरक्षित कार्य पर लगाना चाहिए। मनोवैज्ञानिक श्रमिकों की रुचि,स्वभाव व दृष्टिकोण को देखकर उनको उपयुक्त जॉब पर लगाने में संस्थान की सहायता कर सकता है जिससे दुर्घटनाएँ कम हो जाती हैं।

(iv) ***सुरक्षा के महत्त्व की स्पष्टता (convincing of importance of safety):*** संस्था को लगातार श्रमिकों को सुरक्षा का महत्त्व बतलाते रहना चाहिए ताकि वह सुरक्षित ढंग से कार्य करते रहें। इसके लिए पफैक्ट्ररी में पोस्टर, पिक्चर य या लैक्चर आदि की सहायता से उन्हे सुरक्षा का सन्देश देने की व्यवस्था होनी चाहिए ताकि उनके हृदय में सुरक्षा की भभाभावना ताजा बनी रहे।

(v) ***सुरक्षा आदत को प्रोत्साहन (motivating safety habit):*** प्रबन्ध्कों को श्रमिकों सुरक्षात्मक ढंग से कार्य करने के लिए निरंतर प्रोत्साहित करना चाहिए। इसके लिए संस्थान में सुरक्षा का रिकार्ड बनाने वाले,सुरक्षा साध्नों के प्रयोग में नियमितता बरतने वाले या सुरक्षा का सुझाव देने वाले श्रमिकों को इनाम देने की व्यवस्था होनी चाहिए। यह इनाम वित्तीय या अवित्तीय हो सकते हैं।

(vi) ***सख्त नियम (Strict rules):*** संस्थान सुरक्षात्मक कार्यविध्ि का प्रयोग तथा अप्रशिक्षित श्रमिक द्वारा मशीन न छेड़ने के लिए बनाए गए नियम का सख्ती से पालन होना चाहिए तथा जो इनका उल्लंघन करते हैं उन्हें सख्त सजा दी जाने की व्यवस्था होनी चाहिए।

(vii) ***दुर्घटना प्रोन (Accident Prone):*** कुछ समय पूर्व प्रबन्धकों का विश्वास था कि दुर्घटनाएँ आकस्मिक होती हैं। दुर्घटनाओं के वर्तमान अध्ययन ने स्पष्ट कर दिया है कि दुर्घटनाएँ आकस्मिक नहीं होती। यदि ऐसा होता तब दुर्घटनाओं का कर्मचारियों के मध्य वितरण समान होना चाहिए था। परन्तु ऐसा नही है। एक संस्थान की दुर्घटनाओं का विवरण देखने से पता चलेगा कि उस संस्थान मे कुछ कर्मचारी ऐसे हैं जो बार –बार दुर्घटनाओं का शिकार होते रहते हैं तथा कुछ कर्मचारी ऐसे होते हैं जिनके साथ पिछले कापफी वर्षों से कोई दुर्घटना नहीं हुई होती। अनुमान है कि अध्कांशःपफैक्ट्री में 20÷ के लगभग कर्मचारी लगभग70से 80÷ दुर्घटनाओं के लिए उत्तरदायी होते हैं तथा 60÷ कर्मचारी ऐसे होते हैं जो केवल 70÷ दुर्घटनाओं के लिए उत्तरदायी होते हैं। इस तरह जो 20÷ कर्मचारी 80÷ दुर्घटनाओं के लिए उत्तरदायी होते हैं और बार–बार दुर्घटनाओं का शिकार होते हैं। ऐसे कर्मचारी को ही दुर्घटना प्रोन (accident prone) कहा जाता है। यदि एक संस्था इस तरह के कर्मचारियों को सुरक्षित जॉब पर स्थानान्तर कर दे या उन्हें चुनाव के समय ही अलग कर दे तब संस्था की दुर्घटनाओं में कापफी कमी हो सकती है। संस्था के प्रबंध्कों को ऐसे कर्मचारियों को तलाश कर उनकी उचित व्यवस्था करनी चाहिए। इसके लिए पहले उन्हें समझकर सुरक्षित ढंग से कार्य करने के लिए तैयार किया जाता है। समझाने–बुझाने पर भी न मानने वाले को ध्मकी दी जाती है तथा यदि वह पिफर भी ठीक नहीं होते तब उन्हे निकालने के अलावा कोई चारा नहीं रहता। एक औद्योगिक संस्थान में दुर्घटना रोकने के लिए दोनों ही तरह के उपाय किए जाने चाहिएँ। पिफर भी मनोवैज्ञानिक उपाय अध्कि महत्त्पपूर्ण हैं क्योंकि दुर्घटनाओं का तीन–चौथाई भाग मनोवैज्ञानिक कारणों का परिणाम होता है। परन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि एक संस्थान मनोवैज्ञानिक तथा इन्जीनियरी दोनों तरह के उपायों की अलग–अलग योजना तैयार करे। दोनों तरह के उपायों की संयुक्त योजना द्वारा ही इस समस्या का उचित समाधन हो सकता है।

औद्योगिक श्रमिकों की सुरक्षा
(safety of industrial workers)

भारत में औद्योगिक दुर्घटनाओं को रोकने के लिए व्यापक सुरक्षा सम्बन्धी कानून एवं उपाय किये गये हैं। ये सुरक्षा व्यवस्थाएं विशेष रूप से कारखानों,खानों,यातायात,बिजली एवं विस्पफोटकों से सम्बन्ध्ति हैं। इनमें से अध्किाशं व्यवस्थाएँ केन्द्रीय कानूनों से जुड़ी हुई हैं, लेकिन राज्य सरकारों ने भी इनकी कमी की पूर्ति के लिए कानून बनाए हैं। इनका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है–

1. पफैक्ट्ररी अधिनियम, 1948 में कारखानों में काम करने वाले श्रमिकों की सुरक्षा स्वास्थ्य और कल्याण का प्रावधन है। यह उन पफैक्ट्रियों में जिनमें 1000 या इससे अध्कि कर्मचारी कार्य करते हैं और उन पफैक्ट्रियों में जहाँ शारीरिक चोट,विषाक्तता या राज्य सरकारों द्वारा अध्सिूचित बीमारियों का जोखिम है, सुरक्षा अध्किारियों की नियुक्ति का प्रावधन भी करता है। उनके अधेन तैयार अधिनियम और कानूनों को राज्य सरकारें अपने पफैक्ट्री निरीक्षणालयों द्वारा लागू करते हैं।
2. गोदी मजदूर ;रोजगार नियमनद्ध अधिनियम,1948 के अधेन गोदी मजदूरों के स्वास्थ्य और कल्याण के उपाय सुनिश्चित करने तथा जो कर्मचारी गोदी मजदूर नियमन,1948 की परिध् िके अन्तर्गत नहीं आते उनकी सुरक्षा करने के लिए।
3. गोदी मजदूर ;सुरक्षा,स्वास्थ्य और कल्याणद्ध योजना,1961 में शुरू की गई थी।
4. भारतीय गोदी मजदूर अधिनियम,1934 के अन्तगर्त जहाज पर काम करने वाले और जहाज के साथ काम करने वाले कर्मचारी आते हैं।
5. पफैक्ट्री सलाह सेवा महानिदेशालय और श्रम संस्थान, बम्बई औद्योगिक कर्मचारियों की सुरक्षा,स्वास्थ्य और कल्याण से सम्बन्ध्ति मामलों पर सरकार,उद्योग और अन्य संस्थाओं को सलाह देने वाला एक सम्पूर्ण निकाय है। यह गोदी मजदूरों की सुरक्षा और स्वास्थ्य सम्बन्धी कानूनों को लागू कराता है।

जोखिम पर नियंतत्र और व्यावसायिक स्वास्थ्य के बचाव तथा खतरनाक उत्पादन क्रियाओं में कार्य करने वाले श्रमिकों की सुरक्षा के लिए सरकार ने समन्वित कार्यवाही योजना का एक राष्ट्रीय कार्यक्रम बनाया है। इस कार्यवाही योजना में काम के वातावरण में सुरक्षा तथा स्वास्थ्य के लिए सरकार, प्रबन्ध तथा श्रमिक संगठनों की जिम्मेदारियाँ निश्चित की जाती हैं। इस कार्यवाई योजना के अन्तर्गत सुरक्षा की दृष्टि से खतरनाक उद्योगों में पूर्ण सुरक्षा नियंतत्रण प्रणाली, प्रकोष्ठ की आदर्श योजनाएँ और सुरक्षा और स्वास्थ्य दुर्घटना में कमी कार्रवाई योजना ;सहाराद्ध भी शामिल है।

6. **राष्ट्रीय सुरक्षा परिषद् (national safety counsil 1996):** राष्ट्रीय सुरक्षा परिषद् की स्थापना सुरक्षा उपायो को बढ़ावा देने, दुर्घटनाओं को रोकने, खतरों को कम करने तथा मानव कष्टों को कम करने के लिए 1996 में की गई थी इसे स्थापित करने के अन्य उद्देश्यों में सुरक्षा पर व्याख्यान कार्यक्रम और सम्मेलन आयोजित करना, शैक्षणिक अभियानों को चलाना, नियोक्ताओं और श्रमिकों में चेतना का विकास करना तथा शैक्षणिक और सूचना सम्बन्धी आंकड़ो को इकट्ठा करना शामिल है। 31मार्च, 1985 को परिषद् के 1,683 सदस्यों में से 1,456 निगमित सदस्य, 141 व्यक्तिगत सदस्य, 33 श्रमिक सघों के सदस्य और 53 आजीवन सदस्य थे।

   राष्टीय सुरक्षा परिषद् के स्थापना दिवस के रूप में राष्ट्रीय सुरक्षा दिवस सारे देश में प्रत्येक वर्ष मनाया जाता है।

7. **राष्ट्रीय सुरक्षा पुरस्कार (National safety Award):** औद्योगिक प्रतिष्ठानों में अच्छे सुरक्षा उपायों को मान्यता देने तथा दुर्घटना की रोकथाम कार्यक्रम के लिए प्रबन्धकों और श्रमिकों दोनों का उत्साह बढ़ाने तथा दिलचस्पी को बनाये रखने के लिए सरकार ने 1965 में राष्ट्रीय सुरक्षा पुरस्कारों की स्थापना की।

8. **1965 में राष्ट्रीय सुरक्षा पुरस्कारों की स्थापना:** पुरस्कार कार्यक्रमों की स्थापना ऐसी पफैक्ट्रियों के लिए की गई थी, जो पफैक्ट्री अधिनियम, 1948 के अन्तर्गत पंजीकृत थीं। परन्तु 1971 से बन्दगाहों और ऐसी पफैक्ट्रियों के लिए, जो अधिनियम के अन्तर्गत नहीं आती थीं, अलग योजनाएँ प्रारम्भ की गई। वर्तमान में ऐसी दस योजनाएँ चल रही है।

9. **श्रमवीर पुरस्कार:** श्रमवीर पुरस्कार कारखानों, खानों, बागानों और गोदियों में काम करने वाले श्रमिकों के लिए 1965 में शुरू किए गए। ये पुरस्कार श्रमिकों के प्रशंसनीय कार्यो जैसे अध्कि उत्पादन, मितव्ययता व कार्यक्षमता के लिए दिए जाते है। प्रधनमंत्री के श्रम पुरस्कारों से अलग दिखाने के लिए इसका नाम बदलकर विश्वकर्मा पुरस्कार रख दिया गया है।

10. **प्रधनमंत्री का श्रम पुरस्कार:** प्रधनमंत्री ने ध्नवाद में 1985 में मई दिवस को जो घोषणा की थी,उसे ध्यान में रखते हुए सरकार ने एक योजना लागू की है, जिसका नाम है प्रधनमंत्री का श्रम पुरस्कार। ये पुरस्कार उन श्रमिकों को दिये जाते हैं जो उत्पादन बढ़ाते हैं उल्लेखनीय योगदान देते हैं तथा अपने कर्त्तव्यपालन में अनुकरणीय लगन तथा रुचि लेते हैं। महत्त्व के अनुसार इनके नाम क्रमशः इस प्रकार हैं—श्रम रत्न, श्रम भूषण, श्रम वीर और श्रम श्री, श्रम देवी। ये पुरस्कार प्रतिवर्ष स्वतंत्रता दिवस की पूर्व संध्या पर घोषित किए जाते हैं। इन पुरस्कारों के अन्तर्गत सनद और क्रमशः एक लाख रुपये, 50,000 रुपये और 20,000 रुपये तकद दिए जाते हैं।

11. **खान मजदूरों की सुरक्षा:** संविधन के अनुसार खानों में काम करने वाले श्रमिकों की सुरक्षा,स्वास्थ्य तथा कल्याण की जिम्मेदारी सरकार की है। ये मामला खान अधिनियम, 1952 के द्वारा नियमित है, जो आणविक खनिजों तथा तेल क्षेत्रों सहित सभी प्रकार की खानों पर लागू होता है।

    खान सुरक्षा महानिदेशालय को खान अधिनिय, 1952 के प्रावधनों तथा उसके अन्तर्गत बनाए गए नियमों और अधिनियमों को लागू करने का कार्य सौपा गया है। इस निदेशालय और राष्ट्रीय खान सुरक्षा परिषद् ने खानों में सुरक्षा की दशा सुधरने के लिए प्रचार और दृश्य—श्रव्य साध्नों द्वारा अपने प्रयास जारी रखे। उनका मुख्य ध्यान इस बात पर है कि खनिकों मे सुरक्षा के प्रति जागरूकता पैदा हो और वे सुरक्षा सम्बन्धी गतिविध्यिों में सक्रिय भाग लें।

12. **राष्ट्रीय खान सुरक्षा परिषद्** के अधिकारियों ने प्रबंधकों तथा अन्य संगठनों द्वारा आयोजित पाठ्यक्रमों और गोष्ठियों में भाग लिया, पुनश्चर्या पाठ्यक्रम चलाए, प्रदर्शनियाँ लगाई और प्राथमिक चिकित्सा प्रतियोगिताएँ आयोजित कीं।

13. **खानों के लिए राष्ट्रीय सुरक्षा पुरस्कार 1983** में शुरू किए गए। इस योजना का उद्देश्य यह है कि जो खानें 1952 के खान अधिनियम के अन्तर्गत आती हैं और जिनमें सुरक्षा के लिए उल्लेखनीय काम हुआ है, उन्हें राष्ट्रीय स्तर पर मान्यता दी जाए।

    यह योजना 1982 से लागू हुई और ऐसी खानों का पता लगाकर वर्ष 1982 तथा 1983 के पुरस्कार उन्हें दिए गए। राष्ट्रीय सुरक्षा पुरस्कार वितरण समारोह 13 जनवरी 1986 को दिल्ली में हुआ जिसमें वर्ष 1984 के पुरस्कार वितरित किए गए।

14. **खान सुरक्षा संगठनः** खानों में सुरक्षा विषय सम्मेलन दो वर्षों के अन्तराल से होता है। ऐसा पहला सम्मेलन 1958 में कलकत्ता में हुआ। छठा सम्मेलन जो नई दिल्ली में 13–14 जनवरी,1986 को हुआ उसका उद्घाटन राष्ट्रपति ज्ञानी जैल सिंह ने किया। इस सम्मेलन में केन्क्त और राज्य सरकारो, मालिकों और श्रमिक संगठनों के प्रतिनिध्यिों, संसद सदस्यों तथा व्यावसायिक संस्थाओं में भाग लिया। इसमें खानों में सुरक्षा के विवध पहलुओं पर विचार किया गया और इस विषय पर विचार किया गया कि खानो में छत गिरने और अन्य कारणों से होने वाली दुर्घटनाओं को कैसे कम किया जाये। इनमें खानों मे काम–काज को सुरक्षित बनाने के लिये,श्रमिकों और प्रबन्ध्कों द्वारा अतिरिक्त उपाय अपनाने की सिपफारिश की गई । इन सिपफारिशो में खानों के निरीक्षण ढाँचे को मजबूत बनाने की आवश्यकता पर भी बल दिया गया है।

भारत में सामाजिक सुरक्षा
(social security in India)

कर्मचारी मुआवजा अधिनियमः 1929 मे कर्मचारी मुआवजा अधिनियम पारित होने के साथ ही भारत में सामाजिक सुरक्षा प्रारम्भ हुई। इसके अन्तर्गत ऐसे कर्मचारियों और उनके परिवारों को, जिनकी अपने सेवाकाल के दौरान किसी औद्योगिक दुर्घटना और कुछ विशेष रोगों से ग्रस्त हो जाने पर मृत्यु या अपंगता हो गई, मुआवजा देने का प्रावधन है। अधिनियम में मृत्यु,पूर्ण अपंगता और अस्थायी अपंगता के लिए अलग–अलग पैमाने का मुआवजा देने का प्रावधन है। इस अधिनियम के अन्तर्गत विशेष खतरे वाले व्यवसायों में लगे कर्मचारियों को भी शामिल कर लिया गया है, पर इसमे वे कर्मचारी शामिल नहीं है, जो कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम,1948 के अन्तर्गत लाभन्वित हैं।

प्रसूति सम्बन्धी लाभः 1929 में तत्कालीन बम्बई सरकार द्वारा प्रसूति लाभ कानून को लागू कर अलग कदम उठाया गया। इसके तत्काल पश्चात् अन्य राज्यों ;जिन्हें प्रोविन्स के नाम से जाना जाता थाद्ध ने इसी विषय पर कानून लागू किये। विभिन्न राज्य सरकारों द्वारा उपलब्ध् प्रसूति लाभों मे एकरूपता लाने के लिए सरकार ने प्रसूति लाभ अधिनियम,1961 पारित किया, जिसने इस विषय पर विभिन्न राज्यों में लागू कानूनों का स्थान ग्रहण किया।

प्रसूति लाभ अधिनियम, 1961 कुछ संस्थानों में प्रसवकाल से पहले और बाद में कुछ समय तक के लिए महिलाओं के रोजगार का नियमन करता है और उनके लिए प्रसूति और दूसरे लाभ उपलब्ध् करवाता है। कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम,1948 के अन्तर्गत आने वाले कर्मचारियों को छोड़कर यह अधिनियम खानों, कारखानों, सर्कस उद्योग और बागानों तथा इसी प्रकार के अन्य सरकारी संस्थानों पर लागू होता है। यह अधिनियम राज्य सरकारों द्वारा राज्य में स्थित अन्य संस्थानों पर भी लागू किया जा सकता है। विशेष रूप से इस अधिनियम के अन्तर्गत कोई वेतन सीमा निर्धरित नहीं है।

कर्मचारी राज्य बीमा योजनाः कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम,1948 का पारित होना सामाजिक सुरक्षा के हित में बहुत महत्त्वपूर्ण कदम था। यह अब तक केवल उन कारखानो में लागू था जहाँ सारा साल काम होता है, मशीनें बिजली से चलती हैं और कम से कम 20 आदमी काम करते हैं। लेकिन अब यह राज्य सरकारों द्वारा धीरे–धीरे उन छोटे कारखानों,होटलों, रेस्तराओं,दुकानें, सिनेमाघरों आदि, जहाँ 20 या 20 से अध्कि आदमी काम करते हों, पर भी लागू किया जा रहा है। यह उन कर्मचारियों पर लागू होता है, जिनका प्रतिमाह वेतन 1,600 रूपये से कम है।

इस अधिनियम के अन्तर्गत श्रमिकों को आकस्मिक बीमारी, प्रसूति, रोजगार मे चोट की अवस्था में उनके इलाज का प्रबन्ध करने और उन्हें नकद भत्ता देने तथा चोट से मृत्यु होने पर उनके आश्रितों को पेंशन देने की व्यास्था है। प्रत्येक व्यक्ति के परिवार को, जो इस नियम के अन्तर्गत आता है हर प्रकार के इलाज की सुविधएँ उत्तरोत्तर दी जा रही हैं।

31दिसम्बर,1985 को इस योजना के अन्तर्गत 89 कर्मचारी राज्य बीमा अस्पताल और 42 उप–अस्पताल थे, जिनमें बिस्तरों की संख्या 23,211थी। इस योजना को 61.80 लाख कर्मचारियों तक पहुँचाया जा चुका है।

कर्मचारी भविष्य निधिः 1952 के कर्मचारी भविष्य निधि तथा विविध उपबंध अधिनियम द्वारा औद्योगिक कर्मचारियों को अवकाया प्राप्ति पर कई प्रकार के लाभ उपलब्ध हैं। इनमें भविष्य निधि, पारिवारिक पेंशन और जमा राशि से सम्ब(बीमा शामिल हैं। 31 दिसम्बर, 1985 तक जम्मू और कश्मीर को छोड़कर सारे भारत मे इसके अन्तर्गत 173 उद्योग वर्ग थें,जिनमें 20 या उससे अधिक व्यक्ति काम करते है। यह कानून उन संस्थाओं पर लागू नहीं होता जो 1912 के सहकारी समिति अधिनियम या किसी अन्य कानून, जो सहकारी समितियों से सम्बन्ध रखता है और जिनमें 50 से कम लोग काम करते हैं तथा जिनकी मशीने बिजली से नही चलती, के तहत पंजीकृत हैं। सितम्बर 1985 से यह योजना 2,500 रूपये तक मासिक वेतन पाने वालों पर लागू होती है।

इस निधि के लिए मालिकों को कर्मचारियों को दी जाने वाली मजदूरी व मंहगाई भत्ते की कुल राशि का सवा छह प्रतिशत के बराबर अपना हिस्सा देना होता है ;कुल राशि में कर्मचारियों को दी गई खाद्य रियायतों का नकदी मूल्य अनुरक्षण भत्ता भी शामिल है।द्ध इतना ही हिस्सा कर्मचारियों को भी देना होता है। सरकार ने 123 उद्योगों के लिए, जिनमें 50 या इससे अधिक व्यक्ति काम करते हैं, यह हिस्सा बढा़कर 8 प्रतिशत कर दिया है।

31 दिसम्बर, 1985 के अन्त में भविष्य निधि योजना में अंशदाताओं की संख्या 1.31 करोड़ थी।

मृत्यु होने पर सहायताः 1964 में कर्मचारी भविष्य निधि योजना के अन्तर्गत मृत्यु उपरान्त सहायता निधि स्थापित की गई जिसका उद्देश्य गैर छूट प्राप्त संस्थानों के मृतक उत्तराध्किारियों या नामजद व्यक्तियों को वित्तीय सहायता प्रदान करना है। उसका लाभ मृतक कर्मचारी के उत्तराध्किारियों या नामजद व्यक्तियों को वित्तीय सहायता प्रदान करना है। उसका लाभ मृतक कर्मचारी के उत्तराध्किारियों या नामजद व्यक्तियों को मिलता है, जिनका मासिक वेतन ;मूल वेतन, महंगाई भत्ता आदि को मिलाकरद्ध मृत्यु के समय 1,000 रूपये से अधिक नहीं है। भविष्य निधि के रूप में मिलने वाली राशि 1,250 रूपये से जितनी कम होती है उतनी ही राशि मृत्यु –उपरान्त सहायता के अन्तर्गत दी जाती है।

एम्पलायज डिपाजिट लिंक्ड इंश्योरेन्स स्कीम ;Employees deposit linked insurance schemeद्धः सामाजिक सुरक्षा की एक और योजना है– एम्पलायज डिपाजिट लिंकड इंश्योरेंस स्कीम,1976, अर्थात् भविष्य निधि मे जमा ध्नराशि से जुड़ा बीमां। यह योजना 1अगस्त,1976 से लागू हुई । इसके अनुसार, कर्मचारी की मृत्यु होने पर उसके वारिस को भविष्य निधि की ध्नराशि के अतिरिक्त एक और ध्नराशि मिलेगी, जो पिछले तीन वर्षो मे निधि में मौजूद ध्नराशि के बराबर होगी, बशर्ते कि निधि में औसत ध्नराशि 1,000 रूपये से कम न रही हो । इस योजना के अन्तर्गत अधिकतम भुगतान 10,000रूपये होगा, जिसके लिए कर्मचारी को कोई अशंदान नहीं करना पड़ेंगा ।

पारिवारिक पेंशन ;family pensionद्धः औद्योगिक मजदूरों की असामयिक मृत्यु होने पर उसके विचार के लिए लम्बी अवधि तक ध्न सम्बन्धी सुरक्षा देने की दृष्टि से 1 मार्च,1971 से कर्मचारी पारिवारिक पेंशन योजना शुरू की गई। कर्मचारी भविष्य निधि योजना में मालिकों और कर्मचारियों के अशंदान के एक भाग को अलग करके इसके लिए ध्न प्राप्त किया जाता है। किसी दुर्घटना, बीमारी या अन्य किसी कारण से कर्मचारी की मृत्यु होने पर परिवार की आर्थिक सुरक्षा के लिए इस निधि में केन्द्र सरकार भी कुछ भाग जमा करती है। निधि की सदस्यता की अवधि के अधर पर पारिवारिक पेंशन की राशि न्यूनतम 60 रूपये से लेकर अधिकतम 320 रूपये प्रतिमाह है। इसके अतिरिक्त 60 रूपये से 90रूपये तक अस्थायी पारिवारिक पेंशन की राशि प्रतिमाह देने की स्वीकृति भी प्रदान की गई।

आनुतोषिक योजना ;Gratuity Planद्धः 1972 के आनुतोषिक ;ग्रेच्युटीद्ध अदायगी अधिनियम मे अन्तर्गत कारखाना,खानों, तेल क्षेत्रों, बागानों, गोदियों, रेलवे, मोटर परिवाहन प्रतिष्ठानों, कम्पनियों, दुकानों तथा अन्य संस्थानों में काम करने वाले कर्मचारी आनुतोषिक के हकदार हैं। इस अधिनियम के अन्तर्गत वही कर्मचारी आते है। जिसका वेतन या मजदूरी 1,600 रूपये प्रतिमास से अधिक नहीं है। अधिनियम के अन्तर्गत एक वर्ष के सेवाकाल के पीछे 15 दिन का वेतन आनुतोषिक के रूप में दिया जाता है और वह अधिकतम 20 महीने के वेतन के बराबर हो सकता है। विशेष मौसम में चलने वाले ;सीजनलद्धकारखानों में हर मौसम के पीछे सात दिन का वेतन आनुतोषिक के रूप में दिया जाता है। अगर किसी कर्मचारी को मौलिक के साथ

किए गए किसी पंचाट ;अवार्डद्ध या संविदा या इकरार के अन्तर्गत आनुतोषिक पाने की बेहतर शर्ते मिली हैं तो यह अधिनियम उसे उनसे वंचित नहीं करता।

काम की शर्ते और कल्याणः कारखानों में काम की शर्ते पफैक्ट्री अधिनियम, 1948 द्वारा नियमित की जाती है। इस अधिनियम के अनुसार प्रौढ़ श्रमिकों के लिए सप्ताह में 48 घण्टे काम के लिए निश्चित है एवं किसी भी कारखाने में 14साल से कम उम्र के बच्चों को काम पर लगने की मनाही है । अधिनियम के अन्तर्गत रोशनी,सापफ हवा, सुरक्षा,स्वास्थ्य तथा कल्याण सेवा के न्यूनतम मानक भी निश्चित हैं, जिनका पालन मालिकों को अपने काखानों में करना पड़ता है। जिन कारखानों में 30 से अध्कि महिला श्रमिक काम करती हैं, वहाँ उनके बच्चों के लिए बाल गृहों की व्यवस्था करनी पड़ती है।

जिन कारखानों में 150 से अध्कि व्यक्ति काम करते हैं, वहाँ कारखाने के मालिकों को उनके लिए आश्रय–बिल,विश्राम–गृह तथा भोजन के लिए कमरों की व्यवस्था करनी पड़ती है। जिन कारखानों में 250से अध्कि व्यक्ति काम करते है, वहाँ श्रमिकों के लिए आवश्यक सुविधओं से युक्त कैण्टीनों की भी व्यवस्था उन्हे करनी पड़ती है। जिन कारखानों में 500 या इससे अध्कि कर्मचारी काम करते है उनमें कल्याण अध्किारी की नियुक्ति करना आवश्यक है। 2 दिसम्बर,1986 को लोकसभा में पफैक्ट्री ;संशोध्नद्ध विध्यक, 1986 पेश किया गया जिसके द्वारा 1948 के पफैक्ट्री एक्ट में संशोध्न करके श्रम–सुरक्षा की व्यवस्थाओं को और अध्कि कड़ा कर दिया गया है। खान अधिनियम,1952, बागान मजदूर अधिनियम,1951,बीड़ी और सिगार कर्मचारी ;रोजगार की शर्तेद्ध अधिनियम,1996,ठेका मजदूर नियमन और उन्मूलन अधिनियम,1970, मोटर परिवाहन कर्मचारी अधिनियम, 1961 आदि के अन्तर्गत खानों और बागानों के कर्मचारियों के लिए भी सुविधएँ प्रदान की गई है।

कोयला,अभ्रक, लौह अयस्क,मैगनीज अयस्क,चूना –पत्थर और डोलोमाइट खानों और बीड़ी उद्योग में कार्य करने वाले श्रमिको के लिए आवास,चिकित्सा ,मनोरंजन ओर अन्य कल्याण सुविधएं नियोजित आधर पर प्रदान करने के लिए साविध्कि ;peroidicalद्ध कल्याण निध् का सृजन किया गया है।

निध् के लिए ध्नराशि अभ्रक निर्यात पर लगे सीमा शुल्क पर उपकर लोहा ओर मैगजीन अयस्क निर्यात के सीमा शुल्क पर उपकर, आन्तरिक खपत पर लगे उत्पादन शुल्क और लौह–अयस्क इस्पात संयंत्र और सीमेंट तथा अन्य कारखानों में इस्तेमाल होने वाले चूना–पत्थर और डोलोमाइट के उत्पादन पर उपकर लगाकर प्राप्त की जाती है। बीड़ी श्रमिकों की कल्याण निध् के लिए ध्नराशि तैयार बीड़ी पर लगे शुल्क पर उपकर लगाकर प्राप्त की जा रही है।

वे अधिनियम जिनमें निध् स्थापित की गई है, इस प्रकार हैं लौह अयस्क खान और मैगनीज अयस्क खान श्रमिक कल्याण उपकर अधिनियम,1976 लौह अयस्क खान, मैगनीज अयस्क खान तथा क्रोम अयस्क खान श्रम कल्याण अधिनियम,1976,चूना पत्थर और डोलोमाइट खान श्रम कल्याण निध् अधिनियम, 1977 कोयला खान श्रम कल्याण निध् अधिनियम,अभ्रक खान श्रम कल्याण निध् अधिनियम,1946 और बीड़ी कर्मचारी कल्याण उपकार ;संशोध्नद्ध अधिनियम,1981।

बागान मजदूरः बागान मजदूर अधिनियम, 1951 में बागान मजदूरों के कल्याण तथा बागानों में कार्य करने की शर्तो को नियमित करने का प्रावधन हैं। अधिनियम राज्य सरकारों द्वारा किया जाता है। यद्यपि अधिनियम को 1951 में पारित किया गया था,परन्तु यह 1अप्रैल,1954 से लागू किया गया। तब भी केवल वही अनुच्छेद लागू किये गए जो, बगैर किसी नियम निर्धरण के लागू किये जा सकते थे। सम्बन्ध्ति राज्य सरकारों ने श्रम मन्त्रालय के निर्देशों का अनुसरण करते हुए अपने–अपने कानून का निर्माण सितम्बर,1955 से अप्रैल,1959 तक की अवध् के दौरान किया।

बागान मजदूर अधिनियम,1951 के कार्यान्वन के दौरान अनुभव की गई कठिनाइयों को दूर करने के लिए तथा अधिनियम का क्षेत्र बढ़ाने के लिए मजदूर;संशोध्नद्ध विध्यक,1981 संसद द्वारा पारित किया गया और इसे 26 जनवरी,1982 से लागू कर दिया गया ।

यह अधिनियम जम्मू और कश्मीर को छोड़कर पूरे भारत में लागू है तथा इसके अन्तर्गत ऐसे समस्त चाय,कापफी,रबड़,सिनकोना और इलायची बागान आते है जो पांच हैक्टेयर या अध्कि क्षेत्रपफल के है और जिनमें 15 या अध्कि श्रमिक लगे हुए है। 750 रूपये तक मासिक वेतन पाने वाले श्रमिक ,इस अधिनियम के अन्तर्गत आते है। अधिनियम में अब बागानों के अनिवार्य पंजीकरण का प्रावधन है। संशोध्ति नियम के अन्तर्गत, समस्त बागानों में मजदूरों और उनके परिवारों तथा ऐसे समस्त व्यक्तियों के लिए, जो कि बाहर निवास करते हैं परन्तु बागान में रहने की अपनी इच्छा लिखित रूप से प्रकट कर चुके हैं बशर्ते कि वे 6 महीने की नौकरी कर चुके हों, निवास स्थान की व्यवस्था करने का प्रावधन है। बागानों में मजदूरों के लिए अस्पताल

और औषधलय की भी व्यवस्था करनी जरूरी है। कुछ बागानों में मजदूरों के बच्चों की शिक्षा के लिए प्राथमिक स्कूलो की भी व्यवस्था है। चाय बोर्ड की सहायता से कुछ बागानों में लाभदायक हस्तकला जैसे–सिलाई,विनाई और टोकरी बनाने का भी प्रशिक्षण दिया जाता है। यहाँ मनोरंजन की सुविधएँ भी प्रदान की जाती है।

भारत में कर्मचारी प्रबन्ध/मानव संसाध्न प्रबन्ध का विकास
(evolution of human resource management in india)

भारत मे मानव संसाध्न प्रबन्ध के विकास का श्रेय कपड़ा उद्योग के उत्पादकों एवं सरकारी हस्तक्षेप को जाता है। भारत में इस प्रणाली के विकास का क्रम विशेष रूप से द्वितीय विश्वयु(से कुछ पहले हुआ। यहाँ मानव संसाध्न प्रबन्ध का विकास श्रमिकों के लिए कल्याणकारी कार्यो के लिए न होकर शिकायत समाधन ;grievance redressalद्ध, भर्ती प्रणाली पर नियंतत्र करने,श्रम असतोंष को कम करने तथा औद्योगिक सम्बन्धें को सुधरने के लिए हुआ। भारतीय मानव संसाध्न संस्थान ;indian institute of human resource managementद्ध के अनुसार– विश्वयु(से पहले, जुट उद्योग में यह सामान्य बात थी कि सरदार ;मध्यस्थद्धश्रमिक को लाता,भर्ती करता, उसका पर्यवेक्षण करता, दण्ड देता, मजदूरी चुकाता तथा अपती इच्छा सेवा से निकाल देता था। प्रायः वह रहने के लिए मकान भी दिया करता था तथा बेरोजगारी के समय खाने को भी देता था, किन्तु यह प्रणाली कई कुरीतियां तथा गलत परम्पराओं से भरी थी । मजदूरी में बड़ी –बड़ी कटौतियाँ सरदार ;मध्यस्थद्ध की इच्छा से कर दी जाती थी तथा इस व्यवस्था में श्रमिक को किसी प्रकार की सुरक्षा प्राप्त नहीं थी।जे0 एच0 व्हिटले की अध्यक्षता में शाही श्रम आयोग ;royal labour commission) ने अपनी सिपफारिश में मध्यस्थ प्रथा;joberद्ध का उन्मूलत, श्रमिकों की निचुक्ति, चुनाव, श्रम अध्किारी की नियुक्ति तथा अन्य श्रम–कल्याण कार्यो के विषय में की थी।

1920मे श्रमसंघों को मान्यता देने तथा उनका विकास करने की नीति ने श्रम सम्बन्धें को एक नया मोड़ प्रदार किया। टाटा केलिको मिल्स बिटिश इण्डिया कारपोरोशन, एम्प्रैस मिल्स आदि ने श्रम अध्किारी की नियुक्ति कर ली थी। बम्बई औद्योगिक विवाद समझौता अधिनियम, 1934 के अधेन श्रम कल्याण अध्किारी ;labour welfare officer) नियुक्त किये किया गये। 1941 में भारत सरकार ने त्रिपक्षीय श्रम सम्मेलन बुलाया जिसमे सरकार, नियोक्ता तथा श्रमिकों के प्रतिनिध् सम्मिलित हुए इस सम्मेलन का उद्देश्य समान श्रम कानून लागू करना, औद्योगिक संघर्ष के समाधन के लिए केन्त्तीय प्रणाली के निर्माण करना तथा औद्योगिक मामलों मे सलाहकार प्रणाली का विकास करना था।

भारत मे मानव संसाध्न प्रबन्ध के विकास की गति बहुत धीमी रही है। संशोध्ति कारखाना अधिनियम, 1948 की ;धरा49द्ध के अनुसार जहाँ पर 50 या इससे अध्कि श्रमिक कार्य करते हैं। वहाँ पर श्रम कल्याण अध्किारी ;labour welfare officer) की नियुक्ति अनिवार्य है। इसी प्रकार खान अधिनियम,1952 की ;धरा58द्ध के अनुसार जिस खान में 500 श्रमिक कार्य करते हैं तथा बागान श्रम अधिनियम, 1951 ;Plantation Labour Act,1951द्धके अन्तर्गत 300 या इससे अध्कि श्रमिक कार्य करते है वहाँ पर श्रम कल्याण अध्किारी की नियुक्ति अनिवार्य कर दी गई है।

भारत मे मानव संसाध्न प्रबन्ध के विकास के सन्दर्भ में the Indian Institute of Human Resource Management (now National Institute of Human Resource Management) ने कहा है भारत में मानव संसाध्न प्रबन्ध के तेजी से विकास का श्रेय कपड़ा उद्योग के उत्पादकों तथा सरकारी हस्तक्षेप के सम्मिलित प्रयत्नों को है जो विश्वयु(के कुछ समय पहले तथा यु(के दौरान सक्रिय रही। यह उल्लेखनीय है कि भारत में मानव संसाध्न प्रबन्ध का विकास कल्याणकारी कार्यो के लिए न होकर शिकायत समाधन तथा श्रमिकों की भर्ती प्रणाली को व्यवस्थित करने के लिए हुआ। औद्योगिक सम्बन्ध अध्किारी के रूप में उनका कार्य,कार्य परिषद् समाधन प्रक्रिया में भाग लेना तथा झगड़े की रोकथाम के लिए प्रयत्न करना था। श्रम अध्किारी श्रमिकों का मित्र तथा विश्वसनीय समझा जाता है किन्तु वास्तव में वह प्रबन्ध्कों एक एजेण्ट होता है।

भारत में मानव संसाध्न प्रबन्ध की प्रगति में रूकावट
(Impendiments to the Progress of Human Resource Management in india)

प्रारम्भ से ही भारत में प्रबन्ध तथा प्रबन्ध्कीय प्रणाली उपेक्षित रही। 19 वीं शताब्दी में प्रबन्ध्कीय प्रणाली पूरी तरह परम्परागत थी। अनुभव को ही प्रबन्ध्कीय ज्ञान का स्रोत माना जाता रहा। प्रबन्ध के अन्य कार्यक्षेत्र की अपेक्षा मानव संसाध्न प्रबन्ध

का क्षेत्र उपेक्षित रहा। संगठन के ढाँचे में मानव संसाध्न प्रबन्ध को न तो उचित स्थान दिया गया है और न ही उनकी सत्ता तथा योग्यता का स्वीकार किया गया है।

मानव संसाध्न प्रबन्ध के विकास में निम्तलिखित प्रमुख कारण बाध्क रहे है।

1. भारत में श्रमिकों की प्रवासी प्रकृति (migratory character of indian labouures)
2. भारतीय श्रमिक संघ ;बाह्य नेतृत्व, पर्याप्त वित्त का अभाव, राजनैतिक प्रभाव, अशिक्षा, मन–मुटाव के कारणद्ध सुदृढ़ नहीं है।
3. मानव संसाध्न प्रबन्ध के प्रति अनभिज्ञता।
4. अभी भी नियोक्तिओं और कर्मचारियों के बीच स्वामी एवं दास (Master and Servant) की विचारधरा विध्मान है।
5. अभी भी औद्योगिक विवाद की दशाओं में नियोक्ता एवं श्रमिक द्विपक्षीय– विचार–विमर्श द्वारा समझौता न करके न्यायिक व्यवस्था में विश्वास रखते हैं।
6. श्रमिक वर्ग का दृष्टिकोण अभी भी मानव संसाध्न– प्रबन्ध्क के प्रति अनुकूल नहीं है।
7. अभी भी मानव संसाध्न प्रबन्ध योग्यतम तथा प्रतिभाशाली युवकों को अपनी ओर आकर्षित नहीं कर सकां।

भारत मे मानव संसाध्न प्रबन्ध का भविष्य
(Future of Human Resource Management in India)

भविष्य में भारतीय सेविर्वीय प्रबन्ध के क्षेत्र में तेजी से सैकड़ों आर्थिक, सामाजिक तथा सास्कृतिक परिवर्तनों की आशा की जा सकती है। जैसे वर्तमान के परम्परागत प्रबन्ध ;traditional managementद्ध जिसमें स्वामी और उसके निकटतम सम्बन्धें प्रबन्ध की निर्णय प्रक्रिया ;decision making processद्ध में भाग लेते हैं। निश्चित रूप से भविष्य में पेशेवर प्रबन्ध ;शिक्षित,प्रशिक्षित तथा प्रबन्ध्कीय ज्ञान रखने वालाद्ध स्थान ग्रहण करेगा और निर्णय प्रक्रिया में पेशावर प्रबन्ध ;professional Managementद्ध की महत्त्वपूर्ण भूमिका होगी। इसी प्रकार मानवीय प्रतिष्ठता पर विशेष ध्यान दिया जाएगा और मजबूती के साथ तथा अध्कि जाग्रत श्रम आन्दोलन तथा व्यवहार की विचारधरा ;trends of the behavioural school) दूर—दूर तक प्रसि(होगी। यह सब परिवर्तन भारत के मानव संसाध्न–प्रबन्ध के विकास तथा प्रगति के लिए अनुकूल वातावरण उत्प करेंगें। परिणामस्वरूप निम्नलिखित परिवर्तन मानव संसाध्न–प्रबन्ध्कों के कार्यों को नया रूप प्रदान करेंगे।

1. **विकासशील नियोजन में मानव संसाध्न–प्रबन्ध की महत्त्वपूर्ण भूमिका (greater involvement in devolping planning)**: भविष्य में मानव संसाध्न प्रबन्ध्क केवल मात्र मानव संसाध्न सेवाओं का प्रशासक न होकर अपेक्षाकृत अध्कि विकासपूर्ण कार्य करने वाला होगा। इस दृष्टि से उसका संस्था के आधरभूत नियोजन में आवश्यक रूप से भाग लेना होगा। आर्थिक सामाजिक तथा राजनैतिक परिवर्तन संस्था की आन्तरिक परिस्थितियों को भी प्रभावित करते है और इन घटकों का नजदीकी पारस्परिक सम्बन्ध होता है। इस विषय मे मानव संसाध्न प्रबन्ध को बतलाते हुए ही संस्था के पूर्व स्थापित उद्देश्य को प्राप्त किया जा सकता है। मानव संसाध्न प्रबन्ध्क को स्वयं तथा अपने साथियों को संस्था के अर्थपूर्ण शोध (research) एवं नियोजन में लगाना होगा। इसके अतिरिक्त उसको पहले से अध्कि उत्पादन लागत पर सजगता (More cost-conciouss) दिखानी होगी।
2. **मानव संसाध्न नीतियों में परिवर्तन (Change in personal policiess)**: वर्तमान में भारत में अशिक्षित कार्य करने वाले कर्मचारियों की तुलना में शिक्षित कर्मचारी वर्ग के अनुपात में वृ(हुई है। इससे हमारी विवर्गीय नीतियों में भी कापफी परिवर्तन आ गया है। भविष्य में नीतियों बनाते समय इस परिवर्तन को ध्यान में रखना होगा।
3. **जनशक्ति के स्रोतों में परिवर्तत (Change in source of manpower):** वर्तमान मे अल्पसंख्यक वर्ग, अनुसूचित जाति तथा जनजाति के लोगों को सरकार उन्नत शिक्षा एवं रोजगार के अवसर प्रदान कर रही है। इसलिए भविष्य मे

यह वर्ग जनशक्ति की प्राप्ति का महत्त्वपूर्ण स्रोत होंगे। परिणामस्वरूप प्रत्येक संगठन को जनशक्ति की योजना बनाते समय इस महत्त्वपूर्ण स्रोत को भी ध्यान में रखना होगा।

4. **श्रमिकों को दुबारा प्रशिक्षण (Re-training of workers):** वर्तमान मे तीव्रगति से तकनीकी परिवर्तन एवं विकास की दौड़ ने कार्य (job) की पूर्ति के लिए आवश्यक कौशल, प्रशिक्षण, उत्तरदायित्व की आवश्कता को बढ़ा दिया है। परिणामस्वरूप नए तथा कार्यरत कार्यरत श्रमिकों को पुनः प्रशिक्षण देने की आवश्यकता है।

5. **सरकारी हस्तक्षेप में वृ(ि (increasing government role):** भविष्य में निजी एवं सार्वजनिक कल्याण कार्यक्रमों के बीच अनिवार्य रूप से अध्कि समन्वय की आवश्यकता होगी। निजी उद्योगों को आवश्यक रूप से सरकारी प्रयत्नों ;उन्नत सार्वजनिक शिक्षा, प्रशिक्षण एवं रोजगारद्ध का समर्थन करना होगा।

6. **व्यावसायिक स्वास्थ एवं सुरक्षा कार्यक्रमों पर अध्कि बल (Greater importance to occupational health and safety programmes):** संसदीय दबाव के कारण आने वाले समय में प्रत्येक संगठन को पूरी तरह मानवीय विज्ञान एवं श्रमिकों की कार्यक्षमता के शोध (research) का पूरा लाभ उठाते हुए श्रमिकों की व्यावसायिक रोगों से सुरक्षा तथा स्वास्थ्य सम्बन्धी उपायों के प्रति अध्कि जागरूक होना होगा।

7. **मानवीय समस्याओं के समाधन पर अध्कि बल (Greater importance to solving the human problems):** भविष्य में मानव संसाध्न प्रबन्ध्कों को अनिवार्य रूप से संगठन के विकास के लिए प्रगतिशील विचारों पर ध्यान देना होगा। यह विचार परिवर्तन प्रक्रिया से सम्बन्ध्ति है। वर्तमान में अध्किांश भारतीय श्रमिक औद्योगिक प्रणाली जटिल माँगों को पूरा करने के आदी नहीं होते। समय की पाबन्दी, अनुशासन, वैज्ञानिक आधर पर श्रम–विभाजन विवेकपूर्ण कार्य की प्रणाली, अव्यक्तिगत निरीक्षण विध् िएवं नियन्त्रण जो कि आधुनिक कार्य– प्रणाली के लिए आवश्यक है, का कठोरता से पालन नहीं करते है।

8. **उत्तम कार्य–मूल्यांकन प्रणाली (Better job-evaluation system):** श्रमिकों की उच्च उत्पादन क्षमता मे वृ(ि और उनके वेतमानों के बीच समन्वय स्थापित करना होगा तथा उनके साथ सम्बन्धें को बेहतर बनाना होगा। इस प्रकार श्रमिकों के कार्य मूल्याकंन की प्रणालियों को अध्कि तर्कसगंत एवं व्यावहारिक बनाना होगा।

अन्त में यह कहा जा सकता है कि भारत में मानव संसाध्न प्रबन्ध् के क्षेत्र में कोई आधरभूत परिवर्तनों का आशा नहीं है। अपितु उपरोक्त परिवर्तनों से मानव संसाध्न–प्रबन्ध्क की प्रतिष्ठा एवं शक्तियों में वृ(ि अवश्य सम्भावित हैं। भारत में मानव संसाध्न प्रबन्ध् का भविष्य उज्जवल है।

महत्त्वपूर्ण प्रश्न
(Important Questions)

1. अच्छे औद्योगिक सम्बन्धें के क्या सूचक है? भारत में वे कहाँ तक उपलब्ध् हैं? हड़तालों के प्रभाव को घंटाने के उपाय सुझाइये।

   what are the indicies of good industrial relatios? Analyse those available in india and indiacate measures to reduce the incidence of strike-

2. उन विभिन्न तरीकों का वर्णन कीजिए जिनका उपयोग श्रम–प्रबन्ध् विवादों को सुलझाने मे किया जाता है।

   Discuss the various methods which can be employed in resolving labour&management disputes-

3. औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1956 में औद्योगिक झगड़ो को निपटाने के लिए जिस त्रिमुखी ट्रिब्यूनल व्यवस्था का प्रावधन किया गया है, उसकी आलोचनात्मक समीक्षा कीजिए।

   Examine critically the three tire-system of labour tribunals as provided by the industrial disputes act, 1956

4. औद्योगिक सम्बन्धें से क्या आशय है? औद्योगिक सम्बन्धें को निर्धरित करने वाली बातों तथा क्षेत्रों का विवेचन कीजिए।

   Define the meaning of Industrial Relation? Discuss the scope factors and detemining the Industrial Relations-

5. भारत में शिकायत सुनने या मशीनरी या व्यवस्था के विकास एवं वर्तमान स्थिति का सक्षेंप में वर्णन कीजिए।

   Discuss briefly the evolution and present position of grievance handling machinery or procedure in India-

6. औद्योगिक सम्बन्धें के नियमन एवं औद्योगिक शांति बनाये रखने में राज्य की भूमिका का भारतीय परिस्थितियों में वर्णन कीजिए।

   Adjudge the role of the State in regulating Industrial Relations and maintaining industrial harmony with special reference to Indian conditions.

7. भारत में औद्योगिक सम्बन्ध व्यवस्था की मुख्य बताइए।

   What are the main features of Industrial Relations machinery in India.